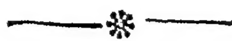
विज्ञापन ॥

इस महीने अर्थात् मार्च सन् १८८८ ई० पर्य्यंत जो पुस्तकें वेचने के लियेतय्यारहै उनमेंसे कुछ इस सूचीप
मे लिखी हैं और उनका मोल बहुत किफ़ायत से घटाके नियत हुआहै और व्योपारियो के लिये और भी
सस्ती होंगी जिनको व्योपार की इच्छाहो वह मुंशीनवलकिशोर के छापेखाने मुकामलखनऊ हजरतगञ्जकीपते
ख़त भेजकर क़ीमतका निर्णयकरलें ॥

नामकिताव	नामकिताव	नामकिताव	नामकिताव
(अ)	ऐक्ट२६ सन्१८६७ई०	गर्गसंहिता	दास्तानअमीरहमजा
अमरकोषतीनोंकांड	ऐक्टमजमूआअवधल-	गरुडपुराणप्रेतकल्प	दैवज्ञाभरण
अध्यात्मरामायणभाषा	गान१६ सन्१८६८ ई०	गणितप्रकाश चारोभाग	दोहावलीरत्नावली
टीकासंहित	ऐक्ट१८ सन्१८६६ई०	(च)	(न)
अमृतसागरबड़ाव छोटा	ऐक्ट२४ सन्१८७० ई०	चित्रचन्द्रिका	निर्णयसिंधु
अरिथमेटिक तीनो भाग	ऐक्ट१६ सन्१८७३ई०	चाणक्यनीति	नाममाहात्म्य
(इ)	(क)	चौरासीवार्त्तिक	नानार्थनवसंग्रहावली
इलाजुल्गुरवा	कायस्थकुलभास्कर	(छ)	नवीनसंग्रह
ईशावास्यवाजसनेय सं-	कायस्थविनोद	छन्दोर्णवपिंगल	नवरत्नभाष्य
हितोपनिषत्	कर्मविपाकसंहिता	(ज)	निघंटभाषा
इतिहास तिमिरनाशक	कृष्णबाललीला	जातकालंकार	नारीबोध
इंगलिस्तानकाइतिहास	कालिंजरमाहात्म्य	जातकाभरण	(प)
(उ)	कृष्णसागर	जगद्विनोद	परमार्थसार
उमापतिदिग्विजय	कथा श्रीगंगाजी	जातकचन्द्रिका	प्रेमसागर
(ऐ)	कैवल्यकल्पद्रुम	(त)	पारसभाग
ऐक्ट १ सन् १८७६ ई०	कृष्णप्रिया	तुलसीकृतरामायण	प्रेमरत्न
ऐक्ट १० सन् १८८१ ई०	कविकुलकल्पतरु	तशरीहुलहरूफउर्दूबना०	प्रेमामृतसार
ऐक्ट १० सन् १८८२ ई०	कवितरंग	(द)	पद्मावतभाषा
ऐक्ट १४ सन् १८८० ई०	केनोपनिषत्	दुर्गास्तोत्रमूल व सटीक	पत्रासवत्१६४५
ऐक्ट १० सन् १८८० ई०	काव्यसंग्रह	दुर्गायनवकाण्ड	पटवारियोंकीपुस्तकें
ऐक्ट १० सन् १८७६ ई०	कवित्तरत्नाकर दोभाग	देवीभागवतभाषादार-	तीनो भाग
ऐक्ट १० सन् १८६२ ई०	कृष्णचालीसी	होस्क ।	प्रबोधचन्द्रोदयनाटक
ऐक्ट२० सन् १८६६ ई०	(ग)		पत्रहितैषिणीना०टीके०
	गुटका तीनोखण्ड		प्रेमप्रकाश

मिताक्षरा स० प्रायश्चित्त काण्डका विज्ञापन॥



पाठक महाशयों को ज्ञातव्य है कि इस ग्रंथ की रचना और छापेद्वारा प्रकाश होने मध्ये यद्यपि राजा महाराजा आदि अनेक सज्जनों की कृपा दृष्टि धन दान की सहायता द्वारा आरूढ हुई परच अंतिम सिद्धि की फतेह (विजय) केवल मुंशीनवलकिशोर साहब (सी आई ई) रईसप्रवर लखनऊ के हाथ होनहार थी सो अब हुई विक्रमादित्य के सवत् १९४४ उन्नीससौ चवालिस मे मुंशी साहब ने पूरा कराकर प्रकाश किया आगे को मुंशीनवलकिशोर जब चाहें तभी वारवार इसको छापेंगे कि जिससे उन सब सामान्य विद्वानों का उपकार होयजिनको ऐसा ग्रंथ अलभ्य रत्न हाथ नहीं आसक्ता था—इसकी रचना का प्रारंभ सन्१८७२ ईसवी मे मर्यादा प्रिय पंडित दुर्गाप्रसाद शुक्ल कान्यकुब्ज ने निज इच्छाचार से आगरा वेलनगंज मे श्री यमुना तटपर किया जिन की जन्मभूमि शहर शाहाबाद जिला हर्दोई मुल्क अवध राज लखनऊ में थी ताको बाल अवस्था में विद्याव्य-सन से संत्यक्त करि आगरा में सुखवासी हुये——अपने रचेहुये पाडुलेख (मसौदा) की प्रवृत्ति होनी चाहिये छापे का यंत्रस्थान कल्पना करिके सन अठारह सौउन्नासी अस्सी तक सात आठवर्ष में जैसे तैसे आचार व्यवहार दो काडों को स्वाधीनता से छापिके कुछ पुस्तकें प्रकाश करि पाईं—उसी अवसर मे श्रीमन्महाराणा मेद पाटेश्वर श्री सज्जनसिंह उदयपुर अधिष्ठित वीरेश ने धन दान की सहायता देकर व्यवहार मर्यादा परिपाटी वृहत्काड पूरा करवाया किंतु उस समय व्यवहार शास्त्र अवलोकन की आकाक्षा उनको विशेष थी चाहते थे कि शीघ्र पूरा होय इसी हेतु मध्यम काल मे सहायता उदय हुई थी—इसी प्रकार पहिला आचार काड राजाधिराज शाह पुरा मेवाड ने पूरा करवायाथा—तथापि सात वर्ष में दो काडो को समाप्ति करके कर्ता के चित्तने उपराम लिया और व्यवहार कांड के अंतमे समस्या लिखी कि अगले बहुत बड़े प्रायश्चित्त काड का प्रारंभ नहीं करेगे कि जब तक कोई धरणीपाल अपने ऊपर इसका पूरा भार न झेले—किंतु वही पूरा भार आज मुंशी नवलकिशोर ने अपने ऊपर स्वीकार सहित झेला अर्थात् उक्त समस्या लिखे पीछे ग्रंथ कर्ताने इस काडको रोकि यौंभि सन्१८८५०० तक पांच वर्ष छोटे मोटे वैद्यक आदि विद्याओं के अद्भुत ग्रंथो का पाडु लेख निर्माण करते हुये पूर्व तुल्य एकासन वृत्ति से कालक्षेप किया—यद्यपि इसी मध्यम काल मे परोपकारी मुंशी नवलकिशोर ने यशोवृत्ति का विस्तार करतेहुये ग्रंथकर्ता को अपने सन्मित्रों के द्वारा तथा चिट्ठियों से आवाहनका सबोधन भेजिके अभिलाषा प्रकट करी थी कि लखनऊ मे आकर अपना अधूरा ग्रंथ पूरा करो तथापि (सत्यप्रतिज्ञे नपुन.प्रतिज्ञा) इस आग्रह से रचयिता ने यही उत्तर भेजा कि आगरा मे प्रारभ होचुका था समाप्ति भी इसी जगह होनी चाहिये यद्यपि उदयपुर के महाराणा वीरेशो ने जब जब आवाहन के आज्ञापत्र भेजे कि राजकीय यत्रालय का अधिष्ठातृ पद स्वीकार हो तो शीघ्र चले आवो या अपने इष्ट मित्रो को भेजो जो इस कार्य को करसके——तदपि केवल इसी प्रतिज्ञा के प्रतिबंध से अपने मित्र वशीधर वाजपेयी जिनकी नौकरी यहा छूटिचुकी थी उनकी योग्यता की रिपोर्ट भेजि मंजूरी कराकर उस पदपर उदयपुर भेजिदिया आगरा नहीं छोड़ा—जिससे आप जो लखनऊ बुलाने बिना यहां बैठेही प्रतिज्ञा पूरी करें तो पीछे कोई अटक न रहेगी—इस पर श्रीमान् मुंशी नवलकिशोर ने ग्रंथकर्ता के साथ अपने दो संबंध माने कि जहां पर शासनी स्थान होने से जिस आगरे का मै परिहा निवासी और जहा मेरे बहुत बढिया स्वजन इष्ट मित्र वकील व रईस मुंशी गिरिधरलाल आदि बहुधा भी उपस्थित है और जहा मैने (भार्गव विद्यालय नाम) महत् पाठशाला का आरम्भ निज स्वजातीय सज्जनों के निमित्त से करवाया जिसके प्रबंध मे श्री मुंशी गिरिधरलाल साहब वकील महाशय लाला आदि बहुधा

जन स्वकीय उत्साहो से सलग्न रहते है उनकी भी सुसंमति मर्यादा परिपाटी ग्रंथ पूरा करवाने पर आरूढ पाई जाती है तहा इसने सुखवास लेकर धर्मशास्त्र का अनुवाद प्रकाश किया १—और जिस देशमे इसको जन्मभूमि कहाती है उसी लखनऊ मुल्क अवध में सर्व ऐश्वर्य संपन्न मेरा एक कारखाना और पूरा सुखवास है २ ऐसे दोहरे संबध की मैत्री से इसकी अधूरी प्रतिज्ञा पूरी कराना निपट मेराही कामहै—तिससे पाच सात सहस्रसंख्या धन लागति मे लगाकर कार्य पूरा करवाया—उक्त मुंशी साहब जो सब देशो मे पूज्य विख्यात है तिनको परम राज भक्तिमय शिष्टाचार के प्रतिकार मे साम्राज्य लक्ष्मी श्रीमती विक्टोरिया राजराजेश्वरी महारानी की सदाज्ञा से (सी आई ई) इन तीन शुभ शब्दो की विशेषण प्रशस्ति लाभ हुई—तिनकी उदारता मे सबसे अधिक विशेषता यह ठहरी कि कर्ता की सतुष्टि तुल्य धनका दान आगरा बैठे कर्ता को देकर सोते उत्साहको जगाया फिर ग्रंथ के छापने मे धन जुदा लगाया ऐसा हर एक से होना बडा दुर्घटहै यह कर्ताकी लेखनी आप कहती है—पाठक जनो को संबोध कराया जाता है कि जैसा नक़्शा शुद्धा शुद्ध का सब जिल्दो के साथ लगाया जाय उसी से देखि देखि अपनी जिल्दों को शोधिले अर्थात् नक़्शे के अनुसार पृष्ठ पंक्तिया ढूढिके जो जो शब्द वा अक्षर अशुद्ध हो तिनके ऊपर ऐसा=दो छेवे का प्रदर्शक चिह्न देकर उसी पंक्ति के सामने (आसुपर) कोरे हासिये पर शुद्ध अक्षर वा शब्दो को बनाइ लेवै और अशुद्धको भी न काटैं तद्रूप बना रहने दें अथवा कहीं उसी अक्षर में मात्राबिंदु लगाने से बनिजाता है या कही अधिक अक्षर मात्राहरताल से मिटाकर शुद्ध होजाता है यद्वा, कही त्रुटि रहिगई है सो ʼ ऐसा चिह्न देकर आसु पर लिखि देनेसे इत्यादि जहा जैसा सम्भव हो सो करौ—इसके उपरान्त एक सन्देह निवारण पत्र है तिसमे (पुनर्निर्मित नाम) चक्र देखोजिसमेमोग्ह सत्रह विषय भेद जुदे जुदे धरे हैं उनपर भी प्रीति करौ—यह परिश्रम केवल दशरोज करने से सब जिल्द शोधी जायगी फिर पढते समय शुद्धाशुद्ध चक्र अवलोकन की जरूरत न होगी•छापेखानोमें अशुद्ध रहजाने की शुद्धि इसी रीतिसे होतीहै•शोधन कर्मसे केवल अपनाही आराम नहीं किन्तु उतनाबडा पुण्यफल भी प्राप्त होताहै कि जैसा किसी घायल अंग भंग आदि पुरुष के चिकित्सा आदि प्रयत्नों से अंगपूरे करदेनेका फलहोता या प्राचीन मठ मन्दिर धर्मशाला आदि टूटे फूटेकी मरम्मति कराने से फल होताहै—ऐसेही विकृत पुस्तक आदि शोधिकेसाग शुद्ध करदेने से फल होताहै क्योकि सच्छास्त्र हैं सो वेदमय ब्रह्मका स्वरूप है इनकाजन्म सुधारने से परब्रह्म की सन्तुष्टि होतीहै दूसरे जे कोई असमर्थ उसको पढिकर सुखपातेहैं तिनके पुण्य कर्मोका कुछफल भागशोधक पुरुषको पहुँचता है यह समुझिकै दशरोजका परिश्रम सुज्ञानी को करना चाहिये—इसी न्याय के अनुसार ग्रन्थकर्त्ताने निज एक जिल्द सर्वथा शोधि के वर्तावे को पासही अपने रक्खी उसके सिरे पर (ग्रन्थकर्त्ता ने अपने किये मसौदा के समान शोधी) इतना लेख मोटे अक्षरो से परिज्ञान के निमित्त मे लिखदिया है—कारण इसका यह था कि यद्यपि साम्राज्यसुहृद् मुन्शी नवलकिशोरने वारम्वार यही कहा कि रचयिता आपही लखनऊ मे रहिकर नित्यप्रति छपेहुये प्रूफ (पूर्वरूप) जो कागद एक सबसे पहिले छापिकर नमूना पढिके देखा जाता है तिसका शोधन किया करै (क्योकि जो पुस्तक जिसकी कल्पना से बनीहो उसीके द्वारा बहुत अच्छी शोधन होती है) यदि यही बानक होसक्ता तौ फिर शुद्धाशुद्ध चक्रो की ज़रूरत बाकी न रहती—परच ऐसा बानक नही बना किन्तु कर्ताका इस जगह जाना न होसका सिर्फ छपिजाने बाद पुस्तक देखनेको आगरा में पहुँची तब शोधन करिके यही लेख अशुद्ध शुद्ध चक्रों सहित लखनऊ भेजागया—कर्ताने कोष्ठ गिनिके गालित्य संख्या का हिसाब देखा कि प्रतिपृष्ठ एक एक अशुद्धि पाई जाती है अर्थात् किसी किसी पृष्ठ में दो चार इकट्ठी और कहीं दो चार पृष्ठोमें एक भी अशुद्धि नहीं है (यद्यपि विद्वान् पुरुष अच्छी भांति जानते हैं कि प्रायः पुस्तको की प्रति उतारने वाले वैतनिक लिपिकार या छापे का साचा टैप जमानेवाले विवेचन शक्तिसे विहीन होतेहैं इसीसे बहुधा पुस्तको मे गालित्य हुये विना नहीं रहता है) इसी हेतुसे इस रचयिता को मसौदा लिखते समय यह ध्यान लगा रहता है कि उसमें किसी अक्षर का स्वरूप ऐसा मन्द या भ्रामक अगभग न होय जिससे पीछे लिपिकार आदि अच्छे न पढिसकै वो और का औरही

कुछ लिखे छापैं—इसीलिये तीनि वार शोधिके व्यर्थ विदुमात्र को भी हरिताल से भ्रान्ति मेटि देता है कि दर्पण के तुल्य पढाजाय (यद्यपि विद्वानो के निकट किसी एक अक्षर या मात्रा का भूलसे रहिजाना कुछ अशुद्धिमे नहीं माना जाता क्योंकि इतना तो अत्यन्त शोधने पर भी कहीं दृष्टिचूक से रहिजाता है) परव ऐसी दशा पर भी चित्तकी उदासी केवल इस वातमे ठहिरी कि प्रायश: वैतनिक लोग कुछ मात्रा वा अक्षर अपनी ओर से अधिक धर देते और कहीं विरले अक्षर को निज प्रमाद या चातुर्य से पलटि भी देते हैं—इसका दृष्टान्त जैसा इस काड के पहिले पृष्ठ मे भूमिका के श्लोक सात हैं उनके द्वितीय श्लोक मे (योऽस्य जगत:स्रष्टा) यही तीसरा पाद है तहा स्रष्टा के स्थान पर भ्रष्टा वदलि के धर दिया—इसी तरह वहुधा प्राचीन ऋषि वाक्यो मे अक्षर मात्रा की अधिकता और व्यत्यय देखिपरा इसका भी प्रमाण यहां वीस कोठे का चक्र देखो जो विद्वानो के समझने को अशुद्ध शुद्ध पत्रो से चुनिकर जुदा वना—यह नमूना केवल इस प्रेरणा (ताकीद) के निमित्त से इस जगह धरा गया है कि ऐसाही अशुद्ध शुद्ध चक्रों मे सर्वत्र समुझिके अपनी अपनी जिल्दें शोधिलेना—तहा प्रतिपृष्ठके केवल एक अशुद्धि शोधने का परिश्रम अति छोटी वात समुझिके—परमोदार मुंशी नवलकिशोर के महान् गुणपर यह धन्यवाद करना चाहिये कि जिसने ऐसे अलभ्य रत्न ग्रंथ को पूरा करवाकर थोड़े मूल्य से प्रकाश किया जो पहिले वहुत मोल देने की शक्ति वा इच्छा होते हुयेभी हाथ नहीं आता या सम्कृत मूल रूप हाथ आता तो समुझा नहीं जाता था—उक्त मुंशी वाणेशके ऐसेही उदार चरित्रो सहित सर्वैश्वर्य सदा चिरजीव रहो श्रीश:पायात् इति—

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध जोवैतनिकप्रमाद से छपा	शुद्धपाठ जोमसोदा मे दर्पणतुल्य
२	२०	अत्तराथे:	अत्तराथे.
४	१८	जमसूतक	जन्मसूतक
८	२४	मुर्दानेजायँ	मुर्दा न लेजायँ
६	७	चिराचि	चिराच
६	१७	दिसुखा:	दिङ् सुखा:
१६	७	मास	मास
२०	२८	का स्थिरत्व	का अस्थिरत्व
२०	३	निर्हृत्यापि	निहृत्यापि
२३	३	पिच्युपा	पिचुपा
२३	१२	मातापितोरिति	मातापित्रोरिति
२४	२४	सवक्रोअर्थात्देवै	अर्थात्सवक्रोदेवै
२५	०	अविभक्तिथन	अविभक्तथन
३१	१८	सिद्धिकिये	सिद्धकिये
३२	२६	वहुतकाल	वहुत ज्ञान
३०	१८	सस्पर्नैननिषिध्यते	सस्पर्शैन निषिध्यते
३०	१८	सस्पर्शे सुतिका-यास्तु	सम्पर्शसूतिका-यास्तु
३०	२४	द्विजाश्चाद्रायण	द्विजश्चाद्रायण
३०	३०	चिथ्येतेषु	चिरवेतेषु
२२४	१५	ये स्रोता व्रह्मोज्झता	अयेस्रोता व्रह्मोज्झता

संवत् १९४४ विक्रमी ॥

सन् १८८८ई० जनवरी ॥

पण्डित दुर्गाप्रसाद धर्मशास्त्री

मिताक्षरा स० प्रायश्चित्तकांड का प्रथम सूचीपत्र ॥

मिताक्षरा स० प्रायश्चित्तकांड का प्रथम सूचीपत्र।

इतिश्रीसर्वदाप्रियव्रतेवर्संशास्त्रेप्रायश्चित्तकांडस्यलघुसूचीपत्रंसमाप्तम् ॥

अथ मिताक्षरा स० प्रायश्चित्त कांडस्य वृहत्सूचनं द्वितीयं ॥

इति सूचीपत्रं समाप्तम् ॥

अथ संदेहनिवारणं पुनर्निर्मितभेदानां संग्रहचक्रं ॥

पृष्ठ	पंक्ति	त्रुटिपाठ या भ्रामक पाठोंके बोध या विज्ञापन आदि पाठोंके जुदे जुदे भेद यहा सोचिलेना ॥
१४३	२५	**अथ परमात्मनः शरीरग्रहणप्रकारप्रदर्शकोऽयंपरिच्छेदः (१०) दशमः** इस परिच्छेद मे वहप्रकार जानाजायगा कि ईश्वर आप अजन्मा होते हुये भी [illegible] किसप्रकार जन्मलेताहै (यह इतनी त्रुटि ऐसेही अति मोटे और [illegible] नीचे लिखिलेना)॥
२५६	२२	पुश्चली आदिकी व्यवस्थाका तात्पर्य आगे [illegible] परिच्छेदमे [illegible] से समुझिलेना (इस त्रुटिको वाईसपंक्तिकेनीचे तेईसवी के स्थानपर लिखिलेना ।
२६३	२३	**इतिपापात्मनां नरकादिगति विषयिकं प्रकरणं त्रिपरिच्छेदमयं ॥** इस प्रकरण मे तीनिही परिच्छेद है—यद्यपि आगे तीसवें परिच्छेद [illegible] एक प्रकरण मानाजायगा कि जिसमे ये भी तीनि गिनेजायेंगे—[illegible] हिये—तिससे इक्कीसवेंके प्रारम्भमे तेईसवेंके [illegible] करण करागया कि इसमें सब तरहके पापिको [illegible] जो मिलते है उन्हींका वर्णन किया गयाहै। [illegible] लिखिलेना

पृष्ठ	पंक्ति	पुनर्निर्मितविषयभेदाः
२६०	१४	**इति प्रायश्चित्त निमित्तानां महापातकादीनांनाम लक्षण विवेक प्रकरणं त्रिपरिच्छेदमयं॥** इस प्रकरण मे २४। २५। २६ ये तीनि परिच्छेद हैं इन तीनो मे महापातकों से लेकर तुच्छ उपपापो पर्यन्त सब तरहके निमित्तोंका निर्णयनाम लक्षणो सहित कियागयाहै—यद्यपि तीसवें परिच्छेदकेअन्तमे दशपरिच्छेदोका प्रकरण कहाजायगा तिसको महाप्रकरण समुझिलेना कि वहतीनि प्रकरणोका एक वड़ा प्रकरण है तिससे कुछ दोषनहीं (इसत्रुटिको चौदहवीं पंक्तिके साथहीलिखिलेना)
३२६	२५ २०	भ्रामकता—इन तीनि पंक्तिओकापाठ जो भ्रामकसा प्रतीत होताहै उस भ्रांतिका भजन आगे ३३० पृष्ठमे दशवीं १० पंक्तिसे विचारो किन्तु उसीकेअनुसारपाठ यहां भी समझो—यहां जो वशिष्ठ के वचन मे—रजस्वला शब्द जुदाहोनेसे कुछ भ्रांतिसी प्रतीत होतीहै उसका भी समास ऐसा मानना कि (रजस्वलांच ऋतुस्नाताचआत्रेयीमाहुः) अर्थात् जुदी जुदी रजस्वलाको तथैव ऋतुस्नाताको भी आत्रेयी कहिते है॰ तहां मुख्यतो ऋतुस्नातानाम ऋतुमतीसे प्रयोजन है उसीके अन्तर्गत रजस्वला होनेके दिवस भी अपेक्षित ठहिरे किन्तु केवल रजस्वला या उसके स्नान के समीपी दिवसो से तात्पर्य यहां नहीहै ऋतुमतीसे प्रयोजन ठीकहै उसीका प्रमाणदेखो प्रचेताके वचनमे ४३४ पृष्ठकी सबसे निचली पंक्तिमें जैसी अनृतुमती कही तैसी उसके विपरीत यहां ऋतुमती जानना—यह सब साधारणोके बोध हेतु लिखनापरा अन्यथा विवेकीजन आपही ज्ञानमानहैं (इन्हीं तीनि पंक्तिओका पाठ परिवर्त्तन भी अशुद्ध शुद्ध चक्रमे देखो)
३३३	२२	**चतुः परिच्छेदमयं॥** इस प्रकरण मे सत्ताइसकी आदिसे तीसके अन्ततक चारिही परिच्छेद हैं जिनमें केवल ब्रह्महत्याकी व्यवस्था कहीगई (इस त्रुटिको बाईसवी पंक्तिके साथही मिलाकर आगुपर लिखिलेना)॥
३३३	२३	**इति साधारण प्रकरणांच दशपरिच्छेदमयं॥** (इस त्रुटिको बाईस पंक्तिके नीचे और तेईसवींके ऊपर दोनोके बीचमे स्थापन करना)
३५८	१० १३	अर्थ विशेष—ये दोनो पंक्तिदेखो उनमे वशिष्ठने कहाहै कि राजा आप न मारिसके तो चोरसो औदुम्बरशस्त्र सौपिदे तिससे अपने आपही चोर मरिजाय—इस कथनमे साफ यही अर्थ मिलता है कि तमचा तुपंचा आदि गोली बारूदवाला आग्नेयशस्त्र सौपिदे जिससे चोर अपने हाथसे फोरिके तब शुद्धहोय —यद्यपि मिताक्षरा मे (औदुम्बरताम्रमय) औदुम्बर तांबेकाशस्त्र ऐसाकहाहै क्योंकि उदुम्बर तांबा तिसकाबना औदुम्बर कहावै—तथापि यह प्रयोग नहीं मिलताहै कि तांबेका ऐसा कोई शस्त्र संसार में होताहै यानहीं जो अपने किसी विशेष नामसे विख्यात हो और तिसकेद्वारा चोर अपने हाथसे मरसके परंच तुपक्षा आदि आग्नेयशस्त्र यद्यपि लोहेके होतेहैं तौभी उनकानाम औदुम्बर इस लक्षण से वशिष्ठजीने माना होगा कि गूलरका फलभी औदुम्बर कहाता है तिसके समान गोली भी गोलहोती जो तुपंचा आदिसे भरीजाती और गुल्का गुटिका नामोसे या बंदूक मे गोल गोलक नामोसे प्रसिद्ध है तथा [illegible] सब धर्म भी शास्त्रमे [illegible] प्रसिद्ध है (इसपाठको यान्त्र मानिके ३५८ पृष्ठ मे सबसे नीचे [illegible] जगहपर स्थापनकरना)

पृष्ठ	पंक्ति	पुनर्निर्मितविषयभेदाः
१२	२३	**इति साधारणं प्रकरणं पंचपरिच्छेदमयं॰ नचैतेषु पंचसुपरिच्छेदेषु प्रकरणत्व नियमः॥** अर्थात् चवालिस परिच्छेदकी आदिसे यहा अरतालिस परिच्छेद के अन्ततक पाच परिच्छेदोका साधारण मिला भुला प्रकरण ऐसानाम यद्यपि बोधमात्र के निमित्तसे लिखि दियागया तो भी इन पाचोमे विषय अपना अपना जुदाहै तिससे प्रकरणकानाम अर्थो सहित नही सिद्ध होताहै क्योंकि प्रकरण इन्हीं सबका एक होताहै जिनके विषय एक समान हो—इसीलिये इन पाचोके जुदे जुदे पाच प्रकरण समझने चाहिये—इसका व्योरा पारदार्य प्रकरणके ठिकानेपर फिर भी दर्शावेंगे तब समुझि लेना • इसके लिये ४८६ पृष्ठदेखो (इस त्रुटिको तेईस २३ पंक्तिके नीचे लिखिलेना)
३८५	१६ २४	अर्थवाद—इन दोनों पंक्तिको देखो • तहां कर्मसाधन होसकने आदि गुणका तात्पर्य केवल यहीहै कि घरके काम धन्धोमे समर्थ और निपुणहोय तथा पतिके मैथुन और सेवा आदि प्रयोजन वालीहो विक्षिप्ता या योनिहीना या गूंगी बहिरी कोढिन आदि होनेसे निकम्मी न हो (परन्तु उस उत्तम गुणसे रहित होय जो स्त्रियोका मासिकधर्म प्रसिद्धहै जिसके द्वारा सन्तानरूपी रत्न पैदाहोते हैं वही आत्रेयी कहाती है उसके वधपर इनसे भी बडे प्रायश्चित्त चाहिये सो तीसवें परिच्छेद मे लिखिचुके तहा देखो (इस पाठको ४८१ पृष्ठमे सबसे नीचे स्थापन करना चाहिये यह किसी की त्रुटि नहींहै॥
४८०	२८	यहा संदेह शेषरहा कि जिनको यहां निकम्मी कहा उन्होंको ४८१ पृष्ठमें—तदपि (कर्मसाधन त्वादि गुणयोगिनी) यह कहिचुके तो फिर कर्मसाधन होसकने की सम्भावना आदि उत्तम गुणमे युक्त होनेपरभी निकम्मी उनको क्योंकहा—सुनो निकम्मी उनका परम उत्तम गुण समुझानेके निमित्त सेही कहागया तहा मंदा मध्यमा कहिके भी समुझिलेना क्योंकि कर्मका साधनत्व आदि गुणमेयुक्त होनेका व्योरा उसी ४८१ पृष्ठकी अपेक्षा ऊपर लिखागया तिसको देखो वैसे गुणोमे संयुक्त होनेपरभी निकम्मी या मंदा मध्यमा कहाती हैं क्योंकि आत्रेयोसे मंद होतीहैं (इस पाठको २८ पंक्तिके बीच में एकहीहै इन चारिअक्षरोके आगे त्रुटिमानिके हाशियेपर लिखना जिसके आगे ॥ २८ ॥ यही अंक है
५०८	२५	भ्रामकपाठ—पचीसवीं पंक्तिसे लेकर पराशर के आठ नव श्लोकहैं यद्यपि उनमे अशुद्ध कोई पद नहीं है तथापि उनके विश्राम अस्तव्यस्त है कि प्रायश अर्द्धश्लोक दूसरे अर्द्ध मे मिलादिये और चरण वा आधे चरणपर व्यर्थ विश्रामहैं कि जहापर विश्राम न होना चाहिये यह सबमे बडी भ्रामकता होतीहै पढते समय दुखदेतेहैं—सो यह एक निदर्शनका नमूनामात्र बतलाते हैं कि [illegible] पाचसौ आठके पृष्ठमे भ्रामकता हुई तैसी और भी बहुधा [illegible] श्लोकों मे दिखाई देगी [illegible] लिपिके निमित्त डौलसे अन्य या छपी परन्तु अब कोई इसका उपाय ऐसा नहीं है [illegible] किसी प्रकारसे स्थापन करीजासकै—केवल यही इलाज है कि [illegible] देखादेखी अर्द्ध जुदे किये और व्यर्थ विश्रामोके [illegible] सद्व्यसनी बुद्धिमान अपनी जिल्दोमे सुधारिलें।

पृष्ठ	पंक्ति	पुनर्निर्मितविषयभेदाः
		वहां देवलका वचन हे (स्वयतुब्राह्मणाब्रूयुः) इत्यादि इसकी व्याख्या जो कुछ वहालिखोहे सोभी यहा शंखजीके वचन से मीलान करिके काम चलाना क्योकि दोनो वचन का एकही तात्पर्य हे= (यह इतना विशेषलेख तेरहवीं पंक्तिमे त्रुटिमानिके आयुपर लिखिलेना)
६६२	१०	आरूढ़ करेगा यह तात्पर्य हे—छ सोअरतालिस के पृष्ठमे सातवींपंक्ति देखो शखजीका वचनहे (तस्यगुरुवांधवान्राजसमक्षं) इत्यादि इसी वचनकी व्याख्या वहा जो कुछ लिखी हो तिसका भी मीलान यहा देवल के वचन से करना चाहिये क्योकि वहा जो शखजीका ध्वन्यर्थ हे वही यहा देवलका तात्पर्य हे और सिद्धांत दोनोका यहीहे कि जिन पापोके अपराध में राजशादी (राजमुद्रई) न होताहो न होसक्ता हो तिनके मध्ये प्रायश्चित्तका बोझडारनेवालो को राज अदालत में प्रकाश करना या करवाना कुछ आवश्यक नहींहे—परतु जहां पापी इच्छा सहित पापकरे और प्रायश्चित भी न करनाचाहे और सज्जनोकी सुशिक्षासे अपनी प्रकृति को भी न सुधारे वल्कि वारम्वार पापकर्म का अभ्यास करे तो फिर सभी पाप ऐसेहे कि राज अदालतके सन्मुख पापीके बडे बूढे बधुजनोको समझाकर प्रायश्चित्त करायाजाय ॥ (यह इतना लेख विशेष दशमी पंक्तिकी त्रुटिमानिकर आयुपर लिखलेना चाहिये)
७६२	११	समुझलेना——अर्थात् जिस व्रतकी साधना जितनेदिन होतीहो उसके बदले उतनेही दिनोतक उक्तसख्या रोज रोज जिमावे इसका दृष्टान्त जैसे चान्द्रायण में तीसदिनतक चोबीस ब्राह्मण ॥ ० ॥ (यह इतना लेख ग्यारहवीं पंक्तिमें त्रुटिमानिके आयुपर लिखलेना चाहिये)
८६२	१९	ने समुझाया—परंतु जैसा अति निर्धनको प्राजापत्य के बदले बारह ब्राह्मण कहेगये तैसा अन्यव्रतोको ऊपरले हिसाब मे जितने होमके तितने उनमें भी इन्हीं बारहके अनुसार लेला जोडिके समुझिलेना ॥ ० ॥ (यह इतनालेख उन्नीसवीं पंक्तिमें त्रुटिमानिके आयुपर लिखि लेना)
		मिताक्षरा सटीक प्रायश्चित्तकांड——इस ग्रंथकानाम निर्माताका निर्माण किया (मर्यादापरिपाटी समाचार) धर्मशास्त्र ठीक ठीकहे जैसा सन्१८०३ ई० से लेकर आचार और व्यवहार के दोकाडोपर छपिचुका सो प्राचीन ग्राहकोके पास वह मौजूद हैं उनके ऊपर याज्ञवल्क्यस्मृति और मिताक्षरा मर्यादा परिपाटी ये तीनोंनाम समस्या कियेगयेथे अबके इसकाड प्रायश्चित्त के पृष्ठोंपर मिताक्षरा सटीक छापागया किसी भ्रांतिसे निर्माता के अनुपस्थित होनेमें सो इसबात मे कुछ दोष वा गलती न समझना कभी दुबारा मुद्रित होनेमे परिवर्तन कियाजायगा—यथार्थ मे मिताक्षराका पूरा लेख इसमे प्रधानतासे लेकर वाकी और ग्रंथोका सारांश लियागयाहे कि जो जो बातें मिताक्षरा में भी नहींथी उनकी व्यवस्था इस मर्यादा परिपाटी में मिलसके——और जो मिताक्षरा में प्रकाश परिच्छेद आदि प्रबन्धभेद जो कुछ नहींथे सो सब इसमें अपने रचयिता के उद्योग से निर्माण किये गये जिनसे व्यवस्था ढूंढनेवालो को सुगमता होय—शास्त्रोक्त विधि जो सबकार्योका होती है सो मर्यादा कहाती हे—और सब देशोंके भिन्न भिन्न आचार्योकी रीतिहे सो परिपाटी कहातीहे जो गुरुत्व पुरुषो से लेकर क्रमागत चली आईहो ये दोनो मिलिके (मर्यादापरिपाटी) बना उन्ही दोनोका अच्छा आचरण वर्तमान होय या वर्णन कियागया जिस धर्मशास्त्र मे सो (मर्यादा परिपाटी समाचार) धर्मशास्त्र इसनामसे यथानाम तथा गुण सार्थनाम होताहे ॥ इति ॥



मिताक्षरा सटीक॥

तीसराप्रायश्चित्तकाण्ड॥

श्रीगुरुंनुप्रणम्यादौ परमात्मपदाभिधम् । तद्वचोमंत्रपूतात्मा शुद्धिंगत्वाविशेषतः १ ॥
ध्यात्वासर्वशरीरस्थं जगदीशंनिरञ्जनम् । योह्यस्यजगतःस्रष्टा चराचरमयस्तु २ ॥
योगीश्वरंयाज्ञवल्क्यं मिथिलापतिपूजितम् । येनलोकोपकाराय कृतेयंधर्म्मसंहिता ३ ॥
विज्ञानेश्वरनामानं प्रणम्यचपुनःपुनः । मिताक्षराकृतायेन विद्वज्जनप्रमोदिनी ४ ॥
श्रीमर्यादाप्रियस्तस्या मर्यादापरिपाटिकाम् । भाषाटीकांप्रकुर्वाणः शुक्लोदुर्गाप्रसादकः ५॥
आचारव्यवहाराभ्यां निवृत्यायेतनोतिच । प्रायश्चित्ताभिधंकांडं क्रमप्राप्तंमलापहम् ६ ॥
प्रायश्चित्तमपेक्षूना मात्मशुद्धयभिलापिनाम् । सौगम्येनैवबोधाय परार्थेवाविचारिणाम् ७॥

प्रायश्चित्त काण्डका प्रारम्भ किया चाहते हैं तहां पहिले यहबात भी प्रकाश करनी आवश्यक ठहिरी कि प्रायश्चित्त काण्डमें क्यावस्तु वर्णनकरेंगे–ऐसे समझो कि आचारकाण्ड में गृहस्थाश्रमीमात्र सबहीके नित्य और नैमित्तिकधर्म वर्णनकिये थे उनमें भी राजाश्चतः गिनती होचुका क्योंकि वहभी एक गृहस्थीहै–फिर इसी आचारकाण्ड में ३०८ श्लोक से लेकर व्यवहारकाण्ड पर्यंत एक गृहस्थी विशेष जो अभिषेक आदि गुणोंसे संयुक्तहोने कारके राजा प्रसिद्ध होताहै जिसके गुण धर्म सबके जुदेही दर्शायेगये क्योंकि सब गृहस्थियोंकी अपेक्षा उसमें राजलक्षणयुक्त विशेषके निज गुणादिधर्म प्रजापालन आदि दलकेलिये अधिक होतेहैं–अब इस प्रायश्चित्तकाण्डमें उन्ही पूर्वोक्त सर्वधर्मोंका अपवाद (अपतिछुट इस्तिस्नाए) वर्णनकरेंगे–जोकि इन धर्मोंका अधिकार संकुचितकरने (रोकिदेने)वाला आशौचका नियम पहिले कहेंगे ॥ तहाँ आशौचशब्दके अर्थसे वहकाल इतना समझना जिसमें यज्ञकरने आदि कारणोंसे स्नान ध्यानआदि पूर्वोक्त धर्मोंका अवरोधहो और यही इस अपवादका स्वरूप

है कि आचार और व्यवहारकाण्डमें जो जो धर्मकरने कहेगये सो सब आशौचकाल आदि समयोंको छोडिकर समझने किंतु आशौच आदि अशुद्धकालों में पूर्वोक्तधर्म करनेसे रुकिजायँगे॥परंतु ऐसाभी न समुझिलेना कि नियत किसीकर्मका अधिकारही उतनेकाल में न होगा क्योंकि यहांपर केवल यहवार्ता कथन होरहीहै कि जिस कालमें पिण्डदान जलदान आदिविधि उद्धार करनेके हेतुसे पठनपाठन आदिकर्मोंका पर्युदासरूपी निवारण करनापरै ऐसा निमित्तभूत कोईला अतिशय जो किसी पुरुष में व्याप्तहोय तोवह उतनाकाल आशौचकेनामसे कहावै॥औरभी(अशुद्धावान्धवाःसर्वे) अशुद्धसभीबांधव)इत्यादि वचनोंमें अशुद्धता जोकहींकहीगईहै तिसपरध्यानदेनेसे और भी वृद्धव्यवहारोंपर अनेकभाँति दृष्टिदेनेसे विचार में तर्कनारूपी व्यंग्यखड़ा होताहै क्योंकि अशुद्धता जोहै सो वृद्धव्यवहारों में अर्थात यज्ञआदि बडेकामों में अनाहिताग्नि वा आहिताग्नि वा दीक्षितआदि जो जो अशुद्धताके अनधिकारी कहेजायगे तिनपर नहींआरूढ होसक्तीहै तो फिर सभीबांधव क्योंकर अशुद्ध समझेजायँ तिससे व्यंग्य खड़ाहोताहै--औरभी वृद्धव्यवहारहीकी व्युत्पत्ति शब्दमार्गसे देखनेमें कईभाव समझेजाते हैं कि बड़ेबड़ेकामोंका अर्थमानाजाय या बूढ़ेजनोंकी आज्ञा अर्थ समुझा जाय या पुराने वृद्धजनोंमें क्योंकि--जो अशौची सूतकीलोगोंको दानआदि कर्मोंका निषेध देखिलेनेसे उनका अयोग्यत्व आशौचशब्दके नामसे कल्पना कियाजाय तो फिर जलदान आदिविधि जिसके करनेका अधिकार उनको देखिपरता है तिससे उनका योग्यत्व भी कहनापरै। तिससें अनेकतरह के अर्थोंकी कल्पनारूपी दोषका प्रसंग खड़ाहोताहै इसहेतुसे यहतर्कनारूपी पक्षही उपेक्षा करदेनेकेयोग्यहै कि ऐसी थोथी तर्कोंपर बुद्धि न दौडावै॥ अर्थात सामान्यरीतिसे यह समुझिलेना कि पहिले दोकांडोंमे वर्णनकिये धर्मकर्मोंका अपवाद यहाँकहेहैं। तिन अपवाद में सबसे प्रथम योगीश्वर यह दर्शातेहैं कि सपिण्डआदि आशौची (सूतकी) लोगोंको क्याकरना चाहिये सो सबदेखो प्रथम श्लोकमें ॥

ऊनद्विवर्षंनिखनेन्नकुर्यादुदकंततः आश्मशानादनुव्रज्यइतरोज्ञातिभिर्मृतः १ ॥
यमसूक्तंतथागाथांजपद्भिर्लौकिकाग्निना सदग्धव्य उपेतश्चेदाहिताग्न्यावृतार्थवत् २ ।

अवरार्थःसहृद्वयो:--ऊनद्विवर्षकोतिन्हकैउदकाकर्मै । निखनेइतरश्रा(आश्मशान) श्मशान पर्यंत ज्ञातियों करके (अनुव्रज्य) साथजाने योग्यहैं। श्वन यमसूक्त तथा या गाथा जपतेहुये ज्ञातिजनोंकरके लौकिक अग्निके जलाने योग्यहैं (उपेतश्चेत) जो उ-

पनीत हो तो (आहिताग्न्यावृत्ता) आहिताग्निकी दाहक्रियासे (अर्थवत्) प्रयोजन के अनुसार ॥ २ ॥

अभिप्रायार्थ:--दोवर्षसे कमअवस्थाके मरेहुये प्रेतको धरती में गढ़हिला खोदि गाड़ै किन्तु जलावै नहीं यह अभिप्राय समझना और उदक दानविधि जैसी पाँचवें श्लोकसे अगारी कहेंगे सो भी इसको न करे (और भी इसको विशेषता अगारी अधिकोक्तिमेंदेखो) । ततः तिससे दोवर्षके भीतर अवस्थावालेसे इतरकोईमराहो जिसकी अवस्था दोवर्षपूरी या अधिक हो तिसकेसाथ जातिके सपिण्डोंको श्मशानकी भूमि तक जानाचाहिये (इसीवचनसे यहअभिप्रायभीनिकलताहै कि दोवर्षसेन्यूनअवस्था वालेकेसाथ जाना अनियतहै आवश्यक या नियमात्मक नहीं तिससे जाना न जाना दोनों होसक्तेहैं) और साथजाकर यमसूक्त और यमगाथाओंको जपतेहुये जातीलोग दोवर्षपूरी अवस्थाके प्रेतको लौकिकअग्नि अर्थात् असंस्कृत अग्नि जो सबकेवर्तावे में रहतीहै उसीसेजलावें सो उसदशामें कि जब अरणीकाष्ठसे उपजीअग्नि न हो (अर्थात् जो अरणीकाष्ठ विद्यमान हो तो उसीसे मथिकर निकासेहुये अग्निसे दाहदेना चाहिये लौकिकाग्निसे नहीं) अरणीकाष्ठ के न होनेमें यदि लौकिकअग्नि से दाह देनापरै तहां चण्डाल आदि से अग्नि को न ले इसका ब्योरा अधिकोक्ति में देखो । किंतुउपेतश्चेत् • जिसकिसीका जनेऊतक होचुका ऐसामराहो तो आहिताग्नि नाम अग्निहोत्रियों की आवृत्तनाम परिपाटी जो दाहक्रिया मध्ये उनके गृह्य आदि से प्रसिद्धहो तिसहीके प्रयोजन अनुसार लौकिक अग्नि से दाह देनाचाहिये • यह याज्ञवल्क्यमुनि का कथन है ॥ अभी इसमें और जो विशेषता कहिनी शेषरही सो सब अन्य स्मृतियों के वचनोंसाथ देखो अधिकोक्ति में ॥ १-२ ॥

(अधिकोक्तिपदका यही तात्पर्य है कि अधिक स्मृतियोंके वचन उसमें निर्णयकिये जायँ)

१ । २ अधिकोक्तिः-दोवर्षसे ऊनेप्रेतको जलदानादि [illegible] निषेध यद्यपि कियागया तथापि यह विशेषता है कि गन्धमाल्य अनुलेपन आदि से अलंकृत विभूषित करके श्मशानसे जुदी शुद्धधरती में ग्रामसेबाहर खोदि गाड़े कि जहां हाड़ आदिसमीपता झूकनहो = यथाहमनु --ऊनद्विवार्षिकंप्रेतं निदध्युर्बान्धवा [illegible] अलंकृत्यशुचौभूमावस्थिसंचयनादृते नास्यकार्यो [illegible] [illegible] काष्ठवत्त्यक्त्वाक्षिपेयुस्त्र्यहमेवतु = अर्थात्--मनु कहतेहैं कि दोवर्षसे [illegible] बांधव लोग अलंकृत करिके ग्रामसे बाहर गाड़ेंके [illegible] बिना [illegible] शुद्धभूमि में [illegible]

करैं इसका अग्निसंस्कार और जलदान क्रिया भी न करनी चाहिये किन्तु जैसे जंगलमें लकड़ी छोड़िकर बेफिकिर होजातेहैं तैसे इसे गड्ढेहले में दाबिकर तिस पीछे (श्राद्धआदि ऊर्ध्वदैहिककर्म जो आचारकांडमें श्राद्ध प्रकरणके द्वाराकरने कहिचुके तिनसे) उदासीनहोकर तीनदिन उदासीमें बितावें (ध्यानसे सोचनाचाहिये इसकथन से अपवादकास्वरूप सिद्धहोगया कि जो आचार अध्यायमें करना कहाथा वहइसको छोड़कर औरोंपर समझना इसीको छूटया इस्तिस्नाय कहतेहैं इसीतरह सर्वत्र प्रायश्चित्तकांड में आचार व्यवहार दोनोंके अपवाद अनेक भाँति वर्णन होते रहेंगे कि जहाँ जहाँ जिस जिसप्रकारके अपवादका प्रयोजन हो)॥ दोवर्षसे कमअवस्थाके घृत लगाकर गाड़ना और यमगाथा पढ़तेहुये गाड़ना येदोनोंबात यमस्मृतिसे सिद्धहोतीहैं = यथाह यमः = ऊनद्विवार्षिकंप्रेतं घृताक्तंनिखनेद्बहिः यमगाथागायमानो यमसूक्तमनुस्मरन् = अर्थात्--दो वर्षसे ऊने प्रेतकोघीसेचुपड़ि यमगाथा गातेहुये ग्रामसे बाहर खोदिगाड़ैऔर यमसूक्तका स्मरण उच्चारण करतेहुयेलौटैं ॥०॥ देवलः--चांडालाग्निरमेध्याग्निः सूतिकाग्निश्चकर्हिचित् पतिताग्निश्चिताग्निश्चनशिष्टग्रहणोचिताः = अर्थात्--देवलमुनिका यहवचनहै कि जिसप्रेतको अरणीकाष्ठकी अग्नि न मिलनेसे लौकिक अग्नि लेनीपरै तहां उत्तमकुल जातिवालेको इतनी अग्नि न लेनीचाहिये. एकतो किसीचांडालसे दूसरे जो अग्निआपही प्रत्यक्षमें अपवित्रहो जैसे पजावेआदि में लगीहुई तीसरे सूतिकाकेपास जहां जन्मसूतक हुआहो तिसकीअग्नि चौथेपतित के हाथसे न लेनी पांचवें किसी चितामें भी न लेनीचाहिये॥अग्नि संस्कार और जलदानमध्ये लौगाक्षिने यहअधोक्तविशेषता दर्शाईहै = यथाहलौगाक्षिः = तूष्णीमेवोदकंकुर्यात्तूष्णींसंस्कारमेवच सर्वेषांकृतचूडानामन्यत्रापीच्छयाद्वयम् = अर्थात्--सभी बालक जिनका चूडाकर्म मुंडन होचुकाहो तिनको तो नियमसे अवश्यही अग्निदाह और जलदान करनाचाहिये लेकिन बिनामंत्रके चुपके करनाचाहिये. अन्यत्रापिजहां चूडाकर्म नहोचुकाहो परन्तु नामकरण होचुकाहो ऐसेबालकों के मरने में यदि कर्ता पुरुषोंकी इच्छाहो तो अग्निदाहऔर जलदान दोनोंबिनामंत्रके करैं अपने प्रेतकाअभ्युदयचाहि सोचिके अन्यथा कुछ आवश्यक नियमनहीं केवल इच्छापर आनन्दसेचाहे करैं या न करैं॥ इसीनियमके अनुरूपमनुने कुछ और विशेषता कही है = यथाह मनुः = नात्रिवर्षस्यकर्तव्याबांधवैरुदकक्रिया जातदंतस्यवाकुर्यान्नाम्निवापिकृतेसति = अर्थात्--बिना तीनवर्ष पूरेहुये को उदक दान क्रिया बांधवोंको न करनी चाहिये (केवल उदक क्रिया कहने से नाग्निदाहभी समझलेना क्योंकि इन दोनों का

जोडाहै) कहीं विकल्प से तीनवर्ष के भीतरभी जिसकेदाँत जमिचुके हों अग्निदाह उदकदान करो या न करो इसी प्रकार नामकरणहोजानेवाले के तीनवर्ष भीतर करो या न करो किंतु कर्त्ता की इच्छापर आरूढ है आवश्यक नियम नहीं है परंतु तीन वर्षका जो नियम आवश्यक ठहिराया तिससे यह अभिप्राय सिद्ध होता है किचूडा कर्म यद्यपि किसी के कुलपरिपाटी से तीन वर्षके उपरांत पाँचसात वर्षतक होताहो तिससे न होनेपाया तौभी तीनवर्ष से उपरांत मरे प्रेत को अग्निदाह और जलदान अवश्य बिना मंत्रोंके चुपके करदेनाचाहिये = मनुके इस वचनसे लौगाक्षिके पूर्वोक्त वचन में इतना भेदहै कि लौगाक्षिने तीन वर्षभीतरभी चूडाकर्म्महोजानेबाद अग्नि-दाह और जलदान का आवश्यकीय नियम किया और इसमें मनुने तीनवर्ष के उप-रांत चूडा न होनेपरभी आवश्यक नियम ठहिराया क्योंकि चूडाकर्म्मका विशेषकर कोई एकसमयठीकनहींहै तिसकोदेशकालवस्तुके अनुसारविवेचन करिलेनाचाहिये= उर्म्वोक्त सभी वचनोंका अभिप्रायलेकरयहक्रम स्थापनहुआहै किजबतकनामकरणा कर्मसंस्कार न हुआहो तिससे पहिलेमरै तो खोदिके गाडाजायउदकदानभी नकिया जाय·फिर नामकरणके उपरांत तीनवर्ष भीतर विकल्पहै कि चाहैं अग्निदाहजलदान करो या न करो·तिसपीछे जबतक जनेऊ न हुआहो तिसकेमरनेमें अग्निदाह जलदान दोनों अवश्यकियेजायँगे परंतु विनामंत्रके चुपके कियेजायँगे और तीनवर्ष के भीतर जिसका चूडाकर्म होचुकाहो तिसकाभी यही नियम समुझना·फिरजनेऊ होजानेबाद जोमरै तिसको (आहिताग्न्यावृत्त विधिसे) जलायकर सब कर्म ऊर्ध्वदैहिकभी किये जायँ जोकुछ लोकमें होतेहैं·तिसजलानेमें कोई भाँतिका विचारहै कि जनेऊवाले कई तरहके होतेहैं उनका जुदाजुदा विधान अपनी कुल परपाटीसे होताहै अर्थात् एक तो सामान्य कुलका लड़का किजिसके कुलमें अग्निहोत्र नहींहोता औरदाहकर्मभी अग्नि होत्रियोंकी रीतिसे नहींहोताहो.दूसरावह लड़का किजिसकेघर अग्निहोत्र तो नहींहै परंतु अग्निहोत्रियों की रीतिसे दाहकर्म की परिपाटी चली आतीहै·तीसरा वहकि जिसकेघर अग्निहोत्रकी स्थापना रहितीहो · चौथा वह कि जिसकेघर अग्निहोत्र की स्थापनाहै औरवह आप्ने आपभी आहिताग्निहो क्योंकि विवाहभी होचुका जिसने उसने अग्निकी स्थापनाभी जुदी अपनी करीहोगी—इन्हीं भेदोंके अनुसार दाहकि-यामेंभी कईभेदहोतेहैं क्योंकि जोपूरे अग्निहोत्री हैं तिनकादाह उसी अग्नि होत्रकी अग्निसे होता और यज्ञके पात्र आदिभी मुर्दाकेसाथही जलादेनाहोते इत्यादि विधा-न उनको कुल पद्धतियोंमें प्रसिद्धहै·विनजनेऊवालोंमें अग्निहोत्रके न होनेपरभी कोईवार्

उसी रीतिकी चलीआतीहैं क्योंकि पहिले कभी अग्निहोत्र उनके होताथा इत्यादि सब भेदोंका तात्पर्य योगीश्वर ने (उपेतश्चेत्-आहिताग्न्यावृतार्थवत्) इतने अक्षरों से समुझायाहै कि जिसकी जैसी परिपाटीहो उसीके प्रयोजनसे दाहकर्मकरै-इसका यह दृष्टांत है कि जिसके अग्निहोत्र का वितान हो और भूमिजोषण प्रोक्षण आदि विधि करनी आवश्यक हो तो वही करना या जिसके अग्निहोत्र का वितान आदि न हो तो वहकुछ प्रयोजनहै कि पात्र योजन आदि विधान उसका न करनाहोगा· यह समस्तवार्ता प्रासंगिक है· अब उसी प्रकृतको दर्शाते हैं कि उपनीत जनेऊ होचुके का दाहलौकिक अग्निके विधानसे होताहैपरंतु जो अग्निहोत्रीकेकुलमेंउपनीत होनेपरभी अनाहिताग्निपुरुषमरै तो गृह्याग्निसे और लौकिकाग्निके दाहसेभी जलायाजाताहै किंतु उसका विवाह और यज्ञाग्नि संबंध नहोनेसे आहवनीय आदि अग्नि नहीं है॥ उसीअग्निसे या दूसरी अग्नि से भी · यह अनन्तर विधान भी वृद्ध याज्ञवल्क्य ने प्रकाश किया है= यथा—आहिताग्निर्यथान्यायंदग्धव्यस्त्रिभिरग्निभिः अनाहिताग्नि रेकेन लौकिकेनापरोजनः=अर्थात्–आहिताग्नि जो अग्निहोत्री हो सो तीनों भाँति की अग्नियों में किसी अग्नि से यथोचित न्याय के अनुसार जलायाजाय अर्थात् तीनों मौजूद होते जो उत्तमहो उसीसे जलाना चाहिये अनाहिताग्नि जो अग्निहोत्री के घर जन्म होतेहुये अग्निमान न हो सो एकही गृह्याग्नि से जलाया जाय और बाकी सामान्य जन लौकिक अग्निसेजलाया जाय॥ अग्नीनां भेदाः—प्रसंग से आवश्यक जानिके अग्नियों के भेद भी दर्शाते हैं - यद्यपि अग्नि तीनही मुख्य और प्रसिद्ध हैं तथापि उनके भेद अनेक हैं और यथार्थ में सर्वत्र अग्नि एकही है कि जिसके संस्कार भेद या स्थान कर्म भेद से नामभेद भी होजातेहैं· इसका दृष्टांत है कि जैसे एक लौकिकअग्नि वहीकहाता जो लोकमें जहां तहाँ प्रसिद्धरहता और कोईभी संस्कार उसका शास्त्रोक्त विधानसे न किया गयाहो इसकेभी स्थानदार्य भेदसे अनेक नाम होतेहैं जैसे भाड़ भट्ठी आदिमें होनेसे---फिर वही अग्नि जो निरंतर किसी के घर में रहता हो तो आवसथ्य यह नाम होजाता क्योंकि आवसथ नामहै घरका (परंतु घरमें रहते भी जबतक कोईभी संस्कार न किया जाय तबतक दोनों नाम रहतेहैं अर्थात् आवसथ्य और लौकिकभी कहाताहै) अर्थात् ह लौकिक अग्निको स्थान भेदसे अनेक नाम होतेहैं—फिर उसी आवसथ्यनाम अग्निको जब किसी यज्ञ विशेष के लिये रक्खे लौकिक पाक यज्ञोंके लिये उसका मार्गिक संस्कारोंसे अग्निकरैं तब गार्हपत्य नाम कहाता है क्योंकि गृहपति जो ह [illegible]

का स्वामीहै वही उसका संस्कार यजन करनेसे यजमान ठहरा और उसी गार्हपत्य अग्निको नामांतरसे गृह्याग्नि भी कहते हैं—फिर उसी गार्हपत्य में से थोड़ा अग्नि लेकर जब किसीके विवाह में होमसंस्कार से संयुक्त कियाजाय जिसे साक्षीबनाकर वर वधूको प्रतिज्ञा बचन दियेजाते हैं तब उसका और नाम भेद भी विवाहाग्नि ऐसा कहाने लगता और वही वैवाहिक अग्नि आगे को सदा सर्वदा उन वर वधू के घर में रक्खे रहिती है कि जबतक वह पत्नी जीवै किंतु मरजाने से उसी अग्निमें फूंकी जातीहै फिर अन्य विवाह करनेसे अग्नि स्थापन होताहै (आचार मर्यादा परिपाटी में ८९श्लोक देखो)--फिर उसी गार्हपत्य अग्निमेंसे थोडी लेकर जुदेकुंड या वेदीमें वेदोक्त कर्म अग्निहोत्र आदि किसी होमके निमित्तसे स्थापनकरके संस्कार करीजाय तो यह अग्निआहवनीय कहाता और वैतानिक भी कहाता और इस भांतिके वेदोक्त अनेक अग्नि सब श्रौताग्नि के नामसे प्रसिद्ध होते हैं-इसी प्रकार अनंतरोक्त वैवाहिक और गार्हपत्यभी स्मार्तअग्नि के नामसे प्रसिद्ध होतेहैं॰ इसी प्रकार ऊपर कहे आवसथ्य पर्यंत लौकिक अग्निके नामसे प्रसिद्ध होते सो लिख चुके हैं तिससे अग्नि के मुख्य भेद तीनही कहेजाते हैं (अन्यथा भेदतो अनेक अभी लिखने गयेहैं) इसीलिये आचार मर्यादा परिपाटी में योगीश्वरने यह कहाथा कि (कर्मस्मार्तंविवाहाग्नौकुर्वीत प्रत्यहंगृही दायकालाहृतेवापिश्रौतंवैतानिकाग्निषु)अर्थात गृहस्थ का सदायह धर्महै कि प्रतिदिन स्मार्त कर्मोंको विवाह की संचितकरी अग्नि में किया करै अथवा दाय भाग होनेके समय जो हिस्साबांट में पाईहो तिस अग्निमें करै और वेदोक्त श्रौतकर्मोंको वैतानिक आदि अग्नियों में करै=और जो अनेक अग्नि लिखने गये है तिन में एक दक्षिणाग्नि के नामसे कहाता उसका यहलक्षणहै किजो कर्मोंके [illegible] के रसोई आदि पाकयज्ञ में प्रवृत्तकराजाय सो इस दक्षिणाग्नि जनकके लक्षण [illegible] नाहै कि जो कई भांतिसे होताहै क्योंकि या तो किसी दूसरे गृहस्थीके गार्हपत्य में से लाईजातीहै या बनवार वैश्यके कुलसे या भाड़मेंसे इत्यादि [illegible]

अधर्मसे लिप्त होताहै ॥ ० ॥ दाहकर्म भी स्नान आदि कराने पीछे करना चाहिये जैसा यह वचनहै = प्रेतंदहेच्छुभैर्गंधैःस्नापितंस्रग्विभूषितम् = अर्थात्—प्रेतको स्नान कराये हुये माला आदिसे विभूषित उत्तम गंध द्रव्यों सहित जलावै ॥ प्रचेतस्स्मृति में प्रचेताने भी कहाहै = यथा = स्नानंप्रेतस्यपुत्राद्यैर्वस्त्राद्यैःपूजनंततः । नग्नदेहंदहेन्नैवकिंचिद्देयंपरित्यजेत् = अर्थात्—पुत्रादिकोंके द्वारा प्रेतका स्नान और वस्त्रादि सामग्रीसे पूजन भी होय किंतु नंगीदेह नहीं जलावै और चढ़ाये हुये वस्त्रमें से कुछ देने योग्य फाड़िके छोड़िदे जो श्मशान के निवासी पावैंगे ॥ ० ॥ मनुने प्रेतको लेजाने मध्ये भी विशेषता कहीहै = यथा—नविप्रंस्वेषुतिष्ठत्सुमृतंशूद्रेणहारयेत् । अस्वर्ग्या ह्याहुतिःसास्याच्छूद्रसंपर्कदूषिता = अर्थात्—अपने जाती मौजूदहोतेहुये मरे ब्राह्मण को शूद्रके कांधे न पहुंचावै क्योंकि जो आहुति उसको स्वर्ग पहुंचाने हेतु दीजायगी वह शूद्रके संसर्गसे दूषित अस्वर्ग्य होजायगी (इस वचनमें अपनौं के होते हुये यह कथन केवल गोत्रियौं पर नहीं कहा समझना किंतु जातिमात्र पर विवक्षा करीहै कि ब्राह्मण मात्र किसीके होते हुये ऐसा अनर्थ न होनेदेवै क्योंकि अस्वर्ग्य दोषके भागी वेभी होतेहैं जो अनर्थ देखैं इसी प्रकार अन्य वर्णोंमें समझना।।०॥ जहां ग्रामके चारों खूंट मार्ग खुलेहैं या शहर पनाह के दरवाजे पुरमें बने हों तहां भी किस द्वारको कैसा मुर्दा निकासा जाय यह भी नियम कियाहै = यथा—दक्षिणेन मृतंशूद्रंपुरद्वारेणनिर्हरेत् । पश्चिमोत्तरपूर्वैस्तुयथासंख्यंद्विजातयः = अर्थात्—मरे हुये शूद्रको पुरके दक्षिण द्वारसे निकासै और पश्चिम उत्तर पूर्व इन द्वारों से यथा क्रमके अनुसार द्विजातियों के मुर्दे निकासे जायँ—किंतु पश्चिम द्वार से वैश्य और उत्तर द्वारसे क्षत्री और पूर्वद्वारसे ब्राह्मण निकासा जाय· तात्पर्य इसमें यही है कि विना प्रकाश किये स्वतः प्रकाश होजाता है कि अमुक वर्ण का मुर्दा निकसा ॥ न ग्रामाभिमुखंप्रेतंहरेयुरितिहारीतोपि = अर्थात्—हारीतने यहभी कहा कि गांवको सन्मुख मुर्दा न लेजायं ॥ ० ॥ कदाचित् कोई विदेश में मरिजाय जिनका शरीर पुत्रादिकोंको न मिलसकै परन्तु हाड़ मिलैं तो उन हाड़ोंसही प्रतिज्ञात पुत्तलविधान करै या हाड़ भी न मिलैं तो पर्णनरमिति पुत्तलविधान शौनकादि सूत्रोक्तनामभिः कराके दाहआदि संस्कार करै(पर्णनर अर्थात् ढाकके पत्ते और सरकंडोंसे नराकार मुर्देकी नकल बनानी पुत्तल विधान कहाजाता है)और सूतक भी दशदिन आदि जैसाहोता है सो सब इसमें मानें— इस नियम का प्रमाण आगे [illegible] का वचनदेखो— यथाह वसिष्ठः= आहिताग्निश्चेत्प्रवसन्म्रियेत पुनः संस्कारंकृत्वा शववच्छौचमिति

अर्थात्—जो आहिताग्निः पुरुष अग्निहोत्री होकर विदेश में रहिते मरजाय पुत्रादि कोंको अग्निदाह देनेका अवसर न मिलै तिसका फिर पुत्तल विधानके द्वारा अग्नि संस्कार करके मुर्दा की तरह सूतक मानै॥ और जो अनाहिताग्नि पुरुष अग्निहोत्री नहींहै सो विदेशमें मरै तिसका सूतक तीनरात्रि मानाजाय—इसके भी प्रमाणमें यह वचनहै=यथा=सुपिष्टैर्जलसंमिश्रै र्दग्धव्यष्पुत्रतथाग्निना। असौस्वर्गायलोकायस्वाहे त्युक्त्वासवांधवैः॥ एवंपर्णाशरंदग्ध्वा त्रिरात्रिमशुचिर्भवेत्=अर्थात्—पर्णानर नामक पुत्तल बनाने पीछे जल मिलायेहुये अच्छे तंदुल यव आदिके पिसानोंसे घोपिलीपि के अग्निसे जलाना योग्यहै और उन्हींसने पिसानोंके बने पिण्डसे (यहकहिकर कि यहमृतक और पिण्ड स्वर्गलोक प्राप्त होनेके निमित्तस्वाहा) इस भाँति मंत्रसे स्वाहा कहिकर बांधवोंसहित कर्त्ता पुरुष पर्णाशर को जलाइकर तीनरात्रितक अशुचिनाम सूतकीरहै॥ यहाँतक मृतक संस्कारकहागया कि इसतरह गाड़ै या जलावै॥ संस्कार के आगे फिर क्या करना चाहिये सो नीचे अभी कहते हैं १।२ परन्तु दाह के दिवसजो कुछ और करना होता है तिसकी व्यवस्था आगे पाँचमी अधिकोक्ति में व्यौरेवार देखना॥ इतिशवदाहविधानं॥

(अथ जलदानप्रकारः)

सप्तमाद्दशमाद्वापि ज्ञातयोभ्युपयंत्यपः। अपनःशोशुचदघमनेनपितृदिंमुखाः ३॥

अर्थः—सातमें या दशमें दिवसके अनन्तर ज्ञातीयजन (अपनःशोशुचदघं) इस मंत्रसे दक्षिणामुख होकर जलका अभ्युपगम करतेहैं+इसमें अभ्युपगमन कहिनेमें उस के प्रयोजन अनुसार स्नान और जलदानकर्म समुझाजाताहै क्योंकि चौथेश्लोकमें इमी तीसरे और पाँचमेंका अति देशवर्म नाना आदिपर बताकर उदक क्रिया करनी कहें गे और पाँचमें श्लोकमें भी जलदानविधि स्पष्ट भावसे कहेंगे (अतिदेश उसकानाम है कि जो कोई धर्म किसी एक दोके नामसे कहिकर औरोंपर भी बताया जाय कि जैसा यहाँ तैसा वहाँ भी होना चाहिये॥ ३॥

३अधिकोक्तिः=उक्त जलदान विधि विषम तिथियों में करनाचाहिये समतिथि- यों में नहीं=यथाह गौतमः=प्रथमतृतीयपंचमसप्तमनवमेषूदकक्रिया= अर्थात्—पहिले तीसरे पाँचमें सातमें नवमें दिवसोंमें उदक क्रियाहोय॥ सो यह स्नानके अनन्तरकरना चाहिये=यथाहगातातपः=शरीरमग्निसंयोज्यानवेक्षमाणाअपोभ्युपयंतीति=अर्थात् मृतकदेह को अग्नि में संयुक्त करके फिर उसकोनहीं न देखते हुये इनका अभ्युपगम

करैं ॥ प्रचेताने कुछ और भी विशेषता कही=यथा= प्रेतस्यबांधवायथावृद्धमुदकमव तीर्यनोद्वर्तयेयुरुदकांते प्रसिंचेयुरपसव्ययज्ञोपवीतवाससो दक्षिणाभिमुखा ब्राह्मणस्यो दङ्मुखाः प्राङ्मुखाश्च राजन्य वैश्ययोरिति= अर्थात् प्रेतके बांधवलोग जैसाउत्तमज लाशय या गहिरा जलमिलै उसमें गोतालगाके शरीरको नमलें घिसें जलके किनारे अंजलियाँसीचें दाहने कांधे जनेऊ अँगोछा से अपसव्य होकर दक्षिणामुख होकर यह नियम सबका सामान्य है उसमें यह विशेषता भी करसक्ते हैं कि ब्राह्मणके मुर्देको उत्तरमुखहोकर और क्षत्री वैश्यकेमुर्दाको पूर्वमुखहोकर • किंतु शूद्रकेलियेकोईनियम यद्यपि नहीं कहा गयाहै तथापि शेष पश्चिमकी दिशा केवल बुद्धिसे कल्पनाहोती है तिसका निर्णय देशाचारसे कर्त्तव्यहै ॥ विष्णुकी स्मृतिमें तबतक रोजरोजअंजली देनीकहीहै कि जबतक सूतक मानाजाय=यथाह विष्णुः=यावदाशौचं तावत्प्रेतस्यो दकंपिंडंचदद्युरिति=अर्थात्–जबतक आशौच रहै तब तक प्रेतके लिये जल और पिंड भी देतेरहें ॥ प्रचेतस्स्मृति में रोजरोज अंजलियों की वृद्धि करनी कहीहै जैसा यह प्रचेताका वचन है=दिनेदिनेंऽजलीन्पूर्णान्प्रदद्यात्प्रेतकारणात् तावद्वृद्धिःप्रक र्तव्यायावत्पिंडःसमाप्यते=अर्थात्–प्रेत के निमित्तसे दिनदिन प्रति जलभरी हुई अंजलियाँदेवै और जबतक दशपिंडपूराहो तबतक एकअंजलीरोजबढ़ातारहै ॥०॥ ऊर्ध्वोक्त दोप्रकारोंमें छुटाईबडाईके हेतुसे यद्यपि तर्कवितर्करूपीशास्त्रार्थबनसक्ताहै तथापिजो बड़ाअनुकल्पकहा तिसमें बहुत क्लेश उठानेकेहेतुसे बहुधा प्रवृत्तिनहीं सिद्ध होतीहै परन्तु जिसको यह अभिलाषाहो कि मेरे प्रेतकाअभ्युदयहोगा सो प्रथमदेही अनुकल्प को रावे जिसपर न साधाजाय सो दूसरेकोने अनुकल्पका अवलम्बनलेवे कि एकही दिनमें निपटारा हो जैसा याज्ञवल्क्य और गौतम के वचनों से लिखागया ॥ अंजलीदान दोनों हाथ मिलाकर करनाचाहिये=यथा वसिष्ठः=सव्येतरा भ्यांपाणि भ्यामुदकक्रियांकुर्वीरन्=अर्थात्–बायें दाहिने दोनों हाथों से उदक क्रियाकरैं ॥३॥ दशवें दिनकी शुद्धक्रियाका विधान आगे १२ श्लोक के प्रयोगमें देखो ॥

अधिकोक्तिः=जलदानके नियम ऊपर कहेगये सो किसप्रकारसे करना चाहिये तिसका प्रकार पाँचमें मूल श्लोकसे कहेंगे और उसी पाँचमें अधिकोक्ति में सविस्तर ब्यौरा लिखेंगे कि जिससे कुछ संदेह न रहसके ४ ॥

(उदकदाने गुणविधिः)

सकृत्प्रसिंचत्युदकं नामगोत्रेणवाग्यताः । नब्रह्मचारिणः कुर्युरुदकंपतितास्तथा ५ ॥

अर्थः-सकृत एकही बार सींचते हैं जलांजली (प्रेतको) नामगोत्रसे (बांधवलोग सपिंड और समानोदक) बाक्‌वाणी थांभे हुये अर्थात (मौनी होकर) ' ब्रह्मचारी तथा (जातिसे) पतित बांधव जलांजली न करें (यह विधिमें अपवाद है कि ये दोनों जलदान के अधिकारी नहीं ॥ ५ ॥

५ अधिकोक्तिः=(अमुकनामा प्रेतोऽमुकगोत्रः तृप्यतु) इस मंत्रसे एक बार जलांजली छोड़नी मूल श्लोक में योगीश्वर ने कही परंतु कहीं देशाचार वा इच्छा के अनुसार विकल्प भी तीन अंजलीसे होताहै अर्थात नामगोत्रका मंत्र एकही बार कहि कर तीन अंजली देना भी ठीकहै ॥ क्योंकि प्रचेतस् स्मृतिमें तीनवार जल देनेका नियम है जैसा यह प्रचेतामुनि का वचनहै=त्रिःप्रत्येकंकुर्युः प्रेतस्तृप्यतु=अर्थात—अमुकनामा प्रेतस्तृप्यतु इस पूर्वोक्त मंत्रके प्रत्येक उच्चारण से तीन अंजलीकरें ॥ यह नियम तौ तीसरी अधिकोक्तिमें प्रचेताके वचनसे लिखचुके हैं कि रोज़ रोज़ एकएकअंजली की वृद्धि होतीरहे ॥ उन्हीं प्रचेताने यह और भी विशेषविधि वर्णन करीहै=यथा= नदीकूलंततोगत्वा शौचंकृत्वायथार्थवत । वस्त्रंसंशोधयेदादौ ततःस्नानंसमाचरेत ॥ सचैलस्तुततःस्नात्वा शुचिःप्रयतमानसः । पाषाणंततआदायविप्रेदद्याद्दशाञ्जलीन ॥ द्वादशक्षत्रियेदद्याद्वैश्येपंचदशस्मृताः । त्रिंशतशूद्रायदातव्यान्नतःसंप्रविशेद्गृहम ॥ ततः स्नानं पुनःकार्यं गृहशौचंचकारयेत= अर्थात—सबसे पहले क्रियादि किये पीछे नदी किनारे जाकर यथोचित शौच करिके पहिले कपड़े धोवे तिस पीछे स्नान करे॰फिर धोती सहित स्नान किये हुये पवित्र और मनको सावधान किये हुये सेएक पत्थर लेके एक ठिकाने जलके किनारे धरे उसको प्रेत मानिके जो ब्राह्मण प्रेतहो तो दश१० अंजली छोड़ैक्षत्री प्रेतकोबारह१२अंजलीदे वैश्यप्रेत को पंद्रह १५ देनीकहीं शूद्रप्रेतको तीस३० अंजली देनी चाहिये तिसपीछे घरको जावें फिर दुबारा स्नान करना चाहिये और घरका शौच भी लीपपोती करादें ॥ ० ॥ ऊपर मूल श्लोकके उत्तरार्द्धमें योगीश्वरने जो अपवाद कहा तिसके बारे यहां और भी विशेष-

ता निर्णय करते हैं कि ब्रह्मचारी यद्यपि सजाती सगोत्रीहों तौभी अपने ब्रह्मचर्य के समावर्त्तन कर्मकी अवधि तक जलदान आदि कुछ न करें किंतु ब्रह्मचर्य से निपटारा हुये पीछे सूतक मानिके जलदान आदि शुद्धक्रिया उन्हीं सपिण्डोंकी फिर करैं जो जो ब्रह्मचर्यके भीतर मरगये थे. ऐसेही पतित जो द्विजातियोंके कर्माधिकारसे गिर चुके अर्थात जातिपांतिसे बाहरहों वेभी जलदान आदि अशौचकर्म नकरैं परंतु जब कभी प्रायश्चित्त आदि प्रकारोंसे जे कोई जाति पांति में मिलाये जायं तो पहिले मरे हुओं को फिर पीछे जलदान आदि करैं और सूतक मानैं यह सूतक सिर्फ़ तीन दिन होताहै=यथाह मनुः—आदिष्टीनोदकंकुर्यादाव्रतस्यसमापनात। समाप्तेतूदकंकृत्वात्रिरात्रमशुचिर्भवेत = अर्थात—आदिष्टी नाम ब्रह्मचारी का और उसका भी कि जो जातिसे पतितहोके किसी प्रायश्चित्त आदि प्रयोगमें लगाहो. क्योंकि आदिष्टी वह कहाता है जिसको कुछ आदेश कियागयाहो जैसाब्रह्मचारी को आदेश किया जाताहै कि अपोशान कर्मकरो दिन में मत सोना इत्यादि व्रतके नियम और पतित को आदेश किया जाताहै कि अमुक प्रायश्चित्त करो—इसव्याख्याके अनुसार मनु कहते हैं किदोनों आदिष्टी जलदानको न करैं जबतक उनके व्रत समाप्तहों किंतु समाप्त होजाने बाद जलदान करके तीनरात्रि सूतकीबनें॥ इसी प्रकार निपट नपुंसक आदि भी जलदान के अधिकारी नहीं हैं = यथाहवृद्धमनुः—क्लीवाद्यानोदकंकुर्युः स्तेनाव्रात्याविधर्मिणः गर्भभर्तृद्रुहश्चैव सुराप्यश्चैवयोषितः = अर्थात----क्लीवआदि और स्तेनचोर और व्रात्य संस्कार विहीन और विधर्मी जो पराये धर्मका आश्रय लेकर वेधर्म हुयेहैं. एवं गर्भ गिराने वाली और भर्ताके प्राण हरने वाली या उस से पूरा द्रोह रखने वाली और मद्यपान करनेवाली स्त्रियां भी जलदान आदि न करैं. क्लीव के साथ जो आदि शब्दकहा तिसमें कुष्टी कलंकी आदि औरभी समझने॥ इस अपवाद में जो जो अनधिकारी कहे तिनमें एक ब्रह्मचारी की अपेक्षा अपवाद का कुछ प्रति प्रसव है सोभी आगे पंद्रहवें मूल श्लोक और उसीकी अधिकोक्ति में देखो क्योंकि उसके देखे बिना व्यवस्था में असिद्धि रहजावेगी॥ ५॥

(अकर्मपात्रमृतकाः)

पाखंड्यनाश्रिताःस्तेनाभर्तृघ्न्यःकामगादिकाः।सुराप्यआत्मत्यागिन्योनाशौचोदकभाजनाः ६॥

अक्षरार्थः—पाखंडी अनाश्रित स्तेन · भर्तृघ्नी कामगा आदि स्त्रियांभी तथा सुरापी आत्मत्यागिनी भी आशौच तथा उदकपात्र नहीं हैं॥ ६॥

अभिप्राय:—नरकपाल आदि (वेदबाह्य) चिह्नों को धारण करतेहुये जे कोई पुरुष उदर पूरणार्थवृत्ति लेते हैं सो पाखण्डी कहाते हैं॰ अनाश्रित जो किसी आश्रम के सहारे न हों॰ स्तेन जो सोना आदि उत्तम द्रव्य चुरावैं या अपहार करैं॰ भर्तृघ्नी स्त्रियाँ कि जिन्होंने पतिको विषदेकर या किसीप्रकार माराहो. कामगा जो कुलटा कहाती हैं॰ इनको आदि लेकर औरभी समझनी जो गर्भ गिराती या गिरवाती हैं या ब्राह्मण का या बालकों का बध करतीहैं इत्यादि. सुरापी जो कोईसा मद्य पीती हैं अर्थात् जिस मद्यका पीना जिसजाति को निषिद्ध हो उसके पीनेवाली सुरापी ठहरती है अन्यथा नहीं. आत्म त्यागिनी जिसने अपने आत्मा को जलमें डुबाया वा अग्निमें गिराया वा विष भक्षणआदिप्रकारोंसे या फाँसीसेत्यागिदियाहो (सुरापी आदि जो स्त्रियां कहीं उस प्रकारके पुरुषभी समझलेना) ये सभी मरने पीछे सूतक या जलदान के भागी नहींहैं अर्थात् इनके मरनेसें सपिंड लोग सूतक न मानें और जलदान आदिकर्मभी न करैं = इन्हीं दो कर्मोंका निषेधकरनेसे यह तात्पर्यभी स्वतः सिद्ध होजाता है कि अग्निदाह मात्र यथा संभव इनको भी कराय देना चाहिये॥ इसका मुख्यतात्पर्य आगे दूरजाके इक्कीस मासूलश्लोक और उसीकीअधिकोक्तिमेंदेखना ६॥

६ अधिकोक्तिः—अभिप्राय रूपी पाठमें जिन पापों के प्रभाव से ऊर्ध्व दैहिक क्रिया का प्रतिषेध किया सोभी इच्छा पूर्व या बुद्धिपूर्व पाप करनेवालोंका नियम समुझना क्योंकि अगिले बचन का यही तात्पर्य है = यथाह गौतमः = प्रायोऽनाशकशस्त्राग्निविषोदकोद्बंधनप्रपतनैश्चेच्छताम = अर्थात्–प्रायो नाम महा प्रस्थान किंतु मरजाना इच्छतां इच्छा करते हुयोंका भी (उदकदान आदिमें प्रतिषेधजानों) किन प्रकारोंसे इच्छा सहित मरजाने वाले॰ अनाशक लंघनसे॰ शस्त्रोंसे॰ अग्निसे॰ विष भक्षणसे॰ उद्बन्धन गलफंदा लगानेसे॰ प्रपतन पर्वत आदि ऊंचे चौंटेके गिर परने से॥

दंष्ट्रिभ्यश्चपशुभ्यश्च मरणंपापकर्मणाम् ॥ उदकंपिंडदानंचप्रेतेभ्योयत्प्रदीयते नोपतिष्ठतितत्सर्वं मन्तरिक्षेविनश्यति = अर्थात्–पापकर्मा पुरुषोंका मरना जो चांडाल के हाथसे या जलसे या सर्पसे या ब्राह्मणके हाथसे या वैद्युत बिजली गिरनेसे या दाढ़वाले सिंह वराह आदिसे या पशुओंसे हो तो जलदान और पिंडदान जो इन प्रेतोंको दीजिये सो सब अंतरिक्षही से विनाश होजाता किंतु पापों के प्रभावसे उनके पास तक नहीं पहुँचने पाता तिससे करना व्यर्थ है॥ इस प्रकार की मृत्युभी इच्छा पूर्वहुई हो तो कर्मके अधिकारी नहीं समुझने क्योंकि गौतम ने जो अपने वचन में इच्छा जाहर करीथी सो इन वचनोंमें पापकर्म के विशेषणसे इच्छा सिद्ध होतीहै॰ इसपर ये दृष्टांत हैं कि जो अपने दर्पसे कोपयुक्त होकर चांडाल आदिकोंको मारने गया जलजीवों को मारनेगया या भयानक प्रवाहको देखते हुये तैरने गया इत्यादि सबतरह पापकर्मकी इच्छाठहरी यदि उन्हींकेहाथसे यह आपमारा गया तो अपने मारेजानेकी इच्छा उसने जानिबूझिकेकरी यह तात्पर्यहै॰ इसीलिये उसके पिंडदानका निषेध (विधिका अतिक्रम करनेके निमित्तसे) कियागया क्योंकि (सर्वत एवात्मानंगोपायेदिति) यह श्रुतिजो प्रसिद्धहै कि सबओरसेही आत्माकी रक्षा कियेरहै सो यहविधि उसने न मानी॥ पापकर्मके विशेषण से यह दूसरा तात्पर्यहै कि जिसने पुण्यकर्मके हेतुसे उन्हींप्रकारोंमें अपने प्राणदेदिये हों तिसका किया कर्मकरना चाहिये यहां पुण्यकर्मका दृष्टांतजैसेकिसी डूबतेहुयेको उभारनेके निमित्त गोतालगाया यद्यपि उसकेप्राण बचादिये परन्तु आप डूबिगया तो यह पुण्यकर्मसे जल के द्वारा मृत्युहुई पापकर्मसे नहीं इसीप्रकार सबमें दृष्टांत समुझिलेने जैसेसांपने धोखेसें काटिखाया तो मरजानेमें कियाकर्म करना चाहिये यदि सांपको पकड़ते या मारते पालते काटाजाय तो यहपापकर्मके हेतुसे कियाकर्मका भागीनहीं इत्यादि॥ ० ॥ यह जो सूतक न मानना कहा सो दशदिन आदिनियमोंका प्रतिषेध कियाहै अर्थात थोड़े कालतक इनका भी सूतक मानाजाताहै सो सब सद्यःशौचका नियम आगे इक्कीसवें मूलश्लोकमें योगीश्वर आप वर्णन करेंगे = जिनका जलदान और सूतक निषेध किया तिनको अग्निदाह का भी प्रतिषेध करते हैं = यथाङ्गिराः = नाशौचंनोदकंनाश्रुनदाहाद्यन्त्यकर्मच ब्रह्मदण्डहतानांचनकुर्यात्कटधारणम् = अर्थात्– ब्रह्मदंड कहिये ब्राह्मणकाशाप तिससे मरेहुयों तथा औरभी पूर्वोक्त पापियों का न सूतक न जलदानहै न आंसू डालिके रोनाहै न दाहआदि अन्त्यकर्म है न उनका कटधारण किन्तु चिताकी रची विमान आदि कांधेपर धारणकरै॥ परन्तु (आहिताग्नि

मग्निभिर्दहंतियज्ञपात्रैश्च) यहश्रुति जो प्रसिद्धहै कि अग्निहोत्री को अग्नियोंसे और यज्ञके पात्रोंसे जलातेहैं सो इस प्रसिद्धि से यह न समझिलेना कि श्रुतिसे प्रतिपादन हुई अग्नितथा यज्ञपात्रोंकी आज्ञालोप होती है तिससे अनन्तरोक्त दाहका निषेध जो स्मृतियोंका धर्महै सो ब्रह्मदंड से मरेहुये अग्निहोत्रियोंपर नहीं आरूढ होताहै क्योंकि अग्निहोत्री पर भी वहीधर्म्म आरूढ होताहै इस हेतुसे कि अन्यस्मृती में चांडालआदिकेहाथसरे अग्निहोत्रीके अग्नितथायज्ञके पात्रोंकाभी विधानकहाहै = यथा = वैतानंप्रक्षिपेदप्सुआवसथ्यंचतुष्पथे पात्राणितुदहेदग्नौ यजमानेवृथामृते = अर्थात — यजमान कहिये अग्निहोत्री यदि वृथा मरजाय किन्तु ब्राह्मण के शापसे या चांडाल आदि के हाथसे मरे तब उसका वितान लेकर जलप्रवाह में फेंके तथा आवसथ्य नामक अग्नि जो उसके वितान वा निवास में स्थापन हुईहो सो लेकर चौराहे में छोडिदे और यज्ञके पात्र लेकर अग्नि में जलाय देवे = इसी प्रकार उसके मरे शरीर काभी नियम कहाहै = यथा = आत्मनस्त्यागिनांनास्तिपतितानांतथाक्रिया तेषामपितथागंगातोयेसंस्थापनंहितम = अर्थात — अग्निहोत्री भी यदि आत्मघातीहों या पतित होजायँ तिनका क्रिया कर्म दाह आदि नहींहो किंतु उनकाभी गंगा के प्रवाह में स्थापन करना श्रेष्ठ है कि जैसा औरों का = इन वचनों के प्रमाण से अग्निहोत्री और अनग्निहोत्री सभीके दाह आदि कर्मों का प्रतिषेध ऊपर कियाथा यह समझिलेना ॥ ० ॥ तिसपर भी यदि कोई अपने मुर्दा के स्नेह आदि आग्रह से कदाचित प्रतिषेध का अतिक्रम करें किंतु निषेध को न मानकर दाह आदि कुछ उपकार करें तब उसको उसी अतिक्रम का प्रायश्चित्त करना चाहिये = तथाचवचनं = हत्वाग्निमुदकंस्नानंस्पर्शनंवहनंकथाम रज्जुच्छेदाश्रुपातंचतप्तकृच्छ्रेणशुद्ध्यति = अर्थात — अग्निदाह देकर या जलांजली देकर या उसके साथ स्नान करिके या उस मुर्देका स्पर्श करिके याकांधा देकर या उसकी कथा कहिकर या फांसीकी रस्सीकाटकर या आंसू बहायकर तप्तकृच्छ्र नामक प्रायश्चित्त करिके शुद्ध होताहै अर्थात कोईसी एकहू बात करने से प्रायश्चित्त लगता है परन्तु इसी दशा में कि जिसने जानि बूझि के ऐसा कियाहो = किंतु = जिसने बिनाजाने श्रोखेमें ऐसा किया हो तिसके लिये दूसरा प्रायश्चित्त है = यथाह संवर्त = यथात्मकृतमप्रेतंयोवहेत दहेतवा कटोदकक्रियांकृत्वाकृच्छ्रं सांतपनंचरेत = अर्थात — इन पूर्वोक्त पापी प्रेतों में यदि किसीको जो कोई कांधे लादै या दाहदेवै या कटोदक क्रियाकरके कृच्छ्रसान्तपन प्रायश्चित्त करै तब शुद्धहोय = परन्तु = जिसने यमन्दवेतनकाम न किये हों केवल

आँसूडाले या मुर्देको छुआहो तिसका प्रायश्चित्त छोटासा जुदा है= यथा=तच्छवं केवलंस्पृष्ट्वाश्रुवापातितंयदि पूर्वोक्तानामकारीचे देकरात्रमभोजनम=अर्थात–निषिद्ध मुर्दा केवल स्पर्श किया या यदि उसकेलिये रोयाहो और वह पूर्वोक्त कामोंका न करनेवाला ठहिरे तो एक रात्रि निराहार व्रतकरै=सो यह छोटा प्रायश्चित्त उसका है कि जो कठिन प्रायश्चित्तोंके करनेमें असक्तहो=औरभी असक्तों का प्रायश्चित्त आगे कहिते हैं=यथाह सुमंतुः=बंधनच्छेदनेवामासंमैक्ष्याहारस्त्रिषवणांच=अर्थात– मुर्देकी लपेटी रस्सीका बन्धन काटने में एक महीनाभर भिक्षामाँगि खातारहै और त्रिषवणाभी करै· जिसके लक्षण आगेदूर जाके वर्णनहोंगे=ऐसेहीयदि और स्मृति- योंके वचन कहीं इसीवार्ताके संबंधी मिलैं तो उनकीभी व्यवस्था कल्पित करलेनी चाहिये॥ ० ॥ छठेमूल श्लोकसे लेकर यहाँतक जो जो मृतकक्रियाकरने योग्य नहीं ठहिरे तिनका थोडा अपवाद भी कहिना योग्यरहाहै कि अमुकामुक मुर्दे छोडके वह नियम समुझना=इसीलिये पूर्वोक्तदाहकर्म आदिका निषेध उनके लिये न समुझना जो अपने अंगीकृत अनुष्ठान में अत्यंत असमर्थ या जीर्णदेह वानप्रस्थ आदि कोई अपने प्राण त्यागिदें किन्तु उनको स्मृतियों से आज्ञा पाईजातीहै=तथाचवचनं = वृद्धःशौचस्मृतेर्लुप्तः प्रत्याख्यातभिषक्क्रियः। आत्मानंघातयेद्यस्तुभृग्वग्न्यनशना म्बुभिः॥ तस्यत्रिरात्रमाशौचंद्वितीयेत्वस्थिसंचयः। तृतीयेतूदकंकृत्वाचतुर्थेश्राद्धमाच रेत=अर्थात–जो अति बूढाहोकर नित्यशौच क्रिया न कर सकने से या अति रोगी होकर असाध्य रोगहोने से वैद्य से निपट कोरा उत्तर पायाहो ऐसा पुरुष यदि अपने शरीरको विनाशकरावै ऊंचेपहाड़ोंसे या अग्नि से या लंघनसे या जलमें· तो उसका तीन रात्रिभर अशौच सूतकभी होनाचाहिये।

भी सूतक मानाजाय किन्तु उसीकेसंबंधसे उनकोभी दक्षिणासहित अन्नदेनाचाहिये अन्यथा नहीं=एवं=व्यासजीनेभी यही दृढकियाहै=यथा=नारायणंसमुद्दिश्य शिवं-वायत्प्रदीयते। तस्यशुद्धिकरंकर्मतद्भवेन्नैतदन्यथा=अर्थात्--नारायणके नामसे उद्देश करिके या शिवको उद्देश करिके जो कुछ किया और दियाजाताहै वही कर्म उसप्रेत की शुद्धिकारकहोता है यह अन्यथा न समुझना=नारायणबलिःकारणं--जैसा ऊ-परकहिचुके उसकेअनुसार नारायणबलिकर्म जोहै सोईप्रेतकीशुद्धिकरनेकेद्वाराश्राद्ध आदि संप्रदानरूपकी योग्यता उत्पन्नकरताहै इसलिये उनकाभीऊर्ध्वदैहिकसबकर्म करनाचाहिये=इसीहेतुसे=षट्त्रिंशत् स्मृतिकेमतसेभी श्राद्धआदिऊर्ध्वदैहिककर्मक-रनेकी अनुज्ञा देखि पड़ती है=यथा=गोब्राह्मणहतानांचपतितानांतथैवच ऊर्ध्वसंव त्सरात्कुर्यात्सर्वमेवोर्ध्वदैहिकम्=अर्थात्--गऊसे ब्राह्मण से मारेहुये तथा पतित प्रेतों काऊर्ध्व दैहिक कर्म सब एकवर्ष उपरांत करै=तौ इसनियमके अनुसार एक वर्षके उपरांतही नारायण बलिकरके सर्व कर्मसाधै ॥ ० ॥ अथनारायण बलिप्रकारः--- कोईसी एकादशी जो शुक्लपक्ष की हो तिसके रोज विष्णु और वैवस्वत. यम इन तीनोंको पद्धति की विधिसे पूजिकर इनके सन्मुख सहत घी तिल मिले हुये दस पिंड विष्णु के रूप से प्रेतको याद करते हुये प्रेतके नाम गोत्रका उच्चारण करिके आप दक्षिण मुख बैठाहुआ दक्षिण को अग्रभाग से फैले हुये कुशाओं पर उक्त पिंडोंको धरिके गन्धआदिसे पिंडोंको पूजिके पिंडप्रवाहणपर्यंत कर्मसाधनकिये पीछे नदीके प्रवाह में फेंक देवै (किंतुपत्नीआदि किसी स्त्रीको ये पिंड न दियेजायँ)फिरउसीरात्ति को विषम संख्यासेपाँच सातआदिविद्वान कुलवानतपयुक्तब्राह्मणोंकोनिमंत्रितकरके आप निराहार व्रतीरहै. दूसरा दिन उदयहोनेमें मध्याह्नसमय विष्णुका आराधन करके एकोद्दिष्ट पद्धतिके विधानसे निमंत्रित ब्राह्मणोंके चरणप्रक्षालनआदि तृप्तिप्रश्न करने पर्यंत कर्म निपटायके फिर (पिंडपितृयज्ञावृतोल्लेखनादि अवनेजनपर्यंत) रू-पके मौनी भूत कर्म करिके ब्रह्मा विष्णु शिव और परिवार सहित यमराज को भी चारों पिंड जुदे जुदे समर्पण करके फिर नाम गोत्र उच्चारण प्रेतको स्मरण करके और विष्णुका नाम उच्चारण करिके पाँचवा पिंड देवै--तिस पीछे ब्राह्मणों को आच-मन करने पर अनेक दक्षिणाओं से संतुष्ट करके उनमेंसे एक गुणवान एक ब्राह्मण को अपने प्रेतका स्वरूप समझि स्मरण करते हुये वस्त्र सोना चांदी आदि उ-त्तम द्रव्योंसे अतिशय संतुष्ट करके तिसपीछे पवित्र धारण किये हाथों से ब्राह्मणों के द्वारा प्रेतके लिये तिल आदि संयुक्त जलदान तर्पण कराय के कर्त्ता स्वयं करे

बंधुजनों सहित भोजनकरै = परंतु = जो सर्पकाटेसे मराहो तिसके लिये यह अग्रोक्त विशेषता समुझनी कि-जबताईं संवत्सर पूराहोय तबतक पुराणोक्त विधिसे प्रत्येक पंचमीको नागपूजा करके वर्ष पूरा होजाने बाद सोनेका बनाहुआ सर्प देवै तथा साक्षात गऊदान करै तिस पीछे सब ऊर्ध्व देहिक कर्मकरै ॥ ० ॥ नारायणबलि का अनुक्रम जो ऊपर लिखचुके तिसका स्वरूप वैष्णवपुराण में कहाहै = यथा = एकादशीसमासाद्यशुक्लपक्षस्यवैतिथिम विष्णुंसमर्चयेद्देवं यमंवैवस्वतंतथा दशपिंडानघृताभ्यक्तान्दर्भेषुमधुसंयुतान तिलमिश्रान्प्रदद्याद्वै संयतोदक्षिणामुखः विष्णुंबुद्धौसमासाद्यनद्यंभसिततःक्षिपेत नामगोत्रग्रहंतत्र पुष्पैरभ्यर्चनंतथा धूपदीपप्रदानंचभक्ष्यंभोज्यंतथापरम निमंत्रयेतविप्रान्वैपंचसप्तनवापिवा विद्यातपःसमृद्धान्वैकुलोत्पन्नान्समाहितान अपरेहनिसंप्राप्ते मध्याह्ने समुपोषितः विष्णोरभ्यर्चनंकृत्वाविप्रांस्तानुपवेशयेत उदङ्मुखान्यथाज्येष्ठंपितृरूपमनुस्मरन मनोनिवेश्यविष्णौवैसर्वंकुर्यादतंद्रितः आवाहनादियत्प्रोक्तंदेवपूर्वंतदाचरेत तृप्तान्ज्ञात्वाततोविप्रान्दद्यात्पृथ्वीयथाविधि हविष्यव्यंजनेनैवतिलादिसहितेनच पंचपिंडान्प्रदद्याच्चदेवंरूपमनुस्मरन प्रथमंविष्णवेदद्याद्ब्रह्मणेचशिवायच यमायसानुचारायचतुर्थंपिंडमुत्सृजेत मृतंसंकीर्त्यमनसागोत्रपूर्वंसतःपरम विष्णोर्नामगृहीत्वैवंपंचमंपूर्ववत्क्षिपेत विप्रानाचम्यविधिवद्दक्षिणाभिःसमर्चयेत गवावस्त्रेणभूम्याचप्रेतंतंमनसास्मरन ततस्तिलांभोविप्रास्तुहस्तो दर्भसमन्वितैः क्षिपेयुर्गोत्रपूर्वंतुनामबुद्धौनिवेश्यच हविर्गोत्रतिलांभस्तुतस्मैदद्युःसमाहिताः मित्रभृत्यजनैःसार्द्धंपश्चाद्भुंजीतवाग्यतः एवंविष्णुमतेस्थित्वायोदद्याद्दानमग्रतिनेसमुद्धरेत्तंक्षिप्रंनात्रकार्याविचारणा=अर्थात--शुक्लपक्षकी एकादशी पायकर विष्णु देवका पूजनकरै तथा यमराजको और वैवस्वतको पूजै फिर दशपिंड घीके मधु से सहित तिलमिलेहुये कुशाओंके ऊपर विष्णुके निमित्त दानकरै दक्षिण मुख बैठके विष्णु को निज बुद्धिमें समझे हुये फिर सर्व कर्म समाप्त होनेपर नदीके जलमें फेंकि आवै. तहां विष्णुको दशपिंड देते हुये प्रेतकानाम गोत्रलेके कर पुष्पोंसे अर्चन भी पिंडों पर करते हुये धूपदीप देवै और भक्ष्यभोज्य आदि और भी पदार्थ चढ़ावै. निमंत्रण रात्रि समयपांच या सात या नौ ब्राह्मणों को निमंत्रण भेजे जो विद्या तपस्या में संयुक्त अच्छे कुलकेहों तिनको और सावधान होकर भोजन में आसक्त हों तिनको फिर कर्ता पुरुष आप व्रती रहिकर दूसरा दिवस होनेपर मध्याह्न समय विष्णुको पूजन करके नौते हुये ब्राह्मणों को उत्तर मुख बैठावै और जैसा अधिक उत्तमहो उसमें अधिक प्रेत पितर का रूप समझै और अपना मन विष्णु में लगायकर निरा-

लसी होता सबकर्म करै आवाहन आदिजो कर्म करना कहासो सब देव शब्द पूर्वक साधै॰ फिर भोजन से तृप्तहुये जानिके ब्राह्मणों से यह बूझै कि आप अच्छे तृप्त हुये जो तृप्ति शेष रही समुझै तौ उसको भी॰ पूर्णाकरै॰ फिर खीर व्यंजन मात्रमें तिल सहतआदि मिलेहुयेसे पाँचपिराड बनावै सो देवहीका रूप स्मरण करतेहुये पहिला पिराड विष्णुके निमित्त देवै दूसरा ब्रह्माको तीसरा शिवके लिये चौथा अनुचरों सहित यमके लिये समर्पण करै फिर पाँचसा पिराड हाथमेंलेते अपने मनमें प्रेतका नामगोत्र याद करके और विष्णुका नाम उच्चारण करके पूर्वरीतिसे यह पिराड भी छोड़ै तिस पीछे ब्राह्मणोंको विधिवत आचमन कराय के अनेक दक्षिणाओं से समर्चन करै पर उनमें एक सबसे वड़ेबूढे उत्तम विप्रको सोना चांदीसे पूजै और गऊ तथा वस्त्र और पृथ्वीसे भी संतुष्ट करै प्रेतका नामलेताहुआ॰ तिसपीछे वे ब्राह्मण भी तिल जल कुशा हाथोंमें लेकर प्रेतका गोत्रनाम कहिकर तर्पण करैं अर्थात सावधान चित्तसे प्रेतके निमित्त में हविष गन्ध तिल जल समर्पण करैं॰ तिसपीछे कर्त्तापुरुष भी अपने मित्र भृत्य कुटुम्बी जनों सहित भोजनकरै वाणीको जीतेहुये किन्तु मुखसे कोई क्रूर वचन न काढ़ै॰ इसप्रकारसे जो कोई विष्णुके मतमें स्थितहोकर जिसकिसी आत्म घातीको देवै वह तत्कालही उसका उद्धार करदेता है इसमें कुछ विचारकरना आवश्यक नहींहै ॥ ० ॥ सर्पकाटे प्रेतके निमित्त सोनेका नाग बनाकर देना सुमंतुने भविष्यत्पुराण में कहा है=यथा=सुवर्णभारनिष्पन्नं नागंकृत्वातथैवगाम। व्यासायदत्वाविधिवत्पितुरानृरायमाप्नुयात=अर्थात्–एकभार सोने से बना नाग विधि से दान करके तथा गोदान भी व्यास विप्रको देकर पिता के ऋणसे उद्धार होवे=इसत्रयव्याका पकाहदचाहिकर इक्कीसमा मूल श्लोक अधिकोक्ति सहित देखना॥६॥इसभांति उदकदान आदिविधि और उसकाअपवादभीजतायाअब इसके आगे क्या करना चाहिये सो लिखते हैं ६ ॥

(शोकशान्तिनियमाः)

कृतोदकान्समुत्तीर्णान्मृदुशाड्वलसंस्थितान्। स्नातानपवदेयुस्तानितिहासैः पुरातनैः ७॥

अर्थः—उदकदान किये और स्नानसे निवृत्तहुये बंधुओं मृदु शाड्वल नवीन कोमल घासके अंकुर सहित भूमिपर बैठे विश्रामलेते हुयोंको शोकमें डूबे देखि बड़ेबूढ़े बुद्धिमान पुरुष अपवाद करैं अर्थात पुराने इतिहासोंकोसुनातेहुये गतार्णदेना निषेध करके शोकशान्तिकरैं॰ कि संसार में सदासे यहीरीति चलीआतीहै कोई अमर नहीं ॥ ७ ॥ यही वार्ता अगले चारश्लोकों से वर्णन करेंगे ॥

अभिप्राय:—यहाँ इसवचनसे यह भी आज्ञा पाईजातीहै कि जब मुर्दाको फूँक नहाय धोयकर लौटैं तो बीचमें किसी उत्तम धरती पर बैठि के थोडासा विश्राम करैं तहाँ रोतेहुयों को समुझाकर शोकशान्ति करैं· इसीलिये मृदुशाड्वल अर्थात नवीन हरीघास जमी धरती पर बैठना कहा ॥ ७ ॥

(शोकशांत्युपायः)

मानुष्येकदलीस्तंभानिःसारेसारमार्गणम्। करोतियःससंमूढोजलबुद्बुदसन्निभे ८ ॥
पंचधासंभृतःकायोयदिपंचत्वमागतः। कर्मभिःस्वशरीरोत्थैस्तत्रकापरिदेवना ९ ॥
गंत्रीवसुमतीनाशमुदधिर्दैवतानिच। फेनप्रख्यःकथंनाशंमर्त्यलोकोनयास्यति १० ॥
श्लेष्माश्रुबांधवैर्मुक्तंप्रेतोभुंक्तेयतोऽवशः। अतोनरोदितव्यंहिक्रियाःकार्याःस्वशक्तितः ११ ॥

अर्थ:—रोतेहुयोंको इस भाँति समझावैं कि मनुष्यका शरीर जैसा केलेकाखंभ भीतरसे थोथाहोता किन्तु कुछसार नहीं होताहै ऐसे निःसार देहमें सारवस्तुका ढूंढना जो कोई करने लगताहै वह बडा मूर्ख है क्योंकि समस्त संसारही जलफेनके बताशे बुल बुले तुल्यहोता जो क्षणमात्रमे विनाश होसक्ताहै तिससे संसारका स्वरूप खूब समुझिके रोना न चाहिये चुपके होजाओ ॥ ८ ॥ मनुष्यकी काया पांच वस्तुओंसे (पृथ्वी·जल·अग्नि·वायु·आकाश·इनके संयोगसे) बनीहै सो जब अपने पूर्वजन्मकृत कर्मोंके वेगसे संयोग जुदाहोकर पंचत्वको पहुँचगया तो इस दशामें परिदेवना वृथा क्योंकरनी ॥ ९ ॥ मरजाना कोई अचंभा नहींहै क्योंकि पाँचोंतत्त्व समेत पृथ्वी भी एक दिन नाशको पहुंचनेवाली तथा इतने बडे समुद्रभी नाशमान हैं और देवता जो अमर कहाते या बूढेनहीं होते सुने हैं अवश्य किसी रोज न होंगे अर्थात महाप्रलय के समय पर कुछ भी न रहेगा तो यह मर्त्यलोक जो फेनके समान कहा सो क्योंकर नहीं नाशहोगा तिससे शोकदूर करो ॥ १० ॥ अन्यथा जो नहीं चुपके होतेहो तो भी बड़ा दोषहै कि रोने से कफ आँसू आदि जो बान्धव लोग छोडते हैं सो सब प्रेत को विवशहोकर खानापरताहै इससे विपरीतना न चाहिये किंतु अपनीशक्तिके अनुरूप उसकेक्रियाकर्मकरने चाहिये जिससेतत्पर होताहै उठि खडेहोउ घरको चलो ॥ ११ ॥

८–११ अधिकोक्ति:—[illegible] तिससे जरायुज अण्डज आदिसभी जीव समुझने क्योंकि मनुष्य प्रधान [illegible] सारही का स्थिरत्व प्रकट किया तथा [illegible] सर्वलोक शब्द कहा है ॥ ८ ॥ पूर्व जन्मांतर में जो पुण्य अथवा पाप कर्म संचय किये जाते हैं वही कर्म दूसरे जन्म का बीज कहाते हैं क्योंकि उन्हींके भोगने को यह जन्म लेनापरताहै

जो पृथ्वी आदि पांच पदार्थों से बना तिसके पूर्व कर्म्मोंका भोग पूरा होजानेसे यदि शरीर छूटिगया तो यह आश्चर्य नहीं है क्योंकि पृथ्वी आदि पाँचौ तत्त्व शरीर से भिन्न होकर निज निज महा तत्त्वमें मिलजातेहैं ९॥ १० ॥ ११ ॥ शोक शांत किये पीछे जैसे घरको जाना चाहिये सो नीचे वर्णन करेंगे॥

(अथगृहगमनप्रकारः)

इतिसंश्रुत्यगच्छेयुर्गृहंबालपुरःसराः। विदश्यनिम्बपत्राणिनियताद्वारिवेश्मनः १२ ॥
आचम्याग्न्यादिसलिलंगोमयंगौरसर्षपान्। प्रविशेयुःसमालभ्यकृत्वाऽश्मंनिपदंशनैः १३॥

अर्थः—ऊपर कही रीतिके इतिहासों को सुनिके शाद्वल भूमिसे उठिकर छोटे बालकोंको आगेलेकर घरकोजायँ तहां घरकेद्वार आगेसब इकट्ठे एकमनहोकर खड़े हों औरनीबके पत्ते दाँतोंसे काटि खुतारि आचमन करें॥ १२ ॥ आचमन किये पीछे अग्नि आदि तथा जल गोबर पीलीसरसों इनको छुइकर और पत्थरकी सिलापर पैरधरिके धीरे धीरे सावधानीसे घरमें घुसें ॥ १३ ॥

१२।१३ अधिकोक्तिः—अग्नि आदि जो कहा सो उस आदिशब्द से शंखोक्त अन्यवस्तुभी स्पर्श करनी कहीहैं=यथाहशंखः=दूर्वाप्रवालमग्निवृषभंवा= अर्थात्- पूर्वोक्तचीजें या दूब मूगा अग्नि वृषभ इनको छुइकर सिलपरपैरधरि घरमेंघुसै अर्थात जहाँ जिसके जैसीरीति प्रवृत्तहो उन्ही चीजोंको विकल्पसे समझना॥ १२। १३ ॥

(उक्तनियमस्यातिदेशः)

प्रवेशनादिकंकर्मप्रेतसंस्पर्शिनामपि । इच्छतांतत्क्षणाच्छुद्धिःपरेषांस्नानसंयमात् १४ ॥

अक्षरार्थः—प्रवेशआदि कर्म प्रेतसंस्पर्शियों को भी तत्क्षण शुद्धि चाहनेवालों परजनोंको स्नान प्राणायामसे शुद्धि॥ १४ ॥

अभिप्रायः—नीब के पत्ते चाबना आदि घरमें घुसना पर्यंतजो कर्म ऊपर निज सपिंडों के निमित्त करना कहा सो औरोंको भी करना चाहिये जो साथ गयेहों और प्रेतका स्पर्श कियाहो अर्थात् प्रेतके आभूषण उतारना आदि छूनेका कोईसा प्रकार स्पर्श कियाहो ऐसे असपिंड और जनों कोभी नीबके पत्ते चबाना आदि कर्तव्य है परंच उनको अनेक दिन सूतक मानना आवश्यक नहींहै-इसी लिये इसअध्याय मे यह कहा है कि परजन जो तत्काल शुद्धहोजाना इच्छा करें तिनको अपने घर जाके स्नान और संयम कहिये प्राणायाम ये दोनों कर्म करने से शुद्धि होजाती है ॥ यद्यपि नीबके पत्ते आदि इस क्रमसे घरमें जाना पर्यन्त कहाहै और इन मृतकर्म-

क में आदि शब्द प्रवेश के साथ जोडागया तोभी यह विपरीत न समझना किंतु का-
व्य की मर्यादा से प्रतिलोम अभिप्राय प्रकट कियाहै कि घरमें घुसने से लेकरइतर
नीव चावनेतक जो कुछ करना कहागया तिसका अतिदेश गौरजनों परभी समझना
यहलेख मांगलिक है ॥ १४ ॥

१४अधिकोक्तिः--तत्काल शुद्धि होजानेका प्रमाण वाक्य यहाँ लिखतेहैं = यथाह
पाराशरः=अनाथंब्राह्मणंप्रेतंयेवहंतिद्विजातयः पदेपदेयज्ञफलमनुपूर्वंलभंतिते। नतेषां
समशुभंकिंचित्पापंवाशुभकर्मणाम् जलावगाहनात्तेषांसद्यःशौचंविधीयते = अर्थात-
किसी अनाथको या ब्राह्मण प्रेतको जेकोई द्विजातीलोग कांधे धरतेहैं वे प्रत्येक पग
धरनेमें यज्ञफल पातेहैं·उनको ऐसेशुभकर्मोंसे न कुछअशुभहै न कोईसापापहै·किन्तु·
उनको जलमें गोता लगानेसेही तत्काल शुद्धिहोजाती है ॥ स्नेहआदिसे पराया मुर्दा
लेजानेसम्बंधेमनुनेविशेषताप्रकटकरीहै=यथा= असपिण्डंद्विजंप्रेतंविप्रोनिर्हृत्यबंधुवत
विशुद्ध्यतित्रिरात्रेणमातुराप्तांश्चबांधवान् यद्यन्नमत्तितेषांतुदशाहेनैवशुद्ध्यति अनदन्
नन्नमह्नैवनचेत्तस्मिनगृहेवसेत =अर्थात—इनवचनोंका यहतात्पर्यहै किजोकोईब्राह्मण
अपनेअसपिण्ड द्विजाती गैरकेप्रेतको प्रीतिभावसे बंधुकेहीतुल्य कांधेधरै या माताके
टीक सपिण्डोंकोही कांधेधरैं और उसके सूतक में अन्न भोजन करे और उसीके
घर निवासकरै तिसको भी घरके मनुष्योंकी तरह दशदिनका सूतक होकर शुद्धि हो-
तीहै या जो मुर्दा लेजानेके सिवाय केवल निवास उसके घर करे किन्तु भोजन में
साथी न हो तिसको तीनरात्रिका सूतक होताहै पर जो कोई केवल मुर्दा कांधे धरे
किंतु न उसके घर बसे न अन्न भोजन करे उसको एकही दिनका सूतक होताहै· सो
यह नियम केवल अपने अपने वर्णोंमें समझना --किंतु---अन्यवर्णोंका मुर्दा
कांधे धरनेसे उसीवर्णके समान सूतक उनकोभी लगताहै =यथाहगौतमः अवरश्चेद्व
र्णःपूर्ववर्णमुपस्पृशेत पूर्वोवावरंतत्रतच्छवोक्तमाशौचं (विप्रस्यशूद्रोनिर्हरणोत्तम
सा·पूर्वं...) शूद्रस्यतुविप्रोनिर्हरणेदशरात्रमित्येवंशवस्पर्शगौणंकार्यमित्यर्थः अर्थात--पि-
छलावर्ण जो पहले वर्णको उपस्पर्शकरे या पहिलावर्ण पिछलेको तो उस मुर्देके
के वर्णको कहा सूतक इसेकरनाचाहिये यहांपर उपस्पर्शका अर्थ मुर्दाढोना समझना)
यह दृष्टांत है कि शूद्र जो ब्राह्मणका मुर्दा लेजाय तो दशदिन सूतकी रहे या ब्रा-
ह्मण जो शूद्रका मुर्दा ढोवे वह एक महीना तक सूतक माने इसीप्रकार औरवर्णोंमें
समझिलेने--इसका विशेष निर्णय आगे सतरहवीं अधिकोक्तिमें सबसे देखना फिर
छब्बीसवीं अधिकोक्तिभी देखो ॥ १४ ॥

(ब्रह्मचारिणंप्रत्याह)

आचार्यपित्रुपाध्यायान्निर्हृत्यापिव्रतीव्रती। सकटान्नंचनाश्नीयान्नचतैःसहसंवसेत् १५॥

अर्थः—आचार्य (जिसके लक्षण आचारअध्याय में कहिचुके) पिता माता· उपाध्याय (जिसके लक्षण आचार में) इन तीनोंको निर्हृत्यअपि कांधेधरिके भी व्रती जो ब्रह्मचारी है सो व्रती बनारहताहै अर्थात उसकाव्रत नहीं भंग होताहै परंतु सकटान्न जो कट्ट का सूतकी अन्नहो तिसको नहीं खाय न सूतकी सपिण्डों केसाथ वसै क्योंकि इन बातोंसे ब्रह्मचर्य भंग होताहै॥ १५॥

१५ अधिकोक्तिः—ऊर्ध्वोक्त नियमसे यह तात्पर्य सिद्ध हुआ कि आचार्य पिता माता उपाध्याय इनचारके उपरान्त किसी सपिण्ड भाई आदिकी रथीमें हाथलगाने से ब्रह्मचारीका व्रत भंग होताहै इसीलिये वशिष्ठका अग्रोक्त वचन है=यथा=ब्रह्मचारिणः शवकर्मिणोव्रतान्निवृत्तिरन्यत्रमातापित्रोरिति=अर्थात—मुर्देका कामकरने वाले ब्रह्मचारी के ब्रह्मचर्य व्रतसे निवृत्ति होजाती है व्रत नहीं रहिता परंतु माता पितासे अन्यत्रका यह नियम है॥ १५॥

(आशौचिनांनित्यनियमाःकर्माधिकारिणश्च)

क्रीतलब्धाशनाभूमौस्वपेयुस्तेपृथक्पृथक्। †पिंडयज्ञावृतादेयंप्रेतायान्नंदिनत्रयम् १६॥

अक्षरार्थः—वे सब धरतीमें जुदे जुदे सोवें क्रीतलब्धाशन होकर †प्रेतकेलिये तीन दिनतक पिण्डयज्ञकी आवृतसे अन्नदेय है॥ १६॥

अभिप्रायः—क्रीतनाम खरीदा हुआ रोज रोज या लब्धनाम जो बिना मांगे अन्नादिक मिलजाय वही सब सूतकी भोजनकरैं और वेही सब सपिण्ड लोगधरती पर जुदेजुदे सोवैं और तीनदिन प्रेतको भी अन्न देतेरहैं पिण्डयज्ञकी आवृत मर्यादा से अर्थात पिण्डपितृ यज्ञकी प्रक्रिया जैसी प्रसिद्ध है कि अपसव्य दक्षिणा मुख होकर इत्यादि रीतोंसे—परंतुइसवचन मे तीनहीं पिण्डदेने निषिद्ध हुए नियम आद्यश्लोक में देखो॥ १६॥

ऊंचेपर नहीं=इसमें मनुने कुछ और विशेषता कहीहै=यथा=अक्षार लवणान्नास्यु र्निमज्जेयुश्चतेत्र्यहम मांसाशनंचनाश्नीयुःशयीरंश्चपृथक्क्षितौ=अर्थात—ऐसा अन्न भोजनकरैं जो खार या खारी लवण से विहीन हो और तीनदिन गोता लगाके स्नान करैं और मांसका भोजन न करें और सब जुदे जुदे धरतीपर सोवैं=गौतम ने भी विशेष कहा है=यथा=अधःशय्यासनायिनोब्रह्मचारिणःशवकर्मिणः=अर्थात—मुर्देका कर्म करनेवाले खाटसे नीचेसोवैं तथा ब्रह्मचर्यसे रहैं। प्रेतको अन्नदेने मध्ये अगिला वचन विशेष है=यथाहमरीचिः= प्रेतपिण्डंबहिर्दद्याद्दर्भमंत्रविवर्जितम प्रागुदीच्यांच रुंक्त्वास्नातःप्रयतमानसः=अर्थात—घरसे बाहर उदीची दिशा में पहले स्नान करके मन सावधान कियेहुये खीरि बनाइके प्रेतको पिण्डदेवैंकुश और मंत्रसे विवर्जित=कुश और मंत्र बिना जो देनाकहा सो उत प्रेतको समझना जिसका जनेऊ न हुआ हो यह भेद अगिले प्रचेता के वचन से जाना जायगा=यथा=असंस्कृतानांभूमौपिंड दद्यात्संस्कृतानांकुशेषु=अर्थात—संस्कार से रहित प्रेतोंको धरतीपर पिण्ड देवैं संस्कार होचुकनेवालों को कुश विछाकरदेवै॥ ०॥ कर्मकरनेवालेका विशेष नियम जो गृह्य परिशिष्ट में लिखा सो अब कहतेहैं=यथा=असगोत्रःसगोत्रोवायदिस्त्रीयदिवा पुमान प्रथमेऽहनियोदद्यात्सदशाहंसमापयेत=अर्थात—चाहें सगोत्री वा असगोत्री हो प्रथमदिन जोकोई पिंडदेवै वही दशदिनका कर्म समाप्तकरै॥ पिंडोंका द्रव्य नियम भीशुनःपुच्छ ऋषिने कहाहै=यथा=शालिनासक्तुभिर्वापि शाकैर्वाप्यथनिर्वपेत। प्रथमेऽहनियद्द्रव्यंतदेवस्याद्दशाहिकम ॥ नुष्पाणिप्रसकंपुष्पधूपंदीपंतथैवच अर्थात भातसे या सत्तुओं से अथवा शाकोंमेंही प्रेत के निमित्त पिंडबांधे परंतु जिस द्रव्यमें पहले रोज़ दियाजाय वही द्रव्य दश दिन तक होय और मौन साधे हुये जल प्रसेक फूल धूप दीप भी देवै॥ धरणी या पत्थर पर देनेका नियम विकल्प से समुझना यथाह शंखः=भूमौमाल्यंपिंडपानीयमुपलेवादद्युः=अर्थात—फूलमाला पिण्ड पानी यह सब धरती या पत्थर पर देवैं॥ यहां पर दद्युः सबको अर्थात देवैं इस बहुवचन में यह शंका न करनी चाहिये कि जैसे जलांजली देनी सबको कही थी उसी प्रकार पिंड आदि भी सबकोई दे सकते हैं क्योंकि यह काम केवल पुत्रहीको या किसी एकदाह देनेवाले को कर्तव्य है अर्थात पुत्र न होनेमें जो कोई आसन्न निकटका सपिंडहो सो करसकता है उसके भी न होने में प्रेत की माता का सपिंड आदि जो निकट समुझा जाताहो वही करै=इसमें जो आदि शब्द कहा तिसके अधिकारी अगले गौतम के वचन में देखो=यथाह गौतमः=पुत्राभावेसपिंडा मातृसपिण्डाः शिष्याश्चतदभावे

ऋत्विगाचार्यौ=अर्थात—पुत्रके अभावमें प्रेतका सपिंड पुनि उसके भी अभावमें प्रेत की माताके सपिंड पुनि उनके भी अभाव में प्रेत के शिष्य शागिर्द देवैं उनके भी न होनेमें ऋत्विक् वा आचार्य पिंडदेवै ॥ परंतु जहां पुत्र अनेकहों तहां जेठा पुत्र कर्म करै सवनहीं=तथाह मरीचिः=सर्वैरनुमतिंकृत्वाज्येष्ठेनैवतुयत्कृतम । द्रव्येणाचाविभक्तेनसर्वैरेवकृतंभवेत = अर्थात—जुदे जुदे भी सब पुत्रोंसे अनुमति और द्रव्यकी सहाय लेकर जो कर्म जेठे पुत्रने किया हो यद्वा अनुमति विना भी अविभक्त धनसे जेठे ने कियाहो सो सबका किया कहाता है ॥ ० ॥ वर्णभेदसे पिंडोंकी संख्यामेंभी नियम भेद कहाहै = यथाह विष्णुः = ब्राह्मणस्यदशपिंडाः क्षत्रियस्य द्वादशैवेत्येव माशौच दिवससंख्यया =अर्थात–ब्राह्मण के दशपिंड और क्षत्रीके बारह पिण्ड इसी प्रकार जिस वर्णका जितने दिन सूतकहो उसी संख्यासे पिण्डहों अर्थात जहांतक शुद्धहोने का दिवस आवै तवतक जलदान और एक पिण्ड रोज़ रोज़ प्रेतको दियाजाय = यही प्रमाण अन्यस्मृतिमें कहाहै = यथा = नवभिर्दिवसैर्दद्यान्नवपिण्डान्समाहितः। दशमंपिण्डमुत्सृज्यरात्रिशेषेशुचिर्भवेत = अर्थात–यहां केवल ब्राह्मण वर्णसे उदाहरण दर्शाते हैं इसी तरह अन्य वर्णोंके शुद्ध होने योग्य अवधि समुझी जायगी कि · नव दिनोंमें नौपिण्ड सावधानी सहित देतारहै फिर दशमा पिण्ड देकर केवल रात्रि शेष रहिते दिन दिनमें शुद्ध होजावै = शुद्ध होजाना यह तात्पर्यहै कि अगले दिन ब्राह्मण निमंत्रणार्थ जो श्राद्ध कियाजायगा उसके योग्य यह शुद्धि समुझी जायगी ॥ योगीश्वरके मूलश्लोक में केवल तीनदिन तीन पिण्ड देने कहेगये और यहां अधिकोक्तिमें अन्यस्मृतियों से दश बारह आदि पिण्ड देने सिद्ध हुये तो इन छोटे बड़े दो भांति के नियमोंकी व्यवस्था इसी तरह कल्पित करलेनी चाहिये कि जैसी तीसरी अधिकोक्ति के अंतमें जलदान मध्ये लिखचुके अर्थात जहां प्रेतका उपकार अधिक चाहा जाय तहां अधिक पिण्डोंका नियम अंगीकार करना या जहां अधिक कर्म करनेका अवसर आदि न मिलने से कठिनाई समुझी जाय तहां तीनपिण्डोंके नियमसे निर्वाह करना यह सिद्धांतहै ॥ ० ॥ तथापि जहां यह भ्रांति खडीहोय कि यद्यपि सूत थोडे दिनमें कर सकनेका अवकाशहै परंतु पिण्ड पूरेपूरे देनाचाहियें तहां शाता तपस्मृति का वचन अंगीकार करना = यथाह शातातप = आशौचस्यह्रसत्वेपि पिण्डान्दद्याद्दशैवतु = अर्थात—आशौच नाम सूतक चाहै थोडे दिन माना जाय परंतु पिण्ड पूरे दसदेने चाहिये॥ इसी लिये योगीश्वरके वचनानुसार तीनदिन सूतक मानने वालोंका निर्वाह पारस्करने दर्शाया है = यथा = प्रथमेदिवसेदेयास्त्रयःपिण्डाः स

साहितैः। द्वितीयेचतुरोदद्यादस्थिसंचयनंतथा॥ त्रींस्तुदद्यात्तृतीयेऽह्नि वस्त्रादिक्षालयेत्तथा = अर्थात्—जो तीनिही दिन सूतक मानै तो सावधानी से पहिले दिवस तीन पिराड देने चाहिये दूसरे दिन चारपिराड देवै पुनि उसी दिन अस्थि सचय कर्म करै फिर तीसरे दिवस तीनपिराडदेकर सं छे कपड़े धोकर शुद्धहोजावै तो यहभी दशदिन के समान कर्म ठहिरता है = इस अधिकोक्तिमें वर्णन करी व्यवस्था सभी वर्णों की तुल्यात्मक साधारण है॥ २६॥

(अथ सिक्यजल बंधनादि विशेष नित्यकर्मादि विवेकशत्र)

जलमेकाहमाकाशेस्थाप्यंक्षीरंचमृण्मये। † वैतानौपासनाःकार्या क्रियाश्श्रुतिनोदनात्॥ १७॥

अर्थः—आकाशमें एकदिन जलदूध भी मृत्पात्रोंमें जुदा जुदा स्थापन करना चाहिये किंतु छींकेमें धरिके वृक्षादि पर लटकाना चाहिये † वितान संबंधी उपासना क्रियायें भी करनी चाहिये श्रुतिकी आज्ञासे अर्थात् वितान अग्नियों के विस्तार का नामहै जो अग्निहोत्रियोंके वेद विहित मार्गसे स्थापन होतीहैं कि जिनमें सांझ सवेरे दोनों समय नित्य होम होता रहताहै उसकी क्रियायें वैतानौपासना कहातीहैं तिनका त्याग सूतकमें भी नहीं होता क्योंकि श्रुति वेदकी आज्ञा यहीहै - इसका विशेष ब्यौरा अधिकोक्ति में देखो॥ १७॥

१७ अधिकोक्तिः—जल और दूध जुदे पात्रोंमें एकदिन जो कहा तिसका कोई दिवस ठीक निश्चय नहीं किया तिससे पहिला दिवस पायागया कि दाहदिये पीछे उसी दिन सायंकालको लटकावै=पारस्करने इस कर्म का निमित्त भी प्रकाश किया है = यथा = प्रेतात्रस्नाहीत्युदकंस्थाप्यं पिबचेदमितिक्षीरं = अर्थात्—अय प्रेत इसमें स्नान करु इसलिये जल स्थापनहो.यह दुग्ध पानकरो इसलिये दूधका स्थापन॥०॥ फल बीनना किंतु अस्थिसंचय कर्म करना यद्यपि २६ की अधिकोक्तिमें दूसरेदिन कहिचुके हैं तथापि इसके कई भेद हैं सो आगले संवर्तके वचनमें देखो यथाह संवर्तः = प्रथमेऽह्नि तृतीयेवा सप्तमेनवमेतथा। अस्थिसंचयनंकार्यं दिनेतद्गोत्रजैःसह अर्थात्—पहिले दिवस या तीसरे या सातवें या नवें दिन अस्थिसंचय करना सो दिन में करना और प्रेतके गोत्रियोंको साथ लेकर करना = इनके सिवाय विष्णु स्मृति में दूसरे दिन करने कहे तथा वैखानसशास्त्र में चौथे दिनभी करने कहे और गंगा जल में छोड़ने कहेहैं—इन सब कहे दिनोंमें से जो निकट अपनी परिपाटीमें प्रसिद्ध हो सो उसी दिन करै यह तात्पर्यहै॥ अस्थिपात्रे दम दाहके साथ देवतामें भी करना कहा

=यथा = अस्थिसंचयनेयागो देवानांपरिकीर्तितः। प्रेतीभूतंतमुद्दिश्य यःशुचिर्नकरोतिचेत॥ देवतानांतुयजनंतंशपंत्यथदेवताः। श्मशानवासिनोदेवाः मतानांपरिकीर्तिताः = अर्थात्--अस्थि संचय करनेके दिवस देवताओंका याग अर्थात् यजन पूजन करना कहाहै उसी प्रेतके उद्देश करके जो कोई शुद्ध चित्त होकर देवताओंका यजन इससे नहीं करता उसको अवश्यही देवता शाप देते हैं (देवता इससे ब्रह्मेशादि वा इन्द्रादि नहीं समुझने किन्तु) श्मशानभूमि के रहनेवाले मुर्दाओं की देवता कहाते जो पहिले वहांपर फूंकेगये हों--इसका यही तात्पर्यहै कि फूल बीनते समय पहिले श्मशानके देवता और अपने मुख्य प्रेतको नामसे धूप दीप पुष्प माला दूध और पिंड रूप अन्नसे पूजै॥०॥ अब दशवें दिनका शुद्धकर्म मुंडन आदि की विधि कहते हैं =यथाह देवलः = दशमेऽहनिसंप्राप्ते स्नानंग्रामाद्बहिर्भवेत। तत्रत्याज्यानिवासांसि केशश्मश्रुनखानिच = अर्थात्--दशवां दिन प्राप्त होने में वस्ती से बाहर जाके शुद्ध स्नान किया जाय तहां अशुद्ध वस्त्र त्यागि दिये जायं और बाल दाढी मूछ नख भी त्यागि दियेजायँ॥ यह सामान्य भावसे दशवां दिन कहा सो उन दशों दिवसों का उदाहरण समुझना जो जिस वर्णके नियमसे अधिक अवधिमें या किसीके परम्परा से या किसी आवश्यकता से थोडी अवधि में करने का दिन ठहराया जाय = सो यह विकल्प अगले स्मृत्यंतर वचन से स्पष्ट होताहै = यथा = द्वितीयेऽहनि कर्तव्यं क्षुरकर्मप्रयत्नतः। तृतीयेपंचमेवापिसप्तमेवाप्रदानतः= अर्थात्—यहां प्रदान शब्दसे श्राद्धप्रदान जो एकादशाहिक प्रसिद्ध है तिसते भीतर भीतर ये सब दिवस हो सक्ते हैं कि या तो दूसरे दिनही क्षौरकर्मको यत्नसे करे या तीसरे या पांचवें या सातवेंदिन जहां जैसा संभव हो॥०॥ अब उसका निर्णय कर्तव्य है कि मुंडनकौन करावें तिसके लिये यह आपस्तम्ब का वचन देखो=यथा=अनुभाविनांचपरिवापनं =अर्थात्—(यावदुःखमनुभवंतीत्यनुभाविनःसपिंडाः)

में होता है=यथाग्र्यंतरवचनं=गंगायांभास्करक्षेत्रेमातापित्रोर्गुरोर्मृतौ। आधानकाले सोमेचवपनंसप्तसुस्मृतम=अर्थात—गंगातटपर·भास्करक्षेत्र में·माता और पिता केमरने में·गुरु के मरने में·आधान काल में अर्थात अग्नि के स्थापन समय जो अग्निहोत्रियों का विधान है·सोमतीर्थ में अर्थात सोमनामतीर्थ या सोमयागरूपी तीर्थमें भी इन सात स्थानोंपर सर्वभद्ररूपी वपनहोना कहाहै॥ यहां तक आवेमूल श्लोकपर अधिकोक्ति पूरीहुई उसीका यह चिह्नहै॥ † ॥ अब उत्तरार्द्धकी अधिकोक्ति लिखते हैं क्योंकि पूर्वार्द्ध से जो सूतक में अशुचित्व कहा तिससे सभीकर्म श्रौत और स्मार्तों का करना तबतक निषिद्ध समझागया परन्तु जो बिरले कर्म सूतक में भी कियेजाते हैं तिनकी आज्ञा इसमें दर्शावेंगे (वैतानोपासनाःकार्याःक्रियाश्चश्रुतिनोदनात)वितान अग्नियोंका विस्तार कर्म्म कहाता है तिसमें जो क्रिया हों सो वैताना कहाती हैं. दृष्टांत जैसे त्रेताग्निनाम अग्निसे जो क्रिया वेदोक्त होतीहों या अग्निहोत्रकी अग्नि में होतीहों या अमावस पूर्णमासी आदिके वेदोक्त यज्ञों में अग्निसाध्य क्रिया होती हों तिनकी उपासना साधन करने के हेतु से (वैतानोपासनारूपी यह नाम ठहरा) ऐसी सब क्रियायें सूतक में करनी बंदनहीं होती किंतु करना चाहिये क्योंकि श्रुति नोदनात श्रुतिकी आज्ञा होने से इनको सूतक नहीं लगता— श्रुतिकी आज्ञाके यह अग्रोक्त उदाहरण हैं = यथा = यावज्जीवमग्निहोत्रंजुहुयात = तथा = अहरहःस्वाहाकुर्यात = अर्थात —यह श्रुति कहती है कि जबतक जीवे अग्निहोत्र में होमकरतारहे = तथा दूसरी यह श्रुतिहै कि = दिनदिनप्रतिस्वाहा करे = तो इस आज्ञा से सूतकमें भी कोई दिन स्वाहासे खाली नहीं रहसकता (अन्नाभावेकेनोदकाकाष्ठादिनापि गृह्योपासनहोमोऽपिचोद्यते) अर्थात होम योग्य अन्नके अभाव में किसी सकाकाष्ठ आदि द्रव्यसेभी गृह्योपासन होम कहाताहै॥ अब इस बातपर ध्यान देना चाहिये कि योगीश्वर के मूलश्लोक में श्रुतिको आज्ञावाली क्रियायें करनी कहीं तिससे श्रौतकर्म मात्र सब सूतकमें होंगे किंतु स्मार्त कर्मोंको दान आदि क्रियाओंकाअनुष्ठान करना निषिद्ध ठहरा = इसी बातपर वैयाघ्रपाद का अग्रोक्त वचन है = यथा = स्मार्तकर्मपरित्यागोराहोरन्यत्रसूतके। श्रौतकर्मणितत्कालंस्नातःशुद्धिमवाप्नुयात = अर्थात—राहुसे अन्यत्र सूतक में स्मार्त कर्मों का परित्यागहै परंच श्रौत कर्मकरने में तत्कालही स्नान करके शुद्धहोजाताहै॥ ०॥ सूतक में श्रौतकर्मों का करना कहा सोभी नित्य और नैमित्तिक अभिप्रायसे कहागया है अर्थात सामान्य सब कर्म्मोंका नहीं यह ध्वन्यर्थ अगले वचन से सिद्धहोता = यथाहपैठीनसिः = नित्यानिविनि-

अर्थात्—जननसूतक और मृतक सूतक और रोग आदिसे अशक्ति होनेसे औरयाद के रोज़ ब्रह्मभोज के अनवकाश में इसी प्रकार कहीं विदेशको जाने आदि निमित्तों से और के हाथसे होम करावै परकर्मकी हानि न करै ॥ ० ॥ पिछले स्मार्त कर्म भी सूतक में करने कहे हैं = यथाहजातूकर्ण्यः = सूतकेतुसमुत्पन्नेस्मार्तंकर्मकथंभवेत् पिंडयज्ञंचरुंहोमसमसगोत्रेणकारयेत्=अर्थात्—सूतक उत्पन्न होने में यदि कोई कर्म ऐसाही आवश्यक आनिपरै जो स्मार्तहो किंतु स्मृतियों की आज्ञा के अनुसार परम धर्म गिना जाताहो तो वह स्मार्त कर्म कैसे होवै (इस प्रश्नका यह उत्तर है कि) पिंडयज्ञ नाम श्राद्ध जो आश्विन आदि महीने में आवश्यक हैं तथा चरुहोम अर्थात् हव्यान्न होम जिसका बड़ा उपाय और महूर्त भी पहिले से निश्चय होचुका था या कोईसा नियमात्मक नित्य होम जो निरंतर होता रहताथा बीचही में सूतक होगया इसी प्रकार कोई बड़ा यज्ञ वागप्रतिष्ठा आदि जो पहिलेसे प्रारंभ था सो सब उसी सूतक में असगोत्री पुरुषके द्वारा करावै किंतु न आपकरै न अपने सगोत्रीसे करावै—अब = शेषरहा यह संदेह कि गैरके हाथ से किये कर्म का फलभागी कौन होगा इसके मध्ये सदा शिवजी का यह वचनहै = यथा = दैवेपित्र्येचवाणिज्येराजद्वारे विशेषतः यद्दिदध्यात्प्रतिनिधिःतन्नियंतुःफलंभवेत्=अर्थात्—विशेषकर देवकर्म जप होम यज्ञ आदि ब्राह्मणवर्णोंमें और पितर कर्म श्राद्ध गयाश्राद्ध आदि जो आचार्य वा पुरोहित से कराया जाय और वाणिज्य व्यापार कर्मजो गुमाश्तों वा मुनीमोंके द्वारा किया जाय तथा राजद्वार में जो मुख्तार वकीलोंके द्वारा काम होते हैं इनसभी में जोकुछ दान कोई प्रतिनिधि करै सो नियंता स्वामी का करना गिनाजाता किंतु भले बुरे फलका भागी वही मालिक होता है

इसी अधिकोक्ति में होचुकाहै ॥ ० ॥ अस गोत्रीके सूतक में अन्न भोजन का निषेध है=यथाहयमः=उभयत्रदशाहानिकुलस्यान्नंनभुज्यते सूतकेतुकुलस्यान्नमदोषंमनुरब्रवी त्=अर्थात्--जिसके सूतकहो उसके कुलमात्र का अन्न दशदिन नहीं खाया जाता उभयत्र नाम जनन मरण दोनोंसूतक में (यहाँ दशदिन के उपलक्षण से उतने दिन समझने जो जिसवर्णके सूतक नियतहों) परंतु अपने सगोत्री कुलका अन्न अदो षितहै सूतक में भोजन करना चाहिये यह मनुका संमत यमने प्रकट किया ॥ ० ॥ बिनाजाने या जान बूझ भोजन करने में किसको दोष होताहै यह भेद षट्त्रिंशत के मतसे दर्शाते हैं = यथा = उभाभ्यामपरिज्ञातेसूतकेनैवदोषभाक् एकेनापिपरिज्ञातेभो-क्तुर्दोषमुपावहेत् = अर्थात्--विदेशमें होने आदि कारणों से दोनोंको सूतक नामालूमहो तो अन्नका दोष देनेवाले या खानेवाले किसीको नहीं होता पर जो दाता या भोक्ता दोमें किसी एकहूको सूतक मालूम हो तौ केवल खानेवालेको दोष लगताहै यह जनन मरण दोनों सूतक में समझना ॥ ० ॥ विवाह आदि उत्सवों में जो अन्न पक्वान्न सूतकसे पहिले सिद्धहो चुकाहो और सूतक उसी घरमें नहो किंतु गृहांतरमें पक्वान्न सिद्धहुआहो तो वह अन्न ब्राह्मण आदि भोजन करसकते हैं=यथाह बृहस्पतिः=विवाहोत्सवयज्ञेषुत्वंतरामृतसूतके पूर्वसंकल्पितार्थेषुनदोषःपरिकीर्तितः = अर्थात्--विवाह या और किसी बड़े उत्सव या यज्ञोंमें उसवरके अंतरमें जनन यामरण का सूतक उत्पन्न होय तो पहिले संकल्पित या सिद्धि किये पदार्थों में सूतक दोष नहीं लगता = इसी वार्तापर षट्त्रिंशन्मत से औरभी कुछ विशेषता दर्शाते हैं = यथा = विवाहोत्सवयज्ञेषुत्वंतरामृतसूतके परैरन्नंप्रदातव्यंभोक्तव्यंचद्विजोत्तमैः भुंजानेषुतुविप्रेषुत्वंतरामृतसूतके अन्यगेहोदकाचांताःसर्वेतेशुचयःस्मृताः

अथआशौचसूतकयोर्दिनावधिकथनेद्वितीयःपरिच्छेदः२॥



इसदूसरे परिच्छेद में जन्म और मरण दोनोंके सूतकों
मध्ये सबतरहकी अवधि कही जायँगी ॥

(जननमरणयोर्ज्ञाते श्रवणे वा सूतक नियमाः)

त्रिरात्रंदशरात्रंवाशावमाशौचमिष्यते । ऊनद्विवर्षउभयोःसूतकंमातुरेवहि ॥ १८ ॥

अक्षरार्थः—तीनरात्र या दशरात्र शवका आशौच इच्छा करतेहैं । दो वर्षसे ऊने में (माता पिता) दोनोंको· हि यथा सूतक माताकोही ॥ १८ ॥

अभिप्रायः—इस बचन के अर्थ कई तरहसे लगते हैं इसी हेतु बहुत गूढ अन्वय लगताहै तिससे खूब ध्यानदेकर शोचो—शवनाम मुर्देका· तिसके निमित्तका आशौच सूतक शावकहाताहै· दूसरा पद सूतक जो उत्तरार्द्ध में आया तिससे केवल जन्मसूतक भी समझा जाता और बिरले समय जन्म मरण दोनोंके सूतक एकही पदसे समुझे जातेहैं जहाँ जैसा प्रयोजन हो वही अर्थ लगाया जाताहै·यहाँ पर योगीश्वर कहतेहैं कि—तीनरात्र या दशरात्र मुर्देका सूतक मानने को सम्वादि ऋषीश्वर इच्छा करते हैं सामान्य सभी गोत्रियोंके निमित्तसें इस भेदसे कि सातपीढीतक सपिण्डलोगदशरात्र मानें और उनसे उपरान्त आठवीं पीढीसे ले चौदह के भीतर जो समानोदक हैं सो केवल तीनरात्रिमानें (यहाँपर मुर्दा कहिनेसे पूरावृत्तका समझना कि जिसको अग्नि का दाह दिया गयाहो· क्योंकि उत्तरार्द्ध में गाड़ने योग्य छोटी अवस्था का वृत्तान्त जुदा कहेंगे—और भी यह व्यवस्था सिर्फ ऐसे मुर्दोकी समझनी जो देशान्तर में मरा सुना गयाहो· क्योंकि प्रत्यक्ष में समीप मरेदेखे हुये की व्यवस्था सबत श्लोक में वर्णन होचुकी) और विशेष ब्यौरा इसीका अविकोनि में समझना यह सब पूर्वार्द्ध का अभिप्राय कहागया । पूर्वार्द्धमें सपिण्डोंको दशदिन सामान्यभाव से सभी सपिण्ड समझेगये तिसने उत्तरार्द्धमें बिरले वर्णमें सपिण्डोंका जुदा नियम दर्शाते हैं कि—दो वर्षसे ऊने बालक मरनेमें (उभयोर्मातापित्रोः) माता पिता दोनों को

दशरात्रि का सूतक लगै किन्तु सभी सपिण्डों को नहीं क्योंकि अन्य सपिण्डोंको सूतक आगे तेईसवें मूलश्लोकमें कहेंगे (सूतकेमातुरेवहि) सूतकमें अर्थात पुत्रजन्म होतेही सद्यउत्पन्न होय तहाँ केवल माताही को दशरात्रि सूतक लगै पिता को नहीं क्योंकि पिताके निमित्त आगे बीसवें श्लोक से जुदा नियम कहेंगे- अथवा (सूतके मातुरेवहि) ऐसा पाठहोने से यह केवल दृष्टांत है कि हि यथा जैसे सूतक नाम जनन कालका अस्पृश्य लक्षण केवल माताको होता है कि उसको न छूनाचाहिये ऐसेही दो वर्षसे ऊने बालक मरने में माता पिता दोनोंको अस्पृश्य रूपी सूतक लगता है कि दोनोंको न छूना चाहिये अन्य सपिण्डोंको छूनेका कुछ दोष नहीं (जब कि सपिंडों को छूने मध्ये दोषका निषेध किया तो सपिण्डोंसे उपरान्त समानोदक अवश्य ही स्पर्श करने योग्य ठहिरे) इन बातों के विशेष ब्यौरे अधिकोक्ति में समझना जहाँ अनेक स्मृतियों के वचन दियेजावेंगे- -परन्तु छोटे बड़ों के सूतक नियम आगे तेईसवें मूल श्लोक से देखना (इस आशौच के प्रकरण में जहाँ कहीं केवल रात्रि या दिन कहाजाय तहाँ रात्रि दिन दोनों मिलके समझने ॥ १८ ॥

१८ अधिकोक्तिः---योगीश्वर के मूलश्लोक में जैसा शाव---शब्दसे मरणाशौच समझाजाताहै तैसा उत्तरार्द्ध में सूतकशब्दसे जनन शौचभी जुदासमझाजाताहै सोइन दोनों पदोंसे योगीश्वरने जनन मरण दोनोंके आशौच सूतक शब्दही प्रयोगकर समस्या किये हैं कि तीन या दश रात्रकी व्यवस्था जो कुछ अभिप्राय से लिखचुके सो सब जन्म मरण दोनोंके निमित्त यथा संभव समझ लेवो = यह दोनों जब कभी कोई सक भी उत्पन्न होकर विदितहोजाय तभी सूतक लगता है अर्थात उत्पन्न होनेपरभी जिस किसीको मालूम न होसके तिसको सूतकनहीं लगता यह तात्पर्यहै इसीलिये अगले वचनहैं=यथा=निर्दशंज्ञातिमरणं श्रुत्वापुत्रस्यजन्मचेत्यादिलिंगदर्शनात् यथा विगतं तुविदेशस्थंशृणुयाद्योह्यनिर्दशं। यच्छेषंदशरात्रस्यतावदेवाशुचिर्भवेदित्यादिवाक्यारंभ सामर्थ्याच्च॰ उत्पत्तिमात्रापेक्षत्वेह्याशौचस्यदशाहाद्याशौचकालनियमागततत्प्रभृति कारव=अर्थात—ये दृष्टांत हैं कि जैसे निर्दश नाम निकास गये दशदिन जिसके ऐसा जो ज्ञातिका मरण हो सो सुनके तैसाही पुत्रका जन्मको नाहि सुनिके॰ इत्यादि वचन का लिंग स्वरूप देखनेसे=यथैव = दूसरा दृष्टांतहै कि विदेशमें टिकेहुएको यदि कोई अनिर्दश सुनावै अर्थात जिसको दशदिन पूरे न बीतेहों सो कहैं कि मेरे जहाँ जो दश रात्रका शेषकाल रहाहो इन्हीं दिनोंतक अशुद्धहै॰ इत्यादिवाक्य आरंभकी सामर्थ्य सेभी सर्वथा निश्चित होताहै कि॰ सूतक उत्पन्न होते मात्रकी अपेक्षा से आशौच के

दशादिन आदि दशाभेद से जो नियम कहिचुके सो सब जन्म या मरण होनेके समय से आवश्यकहैं—इसीहेतुसे अनिर्दशमरण सुननेमें कि जिसको दशदिवस न वीतेहों तो शेष दिवसोंका सूतक सिद्धहोता है तिससे यह तात्पर्य निकसताहै कि शेष काल से लेकर पूरा सूतक न आरंभ करै· इस कारणसे मरण या जन्म जब सुननेमें आवै तभी से सुनने वालेके निकट मरण या जन्म हुआ समझा जाय और उतने दिनतक माना जाय जैसा योगीश्वर के मूलश्लोक पर अभिप्राय लिखागयाहै कि तीन रात्र या दश रात्र समानोदक सपिण्डके भेदसे = इसीके प्रमाणमें यह वचन है = यथा = दशाहंशावमाशौचंसपिण्डेषुविधीयते। जननेप्येवमेवस्यान्निपुणांशुद्धिमिच्छताम्॥ जन्मन्येकोदकानांतुत्रिरात्राच्छुद्धिरिष्यते। शवस्पृशोविशुध्यंतित्र्यहादुदकदायिनः = अर्थात्—सुनेहुये मुर्देका आशौच दशदिन सपिण्डों में किया जाताहै· ऐसेही जन्म सूतकमें दशदिन कियाजाय जो अच्छी शुद्धिचाहते हों· और जन्म सूतकमें एकोदक समानोदकों की शुद्धि तीनरात्रि से कही जातीहै· और उदकदायी समानोदक प्रत्यक्ष मुर्दाको स्पर्श करके भी तीनिही दिनमें शुद्धहोजाते हैं = और भी स्मृत्यंतर वचन जो अशोक्तहै कि = चतुर्थेदशरात्रंस्यात्षण्निशाःपुंसिपंचमे। षष्ठेचतुरहाच्छुद्धिःसप्तमेत्वहरेवतु = अर्थात्—चौथी पीढ़ीतक दशरात्रिका सूतकहोय पाँचवींतक छैरात्रि मानी जायँ और छठींपीढ़ीमें चारहीदिनसे शुद्धिहोती सातवें पुरुषमें एकही दिन मानाजाय सो यह गाथा की रीति से कहा नियम आदर करने योग्य नहीं है· यद्यपि यह भी कहि सकते हैं कि गाथा नहीं एक नियमहै तथापि जैसे विवाह में मधुपर्क समय पशुका आलंभन करना एक धर्म्म ही कहा गयाहै पर वह लोकविद्वेषी धर्म्महोनेसे वर्ताव नहीं किया जाता है (अस्वर्ग्यंलोकविद्विष्टंधर्ममप्याचरेन्नतु) जैसा मनु का यह वचनहै कि जिस धर्ममें स्वर्ग न मिलसके या वह लोक में विद्वेष बढ़ानेवालाहो ऐसा धर्म भी नहीं आचरै—यहां सातवें सपिण्ड पुरुषको एकहीदिनसूतक जिसने बताया तो ऐसा नियम आदरकरने योग्यनहीं है-

को भी दश दिन का आशौच लगै ॥ ० ॥ औरभी सूतक में छूना न छूना कहा तिस का भी प्रमाण यह देवल का वचन है=यथा=स्वाशौचकालाद्विज्ञेयंस्पर्शनंचविभागतः। शूद्रविट्क्षत्रविप्राणां यथाशास्त्रंप्रचोदितम = अर्थात--शूद्र वैश्य क्षत्री ब्राह्मण इनके जैसे सूतक शास्त्रमें आज्ञाकियेगयेहैं तैसे निज निज आशौच कालके तिहाई भागसे उपरांत अंगछूना समझो = देवल का यह वचनभी अनुपनीत मुर्देका नियम समझना जो यज्ञोपवीत होनेके भीतर मराहो और जनेऊहुये उस मृतक मध्ये समझना जिसका पूरा सूतक बीति जाने पर सुनागया और दुबारा माना गया हो क्योंकि जनेऊवाले मृतकमध्ये देवलने जुदा वचन कहा है = यथा = दशाहादित्रिभागेनकृते संचयनेक्रमात।अंगस्पर्शनमिच्छंतिवर्णानांतत्त्वदर्शिनः॥त्रिचतुःपंचदशभिःस्पृश्यावर्णाः क्रमेणतु। भोज्यान्नोदशभिर्विप्रःशेषाह्निवियडुत्तरैः = अर्थात--दशादिन आदि जिसवर्ण का जितना सूतक होताहै तिसके क्रमसे तिहाई दिवस बीतने और अस्थिसंचय करलेनेपर सूतकियों का शरीर छूना कहा है तत्त्वदर्शी जनोंने· उसी का यह ब्यौरा है कि तीन·चार·पाँच.दश·ये वर्ण क्रमसे स्पर्श करने योग्य दिवस हैं--क्योंकि ब्राह्मण केदश दिनकी तिहाई तीन माने·क्षत्री के बारह दिनकी तिहाई चार हुये·वैश्यके पंद्रह दिनकी तिहाई पाँच हुये·शूद्र के तीस दिनकी तिहाई दशदिन हुये· इसी प्रकार ब्राह्मण का अन्नभी दशदिन बीते बाद खाने योग्य और शेष वर्णों का जो तीन के दिन उपरान्त बीति जानेपर समझना ॥ १८ ॥ दिनमें मरे या रात्रिमें तिसका दिवस गणना कबसे करनी यह विचार आगे २० की अभिकोक्ति के अन्तमें समझना ॥ ० ॥ यद्यपि जन्म सूतक मरण के साथही कहिचुके परन्तु समग्र संशोनित स्पष्ट करता सो संदेह निवारण पूर्वक अब केवल जन्म सूतक वर्णन करते हैं ॥ १८ ॥

(जनने चास्पृश्यत्वसूतकनियमाः)

आदि का जन्म होने के कारण से अर्थात् पुत्र रूप से आपही पहिले पुरुष जन्म लेतेहैं तिसके मंगल हेतुसे दान करने आदिका अधिकार नहीं मिट सकता यह अधिकोक्ति में देखना ॥ १९ ॥

१९ अधिकोक्तिः—माता पिता के सूतक में कुछ भेद ऊपर कहागया तिसका व्यौरा वसिष्ठने स्पष्ट करके कहाहै = यथा = नाशौचंविद्यतेपुंसः संसर्गंचेन्नगच्छति रजस्तत्राशुचिर्ज्ञेयंतच्चपुंसिनविद्यते = अर्थात्--पुरुष को जन्मसूतक उस दशामें नहीं लगता जो सूतिका के संसर्ग तक नहीं पहुँचे क्योंकि उस घरमें रक्तका संसर्ग है सोई अशुचि समझना वह रक्त पुरुष में नहीं होता = इसी हेतुसे पिता शीघ्रही स्पर्शक-रने योग्य हो सकता है = यथाह संवर्तः = जातेपुत्रेपितुःस्नानंसचैलंतुविधीयते माता शुद्ध्येद्दशाहेनस्नानात्तुस्पर्शनंपितुः = अर्थात्—पुत्र पैदा होने में पिताको सचैलस्नान करना कहा है माता दशदिन में शुद्ध होगी और पिता को स्नान करने मेंही छूने का दोष नहींरहा = माताको दशदिन में शुद्धहोना कहा सो स्पर्श करनेआदि व्यवहारों मध्ये समझना किंतु अदृष्टार्थ रूप कर्मकारने मध्ये जुदा नियमहै = तदाहपैठीनसिः-सूतिकांपुत्रवतींविंशतिरात्रेणसर्वकर्माणिकारयेत् मासेनस्त्रीजननीम् = अर्थात्—पुत्र वाली सूतिका से वीस दिन बाद गृहस्थीके काम करावे और कन्या पैदा करनेवाली सेमहीना भरमें = जन्मसूतक में सपिंडों को न छूने योग्य दोष नहीं होता यह अंगि-राने भी कहा है = यथा = सूतकेसूतिकावर्ज्यं संस्पर्शोननिषिध्यते संस्पर्शेसूतिकायाः स्तुस्नानमेवविधीयते = अर्थात्--सूतकमें सूतिका के सिवाय किसी और सपिंड का छूना निषेध नहींहै परंतु सूतिका स्त्रीको स्पर्श होजानेमें केवल स्नानकरना कहा है-
ों–उत्तरार्द्ध मूलश्लोक में पुत्रजन्मका दिवसमात्र निर्दोष कहाथातिसकानियम व्या-
याज्ञवल्क्यस्मृतिमेंकहाहै= यथा=कुमारजन्मदिवसेदिद्व.त्वार्य.प्रतिग्रहः हिरण्य[illegible]

प होगी जो पहिले मरण सूतक मध्ये शुद्धक्रिया का दिन दहिराहो. किंतु सूतिका के दशदिन यद्यपि कई दिन पीछे पूरेहोंगे तथापि सूती शावशौच के साथ शुद्धहो-जायगी—यह सब नियम योगीश्वर के मूलश्लोक से तुल्यात्मक है और (नसूतिः शावशोधिनी) यह वचन जो इसी अधिकोक्ति में लिखा गया तिसके भी समान है॥ २० ॥ इति पूर्वार्ध श्लोकः॥

(अब उत्तरार्द्ध श्लोक से उस प्रकार का सूतक वर्णन होगा जो गर्भके दिन पूरे हुये बिना गर्भ गिरजाय तहाँ कितना सूतक माना जाय—ऊपर तथा नीचेकी दोनों अधिकोक्तियों के नियम सभी वर्णोंको बराबर है कुछ भेद नहीं)

(गर्भस्राव सूतक नियमाः)

गर्भस्रावेमासतुल्यानिशाःशुद्धस्तुकारणम् २०

अर्थः—गर्भ गिरजाने में मासों के तुल्य रात्रियां शुद्धि का कारण हैं-अभिप्राय इसका यहकि जितने महीने का गर्भ होकर गिराहो उतनी संख्या से रात्रैं किंतु उतने दिनका सूतक माना जाय तब शुद्धिका स्नान होय ॥ २० ॥

२० अधिकोक्तिः—गर्भस्राव होनेमें पुरुषोंको स्नान करने मात्र से उसी दिनशुद्धि होजाती है यह वृद्ध वशिष्टने कहा है = यथा = गर्भस्रावेमासतुल्यारात्रयः स्त्रीणां स्नानमात्रमेवपुरुषस्य = अर्थात्—गर्भ गिरने में महीनाओं के बराबर रात्रें शुद्ध होने को स्त्रियोंके निमित्त होतीहैं किंतु पुरुष को स्नान मात्र शुद्धि का हेतु है॥ स्त्रियों की शुद्धि योगीश्वर ने महीनों के समान रात्रियोंसे कही-परंतु गौतमने (त्र्यहंच) यहपद अपने किसी वचन में कहाहै कि तीन दिन सामान्य भाव से नियमात्मक समझ लेने-इसपर मिताक्षरा का श्रीमद्विज्ञानेश्वराचार्य तर्कना दृढ करते हैं कि यह नियम तीन महीनासे इधर गर्भ गिरने में समझना-क्योंकि-अगले मरीचि के वाक्यमें यही तात्पर्य पाया जाताहै = यथाह मरीचिः =

व्यवस्था कल्पित करलेनी पर विशेषकर देशाचार कुलाचार पर दृष्टिदेना पाण्डित्य का विश्वासहै कि जो वचन जिस देश या जिस कुलकी परिपाटीसे तुल्य हो उसीको उस जगह पर स्वीकार करना ॥ ० ॥ जो गर्भ सातवें महीना से लेकर किसी महीना में जीवता जन्म लेकर तत्काल मरे या ऐसेही से मरा पैदाहोय तिसके लिये सपिण्ड लोग पूरा सूतक जो जन्म के निमित्त में दशदिन आदि होता है वही मानें क्योंकि छे महीना से उपरांत जन्म होने या गर्भ गिरने में प्रसूति कहाती है यह अभी ऊपर लिखचुके हैं और भी यथोक्त वचन प्रमाण है=यथाहमरीचिः=जातमृतेमृतजातेवास पिण्डानांदशाहमिति=अतःसूतकेचेदोत्थानादाशौचंमृतकवदिति पारस्करवचनंच-अस्यार्थ (ओत्थानादासूतिकाया उत्थानाद्दशाहमितियावत्सूतकवदिति शिशूपरम निमित्तोदकदानरहितमित्यर्थ इतिमिताक्षराकारः = अर्थात्—जन्म होकर मरने में या मरा जन्म होने में सपिण्डों को दश दिन सूतक यह मरीचिने कहा=और=इसी से यदि सूतक में ही (शिशुमरजाय) तहाँ आउत्थानात् ओत्थान की अवधि में मृतकवत् आशौच कियाजाय यह पारस्कर का वचन है--यहाँ ओत्थान की अवधि जो कही तिसका यह तात्पर्य है कि सूतिका स्त्रीका उत्थान अर्थात् बड़ा नहान जितने दिन में होता हो जैसे दश दिन प्रसिद्ध हैं सूतक उठि जाने को उसी दिन आशौच किया जाय सोभी सूतकवत् कियाजाय जैसा प्रसूतीका ज्ञान प्रसिद्ध है अर्थात् मृतक से बचा जो मरचुका तिसको जलदान आदि मृतक क्रिया का आशौच न करें यही नियम बृहन्मनु से स्पष्ट करदे कहागया है=यथा=दशाहाभ्यंतरेबालेप्रमीते तस्यबांधवैः ।

यथाह शंखः = अग्निहोत्रार्थस्नानोपस्पर्शनात्तत्कालंशौचं = अर्थात — अग्निहोत्र कर्मकी जरूरत के लिये स्नान और आचमन करलेने से तत्कालही शौच होजाता है ॥ नाभि वर्धन किंतु नाल छेदन कर्म्म होजाने पीछे जो बच्चा मरै तो सपिण्डों को पूरा सूतक जन्म निमित्त का होताहै = तदाह जैमिनिः = यावन्नछिद्यतेनालंतावन्नाप्नोतिसूतकम् । छिन्नेनालेततःपश्चात्सूतकंतुविधीयते = अर्थात — जब ताईंनाल नहीं काटाजाता तब ताईं सूतक नहीं लगता नाल कटे पीछे सूतक लगा कहाता है ॥० ॥ अथात्र रजस्वलाप्रायश्चित्तं — यहाँसूतकियोंके प्रायश्चित्त प्रसंगसे रजस्वला स्त्रीओं के प्रायश्चित्त दर्शाते हैं = यथाहमनुः = रात्रिभिर्मासतुल्याभिर्गर्भस्रावेविशुद्ध्यति । रजस्युपरतेसाध्वीस्नानेनस्त्रीरजस्वला = अर्थात — जो गर्भपेटमेंजमिकरपीछे बहिजाय तो महीनोंके तुल्य रात्रियोंसे वह स्त्री शुद्धहोतीहै दृष्टांत जैसे प्रथम मासमें गर्भ स्राव होजाय तो एक रात्रि बीते स्नान करै इत्यादि दूसरे तीसरे मासमें समुझि लेना। परंतु जो रजस्वला मात्रहुईहो तो निपट रक्त सूखिजाने पर देव कर्म आदि धर्मों के योग्यशुद्धहोती है चाहैं जितने अधिक दिनोंतक सूखै। किंतु छूने आदि व्यवहारों के योग्य तो चौथे दिनही रक्त सूखे बिना भी स्नान करके शुद्ध होजाती है = तथाह स्वमनुः — चतुर्थेऽहनिसंशुद्धाभवतिव्यावहारिकी = तथास्मृत्यंतरमपि — शुद्धाभर्तुश्चतुर्थेऽह्निस्नानेनस्त्रीरजस्वला दैवेकर्मणिपित्र्येचपंचमेऽहनिशुद्ध्यति = अर्थात चौथे दिन शुद्धहोती है व्यवहार मात्रके योग्य ऐसेही अन्यस्मृति का वचन है कि — रजस्वला स्त्री भर्ताके व्यवहार योग्य चौथे दिन स्नान करके शुद्ध होजाती है। पर देव कर्म औ पितर कर्मके योग्य पाँचवें दिन होतीहै (यहाँपाँचवाँदिन इसलिये नियत कियाहै किबहुधा स्त्रियोंका रक्त पाँचवें दिन निःशेष होजाता है अन्यथा प्रायश किसी स्त्रियों के दशदिनतक भी न सूखताहो इसीलिये ऊपरले मनुके वचन में रजस्युपरते समस्या करीगईहै कि जब कभी रजकी निवृत्तिहो तभी देव कर्म के योग्य शुद्धि होगी)=जिस स्त्रीको रजोदर्शन के दिनसे लेकर सत्रह दिनके भीतर फिरके रजोदर्शन होय तो उससेअपवित्रता नहींमानी जायगी। जो सत्रह दिनके बाद अठारहवें दिवस होय तोएक दिनकी अशुद्धि मानीजायगी। उन्नीसवें दिनमेंके दोदिनमें शुद्धि होगी। इसके उपरान्त बीसवें दिनको आदिलेकर तीन दिनमें होय तो तीन दिन में शुद्धि होगी = तथाहादि० = रजस्वलायांसप्तदशात्पूर्वंरजस्वला शुद्धा दिनत्रयाच्छुद्धित्वंनविद्यते अष्टादशेदिनेस्नानं एकोनविंशतेद्व्यहं विंशत्यादौत्र्यहंशौचं वेद = अर्थ ऊपरलिखचुके यहाँलिखो = यहाँ स्मृत्यंतर वचन है कि ...

कर्मसेशुद्धि उसकी होय॰ सोकहितेहैं कि ज्वर के वेगमें स्नान तौ न होसा परन्तुचौथा दिन होनेमें कोई और स्त्री उसरजस्वला को स्पर्शकरके प्रतिनिधिबनै और नदीतडागमें वस्त्रों सहित उसके बदले गोता लगाकर बार बार उसको छूवतीजाय और बीच बीच आचमन भी करती जाय ऐसे दशवारह वेर स्नान आचमन करके छूने पीछे वस्त्रोंका त्याग करावै तौ वह रजस्वला भी शुद्ध होजायगी और शक्ति के अनुरूप कुछ दानदेवै फिर पुण्याह वाचन कराके शुद्ध होती है॥ यह प्रतिनिधि रूपी स्नान का प्रकार और भी सब रोगीमात्र के निमित्त में समझना केवल रजस्वला को नहीं=क्योंकि= पाराशर में सभी रोगियों के निमित्त से कहाहै= यथा= आतुरेस्नानउत्पन्नेदशकृत्वो ह्यनातुरः स्नात्वास्नात्वास्पृशेदेनं ततःशुध्येत्सआतुरः=अर्थात्--जहां किसी रोगी को स्नान की आवश्यकता खडीहोजाय तब दूसरा कोई निरोग पुरुष स्नान कर कर के दशवार उसको छूवै तौ वह रोगी शुद्ध होजाय॥ ०॥ जहां कहीं रजस्वला या प्रसूती स्त्री की मौत होजाय तहां स्नान का प्रकार यह अग्रोक्त है = यथा = सूतिकायां मृतायांतुकथंकुर्वंतियाज्ञिकाः कुम्भेसलिलमादायपंचगव्यंतथैवच पुण्यर्ग्भिरभिमन्त्र्यापोवाचाशुद्धिंलभेत्ततः तेनैवस्नापयित्वातुदाहंकुर्याद्यथाविधि=रजस्वलायास्तु पंचभिःस्नापयित्वातुगव्यैःप्रेतांरजस्वलाम वस्त्रांतरावृतांकृत्वा दाहयेद्विधिपूर्वकम् अर्थात्—प्रसूती स्त्री मरजाने में याज्ञिकलोग कैसे करते हैं इसप्रश्नका यह उत्तरहै कि मट्टी के घडे में जल लेकर तथा पंचगव्य लेकर पवित्र ऋचाओं से जल अभिमंत्रित करके वचन से शुद्धि प्राप्तकरैं तिसपीछे उसी जल से मुर्दे को स्नान करायकै जैसी विधि हो तैसे दाहकरै = रजस्वला का यह विधान है कि = मरीहुई प्रेता रजस्वला को पंचगव्यों से स्नान करायके दूसरे सूखे वस्त्र में लपेटिके विधिपूर्वक दाह कर्म करै॥ ०

उसी दिनसे लेकर तीन या दश या जितने दिन कहेहों सो गिनिलेने एकयह सामान्य कल्प कहा॰ एवं जो आधीरातिके पहिले कुछमरण आदि हुआहो तौभी उसीपहिले दिवस को लेकर गिनती करनी क्योंकि सूतक आदि कामों में आधीरात तक उसी दिन की अवधि मानी जाती है (इसी से यह तात्पर्य स्वतः सिद्ध होगया कि जो आधी के उपरांत मृत्यु या जन्म या रजो दर्शन हुआहो तौ वह आधीरात दूसरे दिन के साथ समझनी और उसके लिये आगामी आधादिन भी दुपहर तक उसी रात्रिके साथ समझना दूसरा कल्प इसी नियम से माना जासक्ता है जिसकी इच्छा वा देश कुलकी रीतिहो तौ वह इसी कल्प को मानौ॰ इसीलिये (यस्याहस्तस्यशर्वरी) यह श्लोकों में कहागया कि जिस राति का दिन हो उसी दिन की राति समझनी या जिसदेशमें जैसा दिन मानाजाताहो तौ उसीदिनकेअनुसार उसकीशर्वरीभी समझनी) तीसरा कल्प यह भी है कि रात्रिके तीन भाग मानिके दो भाग तौ बीते दिनके साथ समझने और तीसरा भाग शेष रात्रि को आगामी दिन के साथ समझना रजोदर्शन और सूतक में॰ एक कल्प यह भी है कि जहां तक सूर्यउदय न हुये हों सामान्य भाव से रात्रि भर में किसी समय मरण या रजोदर्शन या प्रसूत हुआ हो तौ पहिलाही दिन मानना किन्तु आगामी का प्रयोजन इसमें नहीं है—इन सब कोई भांति के कल्पों में जिस देश की जैसी परिपाटी हो तैसा कल्प स्वीकार करना यह सिद्धांत है॥ ० ॥ अब यह नियम करना शेष रहा कि मरण के दिन से अवधिलेनी या दाह के दिन से सो कहिते हैं कि जो आहिताग्नि अग्निहोत्री मरा हो तौ दाह आदि संस्कार के दिनसे अवधिलेनी और अनाहिताग्नि जो अनग्निहोत्री कोई मराहो तौ मौत के दिन से अवधि माननी परंतु अस्थिसंचय कर्म दोनों का दाहके दिनसे गिनाजाय सो यह भेद अंगिरा ने कहाहै = यथा = अनग्निमत उत्क्रांतेःमात्तेः संस्कारकर्मणः शुद्धिःसंचयनंदाहा न्मृताहस्तुयथातिथि॰ = अर्थात—अनग्निमान का मौत के दिनसे शुद्धिका दिवस लियाजाय और अग्निमान का संस्कार कर्मके दिन से और संचयन कर्म दाहके दिन से दोनोंका और मरनेका दिन सपाह जो तिथि हो उसके अनुकूल समझना॥ इस वचन में अग्निहोत्री का सूतक मानना जो दाह कर्म के होने बाद कहा जिससे यह तात्पर्यभी उत्पन्नभया कि जिनका आहिताग्नि पिता कहीं देशांतरमें मरे तौ उसपुत्र कोंको पत्त न विधान करो संस्कार करनेके पहिले संध्यावंदन आदि कर्मों का निषेध नहीं है—तथाचपैठीनसिः=अनग्निमत उत्क्रांते सर्वेचाहिताग्नि दाहाद्यावत्सर्वोश्च त्याहदेशान्तरमृतेसति = अर्थात—जिनको लोगों के अनग्नि मानका मरणके दिवस

तिसका भी यह नियम नहींहै) किंतु युद्ध में जो मारे गये तिनके लिये एक दिन का सूतक लिखाहै = यथा = ब्राह्मणार्थेविपन्नानांयोयितांगोग्रहेपिच आहवेपिहतानां चएकरात्रमशौचकम् = अर्थात्—ब्राह्मण की रक्षा आदि उपकार करते हुये जो किसी प्रकार की अपमृत्यु से मरेहों एवं स्त्रियोंकी रक्षा करते जो मरेहों या गऊके अनुग्रह में अर्थात् गऊकी रक्षा या चिकित्सा आदि उपकार करने में या गोग्रह नामगऊ के बाँधने छोरने आदि साधारण काम करते हुये उसके द्वारामरेहों या आहव नामयुद्ध में मारे गये इन सबका एकदिन रातिका सूतक होना चाहिये किन्तु सद्यःशौचनहीं-तथापि यह नियम केवल उन युद्ध वालोंका समझना जो युद्धमें घायलहोकर तत्काल न मरेहों किन्तुकालांतर में प्राण छोड़ेहों—क्योंकि—रणभूमिपर प्राण छोड़नेवालेकी मृत्युभी यज्ञसमान होतीहै तिससे मनुने उसकोसद्यःशौचभागी कहा बरनविशेषक्रिया कर्मकी आवश्यकता भी उसकेलियेनहीं राखी=यथाह मनुः=उद्यतैराहवेशस्त्रैःक्षत्रधर्महतस्यच सद्यःसंतिष्ठतेयज्ञस्तथाशौचमितिस्थितिः-- अर्थात्--संग्राम की भूमि पर उगत हुयेशस्त्रोंसे क्षत्रियधर्मसे जो मराहो तिसका यज्ञउसीसमय खड़ाहोता और इसीप्रकार सद्यःशौच भी होजाता है यही मर्यादा इसकी नियत है—अर्थात् शंगे और पहरों का ब्रह्मभोज रूपी यज्ञ तत्काल किया जाता है सूतक पातकों का विचार इसमें नहीं क्योंकि उसकी स्वर्गयात्रा का उत्सव रूपी यज्ञ माना जाता है

र्थात—यदि कोई सपिंड कहीं ऐसे विदेशमें बैठाहो जो मरे या पैदा हुयेकी खबरपहिले रोज न सुनिसके किन्तु कई दिन पीछे सुने तो दश दिन आदि सूतकों का जितना काल शेषरहाहो उसीको बिताकर शुद्धिहोगी • और जिसने सूतक पूरा होजाने बाद सुनिपायाहो वह सुनते स्नान जलदान करके पवित्र होगा (परंतु जलदान केवल प्रेत को होताहै तिससे यह पिछला नियम प्रेतही के निमित्त में समझना कि स्नान करके जलदान करै अन्यथा जो जन्मका सूतक पूराहोजाने बाद सुनाहो तो जलदानके अभावसे स्नानकी भी जरूरत नहींरही यह भेद अधिकोक्ति में देखना ॥ २१ ॥

२१अधिकोक्तिः—मनुराह—निर्दशंज्ञातिमरणंश्रुत्वापुत्रस्यजन्मच।सवासाजलमाप्लुत्यशुद्धोभवतिमानवः=अर्थात–दशदिन बीतजाने बाद ज्ञातिका मरना सुनिके या पुत्रका जन्म सुनिके कपडों सहित जलमें स्नान करिके मनुष्य शुद्ध होता है॥ योगीश्वर के इसी उत्तरार्द्धमूल श्लोक में पहिला पाद जन्म मरण दोनों के नियम मध्ये समझना और पिछला केवल मरण के सूतक मध्ये समझना क्योंकि जलदान करके शुद्धिहोजाना कहा सो जलदान केवल प्रेतके निमित्त में होताहै तो यह तात्पर्य निकसा कि जन्म का सूतक पूराहोजाने के बाद जो विदेश में बैठा हुआ सपिंड सुने तो उसको सूतक नहीं रहा समझना किन्तु स्नानमात्र भी न करना चाहिये—परंतु जो उस जन्म लेनेवाले पुत्रके पिताने विदेशमे रहते सूतक पूरा होजाने बाद सुना हो तो पिता को उस दशामें भी स्नानकरके शुद्धि होतीहै जैसा पूर्वकथित मनुके वचनमें लिखचुके हैं सो देखो कि दशदिनबीते पुत्रका जन्म सुनि के स्नान करै—और—पुत्र शब्द कहने से यह भी सिद्धांत ठहरा कि जिस का पुत्र नहीं ऐसा कोई सपिंड जो दशदिन बीते बाद जन्म सुने तो उसको स्नान की आवश्यकता नहींरही—क्योंकि—जो ऐसा सिद्धांत न होता तो मनुके वचनमें पाठभी (निर्दशंज्ञातिमरणंश्रुत्वाजन्मचनिर्दशम्, ऐसा होता सो नहीं है=और उसी सिद्धांत के अनुकूल व्याघ्र देवलका वचन है=यथा—नाशुद्धिः प्रसवाशौचेव्यतीतेष्वदिनेष्वपि।

और जो शेष नहीं रहा किन्तु सूतक पूरा होजाने बाद सुनाहो तो सभी वर्णोंको समान भाव तीनदिन का सूतक चाहिये· और जो एक वर्ष पूरा होजाने बाद विदेशस्थ का मरना सुनाजाय तो सभी ब्राह्मण आदि वर्णों का एकही नियम है कि सुनते मात्र स्नान पूर्वक जलदेकरशुद्ध होजायँगे=और इसका भी प्रमाण अग्रोक्त मनुका वचन है यथाह=संवत्सरेव्यतीतेतुस्पृष्ट्वैवापोविशुद्ध्यति=अर्थात्=संवत्सर बीतिजाने पर सुनने में जल स्पर्शहो करके शुद्ध होजाता है=सो यह पाठान्तर में तीन दिन का नियम दश दिन के बाद तीन महीना के भीतर खबर पाने में समझना और पूर्वोक्त मूल पाठमें कहाभया सद्यःशौच उस दशामें वर्तावा करना जो नौमहीना बीतिजाने बाद वर्ष भीतर कभी खबर मिली होतो जल दानमात्र से तत्काल शुद्धि होजायगी = और जो अग्रोक्त वचन है = यथाह वशिष्ठः = ऊर्ध्वंदशाहाच्छ्रुत्वैकरात्रं = अर्थात् दश दिन उपरांत खबर मिलने में एक रात्रिका सूतक होय—सो यह एकदिनका उस दशामें मानना जो छैमास के उपरांत नौमासके भीतर खबर मिलै = एक यह गौतमका वचनहै = यथा = श्रुत्वाचोर्ध्वंदशम्याःपक्षिणी = अर्थात् दशईंरातिके उपरांत सुनिके एक पक्षिणी नामक रातिमात्रका सूतक होय किन्तु जिसकेसाथ एक दिन पहिला और एक पिछला भी मिलायाजाय सो पक्षिणी कहाती है तो इस हिसाब से दश ग्यारह या बारह प्रकारका सूतक ठहरा सो यह नियम उस दशामें समुझना जो तीन महीना के उपरांत छै महीनाके भीतर कभी खबर मिलै॥ इनसब

दाप्नुयात्=तथाचशातातपः=एकादशाहाद्राजन्योवैश्योद्वादशभिस्तथा शूद्रोविंशति रात्रेणशुद्ध्यतमृतसूतके=अर्थात्—जो अपने कर्मधर्म में निरत हो ऐसा क्षत्री भी दश दिनमें शुद्धहोय वैसाही वैश्य बारह दिनसें शुद्धिपावै यह पराशरने कहा=तैसाही शातातप कहतेहैं कि=मरण याजन्मके होनेसें ग्यारहदिनसे क्षत्री और बारहदिनोंसे वैश्य और शूद्र बीसदिन से शुद्धहोय=वशिष्ठने और भी अधिकदिन बताये हैं=यथा= पंचदशरात्रेणराजन्योविंशतिरात्रेणवैश्यः=अर्थात्—पंद्रह रात्रियों से क्षत्री और बीस रात्रियोंसे वैश्यका आशौच होय=अंगिराने सभी वर्णोंको बराबर दशदिनका सूतक बताया सो भी शातातपके कथनका पता देकर=यथा = सर्वेषामेववर्णानांमृतकेसू तकेतथा दशाहाच्छुद्धिरेतेषामितिशातातपोऽब्रवीत = अर्थात्—जन्मतथामरण में इन सभी वर्णोंका (कि जिनका सूतकजुदाजुदा वर्णन होचुका) उन्हीं सबको सामान्य भाव दशदिनसे शुद्धि होतीहै यह शातातपनेकहाया॥ इसभांतिसे अनेक प्रकारके शौचके कल्पदर्शित हुयेहैं तिनका संसारमें अच्छाप्रचार न होनेसे व्यवस्था कल्पना करना कुछआवश्यक नहींहै इसलिये व्यवस्थाका रूप होलनहीं बताते यह विज्ञा- नेश्वरनेकहा—और भावार्थ इसका यहीहै कि जिस स्थलमें जैसा प्रचारहो वैसामान लेना॥ ० ॥जहाँ कहीं ब्राह्मण आदि किसी वर्णके क्षत्री आदि सपिंड हों तिनका शौच नियम हारीत आदि स्मृतियों के अनुसार होनाचाहिये क्योंकि उन्हीं में यह निर्णय अच्छा कियाहै = यथा हारीतः = दशाहाच्छुध्यतेविप्रो जन्महानौस्वयोनि षु षड्भिस्त्रिभिरथैकेनक्षत्रविट्शूद्रयोनिषु=

के निमित्त में समझना जिनको अग्निदाह न कियाजाय—क्योंकि वैयाघ्रशास्त्र में यही तात्पर्य स्पष्ट कहागया है = यथा = अदंतजातेबालेप्रेतेसद्यएवनास्याग्नि संस्कारोनोदकक्रिया = अर्थात्—दाँत जमे विना बालक प्रेतहोजाने में सद्यही शौच कियाजाय न इसका अग्नि संस्कार होवै न जलदान कियाजाय = और जो दाँतजमे विना मरे को अग्निदाह किसी कारण से कियाजाय तिसके लिये एक दिन रात्रि का सूतक अगिले चौबीस के मूल श्लोक में देखो उसीका प्रमाण भी अग्रोक्त यम का वचन है (इतिविज्ञानेश्वरः) = यथाह यमः = अदंतजाततनयेशिशौगर्भच्युतेतथा सपिण्डानांतुसर्वेषामहोरात्रमशौचकम् = अर्थात्—विना दाँतोंका पुत्र मरने में तथा मरावचा गर्भ से गिरजाने में भी सभी सपिण्डों को एक दिन रात्रिका अशौच लगता है = और भी नामकरण से पहिले मरजानेमें अवश्यभाव सद्यः शौच कानियम शंख-स्मृति में नियत है क्योंकि इसको अग्निदाह कभी नहीं होता = यथा = प्राङ्नाम करणात्सद्यःशौचं) (चूडाकर्मचोटीधारना प्रथम वर्ष वा तृतीय वर्ष में भी होताहै तथाचवचनं=चूडाकर्मद्विजातीनांसर्वेषामेवधर्मतःप्रथमेऽब्देतृतीयेवाकर्तव्यं श्रुतिचोदनात=अर्थात्—चूडाकर्म सभी द्विजाती लोगों का निज धर्मके अनुसार पहिले वर्ष में या तीसरे में करना चाहिये श्रुतिकी आज्ञासे) तो इस नियमसे यह व्यवस्था सिद्ध होती है कि दाँत जमने से उपरांत पहिले वर्ष भीतर जबतक चूडाकर्म न हुआहो तब तक मरजानेमें एकदिन रात्रिका सूतक मानाजाय-तहाँ इसमें यह विचार भी कर्तव्यहै किजिनको तीनवर्षमें चूडाकर्महोताहो तिनकोदाँतजमि आनेपर जो तीनवर्ष भीतरतक चूडाकर्म हुये विना मृत्यु होजाय तौभी एकाही दिनका सूतक रहेगा = इसी व्यवस्था का प्रमाण भी अग्रोक्त विष्णु का वचन है = यथा = दन्तजातेऽप्यकृतचूडेत्वहोरात्रेण शुद्धिः = अर्थात्—दांत जमने पर भी चोटी धरे विना मरजाने में एक दिन रात में शुद्धि होतीहै ॥ ० ॥ जिसका मुंडन और चूडाकर्म होचुका हो ऐसा बालक [illegible] होनेसे पहिले कभी मरजाय तिसका सूतक तीन दिन होता है क्योंकि ऐसे बालकों को अग्निदाह भी अवश्य किया जाताहै यह विचार भी [illegible] में लौगाक्षि के वचनसे देखो ॥ और जो अग्रोक्त मनु का वचन है कि = [illegible] चूडानामशुद्धिर्नैशिकीस्मृता । निर्वृत्तचूडकानांतु त्रिरात्राच्छुद्धि[illegible] = अर्थात् विना चोटी धरे मनुष्योंके मरने में एक दिन रात्रिकी अशुद्धि [illegible] और [illegible] चूडाकर्म से निपटारा होचुका तिनके मरनेमें तीन दिन रात्रिमें शुद्धि [illegible] इस वचन का भी यही तात्पर्यहै कि [illegible]

पीछे अशुद्धतारूपी अघ सूतक तीन दिन रोके · यह स्पष्ट प्रमाण है तिससे कश्यप के वचन में भी यही तात्पर्य समुझना ॥ सर्ववचनानां सारव्यवस्था–ऊर्ध्वोक्त सभी वचनोंके सारसे यह अनुक्रम सिद्ध होताहै कि नामकरण दसूठनि दट्टोन होने से पहिले मरै तिसका सद्यः शौच उसी समय स्नान चाहिये·नामकरण होजाने से उपरांत दांत जमने से पहिले मरै तिसका एक दिन राति का सूतक मानै सो उन दशा में कि जो इसको अग्निदाह किया गया हो अन्यथा अग्नि संस्कार के न करने में इस का भी सद्यः शौच करना चाहिये· जिसके दांतभी जमिचुके और कुलकी परिपाटी से प्रथम वर्षमें चूडाकर्म होताहो तिसकर्म के हुये विना मरजाय तो एक दिन राति का सूतक माना जाय· दांत जमने और पहिला वर्ष पूरा होजाने से चूडाकर्म भी हो चुकाहो तिसको तीन वर्षके भीतर मरजाने में तीनदिन रातों का सूतक माना जाय परंतु जिसका चूडाकर्म न हुआहो तिसको तीनवर्ष भीतर भी एकही दिनका सूतक जानो · तीन वर्षकी अवस्था पूरी होजाने उपरांत भी जिसका चूडा न हुआहो तिस का भी तीनदिन सूतक है · जिसका यज्ञोपवीतभी होचुका तिसके मरने में पूरा दश दिन आदि सूतक जो जिस वर्णका आवश्यक है सो करना चाहिये ॥ २३ ॥

(स्त्रीणांवयोवस्थाविशेषेणापवादः)

अहस्त्वदत्तकन्यासुबालेषुचविशोधनम् २४ (उत्तिराधी)

नाम अवस्था भेदसे जो नियम सूतकमें कहीं लिखा गयाहो कि इतनी अवस्था तक इतना सूतक मानना होगा जैसा तेईस मूलश्लोक पूर्वार्द्ध में देखो सो सब नियम सभी वर्णोंका तुल्यहै कुछ ऊंच नीच का भेद इसमें नहीं·तथैव अतिक्रांत नाम जो बहुत काल बीति जाने बाद सुना गया तिसके जो नियम कहीं इक्कीस की अविकोक्ति आदि में लिखे गये सोभी सर्व वर्णों के सामान्य हैं—तौ इन सभी वचनों के प्रमाण से ऊपरली व्यवस्था भी सभी वर्णोंकी समझनी जो इसी अविकोक्ति के प्रारंभ से वर्णन होती रही·जैसे सोरहवें श्लोक वा उसी की अविकोक्ति वाले नियम सभी वर्णों के सामान्यकहे थे·या जैसा समानोदकों का आशौच सभी वर्णों को सामान्य कहागया था·या जैसे बीसवें मूल श्लोक के दोनों अर्द्धोंसे अविकोक्ति पर्यंत के सब नियम सभी वर्णोंको सामान्य कहे गये थे·या जैसे इक्कीसके उत्तरार्द्ध मूलश्लोक से अविकोक्ति पर्यन्त के सब नियम सभी वर्णोंको सामान्यकहे गयेथे·या जैसा आगे वर्णन होने वाले नियम गुरु आदि के सूतक मध्ये सभी वर्णोंके सामान्य कहेजायँगे·तैसेही अवस्था भेद के सूतक भी सभी वर्णों को बराबरहोने योग्य हैं यह व्यवस्था ठीक हो चुकी ॥ ० ॥ तथापि ऋष्यशृंग आदिके वचन इसके विरोधी देखि परतेः यथा = क्षत्रियद्विशःहातेचौलेवैश्येनवशिरुच्यते ऊर्ध्वंनिवर्यादकृतेनुहावगातीविधीयते—तथा—यत्रत्रिरात्रंविप्राणामाशौचंसप्रदृश्यतेतत्रशूद्रे...इत्यादीनि अन्यान्यपिवचनानिसंति=अर्थात -

भेद से व्यवस्था कल्पित करलेनी चाहिये तो कुछ विरोधनहींहै ॥ २४ ॥ मूलश्लोक में एक दिन कहा था उसी एक दिनका अतिदेश अगिले श्लोक से भी कहेंगे ॥ २४॥

(पूर्वनियमस्यैवातिदेशः)

अनौरसेषुपुत्रेषुभार्यास्वन्यगतासुच २५ (इतिपूर्वार्धः)

अर्थः—अनौरस पुत्रोंमें और अन्यपुरुषगता भार्याओंमें भी वही एकदिन सूतक हो=अर्थात्—दत्तक क्षेत्रज आदि जो बारह पुत्र व्यवहार मर्यादा परिपाटी में वर्णन हुये सो औरस नहीं अनौरस कहाते हैं तिनके मरनेमें या उनमें यथा संभव किसीका जन्महोनेमें वही एकदिन सूतकहै जो पहिले श्लोकमें कहिचुके-तथैव अपनी भार्य्या जो और किसी के बैठिगई हों तिनके उस घर में मरनेसे भी मुख्य पतिको एक दिन सूतक है (परन्तु जो ऊँचजाति छोडि नीच जाति के बैठी हो तिसके मरने में यह नियमनहीं समझना किन्तु ऊँचे वर्ण या समानवर्णके बैठी हो उसीका यह नियमहै) क्योंकि प्रतिलोम जातिके बैठनेवाली का सूतक पहिले पतिको नहीं लगता यह छठे मूल श्लोक में निषेध होचुका तहाँ देखो - भार्या अपने पति की सपिण्ड होती है उसका सूतक सपिण्डतासे पूरा दशदिनहोना योग्यथा सो और के बैठिजानेसे एकही दिन का ठहराया जो समान या ऊँची जातिके बैठीहो—सोभी यह उस दशामें गनना कि जिस भार्या से पहिले पति को किसी तरह का समागम शेषबना हो—पति के सिवाय किसी और पतिके भाई आदि सपिण्ड को निपट सूतक ऐसी स्त्रियों का नहीं है अधिकोक्ति देखो॥ २५ ॥

२५ अधिकोक्तिः = अथप्रजापतिः = अन्याश्रितेषुदारेषु परपत्नीसुतेषु च । गोत्रिणःस्नानशुद्धाःस्युस्त्रिरात्रेणैवतत्पिता = अर्थात्—प्रजापति का वचनहै कि जो और किसीके बैठी हुई स्त्रियांहैं तिनमें पराई पत्नीके मरनेमें गोत्री लोग स्नानमात्र से शुद्ध होजायँगे परंतु उनके पिता तीन रात्रि से शुद्धहोंगे ॥ स्वैरिणी आदि स्त्रियां जिनके घर बैठीहों तिसको उनके मरने में तीन दिन सूतक होताहै = यथाह विष्णुः = अनौरसेषुपुत्रेषुजातेषुचमृतेषुच । परपूर्वासुभार्यासुप्रसूतासुमृतासुचेतित्रिरात्रमप्रकरं अर्थात्—अनौरस पुत्रोंके मरने या जन्म होनेमें भी और भी पर पूर्वा भार्याओंके मरने या प्रसूत होनेमें भी तीन दिन सूतकहै जो पहिले किसी वचनमें कहा होगा—यद्यपि विष्णुजी उन्हीं को तीन दिन कहे जिनको योगीश्वरने एका दिन कहा था तो यह न्य वस्थाभी समीप और विदेशके भेदसे दोनों ठीक समुझनी कि जो विदेशमें मरा तिस

तौ नदी तडाग आदि में स्नान दुबारा किये पीछे अग्निको स्पर्शकरै फिर घृतप्राशन करै तब शुद्ध होता है सो यह नियम भी अपनी समान जाति और अपना से ऊंची जातिका विषय समझना ॥ २६ ॥

२६ अधिकोक्तिः=मनुरप्याह = अनुगम्येच्छयाप्रेतंज्ञातिमज्ञातिमेवचस्नात्वा सचैलःस्पृष्ट्वाऽग्निं घृतंप्राश्यविशुद्ध्यति = अर्थात्—अपनी इच्छा से जाति या गैर जातिकेमुर्दा साथ जायके वस्त्रों सहित स्नान करके और अग्नि का स्पर्श करके घृत चाटिके विशुद्ध होताहै (अत्रज्ञातयोमातृसपिंडाः इतरेषांतुविहितत्वान्नदोषः इतिविज्ञानेश्वराचार्यः) अर्थात् श्रीमद्विज्ञानेश्वरने यहभी कहाहै कि यहांपर ज्ञाति शब्दसे माता के सपिंड समझने जिनके साथ जानेका यह प्रायश्चित्त कहा क्योंकि औरों के साथ जानेका नियम कहचुकने से कुछ दोषही नहीं) समान और ऊंची जाति का नियम यह कहागया अब नीची जाति के मुर्दा साथ जाने मध्ये स्मृत्यंतर वचन कहतेहैं=यथाहपराशरः=प्रेतीभूतंतुयःशूद्रंब्राह्मणोज्ञानदुर्बलः अनुगच्छेन्नीयमानंसत्रिरात्रेणशुद्ध्यति त्रिरात्रेतुततश्चोर्णेनदींगत्वासमुद्रगांप्राणायामशतंकृत्वाघृतंप्राश्यविशुद्ध्यति=अर्थात्—मरे हुये शूद्रको लेजातेसमय जो कोई ब्राह्मण ज्ञानसे हीनहोकर साथ चला जाय सो तीन दिन में शुद्ध होताहै तीन रात्रि बीतजाने बाद ऐसी नदी में जाकर गोता लगावै जो समुद्रमें जामिलीहो फिर एकसौ प्राणायाम किये पीछे घी पीकर शुद्ध होता है=यहां पर विज्ञानेश्वर कहते हैं (क्षत्रियानुगमनेत्वहोरात्र) कि क्षत्री मुर्दाके साथ जानेमें ब्राह्मणको एकदिन रातिभर आठपहर तक अशुद्धता रहती हैक्योंकिवशिष्ठकायहआगेलावचनप्रमाणहै) यथा—मानुषास्थिस्निग्धंस्पृष्ट्वात्रिरात्रमाशौचं अस्निग्धेत्वहोरात्रं शवानुगमनेचैवं=अर्थात्—मनुष्यका हाड गीला छूनेकर तीन रात्रिकी अशुद्धता और सूखाहाड छूनेसे एक दिन रात्रि की अशुद्धता और मुर्दा के साथ जाने में भी इसी प्रकार (यद्यपि वशिष्ठके इस वचन में वर्णो का प्रसंग नहीं आया है तथापि इस प्रायश्चित्त काण्ड में विशेष लेखपर हमकुछ तर्क उठाना नहीं चाहतेहैं कदाचित् ऐसा संदिग्धम्यत आचार व्यवहार में होता तो स्वबुद्धिको विस्तार दियेविना न रहते विवेकी पुरुष आपही मन न कामसकैंगे) पुनर्विज्ञानेश्वरः—वैश्यानुगमनेपुनःपक्षिणीतथा क्षत्रियस्यानंतरं वैश्यानुगमने अहोरात्रमेकांतर शूद्रानुगमनेपक्षिणीःवैश्यस्यशूद्रानुगमने एकाहदत्यूहनीयम्=अर्थात्—फिर भी विज्ञानेश्वर ने यह लिखाहै कि ब्राह्मण जो वैश्यके मुर्दासाथगमनकरे तो पक्षिणीनामकअशुद्धिकोबारह प्रहर तक अशुद्धि मानीजाय तथा क्षत्री को भी अपने से अनंतर वर्णो में वैश्यके मुर्दा

वचनहै उनमें हत शब्दसे निपटमरेहुयेकाही अर्थ है पर यहाँ नहीं और उन वचनों मे युद्ध में मरेहुयों का नियम सामान्य भावसे कहिचुके हैं यहाँ उसका सम्बन्ध निपट कुछ नहीं है फिर गऊ ब्राह्मण के निमित्त से संग्राम को विशेषण देनेकी अपेक्षा कहाँ रही·और भी उसीजघे मनुका वचन देखौ कि संग्राम के मरेहुये का सपिण्डों को सद्यःशौच और तत्काल यज्ञ करना लिखिचुके फिर उस प्रकरणका प्रसंग यहां इतनी दूर दुबारा क्यों कर आसक्ता था अर्थात यह प्रकरण उससे जुदाहै इसका उन का परस्पर भी संबंधनहींहै--और बिजलीसे मरजाना आदि अकाल मृत्युका निपटाग छठी अधिकोक्ति में होचुका तहाँ देखौ· किंतु यहाँ बिजली से घायलहुये जीवतेका प्रसंग है कि वह सूतक में भी स्नान करनेसे मञ्जूर है·तिससे इनअत्रोक्त सब नियमों के प्रसंग में हत शब्दका अर्थही मौत न समझना--अथवा जो आधुनिक निर्णेताके विचार में कुछ अंतर पायाजाय तौभी विवेक्ता लोग क्षमायुक्त होकर दो अर्थों मे जिसको चाहैं तिसको मानैं कुछ विशेष आग्रह से प्रयोजन अपने के नहीं है॥ अब इसकी अधिकोक्ति देखौ॥ २७॥

२७ अधिकोक्तिः—महीनाम धरती का पति राजा ऊपर कहागया तहाँ मही शब्दसे यद्यपि सकल पृथ्वी समझी जाती है तथापि समस्त भूगोल का एक राजा होना सम्भव नहींहै इसीलिये योगीश्वर के श्लोक में महीपतीनां या अनेक पतियों का बहुवचन कहाहै तिससे एकएक देशके जुदे जुदे भूमण्डल निश्चित होते हैं कि जिस किसी देश के पालन में क्षत्री आदि कोई राजा अभिषेक से संयुक्त कियागया हो वही महीपति कहाता है· महीपतियों को सूतक नहीं लगतायह नियम केवल इसलिये है कि प्रजाकी रक्षा आदि विशेष बड़ेकाम जिनको राजाके सिवाय कोई और नहीं करसक्ता तिनका विध्वंस न होजाय तिससे यह अभिप्राय है कि जिस राजा को दानमान सत्कार व्यवहार दर्शन आदि जिन विशेष कामों के प्रभाव मे अशौच मानने का अवकाश न हो वही राजा केवल उन्हींकामों मध्ये सूतक न माननेका अधिकारी होसक्ताहै अन्यथा पंचमहायज्ञ आदिभी कामों मध्ये सूतक न मानना कोई नियम नहीं है· इसका प्रमाण भी अत्रोक्तमनुका वचन है—यथा राज्ञोमहात्मिकेस्थाने सद्यःशौचंविधीयते प्रजानांपरिरक्षार्थं मासनंचात्रकारणम्— अर्थात्—राजाको बहुत बड़े कार्य की आवश्यकता के ऊपर सद्यःशौच कहाजाता है दृष्टान्त जैसे प्रजाओं की विशेष रक्षा के लिये इसमें आसन भी बड़ा कारण है— यहाँ आसन शब्द से कई अर्थ लिये जासक्ते हैं जैसे सूत्र मे आसन सिंहासन गद्दी पर

यित हैं इनसे काम करानेमें दोषनहीं·विज्ञानेश्वर कहतेहैं कि इन दासादिकोंकीशुद्धि अशुद्धि सम्बंधे विशेष उपाय कोई नहीं है कि इनको छूनेसे कोई बचिसकै क्योंकि बहुधा गृहस्थों के काम धन्धे इनकोबिना होभीनहींसक्तेहैं तिससे जिनकामोंमेंछूनेका बचाउ निपट न होसक्ता हो उन्हीं में शुद्ध समझना सर्वत्र नहीं=इसी आशयपराशरकी स्मृति का यह वचन है—यथा=सद्यःस्पृश्योगर्भदासो भक्तदासस्त्र्यहाच्छुचिः--तथा--चिकित्सकोयत्कुरुतेतदन्येननशक्यतेतस्माच्चिकित्सकःस्पर्शेशुद्धोभवतिनित्यशः=अर्थात् गर्भदास गृहजात नामक जो घरकी दासीके उदरसे उत्पन्नहो· तिसको किसी कालमें जब सूतक लगाहो तौ वह शीघ्रही छूनेयोग्यहै क्योंकि वह भी घरके मनुष्योंके अनुरूप है उसके छूने बिना बहुतेरे कामोंकी हानिहोगी.परन्तु भक्तदास जोअन्नमात्रपाने के स्वीकारसे दासहोताहै वह तीनदिनमें शुद्धहोय (यहाँसद्यःशौचकेप्रसंगमें तीनदिन का कोई सिद्धांत विशेष नहीं पायाजाता है या यह श्लोकही असंगत हो विवेकी पुरुष आपही समझें) तथा--यह दूसरा वचन पूर्वोक्त दृष्टांत से प्रमाणिकहै कि वैद्य जिस चिकित्सा रूपी कामको करता है वह और किसीसे नहींकिया जासक्ता तिससे वैद्य अपने कामके स्थलपर छूनेमें हमेशा शुद्ध माना जाता है ॥ २७ ॥

(अन्येपिसद्यःशौचाःपुरुषविशेषाः कर्म्मस्थलानिचसद्यःशुचीनि)

ऋत्विजांदीक्षितानांचयज्ञियंकर्मकुर्वताम् । सत्रिव्रतिब्रह्मचारिदातृब्रह्मविदांतथा२८

दानेविवाहेयज्ञेचसंग्रामेदेशविप्लवे । आपद्यपिहिकष्टायांसद्यःशौचंविधीयते २९

अक्षरार्थः—यज्ञीय कर्म्म करतेहुये ऋत्विजों तथा दीक्षितों को और सत्री·व्रती· ब्रह्मचारी·दाता·ब्रह्मवेत्ता· २८इनकोभी सद्यःशौच कहा जाताहै और दान में·विवाह में·यज्ञमें·संग्राममें·देशविप्लवहोनेमें·कष्टात्मिकआपत्तिमेंभीसद्यःशौचहोताहै२८।२९

अभिप्रायः—ऋत्विज वे कि जो किसी यज्ञमें वरण किये गये हों·दीक्षित वे कि जो यज्ञ आदि किसी प्रकार की दीक्षाके संस्कारसे संयुक्त होगये हों·और भी (यज्ञियंकर्म्मकुर्वतां) से कोई पुरुष यज्ञ संबन्धी कार्य में ऐसे लगे हों कि जिनके विना वह काम किसी और से होना संभव न हो तिनको भी समझलेना·सत्री जो सत्र नाम यज्ञमें लगाहो अर्थात् निरंतर प्रयोग की रीतिसे अन्नदान करने में प्रवृत्तहो चाहे निज अपनी ओरसे या किसी दानकर्त्ता स्वामी ने नियुक्त कियाहो तौभी उनकोसत्री समझना जैसा भण्डारा करनेवाला स्वामी और उसी भण्डारे का प्रबन्धकर्ता· व्रती उनको समझना जो कृच्छ्रचान्द्रायण आदि व्रतों में प्रवृत्तहों या स्नातक व्रत वालों के निमित्तजोप्रायश्चित्त होतेहैं जिनमेंसतोगों सेनेकी चातुर्मास्य आदि अनेकमहाव्रतों

सूतकउत्पन्न होनेसे पहिले प्रारम्भ होचुके जिनके बीचमें सूतक होजाय तो उनमें भी सद्यःशौच माना जायगा—और भी इन वचनों में यज्ञ शब्दके उपलक्षणासे किसी देवताकी प्रतिष्ठा या बागीचे की प्रतिष्ठा या कोई बडा उत्सव उद्यापनआदि बड़ेबड़े सब काम समुझिलेने जो पहिलेसेआरंभ होचुके हों सो सूतक आपरने से रुकि नहीं सकते किंतु सूतकमें नवीन आरंभ नहीं कियाजाता यह तात्पर्य ठीक है=इनका भी नियम अगिले वचनसे मिलताहै=तथाह विष्णुः=नदेवप्रतिष्ठोत्सर्गविवाहेषु नदेशविभ्रमे नापद्यपिचकष्टायामाशौचं=अर्थात–विष्णु ऋषि कहिते हैं कि न तो देव प्रतिष्ठा में सूतक लगता है न उत्सर्ग व्रतोद्यापन आदि में न विवाह में न देश की भगेहरि होनेमें न कष्टरूपी आपत्ति में सूतक है॥ योगीश्वर ने मूलश्लोक में संग्राम के समय भी सद्यःशौच होना कहा उसके अनेक तात्पर्य हैं तिनमें एक यह भी है कि जैसा आश्वलायन आदि ऋषियों ने युद्धको सजिकर सेना चलती होनेसमय प्रास्थानिक शांतिरूपी होम जप यज्ञ करने कहेहैं तिनका भी करना सूतक आपरने से रुकता नहीं इसी प्रकार संग्राम के और भी कोई काम नहीं रुकते और यह तात्पर्य तो प्रत्यक्ष है कि युद्ध करते समय जो किसीको सूतक आपरै तब उसके हेतुमें आवश्यक युद्ध रोका नहीं जाता इसीलिये सद्यः शौच होजाना कहागया॥ मूलश्लोक में देशविप्लवके समय भी सूतक नहीं लगता कहा था·देशविप्लव शब्द का नाम है जो अपने राजमें उठिखडाहो या दूसरा राजा चढि आनेसे लूटिमार होरही हो और जो विस्फोटक महामारी आदि देशमें अत्यंत भयानक रूपमें फैले हों तो भी देशविप्लव कहाजाता है इनकी शांतिके उपाय करने योग्य कामोंको सूतक नहींलगता है तिससे ऐसे कामों में सूतकीलोग भी प्रवृत्त होने कहे हैं इसी लिये सद्यःशौच कहाते हैं॥ देशविप्लव के विना भी तीर्थ आदि खिले स्थलों पर मौजूद होनेवालेको सूतक नहीं सताता है यह अगिले वचनमें देखो = तदाह पैठीनसिः = विवाहदुर्गयज्ञेषुयात्रायांतीर्थकर्मणि नतत्रसूतकंतद्वत्कर्म यज्ञादिकारयेत् = अर्थात—विवाह के स्थलपर जो किसी बराती ने अपने को सूतक लगा सुनि पाया हो यद्वा उसी बरात का बराती कोई मरजाय या दोनों सम्बन्धियों में से किसीके घर तात्कालिक मौत होजाय तो भी फेरे परने नहीं रुकि सकते हैं न किसी को उस मौकेपर उस भांति का सूतक है कि जैसा कोई दुर्गमें होताहो·एवं दुर्गस्थान राजभवनमें जैकोई चौकीदार कार्यकर्त्ता आदि आवश्यक राजकार्यों में लगेहों तिनको सूतक आपरने से भी उस जगेपर कि जब तक वह जरूरी कार्य पूराहोय नहीं लागिसकता है·एवं यज्ञ होतेहुए

अर्वाक्संचयनादस्थ्नांत्र्यहमेकाहमेववा = अर्थात्—ब्राह्मण कुसूल धान्यक हो या कुंभीधान्यक हो या त्र्यहैहिक तीनदिनके निर्वाह योग्य अन्नवाला हो या अश्वस्तनिक जो उसी दिन कमाकर खालेता हो दूसरे दिनके योग्य संचय न करसके (ऐसेचारविध गृहस्थी ब्राह्मण के अभिप्रायसे ही उन्हीं मनुने अगिला नियमकहा है कि) सपिंडों में मरण का सूतक दश दिन होताहै या अस्थि संचय कर्म से पहिले जितनेदिन होतेहों तभी तक सूतक या तीनदिन सूतक याएकदिन सूतक–इन्हीं चार प्रकारों को अनन्तरोक्त चारों गृहस्थों के निमित्तयथाक्रमसे समुझिलेना किंतु ये संकोच वाले छोटे आशौच कुछ सबके लिये नहींमानेजासकते हैं=औरभी स्मृत्यंतर में समानोदकों के निमित्त भी छोटे नियम के आशौच लिखे देखे हैं कि पक्षिणी राति के बारह प्रहर· एक दिन के आठ पहर· सद्यःशौच जो तत्काल शुद्ध हो जाय–परंतु सोचनाचाहिये कि जब समानोदकता के निमित्तपर लिखे गये तो ये नियम जीविका के संकोच सभ्ये नहीं जोडे जासकते हैं--और वहभी कि जोजो नियम अभी ऊपर लिख चुके सो उन्हीं ब्राह्मणों के निमित्त मेंसमझने कि जिनको प्रतिग्रह लेने बिना या भिक्षा आदि किसी और वृत्तके साधे बिना पीडा नहीं मिट सकती हो किंतु ऐसी पीडा से रहित ब्राह्मणों को भी आशौच का संकोच करना योग्य नहीं है फिर अन्य वर्णों की क्या कथा ॥ ० ॥ तर्कविवादः—अब यहां से आगे एक तर्कना रूपी शंका से विवाद है तिसकी व्यवस्था नैयायिक परिपाटी के अनुसार खंडन मराडन से वर्णन करी जायगी=यथा=ननु · एकाहाद्ब्राह्मणःशुद्धो योऽग्निवेदसमन्वितः त्र्यहात्केवलवेदस्तुविहीनोदशभिर्दिनै रित्यादिस्मृत्यंतरवचनपर्यालोचनयाऽध्ययनज्ञानानुष्ठानयोगिना मेकाहादिनाशुद्धिरित्येवंकस्मान्नेष्यते-उच्यते–दशाहंशावमाशौचंसपिंडेषुविधीयते · इतिसामान्यप्राप्तदशाहबाधपुरस्सर मेवत्र्येकाहाद्ब्राह्मणःशुध्येदितिविधायकंभवति=अर्थात् वादी तर्क उठाता है कि (ननु) क्यों जी अन्य स्मृतियोंमें ऐसे वचन भी उपस्थित हैं कि ब्राह्मण एकही दिन सूतक मता के शुद्ध होजाय जो अग्निहोत्र और वेदाध्ययन से संयुक्त हो· जो केवल वेदही से युक्त हो सो तीन दिन से शुद्ध होय· जो दोनोंमे विहीन हो सो दश दिनों में शुद्ध होय· इत्यादि अनेक वचनों की पर्यालोचना करने से अध्ययन ज्ञान अनुष्ठान के संयोग वालों को एकही दिन आदिसे शुद्धिपाई जातीहै इसलिये ऐसाही नियम क्यों नहीं माना जाता है—उत्तर कहियतहै कि—सपिंडोंमें मरनेका आशौच दशदिन कहा जाताहै · यह एकही नियम जो सामान्य भावसे सबके लिये पाया जाताहै तिसके

ब्राह्मण को अपना पाठ आदि निवृत्त होने के हेतुसे सद्यःशौच होना ये मन्वादिकों के ऐसे वचनों से एक वाक्यता भी होती है कि जो तात्पर्य इन वचनों का वहं उसका होगा तिससे उपरान्त यह वचन भी सत्रहवीं अविक्तोक्ति में आचुकाहै कि दोनों सूतकों में सूतकी कुलका अन्न दश दिन नहीं भोजन करते हैं इसतरह दशादि पर्यंत भोजनादि का निषेध करते हुये यमादिकों के वचनों से अविरोध भी सिद्ध होताहै ॥ इसी कारण से यह सिद्धांत समुझि लेना कि आशौच का संकोच विधानजो कुछ कहा गया कि ऐसे थोडे काल से भी शुद्धि हो सकती है सो वह संकोच किसी विरले स्थलमें विरले पुरुष की अपेक्षा सिद्ध होता है सब लोगोंको सामान्य उसका बर्ताव करना व्यवहारिक नहींहै तिससे इसी तर्क विवाद के विस्तार द्वारा संकोच का निवारण करना दर्शाया गया कि जहाँतक होसके सूतकों के संकोच पर अधिक दृष्टि न देनी चाहिये बल्कि यह वेदस्वाध्याय संबंधी सद्यःशौच विधान जो कहा गया सो बहुत वेदके पाठाभ्यास वालेको जहाँ उसके त्यागने रोकने से क्लेश प्रतीत होताहो तहां समुझना सर्वत्र नहीं क्योंकि और सब सामान्यके लिये सत्रहवीं अविक्तोक्तिमें लिख चुके हुये यमोक्त वचनमें स्वाध्यायका भी रोकना कहागया है (दान प्रतिग्रहो होमः स्वाध्यायश्च निवर्तते) अर्थात सामान्य मर्यादा यहीहै कि होम दान प्रतिग्रह स्वाध्याय इनको सूतकमें न करे [illegible] [illegible] [illegible] गया आगे पहिले पीछे ब्राह्मण आदि वर्णोंको जिनका जितना सूतक लिखागया सो सब उतने दिनोंके अनंतर स्नान करके शुद्ध होते हैं किंतु उसकालका अति कम करने मात्रसे नहीं शुद्ध होतेहैं=यथाह मनुः=विप्रः शुध्यत्यपः स्पृष्ट्वा क्षत्रियो वाहनायुधम् वैश्यः प्रतोदं रश्मीन्वा यष्टिं शूद्रः कृतक्रियः=अर्थात्–दशदिन आदि स्ववर्णोचित अवधि तक यथोक्त क्रिया किये हुआ ब्राह्मण जलस्पर्श करके शुद्ध होताहै(यह जलस्पर्श कहनेसे स्नान या आचमन न समुझना किन्तु कोई क्रिया विशेष होगी जो प्रेत कर्म मीमांसा से मालूम होसक्तीहै) क्षत्रियभी यथाक्रिया कर्मकिये पीछे सवारी औ शस्त्रों का स्पर्श करनेसे शुद्ध जानाजाताहै वैश्यभी कोई क्रिया दिये पीछे [illegible] शूद्रभी सब क्रियायें कियाहुआ पीछेसे रस्सी पैनाचाबुक औ लाठी आदि का स्पर्शरूपी क्रिया विशेष करके शुद्ध समझाजाता है [illegible] लाठीका स्पर्श करके शुद्ध होताहै यहांतक दोनों प्रतीक की अविक्तोक्ति परी हुई॥२०॥२१॥ यहां तक कुलव्यापिनी अशुद्धिके प्रायश्चित्त कहे गये कि जिनसे एक साथ अनेक शुद्ध होतेहैं उसके आगे प्रत्येक पुरुषव्यापिनी शुद्धि कही जायगी कि जो कोई किसीके स्पर्श प्रसंगसे अशुद्ध मनुष्य होगयाहो ॥ २२॥

यदि स्नान किये विना स्पर्श होजाय तौभी आचमन विधि जो ऊपर लिखी सो कर्त्त॰ व्यहोती है तिनके नाम चिह्न अगिले वाक्य से देखो किन्तु उन्हीं के हेतु गर्भित आशयसे (तैःस्पृष्टःउपस्पृशेत) उनसे छुआ हुआ आचमनकरै यह बहु वचन भी परामर्श होता है विरोध नहीं = तदाह पाराशरः = दुःस्वप्नेमैथुनेवांते विरिक्तेक्षु कर्मणि चितियूपश्मशानास्थ्नांस्पर्शनेस्नानमाचरेत = तथाचमनुः=वांतोविरिक्तःस्ना त्वातु घृतप्राशनमाचरेत आचामेदेवभुक्त्वान्नं स्नानंमैथुनिनःस्मृतम्=अर्थात्–खोटा स्वप्न होनेमें या बुरी तरह सोनेमें॰ मैथुन करने में॰ वमन करने में. दस्त लगेहोनेमें॰ वार बनवाने में.चिता के छूनेमें॰ यूपनाम पशुहिंसा के स्थानमें गड़े हुये स्तम्भ को छूनेमें. श्मशान भूमिपर होआनेमें॰हाड़ोंके छूनेमें॰स्नान करै तब शुद्धहोय = ऐसाही मनुने कहाहै कि = वमन किया हुआ पुरुष॰विरेचन जुलाब किया हुआ पुरुष॰ स्नान करिके घी चाटै तब शुद्ध होय॰और अन्न भोजन करिके आचमन कुल्लामात्रही करै तब शुद्ध होय॰परंतु मैथुन वालेको स्नान करना चाहिये यह कहाहै = परंतु यह स्नान उस मैथुन के मायमें समुझना जो स्त्री के ऋतुकाल होने बाद किया गयाहो॰ अन्यथा ऋतुकालके न होने में जो मैथुन किया जाता है तिसकी शुद्धिस्नान किये विना भी होसकती है =तदाह बृहस्पतिः=अनृतौतुयदागच्छेच्छौचंमूत्रपुरीषवत् अर्थात्–ऋतुकाल के अभाव में जो स्त्री से संभोग करै तो मल मूत्र प्रक्षालन करने की रीतिसेही शौच करिके शुद्धमाना जासक्ता है=

भी कि जो इसवचनमें नहीं लिखे पहिलेसें कहिचुके हों तिनको इच्छाविनाही यदि कोई विप्र छुवै तौ स्नान करिके शुद्धहोताहै पर जानि बूझिके छूने में वही च्यवनोक्त विधि करनी चाहिये ॥ इसीप्रकार जो आगे वचन लिखे जायँ तिनमें भी बहुत या थोडीके अनुरूप इच्छा या विना इच्छा की व्यवस्था सानि के सबको तुल्य समझ लेना=तथाचकश्यपः=उदयास्तमयोस्स्कंदयित्वा अक्षिस्पंदनेकर्णाक्रोशनेचित्यारोहणो यूपसंस्पर्शनेसचैलंस्नानंपुनर्मामैत्विंद्रियमितिजपेत् महाव्याहृतिभिःसप्ताज्याहुतीर्जुहुयात्= अर्थात्—उदयहोते या अस्त होतेहुये सूर्यका देखना भी आचारकांड में निषिद्ध किया गयाहै तिनके सन्मुख ऐसे दोनों काल में जो स्कंदन करै अर्थात् मलमूत्र आदि छोड़ै यद्वा आँखितिल मिलावै या कर्णाक्रोशन होने में कि जब किसी सज्जनकी वृथा निंदा आदि कान में सुनी हो या चिता के ऊपर पैर धराहो या यूपका स्पर्श किया हो तो सचैल स्नान करै तथा पुनर्मास इत्यादि ऋचा मंत्रको जपै फिर सन्ध्या प्रयोग में लिखीहुई सात महाव्याहृतियों से घीकी आहुति होमै तब शुद्धहोय=स्मृत्यंतरवचनंचयथा=स्पृष्ट्वादेवलकंचैवसवासाजलमाविशेत् देवार्चनपरोविप्रोवित्तार्थेवत्सरत्रयम् असौदेवलकोनामहव्यकव्येषुगर्हितः=अर्थात्—देवलक ब्राह्मणको भी छूके करवस्त्रों सहित जलमें गोता लगावै तब शुद्ध होय देवलक वह कहाताहै जो धनके लियेदेवताकी पूजा में तत्पर होके तीनवर्ष बितावै सो देवलकनामा ब्राह्मण हव्य और कव्यमें अर्थात् देव पितरोंके कार्यमें लगाना निषिद्ध है=तथाब्रह्मांडपुराणेपि-शैवान्पाशुपतान्स्पृष्ट्वालोकायतिकनास्तिकान् विकर्मस्थान्द्विजाञ्शूद्रान्सवासाजलमाविशेत्—तथा—अस्त्यर्थाह्याहुतिःसाऽस्याच्छूद्रसंपर्कदूषिता इति लिंगाच्छूद्रस्पर्शनेनिषेधः=अर्थात्—शैव जो शिवालयका चढावा आदि खानेवाले योगीआदि या पाशुपत जो ना दिया रीछ बंदर आदिसे जीविका करैं या यतिक नास्तिक लोग जो बनेहुये यतीकेनाम से प्रसिद्धपर यथार्थ धर्म से नास्तिक हों या विकर्मस्थ द्विजाती जो त्रैवर्णिक जाति होने पर भी कुकर्मों में रतहों या मलीनशूद्र इनमें से किसी को भी छुइकर वस्त्रोंसहित जलमें गोतालगावै तब शुद्धहोय—तथा—यह वचन जो लिख चुकेहैं कि शूद्र के संसर्ग से स्पर्शकिये द्रव्योंकी आहुति भी अस्वार्थ होजाती है सो इस हेतुसे भी शूद्रको छूनेका निषेधहै=तथांगिरा=यस्तुछायांश्वपाकस्यब्राह्मणोधिरोहति तत्रस्नानंप्रकुर्वीतघृतंप्राश्यविशुध्यति=अर्थात्—जो कोई ब्राह्मण चांडाल की छायाको आरोहण करै सो खूब अच्छी विधिसे स्नानकरै और घी खाइके विशुद्ध होताहै=तथाव्यासपादः=चांडालंपतितंचैवदूरतःपरिवर्जयेत्गोवालव्यजनान्मात्रं

विना धुला लेना होताहै इसमें भी कुछ विचार नहीं एवं बिल्लीको साधारण में छुइ कर स्नान करना आवश्यक नहींहै क्योंकि प्रायश इससे बचाना नहीं बनिआता है तिससे भोजन या अनुष्ठान के समय जो छुइजाय तौ स्नान करना उचितहै=कुत्ता के स्पर्श का भी यह नियम समुझना कि जो नाभिसे ऊपरली देहमें छुइजाय तौ स्नान करै किंतु नीचेकी देह में छुइजाने से उसी अंग का धो डारना मात्र उचित है क्योंकि उन्हीं अंगिरा का दूसरा वचन इसपर मौजूद है = यथा = नाभेरूर्ध्वंकरौमुक्त्वाशुना यद्युपहन्यते तत्रस्नानमधस्ताच्चेत्प्रक्षाल्याचम्यशुद्ध्यति = अर्थात्--तोंदी मे ऊपर जो हाथोंकेउपराल्लू कोई अंग कुत्तासे बिगाड़ा जाय तहां स्नान करना चाहिये जो नीचे का अंग या केवल हाथहीको बिगाडा हो तौ उतना धोकर आचमन करनेसे शुद्धहो जाताहै=एवं पक्षियोंके स्पर्शमध्ये जातूकर्ण्यने विशेषता कहीहै=यथा= ऊर्ध्वंनाभि करौमुक्त्वायदंगंसंस्पृशेत्खगः स्नानंतत्रप्रकुर्वीतशेषंप्रक्षाल्यशुद्ध्यति=अर्थात्--हाथोंको छोडिके यदि कोई अङ्ग तोंदीसे ऊपर में काक आदि पक्षीकास्पर्शहोजाय तो स्नान करैबाकी दोनौं हाथ या नीचेके अंगमें स्पर्शहुआहो तौ धोनेमात्रसे शुद्धहोजाताहै-एवं अपवित्र वस्तुओंके स्पर्श मध्ये विष्णुने विशेषता कहीहै = यथा = नाभेरन्या त्प्रवाहुयुचकायिकैर्मलैः सुराभिर्मद्यैर्वोपहतो मृत्तोयैस्तदंगंप्रक्षाल्याचांतःशुद्ध्येत अन्य त्रोपहतोमृत्तोयैस्तदंगंप्रक्षाल्यस्नायात तैरिंद्रियेषूपहतस्तूपोष्यस्नात्वापंचगव्येन दश नच्छदोपहतश्चेति=अर्थात्--कायासे उत्पन्नयूकमूत्रआदि अनेकका यिकमल होतेहैं तिनसे जो कोई नाभिके नीचे अंगोंमें या कुहुनीके नीचे पहुंचा आदिमे बिगडिजाय या सुरासे या मद्योंसे उन्हीं अंगोंमें बिगडै तो वही अंग माटी और जलमे धोने तथा आचमन करने से शुद्ध होताहै जो उन अंगोंके सिवाय किसी और अंगमें पूर्वोक्तमलों से बिगड़ै तौ माटी और जल से मांजि धोकर पीछे स्नान भी करै. कदाचित नाक कान आदि उत्तम इंद्रियों में उन्हीं मलोंमे बिगड़ै तौ वह स्नान और निराहार उपास करिके शुद्ध होता है. कदाचित दांतोंके स्थानपर उन्हीं मलोंमे बिगड़ाहो तो पूर्वोक्त मंजन स्नान व्रत करने के सिवाय पंचगव्य से भी शुद्धि करै--

पुरुष होते हैं तिनको अन्य स्मृतियों से समझना जहाँ प्रयोजन उनका संभव है—तो इस भाँति स्नान करने योग्य पुरुषों की बहुतायत के आशय से योगीश्वर के मूल श्लोक में (तैःस्पृष्टः उपस्पृशेत) यह बहु वचन का निर्देश दिया गयाथा विशेष उसमें नहीं है ॥ ० ॥ श्रीमद्विज्ञानेश्वर व्यवस्था देतेहैं कि मूल श्लोक में (उदक्यातथा और अशुचियों से छुआहुआ स्नानकरै परंतु छुयेहुयों से छुआ हुआ पुरुष आचमन मात्र करै) यह थोड़ा प्रायश्चित्त दर्शाया था सो वह थोड़ा इस हेतु में समझना कि जहाँ चंडाल आदि कोई अशुचि प्राणी जडबुद्धि वेहोश होकर धोखा से लपेट में आकर भिड़ाहो तिसके भिड़े हुयोंसे जो कोई भिड़जाय तिसको आचमन मात्र करना ठीक है स्नान की अपेक्षा नहीं—परंतु—जहाँ होशियार चंडाल आदि लपेट में आया हो तिसके छुयेहुयों से यदि कोई भिड़जाय तहाँ इसकोभी स्नानही करनाचाहिये किंतु आचमन मात्र से शुद्धहोना ठीक नहीं है यह सिद्धांत अगिले वचन में उत्पन्न होता है सो देखो = यथाह मनुः=दिवाकीर्तिमुदक्यांचपतितंसूतिकांतथा शवंतत्स्पृष्टिनंचैवस्पृष्ट्वास्नानेनशुद्ध्यति (अत्रतत्स्पृष्टिनंतत्तेषांस्पृष्टानांस्पृष्टिर्नमितिभाव नगत्र मात्रस्पृष्टिनं) अर्थात—नाई॰रजस्वला॰ पतित॰ सूतिका॰ मुर्दा॰और इनके छूने वाले को भी छुइकर स्नान से ही शुद्ध होताहै = परंतु = छूने वालेके छुये हुये को तीसरा कोई छुवे तिसको फिर स्नानकी अपेक्षा नहीं किंतु आचमन से ही शुद्ध होता है यथाह संवर्तः = तसैवतुस्पृशेद्यन्तुस्नानंतस्यविधीयते ऊर्ध्वमाचमनंप्रोक्तं द्रव्याणां प्रोक्षणंतथा = अर्थात—जिसनेचंडाल आदिमेंछुयेहुये को छुआहो तिसकोभी स्नान कराया जाता है पर उससे उपरान्त कोई तीसरा जो दूसरे को छुइ जाय तिसको आचमन हाथ पैरोंका प्रक्षालन और वस्त्रादि द्रव्यों को छींटा देना कहा है॥ सोभी यह तीसरेको आचमन विधि उस दशामें समझना जहाँ तीसरा ज्ञान बिनाधोखामें भिड़गयाहो अन्यथा जानिबूझिके भिड़ने वाले तीसरेको भी स्नान करना होगा तदाहगौतम॰ पतितचंडालसूतिकोदक्याशवस्पृष्टिनस्पृष्ट्युपस्पर्शनेसचैलमुदकोपस्पर्शनाच्छुद्ध्येत

जो गीत गाया कि दश दिन में शुद्ध होय या तीन वा एकही से इत्यादि सो यह कैसा भ्रमहै कि वृथा इतने दिनतक अशुद्ध बनिके बैठें--इसी संदेहके निवारणार्थ कालरूपी शुद्धिपर अग्नि आदिको दृष्टांत रूपसे दर्शाते हैं-वरन दूसरायहभी तात्पर्य है कि आचार मर्यादा परिपाटी के द्रव्य शुद्धि प्रकरण में शुद्धि के जो कुछ हेतु कहि चुके हैं या अब यहाँ से आगे जितने हेतु कहे जायँगे कि इनसेभी अमुकामुक शुद्धि होतीहै तिन सब अगिले पिछिलों को इकट्ठे करके इसी श्लोक में अनुक्रम किये देतेहैं--और कालरूपी हेतु में जो संदेह अभी कहिचुके तिसकाएकप्रमाण तो आचार काण्ड में भी १८७ मूलश्लोक पर देखौ कि काल बीतने से इस तरह पृथ्वी शुद्ध हो जाती है उसी प्रकार यहाँभी सूतक आदिमें नियमित काल बितानेसे शरीर शुद्धहो हैं--उसी काल की शंका मध्ये यहाँ यह दृष्टांतहै कि जैसे अग्नि आदि दश कारण निज निज विषय के स्थलों पर यथा योग्य शुद्धिकरसक्ते हैं तैसे काल भी दश दिन आदि जहाँ जितना उचितहै उतना समय बितानेसेही शरीरोंको शुद्ध करदेताहै यह शास्त्र की आज्ञाहै तिससे काल भी शुद्धि करनेको एक परम हेतुहै=तहाँ=अग्नि जो अशुद्ध धातु पात्रों को शुद्ध करता या पकेहुये मृत्पात्रों को कुम्हार पकाके अशुद्धि मेटि देताहै इत्यादि-कर्म भी शुद्धि का हेतु नामनिमित्त है जैसा आगे कहेंगे या जैसे अश्वमेध के अवभृथ शेषांग कर्म का स्नान आदि अनेक भांति-मट्टी भी शुद्धि का कारणहै माजने लीपने आदि प्रकारों में-वायुभी शुद्धिका हेतुहै (मारुतेनैवशुद्ध्यति यह लिखचुके हैं कि अनेक चीजें केवल हवामेंही शुद्ध होतीहैं-मन भी मनकी शुद्धि साधन करनेका हेतुहै क्योंकि जब चाहै तो शुद्धि करीजाय यथा मनमेंही शुद्ध नाम चाल आदि गुरुओंसे उपदेशलेकर सीखीजाती है

कास्वरूप समुझिकैतन्मयहोजानायहीतपहैपरन्तु जिसकोइतनीशक्तिनहोतिसकेलिये तप शब्दसे अपने वर्णका धर्म अपने कुलका मुख्यधर्म अपने आश्रम का कर्म समुझना उसको यही तपहै और विद्या यहां कौनसी कि वेदांत मे तत्त्वमसि वाक्य मे त्वंपदार्थके निरूपण करनेवाले व्याख्यानोंसे जो ज्ञान उत्पन्न होताहै तिसको समुझना इन दोनोंके उत्पन्न होनेसे भूतात्मा की अशुद्धि मिटि जाती है॰ज्ञानंबुद्धे विशोधनं अर्थात् बुद्धिका शोधने वाला ज्ञानहै किन्तु बुद्धि जब अनेक यद्वा एकही किसी संशय के भ्रमसे विगड़ि के अशुद्ध होजाती है तिसको उत्तम प्रमाण देकर समुझने समुझाने का ज्ञान प्राप्त होनेसे भ्रम दूर होताहै तभी उसको शुद्ध हुई कहिते हैं॰क्षेत्रज्ञस्य ईश्वर ज्ञानात् शुद्धिः अर्थात् क्षेत्रज्ञ जो शरीर के भीतर बैठाहुआ आत्माहै तिसकी शुद्धि ईश्वर का स्वरूप ज्ञान होनेसे होतीहै किंतु क्षेत्र नामहै खेतका तो यह शरीर भी एक प्रकार का खेतहै जैसे धरती पर खेतोंको किसान खोदने जोतने आदि प्रकारोंसे बोने योग्य शुद्ध करताहै तैसे पूर्वोक्त तपोविद्याके प्रभावसे शरीररूपी खेत भी शुद्ध हुआ तब कहाजाता है कि जब त्वंपदार्थ रूपी ज्ञान संयुक्त होजाय और तत्पदार्थका ज्ञान भी तत्त्वमसि आदि वाक्योंके बोधसे उत्पन्न होता इसी को ईश्वर का जानना भी कहिते हैं इसीसे मुक्ति लक्षणरूपी परम अतिशय शुद्धि क्षेत्रज्ञ की होती है ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

निषिद्ध हो वह भी आपत्काल में करसक्ता है॰शिल्प कर्म जिसको मनेकिये सोभी आपत्काल में करसक्ता है॰भृति प्रेष्यकर्म है कि चिट्ठी पत्री या संदेशा लेकरजाना आना आदि॰विद्या यह ब्राह्मणको पढ़ाई लेकर पढ़ानी निषिद्धहै पर आपत्कालमें पढ़ाई लेकर पढ़ावै॰कुसीद ब्याज दह्वा खाना निषिद्धहै पर आपत्कालमेंकरे॰शकट गाडी छकडा यह भाडेको चलाना आदि क्षत्री या वैश्यको भी आपत्काल में कर्तव्य है॰ गिरि पहाड अर्थात उनमें से लकड़ी आदि चीजें लाकर वेचना आपत्कालमें. सेवा नौकरी हाजिरबाशी आदिके द्वारा समर्थोंका सेवन करना यह भी आपत्काल में॰अनूप नामसे वह धरती कहाती है जहाँ वहुत सा जल वृक्ष लकडी कराटा आदि प्राप्त होसके तहाँ जा वसना॰ नृप अर्थात राजा की सेवा यद्वा याचना करनी॰ भैक्ष्य भिक्षा वृत्तिकरनी स्नातक हो तौभी आपत्कालमें निषेध नहींहै क्योंकि आपत्काल में ये सभी जीवन के हेतुहैं इनके कियेविना निर्वाह नहीं होता॥ ४२॥

४१ अधिकोक्तिः=मनुरपि=विद्याशिल्पंभृतिःसेवा गोरक्षाविपणिःकृषिः गिरिर्भैक्ष्यंकुसीदंचदशजीवनहेतवः=अर्थात—विद्या॰शिल्प॰भृति॰सेवा॰गोरक्षा॰विपणि॰दुकान खेती॰पहाड॰भिक्षा॰कुसीद सूदब्याज॰ ये दश हेतु जीवन के मनुने भी कहे हैं॥ ०॥ मनुने ब्राह्मण को जहांतक होसके अपनी वृत्ति निंद्य भी करणीय आपत्काल में भी कही है=यथा=वरंस्वधर्मोविगुणोनपारक्यःस्वनुष्ठितः परधर्मेणजीवन्हिसद्यःपतति जातितः=अर्थात—अपनाधर्म विगुणहो तो भी अच्छा पराया धर्म अच्छा हो तौभी ब्राह्मणको नहीं चाहिये क्योंकि पराये धर्मका आश्रयलेकर ब्राह्मणशीघ्रही जाति से पतित होजाता किन्तु ब्राह्मणत्व के चिह्न मिट जाते॥ ४१॥ ४२॥

(अनाहारपीड़ितधर्मः)

या शूद्रका न मिलै तौ वैश्यका या ऐसे किसी क्षत्रीका चुरावै जो धर्म कर्म से हीन हो पंच इस चुराने को सबसे जाहर भी करदेवें कि ऐसी लाचार दशामें यहकरना पड़ा यद्यपि राज का मालिक जो इसको पकड़ि के राज में लेजाय तौ वहां भी सब वृत्तान्त कहिसुनावे तब राजा इसके चाल चलन कुल शील आदिकी तहकीकात लेकर क्षमाकिये पीछे उसके लिये कोई भी जीविका वृत्ति कल्पित करावै जो उस की दशा के अनुरूप समझी जाय ॥ ४३ ॥ ४४ ॥

४३ अधिकोक्तिः=मनुः=तथैवसप्तमेभक्ते भक्तानिषडनश्नता अश्वस्तनविधानेन हर्तव्यंहीनकर्मणः=अर्थात्—सांझ सवेरे दो बार भोजन के मार्गसे छै बार किन्तु पूरे तीनदिन जिसने भोजन न पाया हो तौ वह सातवीं बारके भोजन अर्थ उतनाही नाज हीन कर्म धर्मका चुरावै जो एकदिन भोजन करलेने के सिवाय दूसरे दिनको न बचे (तिस ऐसे सच्चे चोरकी जीविका राजा कल्पित करादेवे यह योगीश्वर के वचन में आचुकाहै) राजा भी जीविका कल्पितकरानेविना दोषी होताहै तदाहमनुः यस्यरा ज्ञस्तुविषयेश्रोत्रियःसीदतिक्षुधा तस्यसीदतिक्षिप्रं तदुर्भिक्षव्याधिपीडितम् = अर्थात् जिस राजाके राजमें ज्ञानवान पण्डित भूख से पीड़ित होता है तिसका वह राज्य भी दुर्भिक्ष और महामारी आदि बलायोंसे पीड़ित होता है ॥ ४३ ॥ ४४ ॥

——॰——

अथ वानप्रस्थाश्रमधर्म कथने सप्तमःपरिच्छेदः ७

अमुक मनुष्य किस ठिकाने में गिनती है ब्रह्मचारियों में या गृहस्थियों के ठिकाने में यह तात्पर्य है) सो इन दोनों आश्रमके सब धर्म्म कर्म्म आचार मर्य्यादा परिपाटी में लिख चुकेहैं अब यहां उनका तीसरा आश्रम वानप्रस्थ दर्शाते हैं कि (वनेप्रकर्षेण वा नियमेनच तिष्ठति चरतीति वनप्रस्थः वनप्रस्थएव वानप्रस्थः संज्ञायांदैर्घ्यं) बन में प्रस्थित रहे सो वनप्रस्थ है उसी को वानप्रस्थ कहते हैं सो यह वानप्रस्थ गृहस्थीने से होताहै-कैसे होता और कैसे वनमेंरहताहै तिसके लक्षण ऊपर अक्षरार्थसे कहिचुके परन्तु अच्छी भांति समझाने के निमित्त से अभिप्राय अब लिखते हैं कि--गृहस्थ का आश्रम अच्छा भोगि सम्हारि के पुत्रोंको जीविका नियत करदेने बाद उन को समर्थहुआ जानिकर अपनी पत्नी उनको सौंपिदे कि माता को आराम तथा रक्षामें राखना में वनवास को जाताहूं--यद्वा भार्य्या आपहीअपनी इच्छा से पति की सेवा करनीचाहिके साथजानाचाहै तो उसकोभी साथलेकर ब्रह्मचारीहोकेरहै किन्तु पत्नी से रतिविलास न करे अपना वीर्य्य खींचिके माथेपर चढालेवे--और शाग्नि बनको जाय अर्थात् वैतान अग्नि जो वेदोक्त अग्निहोत्र की स्थापन घरमें होरही थी तिसको भी साथलिये जावे तथा सोपासनोग्रहेत्र किन्तु उपासन अग्नि भी गृह्याग्नि के नाम से दूसरी अग्नि होतीहै तिसको भी साथ लिये जावे-फिर बन में रहकर आगिले कहा-लिस ४६ श्लोकवाले नियमोंको साधै वह वानप्रस्थ कहाता है॥ ४५॥

४५अधिकोक्तिः--यहां यहसंदेह न करना कि प्रायश्चित्तोंके प्रसंगमें आश्रम के धर्म क्यों कहिनेलगे--क्योंकि यह वानप्रस्थका धर्म्म जो है सोभी आत्माकीशुद्धि करदेनेवाला एक बहुत बड़ा प्रायश्चित्त है इसके आगे संन्यास वर्णन करेंगे सोभी यद्यपि चौथाआश्रमहै परन्तु आत्म शुद्धिके प्रभावसेवहभी एकप्रकार प्रायश्चित्त सम-झना इसीप्रकार जहांजहां जो कुछइसकाण्डमें वर्णनहो सोसर्वथा प्रायश्चित्तहीका रूपसमझनाकि इसका पाठमात्र भी श्रवण करनेसे मनुष्यों के जन्मांतर पापशांत होजाते हैं फिर साक्षात् साधना करने वालोंको का कथा ॥०॥ वेताको अपनीभार्य्या सौंपिकेजाय इसकथनसे यह तात्पर्य भी दर्शायाहै कि वनवासधर्मकोलेनाचाहिये जिसने गृहस्थी धर्म के द्वारा देहपैदा करके और पालि पोषि समर्थ करदियेहों अन्य-था छोटे बालबच्चों का पालन करें--सोभी यह नियम उसके लिये सम्भव है कि जिसने क्रमसे सब चारों आश्रम का पद रक्खा चाहा हो--अन्यथा (अविप्लुतब्रह्मचर्य्योयमिच्छेत्तमावसेत् दूसरा नियम यह भी है कि जिस ब्रह्मचारीने विवाह न करके अपनादीर्घ ब्रह्मचर्य्य ने शोभाहो सो निर्लिप्त आश्रमको इच्छाकरे जिसमेंचाहे बसो

गृहस्थी बनेविना भी निज इच्छासे वनवास लेकर वानप्रस्थबने या संन्यास लेकर संन्यासी बने॥ ० ॥ गृहस्थी को वनवास लेनाकहा सो उस दशामें संमूचित है कि जब देह उसकी बुढ़ापे से जर्जर होजाय यद्वा पुत्रों के पुत्र भी उत्पन्न होजायं तब देह जर्जर न होनेपर भी जाना चाहिये अन्यथा नहीं=यथाह मनुः= गृहस्थस्तुयदापश्येद्वलीपलितमात्मनः अपत्यस्यैववाऽपत्यंतदाररायंसमाश्रयेत=अर्थात—गृहस्थ पुरुष जब अपनी देहकी खालमें वल पड़िजाये ढीली और पकीहुई देखे या संतानके संतानहुई देखे तभी वनवास करे तौ उसके वनवास रूपी तपके प्रभाव से संतान की सदा जय होती वनीरहिती है॥ ० ॥ पुत्रोंको पत्नी सौंपिके जानाकहा तिसका यह इत्नप्रायं नहीं है कि जिसकी पत्नी मरगई हो सो वनको नहीं जासक्ता क्योंकि पत्नी जीती होती तौ सौंपिके वनवासलेते· तिससे वह सौंपिजाना नियम केवल उसका है कि जिस की पत्नीजीवती हो अन्यथा जिसकी मरचुकी हो तिसको भी वनवास लेना आपस्तंब आदि अनेक मुनीश्वरों ने कहा है—जब कि वृद्ध अवस्था में स्त्री मरजाने पर भी वनवास लेना सिद्ध हुआ—और—आचार मर्यादा परिपाटी के ८९ प्रमाणमें यह कहाथा (दाहयित्वाऽग्निहोत्रेणस्त्रियंवृत्तवतींपतिः आहरेद्विधिवद्दारानग्नींश्चैवाविलंबयन) कि जिसकी भार्या मरजाय तो वह पति अपने अग्निहोत्र की अग्नि से सुलक्षणी स्त्री को जलाय कर देरी न करके शीघ्रता से विधि पूर्वक अपना विवाह करे और अग्नियों का (पुनराधान) फेर स्थापन करे जो भार्या के न रहने से मिट गईथीं—सो इस वचन से यह विरोध न समझ लेना कि आचार धर्म में विवाह करना आवश्यक लिख चुकेहै अब क्योंकर भार्या मरजाने बाद विवाह किये विना वनको जासक्ता है—

पंचम मास के उपरांत श्रावणीक अग्नि के आधान में उनका भी अधिकार देख पड़ता है इस बातका प्रमाण अगिला वचन वशिष्ठ का देखो=यथाह वशिष्ठः=वानप्रस्थोजटिलश्चीराजिनवासा नफालकृष्टमधितिष्ठेत अकृष्टमूलफलंसंचिन्वीतऊर्ध्वरेताः क्षमाशयोदद्यादेवनप्रतिगृह्णीयात ऊर्ध्वंपंचभ्योमासेभ्यः श्रावणिकेनाग्निनाधायाऽऽहिताग्निर्वृक्षमूलिकोदद्यादेवपितृमनुष्येभ्यः सगच्छेत्स्वर्गमानंत्यं=अर्थात्–वशिष्ट ने यह कहा कि॰ वानप्रस्थ बनकर जटा रखाये चीरवास कोपीन बांधे या वनके वक्कल भोजपत्रआदि और अजिन मृगछाला बिस्तर कियेहुये रहे पर हलकेजुते खेत में न टिके बिन बोये जोते जो वन में आपसे उत्पन्न होकर गिरें ऐसे कंद मूल फलों को अच्छी शुचिता से बीन लेवै वीर्य अपना खींचके माथे में चढाये हुये (ऊर्ध्वरेताः) ब्रह्मचर्यसे धरतीपर सोया करे और किसी से कुछ प्रतिग्रह आदि न लेवै किंतु जहांतक होसके देताहीरहै॰ उपरांत पाँच महीनाके श्रावणीक नाम वैदिक मार्ग से (किंतु लौकिक से नहीं यह तात्पर्य है) वैदिक विधान से अग्नि का आधान करके आहिताग्नि बनाहुआ वृक्षकी जड़के पास निवास किये पितरों तथा मनुष्यों को भी देताही रहै सो वह ऐसा वानप्रस्थ आनंत्य स्वर्ग को जावै अर्थात् ऐसे स्वर्ग में जाता है कि जहां उसकी तपस्या का अंत नहीं होसकता इन सब नियमों को ग्रंथीश्वर अगिले ४६ के श्लोक से विशेषता से दर्शावेंगे ॥ ४५ ॥

(वानप्रस्थेगुणविधिः)

रहे और च शब्द के ध्वन्यर्थ से भिक्षादान भी उसीअन्नसे करतारहै(अधिकोक्तिमेंमनु केवचनदेखो) और अपि शब्द के ध्वन्यर्थ से भूतों को भी पंचयज्ञ विधान से तृप्त करता रहे और भृत्य जो अपने शिष्यादिकहों तिनको भी उसी अन्नसे अर्थात् जो कुछ करै सो सब वन के उत्पन्न नीवार आदि मुन्यन्नों से करै किन्तु खेत के उत्पन्नों से नहीं—और विशेषता अधिकोक्तिमें॥ ४६ ॥

४६अधिकोक्तिः—मूलश्लोक में दूसरे चकार के ध्वन्यर्थ से उनको भी सत्कार करै जो कोई भूले भटके आश्रम के पास आपरैं=तथाचमनुः=यद्भक्ष्यःस्यात्ततोदद्याद्बलिं भिक्षांचशक्तितः अब्मूलफलभिक्षाभिरर्चयेदाश्रमागतान्=अर्थात् —जो कुछ अपना भोजन होय तिसमें भूतबलि और भिक्षा भी शक्ति के अनुरूप किन्तु जल मूल फल भिक्षा इनसे सत्कारकरै उनका कि जो आश्रमपर आगयेहों=इसप्रकारपंचमहायज्ञों को निपटाइके उसका शेषअन्न आपभी प्रसादभोगै यहतात्पर्य अग्रोक्त मनुके वचनसे स्पष्टहै=यथा=देवताभ्यश्चतद्धुत्वावन्यंमेध्यतरंहविः शेषमात्मनियुञ्जीतलवणंचस्वयंकृतम्=अर्थात्—वनका उत्पन्न जो अत्यन्तपवित्र हव्यहो सोदेवताओंके लिये होमकरे (चकार से पितरों को भी) फिर बचाहुआ अपने उदर में युक्त करै और नमक जो ऊखर धरतीसे खारी आदि किसीतरहका उत्पन्नहो जिसको आप निकालके आपही शुद्धकिया हो सोई वर्त्तावमें लावे क्योंकि यज्ञोंके लिये वन का मुन्यन्न कहा तथा नमक भी सूचित किया तिससे सभी वस्तु जो ग्राम्य हो किन्तु नगर आदि वस्तीमें उत्पन्न हो तिसका आहार करना निषेध ठहरा—तदुक्तमाहमनुः त्यजेद्ग्राम्यमाहारं सर्वंचैवपरिच्छदम्=अर्थात्—वस्ती में उत्पन्न आहार को वानप्रस्थ त्याग करे और गृहस्थोंवाला सब सामान भी छोड़िके बनमें बसै॥

(वानप्रस्थेविशेषनियमाः)

दांतस्त्रिषवणस्नायीनिवृत्तश्चप्रतिग्रहात्। स्वाध्यायवान्दानशीलःसर्वसत्वहितेरतः४८॥
दंतोलूखलिकःकालपक्वाशीवाश्मकुट्टकः। श्रौतंस्मार्तंफलस्नेहैःकर्मकुर्यात्तथाक्रियाः ४९॥

अर्थः—दांतहो किंतु दर्प से रहित स्वभाव हो·त्रिषवणस्नायी तीनोंकालमें स्नान किया करै· प्रतिग्रह लेनेसे मुँह फेरे रहै चाहैं जैसा लोभ लालच कोई आकर दिखावै तौभी·स्वाध्यायवान किंतु अपने वेदके पाठमें अभ्यास आवृत्तियों से करतारहै. दानशीलहोय किन्तुफल मूल भिक्षाआदि देतारहै·सभी जीवोंका हितकरतारहै४८॥ दंतोलूखलिक बनै अर्थात ओखली खल्लड आदि न राखै अपने दाँतों को गाली मूसर आदि मानै और उन्हीं से काटि तोड़ि के भक्षण किया करै. कालपक्वाशी बनै अर्थात नीवार वेणु श्यामा आदि मुन्यन्न और बेर इंगुद आदि फल भी जो केवल कालहीसे पकते और खाने योग्य होजाते हैं अग्नि की अपेक्षा उनमें नहीं रहती तिनको खाकर समय विताया करै यद्यग्नि सेभी पकाकर किसी अवसर में खाय तौ कुछ दोष नहींहै परंतु अग्निके वशीभूत न होजाय कि उसमें पकाये विनाखाही न सकै यह तात्पर्य है मनु के वचन से अधिकोक्ति में. यद्वा इसी प्रकार जो केवल दाँतों से न खासके सो किसीअवसर में पत्थरपर कूटिकेभी खाय पर चक्कीआदिका संग्रह न राखै—एवं श्रौत और स्मार्त कर्म यज्ञ होम आदि तथा भोजन आदि और भी क्रियायें जो अवश्य चिकनाई से होते हों सो सब फलोंको मींगसे उपजे स्नेहों से करै दृष्टांत जैसे महुआकी गुठलीका तेल या बडहरकी गुठलीका इत्यादि पवित्र फल चिकनाईवाले बनमें बहुत होतेहैं तिनसे काम चलावै पर घृतादिक स्नेहों का वर्ताव न करै॥ ४९॥

४८अधिकोक्तिः—कालपक्वभुगेव वा इतिमनुः=अर्थात्मनुने भी विकल्प दर्शाया है कि अग्निसे पका यद्वा कालहीसे पका भोजन करै॥ अन्यच,मनुश्च=मेध्यवृक्षोद्भवानद्यात्स्नेहांश्चफलसंभवान्=अर्थात्--पवित्र वृक्षोंके फलखाय तथा उनके फलों से उत्पन्न चिकनाइयों को भी खाय॥ ४८॥ ४९॥

(वानप्रस्थस्यान्येपिनियमाः)

चांद्रायणैर्नयेत्कालंकृच्छ्रैर्वावर्तयेत्सदा। पक्षेगतेवाप्यश्नीयान्मासेवाऽहनिवागते ५०॥
स्वप्याद्भूमौशुचीरात्रौदिवासंप्रपदैर्नयेत्। स्थानासनविहारैर्वायोगाभ्यासेनवातथा ५१॥

अक्षरार्थः—चांद्रायणों मे काल को लेवै या सदा कृच्छ्रों मे वर्ते यद्वा पक्ष बीते

त्तिकोवास्यात् यद्वाप्यष्टमकालिकः (एतेषांकालनियमानां शक्त्यपेक्षयाविकल्पं इतिमिताक्षरा=अर्थात्—मनुने यह कहाहै कि अपनी शक्ति के अनुसार चाहैं राति में भोजन करने का नियम साधै या दिनमेंहीं एकवार थोड़ा खानेका नियम साधै तिस में भी दिनके चौथे कालमें खानेका नियम राखै यद्वा आठवें कालमें भोजनका नियम राखै (मिताक्षराकार कहिते हैं कि इन सब जुदे जुदे काल नियमों में से अपनी शक्ति के अनुकूल कोई एक नियम साधै फिर चाहै तभी वदलिके दूसरा नियम साधने लगै जो पहिले में अड़चल प्रतीत होय इसी लिये विकल्प रक्खे गये हैं ॥ ५० ॥ इक्या-उनके मूलश्लोक में योगाभ्यास का जो चर्चा किया तिसके भी अनेक डौल होते हैं इसके मध्ये मनुने यह कहाहै कि (विविधाश्चोपनिषदीरात्मसंसिद्धयेश्रुतीः) आत्म सिद्धि चाहनेके लिये विविध भाँतिकी उपनिषदी श्रुतियां ११८० ग्यारहसौ अस्सी उपनिषदों में चारों वेदके सारांश रूपसे प्रसिद्ध हैं तिनको भी वानप्रस्थ अपने फालतू कालमें विचारै फिर उनके द्वारा मनन करिके प्राणायाम ध्यान योग समाधि पर आरूढ़ होवै—क्योंकि—उपनिषत् यह शब्दही वेदके सारांश का नाम है (और ब्रह्म विद्या जो अध्यात्म कहाती है तिसका भी उपनिषत् नामहै उसकी श्रुतियाँ तत्व मसि आदि वाक्योंको जानना) और भी (अत्रचोपनिषच्छब्दोब्रह्मविद्यैकगोचरः तच्छब्दावयवार्थस्यविद्यायामेवसंभवात्) ब्रह्म और आत्माके साक्षात्कार एकहीरूप होजानेका अर्थ भी उपनिषत् नाम कहाता है तिससे विशेषकर उपनिषदों को आ-राधना करै=कदाचित्=यह शंका करी जावै कि वानप्रस्थ के और सब नियम कहे गये परंतु स्नान आचमन आदि नित्यकृत्योंका प्रकार कुछ न कहागया सो कैसेकरै· तहां ब्रह्मचारी के प्रकरण आदि स्थलोंपर आचारकांडमें जैसा ब्रह्मचारीके निमित्त पर कहिचुके तैसा यहां इसको भी वही प्रकार समुझिलेना—क्योंकि (उत्तरेषांचैत दविरोधीतिगौतमः) गौतम ने शौचका विधान ब्रह्मचारीके अव सरमें कहिकर यह कहिदिया है कि पिछले आश्रमों को भी यही विधान अविरोधी जानो ॥ ५१ ॥

(वानप्रस्थस्यसाधनविशेषधर्माः)

ग्रीष्मेपंचाग्निमध्यस्थोवर्षास्वभ्रावकाशिकः । आर्द्रवासास्तुहेमंतेशक्त्यावापितपश्चरेत् ५२
यःकंटकैर्वितुदतिचंदनैर्यश्चलिंपति । अक्रुद्धोऽपरितुष्टश्चसमस्तस्यचतस्यच ५३
अग्नीन्वाप्यात्मसात्कृत्वावृक्षावासोमिताशनः । वानप्रस्थगृहेष्वेवयात्रार्थंभैक्ष्यमाचरेत् ५४

अर्थः—ग्रीष्ममें पंचाग्नि बीच बैठै· वर्षाओं में स्थंडिल पर बैठे लेटे· हेमंत में भी जो वस्त्र पहिरेहुये तपकरै या शक्तिके अनुरूप तपकरै=अर्थात्—गरमी वरसात जाड़ा

ये तीनिही ऋतु साल भरमें प्रधान होतीहैं इनमें ऐसी रीतिसे वानप्रस्थको तपकरना चाहिये कि चैत से असाढ़ तक चार महीने पंचाग्नि तापै अर्थात जंगल में बैठि के अपने चारों ओर चार अग्नी जलावै ऊपरसे पाँचवीं अग्नि सूर्यका आताप होय यह पंचाग्नि का स्वरूप है. फिर श्रावण से कातिक तक चार महीने जब जब कभी वर्षा होय तब स्थंडिल एक चबूतरा जो बिना छायाकी धरती पर जंगल आदि सूने स्थान मे बनायाहो तिसपर बैठे लेटे ऐसी तरहसे वर्षाओंको बरसते समय अपने मूड़पर झेलै ऐसे चबूतरे पर किसी पेड़की छाया भी न होनी चाहिये. फिर हेमंत जाड़ेकी ऋतुमें मार्गशिर महीनासे फागुनतक चार महीने भर भीजा कपड़ा पहिने रहाकरै. जिसको ऐसा तप करनेवाली शक्ति इतनी न होय सो जितनी उसमें शक्तिहोय उसीके अनुरूप तपस्या करै परंतु जिस प्रकारसे शरीर दुर्बल होसकै सो करना चाहिये॥ ५२ ॥ दूसरा धर्म कहिते हैं कि–जो कांटों से छेदता है या जो चंदनों से लेप करता है तिस पर न क्रोध करना न संतुष्टि मानना किंतु उसको और उसको भी समान बुद्धि राखै अर्थात्–वानप्रस्थ के साथ यदि कोई खोटे वचन कहि कर या कुछ खोटा काम करिके उसे ऐसी पीड़ा देने लगै मानों कांटोंसे छेदना है तिस पर क्रोध भी न करना चाहिये या यदि कोई ऐसी सेवा शुश्रूषा आदि भलाई करने लगै मानों शीतल सुगंधिमान् चंदनोंका लेप करता होय तिसपर भी अत्यंत प्रसन्नता अपनी न जाहर करै किंतु दोनोंपर एकहीसी प्रकृति अपनी इत्मीनान बनीरक्खै ॥ ५३ ॥ तीसरा धर्म कहितेहैं कि–अग्नियों को आत्मामें समावेश करिके थोड़ा भोजन करनेहार वृक्षों के नीचे वासकरै तहां वानप्रस्थोंकोही दर्शने

र्वीत तावन्मात्रंभैक्ष्यंवानप्रस्थगृहेष्वेवाचरे दितिमिताक्षरा=अर्थात्—जिस किसी वानप्रस्थ ने वनमें कुटी आदिकी रचना सहित श्रौतविधि से यज्ञके वितान में अग्नियों का स्थापन किया होय सो कुछ काल सेवन करके सेवा करने से असमर्थ होजाय अथवा कुटी और अन्नोंका संग्रह आदि विस्तार जैसा छेयालीस मूलश्लोक से लेकर पचास तक पाँच श्लोकों में दर्शाया था तिसका वर्तावा करते करते भी पेटभर जाय जिससे वैराग्य उत्पन्न होने लगै इसीसे सबआडंबर छोडिछाँडिके स्वतंत्र नियम धर्मकी साधना किया चाहैं तिनके लिये यही चौवन ५४ का मूलश्लोक योगीश्वर ने भी कहा और उन्हींके निमित्तपर मनुभी यह कहते हैं कि--वितानकीस्थापन करी अग्नियों को यथोक्त विधि के साथ अपने हृदय रूपी आत्मा में आरोपित करिके अनग्निहोजावै और अनिकेत होजावै कि अग्निभी न रक्खै और कुटीआदि स्थान का बखेडा भी न रक्खै और मुनिरूप होकर कंद मूल फल भोजन कियाकरै और वृक्षों के नीचे विश्राम लेकर चाहैं तहाँ इच्छा के अनुसार टिका करै (इसपर मिताक्षराकार कहते हैं कि मौन रहनेका व्रतसाधै तिससे मुनि कहावै यह तात्पर्य है) और इन्ही फलमूल आदि के न मिलने में योगीश्वर के मूल श्लोक वालानियम समझना कि प्राणों की धारणावनोरहने के अर्थसे भिक्षाको आचरै परंतु भिक्षाभी सर्वत्र नहीं माँगै किंतु केवल वानप्रस्थोंके घर माँगै जो पहिली रीतिके अनुसारकुटी और अन्न का संग्रह किये स्थानधारी बने बैठे हों (उनका धर्म देखो ४६ । ४७ श्लोकोंमें) अतिथि को भिक्षा देना उन्हींका यह धर्महै तथा अनिकेतनवानप्रस्थका उन्हींसे भिक्षालेनेकाधर्महै जो अभीवर्णनहोरहाहै=परंतु=जबऐसीभिक्षा न मिलसकै तब क्या करनाचाहिये तिसका धर्म दूसरा है सो देखो अगले मूलश्लोक में ॥ ५४ ॥

(क्वचिद्ग्रामादपि भिक्षाचरणं)

ग्रामादाहृत्यवाग्रासानष्टौभुंजीतवाग्यतः ५५ पूर्वार्ध

अर्थः—या ग्राम से भिक्षा लाकर आठ ग्रासों को मौन साधे वाणी को जीतहुए भोगै=अर्थात् —पूर्वोक्त फल मूल आदि न मिलने पर वानप्रस्थों के घरभी निकट न होयँ तिनकी भिक्षा न मिलसके तब अन्य किसी ग्रामादि में जाकर भिक्षा लावै ॥ ॥ ५५

५५ अधिकोक्तिः--पहिले ४६ छेयालीस मूलश्लोकों में स्थानधारीवानप्रस्थों के जो धर्म कहे गयेथे उनमें नीवार श्यामक आदि मुनियों के अन्न भोजन करना

दिशाको चला जावै=अर्थात्—जिस वानप्रस्थ पर अत्यंत बुढापा या प्रबल रोगहोने आदि कारणों से ग्रास जाकर भिक्षा भी न लाई जाय किंतु चलाफिरी आदि कोई भी काम जिसपर न होसके सो ऐसाकरै कि वायुको भक्षण करते हुये ईशानीदिशा के पर्वती मार्गों में तहाँतक सीधा वृक्षादिके समान चलाजावै कि जहाँपर उसकादेह-पात होजाय: यही महा प्रस्थान कहा जाता है॥ ५५॥

५५ अधिकोक्तिः=मनुः=अपराजितांवास्थायगच्छेद्दिशमजिह्मगः=अर्थात्—मनु ने यहभीकहाहै किजो पहिलेकहे नियम न चलसकें तो अपराजिता नामकीईशानी दिशामें उपस्थितहोकर सीधेपैरों सूत बांधेबिना विचारमार्गके देहांतपर्यंतचलाजाय· इसी को महा प्रस्थान भी कहते हैं—यद्यपि—वानप्रस्थ के लिये सर्वत्र यह विधान होसक्ता है कि वह जिस देशमें उपस्थित होय तहाँ अपने ठिकाने से लेकर ईशानी दिशा कोप्रस्थान करै तथापि विशेष कर हिमालय पर्वत इस कार्य के निमित्त में प्रसिद्ध है कि जहाँ पांडव आदि अनेक महात्मा देह त्यागने को पहुँचेक्योंकि उसमें देह त्यागने से सीधा स्वर्गहीमें जाताहै वल्कि हिमालय के उत्तर भागमें स्वर्गारोहण पंथ इस नाम से मार्गही एक सबसे जुदा प्रसिद्ध है उसी को महापथ भी कहते हैं उसीको ठीक महा प्रस्थान जानों क्योंकि स्वर्ग पर चढ़ि जाने का मार्ग है इसका ठिकाना भी श्री बद्रीनाथ जी से पचासही साठ कोसके अनुमान अंतर पर सुनाजाता है—वल्कि बहुधा तीर्थ के यात्री लोग अद्यापि उसके दर्शनमात्र के निमित्त जाया करते थे उनमें से बहुतेरे अपनी श्रद्धासे देह त्यागने को भी आगे चलिजाते थे· कुछ दिनों से अँगरेज़ी सरकार ने देह त्यागने का निषेध क़ायम करके वहांके अधिकर्त्ता पंडालोगों से इक़रारभी लेलियेसुनेजातेहैं कि उस मार्गके दर्शनमात्रकेनिमित्त यात्री जानेपावैं लेकिन देहत्यागनेके लियेवहांसे आगे न बढने पावैं· कदाचित् इससेवि-परीत किसीसालमें एक दो यात्री आगे बढिजाय तो प्रतिमूर्ति उतनाजुर्माना(धनदंड) पंडा लोगों को देना पड़े· इस लिये दर्शन मात्रके लिये भी जोकोई यात्री जाना चाह तेहैं सो पंडालोगों की जमानत से जाने पाते हैं अन्यथा नहीं· क्योंकि धर्मशास्त्र में जो देह त्यागना इसी जगे पर आदेश किया गया सो हर एक मनुष्यों को नहीं केवल वानप्रस्थ का यह धर्म है कि जिसने पूर्वोक्त प्रकारों से तपस्या भी पूर्ण कर चुका हो और जिसट अपने सब इंद्रीयों से निर्बल भी होचुका हो॥ ०॥ जब कोई वानप्रस्थ इतना निर्बल होचुका हो जिस पर महाप्रस्थान को जाना भी न होसके सो औरही प्रकारोंसे देह त्यागै कि जिन प्रकारों की आज्ञा शास्त्रमें लिखीहोय=तथाच स्मृत्यं

श्राद्धकृत्सत्यवादीच गृहस्थोपिविमुच्यते इतिगृहस्थस्यापि मोक्षप्रतिपादनंतद्भवांतरानुभूतपारिव्रज्यस्यैवेत्यवगंतव्यं=अर्थात--वे कहिते हैं कि जैसा व्यौरा ऊपर हमने कहि समुझाया उसी सबबसे श्रुति में भी यह भूमिका पहिले कहिकर कि धर्म के तीनि स्कंध (बड़े मोटेमुद्दे) होतेहैं--फिर उन तीनोंके रूप जुदे दर्शायेगये कि नित्यनैमित्तिक आदि यज्ञों का करना और वेद विद्याका अभ्यास रखना और दान करते रहिना यह सब काम गृहस्थी का होताहै सो धर्म का पहिला मुद्दा जानना १ और केवल तप करना वानप्रस्थका स्वाभाविक काम होताहै सो धर्मका दूसरा मुद्दा जानना २ और ब्रह्मचारी होके सदा अपने आचार्य गुरुके कुलमें वासकरै और निपट आचार्य के कुलहीमें अपने देहको मरणा पर्यंत खपावै यह नैष्ठिक ब्रह्मचारी का काम है सो धर्मका तीसरा स्कंध जानो-मिताक्षराकार कहिते हैं कि इस प्रकार धर्मके तीनि स्कंधोंके बहाने से गृहस्थी१ वानप्रस्थ २ नैष्ठिक ब्रह्मचारी ३ इन तीनों का स्वरूप समुझाइके-यह कहा गया है कि ये तीनों आश्रमी यदि इसी प्रकार अपने कामों का वर्ताव करें तौ ये सभी पवित्र लोकों में जाते हैं इसरीति से तीनों को पुण्य लोकों का मिलना समझाय के--यह कहना छोड़ दिया गयाकि ब्रह्म के आराधन में आरूढ होने से मोक्षरूपी अमृत को पाते॰ सो इसलिये छोड़ागया कि चौथा संन्यास धर्मका आश्रम जो बाकी रहगया जो परिव्राजकों का ठिकाना बड़ा प्रसिद्ध है उसी को अमृतत्व मिलता है अर्थात उस कथन के छोड़देने से भी यह आशय सिद्ध होता है कि साक्षात ब्रह्म के स्वरूप का ध्यान योग आराधन करनेवाला परिव्राजक नाम संन्यासीही मुक्ति रूपी अमृतत्व को पाता है गृहस्थी आदि तीनों में और कोई नहीं पासक्ता है (यह कहकर मिताक्षराकार फिर कहते हैं कि) यद्यपि आगे २०५ दोसौपाँचवें मूल श्लोक में योगीश्वर आपही अपने मतमें यह कहैंगे कि ऐसे लक्षणों वाला गृहस्थी पुरुष भी मुक्ति को पाता है तो भी वह उसके लिये समझना जो पहिले जन्मों में परिव्राजक होकर संन्यास धर्मका पालन करचुका और उस जगह किसी हेतु से मुक्ति उसकी न होसकी हो तो इस जन्म में गृहस्थी होते भी मोक्षफल का अधिकारी होजायगा परंतु यह मिताक्षराकी प्रतिज्ञा नहीं है=अथ मर्यादाप्रश्नस्तु=श्रीमन्मिताक्षराकार परिव्राजकके वानप्रस्थके प्रसंगमें बहुत सुंदर यह वर्णन किया जिससे संन्यास धर्मका प्रकाश जो आगे आरंभ होनेवाला है तिसकी महिमा जानपड़ी और महिमा जानपड़ने से उसमें चित्त लगाने का उत्साह बढ़ने लगा॰ तहाँ यह वार्ता रहजाती है कि उन्होंने गृहस्थी आदि किसी

उसके प्रसंग से संन्यासी और गृहस्थों की विशेषता भी चमकाई गई अब इससे आगे संन्यास धर्म के प्रकरण का प्रारंभ किया जायगा वह बहुत बड़ा है सो अनेक परिच्छेदों में जाकर पूरा होगा क्योंकि उसके साथ अध्यात्म रूपी ब्रह्म विद्या का विस्तार किया जायगा ॥ इतिवानप्रस्थधर्म्मप्रकरणम् ॥

इत्यापद्धर्म सहितं वानप्रस्थाश्रम प्रकरणं द्वितीयम्

इस प्रकरण में छठा सातवां दो परिच्छेद हैं कि उनमें एक छठा परिच्छेद आपत्काल के धर्मोंपर आरूढ है कि जहां मुख्य धर्मोंसे निर्वाह न होताहो तहां आपत्कालिक धर्मोंसे निर्वाह किया जाय--उसके बादि सातवां परिच्छेद केवल वानप्रस्थाश्रमके धर्मोंपर आरूढ है कि जहां कहीं आपत्कालिक मर्यादा से भी काल क्षेप न होसके तहां गृहस्थ धर्मका आडंबर समर्थपुत्रोंके ऊपर छोडि छाडिके वनवासी होकर वानप्रस्थ आश्रम स्वीकार करै-इसमें भी यदि पुत्रोंका अभाव देखै तो पत्नी को भी साथ लेजावै या पत्नी भी न हो तो एकाकी चला जाना बहुत उत्तम है ॥

अथ चतुर्थाश्रम धर्मारंभः ॥

अथसंन्यास ग्रहण विधानपूर्वकंपरिव्राजकस्वरूप निरूपणोऽष्टमपरिच्छेदः ८

५६ अधिकोक्तिः—सब कोई नहीं इसका यह तात्पर्य है कि गृहस्थी पुरुष पर तीन भांतिके ऋण होते हैं तिनको प्रथम अच्छीतरह से उद्धार करै वही संन्यासी होकर मोक्ष फल पाता है अन्यथा जिसने तीनों ऋण उद्धार न कियेहों सो मोक्षपद पानेका अधिकारी नहीं है=यथाह मनुः=ऋणानित्रीण्यपाकृत्य मनोमोक्षेनिवेशयेत अनपाकृत्यमोक्षंतु सेवमानोव्रजत्यधः=अर्थात्–तीनों ऋण शोधिके तब मोक्षमें मनको लगावै क्योंकि ऋण शोधे बिना मोक्षका सेवन करते हुये भी नरकही को जाता है (तीनों ऋणका स्वरूप आगे इसी वार्ता में देखना उसमें पुत्र का उत्पन्न करना भी एक ऋण शोधना रहिस्ता है) सत्तावन ५७ के मूल श्लोकमें पुत्रवान जो कहागया तिसका दूसरा अर्थ यह भी है कि संतान उत्पादन किये बिना थोडी अवस्थावाला पुरुष जिसके सन्तान होसकने का भरोसा आगे को होय वह सन्यासी न होजाय क्योंकि अभी इस ऋण से छुटकारा नहीं मिला परंतु यह नियम केवल गृहस्थी को समझना॥ ० ॥ यदि कोई पुरुष नैष्ठिक ब्रह्मचर्य में उपस्थित होतेहुये संन्यास लेना चाहै तिसके लिये संतान पैदाहोने आदिका कुछ नियम नहीं है अर्थात् वह संतान पैदा किये बिनाहीं संन्यासी होजाय तौभी ऋणी नहीं रहा क्योंकि नैष्ठिक ब्रह्मचारी वही कहाता है जिसने विवाह न कियाहो तो फिर भार्याका संग्रह न होने से संतान उत्पादन करने का अधिकारही उसको नहीं रहा (कदाचित् यह कहो कि संतानके लिये विवाह करना चाहिये सोभी नहीं क्योंकि विवाह करनेसे उलटा रागमें फसना होगा जिससे विराग जाता रहेगा वैराग्यके न होनेसे संन्यासका लेना भी मारागया) और-- यह शंका न करनी चाहिये कि तीनों ऋणउद्धारकरनेकी आज्ञारूपी विधि प्रसिद्धहै सोई स्त्रियोंका संग्रहकराना स्वीयके सिद्धकरतीहो तिससे ब्रह्मचारी को भी दार संग्रहकरिके संतानपैदाकरनी चाहिये क्योंकि जहां दैवयोग से ब्रह्मचारी बालक

न्यायसे समुच्चय पक्षका दर्शाने वालाहै कि वनसे वा घरसे वा तीसरे ब्रह्मचर्यही से यदि कोई संन्यास लेना चाहै यह अर्थ सूचन करता है और इसीसे दूसरा मुख्य पक्ष भी संसिद्ध होताहै-तिससे यह तात्पर्य पाया गया कि हर किसी आश्रमका पुरुष अपने आश्रम से अनंतरही संन्यास लेसक्ता है—इसीलिये—जावाल मुनिकी श्रुतिमें दोतरह से विकल्प कहा गया है उसमें एक यही पक्ष जो कहिचुके दूसरा मुख्य पक्ष भी उपस्थित है=तथाचश्रुतिः=ब्रह्मचर्यपरिसमाप्यगृहीभवेत्गृहीभूत्वावनीभवेत् वनीभूत्वाप्रव्रजेत्यदिवेतरथाब्रह्मचर्यादेवप्रव्रजेद्गृहाद्वनाद्वा = अर्थात्—ब्रह्मचर्य धारण करै उसको अच्छीरीतिसे पूराकरिके गृहस्थी बनै गृहस्थको पूरा करिके वानप्रस्थ होय वनके आश्रम को पूरा साधन करिके संन्यास धारण करै (यही मुख्य पक्षवाला कल्पहै) पर जिससे यह चारों आश्रम यथा क्रमसे न बनिपरै सो औरही तरह ब्रह्मचर्यही से संन्यास लेलेवै या गृहस्थी बनिके घरहीसे या बीच में गृहस्थ छोडि ब्रह्मचारी से वानप्रस्थ बनिकर उसीके अनंतर संन्यास लेवै (सब तरहसे गुंजाइश मिली अब संदेह जातारहा) परंतु यह भी नियम नहीं कि अवश्यभाव से वानप्रस्थ या संन्यासी होजाना क्योंकि गौतम ने गार्हस्थ्यके सन्मुख उपराल् आश्रमों की रोक बाध भी प्रदर्शित किया है= यदाह गौतम =ऐकाश्रम्यंत्वाचार्याः प्रत्यक्षविधानाद्गार्हस्थ्यस्य=अर्थात्—जिन आचार्यों ने चार आश्रम दर्शाये उन्हीं ने एकाश्रम्य भी गृहस्थ का प्रत्यक्ष विधान होने से कहा है कि जिसके गृहस्थी आश्रम प्रत्यक्ष पूरे विधि विधान से बना चुना देखपड़े उन्हें किसी धर्मकी न्यूनता न समझ परै तिसको एक यही आश्रम सेवन करना चाहिये जो सबसे जेठा होता है क्योंकि यह सभी आश्रमों की धर्मरक्षा करसक्ता है इसीसे जेठा पन के दो हेतु इसमें होते हैं वानप्रस्थ प्रकरण के अन्त में लिख चुके वहीं देखो । ऊपरली शंका के समाधान पर भी ध्यान करो कि सन्यास धर्म लेने मध्य समुच्चय विकल्प और बाध भी सबतरह की गुंजायश ब्रह्मपक्ष दर्शाये गये तिससबकी व्यवस्था से ठहरी उसी श्रुति मूलत्व से कर्त्ताकी इच्छा बलवान ठहरी कि वह जिसमें अपना सुभीता समझै उसीका सेवन करै और जिस रीति से होसके उसी रीति से करै सभी प्रकारों का प्रमाण एक देदहै तिससे विरोध की संभावना कुछ नहीं है ॥ ० ॥ कोई बिरले विद्वानों की समझ की यही बात इसका बोध पकड़ने के निमित्त से मिताक्षराकार ने एक कानून व्याख्यान भी आरोपित किया सो देखो (यत्किंचित् प्रमाण शास्त्रोक्तानां स्मार्तत्वाल्लौकिकादीनां गार्हस्थ्येन योनयावः गार्हस्थ्यानां विकल्पोबल्याग

है कि तीनों वर्णोंको वेदपढ़िके चार आश्रम होतेहैं इस वचनके प्रभावसे भी द्विजाती मात्र का अधिकार कहिते हैं कि तीनोंवर्णोंमें जिसकी इच्छाहोय सो संन्यास लेसक्ता है केवल शूद्र नहीं॥ यहां तक संन्यास लेने का ढंगही कहा गया किंतु इसी ढंग से संन्यास लेचुकने वाले को क्या क्या धर्मवर्तने होंगेसो आगे देखो॥ ५६॥ ५७॥

(संन्यासिधर्माः)

सर्वभूतहितःशान्तस्त्रिदंडीसकमंडलुः। एकारामःपरिव्रज्यभिक्षार्थीग्राममाश्रयेत् ५८॥

अर्थः–परिव्राजक होके सर्वभूतों का हित होय शांत होय. त्रिदंडीहोय कमंडल सहित होय एकारामहोय भिक्षाके अर्थ ग्रामका आश्रय लेवै=अर्थात–संन्यासी सब कर्मों का त्याग करने से कहाता है उसी को परिव्राजकभी इसलिये कहिते हैं कि वह धरती पर फिरने लगताहै कहीं ठिकाना बांधि के नहींटिकता है इस फिरने के उपलक्षण से संन्यास के आश्रम को प्रव्रज्याभी कहिते हैं उस प्रव्रज्यापर आरूढ़ होय सो नित्यंप्रति सभी प्राणी मात्र का हितहोय. इसका यह तात्पर्य नहीं है कि उनके साथ कुछ भलाईका आचरण करनेलगै. किंतुयही तात्पर्यहै कि जो कोई कुछ अपनेसाथ प्यारका वर्तावा करै या कोई कुछअप्रियवर्तावाकरै उन दोनों से उदासीन बुद्धिवनी राखै इत्यादि वातोंका ब्योरा अधिकोक्ति में॥ ५८॥

५८ अधिकोक्तिः–दोनोंमे उदासीन बुद्धि राखै क्योंकि दुख देने वाले का प्रतिकार करने से किसी प्रकारकी हिंसा करनी परेगी तथा सुखदेने वाले पर अनुग्रह करनेसे उसके किसी शत्रुको कुछ पीड़ा देनी परेगी इसी से संन्यासी को इन दोनोंबात का निषेध है=तथाच गौतमः=हिंसाऽनुग्रहयोरनारंभी=अर्थात–हिंसा और अनुग्रह इन दोनों का आरंभ कभी नकरै. शांत होय यह जो ऊपर कहागया तिसका यह तात्पर्य है बाहरली प्रत्यक्षइंद्रियां और मनको आदि लेकर भीतर की इंद्रियां दो तरह की होती हैं तिनमें चंचलता न खड़ी होनेदेय. त्रिदंडी होनाभी कहा तिसका यह तात्पर्य है तीन दंड उसके पास रहा करैं जो बांसके होते हैं और शौच आदि शुद्धि के लिये कमंडलु का राखना कहा सो हरवक्त जलसे भरा चाहिये=तथाच स्मृत्यंतरं–प्रजापत्येष्ट्यनंतरमग्नीन् वैणवान्दंडान्मूर्धप्रमाणांस्त्रिगोन पाणिना धारयेत् दक्षिणेन सोदकंकमंडलुम्=अर्थात–पूर्वोक्त प्राजापत्य नामका याग करनेके अनंतर बांस केतीन दंडे जो अपने माथे पर्यंत कनपटी तक लंबेहों तिनको दाहने हाथ में लेकर तथातिकसे और बांयें हाथमें जलसे भरा कमंडलु होय–परन्तु–निर्विकल्प नियम नहींहै कि तीन

त्री दंड होयँ विकल्पसे एकभी होता है (एकदंडीत्रिदंडीवेति बौधायनः) जैसा यह बौधायन का कहा विकल्प है कि एक दंडी बने या त्रिदंडी बने विकल्प उसकी इच्छा पर आरूढ है=एवं=चतुर्विंशति मतनामके शास्त्र मे भी विकल्प है=यथा=चतुर्थमाश्रमंगच्छेद्ब्रह्मविद्यापरायणः एकदंडीत्रिदंडीवासर्वसंगविवर्जितः=अर्थात—ब्रह्म विद्या जो वेदांत नाम से अध्यात्म विद्या कहाती है तिसमें निपुण और तत्पर होके संन्यास नामके चौथे आश्रमको पहुँचे किस रीतिसे कि एक दंडी या त्रिदंडी बनिके जाय और सर्व संगों से रहित होके जाय अर्थात इष्ट मित्र संबंधी नाते गोते आदि सबकाही संग छोडि उनका मोह मुहब्बत तोड़े हुये जाय किसी मे कुछ वास्ता अपना न बाकी रक्खे=और=शिखा सूत्र बना राखने या त्यागि देने मध्ये भी ग्रन्थांतरसे विकल्प है कि चाहै बनारक्खे या निपट त्यागि देवै सो सब आगे वचनों मे देखो (मुंडःशिखी वेति गौतमः) गौतमने कहा है कि मुंडितहोय या शिखावान होय (मुंडोऽममोऽपरिग्रह इति वशिष्ठः) वशिष्ठ ने कहाहै कि मुंडा होय और अमम होय अर्थात किसी प्राणी या किसी जगह स्थान या किसी वस्तु पर मामता अपनी न रक्खे कि वह मेरा या यह मेरा और अपरिग्रहभीहोय अर्थात चाकीचूल्हा सिलबट्टाआदि गृहस्थीवाले उपकरणोंकासंग्रहकभी न करै-यहतोमुंडनऔरशिखा का विकल्प दर्शाया आगे यज्ञोपवीतका विकल्प दर्शाते हैं सो देखो (सशिखान्केशान्निकृत्य विसृज्ययज्ञोपवीत मितिकाठकश्रुतिः)

कि जिसमें बाक़ीरहे विधानोंका प्रतिपादन होता है=यथा=अथयज्ञोपवीत मप्सुजु होतिभूःस्वाहेति अथदंडमादत्तेसखेमांगोपायेति=अर्थात्-पूर्वोक्तप्राजापत्य यागकिये पीछे चलते समय (भूःस्वाहा) इस मंत्रको पढ़िकर जलकी धाराओं में उपवीतसूत्र को होमि देताहै फिर पूर्वोक्त दंडको हाथमें लेताहै इस मंत्रसे कि (सखेमांगोपाय) मित्र मुझे बचाइयो संसार के दुःखोंसे=यहां तक सभी वचनों में जनेऊ का त्यागि देना सिद्ध हुआ• अगिले देवल के वचन से जनेऊ रखिलेना भी सिद्ध होगा इसीसे ऊपर इसका विकल्प कहा गयाथा (और जिसको एकही वस्त्र से निर्वाह करनेकी शक्ति निपट न हो सो जाड़े आदि की ऋतु में दूसरी कथरी भी साथ रक्खै = यथा ह देवलः=काषायीमुंडस्त्रिदंडीकमंडलु पवित्रपादुका९९सनवं थामात्रः=अर्थात्-संन्यासी मूड मुडाये हुये सिर्फ़ इतनी चीजें साथ रक्खै•गेरुआ आदि कषाय वस्त्र•तीनदंड• कमंडलु जल से भरा•पवित्र नाम यज्ञोपवीत सूत्र•पादुका खड़ाऊं•आसन•कंथाकथरी एकाराम होय यह योगीश्वरके मूलश्लोकमें कहा तिसका तात्पर्यहै कि और किसी संन्यासी को अपनेसाथ न रक्खै न किसी संन्यासिनी स्त्रीको साथ रक्खै (यहां यह संदेह न करना कि पुरुषही संन्यास लेते होंगे क्योंकि (स्त्रीणांचैके इति बौधायन) बौधायन मुनिने किरलोंके मतसे स्त्रियोंको भी संन्यास लेना कहाहै) किसी सन्यासी आदिको साथ लेनेमें जो दोषहैं तिनको दक्षने प्रकाश किया है=यथा=एकोभिक्षुर्य थोक्तश्चद्वावेवमिथुनंस्मृतम् त्रयोग्रामःसमाख्यात ऊर्ध्वंतुनगरायते राजवार्तादितेषांतु भिक्षावार्तापरस्परम् अपिपैशुन्यमात्सर्यंसन्निकर्षान्नसंशयः=अर्थात्-भिक्षुकनाम संन्यासी का जैसा लक्षण कहागया सो सब उसीमें मगुझना जो एकला असहाय फिरता होय•तिससे जहां दो भिक्षुक इकट्ठे होयं तिनको स्त्री पुरुषके तुल्य [illegible] जोड़ा कहा गया है•जहां कहीं तीनि भिक्षुक एकत्र होयँ तिनको ग्रामके समान जानो•इन से अधिक जहां चारि पांच आदि इकट्ठे होयं तहां नगर शहर के समान भरभट होता है क्योंकि उनके परस्पर समीप होनेसे राजाओं की वार्ता और भिक्षाकी वार्ता पिशुनता की वार्ता मत्सरताकी वार्ता भी अवश्य होने लगतीहै जिनमें ओंकार आदि आत्माके स्वरूप ध्यान भूलिजाते हैं सन्देह इनमें नहीं है=मूल श्लोक में (परिग्रह्य) यही पद आया था इसका यही अर्थहै कि सब कुछ त्यागिके सन्यासी नताकि अभि- मस्से-मैं मेरा आदि जो अभिमान को स्वरूप है तिनके लिये जो कुछ लोकाचारी कर्म होतेहैं तिनको त्यागि देवै और वेदमें भी जो नित्य और काम्य रूपी कर्म करने को होयँ तिनको त्यागि देवै=तथाच मनुः=मुखाभ्युदयिकंचैवनैः श्रेयसिकमेवच प्रवृत्त

इससे अधिक नहीं परंतु यह नियम वर्षा के दिवसों से अन्यत्र सूखेकालमें समझना किन्तु वर्षा होतेहुये पाँच दिनसे अधिक भी टिकिजानेमें दोष नहीं बल्कि वर्षाऋतु सें अति वर्षा होता जानिके चारमहीना तक निरंतर भी टिके तोकुछ दोष नहीं (यहां यद्यपि अति वर्षाके होनेमें समर्थ को भी निरन्तर टिकनेका दोषनहीं कहा परन्तु खंडवर्षाके होनेसें निरन्तर चारमहीने टिकिजाने से दोष प्रकट होताहै तथापि जो असमर्थहोय तिसको खण्ड वृष्टिके होने परभी चारमहीनाभर टिकनेका दोषनहीं यह देवलकेवचन से भी सिद्ध होचुकाहै॥ किसरीतिसे भिक्षामांगै यहनियम अगिले मूल श्लोकसे देखो ॥ ५८ ॥

(भिक्षाचरण प्रकारः)

अप्रमत्तश्चरेद्भैक्ष्यंसायाह्नेनभिलक्षितः । रहितेभिक्षुकैर्ग्रामेयात्रामात्रमलोलुपः ५९ ॥

अर्थः—सायाह्न में भिक्षुकों से रहित गावँ में यात्रा मात्रहि भैक्ष्य को चरै अलो-लुप अप्रमत्त अनभिलक्षित होके=अर्थात्–भिक्षा मांगते समय अपने मुंहकी वाणी तथा नेत्रों की निगाह तथा औरही किसी अंगकी समस्या आदि चपलता से रहित होय सो अप्रमत्तहोना कहाता है और अनभिलक्षित होय अर्थात् ज्योतिष वैद्यक मंत्र यंत्र इंद्रजाल आदि किसी विद्या के लक्षणसे लोगों को रिझाय के न मांगेऔर दिनका पिछला पाँचवाँ भाग जो सायाह्न कहाता है तिसमें मांगे पहिले से नहीं और जिस गाँव में भिक्षुक बहुत न होयँ तिसही सें मांगे और उतनाही मांगे जिसमें शरीर और प्राणों की यात्रा बनी रहे बहुत न मांगे और अलोलुप होके मांगे किंतु मीठे खट्टे आदि पदार्थों को न मांगे जैसा मिल जाय उसीमें संतुष्टि मानै ॥ ५९ ॥

शीघ्र चलाजाय (इससे भी यह तर्क पैदा होती है कि जब इसतरह के निषेध दीखे तौ फिर हाथखाली आदि अवकाशोंको न देखिके तत्काल चलाजाय पर लौटिके दुबारा तिबारा फेराकरै·सो भी नहीं क्योंकि (एककालंचरेद्भिक्षां एकहीकाल भिक्षा मांगै इस नियमसे दुबारा आदि फेराकरनेका निषेध सबसे पहिले कहिचुकेऔर इसी लिये दूसरे अद्धासे मनुने यह कहाहै (भैक्ष्यप्रसक्तोहियतिर्विषयेष्वपिसज्जति) कि यती पुरुष भिक्षाके मध्ये बहुत लालसा बढाने से संसारी विषयों में रचता और फंसताहै जिससे योगभ्रष्ट होजाना दुर्घट नहींहै ॥ योगीश्वर ने मूलश्लोक में अनभि लक्षित होके मांगना कहाहै कि भिक्षा के लिये कोईसा विद्याका लक्षण अपने साथ न राखै तिसके मध्ये मनुनें स्पष्ट ब्यौरा दर्शाया है=यथा=नचोत्पातनिमित्ताभ्यांन नक्षत्रांगविद्यया नानुशासनवादाभ्यांभिक्ष्यांलिप्सेतकर्हिचित=अर्थात— यतीपुरुष कभी भी भविष्य उत्पातोंकी उत्पत्ति और फलोंको सुनाइ के भिक्षापर लालसा न राखै·एवं कभी भी शुभा शुभ शकुनरूपी उत्पन्न हुये निमित्तों के फल कहिकर या सगुनौती आदि प्रश्नफल कहिकर भिक्षा न चाहै·एवं किसीप्रकारके समुद्रिक आदि हाथके लक्षण कहिकर या कोईसी आज्ञारूपी अनुशासनकी बात देकर भिक्षा न मांगै·एवंकिसी वाद विवादका तत्त्व निर्धारण करिके भिक्षा न मांगै·न ज्योतिषकी विद्याका बर्तावा करिके (इसका यह तात्पर्य नहींहै कि इनसे उपरालू वैद्यकआदि विद्याओं से मांगना दोष न होगा किन्तु सिद्धांत इसका यहीहै कि जिन विद्याओं के नाम यहाँ नहींकहे तिनसे भी न मांगे क्योंकि संन्यासीको विद्याओंका त्यागकर देना पहिले कहिचुके तिसका यही प्रयोजन है जो यहां आकर दूर किया गया सायंकाल मांगनेका प्रसंग वर्तमानहै तिसकेमध्ये एक जुदाप्रकार भी देखनेमें आता है=तदाहवशिष्ठः=ब्राह्मणाकुलेवायल्लभेत तद्भुंजीत सायंप्रातर्मांसवर्ज्यम (तदपाक विषयमिति मिताक्षरा=अर्थात—वशिष्ठ ने जो कहा है कि सांझ या सबेरेमें जब कभी किसी ब्राह्मणके घरमें जो कुछ मिलिजाय या विकल्पसे चौथी किसी द्विजातीके घरमें जो कुछ मिलिजाय सोई भोग में लगावै परन्तु सांझको छोड़िके यह नियम जानना अर्थात किसी देशमें देशके निवासी ब्राह्मणआदि द्विजाती लोगोंमें जिनके मांस खायाजाता हो वहां लाकर भिक्षामें समर्पण करें तो सन्यासीको न खाना चहिये—इस वचन से सांझ या सबेरेका जो विकल्प कहा सो नवीन कहिते हैं दोपहर के पहिलेका समय निश्चितभया (इसपर मिताक्षराकारकहिते हैं कि यह दुपहरसे पहिले भिक्षा भोगलगानेका चर्चा सिर्फ इसकेलिये जानना जो ऐसा आर

होनेसे अशक्तहोय जिसपर सवेरे खाइलेने बिना सांझतक न ठहिराजाय परन्तु दोनोंबार खानेका नियम इसमें नहींहै=भिक्षुकों से खाली गांवमें भिक्षा मांगने जाय यह मूलश्लोक में योगीश्वरने कहा—इसका यह तात्पर्य है कि पाखण्डी आदि नकली भिक्षुक जहां बहुतहोयँ तहां देनेवालोंको अश्रद्धा होजातीहै तब सच्चे स्वरूपमें भी श्रद्धा नहीं करते हैं इसी वार्तापर मनुने कुछ और भी विशेष नियम किया है= तथाच=नतापसैर्ब्राह्मणैर्वावयोभिरपिवाश्वभिः आकीर्णंभिक्षुकैरन्यैरागारमुपसंव्रजेत्= अर्थात—ग्रामतो बहुत बड़ाहोनेसे उसको दशा अन्ततक नहीं भी मालूम होसक्तीहै तिससे एकटोला मुहल्ला आदि शुद्ध समझे बल्कि मनुने इस वचन में मकानहीका शुद्धभाव देखना कहाहै कि भिक्षालेनेको ऐसे घरमें न जावे जो तपसी या संगिता ब्राह्मणोंसे रक्षा हो या काक आदि बहुत पक्षियों से भराहोय या जवानपट्ठे लंगाड़े आदमियों से डराहो या कुत्तोंसे रुकाहो या औरभी किसीप्रकार के भिखारियों से घिराहोय॥ मूल श्लोकमें यह भी कहिचुके हैं कि उतनाही मांगे जितने प्राणोंकी रक्षा होसके उससे अधिक न मांगै तिसका परिमाण भी मनुने दर्शाया है यथा यतोभिक्षाःसमादायमुनिःसप्तचपंचवा अद्भिःप्रक्षाल्यतत्सर्वं[illegible] अर्थात—भिक्षाका प्रयोजनवाला एकाकी मन्द करके निकालनेके उपरान्त मौन बना हुआ अर्थात (मौन) चुपसाधे हुये आठ घरमें भिक्षा या सात घरमें लेकर या नहीं मिली दीखै तो पाँचही घरसेलेकर सबको जलमें धोकर निर्धारित भागोंको गांव के भोजनकरै(वाणीका जीतना यहां यहीहै कि मीठे स्वादिष्ट अन्नकोभिक्षा काल न करे महाप्रसाद समझि के भोगै-इसीलिये मूलश्लोक में कहिचुके हैं कि भीखको लोलुपता छोड़िकर खड़ी मीठी आदि न मांगै ऐसा [illegible] मूलश्लोक में देखो॥ ५९॥

मर्यादा परिपाटी में द्रव्य शुद्धि प्रकरण के द्वारा उसके शोधन की रीति देखनी चाहिये—इसी आशय के अनुसार अगला वचन है सो देखो=यदाह मनुः=अतैजसा निपात्राणितस्यस्युर्निर्व्रणानिच तेयामद्भिःस्मृतंशौचंचमसानामिवाध्वरे (चमसदृष्टांतो पादानेनप्रयोगिकीशुद्धिर्दर्शिता इतिमिताक्षरा=अर्थात—उस यतीके पात्रहोय अतैजस धातुओंसे उपरान्त काठ आदि के परंतु निर्व्रण होय जिनमें छेद गड्हिला और कुछ न होय जिसमें मैल भरै किंतु साफ़चिकने घुटे होयँ तिनका शौच करना सिर्फ़ जलसे कि जैसे यज्ञों में चमसनामी पात्रों की चिकनाई गरम जल से या ठंडेभी जल से दूरकरते हैं (इसमें यज्ञसंबंधी चमस पात्रोंका दृष्टांत स्वीकारहोने से प्रयोगवती शुद्धि दर्शाई गई यह मिताक्षराने प्रकाश किया=मिताक्षराकार फिर कहतेहैं कि जिसके पास दूसरापात्र न होय सो भोजनभी उसी पात्रमें करै यहतात्पर्य देवलके वचनसे प्रतीत होताहै=यदाह देवलः=तद्भैक्ष्यंगृहीत्वै कांतेतेनपात्रेणान्येनवातूष्णीं मात्रयाभुंजीत=अर्थात्—उसभिक्षाको लेकर एकांतमें उसी पात्रसे या और पात्रसे भोगै मौन साधिके और नियम किये हुये अपने पेटके अनुमान भरि भोगै अधिकनहीं (इस वचन में और किसी पात्र के कथन से दूसरा पात्र भी सिद्ध होता है इसीसे मिताक्षराकारनेभी यह कहा कि जिसकेपास दूसरा न होय परंतु दूसरा पात्र पास रखने वाला कोई वचन ऐसा नहीं पाया जिससे दोपात्रों की आज्ञा समझी जाय और पहिले जहाँ संन्यास लेनेका प्रारंभ किया तहाँ केवल कमंडलका साथ होना कहा था सो जलका पात्र है यहाँ जो भिक्षा माँगने के पात्र कहे तिनमें दूसरे पात्रका प्रयोजनभी कुछ नहींहै तिससे यहां देवलके वचन में अन्यपात्रके शब्दसे ढाकपत्र आदि समझे जातेहैं कि जिससे भिक्षा माँगनेका पात्र भोजन कर्मसे जुदा न करनापरै परन्तु जिसपर ढाक पत्र आदि नहीं वह उसी भिक्षा पात्र मेंभोजन करै यह सिद्धांत ठहरा॥ यहाँ तक संन्यासी का डौल मात्र कहा गया ऐसे सन्यासी को उपासना सम्बंध जैसा नियम करना चाहिये सो अगले परिच्छेद मे देखना ॥

——०——

(अथसंन्यास प्रसंगादेव अध्यात्म प्रकरणं सविस्तरं प्रारभ्यते)

इस प्रकरण में यथोक्त १३ परिच्छेद होंगे यह याद रक्खो ॥

अथसंन्यासाश्रमारूढस्य हृदिज्ञानोत्पत्तिसाधनाय तत्कारणसमूहप्रदर्शकोऽयंपरिच्छेदः (९) नवमः॥

इस परिच्छेदमें ज्ञान के उत्पन्न करने कराने वाले नव कारणों का समूह दर्शाया जायगा जिनको समझने से संन्यासी के हृदयमें ज्ञानकी उत्पत्ति होय क्योंकि ज्ञान के उत्पन्न हुये विना यह आश्रम नहीं चलता किंतु ज्ञानही इसका मूल है॥

(यतेर्नियमाः)

विशेषकर भिक्षुक यती करके स्वातंत्र्य करने के लिये भी करनी चाहिये=अर्थात् विषय भोगोंकी अभिलाषा और अप्रिय विषयोंकाद्वेषभाव इनदोनोंसे उपजे दोषें करके कलंकित जो आशय नाम अंतःकरण चतुष्ट्य अर्थात् मनबुद्धि अहंकार चित इन चारोंमें घुसेहुये पाप कलंकों का क्षयकरना आशय की शुद्धि कहिलाती है सो प्राणायामों के अभ्यास से भिक्षुकको अवश्य करनी चाहिये अपने आत्माके स्वतः होजानेके लिये. क्योंकि साक्षात् अद्वैत आत्मा का स्वरूपज्ञान उत्पन्न होनेके लिये अंतः करणकी शुद्धिहोना बहुत बड़ा कारण है॥ ६२॥

६२ अधिकोक्तिः—ऊपर लिखी वार्त्ता से यह सिद्धांत निकसा कि विषयों में मनका राग लगना एक प्रतिबंध बडी रुकावट है तिसके मिटिजाने और तिससे उपजे हुये दोषरूपी प्रतिबन्ध के मिटिजाने से आत्माका ध्यान धारणा आदि साधन करने को स्वतंत्रता प्राप्त होतीहे यद्यपि यह सबके लिये उपकारी है तथापि भिक्षुक यती को विशेषकर ऐसी शुद्धिका अनुष्ठान करना चाहिये क्योंकि मोक्षके अधिकारियों में सबसे बड़ा प्रधान वहीहै और मोक्ष जो पदार्थहै सो अन्तः करणके शुद्धहुये बिना अन्य उपायों से मिलना बड़ा दुर्घटहै=यथाहमनुः=दह्यंतेध्मायमानानांधातूनांहियथा मलाः तथेन्द्रियाणांदह्यंतेदोषाःप्राणस्यनिग्रहात् = अर्थात् —प्राण वायुका निग्रह प्राणायाम तिसकी धारणासे इंद्रियों के दोष उस तरह जलिजाते हैं कि जैसे लोहा आदि धातुओं के धमाते हुये उनके मैल भस्म होजाते हैं—तिससे अधिकतर प्राणायामोंकी धारणासाधन कियाकरै. जिसका संक्षेप डौल १११ एक सौ ग्यारह मूल श्लोकमें और विस्तार १९८ एक सौ अट्ठानवे मूल श्लोकमें दर्शाया जायगा तहां तहां देखिलेना॥ ६२॥

इन्द्रियोंके निरोधका उपाय करना चाहिके संसारकेस्वरूपको विचारै सो आगे कहि के समुझातेहैं॥ ६२॥

(संसारस्यानित्यरूपत्वंध्येयम्)

मन में वैराग्य पैदा करने के लिये नानाभाँति गर्भों के निवास जो मूत्र और विष्ठा आदि अनेक सडांध के बीच करने पड़ते हैं सोचने चाहिये (यहां चकारके अन्वयार्थ से जनन और मरण भी जैसे कष्टों से भोगने होते हैं विचारने चाहिये) तथा निषिद्ध आचरण आदि कर्मोंके फलसे उत्पन्न जो महा रौरव आदि नरकों में गिरना रूपी (गतियाँ) चालें भोगनी होती हैं सोचनी चाहिये· तथा मनमें जो नानाभांति की पीड़ा और चिंतारूपी आंव उत्पन्नहुआ करती हैं सोचनी चाहिये· तथा शरीरों में ज्वरातिसार आदि बहुधारोगभेदोंसे व्याधें लगी रहतीहैं सोचना चाहिये·तथाक्लेश भी पाँच प्रकार के सदा लगे रहितेहैं (अविद्याऽस्मिता रागद्वेषा भिनिवेशाःपंचक्लेशाः)अर्थात्सबसे पहिलाक्लेश अविद्याअज्ञानहै जिसका स्वरूप लक्षण चार्वाकोक्ति मे देखना·दूसराक्लेश अस्मिता अहंता ममता रूपी मोह कहाताहै·तीसराक्लेश राग है जो रग़बत या प्रीति या अनुराग भी कहाता है·चौथा क्लेश द्वेषहै जो रागसे विपरीत होताहै कि अप्रिय चीजों को न चाहै.पाँचवां क्लेश अभिनिवेश है जो प्रायः स्त्री या बालक या अपण्डितमें रहताहै इसकास्वरूप अविक्रोक्तिमें देखना.इन पांचों से सर्वदाक्लेशहीउत्पन्नहोतेरहितेहैंतिससे इनका नानाभांति केअनुभवतथा सोचनाचाहिये. तथा जरानाम है बुढ़ापेका वह सबको आनि घेरताहै जिसमें सब कपाल कांपता और ढीली होजाती और खाल में सलवट विन्दु बनभी पड़जाते हैं और इसी जराके प्रचार से मनुष्यों के रूपमें भी विपर्यय अर्थात् उलटापन कुरूपता कुबड़ापन आदि हो जाता है विचारना चाहिये (६३) तैसेही यह सोचना चाहिये कि घोड़ा गदहा शूकर सर्प आदि नानाभाँति की योनियों से जन्म लेना होना

उपस्थितहै वही परब्रह्मरूपी परमात्मा के बीचमें संस्थित होरहा है यह देखै अर्थात् सर्वत्र सबजीवोंमें ऐसाही प्रतीत करलेवै ॥ ६३ ॥ ६४ ॥

६३ अधिकोक्तिः – ऊपरकी वार्त्ता में यह श्रुति भी प्रमाण देती है कि (आत्मा द्रष्टव्यःश्रोतव्यो मंतव्यो निदिध्यासितव्यः--अत्रद्रष्टव्यइति साक्षात्काररूपंदर्शनमनूद्य तत्साधनत्वेन श्रोतव्यो मंतव्यो निदिध्यासितव्य इति श्रवण मनन निदिध्यासनानि विहितानीति मिताक्षराच) अर्थात्--आत्मा जो साक्षात्कार ब्रह्मका स्वरूप है वह देखना चाहिये सुननाचाहिये मानना और मनन करना चाहिये निदिध्यासित करना अर्थात् ध्यानयोग में लगाना चाहिये यह श्रुति ने समझाया--इसपर मिताक्षराकार भी यह कहिते हैं कि साक्षात्कार देखना बहुत कठिन है तिससे उसीके निमित्त में ये तीन उपाय श्रुति ने दर्शाये हैं कि १ आत्मा के व्याख्यान श्रवण करै २ मनन करै ३ निदिध्यासन अर्थात् ध्यानयोग में धारणा करै--परन्तु--यहाँ पर ध्यानयोग कहिने से प्राणायामों की धारणा मत समझो बल्कि जिसध्यान योगका चर्चायहां कियागया तिसका अर्थ उसके स्वरूप से निदिध्यासन जानना· निदिध्यासन के दो तीनक अर्थ होते हैं एक तो अपरायत्त बोध जो केवल अपने ज्ञानही के अधीन बोध होय सो निदिध्यासन कहाताहै (अपरायत्तबोधोहि निदिध्यासनमुच्यते) दूसरे सब प्रकार के ध्यानरूपी विचारको निदिध्यासन कहिते हैं जो श्रवण और मनन दोनों के फलसे आत्मज्ञानका चिन्तवन करते समय ध्यान लगायाजाताहै (ताभ्यांनिर्विचिकित्स्येर्थेचित्तस्यस्थापितस्ययत्एकतानत्वमेतद्धिनिदिध्यासनमुच्यते) इसी तरहका का यह भी तात्पर्य है कि आत्मा संबन्धी जो कुछ व्याख्यान गुरु के मुख से पढ़ते सुनाहोय वही श्रवण कहाता है फिर सुनेहुये को अच्छी तरह साम्यतामें समझ के विचार सहित प्रमाण मानिकर स्वीकार कियाहोय वही मनन होताहै फिर उसीको एकाग्र चित्त से निरंतर ध्यान लगाये सत्यभाव से धारणा करै (धावै यही निदिध्यासन कहाजाता है

धीः धृति दम संयतेन्द्रियता विद्या यह सब धर्म कहा है=६६=अर्थात—संन्यास आश्रम के चिह्न जो दंड कमंडल आदि कहिचुके वे चिह्नही उसके धर्मका विशेषकारण कुछ नहींहैं क्योंकि ये चिह्न तौ करनेमें सुगमता से धारण होसक्तेहैं कुछ कठिनता इनमें नहीं है (अर्थात उन चिह्नों के होतेहुये बीच में इस आश्रम के धर्मका स्वरूप अपने सूक्ष्म रूपसे दूसराहै सो कहते हैं कि) इसकारण से यह चाहिये कि अपनेको जो जो बातें अपथ्य प्रतीत होतीहैं दृष्टांत जैसे किसीने खोटा वचन सुनाया सो अपने हृदय में विषके तुल्य जाकर लगता है यह अपथ्य ठहरा इसी प्रकार औरभी अनेक बातें समझ लेनी सो सब औरों के साथ न करै बल्कि और जो कोई अपने साथ कुछ खोटाही आचरण करै सो सब सहिलिया करै तब इस आश्रम का धर्म ठीक होता है तिसके नियम आगे देखौ॥ ६५ ॥ सत्य बोलै पर ऐसा सत्य न बोलै जिस से किसी के हृदयको दुःख वा उद्वेग पैदा होताहो अस्तेय पराया द्रव्य न हरनेका नियमराखै क्रोध को अपने स्वभावही से निकालिडारै कि जो कोई अपकारकरै तिसपरभी क्रोध न लावै ह्रीः लज्जा को अपने स्वभाव में बनीराखै किंतु संन्यास के नियमों से विपरीत आचरण करिके निर्लज्ज न बनै शौच अपने शरीर और आहारकीभी शुद्धिपर ध्यान राखै धीः बुद्धि अर्थात हित अहित दोनों के विचार में बुद्धि को लगा राखै धृति धीरज ऐसे समय पर चाहिये कि जब अपनी चहीती वस्तु में वियोग होय या अप्रिय से संयोग होजाय तभी चित्तविचल होता है तिसको विवेक से समझाय के ठिकाने करै कि जैसा पहिले सावधान होरहाथा तैसा होजाय दम अर्थात मदका त्यागदेना दम कहाताहै इसकीभी भावनाकरै संयतेन्द्रियता अर्थात सम्यक् प्रकार से इंद्रियों का यत्न वशमें राखना यहांतक कि जिन विषयों की तुच्छता से नाम लेकर प्रतिषेध उनका नहीं किया गयाहो तिनमेंभी प्रवृत्त न होना चाहिये विद्या अर्थात अध्यात्म विद्याका अभ्यास करै (अविद्याको निज बुद्धिमें न घुसने देवै) जिससे आत्मज्ञान प्राप्त होताहै इन्हीं सब नियमों की भावना से संन्यास आश्रम का पूरा धर्म सिद्ध होता है॥ ६६ ॥

६५ अधिकोक्तिः—ऊपर की व्यवस्था से योगीश्वर ने यह तात्पर्य दर्शाया है कि दंड कमंडल आदि ऊपरके चिह्न जो सबलोग देखि सक्ते हैं तिनके होते हुये भीतर भी अन्तःकरणमें सत्य बोलना आदि इतने गुणहोने चाहिये कि जिनके होनेबिना केवल ऊपरले चिह्नों से संन्यास नहीं सिद्ध होताहै परन्तु (नाश्रमः कारणं) इनके इस पदका यह तात्पर्य नहीं है कि दंड कमंडल आदि चिह्नों को न धारण करै

परदर्शाईगई कि जैसा ६४ चौंसठि मूलश्लोक उत्तरार्द्ध में कहिचुकेहैं कि (ध्यान के योगसे अपनेजीवात्माको परमात्मामें बैठादेखै) सो इसकथनसे दोनोंमें भेदका नहोना यद्यपि दर्शाया गया तौभी वहाने मात्रका भेद सिद्धहोता है क्योंकि जो निपट भेदही न होता तौफिर अभेद किसका सिद्धकियाजाता जब कि भेदकुछ थोडा बहुत प्रतीत होता मौजूद है तब उसीका अभेदभी समझाना परा तिससे भेद मानना भी यद्यपि अनर्थक नहीं है तथापि संन्यास धर्म्मपर आरूढ योगीजनोंको अभेदहीकीउपासना करनीयोग्यहै यह तात्पर्यठहिरा--अर्थात योगीजनको चौंसठिमूलश्लोकपर यहशंका न करनी चाहिये कि (आत्मामें जीवात्माको बैठादेखै इससे आपही दो वस्तु देखि परती हैं कि एकमें दूसरे को बैठादेखै) किंतु शंका दूरकरने को यह ६७ सरसठिमूल श्लोक देखै कि एकही वस्तुके दो भेद होगये सो उसको, उसीमें मिलाय देनेसे भेद नहीं रहिसक्ताहै ॥ इसी सरसठिके मूलश्लोकपर दूसरे प्रकारसे भी अर्थ कियाजाता है कि--योगीजन कदाचित यह शंका करनेलगें कि. सुषुप्ति और प्रलय इन दोनोंके समयपर सभी जीवात्मा जो क्षेत्रज्ञ भी कहाते सो ब्रह्महीमें प्रलीन (लय) होजाते हैं तिससे आपही कुछ भेद नहीं रहिता तो फिर यह चौंसठि मूलश्लोकमें किसके लिये आत्माकी उपासना विधि कहीगई--यह शंका दूरकरने को समाधान रूपी सरसठि का श्लोक है कि—हाँ—यद्यपि प्रलयके समयपर सूक्ष्मरूप से सबजीव उसी ब्रह्म में लयहोतेहैं तथापि उसी ब्रह्मके सकाशसे अविद्याकी उपाधि रूपी भेदसे जुदा२ पाइ के अति सूक्ष्म रूपी असंख्य जीवात्मा फिर दुबारा पैदाहोते हैं कि जब जब कभी दूसरी सृष्टि रची जानेका समय उपस्थित होताहै- तिस पीछे वे सब जीवात्मा कभी निज निज कर्मों के वशीभूत होके स्थूल शरीराभिमानी आकर होतेहैं अर्थात निज कर्मोंकी प्रेरणा से इह संसार विनाशमान मे आकर स्थूल कलेवर पाते हैं कि जैसा देह सबके देखने में आताहै ।

समभ्तोजाय ॥ ० ॥ एकशंका और भी उत्पन्न होनेलगी कि ब्रह्मके प्रकाश से उड़ेहुये असंख्यजीवात्माजबतक सूक्ष्मदेहवाले रहाकरतेहैंतबतकउन्हेंकोईदेखिनहींपाता क्या उससेभी अतिसूक्ष्म होतेहोंगे जो मकानकेझरोखेसे सूर्यकीकिरणोंसे असंख्याणु देखिपरते हैं--सुनौ जीवात्माके सूक्ष्मदेह यद्यपि परमाणुकी अपेक्षा बहुत बड़े हैं तौभी मनुष्य के नेत्रोंपर ईश्वरकी मायारूपी अज्ञानकापर्दा रहाकरता है जिससे उसे देखतेहुये भी देखिनहीं सक्ते हैं अर्थात असंख्यजीवात्मा यद्यपि आंखोंके आगे उड़ाकरतेहैं तथापि प्रायश अतिमूढ़ तो देखिही नहीं पाते किन्तु विरले विज्ञानी जो उनकारूप देखते हैं वे भी कुछ विवेक नहीं करसक्ते हैं कि यह कितना बड़ा और सुखरूप कैसा है क्योंकि प्रायश जीवात्मा सूक्ष्मरूपसे मनुष्यों तथा सबजीवोंके समीपही कल्पांतरसे विहार करते फिरते और स्थूलशरीर धारियोंके आचरण टटोलते रहितेहैं कि हमको किस देहमें प्रवेश करना चाहिये किसमें अधिक सुभीता होगा तहांभी निजकर्मोंके वशीभूत मायाकी प्रेरणासे जिस प्राणीके स्त्रीगमनपर मनका मोह लगाते हैं उसी योनिके गर्भोंमें (इसीमानसकर्मकेप्रभावसे) जाकर जन्मलेते हैं (गर्भोंमें प्रवेश होनेका प्रकार आगे७० सत्तरिके श्लोकमेंदेखो) जबतक गर्भोंमें प्रवेशनहींकिया तबतक सू-क्ष्मरूप उनका ज्ञानीपुरुष को सिर्फ इतना देखि परता है कि आकाशकीओर अपने सन्मुख दृष्टिथांभनेसे आकाशी वर्णके निर्मल दिखाई देनेमें जो सांपकी कांचुली समान हलुके और लम्बे लच्छेदार अनेक भांति के चिन्ह देख उड़ते वा [illegible] प्रतीतहोते हैं यदि उनके ऊपर किंचितभी दृष्टिजमाइये तो [illegible]

के प्रभावसे करने लगताहै—इसका यहदृष्टांतहै कि (यद्यपिआत्मा आपतोअन्वय१ व्यतिरेक२ (मिलाप और जुदाई) इन दोनोंसे निरपेक्ष वेवास्ता सदा रहिताहै तथापि इस कलेवरकी रियाज़त से अन्वय और व्यतिरेक दोनोंका स्वीकार करने लगताहै अर्थात् जैसे जन्मलेतेसार दूधपीलेना यह मिलापनामका अन्वय ठहरा तिससे तृप्ति मानिके प्रसन्न होजाना या दूध न मिलने के व्यतिरेक (जुदाई) से तृप्ति न मानिके रोने लगना इत्यादि वहुत कामों को समझलेना ऐसे ऐसे कुछ कर्म्मों को पैदाहोने के साथही आत्मा अपनी चिच्छक्तिके प्रभावसे स्वतः करनेलगता है क्योंकि उसी चिच्छक्ति के प्रभाव से पहिले कल्पांतर जन्मों का अनुभव उसकी भावना में भावित वना रहिताहै तिससे मामूली कामोंका तत्काल वोध होआताहै-इनके सिवाय कुछ कुछ ऐसे भी निरपेक्ष कर्मोंको स्वभावही से करने लगताहै जिनकर्मोंसे उसका कोईसा प्रयोजनका संबंधनहीं दृष्टांत जैसे चीटीको उठाकर मुहमें रखलेना यामट्टी खाइलेना इत्यादि वालस्वभाव के वहुधा कामों को समझि लेना-तहाँ स्वभावही से करताहै अर्थात् वाल चपलताकी स्वतन्त्रता से करताहै यह अर्थ जानना—इनके सिवाय वड़ी अवस्थाभरमें धर्म तथा अधर्मरूपी दोनों भाँतिके वहुधा कर्म पहिले जन्म के अभ्यास से वशहोकर किया करताहै ॥ ६८ ॥

(समवाय्य·समवायी) इन दोनोंका निमित्त आपहोताहै इनमें समवायी तो पुरुषका शरीर जानना जो२५तत्त्वोंके समवायमिलापसे बनताहै१ और समवाय्य उन्हींतत्त्वों को जानना जो पंच महाभूत आदि चौबीस२४तत्त्व होतेहैं कि जिनका समवायमेल होकर शरीर बनताहै २ तीसरा क्षेत्रज्ञजीवात्मा जो चौबीसतत्त्वोंके साथमें पचीसवां तत्त्व माना जाता और वही इन चौबीस तत्त्वों का समवाय होसकने में निमित्तरूप होताहै ३ तिससे वह आपही इन तीनों में तीन विधकारण है तथापि कार्यों के समूह में वह आपनहीं रहिता है इसीलिये मूल श्लोकों आदि में निमित्त यह लक्षण पहिले कहागया क्योंकि जिस हेतुसे इतने लक्षण उसमें औरभी हैं कि·अक्षर अविनाशी·कर्ता भी वही आपहै क्योंकि·बोद्धा होनेसे अर्थात् जीवके उपभोग तथा सुख दुःखोंके हेतु भूत जो अदृष्टनामक परजन्मके कर्मआदि तिनका जानने समझनेवाला भी वही आपहै तथा·ब्रह्मस्वरूप है अर्थात् जगत्का दृंहक विस्तार करसकनेवाला भी आपहै किन्तु दूसरे में यह शक्ति नहीं क्योंकि·गुणी है अर्थात् निर्गुण भी नहीं जिससे तीन गुणवाली शक्तिरूपी अविद्या प्रकृति जो प्रधान और अव्यक्त नामोंसे प्रसिद्धहै सोई उसके अधीन एकदासीहै (तिससे यद्यपि आप निर्गुण भी कहाता है तथापि अपनी शक्तिरूपी मायाके द्वारा सतोगुण आदि तीनों गुणका वास्तेदारहै) तो भी केवल मायाही इस जगत्का नहीं कारण है क्योंकि·आत्मा आपही अपने वशीभूत स्वतंत्रहै कुछ मायाके वशमें नहीं क्योंकि·वह अजहै उसकी उत्पत्ति किसी ओरसे नहीं·यद्यपि ऐसे अजन्माका जन्म साक्षात्कार होना तो नहीं सिद्ध होताहै तथापिसंसारीशरीरग्रहणकरनेमात्रको उपाधिमेंयहकहाजाताहै किजन्मलिया॥६९॥

भला किसमार्गसे किनप्रकारोंसे शरीर ग्रहणकरताहै सो सब आगेसमझातेहैं ॥

(शरीरग्रहणप्रकारा:)

सर्गादौसयथाऽऽकाशंवायुंज्योतिर्जलंमहीम् सृजत्येकोत्तरगुणांस्तथाऽऽदत्तेभवन्नपि ७०

अर्थः—वहजैसे सर्गकी आदिमें·आकाश·वायु·तेज·जल·धरिणी. इनको एकोत्तर गुण सहित सृजा करताहै तैसे आपसंसारी होतेहुयेभी इनको साथलेता है=अर्थात्-वह आत्मा परब्रह्म जब जगतकी उत्पत्ति किया चाहताहै तब सबसे प्रथम आकाश आदि पाँचो महाभूतरूपी सामग्री प्रघट करताहै कि इसी मशाले से सब संसारबनता रहाकरैगा (तहाँ इन पाँचो में पांचगुणभी एकोत्तर अधिक संख्यासे निरूपणआप करदेता है अर्थात्आकाशमें शब्दही एक गुणहै·पवन में शब्द और स्पर्शभी दो गुण होतेहैं·अग्नि तेजमें शब्द और स्पर्श और रूपभी ये तीन गुणहोतेहैं·जलमें शब्द और स्पर्श और रूप और रसभी ये चारिगुण होतेहैं·धरती में शब्द स्पर्शरूप रस और गंधभी ये पाँचो गुणहोतेहैं) जैसे सृष्टिके प्रारंभ समय पाँचो गुणसहित पाँचो महाभूत रूपी इन्हीं तत्वोंको परमात्मा रचिलेता है तैसे जब आपही जीवरूप होकर संसारी शरीरों में बैठना चाहताहै तबवह किसी गर्भमें जाकर अपने रहिनेका शरीरबनातेहुये भी अपने रचे पाँचो गुण सहित पांच तत्वोंमेंही कुछकुछ मशाले निज अनुमानके योग्यलेकर गर्भमें घुसता और शरीरको बनाता रहाकरताहै ॥ ७० ॥ धरती आदि पांच महाभूतों से क्योंकर शरीर बनता होगा यह वृत्तांत अब कहिते हैं ॥

(पृथिव्यादीनांशरीरारंभकत्वं)

पहुंचती हैं तिनकोलेकर जीवात्मा गर्भवनाताहै (क्योंकिसभी शरीर वल्कि सवसंसारही पंच महाभूतोंसे वनाहुआ होता और शरीरों में सदाही येपांचतत्त्व रहा करते हैं जिनसे शरीरों की मरम्मत होती रहतीहै) भला माता पिताके शरीरों में किसमार्गसे मट्टी आदि पाँचो तत्त्व पहुंचते होंगे सो समझाते हैं कि—संसार मे यज्ञों के यजमान लोग जो घृत आदि उत्तम पुरोडाशोंकी आहुतें प्रायः अग्नि में छोडतेहैं तहां अग्नि और सूर्यमें कुछ भेद नहीं किन्तु सूर्यही अग्निका मुख्य तेजोरूप होताहै तिससे अग्निका तृप्त करना भी सूर्यहीका तृप्तकरना सिद्धहुआ तिसका यहडौलहै कि आहुत अग्नि में जलिकर उनका सारभूतरस उडिकर सूर्यलोकमे पहुंचताहै उसीसे सूर्यकी तृप्ति और तेजोवलकी वृद्धि हुआ करतीहै फिर कालचक्रके वश होकर समय उपस्थित होनेपर सूर्यके पाससे घृतादि हविष्योंके पहुंचेहुयेरस परिपाक होजानेसे वर्षा होने लगतीहै फिर वही वर्षा औषधियाँरूप होजातीहै (औषधिनाम से सभी वस्तु जो मनुजीवोंके खानेमें आसक्तीहैं समझनीचाहैं जो धान आदि अन्नहों या मोठिपीपरि आदि या लोन घी तेल आदि या मांसादि कुछही क्यों न हो (सब इसवास्ते चीजमें कुछकुछ पांचोंतत्त्व रहाकरते हैं वही) सब औषधि कहातेहैं और औषधिका अन्नभी नामहै) वहीअन्न जीवोंके पेटमें जाके रसपैदाहोजाताहै तहां रसहीका रूप रंग वदलिके रक्त फिर उसी से गाढाहोके मांस फिर मांसकी दशा वदलिजानेसे मेदा और मेदासे गाढापनहोनेकरि हाड फिर हाडोंका परिपाक होके उनके भीतर मज्जा फिर मज्जाकापाक होनेसे शुक्र अर्थात पुरुषके वीर्य पैदाहोता और (स्त्री के शरीर में गुप्त स्थान है तिस उसके योनि स्थानमे रहनेवाला रक्तही वीर्यके तुल्यकाम देताहै (आर्तवनाम सूर्य नर्मदाकाया जाताहै इसवातका विशेष व्यौरा१२१ ब्रह्मावैवर्तक आदि ग्रन्थों में देखना चाहिये परिच्छेद से ॥ ७१ ॥

रहा करता है उसीसे गर्भका शरीरभी बनिजाता बल्कि शेष चारों तत्त्वभी उस गर्भ में जितनी चाहीजायँगी सो सब स्त्रीके शरीर में अधिकता से मौजूद हैं केवल वीर्यही में इनतत्त्वोंको ढूंढनेकी अपेक्षा शेषनहीं क्योंकि पुरुषकावीर्य और स्त्रीकारक्तदोनों मिलकर गर्भका पहिला अंकुरजमताहै सो अगिलेकई श्लोकों में समझिलेना=कदाचित=यहशंका आरोपित कीजाय कि स्त्रियोंके उदरभीतरजीवात्मा अपनाशरीर जो बनाता है सो यह नवेहुये कामोंका करना बहुत सुगम है कि उसी पहिले शरीर का मसाला लेलेकर अपनाघर बनानेलगा·किन्तु जब एक भी स्त्री या पुरुषोंके शरीर पहिले नहीं थे केवल सूक्ष्म रूपी जीवात्माही असंख्य फिरते होंगे तब किसके रक्त और वीर्यसे बनाताहोगा--सुनो धरतीसे आकाशतक पंचमहाभूतभी पहिले निपटनहीं थे जिस परमात्माने उन पाँचोंकी उत्पत्ति एक साथही अपनी इच्छासे प्रकाश करी तिसको स्त्री पुरुष का एक जोड़ा अपनी इच्छा से उत्पन्न करदेना क्या दुर्घट है कि जिसके द्वारा सब जीवात्मा अपने शरीरों को सुगमतासे बनानेलगे इसके लिये मनुस्मृतिमें स्वायंभुवमनुकी उत्पत्ति को देखो पहिले उसीसे सब सृष्टि पैदा होनेलगी सो भी यह चर्चा केवल मानुषी देहों का होरहा है इसके उपरान्त सृष्टिकी दशा पर भी ध्यान करो कि दीमक आदि लाखों प्रकारके जंतु एक साथही धरतीको फाड़ के उत्पन्न होते हैं वे कहाँ आते हैं क्या उनके भी उतने माता पिता नीचेबैठे हैं जिससे जीवात्मा को उतने शरीर धारण करनेकी सुगमता है–उसको सभी दशामें सुगमता है कठिनता उसकोकहींभी नहीं क्योंकि जब सर्वशक्तिमानहै तो फिरचाहै तबचाहै जैसेप्रकार से करसक्ता है उसकेलिये कोई सा एक नियम नहीं कि उसीप्रकार बन (कर्तुमकर्तुं अन्यथाकर्तुं समर्थः महेश्वरः) तिसमें कोई शंका करना कुछ आवश्यक नहींहै-जिनप्रकारोंसे गर्भमें जीवात्माकाम करताहै सो आगेके सूत्रश्लोकमेंकहो ३३॥

साथही किसी गर्भ में प्रवेश करते हुये यह सब सामग्री इंद्री आदि उसके आत्मा ही आपसेआप पैदा होजातीहै—अर्थात्—ज्ञानेन्द्री कर्मेन्द्रीपाँच पाँच और ग्यारहवा मन भी जो सबका प्रेरक अधिष्ठाता है॰ प्राण जो पाँच प्रकार की प्राण वायु जुदी२ शरीर में स्थान भेदसे रहती सो पंच प्राण कहाते हैं नाम उनके प्राण १ अपान २ उदान ३ समान ४ व्यान ५ ये पाँच हैं और॰ ज्ञान जो पद पदार्थोंका बोध करानेवाली एक वृत्ति कपाल में होतीहै उसके भी अनेक शाखा भेद होते हैं॰ आयु जोएक प्रकार का काल नियम है कि इतने कालतक यह शरीर बना रहेगा. सुख जो आनंदरूपी एक गुण कहाताहै॰ धृति यहचित्त की स्थिरता कहातीहैं. धारणा यह प्रज्ञा औरमेधा भी कहातीहै अर्थात् सरस्वती रूपा बुद्धि और उस बुद्धिको धारणा कहते हैं जिसकी सुनी समझी बात कभी न भूलै॰ प्रेरणा अर्थात् मनका यह धर्महै कि दशौं इंद्रियों पर अधिष्ठाता बनके उन्हें उनके जुदे कामों में लगाता या हटाताभी रहताहै मनकी प्रेरणा बिना इंद्रियां अपने भले बुरे कामों को नहीं करसक्ती हैं॰ दुःख यह प्रसिद्धहै कि चित्त को उद्वेग घबड़ाहट दिलानेवाला होताहै यह भी जितना भोग्यहो सो गर्भ के साथही आकर शरीर में प्रवेश होता है॰ इच्छा यहएक प्रकार की वृत्तिअंतःकरण में रहिती है उन बातों या चीजों की चाहना करवाती है जो चहीती अबतक नहीं मिलीं और मिलचुकीं तिनकी बारम्बार अधिक मिलनेको चाहना किया करतीहै॰ अहंकार यह भी अन्तःकरण में रहनेवाला एक वृत्तिहै जो अपने स्वरूप का बोध कराताहै कि मैं इस प्रकारका हूंप्रयत्न यहपुरुषका गुण कहाताहै कि व्यवहारोंकी क्रिया करने में युक्ति सोचिके प्रवृत्तहोय॰ आकृति यह शरीर का आकार डीलडौल ओछापूरा आदि जो कुछ हो॰ वर्ण यह देह का रंगहै गोरा काला आदि जो कुछ हो॰ स्वर यह वाणी का गुण है और गान विद्या में षड्ज ऋषभ गांधार आदिनाम तथा स्वरूपों का विस्तार है॰ द्वेष यह बैर का स्वरूपहै॰ भव यह पुत्रपौत्रपशु आदिकी वृद्धि कहाती जितनीउसके प्रारब्धमें आई हो॰ अभव उससे विपरीतहै कि दास पशु पुत्रादि की समृद्धि न होनीजैसी प्रारब्धमें आई हो॰ यह सबसामग्री इसीअनादि नित्यआत्मा के शरीर इच्छा करतेहुये आत्म जनित होताहै अर्थात् पहिले जन्म कर्मफलों की वासना से उत्पन्न होता वह साथही आया करताहै ॥ ९३ । ९४ ॥

ये सबचीजें जिस देश जिस क्रमसे पैदाहोती हैं सो अगिले श्लोकों में दर्शाते हैं॥

— — — —

(संयुक्तशुक्रशोणितस्यकाय परिणतिक्रमः)

प्रथमेमासिसंक्लेदभूतोधातुविमूर्च्छितः । मास्यर्बुदंद्वितीयेतुतृतीयेंगेन्द्रियैर्युतः ७५
आकाशाल्लाघवंसौक्ष्म्यंशब्दंश्रोत्रंबलादिकम् । वायोश्चस्पर्शनंचेष्टांव्यूहनंरौक्ष्यमेवच ७६
पित्तात्तुदर्शनंपक्तिमौष्ण्यंरूपंप्रकाशिताम् । रसात्तुरसनंशैत्यंस्नेहंक्लेदंसमार्दवम् ७७
भूमेर्गंधंतथाघ्राणंगौरवंमूर्त्तिमेवच । आत्मागृह्णात्यजःसर्वंतृतीयेस्पंदतेतत. ७८

अर्थः—गर्भ के पहिले महीनाभर (छठा धातु रूपी चेतन जीवात्मा) आप धातु विमूर्च्छित (अर्थात् पृथिवी आदि पाँच धातुओंमें दूध पानीकी तरह परस्पर मिला) होके अच्छा क्लेद भूत अर्थात् गीलाही ढलकसा रहाकरताहै कड़ापनको नहीं पकड़ता फिर—दूसरे महीना में अर्बुद होजाताहै अर्थात् कुछकठिन कुछ कोमल मांसकी पिण्डीरूप कीतरसी होजाती है—तीसरे महीने में अंग और इन्द्रियों से भी युक्त होता है (अर्थात् धड़के सिवाय मूड़ और चारोंहाथ पैरों के चिह्न मात्र येही पांच अंग उपजि आते और इन्द्रियोंके आकारकेवल गर्भके भीतरसे उभरनेमात्र लगतेहैं तिनका ब्यौरा अगिले श्लोक से समझो ॥७५॥(आत्मागृह्णाति)आत्मा ग्रहण करताहै यह अठत्तरिके श्लोक वाला पद सबके साथ सम्बन्धकरलेना)किन्तु इसीतीसरे मासमें इतने काम होतेहैं—आकाशधातुके हलुकापन प्रभावसेगर्भमें लाघव हलुकापन फुर्ती उत्पन्न होतीहै और उसी आकाश के प्रभावसे सूक्ष्मता भी होतीहै

रहिकर भोजनका स्वाद बताया करता है और उसी जल धातुसे अंगोंमें शैत्य ठंढापन और स्नेह जो वसाआदि चिकनाई देहके भीतर हुआ करती हैं तथैव चिकनापन जो देह केऊपर दरकीलीखाल होजाती है और उसी जल धातुसे समार्दवंक्लेदं अर्थातको-मलतासहित गीलापन भी इसी तीसरे मासमें उत्पन्नहोताहै ॥ ७७ ॥ एवं भूमिधातु के प्रभावसे गर्भ के भीतर तरह तरह के गन्ध तथा घ्राण जो सूंघनेवालीइन्द्री नाकमें रहिती है तथा गौरव अर्थात चूतर आदि कुछ अंगों का विशेष भारापन तथा मूर्ति अर्थात कठिनता कड़ापन और देहका आकार डौल भी इसी तीसरे मासमें यह सब आत्मा आपही ग्रहण करताहै अजन्मा होतेहुये भी—ततःस्पंदते अर्थात तिससे आगे चौथे मासमें कुछ कुछ हिलताचलता है ॥ ७८ ॥=७५ । ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥

७५ अधिकोक्तिः—पचहत्तरिका श्लोक देखो मांसकी पिण्डी भी होजाती कही तहाँ यह सिद्धांत नहीं है कि दूसरा महीना लगतेसार एकही दिन में पिण्डी बन जायगी अर्थात क्रमक्रम से तीसदिन में सूखतेसूखते कठिनताको पहुँचती है- यथाह सुश्रुतः=द्वितीये शीतोष्मानिलैरभिपच्यमानो भूतसंघातोघनोजायते—अर्थात—सुश्रुतने कहाहै कि दूसरे महीनेमें नारीके पेटमें रहिने वाले ठंढे गरम दो भांति के पवनों के झकोरे लगिलगि पकता सूखताहुआ पूर्वोक्त महाभूतोंका दलकमा समूह क्रमक्रमसे कड़ापन पकड़ लेताहै(दो तरहका वायु कहा तिसका यह तात्पर्यहै कि नारीके उदर में वात पित्त कफ तीनों जो रहिते हैं तिनमें पित्तहै अग्निका रूप और कफ जलका रूप ठंढा होता है तहाँ वातजब कफकेसाथ मिलाप करताहै तभी ठंढा और अग्नि रूपी पित्तसे मिलापकरताहै तब गरम होजाताहै तिसके दोनों भांति के ठंढे गरम झकोरे लगने से गर्भगाढा होजाकर पिण्डीबनतीहै) इसी हेतुसे वात पित्त कफ तीनों उसी गर्भ को मजबूत करनेवाले सहायक रहिहैं इसका प्रमाणभी आगेलिखेंगे देखो

अंग पतरा ढरकना होय सो नव जलही का गुण जानना तथा जीवों के देह में जो शुक्र वीर्य होताहै सोभी जलका गुण जानना ४ ॥ तथैव धरती के मृत्तिका तत्त्व में गुणके जानने वालों ने इतने गुण कहे हैं कि· गन्ध दोनों भांतिका चाहे सुगन्ध वा दुर्गंध होय·घ्राणेन्द्री जो गन्धका पहिंचाननेवाले नाकहै·स्थौल्य जो शरीर या किसी वस्तु में मोटापन देखिपरै·काठिन्य करीपन·गौरव भारापन ये धरती मे होते हैं ५ ॥ (जहाँ वातके गुणकहे तहाँ रौक्ष्य भी समझना कि रूखा पन वायु का गुण होताहै जैसा अथोक्त गर्भोपनिषत्के वचन में देखो—शौर्यमैर्यरौक्ष्यप्रापत्त्यौप्यायभाजिगानां संतापवर्णरूपेन्द्रियाणि तैजसानि इति) यह सब तीसरे महीनामें उत्पन्नमात्र होता है अर्थात् इन्हीं बातों का प्रकाश पूरा चौथे मासमें जाकर होताहै (तस्मात्तर्गर्भमासि चलनादावभिप्रायंकरोतीति शारीरकेपि) शारीरक शास्त्रमें भी यह कहाहै कि गर्भ तीसरे से आगे चौथेमासमें गर्भचलने उछलने आदि सबके अभिप्राय प्रकट करनेलगता है·इसी आदि शब्दसे वे बातें भी समझनी जो ८० अस्सी की अभिलाषा में भाषा-प्रकाशके शारीरक द्वारा लिखी जायेंगी—इसीलिये योगीश्वर ने अठत्तर ७८ सत श्लोक के अंत में (स्पंदनंततः) यही कहा है कि ततः तीसरे के बाद चौथे मास में फरकने लगता है--इसका विशेष ब्यौरा अस्सी मूल श्लोक वाली अभिलाषा में समझलेना ॥ ७५ । ७६ । ७७ । ७८ ॥

अब चौथे महीना को आदि लेकर महीनों की व्यवस्था अगिले श्लोकों से प्रारम्भ करते हैं॥

(चतुर्थ मासादेः)

स्थैर्यंचतुर्थेत्वंगानांपंचमेशोणितोद्भवः। षष्ठेवलस्यवर्णस्यनखरोम्णांचसंभवः ८०
मनश्चैतन्ययुक्तोसौनाड़ीस्नायुसिरायुतः। सप्तमेचाष्टमेचैवत्वङ्मांसस्मृतिमानपि ८१
पुनर्धात्रींपुनर्गर्भमोजस्तस्यप्रधावति। अष्टमेमास्यतोगर्भोजातःप्राणैर्वियुज्यते ८२
नवमेदशमेवापिप्रबलैःसूतिमारुतैः। निःसार्यतेवाणइवयंत्रच्छिद्रेणसज्वरः ८३

अर्थः—चौथे मास भरमें उन्हीं अंगों की स्थिरता होतीहै कि जिन अंगों का समूह तीसरे माससें उत्पन्न होचुका अर्थात उस महीनासें केवल अंकुर मात्र उपजे और इंद्रियों के सूक्ष्म रूप गर्भके भीतरसे उत्पन्न हुयेथे वही सब यहाँ आकर स्थूल हुये. इसीसे हलना चलना उछलना आदिभी इस चौथे मासमें होताहै—पाँचवें मास गर्भ के शरीर में लोहू की उत्पत्ति होतीहै—छठे मास वल का वर्णका नख रोमाओं का कुछ कुछ संभव होआताहै (चपुनः) और ॥ ८० ॥ इसी छठे मासमें यह गर्भ मनके चैतन्य भाव से चेतना से भी युक्त होता और नाडीं· स्नायुनसें· सिरा. इनसे सातवें में युत होता हुआ सातवें और आठवें दोनोंही से त्वचा· मांस की मज़बूती और स्मृति यादगारी वाला होजाताहै ॥ ८१ ॥ तहाँ आठवें मासमें उस गर्भका ओजस् अर्थात उसके प्राणों का वल स्मृति में आकर अपने को घिरा रुका देख देख फिर धात्री को फिर गर्भ को प्रकर्ष से दौडता है तिससे आठवें मास में जन्म पाया गर्भप्राणों से जुदा होजाता है—अर्थात यहाँ धात्री नाम (धरती और जननी दोनों का होते हुये भी) धरती को जानना और (ओजस् प्राणों का वल होतेभी) उसी गर्भ का रूप ओजस् जानना क्योंकि प्राणवल भी उसीके भीतर होताहै· तिससे खुलासा यह अर्थहै कि गर्भ अपनी स्मृति और प्राणों का वल पायके चंचलता से कभी द्वार ढूंढता हुआ धरती की ओर झाँकने लगता और वहाँसे चौंकना होकर कभी फिर गर्भही की तरफ़ किंतु गर्भ रहने के स्थानही को शीघ्र दौड जाता है इस प्रकार से बारंबार किलोलें कियाकरता है (दृष्टांत जैसे हालका बछेडाकभी घोडीसे दूरभाग जाता कभी लौटकर माता के पास आजाताहै) परंतु इस चंचलता से यहधोखाभी सदा लगा रहता है कि धरती की तरफ़ झाँकते कभी गिर न जाय बल्कि इसी हेतुसे विरला गर्भ जो इसीआठवें मासमेंबाहरनिकलआताहै सो जीतानहीं क्योंकि पूरे नौ

लगताहै माता पुत्र दोनोंके तरफ़ फिर फिर वारंवार क्रमसे अर्थात् एकवार माता में फिर एकवार पुत्रमें फिर मातामें इसीतरह वारंवार ओजस् एकही सो लौटपौट किया करताहै तहां दोनों इसीक्रमसे म्लान या मुदितहोते रहते हैं अर्थात् जिससमय जिस की तरफ ओजस् दौड़िगया वही मुदित प्रसन्न मुहखिलासा होगया किन्तु जिसकी तरफसे ओजस् हटिगया वहीम्लान उदास कुम्हिलायेमुख होगया यहतात्पर्यटहिरा-विवेकालोक समझैंगे--ओजसकी व्याख्या जो कुछ८२ बयासी मूलश्लोकवालेअर्थ में लिखचुके उसके जोड़ तोड़पर बुद्धि ठीकजमतीहै—अत्रोक्त व्याख्या यद्यपि प्राचीन ग्रन्थकारोंका लेखहै तौभी इसपर बुद्धि न जमनेका हेतु केवल यहीहै कि उन प्राचीनोंने स्पष्ट निर्णय कुछ नहींदिया कि ओजस् किसको जानना या वह ओजस् किनकारणों से दो तरफ़ दौड़ता है-अन्यथा (पुनर्धात्रीम्पुनर्गर्भमोजस्तस्यप्रधावति) इस बयासीके श्लोकमें भी यहीअर्थ होताहै कि उसगर्भका ओजस् फिर माताकोफिर गर्भको दौड़ता है—और—ओजसका लक्षण जो शारीरक व्यवस्था में प्रसिद्ध है सो यही है कि सातवांधातु शुक्रवीर्य पकने से उसका सारभूत अतर खिंचिकर ओजस् पैदाहोताहै वह आठबूंदमात्र हृदय में रहिताहै वही सब देहमें बल पुष्टि चंचलता रूप रंग चमक दमक चैतन्यता आदि बढ़ाता रहिताहै उसका पीलावर्ण कुछसुपेदी कुछ सुर्खीलिये होताहै वही जीवका आधार है उसका नाशहोने में देहनाश होजाताहै इत्यादि बहुत बातोंका विस्तार इसका लिखना नहीं चाहते हैं संक्षेप यहांपर कहा गया ॥ ० ॥ चेतना जो चैतन्य परमात्माका चिदाभास रूपी एकशक्ति होतीहै.जिसका थोड़ासा आभास गर्भमें इंद्रियाँ उत्पन्न होनेके साथही तीसरेमास फिर दृढ़तासे चौथेमासमें आचुकाथा उसीका पूरापूरा प्रकाश छठेमासमें आकर हुआ सोसबकहा गया(जहाँतहाँ ऊपरकेपाठोंमें देखिलो)इसचेतनाका अर्थ यद्यपिज्ञान और बुद्धिपर भी आरूढ़होता(वल्किविशेषकर बुद्धिकानाम भी चेतना कहाजाताहै) तथापि जैसाज्ञान और बुद्धिसे विचारकियाजाताहै तैसाचेतनाके द्वारा कोई शोचविचारवालाकामनहीं चलताहै तिससे यह ज्ञान और बुद्धिसे भी जुदी चेतना एकतीसरीशक्ति जाननी--किन्तु इसचेतनाकेहोनेसे शरीरके छोटेबड़े सब अंगोंमें गरम ठंढागीला सूखानरम कठोरआदि छुइ जानेका बोध या कांटा आदि चुभि जानेका बोधमात्र होजाता है पर और किसी शोचविचारकी समर्थ इसमें नहीं है.अर्थात् शीत उष्णपीड़ा आदिका बोध इसके द्वारा होजानेसे अनंतर तत्काल उसीबोधका प्रभाव जाकर अंतःकरणमें आश्रयलिया करता है.तहाँ फिर बुद्धि उसका निर्णय अपनी शक्तिसे करलेती है कि यह क्या था और

स्मरति पूर्वजन्मसमरणांकर्मच शुभाशुभम=अर्थात--पैदाहोके वहवायुसे छुआगयापहिला जन्म औरसरणा औरभलेबुरे कर्मोंकोभी नहीं यादि रखताहै॥८०॥८१॥८२॥८३॥
ऐसेउत्पन्नहुये गर्भकेदेहमें क्याक्यागुणाहोताहैसो सबअगिले परिच्छेदभरमेंदेखना॥

——*——

अथैवमुत्पन्नस्यगर्भस्यदेहेसंक्षेपतः शारीरकव्यवस्था विज्ञापकोऽयंपरिच्छेदः(११)एकादशः॥

इस ग्यारहवें परिच्छेद में उत्पन्न हुये गर्भके देहमें संक्षेप से शारीरक व्यवस्था कही जायगी कि उसके देहमें भीतर बाहरक्याक्या वस्तु होतीहैं—शारीरकव्यवस्था वही कहातीहै जो शरीरका संबंध व्यवस्थापनकरै—संक्षेपसे इसलिये कहा कि वैद्यक शास्त्र में शारीरक बहुत विस्तार वाला है यहां उस का थोड़ासा लेकर जरूरी मात्र संन्यासी को समझावेंगे॥

(अंगादीनांप्रदर्शनं)

तस्यषोढाशरीराणिषट्त्वचोधारयंतिच। षडंगानितथास्थ्नांचसहषष्ट्याशतत्रयम् ८४

अक्षरार्थः—उसके छ प्रकार के विभक्त शरीरों को छे त्वचा धारण करती हैं तथा छे अंग भी होतेहैं और हाड़ोंकी संख्या साठि ऊपर तीन सौ॥ ८४॥

अभिप्रायः—इस अक्षरार्थ का अभिप्राय मिताक्षराकार दर्शातेहैं कि उस आत्मा के सिर्फ जरायुज अण्डज दो भेदों के शरीर जितने संसारमें होतेहैं उन्हींका यहचर्चा है (अर्थात् स्वेदज उद्भिजोंका नहीं) चर्चावाले प्रत्येक जुदे शरीर भी षट्प्रकारके होतेहैं क्योंकि रक्तआदि षट्धातुओंको पकानेवाले छे अग्निओंके स्थान छे होते हैं एकही शरीरमें तिससे एक शरीर के छ प्रकार माने गये—इस बातका यह ब्योराहै कि भोजन किये अन्नका रस पैदा होकर उदर के अग्नि से पचिके लालरक्त होता है एक इस अग्नि का स्थान ठहिरा १ रक्त अपने ठिकाने की अग्निसे पकाहुआ मांस बनिजाता है यह दूसरा ठहिरा२ मांस अपने ठिकानाके अग्नि से पका हुआ मेदा हो जाताहै तीसरा ठहिरा ३ मेद अपने ठिकाना के अग्नि से पकाहुआ हाड बनिजाते हैं चौथा ठहिरा४ हाड अपने अग्निसे पके हुये मज्जा बनती है पांचवां ठहिरा ५ मज्जा अपने अग्नि से पकाहुआ शुक्र होजाता है छठाभया ६ इस पिछले धातु का रूपांतर

कुछ नहीं होता और वही आत्मा का पहिला कोश है यही इसप्रकार से छे कोशों कोअग्नि के संबंध से शरीरों का छ प्रकार होना समझा गया और अन्न का रस भी यद्यपि सबसे पहिला धातु कहाता है जिससे सातधातु गिने जातेहैं परन्तु वह अनियत है तिससे उसकेही स्थानकी अग्निसे सातवां प्रकार शरीरोंका नहीं मानाजासक्ता है इसीसे केवल छे प्रकार ठहिरे--और उन्हीं छे शरीरों को जुदे जुदे पर्दे में छे त्वचायें धारण करतीहैं—फिर कहिते हैं कि·रक्त·मांस·मेद·हाड·मज्जा·शुक्र·इन नामोंके छे धातुही आप केलेकेखम्भकी त्वचाओंकीतरह बाहरभीतरके डौलमें परस्पर मिलेहुये टिके हैं और (त्वचा कहिते हैं खालको) खालकी तरह तर ऊपर ढांकने का डौल होजानेसे वेही त्वचा ठहिरे (किन्तु त्वचा कोई जुदी नहीं) वेही यह धातुरूपी त्वचायें शरीर को थांभती हैं (सो यह आयुर्वेद में प्रसिद्ध है) तथा उसी शरीरके के अंगभी जुदे जुदे होतेहैं अर्थात दोहाथ दोपैर मस्तक शिर कच्छाती आदि निचलागात्र तथा उसीशरीर में तीन सौ साठि ३६० हाड़ छोटे बड़े सभी मिलिके होते हैं जिनका ब्योरा आगेके श्लोकोंमें आवैगा=मिताक्षराकार ने यह व्याख्या करी परन्तु आयुर्वेदका कोईवचन इसमें नहीं प्रमाण दिया जिस के देखने से संदेह मिटिजाता जो आयुर्वेद में विस्तार इससें मौजूद है॥ ८४ ॥

कारोंनेअभ्यन्तर इसका नहीं पायाहोगा·यद्यपि यह कहिसक्ते हैं कि मिताक्षरा के सिवायटीका इसके और भी अनेकहैं तिनके रचकोंने अभ्यन्तर पायाहोगा.तिसका यहीप्रत्युत्तरहै कि विज्ञानेश्वरने पुरानीटीका सब देखभालउनकेसारांश लेकरपीछे मिताक्षराका निर्माण किया है यदि उनमें कोई जुदाआशयहोता तो इसमें भी अवश्य धराजाता-किन्तु-षड्भाँतिके शरीर कहे तिनकी कोई ठीक सीजाँ नहींमिलती है.यहाँपर गर्भ जो पूराहोकर जन्मलेचुका उसकी कायाके भीतर बाहर जो कुछहोताहै सो सब यथाक्रमसे दर्शाना चाहतेहैं यही सब चरक सुश्रुत शार्ङ्गधर भावप्रकाश आदि आयुर्वेदके शारीरक वर्गोंमें विस्तारसे मौजूद है तिसके देखने से विरोध इसमें आताहै कि प्रथम रसधातु जो रक्तआदिसबहीको प्रत्येकसमय बढ़ाता रहिताहै तिस को अनियतकहिके सातधातोंकी गिनतीसे निकालडाला·फिर अनपेक्षितअग्निओं के स्थानभेदका प्रमाणमाना तिसते शुक्रकेस्थानवाली सातमी अग्निको यहकहिके छोड़िदेनापरा कि शुक्र नहींपकता है न उसका कुछ रूपांतर होताहै·यथार्थ से शुक्र के स्थानपर भी अग्निहोताहै और शुक्र भी पचिकर परिणाम को पाताहै तिसते ओजस की उत्पत्ति होतीहै यह भी एक विरोध ठहिरा और शरीरके ऊपर जो खाल इसी नामसे सब से बड़ा आवेष्ठन है तिस में सात पर्त होने से त्वचा भी सातही गिनी जाती हैं (योगीश्वर ने किसी हेतुसे इन सातोंकी छे त्वचा कहीं) मिताक्षराने उनसातों का चर्चा निपट छोड़िके (षट्त्वचो) इसी पदका अर्थ केवल छे धातों के परस्पर पर्त मानेहैं कि जैसे केलाके लक्कड में अनेक वक्कल तर ऊपरहुआ करते हैं यह भी बडा विरोध ठहिरा कि मुख्य खालों को नहीं माना जिनसे सब शरीर थँभा रहिता है और उनका चर्चा कहीं आगे नहीं आवैगा तिससे (षट्त्वचो) इस पदका अर्थ वेही सातखालैं माननीचाहिये क्योंकि पाँचके सिवाय ऊपरली वारीक दोखालोंकी एक मानी जिससे सातकी छे ठहिरनेपरभी मुख्य गिनतीमें सातकी सातोरहीं ॥ शारीरक व्यवस्था आयुर्वेद में और अध्यात्म वेदमेंभी होतीहै यद्यपि दोनोंके बीच विरलीवात में कुछ अंतर इस हेतुसे होताहै कि अध्यात्म विद्या वाला केवल संसारको त्यागनेके हेतुसे उसका डौल समझानेके लिये शारीरक दर्शाताहै(जैसायहाँ पर योगी पुरुषको समझाय रहेहैं) आयुर्वेद वाला वैद्योंको इसलिये समझाता है कि शारीरक जानने से रोगी या निरोगी के भीतरले बाहरले सब अंग पहिँचाने जायँ जिनसे अच्छीतरह चिकित्सा करसकैं--तथापि वह अन्तर कुछ अंतर नहीं कहाता किन्तु दोनों शास्त्रका सिद्धांत एक है इसीलिये मिताक्षराकार ने भी (तदिदं आयुर्वेदप्रसिद्धं) यही कहा

कि यह शारीक वृत्तांत वैद्यक शास्त्रमें प्रसिद्ध है अर्थात आयुर्वेदहीका सहारालिया तिसमें किंचित विरोधरहा=इन्हीं कारणोंमें=आयुर्वेद और अध्यात्मदोनोंके मिलाप से दूसरा अर्थ जो अविरोधी देखिपरा सो हम लिखतेहैं (अपरोऽर्थः) तस्यषोढाशरीरा णि अर्थात उस आत्माके शरीर षोढा छ प्रकारके स्थान भेद वाले होतेहैं·इसी अर्थ के अनुसार शरीरोंके भीतर आत्मा के टिकने योग्य छे स्थान ढूंढने चाहिये जिनमें जीवात्मा रहा करताहै–तहाँ सबसे मुख्यस्थान हृदय कमलहै=यथा=हृदयंपुण्डरीके णामदृशंस्यादधोमुखम जाग्रतस्तद्विकशतिस्वपतस्तुनिमीलति आशयस्तत्तुजीवस्य चे तनास्थानमुत्तमम=अर्थात-मनुष्यका हृदय भीतर कमलके आकार नीचेको मुहकिये लटका होताहै वह जागते समय मुहखोले रहाकरता और सोतेहुये मुहको मींचलेता हैं वही जीवके रहिनेका स्थान प्रधानहै और वही चेतनाके रहिनेकाभी मुख्य स्थान हैं (चेतना उसी जीवकी चिच्छायारूपी प्रधान शक्तिहै कि जैसे ईश्वरकी प्रधान मायाशक्ति होतीहै वह चेतना भी जीवके समीपही सदा रहिती और सबदेहमें प्रभाव अपना फैलातीहै कि जैसे राजाकाप्रधान मंत्री उसके निकट रहि के देशभरमें आज्ञा फैलाताहै) इस बातको ८० अस्सीकी अंकावलिमें देखो कि समोक्त सबचेतनाओं पर अधोक्त सबसे बडी यही चेतना उनकी अधिष्ठाता॰)

शरीरकी ऊपरली से भीतरली तक त्वचाओं का स्पष्ट है कुछ रक्तादि धातुओं का तात्पर्य इसमें नहीं क्योंकि सब कुछ आगे कहेंगे पर त्वचाओंका चर्चा आगे कहीं भी न आवैगा और इसी जघे इसका कहाजाना भी योग्यथा·यद्यपि इतना अंतर है कि आयुर्वेद में सर्वत्र पूरी सात खालैं का नियम घंटा घोयहै और यहाँ एक न्यून कही तिसका यही तात्पर्यहै कि ऊपरली दोकी एक मानी कुछ इससे दोष नहींहै. इसी प्रकार वैद्यक में अंग भी कुछ अधिकहैं परयहाँ छेअंगोंकोमुख्यजानि (षडंगानि) यह कहागया·इसी प्रकार आयुर्वेदी शल्यतंत्र शारीरकमें तीन सौ हाड़ों का नियम यद्यपि ठीकहै पर यहाँ तीन सौ साठिकहे सो इन साठि अधिकहोनेका हेतुआगे ९० नब्बेकी अधिकोक्तिमें समझना (अपरोऽप्यर्थः) मूलश्लोक देखो उसीके अन्वय से तीसरा अर्थ ऐसे सिद्धहोता है (तस्योत्पन्नस्यबालस्य अस्थ्नांशतत्रयंषष्ठ्यधिकंयोढा शरीराशिशेषषट्धातवस्सवधारयंति तथा षट्त्वचोपि तमेवास्थिपंजरंषट्धातुसहितं धारयंतिआवेष्टयंतीत्यर्थः सर्वंसर्वैर्मिलित्वा षडंगानिशिरः प्रभृतीनितस्यदेहे सिद्ध्यन्ती त्यभिप्रायः)अर्थात् उसके देहमें तीनसौसाठि हाड़ोंकावना एकपंजर जो प्रधानहै ताहि बाकीके छे शरीर धारण करतेहैं अर्थात् (रस·रक्त·मांस·मेद·मज्जा·शुक्र) येहीधातुएँ थाँभे रहितीहैं किन्तु इनके विना हाड़ोंका पिंजरा नहीं थँभिसक्ता· तथा छे खालैं भी उसी हाड़ोंके पिंजरे धातुओंसहित को लपेटेहुये धारण किये रहिती हैं क्योंकि खालोंसे लपेटे विनाभी ये सब चीजें कभी न थँभिसकें तिससे·ऐसे यह सब मिलिके जो देहवना तिसमें छे अंगहैं शिर छाती चारो हाथपैर ॥ ८४ ॥

(अब नीचे तीनसौ साठि हाड़ोंका व्योरा समझावैंगे)

(अस्थ्नांसंस्थितिः)

स्थालैःसहचतुःषष्टिर्दंतावैविंशतिर्नखाः। पाणिपादशलाकाश्चतेपांस्थानचतुष्टयम् ८५
षष्ठ्यंगुलीनांद्वेपाष्ण्योर्गुल्फेषुचचतुष्टयम्। चत्वार्यरत्निकास्थीनिजंघयोस्तावदेवतु ८६
द्वेद्वेजानुकपोलोरुफलकांससमुद्भवे। अक्षतालूषकश्रोणीफलकेचाविनिर्दिशेत् ८७
भगास्थ्येकंतथापृष्ठेचत्वारिंशच्चपंचच। ग्रीवापंचदशास्थीस्याज्जत्र्वेकैकंतथाहनुः ८८
तन्मूलेद्वेललाटाक्षिगंडेनासाघनास्थिका। पार्श्वकाःस्थालकैःसार्द्धमर्बुदैश्चद्विसप्ततिः ८९
द्वौशंखकौकपालानिचत्वारिशिरसस्तथा। उरःसप्तदशास्थीनिपुरुषस्यास्थिसंग्रहः ९०

अर्थः—स्थालों सहित चौंसठि दाँत·नख वीस निश्चय जानो क्योंकि वीस अंगुरियों में होते हैं·हाथ पाओं की शलाका भी वीसही अर्थात् वीस अंगुरियोंके नीचे आका

(ये सब चौंसठि हुये॰तिनमें १९२ एकसौ बानवे ऊपरके जुडि कर कुल २५६ दो सौ छप्पन हाड़ ठहिरे ॥ ८८॥ उसके मूलमें दो अर्थात ठोंडीकी जडमें दोहाड और होते हैं॰तथा ललाट माथे पर दोहाड़॰अक्षि नेत्रों के दो हाड॰गंड अर्थात कपोल और अक्ष स्थान दोनों का बीचहै सो गंडस्थल कहाता है दोनों गंडस्थलों के दो हाड समुझने (अक्षस्थान का चिह्न पहिले सत्तासी के श्लोक में कहि चुके वही जानना) और नासा घनास्थिका कहलाती अर्थात नाक में एकही हाड़ घन संज्ञा वाला जिसके शृङ्गार मे चारो तरफ छिद्रमार्ग हैं होताहै॰बहत्तरि ७२ हाड़ दोनों पाँसुओं में होते हैं अर्थात बगल के नीचे पँसुरियोंके हाड़ अपने स्थालों सहित और अपने अर्बुद नामके सहायक हाड़ों सहित छत्तीस छत्तीस दोनोंतरफ़ होतेहैं(इनछत्तीसमें तीन भांति कहीं तिससे बारह पसुरी बारह स्थाल बारह अर्बुदठहिरे) स्थालोंका अर्थ जैसा पचासीके श्लोकमें कहा गया तैसा यहाँ भी समुझना (ये सब ८१ इक्यासी ठहिरे॰इनमें दो सौ छप्पन २५६ ऊपर के जुड़िकर कुल ३३७ तीन सौ सैंतिस हाड़ हुये ॥ ८९ ॥ दो हाड़ शंख नामके कनपटियाँ कहातीहैं अर्थात भौंह और कानोंके बीचमें अक्षस्थान से कुछ ऊपर जो पटियासी चौड़ा हाड होताहै वही दोनों ओरके दो शंखजानो॰तथा शिरमें चारि कपाल खोपडीके ठीकरेसे निकसते हैं॰उरस् के सत्रह अर्थात छाती से हृदय तक समस्त हाड़ों की तादाद१७सत्रहसंख्यासे होतीहै(ये सब तेईस ठहिरे॰इनमें ३३७ तीनसौ सैंतीस ऊपर के जुडिकर कुल्ल ३६० तीनसौ साठि हाड पुरुष के देह भरमें कहेगये=यद्यपि चिकित्साशास्त्र के शारीरक में तीनिहौसै हाड़ों का नियम सर्वथा ठीक और प्रसिद्धहै तथापि यहाँ साठि उपराॅलू कहेगये तिसका यहीकारण है कि वैद्यक में बत्तीस दाँतही गिनेजाते हैं यहां उनके स्थाल भी गिनती किये गये तथा पसुरियों के साथ उनके स्थाल भी गिनती में लेलिये गये इसी तरह और भी कुछ भेदहै तिससे कुछ दोष वा विरोध नहीं आता है केवल मुख्य प्रयोजन पर दृष्टि राखनी चाहिये कि संन्यासीको संसार का स्वरूप समुझातेहैं (अब अगिले श्लोकों से इंद्रियों की व्यवस्था कही जायगी ॥ ९० ॥

(स्वविषयसहितानिज्ञानेन्द्रियाणि)

गन्धरूपरसस्पर्शशब्दाश्वविषयाःस्मृताः । नासिकालोचनेजिह्वात्वक्श्रोत्रंचेन्द्रियाणिच ९१

अर्थः—गंध॰रस॰रूप॰स्पर्श॰शब्द॰ये पाँचो विषय यथा क्रमसे पाँच इंद्रियों के भोगरूप होते हैं अर्थात॰नासिका॰जीभ॰नेत्र॰त्वचा॰कान (इन्हीं इन्द्रियोंके द्वारा ये

पांचो विषयगुरुष के बंधन हेतु होते हैं क्योंकि इनको ये इन्द्रियांही जुदे जुदे निज निजविषयको जानती पहिंचानती और चाहना कियाकरतीहैं और कोईनहीं॥ ९१॥

९१ अधिकोक्तिः—यह संदेह न करना कि इंद्रियेंकी उत्पत्ति पहिले कहि चुके थे दुवारा यहां क्यों कहिने लगे-क्योंकि वहां पचहत्तरि आदि श्लोकों में गर्भका भीतरला प्रसंग था उसमें यह चर्चा किया गया था कि गर्भ के तीसरे महीना में आत्मा आपही सब अंग और इन्द्रियेंको चाहना करिके उत्पन्न करिलेता है तिससे गर्भकी पिंडीसें इन सब चीज़ोंके अंकुर आपसे आप होजाते हैं=और=यहां जो गर्भ पूरा होकर जन्म पानेसे बाहर आया तिसके सब अंगोंका विस्तार व्यौरे वार समुझाते हैं कि उसके शरीर में भीतर बाहर क्या क्या वस्तु होतीहैं सो हाड़ोंका पिंजरा खाल मास आदि से बंधा हुआ पहिले चौरासी के श्लोक में दर्साया तिसके सब हाड़ों की व्यवस्था ९० नव्वे श्लोक तक समुझाइके यहां उसकी इन्द्रियां भी दो भांतिकी समुझाने लगे क्योंकि इन्द्रियों के होने बिना हाड़ मासके पिंजरा से कुछ काम नहीं चलसक्ता॥ ९१॥

(कर्मेन्द्रियाणिच)

के साथ (सल्सिलेवार) नहीं कहें कि जिससे यह जानाजाय पहिलें भीतर के फिर बाहर के या पहिले बाहर फिर भीतर के अथवा पहिले ऊंचे ऊपर ले अंगके फिर निचलेके हों सोभीनहीं—अर्थात् केवल अंगों वा स्थानों के नामैं को आगा पीछा समुझानें बिना कहिते चले जायँगे॰तहां विरले अंग वा ठिकानौं के नाम दो दोबार भी कहिने में आजायंगे तिसका आशय यद्यपि मूलकार और टीकाकारने भी नहीं खोला तौभी तात्पर्य उसका यही है कि देहके भीतर और बाहर के भेद से दो बार नाम लिया गया इसी का दृष्टान्त जैसे (९३।९४) श्लोकोंमें नाभि शब्द दो बार कहा जायगा तहां एकबार जो पेटके बीच में तुंदी कहलाती है तिसको समुझिलेना और दूसरी बार उसी तोंदी के भीतर जो नाभि कछुआ के डौल सम होती है तिसको जानना इसी प्रकार हृदयको दो बार समुझना कि एकबार छातीके बीचमें जो हृदय का ठिकाना है तिसका नाम और दूसरे बार उसी छातीके भीतर जो कमल फूल के डौल सम हृदयका आकार होताहै सो दर्शाया है॰इसी प्रकार और भी वृक्क आदि जो दोदो बारकहेजायंतिनकोमूलश्लोकोंकेअर्थवाला पाठयहां मिलाकरसमुझिलेना॥

(शरीरस्य वाह्याभ्यंतरज्ञानं)

नाभिरोजोगुदंशुक्रंशोणितंशंखकौतथा । मूर्धांसकंठहृदयंप्राणस्यायतनानिच ९३
वपावसाऽवहननंनाभिःक्लोमयकृत्प्लिहा । क्षुद्रांत्रंवृक्ककौवस्तिःपुरीषाधानमेवच ९४
आमाशयोऽथहृदयंस्थूलांत्रंगुदएवच । उदरंचगुदौकोष्ठ्यौविस्तारोयमुदाहृतः ९५
कनीनिकेचाक्षिकूटेशष्कुलीकर्णपत्रकौ । कर्णौशंखौभ्रुवौदंतवेष्टावोष्ठौककुंदरे ९६
वंक्षणौवृषणौवृक्कौश्लेष्मसंघातजौस्तनौ । उपजिह्वास्फिजौवाहूजंघोरुपुचपिंडिका ९७
तालूदरंवस्तिशीर्षंचिवुकंगलशुंडिके । अवटश्चैवमेतानिस्थानान्यत्रशरीरके ९८
अक्षिवर्णचतुष्कंचपद्धस्तहृदयानिच । नवछिद्राणितान्येवप्राणस्यायतनानितु ९९

अर्थः—नाभि॰ओजस्॰गुदा॰शुक्र॰रक्त॰ दोनोंशंख कनपटी॰मूर्धाशिर॰ अंस दोनों कांधे॰कंठ॰हृदय॰येअंग उयअंग हैं और प्राणकेभी स्थानहैं=अर्थात्—पंचप्राणोंमें एक समानवायुजो सर्वशरीरमें फैलतारहिताहै तिसकानिवास इनस्थानोंमें अधिकहै॥९३॥ फिर भी इसका विस्तार दर्शाते हैं कि—वपा॰मेदा—वसा जो मेदमांसकासार एकभांति की चिक्कनाई होतीहै—अवहनन॰फुप्फुस कहाताहै—नाभि॰यहदुबाराकही सो भीतर बाहर दो जगह के तात्पर्य में समझना—क्लोम॰यह फुप्फुस का दूसराभेद पुप्फसक- हाताहै—यकृत्॰यह कालेयक भी कहाताहै—प्लीहाभी उसीका दूसरा भेदहै—क्षुद्रांत्र नामछोटीपतरी आंतें—वृक्कौ अर्थात् वृक्क वुक्क नामोंके दो गोल पदार्थ होतेहैं—वस्ति

१०७ की अधिकोक्ति में देखना) ये नव छिद्र भी प्राणों का स्थान होते हैं तथैव छहानवे श्लोक से कनीनिका आदि यहांतक जितने उपअंग समुझाये गये उनमेंभी बहुतेरे स्थानप्राणवायुका निवासरूप होतेहैं॰इसबातका विशेषब्यौरा १०२ एकसौ दोकी अधिकोक्तिमें समझना जहाँ मर्मस्थानोंकी व्यवस्था कही जाय॥ ९९॥

९३अधिकोक्तिः—इन्हीं सातश्लोकों में जितनेअंग भीतर बाहरके सिर्फनामोंसे प्रकाश कियेगये उनमें जोभीतरले अगहैं तिनका ब्यौरा अच्छीतरह तभी जानाजासक्ताहै जब यहाँ समस्त शारीरक लिखाजाय और शारीरकहै सो चरक वाग्भट आदि ग्रन्थोंमें बहुतबड़ा विस्तारहै क्योंकर यहां लिखनेका अवकाश उसको मिले॰तो भी उन्हीं ग्रन्थोंका संक्षेप चुनिकर थोडे से वचनमात्र लिखते हैं कि जिनसे वृक्क प्लीहा आदि विरले अंगोंका स्वरूप पहिँचाना जाय॥

॥ प्र॰१॥ जीव और चेतनाका मुख्यस्थान हृदय कमलमें होताहै तिनकाब्यौरा चौरासीकी अधिकोक्ति में किसीप्रसंगसे लिखि चुके तहां देखो॰ फिर उसी हृदय में रस कफ रक्त जलआदि जैसे रहितेहैं तिनका ब्यौरा आगे संग्रहवचनोंसे देखो उसीमें वृक्कआदि भी समझलेना॥

॥ द्वि॰२॥ अत्राहुःप्राचीनाः॥ उरोरक्ताशयस्तस्मादधःश्लेष्माशयःस्मृतः आमाशयस्तुतदधस्तल्लिंगंचरकोऽवदत॥ नाभिस्तनांतरेजंतोराहुरामाशयंबुधाः। नाभेर्वितस्तिमात्रंचकंठदेशात्षडंगुलम। उरसस्तद्विजानीयाच्छेयेतुहृदयंमतम॥

॥ तृ॰३॥ यकृत्प्लीहाचरक्तस्यमुख्यस्थानंतयोःस्थितम॥ शोणितात्जायतेप्लीहा वामतोहृदयादधः रक्तवाहिसिराणांसमूलंख्यातोमहर्षिभिः॥ अधोदक्षिणतश्चापि हृदयाद्यकृतःस्थितिःतत्तुरंजकपित्तस्यस्थानंशोणितजंमतम॥

॥ च॰४॥ सर्वदेहव्यस्याधिपस्यहृदयंस्थलम समानमरुतापूर्वंयदयंहृदयेधृतः॥ यदास्त्रोयकृद्यातितथरंचक्रपित्ततः रागंपाकंचसंप्राप्यस्यभवेद्रक्तसंज्ञकः॥ हृदयाद्वामतोऽधश्चपुप्फुसोरक्तफेनजः॥ रक्तादनिलसंयुक्तात्कालेयकसमुद्भवः (कालेयकःक्लोमइत्यर्थ) अधस्तुदक्षिणेभागेहृदयात्क्लोमतिष्ठति जलवाहिसिरामूलंतृष्णाच्छादनकंमतम (क्लोम॰तिल्ली॰फुःफुसः)॥

॥पं॰५॥कफशोणितयोःसाराद्वृक्कयोर्युगलंभवेत सोनुप्रोक्तौप्रोक्तौजठरस्यस्यमेदम॥

।ष॰६॥ वृषणौभवतःसाराद्रक्तकफास्रग्भ्यांचमेदसः वीर्यवाहिसिराधारौतौमतौपौरुषावहौ॥ शंखनाभ्याकृतिर्योनिःत्र्यावर्त्ताचकीर्तिता तस्यास्तृतीयेत्वावर्तेगर्भशय्याप्रतिष्ठिता॥ गुदस्यमानंसर्वस्यसार्धस्याच्चतुरंगुलम तत्रस्युर्वलयास्तिस्रःशंखावर्तनिभास्तुताः॥

॥ स·७ ॥ कफाऽऽमपित्तपक्वानामाशयास्तन्नुस्त्रयोः ॥ पुरुषेभ्योऽधिकाश्चान्ये नारीणामाशयास्त्रयः धरागर्भाशयःप्रोक्तःपित्तपक्वाशयांतरे स्तनौप्रकृत्यैतावेवयुवतेः स्तन्याशयौमतौ ॥ स्तनौपुंसस्तथानार्यांविशेषदक्षयोरप्यद यौवनागमनेनार्याःपीवरौभवतःस्तनौ गर्भवत्याःप्रसूतायास्तावेवक्षीरपूरितौ ॥

॥ अ·८ ॥ यातआमाशयमाहारःपूर्वंप्राणानिलेरितः माधुर्यंफेनभावंचषड्रसोऽपि लभेततः ॥

॥ नव·९ ॥ आमाशयादधःपक्वाशयादूर्ध्वंतुयाकला ग्रहणीनामकासैवकथितंपाचकाशयः ॥ ऊर्ध्वमग्न्याशयोनाभेर्मध्यभागेव्यवस्थितः तस्योपरितिलज्ञेयंतदधःपवनाशयः ॥

॥ दश·१० ॥ पाचकाग्निस्थलसारंस्यात्काठिन्यान्नाख्यनीयता ॥ पित्तंपंचात्मकंतत्र पक्वाऽऽमाशयमध्यगं पंचभूतात्मकत्वेऽपितैजसगुणोदयात् त्यक्तद्रवत्वंपाकादिकर्मणाऽनलशब्दितम् पचत्यन्नंविभजतेसारकिट्टौपृथक्तथा तत्रस्थमेवपित्तानांशेषाणामप्यनुग्रहंकरोतिबलदानेनपाचकंनामतत्स्मृतम् ॥

॥ एका·११ ॥ अरत्निर्भिन्नगुदौयुक्ता पित्तंभिन्नगणोऽयंतत्र ध्यांनेअन्नमयांगानांपत बहिरतोऽन्यथा ॥ तस्मात्तेजोमयंपित्तंपित्तोष्माढ्यतानात्मनाम् ॥ वामपार्श्वेस्थितोनाभेः किंचित्सोमस्यमंडलम् तन्मध्येमंडलंसौरंतन्मध्येऽग्निर्व्यवस्थितः गात्रवृत्तानप्रच्छन्ना काचकोशस्थदीपवत् ॥

फिर उसके नीचे कफका आशय फिर उसके नीचे आमाशय कच्चे अन्नका ठिकाना तिसका डौल चरकयों कहि गये कि नाभि और स्तनोंके बीच जो गड़हिला देखि परता है उसी के भीतर आमाशय होताहै इसकी माप भी वाग्भटने यों कही है कि नाभिसे एक बिलाँद ऊपर और कंठ से एक बिलाँद नीचे वही गड़हिला प्रत्यक्ष है तिसके भीतर छ अंगुर की चौड़ी थैली होतीहै बाकी यही ठिकाना हृदय ब हाताहै॥

॥ ३ ॥ हृदय की तरहटीमें यकृत् प्लीहा दोनों रक्तके स्थानहैं इन दोनोंमें मुख्य ठिकाना बाँधे रक्त रहिता है इसी जगहसे सब देह में पहुँचता है॥ यकृत्•प्लीहा• क्या चीज़हैं सो देखो॥ प्लीहा एक भीतर का अंगस्थान है जो रक्तहीसे उत्पन्नहोता किन्तु बामी चूचीके नीचे उसका ठिकाना जो वातपित्तों के योग से गाढ़ी रक्त की शादिका छीछड़ासा कुछ कोमल कुछ कठोर होता उसमें रक्त भरा रहिता है उसी में रक्त पहुंचाने वाली सिरा नाड़ियों की जड़ गड़ी रहिती हैं तहां से लेले कर अपनी पोंगियों से सब देहमें सींचती रहिती हैं तिससे देह सूखने नहीं पाता॥ ऐसेही दूसरा यकृत् है सो दाहनी चूची के नीचे रहिता और इसमें भी सब लक्षण उसी के समान हैं कि रक्तहीसे उत्पन्न भया रक्तही इसमें रहिता तथा रंजक नामी पित्त भी रहिता जो अग्नि का प्रभाव है उसी पित्तसे रसका रंग बदलिके रक्त बनि जाता है यह चौथे अंक से देखो॥

॥ ४ ॥ खाये पिये अन्नों का रस जो पैदाहो वह यद्यपि सब देहमें फैलता रहिकर देहको सींचता है तौभी उसके रहिने का मुख्य ठिकाना हृदय होताहै कि जहां एक थाउले में भरा रहिकर सबअंगोंमें जाता है क्योंकि इसको पैदाहोते सार समान नामी पवन ऊपरको खींचि पहिले हृदय पास रखिदेता है॥ जब समानसे खींचाहुआ रस यकृत्के स्थानतकजाताहै तहां रहिने वाले रंजकपित्तसे पकायाहुआ लाल रंगतिको पाकर वही रक्तकहाने लगता है॥ देहकी सिंचाई यही सुपेद रस अपने जुदे तौर से करता और पूर्वोक्त लालरक्त अपने जुदेप्रकारसे करताहै(उसकेस्थानपरजानेसे यहभी लालहोताहै परंतु जो अपनी जुदी सिंचाईवाले कुण्डमें रहिताहै तिसका स्थान उससे नीचेउसीके लगभग जानना क्योंकि ऐसे कईठिकाने सबहृदयके समीपहीहैं)सोभीदेखो॥ हृदयसे श्वासे को फुंकता हुआ प्लीहसे नीचेके ठिकाने पर फुफ्फुस होता है वह पकने हुये रक्तके फेना से वायु मिलिके बनता है इसी में आकर सुपेद रस टिकता है इसी जगह से नाड़ियों के मार्गसे सबदेह मे जाता और इसीमे चढ़िकर लाल होनेकेलिये यकृत प्लीहमें भी जाता है॥ इसीका दूसरा भेया रक्त और पवन के योग से अर्थात

कहातीहै बाकी इनवचनोंका अर्थ लिखना यहांपर आवश्यक नहींहै सातवें अंकस्थल के श्लोकोंपर ध्यानकरो॥ स्त्रियोंके तीनि आशय और भी पुरुषोंसे अधिक होते हैं तिनमें एक तो धरणी जो गर्भ धरने का यंत्र है तिसके रहिने का स्थानही गर्भाशय कहाता वह पित्त और पक्वाशय के बीच होताहै और दो आशय दो स्तनोंके दूधभरे कहाते हैं उसी दशामें कि जब दूधसे भरें। किंतु स्तन यद्यपि पुरुष स्त्री दोनोंके एकही से होतेहैं पर दोनों में जुदाई सिर्फ यही है कि नारी के यौवन अवस्था में बड़े मोटे पुष्ट होकें गर्भिणी होनेपर दूधसे भरते हैं॥

॥ ८॥ आमाशय जो बताया गया पहिले उसीमें भोजन किया हुआ आहार प्राणवायु से प्रेरितकिया धक्कादिया पहुंचता है पहुंचिके उसजघे रहिनेवाले क्लेदन कफके ज़ोर से ढीलाहोके फेनसा मीठा मीठाहोजाताहै चाहैं खट्टा मीठा कटुकआदि कैसाही भोजनकिया हो॥ अब नाभिस्थान के आशयोंका व्यौरा देखोनवमें अंकसे॥

॥ ९॥ ऊपर सातवें भेदमें आशयोंकी स्थितिका क्रम शोचिके फिर यहाँदेखो– आमाशयसेनीचे पक्वाशयसे ऊपर दोनोंके बीचमें जो ग्रहणीनामकी कला एकभि-त्तीहै वहीपाचकपित्तका आशयनाम ठिकानाजानो–पाचकपित्तसे ऊपर अग्निका ठिकाना है वह नाभिके बीचों बीच स्थापन होरहाहै तिसके ऊपर अग्निके रूपसे तिल रहिताहै (तिलकाव्यौरा अगिले भेदोंमें समझलेना) उस अग्निकेनीचे समान वायुका स्थानहै वही उस अग्निको प्रचण्डकरता रहिताहै जैसे भट्ठीकेनीचे धौंकनी लगी रहिकर अपने पवनसे अग्निको बढ़ातीहै॥

(अग्निपित्तनिर्णयः)

दशवेंसे बारहवें पाठतक अग्नि और पित्त इन्हींदोनोंका स्थान और स्वरूपआदि भेदभी दर्शाये जायँगे क्योंकि इनके परस्पर वैद्योंको बड़े बड़े संदेह और झगड़े प्रतीत होतेहैं। किसी वचनसे पित्त अग्नि दोनों एकहीरूप। किसी वचनसे दोनों जुदेजुदे। प्र-तीत होतेहैं तैसा तीनोंपाठके श्लोक जहां लिखेगये सो सबदेखो तहाँ यहभी शोचो कि ये दोनोंबात ठीकही हैं अर्थात् दोनों जुदेहैं परन्तु दोनों एकही रूपसे जुदे हुयेहैं तिससे सिद्धांतमें एकही मानेजातेहैं यहवार्त्ता केवल विद्वानोंके समझने योग्यहै कि जैसा जगत् और ईश्वरका परस्पर संबन्ध अकथनीय है तैसा पित्त और अग्निका भी समझें उन्हीं वचनोंके अर्थ नीचे देखो॥

॥ १०॥ पाचक (पकानेवाला) जो पित्तहै वह एक तिलके समान है और कहा

है इसके कडापनसे इसको दोषतानहीं अर्थात् वातादि दोषत्रयकेसाथ उसकीगणना नहीं करीजातीहै (इसका यहीतात्पर्य्य ठहिरा कि उसकडे तिलको अग्निही जानना) तिलका ठिकाना ऊपर नववेंपाठमें शोचो ॥ पित्तकास्वरूप कफसे भी पतरा दरकसा कुछ चिकना भी है परन्तु कफठंढासुपेदहै पित्तपीला अति गरमहै यही तीनों दोषमें गिनती होताहै इसीहेतु तिलके कडापनसे तीलापनका विरोधरहा॥ पित्त पंचात्मक पाँचस्वरूपों वालाहै वहभी एक मुख्यरूपसे आमाशय पक्वाशयके बीच रहाकरताहै• यद्यपि पृथिवी आकाश आदि पाँचोंभूत मिलेहुयेंकारूप उसकाहै तौभी उसमें जो अग्निके गुणका उदय गरमाई अधिकहै सो इसकेसाथ मिलारहितेही पकानाआदि कर्मसाधन करताहै तिससे अग्नि कहाजाताहै वहीअन्नको पचाताहै फिर उसकारस रूपीसार और मैलरूपी कीट जुदा जुदा करदेता है और आप उसी जगे बैठा बाकी दूरस्थ चारपित्तोंको बलपहुँचाते रहिकर सहायता देता रहताहै इसीसे पाचकनाम कहागयाहै ॥ यहपाठ यद्यपि पित्तकी प्रधानता सहित कहागया तौभी पित्त और अग्नि दोनों जुदे सिद्धहोकर फिर इतरेतरकता मिलाहुई•इसीकानिर्णय फिर ग्यारह के अंकसे देखो॥

सबकुछ करने में समर्थ हैं वही अपने अग्नि रूप को सूक्ष्म तेजीसे रसों को आकर्षण करते हुये जब अन्नको पचाते हैं उस समयकी विलक्षण दशा व्यौरेवार नहीं विवेचन करी जासक्ती है (क्योंकि पकाते समय कोई भीतर घुसके नहीं देखियाताहै॥ शरीर की नाभिके भीतर जुदाई के साथ सोमका मंडल है उसी मंडलके बीचमें फिर सूर्यका मंडल जानौं (सोम मंडल दशाढा॰ सूर्यमंडल उसके बीच गर्भस्थान है) तिसमें प्रदीप ज्योतिकी तरह अग्नि बैठा है॥ जैसे सूर्य आकाशही में बैठाहुआ अपने तेजकी भरी किरणों से छोटे बड़े सब तलावोंको जल खींचके सुखाताहै उसीतरह छोटेबड़े हरएक शरीरधारी का भोजन किया पदार्थहै सो नाभिमें बैठाहुआ अग्नि अपनी तेजकिरणों से शीघ्रही पचाय देताहै चाहें नानाभाँतिके शाकादि व्यंजन सहित सिद्ध भोजनहोय या चाहें कोई कठोर कच्ची चीज़ खाईहो तिसकोभी पचाताहै॥ (पित्त गीला ढरकना द्रव रूपहै॰ यद्यपि द्रवरूपी एक तेज का समुदाय मिला फूला उसमें होता है तथापि उसके तेजका भाग जितनाहोय वही अग्निका तेजहै इसी कारणसे पित्तभी अग्निके तुल्य मानाजाता है जैसे लोहका गोला जब अग्निसे अत्यंत तपाया जाय तब अग्नि के तुल्य होजानेसे अग्निही कहाजाताहै यह सबहीका सिद्धांत ठहिरा इसी धोखासे कोई पित्तको अग्नि और कोई अग्निको पित्त जाननेलगतेहैं) उस अग्निका कितना बड़ा रूप है सो आगे लिखते हैं॥ हाथी आदि जो बड़े मोटे डौलडौल वाले प्राणी होयँ तिनमें एक जौकी बराबर अग्नि होता है॰ मनुष्य आदि छोटे पतरे डौलडौल वालेहैं तिनमें एक तिलकी बराबर अग्नि होती है॰ कृमि कीटपतंग आदि तुच्छ देह वाले जीवों में बार की नोक बराबर अग्नि रहताहै॥ यहाँ तक बारह भेदों में अधिकोक्ति पूरीभई जो ९३ से ९९ तक सात श्लोकों मध्ये लिखीगई॥ ९३॥ ९४॥ ९५॥ ९६॥ ९७॥ ९८॥ ९९॥

(अन्यच्च शरीराभ्यंतरज्ञानं)

सिराःशतानिसप्तैवनवस्नायुशतानिच। धमनीनांशतेद्वेतुपंचपेशीशतानिच १००

एकोनत्रिंशल्लक्षाणितथानवशतानिच। षट्पंचाशच्चजानीतसिराधमनिसंयुताः १०१

त्रयोलक्षास्तुविज्ञेयाःश्मश्रुकेशाःशरीरिणाम्। सप्तोत्तरंमर्मशतंद्वेचसंधिशतेतथा १०२

अर्थः—सिरा नामकी नाड़ीं जो नाभि से निकसती हैं ७०० सातसौ जानना॰ तथा स्नायु नामकी नसें जिनसे सब अंगों के बंधान बँधे रहते हैं सो नौसे ९०० जानना॰ तथा धमनी नामकी नाड़ियाँ जो नाभि से उत्पन्न होती हैं सब दोसौ २०० जानना॰ तथा पेशी नाम मांसकी गुटियाँ पिंडीं सब देहमें ५०० पाँच सौ होती हैं॥ १००॥

है अथवा० उनतीस लाख नौसौ छप्पन २९००९५६ संख्या होती है सब अंगों में सिरा और धमनी नाम की नाड़ियाँ मिलकर यह जानो ॥ १०१ ॥ औरभी शरीरमें दाढ़ी मूछ तथा शिरके बाल मिलकर तीनलाख जानने चाहिये और इनशरीरों में एकसौ सात मर्मस्थान हैं तथा दोसौ संधि मिलाप भी होतेहैं ॥ १०२ ॥

१०० अधिकोक्तिः—मिताक्षराकार इसपर कहते हैं कि नाभि में संबंध रखने वाली सिरायें जो संख्या से चालीस होती हैं उन्हीं की बड़ी छोटी अनेक शाखायें बढ़कर सर्व शरीर में फैलतीं और वात पित्तकफों को भर्ती किया करतीहैं वेही सिर्फ चालीस की शाखा वृद्धिसे सातसौ होती हैं—तैसेही अंग प्रत्यंगोंके हाड़ मांस बांधने वाली नसें नौसै होतीं—और धमनी जोनाभिसे उत्पन्नहुई चौबीसहोतीहैं प्राणादि पंचवायुकी वहने वालीं तिनकी शाखा अनुशाखावृद्धि होने सेदोसौहोजातीहैं ॥१००॥ और (२९००९५६) इतनी संख्या जो कहीगई सोभी सिर्फ नाड़ियोंकी नहीं किंतु ८४ चौरासी मूल श्लोकसे लेकर यहांतक जो कुछ अंग प्रत्यंग वर्णनकियेगयेतिनके भी सूक्ष्म अंश जो नहीं वर्णन कियेगये सो सब जोड़के समझना ॥ १०१ ॥ संधी जो बताई सो भी केवल बड़े छोटे हाड़ हड्डियोंके जोड़वालीं सांधि जानना किन्तु नाड़ी सिरा स्नायु आदि के मिलाप वालीं संधें अतिशय बहुत होने से अनन्त हैं जिससे इन की गिनती कुछ नहींकरीजासकतीहै ॥ एकसौसात जो मर्मस्थान कहे तिनका खुलासा ब्यौरा यहाँ लिखते हैं

विशेष रहा करते हैं॥ १ ॥ वे मर्मभी १०७ एकसौ सात हैं इस हिसाव से कि ग्यारह मर्म मांस के ठिकानों पर दृष्टांत जैसे गुदा या चूतर ये उन्हीं ग्यारहमें गिनतीहैं तथा हाड़ों में आठ मर्म होते हैं दृष्टांत जैसे कान के समीप कनपटियों के दो हाड उन्हीं आठ में गिनती हैं ॥ २ ॥ संधियों में वीस मर्म होतेहैं दृष्टांत जैसे मूडमें कपालों की संधि उन्हीं बीसमें गिनती है तथा स्नायु नामनसोंमें सत्ताइस मर्म होते हैं दृष्टांत जैसे वस्ति मूत्रकोशहै सो वारीक खाल और नसोंका संघात एक मर्महै यहउन्हींसत्ताइस में गिनती है•चालीस और इकतालिसहैं सिरामर्म जो सिराओंके मिलापोंके स्थलों पर होतेहैं दृष्टांत जैसे नाभि सिरामर्म यह उन्हीं इकतालिसमें शामिल है•देखो (११ मांसमर्म–८ अस्थिमर्म–२० संधिमर्म–२७ स्नायुमर्म–४१ सिरामर्म) इनसबकाजोड १०७ एकसौ सात मर्म ठहिरे ॥ ३ ॥ (इन्हीं की व्यवस्थासमझो) इनमें से ग्यारह ग्यारह वाईस दोनोंटांगमें इसीतरह वाईस दोनोंवाहूमें और हृदयसे ऊपर तथा दोनों कोषि में तीनों जगह के कुल्ल वारह मर्म होते हैं पीठ में चौदह मर्म जानने तथा घींच और मूडन्में कुल्ल सैंतीस मर्महोतेहैं (वही१०७एकसौसातवाला जोड इसतरह सेभी ठहिरा) इनसव अंगोंमें जितने जितनेहोते हैं कहेगये तिनका वह नियम नहीं है कि एक अंगमें एकही प्रकार के मर्महों किंतु सव अंगों में सवतरह के मिले झुले कुछ सिरा मर्म•कुछ मांस मर्म कुछ संधिमर्मआदि जानने ॥ ४ ॥ फिरभी इनके पांच भेद होते हैं कि) उन्नीस मर्म चोट लगने पर शीघ्रही प्राणहरनेवाले १ ॥ और तेंतीस मर्मों के ठिकाने ऐसेहैं जो कुछ काल के अंतर से मारने वाले २ ॥ और चवालिस मर्म ऐसे जो थोडी भी चोट लगने से विकलता पैदा करते हैं मारते नहीं ३ ॥ और आठ मर्म ऐसेहैं जो चोट लगने से कुछ रोग विगाड़ उनमें घुसि जाता है ४ ॥ विशल्यघ्नंत्रिकंमतं–तीन मर्म स्थान विशल्यघ्नहोतेहैं कि उनमें घुसा हुआ वाण आदिकोई शस्त्र जव खींचि के निकासा जाय तभी तत्काल प्राणहरें या विरले के सातदिन के भीतर तक हरें (ऐसे पाँच प्रकारों से भी वही १०७ एकसौ सात मर्म ठहिरेसव जोड देखो) ५ ॥ जो सद्यःप्राणहर कहेगये वे भी सात दिन के भीतर तक हरते और कालांतर से मारने वाले पखवारे से ऊपर महीना के अंत तक मारते हैं–इस वार्ता का विस्तार अभी बहुत वड़ा वाक़ीहै कि किस अंगमें किस ठिकानेपर के अंगुलका लंबा चौड़ा किस प्रकारका मर्महै वह कितने दिनमें मारताहै इत्यादि एकसौ सातवातें वि-स्तार भयसे नहीं लिखीं सो वैद्यक शारीरकमें देखना ॥१०७॥=२००॥१०१॥१०२॥

———

१०३अधिकोक्तिः—पूर्वोदितसिराकेशादिसहितानां सकलशरीरसुषिरादिरोम्णां परमाणवः सूक्ष्मसूक्ष्मतररूपाभागाः स्वेदप्रवणसुषिरैः सहचतुःपंचाशत्कोट्यः तथा सप्तोत्तर षष्टिर्लक्षाःसार्धाःपंचाशत्सहस्रसहिताः वायवीयैर्विभक्ताः पवन परमाणुभि पृथक्कृताविगएयंते इतिमिताक्षरा=अर्थात—शरीरके जितने बड़े छोटे भाव जुदेजुदे स-मझायेगये सो सब क्या चीज़ हैं इसका उत्तर कहितेहैं कि वायुके अतिसूक्ष्मभाग जो पवनके परमाणु होतेहैं अत्यंत भिंचीसंधों में घुसि जाइसक्ते हैं उन्हींसे पृथिवी आदि के विकार घुसि घुसि जुदे कियेहुये बहुतसे परमाणुओंका संघात गिनाजाताहै नैया-यिक मतसे इसके सिवाय और कुछ नहीं प्रतीत होता है जो कुछ शरीर में दर्शाया गया सिद्धांत इसका यहीहै तिससे ऐसे निःसार शरीरसे मोक्षपाने का प्रयत्न करना सार है॥ १०३॥१०४॥१०५॥१०६॥१०७॥

यहाँतक थोडाथोड़ा संक्षेप शारीरक समझाया गया॰इसी शरीरकी परमगति होने का उपाय भी अगिले परिच्छेदसे दर्शावेंगे॥

—※—

अथब्रह्मोपासनायांज्ञेयस्यध्येयस्यतत्साधनफलस्य चस्वरूपनिरूपणोयंपरिच्छेदः(१२)द्वादशः॥

इस परिच्छेदमें यह निरूपण कियाजायगा कि योगी पुरुष को क्या जानना औ किसका ध्यान किस रीतिसे करना चाहिये और उसकी साधनापूरी करिपानेसे क फलहोता है सोभी कहाजायगा॥

(उपासनीयस्वरूपस्य आत्मनिध्यानं)

द्वासप्ततिसहस्राणिहृदयादभिनिःसृताः। हिताहितानामनाड्यस्तासांमध्येशशिप्रभम् १०८
मंडलंतस्यमध्यस्थआत्मादीपइवाचलः। सज्ञेयस्तंविदित्वेहपुनर्नजायतेनतु १०९

अर्थः—हिता हिता नामकी नाड़ियां ७२००० बहत्तर हजार जो हृदयमें सम तात् निकसीं=अर्थात—(नाभि में मूल रखने वालीं) हृदय समीप में मनुष्य औ हर तरफ़ हृदय को अभिव्यापन करि घेरि के निकसीं किंतु मस्तक तक चलीगई

उस प्रकार से कि जैसे कदम के फूल में सघन केसरों का गुच्छा देखिपरताहो तिनके बीचमें चन्द्रकांतिके समान एकमंडलहै तिसके बीच आत्मा देदाहै अचल दीपजोति के समान वही ज्ञेय है अर्थात उसीको ध्यान द्वारा आराधन करना चाहिये तिसको अच्छेजानिके फिरकभी यहांसंसारी देहोंमें आकर नहींजन्मताहै॥ १०८॥ १०९॥

१०८ अधिकोक्तिः—अपरास्तिस्रोनाड्यस्तासामिडा पिंगलाख्येद्वेनाड्यौ सव्य दक्षिण पार्श्वगतेहृदिविपर्यस्तेनासाविवरसंबद्धे प्राणापानायतने सुषुम्नाख्यापुन स्तृतीया दंडवन्मध्येब्रह्मरंध्रंविनिर्गता तासांनाडीनांमध्ये मंडलंचंद्रप्रभं तस्मिन्नात्मा निर्वातदीपइवाचलःप्रकाशमान आस्तेइतिमिताक्षरा=अर्थात–मिताक्षराकारकहिते हैं किमूलश्लोक में कही७२००० बहत्तरि हजार नाड़ियोंमे उपरालूनाडी तीन और हैं•इडा•पिंगला•सुषुम्ना•योगशास्त्र के अनुसार•इनमें इडा बायें नथुना और पिंगला दाहने नथुना तक हृदयसे जाकर दोनों छिद्रों में पैठीहैं यही दोनों प्राण अपानदोनों वायुका स्थान हैं और तीसरी सुषुम्ना नाड़ी हृदय से निकसी हुई लाठी के समान सीधी नासाकेबीच होकर कपालमें ब्रह्मरंध्र तक चली गई• इन सब नाड़ियोंके बीच उसी सुषुम्ना की मूलपर एक चंद्रमा के समान उज्ज्वल कांतिवाला मंडल है जिसमें आत्मा रूपसे परमात्मा विराजमान है जैसे पवन रहितके समान जैसे पवनसे निर्वात मंदिर में दीपक निरन्तर एक रस अचल रहता हुआ प्रकाश देता है तिसके ध्यान मे लगना चाहिये॥ १०८ ॥ १०९॥ इसी स्थान की पूजा नीचे दर्शाते हैं॥

(

जो हृदयबीच पूर्वोक्त मण्डल में दीपक तुल्य प्रकाशमान बैठाहै सो इस रीतिसे ध्यान करिबेयोग्य है कि मन को बुद्धि को सब इन्द्रियों को यादिको सभी कामैं और सभी बातोंकी तरफ़से खींचिके केवल उसी आत्मामें समर्पण करै॥ १११॥

११०अधिकोक्तिः-(योगंअभीप्सता) इस पद में योग शब्दका यह अर्थहै कि संसारके सभी विषयरूपी धंधोंको छोड़ि उनकी उपेक्षासहित अपने चित्तकी वृत्तियां उनकी ओरसे खींचि एक मनही में आत्मा के ऊपर उन वृत्तियों को लगाना जोड़ना यही योगहै तिसकी सिद्धि चाहने वाले योगी को आरण्यक बिचारना चाहिये जो वृहदारण्यक नामसे भी वेदही का अंग ब्राह्मण विशेष कहाजाताहै जिसको योगीश्वर याज्ञवल्क्य ने (अरण्यस्थान) वन में रथ चलते हुये सूर्यनारायण से पढ़ा था॥ ११०॥ योगी के योगरूपी ध्यान का कर्त्तव्य रूपयही है कि चित्तकी वृत्तियों को सब ओरसे ऐसे खींचिके आत्मा में एकत्र करै जैसे प्रज्वलित दीप ज्योतिका प्रकाश दूरफैलाहुआ भी दीपकपर शरावा ढाँकि देनेसे खिंचिकर उसी ज्योतिमें समाइ जाता है इस रीतिसे उस आत्मा के ध्यान में लयलीन होवै जो यह अनंतरोक्त १०९ श्लोक में कहागया प्रभु दीपके तुल्य अपने हृदय में प्रकाशमानहै॥ १११॥

(अशक्तौतुशब्द ब्रह्मोपासनं)

यथाविधानेनपठन्सामगायमविच्युतम्। सावधानस्तदभ्यासात्परंब्रह्माधिगच्छति ११२

अपरांतकमुल्लोप्यंमद्रकंमकरींतथा। आवेणकंसरोबिन्दुमुत्तरंगीतकानिच ११३

ऋग्गाथापाणिकादक्षविहिताब्रह्मगीतिका। गेयमेतत्तदभ्यासकरणान्मोक्षसंज्ञितम् ११४

अर्थः-सावधान संन्यासी यथाविधानसे सामगायको अविच्युत पढ़न करतेहुये उसी अभ्याससे परंब्रह्मके समीप जाताहै=अर्थात-सामवेदकी श्रुतियाँ स्वरके साथ गाई जातीहैं तिससे उसको सामगान और सामगाय भी कहितेहैं उसी सामगाय को जैसा उसकेगानेका विधान सामवेदमें उपस्थितहोय उसीविधानसे संन्यासीआप सावधान होते (अविच्युतनाम) नित्यंप्रति अखण्ड नियमसे पढ़न अर्थात् गान करते करते उस अभ्यास के प्रभावसे परंब्रह्म के समीप तक पहुँचता है (शेष च्योंग चन्द्रिकोक्ति में देखौ॥ ११२॥ अपरांतक॰ उल्लोप्य॰मद्रक॰मकरी॰ आवेणक॰सरोबिन्दु॰उत्तर॰ ये सात अपने प्रकरणों में कहे गीतोंके भेदहैं (और चकारके ग्रहणपर्यसे आश्रावित वर्धमानतादि महागीत भी ग्रहण किये जातेहैं मिताक्षराकारने यह कहा॥ ११३॥ ऋग्गाथा॰पाणिका॰दक्षविहिता॰ब्रह्मगीतिका॰ये चारों गीतिका कहातीहैं उनका

हाथ या पैर या घूंटा या थपकी वा अँगुरी या लकडीआदिसे हरकोईसुननेवालाभी तालमिलाया करताहै तिसका भी स्वरूप संन्यासीजन जानताहो (तात्पर्यअधिकोक्ति में देखो॥११५॥ यह गीतज्ञ संन्यासी यदि गीतरूपीयोगसे कदाचित (चित्तविक्षेप आदि कारणोंसे लयभंग होकर) परम पदको नहीं पावै तौभी रुद्रका अनुचर होके उसीके साथ सुख भोगता है॥ ११६॥ एवंप्रकार तुम सबको आत्मा का अनादि होना कहिसुनाया फिर उसकी आदि जो शरीर है सोभी कहा•आत्मासे सब जगत होताहै सोभी कहा फिर जगत सेभी आत्मा की उत्पत्ति कही=अर्थात–सत्तरि मूल श्लोकसे लेकर अनादि आत्मा का स्वरूप और उनहत्तरि श्लोक उत्तरार्धसे उस को आदि भी शरीर धारण करनेसे कहिकर आगे सत्तरि मूलश्लोकसे ८३ तिरासी तक उसी परमात्मा के सकाशसे आकाश पृथ्वी आदि समस्तभुवनों की उत्पत्ति कही और उससे उत्पन्न हुये पंच महाभूतों के मिलाप से स्थूल शरीर बनने के द्वारा सब जीवों की उत्पत्ति भी कही॥ ११७॥

११५ अधिकोक्तिः–श्रुतियों तथा जातों में प्रवीण होना यह कि•वेदोक्त गान विद्यामें सातस्वरोंकी अठारह जाति और बाईस श्रुतियाँ होतीहैं (षड्ज•ऋषभ•गांधार•मध्यम•पंचम•धैवत•निषाद) ये सात स्वर होतेहैं येही सात इनकी मुख्यजाति कहाती हैं फिर इनमें से दो दो आदि के मिलाप से ग्यारह जातें और भी होजाती हैं वह संकरजाति कहाती हैं तिससे शुद्ध७और संकर ११ दोनों मिलकर अठारह जातें स्वरोंकी ठहरती हैं–यथा–षड्ज•मध्यम•पंचम•इन तीनों स्वरमें चार चार श्रुतियां होतीहैं सो बारह ठहरीं ऋषभ•धैवत•इन दोनोंमें तीन तीन श्रुतियाँ होतीहैं बारह में जोड़िके अठारह ठहरीं•गांधार•निषाद•इन दोनोंमें दो दो श्रुती लगतीहैं सब जोड़िके बाईस २२हुईं–इन्हीं सर्वश्रुति जातिमें प्रवीणहोय अर्थात इनके स्वरूप उत्पत्ति स्थान आदि सब जानें–दृष्टांत–जैसे नाभिके भीतरसे उठायाहुआ स्वरकण्ठमें निकसतेहुये वृषभके शब्दसम गरजताहै इसीलिये ऋषभ स्वरनाम उसका धरागया क्योंकि वृषभको ऋषभ कहिते हैं–जैसी यह ऋषभ स्वरकी उत्पत्ति कही तैसेसातोंकी जुदी जुदी फिर ग्यारह संकर जातोंकी जुदी जुदी फिर बाईस श्रुतियोंके जुदे जुदे लक्षण उत्पत्तिआदि जाने और वीणा सहित अपने कंठके द्वारा सबकागान भी यथा विधि से कर सक्ताहो तो श्रुति जातिमें विशारद कहलाता है–इस प्रकारसे शब्दरूपी ब्रह्म की उपासना मे सुगमता सेही चित्तकी वृत्ति आरोपित होजातीहै क्योंकि स्वरतान आदि भंग होजानेके भयसे चित्तकी वृत्तियां अवश्य रोकनीपरतीं और स्वरगीत•

(मोहजाल) अज्ञान का माया जालहै सोसब जुदा मानिके उसके उपरालू जो कोई एक पुरुष प्रतीत होताहै वही सहस्रां अर्थात असंख्य हाथ पैरौंवाला असंख्य नेत्र मस्तक वाला और असंख्य सूर्यों के समान तेज वाला भी है (अर्थात देव राक्षस मनुष्य आदि सभी जीवौंके हाथपैर मस्तक आदि की संख्या जो कुछ तीनौं भुवनमें हो सक्तीहो सो सब अंग उसी एक पुरुषके हैं किन्तु उसीके प्रत्यक्ष जो उसकी शक्ति उपस्थित रहिती है तिसके आधार सहारेपर ये सब तीनौं भुवनके हाथपैर नेत्रआदि इन्द्रियाँ कामदेती हैं) परन्तु वह पुरुष किसीके सन्मुख आकर नहीं दिखाई देता है (११८) वही पुरुष सब जीवौं में आत्मारूपहोके उपस्थित और वही यज्ञों का रूपहै अर्थात् नित्य नैमित्तिक तथा काम्यभेद वाले सभी यज्ञोंका स्वरूप वहीआप है इसीसे यज्ञ पुरुष भी उसका एक नामहै और विश्वरूप अर्थात समस्त जगत का आत्मारूप है क्योंकि विराज रूप होनेसे अर्थात मस्तक जिसका स्वर्ग आदि ऊपर के लोक और पाताल पैर और भूतल मध्यम अंग है इत्यादि लक्षणों से ब्रह्माण्डमात्र सब स्थूलरूपी देहका अभिमानी वही पुरुष है जो विराट भी कहाजाता(एकसोपचीस १२५मूलश्लोकसे१२८तकचारिश्लोकदेखो)औरप्रजापतिवहीआपहै अर्थात्प्रजाकी उत्पत्ति या वृद्धिकरनेवाले चतुर्मुख ब्रह्मा और दक्ष आदिरूपौंसे आपही वर्त्तमान है तथा राजा महाराजा आदि नरपाल भी प्रजापति होतेहैं तिनके भी रूपौंसे आपही वर्तमानहै तथा विश्वकर्मा और सूर्य्य और अग्नि भी प्रजापति कहाते हैं तिनके भी रूपौंसे आपही वर्तमानहै (इसवार्ताके निमित्तसे गीतामें विभूति अध्यायभी देखना चाहिये) वहीपुरुष आप अन्नरूप होकर तिल घृत खांड मेवा आदि अन्नौंका पुरोडाश बनिकर अपनेही अग्निरूप में मिलि के यज्ञरूप बनिजाता है (फिरभी उसी यज्ञसे वर्षारूप बनिकर उसीवर्षासे अन्नादि औषधियौंकारूप लेकर उन्हीं अन्नौंमें रस धातुकेद्वारा शुक्रधातुका रूपलेकर गर्भों में जाकर फिर प्रजारूप होजाताहै बहुतेरी जीवौंकी संतति केवल वर्षाके होनेसेही पृथ्वीसे आपही आप शुक्रधातुके बिनाही उत्पन्न होजाती है तिससे संपूर्ण विश्वरूप होना उस पुरुषका प्रत्यक्ष है) इस वार्ताका विशेष ब्यौरा ७१ इकहत्तरि के मूलश्लोक से भी देखो तथा यहां भी अगिले श्लोकोंसे दर्शाते हैं॥ १२० ॥=११८ ॥ ११९ ॥ १२० ॥

——*——

१२१ ॥ १२२ ॥ १२३ ॥ उसी (जलसे उत्पन्न हुये) अन्न से (कि जो सब तरह के अन्नादिक पदार्थही प्रजाकी उत्पत्ति पालन करनेमें कारण हैं तिनसे) फिर यज्ञहुये• फिर सी (पूर्वोक्त रीतिके द्वारा) उन्हीं यज्ञों से वर्षा होकर अन्न पैदाहुये फिर उन्हीं से क्रतुयज्ञ होने लगे•एवं इसी प्रकार से यह समस्त संसार एक चक्र वड चाक के अनुरूप खूब घूमता रहिता है कि इसका परिवर्तन वेग (घूमना चक्कर खाना) कभी थमता नहीं (अर्थात् कभी अगिला भाग पीछे कभी पिछला भाग सन्मुख आजाता रहिता) इसी कारण यह संसार अपने उत्पत्ति और विनाश इन दोनों से विहीन ठहिरता है क्योंकि परमात्मा का स्वरूपही विराट रूपसे संसार ठहिरा तो फिर उस अविनाशी के रूपका विनाश नहीं होसकता न कभी उसकी उत्पत्ति होनी कही जासकती क्योंकि सदा सर्वदा से यह इसी प्रकार वर्त्तमान चला आता है फिर उत्पत्ति किसकी कहीजाय ॥ १२१ ॥ १२२ ॥ १२३ ॥ १२४ ॥

१२४ अधिकोक्तिः—अपने भ्रमरूपी संदेहमय प्रश्नोंको याद करो कि जगत में आत्मा कैसे उत्पन्न होताहै-सो सब समुझाया गया कि इस अनंतरोक्त क्रमसे आत्मा आपही जगत्‌रूपहै और इसी क्रमसे आत्मा के प्रकाशसे संपूर्ण जगत् की उत्पत्ति होतीहै और इसी जगत् में वह आत्मा (सरसठि ६७ श्लोकसे चर्चा कियेहुये विदेश रूपोंसे) निज कर्मानुरूप शरीरोंका परिग्रह करता है ॥ संसार यद्यपि उत्पत्ति और विनाशसे विहीन है तथापि इसके प्रलय और उद्भव जो प्रसिद्ध किये गये सो केवल सूर्यके उदयास्त सम कल्पित किये कहाते हैं—अर्थात् जैसे सूर्य कभी न अस्त होताहै न उदय होताहै सदा सर्वदा प्रकाशमान रहिताहै परंतु जिस समय जिनदेशों मे पर्वतकी आड होजानेसे देखि नहीं परता तब उतने समय तक रात्रि कहिके सूर्य का अस्त हुआ मानि लेते हैं इसी प्रकार जिस समय जिन देशों के सन्मुख आजाताहै तहां उतने समयतक दिनकहिकर सूर्यका उदयहुआ मानिलेतेहैं(क्योंकि जो ऐसी कल्पना न करीजाय तो वार्तालाप में दिनरातिके व्यवहार कैसेचलें तिससे नामसात्रही के निमित्तसे उदय अस्त कल्पितमानेगये) तैसेही संसार जब ईश्वर की प्रतीतिरूपी मायाके आड़में होजाता तब उनका प्रलयकहाने लगताहै• जब उसमाया की आडसे निरालाहोता तब उत्पन्नहुआ कहाने लगताहै किन्तु यथार्थमें न उसकी उत्पत्तिहै न प्रलय•तिससे भ्रमरूपी मोहको त्यागो ॥ ० ॥ नकर्मा ... मनुष्योंके सर्व स्तों के दोभेद प्रकट करनेके निमित्तमे अपानात्म अमगनात्म ये दो विशेषण दिये गयेहैं तहां अगनमंज्ञा खानेकी और आत्मसंज्ञा रूपकी ये दोनों मिलिके यह सर्व

इसका आदि अंत नहीं यह सदासे ऐसा चला आताहै—तौ फिर निर्मुक्ति कहांसे हो-सकती है क्योंकि प्रथमतौ इस संसार के जंजालसे उसीकी निवृत्ति कभी नहींहै फिर औरकोई मुक्तिकाभरोसा उससे क्याकरैं—इसके समाधान मध्येनीचेका वचनदेखो॥

(समवायीपुरुषः)

अनादिरात्मासंभूतिर्विद्यतेनांतरात्मनः । समवायीतुपुरुषोमोहेच्छाद्वेषकर्मजः १२५

अर्थः—आत्मा अनादिहै अंतरात्मा को संभूति नहीं विद्यमान होतीहै—मोहइच्छा द्वेष कर्मों से उत्पन्न समवाय वाला पुरुष होताहै=अर्थात—यह बात यद्यपि सत्य है कि आत्मा के अनादि होनेसे अंतरात्मा की संभूति नाम (जन्म लेनेसे) उत्पत्तिउस आत्मा अनादि को नहीं व्यापती है (यही उसकी समर्थकी विचित्रताहै कि मिला-रहै अरु नामिलै तासेकहा बसाय) यहांपर (आत्मापरब्रह्म को समझना अंतरात्मा उस चिदंश को समझना जो संसारी देहों के भीतर आके प्रविष्ट होताहै) और (सं-भूति केवल देहों के उत्पन्न होने को समझना तथा और सब संसार की वस्तु जो जो होती हैं तिनके भी उत्पन्न होजाने मात्र को संभूति समझना अर्थात यह संभूति उस आत्मा के अन्तरात्मा को भी नहीं व्यापती है अनादि होने के हेतु से) यद्यपि नहीं व्यापती है तथापि पुरुष देहमात्र से समवायी होता है किन्तु (समवाय भी दो भाँतिसे कहाता है एक तो सूधीरीति से यह समझ लेना कि अनेक वस्तुओं का संग्रह इकट्ठा होना समवाय कहाता है जैसे देहरूपी कलेवरमें ८० अस्सी श्लोक से लेकर १०७ एकसौ सात श्लोकतक जो कुछ दर्शाया सो सबका जमाहोना समवाय संबंध समझना) दूसरा नैयायिक मतसे यह ढंग है कि (नित्येद्रव्यादिषु जात्यादीनां संबंधभेदः समवायः अर्थात जो वस्तु अनित्य नहीं नित्यहै जैसे पृथ्वीआदि पांचोतत्व नित्यहैं यथार्थसे कलेवरमें भी येही पाँचतत्व हैं छठा आत्मा आप है ७२ बहत्तर श्लोकमें देखो सो उन्हीं नित्यद्रव्यों में नामजाति रूपों से अनेक संबंध भेद करदेना समवाय कहाताहै जैसा इसीजगे ७३ । ७४ तिहत्तर चौहत्तर श्लोकों में देखो कि छठे आत्माने उन्हीं पाँच तत्वोंसे कितने संबंध भेद करदिये जिनके अनेक नाम भेद कहिने परे) दो भाँतिसे समवाय होना दर्शाया सो दोनोंका एक ही तात्पर्य केवल समझने मात्रके निमित्तसे दो भेद कहाये अब ऊपर ध्यान करो कि पुरुष देहमात्र में समवायी कहा तिसका यही तात्पर्य है कि वह चिदंशरूपी पुरुष कलेवरमें समवाय इकट्ठा करनेवाला दिखता है अर्थात उसको अपने जन्मने या मरने आदि में कुछ

(जगतःप्रारम्भेचतुर्वर्णोत्पत्तिः)

सहस्रात्मामयायोवआदिदेवउदाहृतः। मुखबाहूरुपज्जाःस्युस्तस्यवर्णायथाक्रमम् १२६

अर्थः—(वःयुष्मान्प्रति मैंने जो सहस्रात्मा आदिदेव तुमसे उदाहृत किया तिसके मुखबाहु जंघा पादसे यथाक्रम वर्णहोतेहैं=अर्थात—ब्राह्मण आदि चारोवर्ण इसक्रम से उत्पन्न होते हैं कि मुखसे ब्राह्मण भुजाओं से क्षत्री जंघाओं से वैश्य चरणोंसे शूद्र ये उसीसे कि जो पहिले मैंने तुम सब ऋषीश्वरों को सहस्रात्मा आदिदेव समुझाया था (सहस्रात्मा कहिने का यह तात्पर्य है कि सब जीवधारी उसीका रूपहैं तिससे बहुरूप है अर्थात असंख्य सहस्रों रूप वाला सहस्रात्मा के नामसे कहा) आदिदेव इससे कहा कि जगत का सबसे पहिला हेतुरूप वही आप है॥ १२६ ॥

(समस्तजगदुत्पत्तिप्रपंचः)

पृथिवीपादतस्तस्यशिरसोद्यौरजायत। नस्तःप्राणादिशःश्रोत्रात्स्पर्शाद्वायुर्मुखाच्छिखी १२७
मनसश्चंद्रमाजातश्चक्षुषश्चदिवाकरः। जघनादंतरिक्षंचजगच्चसचराचरम् १२८

अर्थः—उसके पैरसे पृथिवी उत्पन्न•शिरसे स्वर्ग•नाकसे प्राण•कान से दिशायें• स्पर्शसे वायु•मुखसे अग्नि १२७॥ मनसे चन्द्रमा उत्पन्न हुआ•नेत्रसे सूर्य•जांघ से अंतरिक्ष और चराचर सहित जगत भी=अर्थात—उसी आदि देव के इन अंगों से ये वस्तु भी उत्पन्न हुईहैं कि पैरोंकी पगतलीसे धरती जो मनुष्यों का आधारभूत लोक है--और मस्तकसे स्वर्गलोक जो देवतों का देशहै और नाक से सामान्य प्राणों की उत्पत्ति हुई कि जो सबजीवोंमें वही प्राण होतेहैं उनके बिना कोई जीव न जीसके- और उसीके कान छिद्रसे दशो दिशा भी उत्पन्न हुईं कि जिनके बीच बड़े तीनों भुवन और चतुर्दश लोकोंकी स्थिति रही आतीहै (कदाचित ये दिशायें न होतीं तो बड़े बड़े लोकों का स्थान किस ठिकाने पर होसकता था)--स्पर्श नाम है छुईजाने वा छुइ सकने योग्य का इसीसे त्वचा भी स्पर्श नाम सक इन्द्री कही जातीहै कि उससें वायु का स्पर्श होनेसे वायुका स्पन्द जाना जाताहै सो वायु उसी आदिदेव के स्पर्शसे उत्पन्न हुआहै कि जगत के कोई काम उसके बिना न चल सकते-और उसी आदिदेव के मुखसे अग्निकी उत्पत्ति हुई कि जिसमें होम करनेसे उसी आदिदेव के मुखसें पहुँचजाता है=उसी आदिदेव के मनसें से चंद्रमा की उत्पत्ति हुई कि चंद्रमा की अमृतमय शीतलता जो प्रकाशमान है वही उसके मन का स्वरूप है और उसी आदिदेव के नेत्र की ज्योति अर्थात कोई एक किरणों की आभासाथ से सूर्य

(उत्तर स्वरूपं)

अंत्यपक्षिस्थावरतांमनोवाक्कायकर्मजैः। दोषैःप्रयातिजीवोऽयंभवंयोनिशतेषुच १३१
अनंताश्चयथाभावाःशरीरेषुशरीरिणाम्। रूपाण्यपितथैवेहसर्वयोनिषुदेहिनाम् १३२

अर्थः—मन वचन कर्म इनसे उपजे दोषों से यह जीवही सैकरों योनिमें भवजन्म से अंतयोनि पक्षीयोनि स्थावरत्व को जाता है=अर्थात—तुम्हारे संदेह के अनुसार यद्यपि यह सत्यहै कि वह आत्मा ईश्वर होने से अपने स्वरूपही से सत्यरूपी लक्षण और ज्ञानरूपी लक्षण और आनन्दरूपी लक्षणसे संपन्नहै तौभी यहसब शुद्धलक्षण उसी एक परब्रह्म के स्वरूप में समझना (जिसका सरसठि ६७ के श्लोक से चर्चा आचुका है कि उस में से फुलिंगे उड़ते हैं सो सब जीवरूप कहे जातेहैं) सो यहजीव जो उसीका किंचित मैलरूपी अंश उड़िकर जन्म लेताहै उसीका संबंध यहाँ समझि लेना कि जीवही शक्तिहीन होकर उसकी अविद्या माया के आवेश में वशहोकर मोहरारा आदि भावों से लिप्त होताहुआ उन कर्मों का आचरण करने लगता है कि जिनके प्रभाव से अवश्यही नाना भाँति नीच योनियों में जन्म लेना परताहै (केवल मानस कर्मोंका आचरण उस दशा में भी समझना कि जबतक कोई एकभी जन्म उस जीवने न पायाहो किंतु उसी मानस कर्मके प्रभाव से सबसे पहिला जन्म लेना परैगा चाहें किसी योनि में हो तहाँ फिर कायिक और वाचिक भी भले बुरे जैसे कर्मोंका आचरण होने लगा होगा उन्ही के अनुरूप उसको ऊँच नीच योनिमेंजाना परता है) इसीलिये मूल श्लोक में ये कर्म तीनों भाँति के दर्शाये गये कि एक मन से जैसा भला बुरा विचार मात्र कियाहो १ दूसरे वाणी से भला बुरा जो कुछ उच्चारण कियाहो २ तीसरे काया से कि जैसा किसीके बुरी तरह धक्का मारा या भली तरह स्नेह प्यार किया हो ३ इत्यादि—इन्हीं कर्मों से उत्पन्न हुये जो कुछ दोषधर्म जीवके ठहिरतेहैं तिन दोषों के प्रभावसे यह जीवही सैकरों हजारों योनि में भवजन्म को पहुँचता है तहां यह भेदभी अवश्य आनिपरता है कि बुरे मानस कर्मों के दोषसे अंत्ययोनि अर्थात चंडाल आदि जातिमें जाना परताहै और वाणीसे उत्पन्न हुये दोषों के दोष से काक उलूक आदि पक्षियों की योनिमें वा पशुओं की योनिमें भी जन्म लेना परता है और काया से उत्पन्न हुये कर्मों के दोषसे स्थावर वृक्षादिक योनि में उत्पन्न होना परताहै (इत्यादि की व्याख्या आगे मनुका वचन है सो देखो) ।१३१। और शरीरियोंके शरीरोंमें जैसे अनंत भाव होतेहैं तैसेही यहाँ सब योनियों में देहियों

सेही उत्पन्न हुआ और इसमें भी इच्छा उसी ब्रह्म की बलवानहै=कि=जिन फुलिंगे रूपी जीवोंका प्रथम कोई संसारी देह जब तक नहीं मिला केवल उसी सूक्ष्म रूप शरीर में रजोगुण तमोगुण सतोगुण इनके प्रभाव से जो जो मानसिक भाव उत्पन्नहोते रहे सो भी अत्यन्त सूक्ष्म रूपसे केवल बीजमात्रही अंकुर उठते हैं कि जिनके प्रभाव से प्रथम कोई न कोई सी एक योनिमें देह उनको मिलजाती है फिर तो स्थूल देह पाकर उन्हीं पहिले बीजोंकी वृद्धि भी हरतरह होती रहिती है कि जिस योनिमें पहिला देह पाया तहां थोड़े बहुत पाप या पुण्य रूपी और भी कुछ कर्म किये तिनसे फिर और कोई योनि पाई तहां फिर और भांति कर्मोंकी वृद्धि हुई इसी प्रकार फिर फिर आवागमन की शृंखला बँधि जाती है॥ १३१॥ १३२॥

कदाचित् यह शंका आरोपित करी जाय कि जब कर्मही को प्रधानता ठहिरी कि वह सूक्ष्मरूपी जीवहू कर्मसे खाली नहीं तो फिर कर्मका फल भी तत्काल मिलना चाहिये कि जब कर्म किया गयाहो अर्थात् देहांतर वा जन्मांतरका चर्चा आप क्यों करतेहैं—सो इसका नियम नीचे वर्णन करते हैं॥

(कर्मविपाकनियमाः)

विपाकःकर्मणांप्रेत्यकेषांचिदिहजायते। इहवाऽमुत्रवैकेषांभावस्तत्रप्रयोजकम् १३३

अर्थः—किन्हींएककर्म्मोंका विपाकप्रेत्य होताहै॰किन्हींकायहां॰औरकिन्हीं का इहाँ या वहाँ भी॰तिस में प्रयोजक भाव है=अर्थात्—कुछ तो कर्म्म ऐसे हैं कि जिनका विपाक फल प्रेत्य ही (अर्थात् दूसरे जन्मों के देह में जाकर) मिलता है (इसका दृष्टांत जैसे ज्योतिष्टोम आदि बहुधा यज्ञों का फल इस देह में नहीं किन्तु दूसरे देहमें जाकर होता यही नियम है) और किन्हीं विरले कर्मोंका फल इसीदेहमें देहसे मिल जाताहै (दृष्टांत जैसे कारीरी नाम एक याग होता है कि वर्षा होना आदि जिस कामनासे ठीक ठीक कियाजाय सो फल वर्षा आदि इसी देहसे तत्काल प्राप्त होता ऐसे और भी अनेक कर्म्म होते उनका यही नियम है कि जैसे दशरथने पुत्र कामेष्टि यज्ञ किया था चारपुत्र इसी देहमें फल मिले) और बहुधा कर्म ऐसे भी होते हैं कि जिनका विपाक फलचाहे इसी देहमें होजाय यहां इहां किसी हेतु से न मिले तो अमुत्र वहां दूसरे देह में ही जाकर मिलनाहै अर्थात् इनमें कोई एक नियम नहीं किंतु जैसा कर्मोंका प्रभाव होगा उसके अनुसार चाहे यहां फल मिले या वहां जाकर मिले॥ तिसमें यहतर्कना अनुचितहै कि कर्मपूराहोते तत्कालही

तत्परहो और (पिशुन) जो पराये कानमें धीमे बोलिके पराई चुगली चाई की बातें बहुधा किया करें जो बातें सुनिके किसीको उद्वेग या क्षोभ होता हो और (अनिबद्ध प्रलापी) वह पुरुष जो विना ठीक जोड़के असंगत बातें बनाकर पुकारता फिरै कि जिन बातोंका संसर्ग भी सम्भव नहीं था ऐसा पुरुष पशू आदि मृगजीवोंकी योनिमें या किसी प्रकारकी पक्षी योनिमें जाकर जन्म लेता है-वहां भी ये भेद उसमें जुरे हैं कि जिसने उक्त बातें जानि बूझिके बनाई और बोली होंगी सो अति नीच पशु पक्षी की योनि पावै या जिसने विना समुझे कुछ धोखेसे उस भाँतिकी बात बोलीहोगी सो कुछ अच्छे पशु पक्षीकी योनिपावै इत्यादि नानाभाँतिसे असंख्य भेद होतेहैं॥ १३५॥

विनादिया लेनेमें निरत और पराईदाराका उपसेवक और अविधान से हिंसक सर्वथा स्थावरोंमें जन्मता है=अर्थात्–ये काया कर्म होतेहैं जो हाथआदि कायासे कियेजायँ किंतु जो विनादिये विराना धन हरनेमेंतत्परहो और विरानीस्त्रियोंके भोगने में लगा रहिता हो और विना विधान के हिंसा करता हो अर्थात् शास्त्रोक्त बलिदान या शास्त्रोक्त प्राणदण्ड या शास्त्रोक्त धर्मयुद्ध इनसे उपरान्त जो जीवोंकी निरर्थक हिंसा यद्वा इन्हीं कामोंमें विधिको छोड़ि विना विधिके हिंसा करता हो सोभी वृक्षादि स्थावर सृष्टिका जन्म जाकर पाताहै उसमें भी असंख्य भेदहैं कि यहाँ जिसने जैसा बड़ा छोटा दोष उत्पादन किया होगा तैसे बड़े छोटे उत्तम मध्यम नीच स्थावरों में जन्म उसको मिलता है कि आँब या बबूर आदि वृक्षहो या लताबेलिहो या प्रतान छतरीला पेड़हो इत्यादि–क्योंकि विना दिये धन हरनेमें भी नाना भेद होते हैं कि जैसे कोमलता से फुसिलाकर हरा या कठोरतासे मारि पीटिकर छीना या चोरीसे हरा या धोखा देकर या सौंपा हुआ नहीं दिया इत्यादि सभी बातों में असंख्य भेद होते हैं॥ १३६॥

के उपभोग या विना दिये धन हरनेकेद्वारा कायाकर्मभी उत्पन्नहुये तिनसेफिर पशु पक्षीकी योनि और स्थावर वृक्षादिकों की योनिमें भी जानेलगे तव क्रमसेऔर सृष्टि भी उत्पन्न हुई•तौ इसक्रमसे बडा विलम्ब वीताहोगा तव संसार पूरा वनाहोगा किंतु यहभी एकसंदेहरूपीदूषणपायागया कि एकसाथही सवसृष्टिकी उत्पत्ति न होसकी होगी क्योंकि कर्म वीजों के आधीन होकर इसी क्रमसे वृद्धि हुई=समाधान•सुनौं सृष्टिके उत्पन्नहोने मध्ये कोईसा एकहीमार्ग ऐसा नहींहै कि जिसका भेद सुगमता से हर कोई पासके (नेतिनेति) ऐसा कहिकर वेदकी श्रुतियाँही अपनी अशक्ति दर्शाती हैं फिर औरोंकी क्या सत्ताहै जो ईश्वरके निःशेष मार्गों का भेद होसके—सव से पहिली सृष्टि की आदि में विशेषकर कर्म वीजोंकी आवश्यकता ईश्वरको नहीं भी होतीहै जैसा मनुका अग्रोक्त वचन है=मनुराह=यंतुकर्मणियस्मिन्सनियुंक्तप्रथमं प्रभुः सतदेवस्वयंभेजेसृज्यमानःपुनःपुनः=अर्थात—वह समर्थ प्रभुने सवमे पहिले कल्प में जिस जीवको जिस कामके धन्धे में अपनी सामर्थ्य से लगादियाथा वहीजीव फिर वारंवार कल्पोंकी रचना समय जव जव सृजाजाता है तव तव आपही उसी कर्मको भजने लगता है (जैसा इसवचनमें कर्म वीजोंका प्रयोजन कुछ आवश्यक नहींठहिरा तैसे और भी सृष्टिके अनेक मार्ग हैं) इसी मनुवचन के अनुकूल अरसठि का श्लोक और उसी की मिताक्षरा में जो वचनहैं सोभी देखो कि केवल कर्म वीजोंका नियम उसमें नहीं है—औरभी—एक सौ तरेसठि १६३ का श्लोक आगे देखना कि उसमें कर्म वीज से उपरान्त अन्य कारण भी दर्शाये जायँगे तिससे ऐसी शंका न करनी चाहिये—और—यथार्थ में सवसे पहिला कल्प ही कोई नहीं है क्योंकि जो सव में पहिला कोई कल्प ठहिरै तौ परमात्मा की आदि भी जानीजाय उसकी आदि नहीं है वह अपनी प्रभुताकी सामर्थ्य सेही सव जाय सवकुछ उत्पन्न करसकताहै (उसके प्रमाण मध्ये एकसौछव्वीस आदि श्लोकोंको देखो कि सवकुछ सव साथही उत्पन्न किया) और भी वहत्तरि मूलश्लोक से युगपत शब्द के अर्थों को विचारो कि उसने अपनी समर्थ सेही एकसाथ गर्भमें सव अंग और अनेक भाँतिकी सामग्री नख केशादि आदि का समवाय इकट्ठाकिया और सदा करता रहिताहै कि जिसका व्यापार कोई नहीं जानिसकाहै कवकिया कैसे किया•और भी चौहत्तरि मूलश्लोक (मर्यतदात्मजंसर्व सनादेशादिसिद्धतः) इस श्लोक के अर्थ देखो कि इतना सर्व समवाय उसके पासही से उत्पन्नहुआ किसी मसाले की जरूरत उसको नहीं होती=यथार्थ से=यहां जो एकसौ तीनादि आदि श्लोकों में कर्मों का विपाक वर्णन कियागया

को साधना करताहो—वेद विद्यावित वह कि जो वेदोंके अर्थको जानताहो—इतने लक्षणोंसे पहिंचाना जाताहै कि यह सतोगुण वाला सात्विक पुरुषहै और ऐसा सतोगुणी देव योनिमें जाकर जन्मलेता है-वहाँ भी सामान्य वा उत्तम अति उत्तम आदि देवता योनि उसके अनुसार मिलतीहै कि जैसा थोडा बहुत या उत्तम आदि सतोगुण संचय हुआहो ॥ १३७ ॥ जो असत्कार्योंमें लीन•अधीर•आरंभी•और विषयीभी हो सो राजस जानों वह मराहुआ फिर मनुष्यों में जन्म को पहुंचता है=अर्थात्—गाने बजाने नाचने आदि बहुधा असत्काम तिनके करने या करवाने में जो तत्पर बनारहता हो और अधीर किन्तु व्यग्रचित्त रहता हो कभी सावधानी को न पावै और आरंभी किंतु सदाही संसारी विषयोंके टंट घंट जिसको लगे रहतेहों-इतनेलक्षणोंसे पहिंचाना जाताहै कि यह रजोगुण वाला राजस पुरुष है और ऐसा रजोगुणी मरे पीछे फिर भी मनुष्य योनिमें जन्मताहै वहाँ भी अति हीन वा हीन वा उत्तम अति उत्तम आदि मनुष्योंमें होताहै कि जैसा कुछ अच्छा बुरा राजसगुण संचय होचुका होगा १३८ निद्रालु•क्रूरकर्मा•लुब्ध•नास्तिक तथा याचक•प्रमादवान्•भिन्नवृत्त• तामस जानों वह तिर्यक् योनियोंमें होयहै=अर्थात्—निद्रालू जो सदा दिनमें भी सोता रहताहो—क्रूरकर्मा जो प्राणियोंको पीडा देनेवाले काम करता हो—लुब्ध जो अति लोभी किंतु अनुचित मार्गसे भी लोभ करताहो—नास्तिक जो धर्म आदि की निंदा में तत्परहो—याचक जो सदैव मांगनेका स्वभावही रखताहो—प्रमादवान् जो करने न करने योग्य कामका विचार करसकने में सदा गाफिल रहता हो अर्थात् विचार की शक्तिसे विहीनहो—भिन्नवृत्त जिसने अपना जातीधर्माचार आदि लौकिक कुछ विरोधी आचरण अंगीकार कियाहो—इतने लक्षणों से पहिंचाना जाताहै कि यह तमोगुण वाला तामस पुरुषहै और ऐसा तमोगुणी तिर्यक् तिरछी योनियोंमें अर्थात् पशु पक्षी आदिमें जाकर जन्मपाताहै—वहाँ भी उत्तम मध्यम नीच आदि शरीर उस के अनुसार मिला करताहै कि जैसा कुछ तामसगुणका संचय होचुका होगा ॥ १३९ ॥

॥ एकसौ बत्तीस तेंतीस श्लोकसे आदि लेकर यहाँ तक जो कुछ वर्णाया
तिसको याद दिलातेहुये सबका उपसंहार नीचे कहतेहैं ॥

(पूर्वोक्तस्योपसंहारः)

रजसातमसाचैवंसमाविष्टोभ्रमन्निह । भावैरनिष्टैः संयुक्तः संसारं प्रतिपद्यते ॥ १४० ॥

अर्थः—एवं रज तम दोनों से उत्पन्न आविष्ट हुआ अनिष्ट भावों से संयुक्त हुआ

भ्रमते हुये संसारको पहुँचता है=अर्थात्—एकसौ उनतीस श्लोक में शंकाकरीगई थी कि जो ईश्वरहै जो कैसे अनिष्ट भावोंसे संयुक्त होताहै—तिसका उत्तर यहां उपसंहार में तोड़ करिके समझाते हैं कि—एवं इसप्रकार जैसा छे सात श्लोकों में कहागया तैसे रजोगुण तमोगुण इनदोनों से लिप्तहुआ यह आत्मा का चिदंशमात्र इहाँसंसारही में भ्रमता घूमता हुआ नानाभांति दुःख देनेवाले अनिष्टभावों से संयुक्तहोकर (संसारंप्रतिपद्यते) देहरूप संसार को पाताहै—तिससे उक्त शंका को अवकाश नहीं है १४० ॥ इसीका शेषउत्तर आगे सुनो॥

(पुनश्चाह)

मलिनोहियथाऽऽदर्शोरूपालोकस्यनक्षमः । तथाऽविपक्ककरणआत्मज्ञानस्यनक्षमः १४१ ॥
कट्वेर्वारौयथाऽपक्केमधुरःसन्रसोपिन । प्राप्यतेह्यात्मनितथानापक्ककरणेज्ञता १४२ ॥

अर्थः—मलीन दर्पण जैसे रूप देखाने में समर्थ नहीं तैसे विनापके करणवाला आत्मा अपने ज्ञानको समर्थ नहीं=अर्थात्—एकसौतीसके पूर्वार्ध श्लोक से यह शंका करीगई थी कि मन बुद्धि आदि अंतःकरणसे संयुक्त होतेहुये भी उस आत्माको अपना पूर्वजन्म संबन्धी ज्ञान क्यों नहीं आता• तिसका ब्यौरा बीच में समझाने पीछे अब कहिते हैं कि—हाँ ठीक यद्यपि आत्मा मन बुद्धिआदि अंतःकरण से संपन्नहै तथापि जन्मांतर के वीते वृत्तांत यादि करने में समर्थ नहींहोता क्योंकि भीतरले मन बुद्धि आदि करण औजार जोहैं सो पक्के नहीं अर्थात राग द्वेषआदि मलोंसे जटितहुआ चित्त रहिताहै कि जैसे दर्पणका शीशा मलसे जटि जाताहै (और यही अपनी माया की आड उसने रक्खीहै कि कोई उसका भेदखुल्लम करिके न पाइसके) इसीका दृष्टांत आगे देखो ॥ १४१ ॥ जैसे कड़ुवे एर्वारु फलमें मिठास होते हुये भी कच्चे में रसमीठा नहीं पायाजाताहै तैसे विनापके करण के आत्मामें भी ज्ञता विज्ञता नहीं प्राप्तहोती है=अर्थात्—कदाचित यह शंका भी आरोपित करीजाय कि जन्मांतरों का न जानि सकना जीवधर्मसे भी ठीक पायाजाताहै कि जब उसको जीवसंज्ञा मिली तभी उसका जन्मांतर ज्ञान जातारहा•परंतु जबतक जीव संज्ञा नहीं मिली सबसे पहिलाही निज रूप जो उसीआत्माका स्वरूपथा तिसका ज्ञान तौ होनाचाहिये क्योंकि वैसे आत्मा का स्वरूपज्ञान ठीकठीक आत्मामेंही प्रकाश होसकता और यह अपनीबात आपही उसको मिलहोगी जिसमें यह कहिनाठीक नहींहै कि वह अपने भी स्वरूपको नहीं जानि सकता है—ऐसे वितर्करूपी शंकाके समाधान मध्ये यह दृष्टांत देतेहैं कि—जैसे कडुवी ककड़ी कचरिया आदि फलों में यद्यपि मीठा रस वर्तमान है तथापि उनके

पके बिना मीठा रस नहीं जाना जाता है तथैव विनापके करण के (अर्थात् अंतः-करण का शोधन हुये बिना) आत्मा में ज्ञता सर्वज्ञता उपस्थित होते हुयेभी पहिले स्वरूप का ज्ञान पाया नहीं जासक्ता है॥ १४२॥

(पुनरप्याह)

सर्वाश्रयांनिजेदेहेदेहीविंदतिवेदनाम्। योगीमुक्तश्चसर्वासांयोगमाप्नोतिवेदनाम् १४३

अर्थः—सब में आश्रित हुई वेदना को देही निज अपने देह में पाता जानता है॰ मुक्तगुणवाला योगी सब मूर्तियोंकी वेदनाको योगमें प्राप्तकरि जानताहै=अर्थात्—एकसौ तीस के उत्तरार्ध मूल श्लोक से जो प्रश्न किया गया था तिसका जुदा उत्तर यहां देतेहैं कि—सब मूर्तियों में टिकीहुई वेदना पीड़ाको देही जो आत्मा क्षेत्रज्ञहै सो उसी अपने जुदे जुदे देह के द्वारा जानता पहिचानता है कि जो जो उसके भोगों के जुदे जुदे स्थान कल्पित हुये अर्थात् एक देहसे दूसरे देहकी पीड़ानहीं पहिचानता क्योंकि भोगस्थान बनने का हेतुरूप जो पहिले कर्म अदृष्ट होतेहैं तिनका विलक्षण स्वभाव यही है—परंतु योगी पुरुष (जिसके लक्षण पहिले बहुत वर्णन होचुके हैं) जो अहंकार आदिके त्याग से निर्मुक्त हो सो इस एकही देहसे सब मूर्तियों में घुसी हुई वेदना पीड़ा को अपने योग रूपी ध्यान में ठीक ठीक पाता और जानता पहि-चानता है॰इसमें संदेह नहीं॥ १४३॥

कदाचित् यहाँ यह शंका खड़ी होय कि आत्मा एकहै एकही आत्मामें सुर नर असुर आदि नाना देहभेद होनेका प्रमाण कोईनहीं समझमें आया—तिसका समाधान आगे कहेंगे॥

(एकस्यैवनानाघटभेदाः)

आकाशमेकंहियथाघटादिषुपृथग्भवेत्। तथात्मैकोह्यनेकश्च जलाधारेष्विवांशुमान् १४४

अर्थः—जैसे आकाश एकही है घटादिकों में जुदा होजाय तैसे आत्मा एक वा अनेक भी है जलाधारों में सूर्य की भांति=अर्थात्—जैसे महा आकाश एक होते हुये भी कुछ बड़े मकानों के भीतर घिरिके कुछ कुवा बावड़ीमें घिरिके कुछ मटके घड़े ढोलक आदि वस्तुओंमें घिरिके जुदा जुदा दीख परने लगा और उन्हीं नाना भांति की उपाधियोंसे आकाशके अनेक भेद होकर वैसे नामभेद भी होजातेहैं कि महाकाश घटाकाश वस्त्राकाश इत्यादि ऐसेही आत्मा भी एकने अनेक दीखनेलगा और उन्हीं

नानाभाँति की उपाधियोंके भेदसे देव नर दैत्य आदि नामभेद भी कहानेलगा अथवा दूसरा यह दृष्टांतहै कि जैसे सूर्यका प्रतिबिम्ब एकहै वह नानाभाँतिके जलाशय कूप तड़ाग नदी आदिमें आभास जुदा जुदा देखिपरनेसे अनेक रूपसा होजाताहै या काच आदि बहुधा चमकीली चीज़ोंमें आभास परनेसे अनेक सूर्य देखि परतेहैं तथैव आत्मा यद्यपि एकहै तथापि नाना देहोंमें अंतःकरण रूपी उपाधियों के भेद से अनेक रूप देखिपरताहै ॥ आकाश और सूर्यके दृष्टांतोंसे पूर्वोक्त पारस्पर्य की दोनों बातें यहां पर दर्शाईगईं कि आत्माके बीच में सृष्टि और सृष्टिके बीच में आत्मा इन प्रकारों से परस्पर लीन होरहे हैं ॥ १४४ ॥

पहिले जो बहत्तरि ७२ श्लोकसे आदि लेकर गर्भद्वारा सृष्टिकी उत्पत्ति कहीगई थी कि पृथ्वी आदि पाँच जड़धातू और छठा चैतन्यधातु आत्मा का चिदंश ये सब एकसाथही लेकर प्रभु आप रचना करवाता है इत्यादि और जो कुछ कहा था-सो सब खींचिकर फिरभी यहाँ ब्यौरेवार ईश्वरकी ईश्वरता द्वारा अगिले परिच्छेदमेंसमुझावेंगे कि जिससे उसका कर्तृत्व जानाजाय ॥

अथपरमात्मनोजगदुत्पत्तौवीजवापादिकर्मानन्तर मेवसर्वव्यापित्वविवेकोनामषोडशःपरिच्छेदः १६

इस परिच्छेदमें यह ज्ञान वर्णनहोगा कि जगतकी उत्पत्तिमें बीज बोने आदि कर्मोंके साथही परमात्मा सबसृष्टिमें व्याप्तहोजाताहै तिससे कोई वस्तु या कोई जीव ऐसा नहीं देखि परता कि जिसमें उसका निवास न हो॥

(जगदुत्पत्तिवीजवापः)

ब्रह्मखानिलतेजांसिजलभूश्चेतिधातवः। इमेलोकाएषचात्मातस्माच्चसचराचरम् १४५

अर्थः-ब्रह्मआत्मा खम आकाश अनिल वायु तेज अग्नि जल पानी भूः धरती माटी ये धातु लोकतीय और यह आत्मा चैतन्य तिसके योग से चर अचर सहित जगत होताहै=अर्थात्-इन पाँचों धातुकी उत्पत्ति इसी क्रमसे होती है कि ब्रह्म जो आत्माहै तिसमें उसकी इच्छासे प्रथम आकाश उत्पन्न हुआ फिर उसी आकाशमें

वायु उत्पन्न हुआ फिर वायुसे अग्निहुआ फिर अग्निसे जल उत्पन्नभया फिर जल में से मृत्तिका उत्पन्न भुई वही जमते जमते क्रम क्रमसे धरती होजाती है (परंतु उसकी इच्छामें यह भी सामर्थ्य है कि बिना क्रमके एकसाथ अचानक भी उत्पन्न होय) अब तात्पर्य यहां यह लेनाहै कि ये पाँचौवस्तु शरीरोंमें व्याप्त रहिकर शरीर थाँभे रहितीहैं थाँभना जो कामहै सो धारना कहातीहै इसीलिये इनका नाम धातू कहा गया कि जो धारण करसकें सो धातु कहातेहैं तथापि (इमेलोका) ये धातूलोकनीय हैं अर्थात् देखि परने योग्य जडवस्तु हैं यह तात्पर्य ठहिरा और यह आत्मा जो चैतन्य ब्रह्म कहा सोई छठा चिद्धातुहै इन पाँचौके बीचमें तौ इसभाँतिसे जड चैतन्य दोनौं का योग मिलाप ठहिरा उसी योग के समुदाय से चराचर मय जगत् की उत्पत्ति होता है ॥ १४५ ॥

(केनप्रकारेणात्माजगत्सृजति)

मृद्दंडचक्रसंयोगात्कुंभकारोयथाघटम्। करोतितृणमृत्काष्ठैर्गृहंवागृहकारकः १४६
हेममात्रमुपादायरूपंवाहेमकारकः। निजलालासमायोगात्कोशंवाकोशकारकः १४७
कारणान्येवमादायतासुतास्विहयोनिषु। सृजत्यात्मानमात्माचसंभूयकरणानिच १४८

अर्थः–कुम्हार जैसे माटी डंडा चाक इनके संयोगसे घटको (नाना भाँति सिद्ध) करताहै–यद्वा गृहकार (घरामी आदि कारीगर) फूस मट्टी लकडीके संयोग से घर बनाताहै (तैसे आत्मा भी ॥ १४६ ॥ यद्वा केवल सोना लेकर सुनार नानारूप गहने बनाता है–यद्वा कोशकार नाम कीडा अपनी लार (से जाला उत्पन्न करि उसी) के अच्छे योगसे कोशको बनाताहै (अर्थात् आपही अपनी लारके जाले से अपने बंधे फंसे रहिने योग्य सुन्दर कोश घर बनाके उसमें गुप्त रहिताहै तैसे आत्मा भी ॥१४७॥ ऐसेही आत्मा भी कारणोंको लेकर तथा करणोंको भी उत्पन्न करिके इससंसार में उन्हीं उन योनियोंमें अपने आत्मा को सृजता है=अर्थात्–देव नर असुर पिशाच आदि नाना भाँति योनियोंमें वैसेही जुदे जुदे रूप अपने आत्मा के बनाकर उनमें रहिताहै (तहां कोई वस्तु या घर बनानेकी सामग्री सर्वत्र तीनतरह की प्रसिद्ध होती है कि एक तौ ईंट गारा लोहा लकडी आदि मुख्य मसाला और दूसरे काम करने के औजार हथियार फिर तीसरे बनाने वाले कारीगर भी अवश्य होतेहैं तब कोई कार्य सिद्ध होताहै) इसका नियम यादि रक्खौ कि मुख्य मसाला तौ कारण कहाताहै और उससे बना काम जो मकान या गहिना आदि कुछहो सो कार्य कहाता है और काम करने के औजार हथियार जोहैं सो करण कहाते हैं और बनानेवाला

कर्त्ता कहाता है—सो यहाँ जगत रूपी कार्य के बनाने वाला कर्त्ता आपही आत्मा ब्रह्महै मुख्य मशाला वही पृथ्वी आदि पाँचों धातुहैं सो कारण समझने और शब्द स्पर्श रूप रस गंध ये करण किंतु औजारहैं—इसीसे श्लोकमें यह कहा गया कि धातु रूपी कारणों को लेकर तथा औजार रूपी करणों को भी सम्हालि के आत्मा अपने आत्मा को संसार में अनेकधा सृजता है ॥ १४८ ॥

१४६ अधिकोक्तिः—कुम्हार के दृष्टांत में माटी मुख्य धातु या मशालाकहो सो कारण है॰डंडा औरचाक सूत थापी उसके करण औजार हैं कुम्हार आपही उसका कर्ताहै और नानाभाँतिकेपात्र जो जो बनतेहैं सो सबकार्यरूप कहातेहैं ॥ इसी प्रकार सोना धातु कारण है और हथौड़ा फुंकनी आदि औजार सब करण कहे जातेहैं तथा बनेहुये आभूषण आदि सब सोनेका कार्य कहिलातेहैं अर्थात सर्वत्र कारणसे कार्य की उत्पत्ति होती है—और कार्य भी कर्त्ता विना नहीं सिद्ध होता है कि जैसे इसमें कर्ताप्रुनारहै ऐसेहीसर्वत्रसब सृष्टिकी उत्पत्तिको समझना ॥ १४६ ॥१४७॥१४८॥

फिरभी यहाँ यह तर्कना खड़ी होतीहै कि शरीरों की उत्पत्ति जैसी पहिलेवर्णन होचुकी तिससे प्रत्यक्ष जाना जाता है कि बुद्धि आदि अंतःकरण की वृत्तियाँ और ज्ञानेंद्री सब अपने जुदे कामों में प्रवृत्त रहिते हैं तिससे शरीरके सबधर्म कर्म चलते रहिते हैं अर्थात शरीर के भीतर बुद्धि आदि कारणों के सिवाय आत्माका निवास नहीं समझा जाता और जो है भी तौ उसहोने का प्रमाण क्या—इसका समाधान आगे बहुत बड़े प्रमाणों से विस्तार करते हैं ॥

(आत्मनः शरीरस्थस्य प्रमाणानि)

महाभूतानिसत्यानियथात्मापितथैवहि । कोऽन्यथैकेननेत्रेणदृष्टमन्येनपश्यति १४९
वाचंवाकोविजानातिपुनःसंश्रुत्यसंश्रुताम् । अतीतार्थस्मृतिःकस्यकोवास्वप्नस्यकारकः १५०
जातिरूपवयोवृत्तविद्यादिभिरहंकृतः । शब्दादिविषयोद्योगंकर्मणामनसागिरा १५१
संदिग्धमतिःकर्मफलमस्तिनवेतिवा । विप्लुतःसिद्धमात्मानमसिद्धोपिहिमन्यते १५२
ममदाराःसुतामात्याअहमेषामितिस्थितिः । हिताहितेषुभावेषुविपरीतमतिःसदा १५३

अर्थः—महाभूत जैसे सत्य है तैसेही आत्मा भी॰अन्यथा कौन एक नेत्र से देखे को और से देखता है=अर्थात—शरीरों में पृथ्वी आदि पांच महाभूत जैसे प्रमाणों करके सत्य समझेजाते हैं तैसे आत्मा भी प्रमाणोंसे सत्य है— अन्यथा यदि उसका होना न मानोगे तौ यह शरीरके भीतर ऐसा कौन है जो एकवार आंखि से देखी हुई वस्तु को ठीक समझे विना फिर और किसी इन्द्री से देखता किन्तु पहिंचानने

का प्रारंभ करदेता है दृष्टांत जैसे हाथ से टटोलना या नाक से सूंघना या जीभ से चीखना इत्यादि अलटा पलटी कौनकरवाने लगता किन्तु उसीआत्माका यहकामहै ॥१४९॥ यद्वा सुनीबातको फिर अच्छे सुनिके विशेष कौन समझताहै और बीतेहुये प्रयोजनकी यादि किसको आतीहै या सोते हुये स्वप्न दिखानेवाला कौन है और सोतेसे जागने पीछे उसी स्वप्नको समझानेवाला कौनहै=अर्थात्–जो शरीरों में बुद्धि आदि करणोंके सिवाय आत्मा कोई न हो तो फिर यह किसका कामहै कि एक-वार किसीकी बातको सुनिके फिर दुबारा कहिलाता तब अच्छीतरह तत्त्वको पहिं-चानताहै अर्थात्बुद्धि और कान उसके वहीहैं कि जिनसे पहिलीवारसुनी तब अच्छी तरह नहीं समझपाईथी–औरभी यदि आत्मा इसके भीतर न हो तो फिर पहिलेकभी देखीसुनी बातको बहुतकाल पीछे कौनयादि करावै अर्थात् वही आत्मा यादि क-राताहै–और भी जो आत्मा इसमें न हो तो बुद्धिआदि सर्वइन्द्रियों के निपट सोइजाने पर नानाभाँतिस्वप्नोंका दिखानेवाला कौनठहिरै या सोतेसमय देखीसुनी स्वप्नेवाली बातोंको जागतेसमय यादिकराने तथा दूसरेको समझानेवाला कौनठहिरै किन्तु उसी आत्माका यहकामहै॥१५०॥जाति•रूप•अवस्था•चरित्र•विद्या•आदिसेअहंकृतकौन होताहै–शब्दआदिविषयोंकाउद्योगकर्ममनवाणीसेकौनकरताहै=अर्थात्–जोआत्मा सब शरीरों में न होता तो इस अहंकारका बोध किसको होता कि हम ऐसी उत्तम जातिमें•हमऐसेरूपवाले•हमऐसे यौवन वयसवाले• हमऐसे वृत्तचरित्रोंके विस्तार करनेवाले•हम ऐसी विद्यावाले धनवाले राजवाले इत्यादि हम कहिनेवाला कौन होता–और–शब्द•स्पर्श•रूप•रस•गंध•जो प्रत्येक इन्द्रियोंके सुखदेनेवालेभोगप्रसिद्ध हैं कि जिनके प्राप्त होनेका उद्योग उपाय हरकोई मनसे शोचता तथा मुखसे कहिकर करवाता और निज हाथ पैर आदि कायकर्म से भी करता है सो कौन करनेवालाहै अर्थात् ये सब उसी आत्माके उद्योगहैं जो सब इन्द्रियोंको निजप्रयोजन में प्रवृत्तकिये रहिताहै ॥ १५१ ॥ सो विप्लुतहुआ संदिग्ध बुद्धि होताहै कि कर्मकाफल सत्यहै या नहीं और असिद्ध होताहुआभी अपनेको सिद्धही मानैहै=अर्थात्–वही पूर्वोक्तआत्मा यदि विप्लुत (अहंकार के व्यसन से दूषित) हो तब संदेहभरी मति से युक्त होजाता है अर्थात् भलेबुरे कर्मोंके फलमें बुद्धि ठीकठीक स्थिर नहीं रहिती कि फलकाहोना सत्यहै या नहीं (क्योंकि जो फलका होना सत्यजानै तो बुरे कर्म न करै केवल भले करै सोनहीं)इसी हेतुसे बहुधा अहंकारवाले कर्मोंको करतेहुये उनमें सिद्धिके न होने पर भी अहंकार से यह समझिलेता है कि अबहाल मैंने सिद्ध किया अब मैं सिद्ध

मनोरथ हुआ ॥ १५२ ॥ मेरे स्त्रियां सुत अमात्य मैं इनका यहस्थिति (उसकीहोती और) हित अहित भावोंमें सदा मति विपरीत (रहिती है) =अर्थात्—उसी अहंकार से दूषित आत्माके मनमें इसप्रकारकी धारणा(स्थित) होतीहै कि ये मेरे स्त्रियाँ ये पुत्र ये मंत्री गुमाश्ते दूत आदि और मैं इनका प्रतिपालक स्वामी—और भी—कार्यौंके (हित अहित) भलेबुरे भाव जो आगेको उत्पन्न होनेवाले हों तिनमें सदा उसकीमति उलटी रही आती है (तिससे जो कुछ और भी फल होताहै सो अगिले श्लोकों से देखना ॥ १५३ ॥

(अहंकारेणविप्लुतात्मनःफलानि)

ज्ञेयज्ञप्रकृतौचैवविकारेवाऽविशेषवान्। अनाशकाऽनलापातजलप्रपतनोद्यमी १५४॥
एवंवृत्तोऽविनीतात्मावितथाभिनिवेशवान्।कर्मणाद्वेषमोहाभ्यामिच्छयाचैवबध्यते१५५॥

अर्थः—ज्ञेयज्ञ में और प्रकृतिमें और विकार में भी अविशेषवाला•अनशन•अनलपात•जलपतन•इनमें उद्यमी होताहै=अर्थात्—ज्ञेयज्ञनाम है आत्मा ब्रह्म का और प्रकृतिनाम है प्रधानमायाका जिसमें तीनोंगुण बराबर मिले होते हैं (किन्तु तीनों गुणका बराबर होनाही प्रकृतिका स्वरूप है) और विकारनाम है उसी प्रकृतिका रूपांतर होजाना किन्तु उन्हीं तीनोंगुणका परिणाम (जैसेदूधसेदही) होकरअहंकार१ मन२ बुद्धि३ चित्त४ ये चारि अंतःकरण उत्पन्न होतेहैं—सो वही पूर्वोक्त आत्मा जो अहंकारके उपद्रव से दूषित होकर विप्लुतबुद्धि कहागया वह इनतीनों में अविशेषवान होताहै अर्थात ब्रह्म१और प्रकृति२ और विकार३ इनके भेदोंकी विशेषता नहीं समझि सकताहै—फिर इसी मूर्खता के हेतुसे अनाशक अन्नछोड़ि लंघनकरिके दूसरे पर अपनेप्राण देदेने या अनलापात अग्निमें कूदिके जलिजाना या जलप्रपतन कूप नदी आदिमें गिरिके डूबना या विषभक्षण करना आदि और भी अनेक ढंगहैं तिनमें उद्यमी उपाय करनेवाला होजाता है ॥ १५४ ॥ ऐसे प्रवृत्तहुआ वही अविनीत बुद्धि आत्मा वितथों में अभिनिविष्ट होकर कर्म से या द्वेषमोहों के हेतु निज इच्छासे भी बंधे फंसै और मारा भी जाय=अर्थात्—जैसा ढंग ऊपर कहागया तैसे न करने योग्य कामोंमें प्रवृत्तहोके(अविनीतात्मा)खोटी बुद्धिवाला(वितथों)कुकर्मोंका(अभिनिवेश) आराधन करतेकरते कभी अपनेकिये खोटे कर्ममेंही अन्य पुरुषके द्वारा कहींबँधता और माराजाता है या कभी द्वेष मोहों करके निज इच्छासेही फँसता या मरता है कि जैसे आगलिजाना डूबिजानाआदि पहिलेकहिचुके सोनिजइच्छासेसमझना १५५॥
ऐसे पापों मे विप्लुतहुये पुरुषकी सद्गति इसी देहसे या और किसी देहसे फिर

भी कभी विश्वास पूर्व होतोहै या नहीं सो नीचे वर्णन करतेहुये एक औरभी उपासना का प्रकार सूचन करेंगे॥

(विप्लुतात्मनोपिकालांतरेण उपासनाभेदेःसद्गतिःस्यात्)

आचार्योपासनंवेदशास्त्रार्थेषुविवेकिता। तत्कर्मणामनुष्ठानंसंगःसद्भिर्गिरःशुभाः १५६
स्त्र्यालोकालंभविगमःसर्वभूतात्मदर्शनम्। त्यागःपरिग्रहाणांचजीर्णकाषायधारणम् १५७
विषयेन्द्रियसंरोधस्तंद्रालस्यविवर्जनम्। शरीरपरिसंख्यानंप्रवृत्तिष्वघदर्शनम् १५८
नीरजस्तमतासत्त्वशुद्धिर्निःस्पृहताशमः। एतैरुपायैःसंशुद्धःसत्त्वयोग्यमृतीभवेत् १५९

अर्थः—आचार्य की उपासना•वेद शास्त्र के अर्थों में विवेकिता• तिनके कर्म्मों का अनुष्ठान•सत्पुरुषों का संग• शुभीजवाणी=स्त्रियों को देखने वा छूने कात्याग• सर्व भूतों को निज आत्मातुल्य देखना•परिग्रहोंकाभीत्याग•जीर्ण वा कषाय वस्त्रों का पहिरना=विषयोंसे इन्द्रियों का अच्छा निरोध•तंद्रा वा आलस्य का छोडना• शारीरक विद्याका विचार• प्रवृत्तियों में पापका पहिंचानना=निकासि देना रज तम के भाव का•सत्व का शुद्ध करना•निकासिदेना (स्पृहा) अभिलाष का•स्वभाव में शमता• इतने उपायों से शुद्धहुआ सत्वयोगी अमृती होय=अर्थात्—पूर्वोक्त विप्लुत हुआ (उपद्रवयुक्त) आत्मा जब कभी कालान्तर में चाहें इसी देहसे या और किसी देहमें जाकर इतने कर्मोंकी साधना करै तब इन उपायों से शुद्ध होकर (सतु अयोगी अमृतीभवेत्) वही अयोगी योग साधेबिना भी अमृती होय किन्तु मोक्ष रूपी अमृत का भागी होता है(यहाँ सतुके साथ तु अव्यय अवधारणा और प्रशंसा में समझनी)=उन कर्मोंकी साधना जो ऊपर सब लिखीगई तिसका अभिप्रायरूपी अर्थ यहहै कि—प्रथम तो विद्यापढनेके निमित्तसे विद्यागुरु आदि अच्छे आचार्यों के पास रहिकर निष्कपट उनकी सेवा करै—फिर पातंजल योगशास्त्र वेदांत आदि शास्त्रोंमें अच्छाअर्थ समझने का विवेक बढावै—फिर उन्हीं शास्त्रों में लिखे हुये कर्मोंका अनुष्ठान करै—और अनेक सत्पुरुषोंसे सत्संगनिकारिके उनमें जो जो अच्छी प्रकृति या कोईसा उत्तमगुण देखै सोसो नम्रतासे ग्रहणकरै—और अच्छी मर्यादाना की वाणीसीखे कठोर वाणी किसीसे न बोले—और परस्त्री का देखना तथा उन से स्पर्श करना त्यागै—और सर्वभूत चर अचरकोभी दुःखहोते सुखी अपनी देहके समान शोचकरै कि जैसी अपनी देहमें पीडाहोती है किन्तु सबजीवों आत्माको निजसमान देखे—और परिग्रह जो बड़े विकट कर्मों के निमित्त से बहुत वस्तुओं का संग्रह करना

परताहै तिन दखेड़ेवाले परिग्रहैां काभी त्याग रक्खै—और जो बनिआवै तौ यहांतक शरीरको वशमें करै कि फटेपुराने वस्त्रोंको गेरूआदि से रँगेहुये धारण करै इससे यह तात्पर्य दर्शाया है कि अवसर मिलै तौ संन्यासीभी होजाय जैसा संन्यास धर्म वर्णन करचुके—औरविषयजो•शब्द•स्पर्श•रूप•रस•गन्ध•ये पाँच इंद्रियोंके भोग हैं तिनसबसे निज इन्द्रियों को रोके—और तंद्रा जो निद्राकी छोटीवहिन एकप्रकार की सुस्ती होती है तथा आलस्य जो काहली प्रसिद्धहै (कि जो काम अवश्यकरनाचाहिये जिसके करने माफिक समर्थ मौजूदहै तथापि अनुत्साहसे न करना यह आलस्य होताहै) इनदोनोंको दूरिहीसे बचाता रहै पास न आनेदे—और (शरीरकापरिसंख्यान)शरीरके हिसाब जो७०सत्तरि श्लोकसे आदि लेकर१०९एकसौनौश्लोकतक वर्णन होचुका तिसको अच्छे समझिके यादिकरै—और सर्वत्र प्रवृत्तियों में अघ पाप का देखना अर्थात् प्रवृत्तिनामहै कहीं जाना चलना हाथपावँका दौड़ाना या किसी कार्यका प्रारंभ करना या किसी कार्य में बुद्धिका विचार दौडाना आदि तिन सब तरहकी प्रवृत्तियों में सबसे पहिले किसी जीवकी हिंसा होजानेका पाप ढूंढता रहै कि इस प्रवृत्तिमें अमुक पापहोगा सो न होनेपावै—और रजोगुण तमोगुणका स्वभाव जैसा (१३८।१३९)दो श्लोकोंसे वर्णन होचुका सो न राखै—और सत्वकी शुद्धि अर्थात् मनका भावहै वह सत्व कहाताहै तिसको अनेक प्राणायाम आदि उपायों से शुद्धराखै—और निःस्पृहता किन्तु विशेषभोगोंकी अभिलाष छोडिदेना यही बहुतबड़ी तपस्याका बीजहै—शम अर्थात् भीतरली चित्तकी वृत्तियों को जीति के शांत राखै यही शम कहाताहै—ये सब आचार्य की सेवा आदि जो कुछ उपाय कहेगये तिनकी साधनासे अच्छा शुद्धहुआ आत्मा यद्यपि अयोगी (किन्तु संन्यास आदि योग नहीं किया) हो सोभी इतने उपायोंसे अमृत मोक्षका भागी होजाताहै॥ १५६ ॥१५७॥ १५८ ॥ १५९ ॥

१५९अधिकोक्तिः=एकसौ उनसठि श्लोकमें (सत्वयोगयमृतीभवेत्) यह चौथा पादहै तिसका अर्थान्वय दो तरहसे होताहै एकतौ (सतुअयोगी अमृती भवेत्) यह पदच्छेद है तिसका अर्थ ऊपर लिखा गया—और दूसरा (सत्वयोगी अमृती भवेत) यह पदच्छेदहै इसकाअर्थ ऐसे होताहै कि सत्व जो सतोगुण है वही मनके भावकी शुद्धि समझना तिसका साधनेवाला सत्वयोगी ठहरा सो अमृतका भागी होताहै= यद्यपि अर्थ दोनों सत्य हैं तथापि श्रेष्ठ वही समझना जो ऊपर अर्थों में लिखा गया क्योंकि सत्वका योगी पूरा संन्यासी होताहै तिसका प्रसंग पहिले संन्यास धर्म में

आद्युका—किन्तु यहां यह दूसरी भाँतिकी उपासनाविधि उसके लिये कही गई जो सत्वका योगी पूरा न हो केवल इन्हीं चारश्लोकों में कही हुई उपासना के सामान्य उपायों से अपने आत्मा का शोधनमात्र कर सके सो अयोगी भी मोक्षभागी होता है चाहैं कोईहो कुछ योगी संन्यासी का नियम नहीं यहतात्पर्यहै॥ इसतात्पर्यके ठीक होने पर भी याद रक्खौ कि दोनों अर्थ समझना क्योंकि यह ऐसा पुरुष भी कदाचित् साधना करते करते पूरा योगधारी संन्यासी होजाय तौ वह दूसरे अर्थके अनुसार सत्वहीका योगी समझा जायगा—इसीलिये अगिले दो श्लोकोंको विचारो कि याज्ञवल्क्यजीने योगी अयोगी दोनोंका तात्पर्य उनमें दर्शायाहै॥ अगिले दो श्लोकों में यह नियम सिद्धकरैंगे कि मोक्षपद कैसे मिलता है॥ १५६॥१५७॥१५८॥१५९॥

इसी प्रसंग में जो कहिना कुछ शेषरहा सो अब अगिले परिच्छेद में देखना॥

——*——

अथ-सत्कर्मादिहेतूनांपरिपाकात्जातिस्मरत्वंदेवयोनित्वंवागच्छंतीत्यादिविवेकोनामसप्तदशःपरिच्छेदः१७॥

इसपरिच्छेद में वह विवेक जाना जायगा कि सत्कर्म आदि विरले अन्य हेतुओं मे भी बहुधा प्राणीजातिस्मर होते यद्वा देवयोनिमें जातेहैं इत्यादि और बातेंभीदर्शावैंगे

(कथममृतत्वप्राप्तिःजातिस्मरत्वंच)

तत्वस्मृतेरुपस्थानात्सत्वयोगात्परिक्षयात्। कर्मणांसान्निकर्षाच्चसतांयोगःप्रवर्तते १६०
शरीरसंक्षयेयस्यमनःसत्वस्थमीश्वरम्। अविप्लुतमतिःसम्यग्जातिसंस्मरतामियात् १६१

अर्थः—तत्व के स्मरण से उपस्थान (प्रणाम) से सत्वके योगसे कर्मोंके क्षय होने से सत्पुरुषोंके संगसे योग वर्तमान होताहै कि जिसकामन सत्वस्थ होके शरीर नाश होतेसमय ईश्वरमें लगै—अथवा) अविप्लुतबुद्धि हो सो अच्छे जातिस्मरत्व को पहुंचै =अर्थात—अब यादकरौ•पूर्वोक्त दोनों अर्थका तात्पर्य यहां दर्शातेहैं कि—तत्वरूपी जो आत्मा है तिसकी यादगारी खूबकरतेकरते और उसकोनिरंतर प्रणाम नमस्कार (उपस्थान) उसकेसमीप चित्तलगाते लगाते और सत्वनाम जो सतोगुण(किन्तु अपने मनका) शुद्धभाव तिसके योग मिलाप से कुकर्म्मों के बीज नाश होजाने मे मात्र

सत्पुरुषोंका संग सेवन करते करते (योगःआत्मयोगःप्रवर्तते) आत्मा से योग नि-
लापहोजाताहै सो यह उसीको कि जिसकामन सतोगुणमें स्थिर होते होते ऐसा नि-
श्चलहोजाय जो मरतेसमय ईश्वरमें लीनहोसके यह तौ पूरे योगी संन्यासीका चर्चा
किया—अथवा—जो इतना पूरानहोसके केवल अविप्लुत बुद्धि होजाय अर्थात १५२
शक्सों वामनके श्लोकवाली दशामात्र मिलिजाय जिससे आत्मा की पहिँचान में
बुद्धि स्थिर होने लगै पूरी उपासनावाले योगमें होशियारी न होसके तौ भी इतने
उत्तम कर्मके प्रभावसे ऐसा पुरुष मरनेके बाद जहाँ जन्मलेता है तहाँ पहिले जन्मों
के अपने सब दुख सुख आदि याद करसकनेवाला जातिस्मर होताहै फिर उस जा-
तिस्मरत्व से भी अच्छा ज्ञान होकर मोक्षका रास्ता ढूंढ़िलेता अर्थात श्रेष्ठ कर्मों में
मन लगाताहै॥ १६०॥ १६१॥

(अजातिस्मरत्वेपिइयंगतिः)

यथाहिभरतोवर्णैर्वर्णयत्यात्मनस्तनुम्। नानारूपाणिकुर्वाणस्तथात्माकर्मजास्तनूः १६२
कालकर्मात्मबीजानांदोषैर्मातुस्तथैवच। गर्भस्यवैकृतंदृष्टमंगहीनादिजन्मतः १६३
अहंकारेणमनसागत्याकर्मफलेनच। शरीरेणचनात्माऽयंमुक्तपूर्वःकथंचन १६४

अर्थः—जैसे (भरत) नट नाना रूपों की लीला करते समय अनेक रंगों से अपने शरीर को (वर्णयति) रचता है तैसे आत्मा भी कर्मोंसे उत्पन्न भोगोंके लिये शरीरों को नाना रूपसे धरताहै॥ १६२॥ तहाँ काल कर्म अपना बीज तथा माताका रक्त इनके दोषों से अंगहीन आदि गर्भ का विकार जन्म से भी देखा जाता है=अर्थात—अंग भंग आदि रूप केवल कर्मों से नहीं किंतु इन दोषोंके मिलापसेभी होते हैं कि एकतौ उस वर्तमानकाल का स्वभाव दूसरे पूर्वजन्मके कर्मों का प्रभाव तीसरे अपने पिता के वीर्य का दोष चौथे माता के रजोरक्त का कुछ दोष इन सबके या किसीं के संयोग से गर्भमें अन्धा लूला आदि विकार पैदाहोता है यथा जन्म होनेबाद कभी विकार उदयहोतेहैं॥ १६३॥ अहंकारसे० मनसे० गति (संसार के उत्पत्तिमार्ग) से० कर्म के फलसे भी० शरीर धरनेसेभी० यह आत्मा कैसे हू नहीं कभी छूटता है जब तक मोक्ष पदको न पहुँचै=अर्थात—यहाँ यह शंका बड़ीहोतीथी कि महाप्रलय होजाने से (महत्तत्व) बुद्धि आदि सभी विकारों का नाश होकर कर्मोंकेबीजभी नाशहोजाते हैं सो तौफिर प्रलयकेपीछे जब दुबारा सृष्टिरचीगई तहाँ सबसेपहिले मिले शरीर कर्मों का संबंध कहांसे चलता है कि जिनसे अंग भंग आदि कुडौलरूप पैदाहों-

इसी शंका के समाधान मध्ये यह उत्तर दिया गयाहै कि आत्मा कभी भी अनोक्त अहंकार आदि कर्म के बीजों से नहीं छूटता अर्थात् प्रलय से पीछे दूसरी सृष्टि में भी पहिली सृष्टि के कर्म बीज संचित बनेरहितेहैं कि उन्हींके प्रभावसे दूसरी सृष्टि में भी योनि भेद या अंग भंग आदि रूप भेद उसी आत्मा को मिलता है कि जिसके बीज धरे रहेथे—परंतु उस दशा में बीजनाश हो जाते हैं कि जब उत्तम योग साधना से मोक्षभागी किया जाय ॥ १६४ ॥

१६४ अधिकोक्तिः—कर्मोंके बीज नहीं नाश होते इस बातका दृष्टांत (राजविप्लव) गदर है कि जैसे किसी समर्थ राजाके राज्यमें महाभयंकर गदर होने लगता है तब तक अच्छे बुरे सब कर्मोंवाले मनुष्य अपना अपना प्रतिकार पानेसे रुकिजाते हैं अर्थात् धन प्राणों को लूटने मारने वाले आगि लगानेवाले आदि भी दण्ड नहीं पा सकते और प्रजा अथवा राजाकी भलाई करने वाले भी अच्छा फल नहीं पासकते क्योंकि दोनोंको फलका दाता जो राजाहै सो अपने होशमें नहीं रहिता तब जो चाहै सो भलाई या बुराई करै उसकी बूझ नहीं रहितीहै॰ऐसी दशा देखिके अज्ञानी यही समुझताहै कि ऐसे समयपर सबके कर्म बीज जो कुछ पहिले से भलाई बुराई चली आती थी वह भी मिटिजातीहै—परंतु—वही राजा जब राजका प्रबन्ध ठीककरि पाता है (कि इस प्रबन्धको दूसरी सृष्टि कहिना चाहिये) तब यथा क्रमसे सबके कर्मबीजों को टटोलताहै कि इन मनुष्योंके कर्मबीज गदर के साथ या गदर से पहिली दशा में क्या क्या संचित हुयेथे तिनका भला बुरा फल भी उनको देता है—अथवा उस राजा से राज छूटिजाय तौभी जो दूसरा कोई विवेकी राजा राज्यपर आरूढ होताहै सो भी प्रजा लोगोंके उन कर्मोंको टटोलताहै कि जो कुछ पहिले राजाके अमलमें कर्मबीज संचित कियेहों भले या बुरे दोनों भाँतिके—तौ इस प्रकार से कर्मों के बीज कभी प्रलयके पीछे भी नहीं नाशहोतेहैं—संसारमें भी देखिलो बारह महीना के बीच में अकाल वर्षा चाहैं तैसी होजाय बीज नहीं जमता है धरती उसको थाँभे रहिती है पर वर्षाऋतुके प्रारंभमें थोडी बूंद परनेसे भी वही बीज सब जमते हैं कि जिनका काल वर्त्तमानहो ऐसेही सृष्टिके प्रारंभ में भी ॥ १६४ ॥

एक यह तर्कना खडी होती है कि जिन जीवों के कर्मबीजही प्रधान होहिं तौ फिर उनकी नियत कर्मोंके समयपरही मौत होनी चाहिये॰किन्तु यह विपरीत लखता कैसाहै कि युद्धस्थान आदिमें एकही साथ अनेक प्राणी मरजातेहैं॰उसका समाधान अब कहिते हैं ॥

(यौगपद्याकालमरणविवेकः)

वर्त्याधार स्नेहयोगाद्यथादीपस्यसंस्थितिः। विक्रियापिचदृष्टैवमकालेप्राणसंक्षयः १६५

अर्थः-दीपकी स्थिति जैसे चिकनाईके योगसे बत्तीके आधारपर होतीहैविकार भी उसमें देखाहुआ दोयहै ऐसेही अकाल में प्राणों का नाश होता है=अर्थात्-जैसे तेलकी भीजी अनेक बत्तियों के सहारे पर अनेक जोति अपने अपने जीवन को तब तक थांभ सकती हैं कि जितना जितना तेल उनमें हो (ऐसेही प्राणी अपने कर्मों के समान जीसकतेहैं) परंतु जब बडी तीव्र वायुका झकोरा रूपी विपत्ति जितने दीपकोंपर एकसाथ आपरतीहै तब तेलके शेष रहते भी अनेक दीपक एकसाथ बुझि जातेहैं तिनमें भी जिनको कुछ आगे पीछे विपत्ति लगी सो आगे पीछे बुझतेहैं (यह वायुकी विपत्ति रूपी कारण देखाहुआ प्रत्यक्ष हेतु कहाताहै) ऐसेही प्राणीभी आयु शेष होतेहुये युद्ध आदि देखीहुई विपत्तिमें अकालमृत्युसे मरता है अर्थात् कर्मों का बीजरूपी बिना देखा कारण अदृष्ट कहाताहै सो तो नियत कालहोपर मौतहेतु माना जाताहै यह युद्ध आदि देखाहुआ हेतु अनियत कालमें भी मौत करदेताहै तिससे अकालमृत्यु भी झूंठीनहीं है॥ १६५॥

१६५ अधिकोक्तिः (प्रतिनियत काल विपत्ति हेतु भूतादृष्टस्य-तद्विरुद्ध कार्याकरदृष्टहेतुपनिपातेनप्रतिबंध इत्युक्तंचशास्त्रांतरे) अर्थात्-अन्य शास्त्रों में यह प्रमाण भी लिखाहै कि मनुष्य की लिखी हुई आयुके ठीक समय पर मरने का हेतु जो बिना देखा नियत होचुका है तिसकी रोक भी होजाती है उसके विरोधी कर्म देखे हुये विघ्नरूप आपरने से तभी अकाल मौत होजाती है॥ १६५॥

(मोक्षस्यमुख्योमार्गः)

अनंतारश्मयस्तस्यदीपवद्यः स्थितोहृदि। सितासिताःकद्रुनीलाःकपिलानीललोहिताः १६६
ऊर्ध्वमेकः स्थितस्तेषांयोभित्वासूर्यमंडलम्। ब्रह्मलोकमतिक्रम्यतेनयातिपरांगतिम् १६७

अर्थः-(१०८।१०९ इन श्लोकोंमें जो लिखचुके सो देखो फिर उसीको यहां लाकर सोचो कि) जो चैतन्यरूपी जीव दीपकी शिखा तुल्य हृदय में विराजमान है तिसकी अनन्त असंख्य रश्मी जो नाडियांहैं सुपेद काली चितकवरी नीली सुनहरी गुलाबी लाल काले मिलापके रंगोंवाली हर तर्फ़को जातीहैं=तिनमें से (सुषुम्ना नामकी) एक रश्मी ऊपर कपाल तक गईहै जो वही डोरी सूर्यके मंडल में घुमती

हुई फिर ब्रह्माजीके लोकहूको उलांघती हुई सदा रहिती है (और वेही सब जीवों को डोरियों के छोर उस नटिनी के हाथ में रहिते हैं जो परमात्मा की माया उसकी इच्छा मात्रसे आप नाचती फिरती और सबजीवोंको हरवक्त नचातीहै कि जैसे कठपुतरीके स्वाँगमें पर्दा बीचदेकर कोई नटिनी सूत्रधार बनिके आड़ में बैठती और डोरियों के इशारेसे पुतरियोंको नचायाकरतीहै) उसी ब्रह्मलोकसे पार पहुँचीहुई नाडी डोरीके मार्गसे परमगतिको जीव जाताहै उस झपटी के साथ जैसे तार बिजली बिना रोकटोक जातीहै इसी झपटी में उसमायाके हाथसे भी रस्सी छोनिके लेजाता है•सो यह वही जीव ऐसा करसकताहै कि जिसने पूर्वोक्त मार्गोंसे माया को खूब जीति रक्खाहो•परमगतिका यह अर्थहै कि जहाँ पहुँचिके फिर संसारी जन्म मरण आदि दुःखोंमें नहीं आने सकता है यही मोक्षका स्वरूपहै॥ १६६ ॥ १६७ ॥ तात्पर्य इस आशयसे यह दर्शायाहै कि जिसके प्राण कपाल फटिके निकसैंचाहैं योगाभ्यास के द्वारा कपालफटै या योगसाधे विना भी किसी पूर्व पुण्यके प्रभावसे ऐसा बानक स्वतः बनिजाय दोनोंतरहसे मोक्षभागीहोता है—इसी प्रकार अगिले श्लोकों में लिखे हुये मार्गसे जीव निकसनेवालेको स्वर्ग आदि मिलतेहैं सो आगेदेखो॥१६६॥१६७॥

(स्वर्गप्राप्तिमार्गः)

यदस्याऽन्यद्रश्मिशतमूर्ध्वमेवव्यवस्थितम्। तेनदेवशरीराणितैजसानिप्रपद्यते १६८॥

अर्थः—जो इसके रस्सिशतक और भी ऊपरहीको स्थितहै तिससे तैजस देव शरीरोंको पहुँचताहै=अर्थात्—पूर्वोक्तमोक्षके मार्गवाली एकडोरीकेसिवाय जो औरभी रस्सियाँ (नाड़ियाँ) का सैकरा इसदेहके भीतरहै कि उसके भी सो छोर ऊपरहीको रहिते और स्वर्गतक जातेहैं कि उसके द्वारा जिसका मरते समय जीव निकसै वह (स्वर्गहीको जाताहै अर्थात) तैजस जो रजोगुण सतोगुण दोनोंके सारसे उत्पन्न एक वड़ा उत्तमधातु सुवर्णसे भी अनंतगुना प्रकाशमान स्वर्गलोक में खानिसे उपजताहै उसी तैजसधातु से इमारतैं वहाँ बनती हैं सो बहुत चमकती होतीहैं—और दूसरा एक अदृष्ट तैजस जो तेज बल पराक्रम कांतिका बीजरूप उन देवतोंके शरीरमें बड़ी सत्ता रहिती है कि जिससे उनकेरूप अतिशय कांति युक्त होतेहैं क्योंकि यह सत्ता भी रजोगुण सतोगुण के सूक्ष्मसारसे उत्पन्न होतीहै—ऐसे तैजसरूपी देवतोंके शरीर नया रहिनेको वैसे तैजसमय मकान सर्व भोगोंसे भरे हुये जाकर पाताहै कि जहाँ सुख भोगनेके सिवाय दुःखोंका चर्चा नहींहै ॥ १६८ ॥

(मर्त्यलोकप्राप्तिमार्गः)

येनेकरूपाश्चाधस्ताद्रश्मयश्चमृदुप्रभाः। इहकर्मोपभोगायतैःसंसरतिसोऽवशः १६९

अर्थः—तिलके नीचे जो अनेकरूप रश्मियाँ मृदुप्रभा होती हैं तिनके द्वारा इहां (संसारहीमें) कर्मोंके उपभोग के लिये अवश हुआ संसरण पाताहै=अर्थात्—पूर्वोक्त मेरुगके नीचे जो और भी अनेक भाँति नाडियाँ कोमल प्रभावाली हैं तिनके द्वारा जीव निकलनेसे फिर इसी संसार में अपने कर्मोंके वशीभूत जन्मलेताहै कर्मोंकाभोग भोगनेके अर्थसे॥ १६९॥

(अनीश्वराश्चापिसंति)

नास्तिशुभाशुभयोःकर्मणोःफलदातेश्वर। इतिवादिनोऽपिबहवोऽनीश्वराःसन्तीहलोके

अर्थात्—भले बुरे दोनों कर्मका फल देनेवाला ईश्वर नहींहै ऐसा वाद करनेवाले (जो अनीश्वर कहाते सो) अनीश्वर भी बहुत इसी संसार में हैं और होतेहैं॥

ईश्वर कोई नहीं यह कहिनेवाले भी उसी ईश्वरने रचेहैं कि निज सृष्टि में जो नाना भाँति विचित्रता रची तिनमें एक यह भीहै•अर्थात् थोड़ेसे विद्वान भी तार्किक अर्हत स्वभाववादी आदि अनीश्वरलोग सदासे होते चले आये जो सृष्टिकी उत्पत्ति केवल स्वभावही से अपने आप होती रहिती यह कहिते हैं•कि इसका कर्त्ता कोई एक ईश्वर नहीं किन्तु वह स्वभावही अपने आप ईश्वर होताहै•विरले तार्किक यह कहते हैं कि आकाशको छोड़ शेष चारों तत्त्वके जुदे जुदे परमाणु आदि बहुत छोटे अंशों से आकाश परिपूरित रहाकरता उन्हीं परमाणुओं की गाँठें बनि बनि समवाय इकट्ठा होकर स्वतः सृष्टि उत्पन्न होती रहितीहै•जिसमें चारों तत्त्व अपने आपही चैतन्य रूप हैं अर्थात् उनको चैतन्य करनेवाला कोई ईश्वर नहींहै•क्योंकि जो होता तो देखने में आता किन्तु जो देखने में नहीं आसक्ता तो कुछहै भी नहीं केवल बुद्धिमानों की बनावटहै ऐसे इत्यादिकों का विचार थोड़ा दर्शाने के निमित्त से आगिले कई श्लोकों में अनेक शास्त्रार्थ भी दर्शाये हैं जो उनको पूराविस्तार देना चाहाजाय तो वर्णों एक किताब न होसकै इसलिये नीचे संक्षेप अर्थ लिखेजायँगे कि हरकोई शीघ्रसमझै सो यह आगिले परिच्छेद में देखना॥ ॥

अथ-अनीश्वरवादिनांमतखंडनपूर्वकमीश्वरस्यचसर्वंग तस्यप्रत्यक्षलक्षणविवेकोनामअष्टादशःपरिच्छेदः१८॥

इस परिच्छेद में अनीश्वरवादी लोगोंकामत झूंठा दर्शाते हुये समर्थ ईश्वर को प्रत्यक्ष पहिंचाननेवाले चिह्न भी समझाये जायँगे कि जो चर अचर सृष्टि में सर्वत्र परि व्याप्त है॥

(पंचभूतानांअचैतन्यत्वं)

वेदैःशास्त्रैःसविज्ञानैर्जन्मनामरणेनच । आर्त्यागत्यातथाऽऽगत्यासत्येनह्यनृतेनच १७०
श्रेयसासुखदुःखाभ्यांकर्मभिश्चशुभाशुभैः । निमित्तशाकुनज्ञानग्रहसंयोगजैःफलैः १७१
तारानक्षत्रसंचारैर्जागरैःस्वप्नजैरपि । आकाशपवनज्योतिर्जलभूतिमिरैस्तथा १७२
मन्वंतरैर्युगप्राप्त्यामंत्रौषधिफलैरपि । वित्तात्मानंवेद्यमानंकारणंजगतस्तथा १७३

अर्थः—याज्ञवल्क्यजी सब समाज के सन्मुख कहिते हैं कि ये मुनीश्वरो—जगत के कारणभूत आत्मा को इन सब प्रमाणों से समझो और समझातेहुये को सत्य जानों (किनप्रमाणोंसे) वेदोंसे कि वेदकी श्रुतियाँ जैसा उसको जपतीहैं (दृष्टांतजैसेनेतिनेति आत्माकारूप इतनाही नहीं किन्तु वह स्थूलभी नहीं वह सूक्ष्मभी नहीं उसके हाथ पैर असंख्य वह बिना हाथ पैरोंका इत्यादि श्रुति वचन हैं)—शास्त्रों से कि वेदांत मीमांसा आन्वीक्षिकी आदि शास्त्र उसका लक्षण जैसा कहिते हों—विज्ञानों में भी सत्यजानों कि यह शरीर मेरा इत्यादि बातोंका बोलनेवाला साफ जताताहै कि मैं शरीर से जुदा इसका मालिक हूं शरीर मेरा मालहै (इन्हीं विज्ञानों में समझि देखो कि आत्मा शरीर से उपराल् वस्तुहै या नहीं)—तैसेही जन्म और मरणसे भी समझि देखो कि जिसमें से वह आत्मा निकसि जाताहै तिस देहके पाँचों तत्त्व जड़ होके निस्पंद पड़े रहिजाते हैं फिर वही आत्मा जिस किसी गर्भ में जाकर निवास करता है तिसके पाँचों तत्त्व चैतन्य होकर एक नयाप्राणी पैदा होजाता है (इन प्रमाणोंसे भी आत्मा जुदीवस्तु और देह जुदीवस्तु निश्चित है)—आर्ति जो पीड़ाहै तिसमें भी समझ देखो कि जबतक देह से आत्मा का निवास रहिता तबतक सुईकी नोक से भी पीड़ा होने लगती है आत्मा के निकसि जानेबाद छुरी घुसने से भी कुछ पीड़ा नहीं—तथैव (गति आगति) जाना आना इन दो में भी समझ देखो कि जीवता हुआ देह भी जो कहीं जाता या कहीं से लौटि आता है सो भी ज्ञान और इच्छा

ओर प्रयत्न से खाली कहीं न जाता है न आता है अर्थात प्रथम तौ उस ठिकाने का ज्ञान चाहिये फिर इच्छा भी जाने तथा आने की चाहिये फिर उसके लिये सवारी आदि कोई सा प्रयत्न भी अवश्य किया जाताहै सो इन तीनों बात का अधिकर्त्ता उन आत्मा के सिवाय कोई नहीं क्योंकि देह उसकी इच्छा विना कुछ नहीं करसक्ता—सत्य असत्य से भी सोचौ कि सत्यवादी होने की प्रतिज्ञा वा असत्य छोड देनेका नियम कौन चलाताहै शरीर तौ आपही जडहै इसकी यह सामर्थ्य नहींतिसमे आत्माही यह करता है—ऐसेही श्रेयस् अपनेहित कल्याणकाविचार ओर यहां वा परलोक से सुख दुख प्राप्त होनेका विचार भी आत्मा आप किया करताहै जड देह का यह काम नहीं—ऐसेही शुभ अशुभ कर्मों के विचारको भी आत्मा कर्त्ता है शरीर की सामर्थ्य नहीं क्योंकि ये बातें ज्ञानके आधीनहैं ओर ज्ञानका विवेक उसी आत्मा के आधीन है—तथा•निमित्त•शाकुनज्ञान•ग्रहसंयोगजफल•इनसे भी समझ देखो कि निमित्त जो भूकम्प उल्कापातआदि वहुधा शुभ अशुभकीसूचनाकरानेवाले प्रसिद्ध होतेहैं तिनका उत्पन्न करनेवाला आत्मा के सिवाय ऐसा कौनहै क्या यहभी जडदेहोंका काम है•यद्वा शाकुनज्ञान जो पक्षियोंकी बोलीसे या उनके उडने बैठने के भेदसे शकुन कहेजाते ओर(शकुनवसन्तराजआदिग्रन्थोंसे) ठीक उनके फलहोतेहैं सो प्रभाव उनमें किसने उत्पन्नकिया क्या आत्माके विना जडदेहोंका यह कामहै• यद्वा सूर्य्य आदि ग्रहोंके परस्पर संयोग वा दृष्टि आइपरने से जो जो फल शास्त्र विद्वानों के द्वारा विचार किये जाते ओर ठीक प्रमाण देते हैं क्या उन ग्रहों के भी प्रभाव आत्मा से उपरान्त कोई उत्पन्न करने वाला जड देहोंमें से होसक्ता है—तथैव तारा ओर नक्षत्रोंके संचारसे भी सोचि देखो कि नक्षत्र तौ अश्विनीआदि रेवतीपर्यंत ओर तारा इनसे उपरान्त जो आकाश में असंख्य दीख परतेहैं जिनके (संचार)चलने घूमनेका आधार जो शिशुमार चक्रहै आकाशी पुलके तुल्य तिसपर फिरते रहितेहैं सो किसने रचा क्या आत्माके सिवाय जडदेहों की यह कारीगरी होसक्ती है—तथा जागर ओर स्वप्नज फलों से भी सोचि देखो कि जागर नाम जागते समय जो कोई सा शकुन या अपशकुन देखा जैसे सूर्य्य के मण्डलमें छिद्र दीख परनेलगा या काकसंयुक्त होने देखागया या छाया पुरुष अंग भंग दीख परनेलगा इत्यादि ओर सोते हुये स्वप्नों में हाथी सर्प देखने दुःखहुये स्वप्ने पानिका ग्रहना आदि अनेक भांत से देखना ओर उसके लिये चाहे किसी राजा आदि अपने प्रियतम के लिये सो सब तद्रूप फल देते हैं से कहते हैं कहो कि जो आत्माकोई नहींहै तौ इनचरित्रोंके रचनेवाले क्या

येही जड़शरीर हैं—तथा जीवोंके उपकार के लिये जो•आकाश•पवन•जोति• (अग्नि और उजीता) जल•पृथ्वी (जो रत्नोंसे भरी और नाना वस्तु उत्पन्न करनेवालीधरतीहै) अँधेरा (यह भी एक पदार्थ है) ये सब जिसने रचे सो कितना वडा समर्थहै क्या उस आत्माके विना जड़देह भी ऐसेकामकरसके—तथा युगों की वृद्धि से मन्वन्तर काल फिर उनकी वृद्धिसे कल्पांतरआदि वड़े लम्बे कालके विस्तारों को शोचि देखो जो देहोंमें नहीं समायसक्ता वरन उसके बीच असंख्य देह चलेजातेहैं यह किसने रचा—तथा मंत्र और औषधियोंके फल शोचिदेखो उनमें वड़ेवड़े अनूठप्रभावहैं सो किसने रचे क्या यह भी जड देहोंका काम था—तिससे समस्त जगत का रचनेवाला कारण उसी आत्मा को जानो ॥ १७० ॥ १७१ ॥ १७२ ॥ १७३ ॥

१७०अधिकोक्तिः—एक सौ सत्तरि आदि श्लोकमें जो (पंचभूत जड़द्रव्योंसे वने हुये) देह को जड कहागया तिसके मध्ये एक यह भी शास्त्रार्थ है=यथाह विज्ञाने श्वराचार्यः=नहिदेहस्यचैतन्यादि संभवति यतःकारण गुणप्रक्रमेण कार्यद्रव्ये वैशे-षिक गुणारम्भोदृष्टः नचतत्कारण भूत पार्थिव परमाणवादिषु चैतन्यादि समवायः संभवति तदारब्धस्तंभकुंभादि भौतिकेष्वनुपलभात नचमदशक्तिवदुदकादि द्रव्यांतर संयोग इतिवाच्यं शक्तेः साधारणगुणत्वात् अतोभौतिक देहातिरिक्त चैतन्यादिसम वाय्यंगी कर्त्तव्यः=अर्थात्—नहीं देह का चैतन्यादि लक्षण संभव होता है क्योंकि (असली गुणके शुरूकिये अवसर से उत्पन्न कार्य्यरूपी द्रव्यमें उसीके विशेष गुण का आरम्भ देखागया है पर) उस देहके असली कारण पृथ्वी आदिके परमाणुओं में चैतन्य आदिका समवाय इकट्ठा होना संभव नहीं है क्योंकि उन परमाणुओं में वनेहुये लक्कड मटके आदि अनेक देखो जो पृथ्वी आदि भूतोंकी उत्पत्ति है तिन में वह चैतन्यका समाज नहीं मिलता है (इस प्रमाणसे देहोंको भी समझलो) और यह युक्ति भी न कहनी चाहिये कि जड शक्तिवाले उदक आदि अन्य द्रव्यों के संयोग से उत्पन्न होता होगा क्योंकि शक्ति जो पदार्थ है सो साधारण गुणों का रूपहै•तो इसहेतुसे ही भूतोंसे उत्पन्न देहके उपरान्त चैतन्य आदि समवायको इकट्ठा करने वाला समवायी उसका अधिष्ठाता (वही परमात्मा) भी है यह ऐसा अंगीकार कर्तव्य ठहरा ॥ १७० ॥ १७१ ॥ १७२ ॥ १७३ ॥

———※———

(पुनरप्याह)

अहंकारःस्मृतिर्मेधाद्वेषोबुद्धिःसुखंधृतिः। इंद्रियांतरसंचारइच्छाधारणजीविते १७४
स्वर्गःस्वप्नश्चभावानांप्रेरणंमनसोगतिः। निमेषश्चेतनायत्नआदानंपांचभौतिकम् १७५
यतएतानिदृश्यंतेलिंगानिपरमात्मनः। तस्मादस्तिपरोदेहादात्मासर्वगईश्वरः १७६

अर्थः—परमात्मा के इतने चिह्न ये प्रत्यक्ष देखि परते हैं कि—अहंकार(मैं हौं मैं होता इत्यादिरूप अहंकृति के प्रसिद्ध हैं) स्मृति यादि पुरानी बातों की जरूरत के समय स्मरण करिलेना कि पहले जन्मों में पैदाहोकर मैं दूध पीने और मांगने लगता था यहां भी वही जन्मकाल फिर वर्तमान हुआ है दूधके लिये रोकर याद दिलानी चाहिये मेधा उस बुद्धिका नामहै जो समझि पाई हुई बातोंको हर वक्त यादि रखि सके—द्वेष यद्यपि वैर को भी कहिते हैं परन्तु ठीकनाम उस लक्षणकाहै कि दुःख या दुःख देनेवाली वस्तु को न चाहै कि यह मेरे निकट न आवै यह द्वेष कहाता है सो अतिशय छोटे शिशुमें भी यह लक्षणस्वतः बिना सिखलाने के उत्पन्न होताहै—बुद्धि उस ज्ञानका नामहै कि ये मेरे माता पिताहैं ये और सब गैरहैं ऐसी बुद्धि छोटे शिशु में भी उत्पन्न होजातीहै—सुख आराम इसको पहिँचानना कि यही प्राप्त होय ऐसा बोध अज्ञान बालकों में भी होताहै (रुपया पैसा कौडी आदि सन्मुख डालिके देखौ कि उनमें जो अच्छा होगा उसी को उठावैंगे) धृति धीरज का नामहै कि बालक यद्यपि अकेला पड़ारहाहो कि माता किसी धंधेमें लगीहै कदाचित कोई गैर गोद में लेनाचाहै तौ न जावैगा माताचाहै विलम्ब से आवै तौ भी उसीके निमित्त धीरज किये रहिताहै—इन्द्रियांतर संचार यह कहाता है कि चाहैं तैसा अज्ञान बालक हो तहभी एक इंद्री से समझी बात को पाने के लिये दूसरी इंद्री पसारता है (दृष्टांत जैसे अबूझ बालक ने आंखि से चन्द्रमा देखा तौ उसके लेनेको हाथ या मुँह पसारता है तात्पर्य इसका यह कि चन्द्रमा तक हाथनहीं जासकताहै इस बातकी अज्ञानता होते हुये भी इतना बोध होताहै कि हाथसे या मुँहसेभी कोई वस्तु पकड़ी जायगी) इच्छा वह कहाती है कि किसी उपाय पर बुद्धि को दौड़ाना जैसा अभी जो दृष्टांत लिख चुके हैं कि चन्द्रमा को देखिके तोड़ने की इच्छा उत्पन्न करी—धारणा कहते हैं थांभने को दृष्टांत जैसे बच्चाभी कहीं से फिसिलि के गिरने लगे और उनको मालूम होजाय कि मैं गिरता हुआ तौ उसी समय यह धारणा उत्पन्न होजातीहै कि जैसे बन सके तैसे अपने शरीर को थांभना है कि न गिरने पाऊं—जीवित नाम है

प्राणों की धारणा का कि जिसको थोड़ा भी ज्ञान होगा अर्थात् पशु पक्षी आदि भी प्राणों के थाँभने को समझते और थाँभने का उपाय भी जहाँ तक होसके सो करते हैं अर्थात् मारने वाले को सामने आया देखिके आड़ में होजाना आदि अनेक प्रकार हैं जीवित के=स्वर्ग अर्थात् ऊँची पदवी की पहिचानि और उसकी चाहना अपनी योग्यता के अनुरूप यह बालकों वा पशु पक्षी आदि में भी स्वतः बोध होता है—स्वप्न भी ऐसी चैतन्य वस्तु है जो बालक और पशुपक्षी आदि में भी उत्पन्नहोता है तब नाना प्रकार की त्रिलोकीदेखने में आती है यह भी पूरे चैतन्य का काम है—भावोंकी प्रेरणा अर्थात् इंद्री आदि जो जो देहके भावहैं तिनको यथायोग्य जैसीजैसी ज़रूरत के समय पर घुमाने चलाने फेरने आदि की ताक़ीद अज़ख़ुद होती रहिती है यह भी पूरे चैतन्य का काम है— मनकी चालि को देखौ कि क्षणमात्र में लाखौं कोस हज़ारों मंज़िल की ख़बरलेता और सैर करिआताहै यह कैसी पूरी चेतना का काम है—निमेष अर्थात् नेत्र और पलकों का मीचना खोलना जो प्रसिद्ध है वहभी कैसी पूरी चेतना के आधीन है कि उनके इशारों से अनेक बात कही जाती हैं जिनको दूसरेलोगबिना कहे समझ लेते हैं—पंचभूतों का आदान भी देखौ अर्थात् पृथ्वी जल तेज वायु आकाश ये पाँच भूत जो सामान्य भावसे जुदे जुदे उत्पन्न किये गये तिससे इनके पाँच समूह मात्र ठहिरे तिनका आदान उपादान किंतु सृष्टिकी रचना में लेकर लगाने की बारीकी शोचौ कि बड़े छोटे सब जीव चर अचर जो बने और सदा बनते रहिते हैं तिन सबही में ये पाँचों सहाभूत होते हैं अर्थात् इन्हीं पाँचों के मेल से सब जीव होतेहैं तहाँ यह बारीकी शोचने के योग्यहै कि अति सूक्ष्म जंतुमें कितना कितना भाग इन पाँचों का पहुँचता होगा फिर उन भागों के पहुँचानेवाले की शक्ति शोचौ कि थोड़ा थोड़ा पाँचों में से लेना और यथायोग्य सब जीवों के चोला तक पहुँचाना फिर बड़ी युक्तियों की चुनाई करिके असंख्य मूर्त्तें दिखलाय देनी कि जो एकसे दूसरी कुछ अनूठी होगी=जबकि परमात्मा के इतने चिह्न प्रत्यक्ष देखे जातेहैं तिससे वह आत्मा देहसे उपरान्त जुदा रूपहै पर सबही के देहों में सबंध हुआ रहिता क्योंकि ईश्वर है अर्थात् सामर्थ्यमान है जो कुछ जिस रीति से होना या करना चाहै सो सब संभवहै तिससे उसके होनेमें सदेह नहीं ॥ १७४॥१७५॥१७६ ॥

———※———

(क्षेत्रज्ञस्यस्वरूपं)

बुद्धीन्द्रियाणिसार्थानिमनःकर्मेन्द्रियाणिच। अहंकारश्चबुद्धिश्चपृथिव्यादीनिचैवहि १७७
अव्यक्तमात्माक्षेत्रज्ञःक्षेत्रस्यास्यनिगद्यते। ईश्वरःसर्वभूतस्थःसन्नसन्सदसच्चयः १७८

अर्थः—अर्थों सहित ज्ञानेन्द्री और कर्मेन्द्री तथा मन और अहंकार और बुद्धि और पृथिवी आदि भूतभी=अर्थात्—बुद्धिवाली पाँचइन्द्रियाँ (श्रोत्र त्वचा चक्षु जीभ नासिका ये पांच ज्ञानेन्द्री) अपने विषय रूपी अर्थों (शब्द स्पर्श रूप रस गंध इन) सहित और मन जो सब इन्द्रियोंका राजाहै और कर्मेन्द्री जो काम करनेवाली पाँच इन्द्रियाँ (मुख हाथ पैर गुदा लिंग ये) प्रसिद्ध हैं और अहंकारको पहिले भी लिख चुके हैं तिसका गुणरूप यहाँपर समझ लेना प्रकाशमान चेष्टा नहीं और बुद्धि जो निश्चय करनेवाली महातत्त्व कहाती है और पृथिवी आदि पाँच भूत भी प्रसिद्ध हैं और=अव्यक्त नामसे प्रकृति•यह सब सामग्री मिलिके देहरूपी क्षेत्र (खेत) कहाता है सो इस क्षेत्र का जाननेवाला क्षेत्रज्ञ वही आत्मा कहा जाता है जो सर्व शक्तिमान् ईश्वर तथा सर्व भूतोंमें संस्थित और है या नहीं इन दोनों लक्षणासे सम्पन्नहै क्योंकि (सत असत सभोंमें परिव्याप्त है प्रमाणों से पहिचाना जाताहै तिससेहै इस लक्षणा से संपन्नठहिरा और प्रत्यक्षरूप देखने में कभी नहीं आता तिससे नहीं इस लक्षणा से युक्त ठहिरा १७७॥ १७८॥

अब इस बुद्धि और इंद्रियाँ और अहंकारआदि छिपेहुये पदार्थों की उत्पत्ति जैसे परमात्मा के सकाश से होती है सोभी अगिले परिच्छेद में देखना•क्योंकि अब तक पृथ्वी आकाशआदि महाभूत और अन्य भौतिकी सृष्टि का उत्पत्ति क्रम जहाँ तहाँ दर्शायागया•परन्तु बुद्धि और इन्द्री आदि भीतरी समवाय का उत्पन्न होना अबतक कहागया—यद्यपि तिहत्तरि के श्लोक से यह कहाया कि गर्भमें युगपत् उसीआत्मा के पाससे उत्पन्न हो जाताहै फिर उसी जगे ७५ पचहत्तरि श्लोक से यह भी कहा कि गर्भमें तीसरे महीना से इन्द्रियोंका प्रकाश होनेलगता है फिर सातवें आठवें महीनातक मन बुद्धि आदि सब चैतन्य समूह उसमें आजाता है परन्तु यह शरीरों में आजाना जुदी बातहै जो सदाजारी रहताहै अर्थात् सृष्टिके प्रारम्भ समय जो समष्टि रूप से बुद्धि आदिका चैतन्य समवाय पैदा होना है तिसका ब्योरा अब तक नहीं कहा गया सो कहेंगे॥

अथ-बुद्ध्यादीनामुत्पत्तेः स्वर्गमार्गादीनांचोत्पत्तेर्विवेकोनाम-ऊनविंशःपरिच्छेदः१९॥

इस परिच्छेद में बुद्धि आदि समवाय की उत्पत्तिमायाके पाससे जिस क्रमसेहुआ करतीहै सो जानी जायगी और स्वर्ग जानेवालों को मार्गजैसा मिलताहै सोभी कहा जायगा और पुनरावर्त्ती भी मुनीश्वर जो दूसरी सृष्टिमें फिर आकर वही अपना जन्म पातेहैं और सत्यलोक में जानेवालोंके विश्राम स्थान भी दर्शावेंगे॥

(सृष्ट्यारंभकाले बुद्ध्यादीना मुत्पत्तिक्रमः)

बुद्धेरुत्पत्तिरव्यक्तात्ततोऽहंकारसंभवः। तन्मात्रादीन्यहंकारादेकोत्तरगुणानिच १७९
शब्दःस्पर्शश्चरूपंचरसोगंधश्चतद्गुणाः। योयस्मान्निसृतश्चैषांसतस्मिन्नेवलीयते १८०
यथात्मानंसृजत्यात्मातथावःकथितोमया। विपाकात्त्रिःप्रकाराणांकर्मणामीश्वरोपिसन् १८१
सत्त्वंरजस्तमश्चैवगुणास्तस्यैवकीर्तिताः। रजस्तमोभ्यामाविष्टश्चक्रवद्भ्राम्यतेह्यसौ १८२
अनादिरादिमांश्चैवसएवपुरुषःपरः। लिंगेन्द्रियग्राह्यरूपःसविकारउदाहृतः १८३

अर्थः—अव्यक्त से बुद्धिकी उत्पत्ति•तिससे अहंकार का जन्म•अहंकारसे तन्मात्रों की उत्पत्ति•फिर उनसे आकाश आदि एक एक गुण अधिक वाले भी होते हैं और चकार के ध्वन्यर्थ से दश इंद्रियाँभी=अर्थात्—सत्त्व रज तम ये तीनों गुण एकसाँ बराबर तुल्यात्मक मिले हुये प्रकृति कहातीहै उसीका नाम शक्ति भी होता है वही न देखिपरने के हेतु से अव्यक्त कहा जाता है•उस अव्यक्त में से प्रथम बुद्धि उत्पन्न होती है (यहां पर बुद्धि केवल इसको न समझना जो सिर्फ़ एक मनुष्य के हृदय में होतीहै अर्थात् उस महत्तत्त्व को समझना जो सृष्टि की आदिमें सबसे पहले अव्यक्त में से महाबुद्धि उत्पन्न होती है उसी की छाया सब जीवों के हृदय में आकर उस तरह से परती है कि जैसे जलमें सूर्यका आभास) उस महाबुद्धिमें से अहंकार उत्पन्न होताहै उसी अहंकार की छाया सब सृष्टि के जीवों पर परतीहै•उसी अहंकार में से आकाश आदि पाँच भूतों के पाँच बीज उत्पन्न होते हैं सो तन्मात्र कहाते हैं उन्हीं के ये नाम हैं (शब्द तन्मात्र १ स्पर्शतन्मात्र २ रूपतन्मात्र ३ रसतन्मात्र ४ गंधतन्मात्र ५) ये अति सूक्ष्म रूपी बीज होते हैं पाँच तन्मात्र कहलातेहैं फिर उन्हीं मेंसे जुदे जुदे अपने बीजों से आकाश आदि स्थूल रूपी पाँच तत्त्व भी उत्पन्न होतेहैं अर्थात् (शब्द तन्मात्रके बीजसे आकाश) (स्पर्श तन्मात्र बीजसे वायु) (रूपतन्मात्र

बीजसे अग्नितेज) (रसतन्मात्र बीजसे जल) (गंध तन्मात्रबीजसे मृत्तिका पृथ्वी) इसी हेतु जिन बीजोंसे उत्पत्तिहुई उन्हीं बीजोंवाले गुण आकाशआदिपाँचौंभूतमें प्रत्यक्ष होते हैं सोभी एक एक पिछलेमें अधिक गुण होता है अर्थात((आकाशमें अपनेही बीजका गुण एक शब्दमात्र होता है १—वायुमें अपने बीजका गुणस्पर्श और अपने बाप आकाशकाभी शब्द गुणहोताहै २—इसीतरह अग्निमें अपनेबीजका गुण रूप भी और दोनों बाप दादा के गुण स्पर्श और शब्द भी३—जलमें अपने बीजका गुण रस भी और तीनों पुरुषाओं के गुण शब्द स्पर्श रूप भी ४—मट्टी में अपने बीजका गुण गंधभी और चारौं अपनेबड़ौं के गुण शब्द स्पर्श रूप रसभी ये पाँच होतेहैं५)) इसी मूल श्लोक में च कारसे दश इंद्री तथा और भी विशेषता कहिनी शेष रही सो अधिकोक्ति में देखना॥ १७९॥ शब्द•स्पर्श•रूप•रस•गंध•ये उन्हीं आकाश आदि पाँच भूतों के गुण होते हैं सो अभी पहिले श्लोकमें लिखचुके और यहभी एक नियम है कि उन बुद्धि आदि सभी में जो जिसमें से निकसा है सो उसी क्रमसे प्रलय के समय पर उसी में लीन होजाता है॥ १८०॥ याज्ञवल्क्य जी पहिली सब सुनाई हुई व्यवस्था को याद दिलाकर कहिते हैं कि ये श्रोता मुनीश्वरो आत्मा जो ईश्वर है सो जैसे जैसे अपने आत्मा को सृष्टि में सृजता है सो पहिले मैंने सब कहिकर तुमको सुनाया कि यद्यपि वह ईश्वर है तथापि मानस १ वाचिक २ कायिक ३ तीन प्रकार के कर्मों का विपाक फल स्वीकार करनेसे नाना रूप धरताहै (इसी प्रयोजनसे सबसे प्रथम इतनी सामग्री को तैयार करताहै कि अव्यक्त से बुद्धि आदि फिर आकाश से धरती पर्यंत रचिकर फिर उन्हीं से सब जीवों को उपजाताहै॥ १८१॥तहां सत्त्व रज तम ये तीनों गुण जो तुमसे कहे गये सो उसी परमेश्वरके समझनेको कि उसकी एक अविद्या मायाके तीनों भागबराबर तीन गुण कहातेहैं(कि जैसाएकसौ उनासीश्लोक में अव्यक्त का स्वरूपकहा उसी को अविद्या समझो) तीनोंगुणकहेतिनसें रजोगुण तमोगुणादिक दोहों के आवेश करके यहपरमेश्वर आपही सृष्टि रूपहोकर सदापहिया कीतरह चक्कर खाताहुआ घूमता रहताहै यहभी तुमकोमैं समझाय चुका एकसौ चौंसठ का श्लोकदेखो॥ १८२॥ वही अनादि पुरुष परमेश्वर आदिवाला भी शरीर धारण करनेसे कहाता है कि जब प्रकृति के परिणामसे विकार सहित होताहै और लिंग। सदा इंद्रियों से देखने छूने सकने योग्य रूप होता है यह भी तुम से पहिले मैं कहिचुका तहां फिर फिर जाके उन्हीं प्रकरणों को सोचो समझो। (यहां लिंग और इंद्रियों से निर्देश गई तहां इंद्रियां तो प्रसिद्ध हैं कि उन्हीं से सब रूप देखे सुने

हुये जातेहैं और लिंग नाम है चिह्नका और इसी हेतु से देह कोभी लिंग कहते हैं कि वह जीवका स्वरूप समझने योग्य एक चिह्न है क्योंकि जो देह रूपी चिह्नकुछ न हो तौ फिर जीव का लक्षण भी किसके सहारे से समझा जाय॥ १८३॥

१७९ अधिकोक्तिः—ऊपर लिखी हुई उत्पत्ति में यह विशेषता भी समझने को योग्यहै कि तीनों गुण मिले हुये बराबर का नाम अव्यक्त कहा गया तौ बुद्धि जो अव्यक्त से उत्पन्न हुई तिसमें भो तीनों गुण का प्रभाव होता है परंतु इतना अंतर होजाता है कि बुद्धि में तीनों गुण होने परभी सतोगुण अधिक होता है क्योंकि अव्यक्त नामकी प्रकृति में चैतन्य परमात्मा की छाया घुसने से अव्यक्त उमड़ि चलता है (जैसे किसी नाद या गड़हिले भरेहुये में कोई चीज़ औरभी डारने से उसका जल उमडि के बहि चलता है तैसेही तीनों गुण से बराबर भरे हुये अव्यक्त में चिच्छाया का प्रवेश होने से सतोगुण बढि जाता है क्योंकि चैतन्य की छाया केवल सतोगुणमयी होतीहै तिसके प्रभावसे अव्यक्तकाभी सतोगुण उमड़ि चलताहै) इसी हेतुसे बुद्धि जो उसमेंसेउत्पन्नहुई तिसमें रजोगुण तमोगुण तौ बराबरहैं सतोगुण सबसे अधिकऔर इसी सतोगुणके प्रभावसे बुद्धिमें ज्ञानकीशक्ति रहाकरतीहै और इसीहेतु से बुद्धि परमात्माकी इच्छारूप कहाती और प्रमाण इसका धन्वन्तरि का वचनहै= यथा=ततोऽव्यक्तान्महत्तत्त्वंबुद्धितत्त्वापराभिधम् त्रिगुणांसत्त्वबहुलं निर्मलंस्फाटिकोपमम् चिच्छायाप्राप्तचैतन्यंतदिच्छामयमीरितम्=अर्थात्—तिसअव्यक्तनाम प्रकृतिसे महत्तत्त्व पैदा होती हुई कि जिसका दूसरानाम बुद्धि तत्त्व भी होताहै वह तीनों गुण मे युक्तहै पर तौभी उसमें सतोगुण बहुत है क्योंकि चैतन्य पुरुष की चिच्छाया प्राप्त होनेसे चैतन्य होजाती और बडी निर्मल साफ बिल्लौरी पत्थर के समान चमकदार और उसी चैतन्य पुरुष की इच्छारूप कहाती है कि जिधर को वह इच्छा दौडाना चाहै उधरीको दौडताहै=इसी त्रिगुणमयी बुद्धिका परिणाम (जैसदूधकादहीहोजाना) जो विकाररूपी कहाताहै तिसका तेज खिंचिकर अहंकार की उत्पत्ति होतीहै इसमें वह अहंकार भी तीन भाँतिका सात्विक राजस तामस जुदा जुदा होताहै (परन्तु अहंकारको उत्पन्नकरनेवाली बुद्धिमे सतोगुण अधिकहोना जो कहिचुके सो नहींरहता किन्तु रजोगुण का तेज अधिक होजाता है) इन तीनोंमें जो तामस अहंकार कहा तिसके तेजसे पांच तन्मात्राओं की उत्पत्ति होती है फिर उन्हीं से आकाश आदि पांच भूतोंकी उत्पत्ति=[illegible] इसकी उत्पत्ति [illegible] में [illegible] पीछे जो [illegible] कहा तिसके [illegible] से यह जो [illegible] दोनोंतिके अहंकार सात्विक तथा राजस इन दोनों

के विकारसे परिणाम होकर जो तेज खिंचा तिससे दो भाँतिकी इन्द्रियाँ पैदा हुईं अर्थात् सात्त्विक अहंकारके तेजसे पाँचज्ञानेन्द्री और राजस अहंकार के तेजसेपाँच कर्मेन्द्री(यहाँ भी अहंकार और इन्द्रियोंको केवल एक पुरुषके देहमध्ये नहीं समझना किन्तु सृष्टिके प्रारंभ में समष्टिरूपसे जो अहंकार और इंद्रियाँ सब सृष्टिका एक मसाला पैदा कियागया तिसका यहाँ चर्चाहै फिर उसी समष्टिकी राशिमें से व्यष्टि रूप करि करि सब सृष्टिकी रचना करीजाती है) ॥ १७९ ॥ अब स्वर्गजानेवालोंका मार्ग उनके कर्मोंके आधीन आगे कहेंगे ॥

(स्वर्गगामिनांमार्गः)

पितृयानोऽजवीथ्याश्चयदगस्त्यस्यचान्तरम् । तेनाग्निहोत्रिणोयांतिस्वर्गकामादिवंप्रति १८४
येचदानरताःसम्यगष्टाभिश्चगुणैर्युताः । तेपितेनैवमार्गेणसत्यव्रतपरायणाः१८५

अर्थः -अजवीथी का और अगस्त्य का जो अन्तर है सो पितृयान है तिससे अग्निहोत्री स्वर्गको जातेहैं स्वर्ग की कामना रखनेवाले=और जे दानमें रत रहिनेवाले तथा आठगुणोंसे संयुक्त भी और सत्यके व्रतमें परायणहों वे भी उसीमार्गसे जातेहैं= अर्थात् अजवीथी अमरमार्ग जो आकाश में देवतोंकी सड़कहै बुद्धिमानोंको दिखाई देतीहै कि रूप उसका आकाश दक्षिणमार्ग में (मूलपूर्वाषाढउत्तराषाढ) इनतीनों के उदयवाले सब तारे मिलिकर अजवीथी बनी कहाती यह तारागण के शास्त्रोंका सिद्धांतहै•इस अजवीथीसे लेकर अगस्त्य के उदय होने योग्य ठिकानेतक बीचका जो अंतरहै वही (पितृयान) पितरों का रास्ताहै कि जहांसे पितृलोक में जाते आते रहितेहैं•उसी पितरों के रास्ते होकर अग्निहोत्री लोग स्वर्ग में जाने पातेहैं कि जिन्हींने स्वर्ग देखने या भोगने की कामना से वेदोक्त अग्निहोत्रोंकी उपासना करी हो ॥१८४॥ और जे कोई सत्पुरुष दानदेना आदि स्मार्त कर्मोंमें अच्छे ढंगसे दम्भछोड़िके निष्कपट तत्पर हुयेहों उसीमार्गसे जातेहैं•और वे भी कि जो आठगुण सेवन करने वालेहों अर्थात् (दया•क्षांति•अनसूया•शौच•अनायास•मंगल•अकार्पण्य•अस्पृहा) ये आठ लक्षण जो गौतम आदि ऋषीश्वरोंके आदेश किये प्रसिद्ध हैं सो जिनमें हों वे भी उसी मार्गसे जातेहैं•और वे भी कि जो लोग सत्य बोलनेके व्रत में रंगे रहिते हों उसी मार्गसे जातेहैं ॥ १८५ ॥

अब नीचे इन सिद्धों की व्यवस्था कही जायगी जो बारंबार अपना वही उत्तम तन आकर लेतेहैं अर्थात् किसी और योनिमें कभी नहींजानेपातेहैं यहभी एकविषय

ढंग उसी सर्व शक्तिमान की इच्छा से नियमात्मक जानौं केवल कर्मौंकी प्रधानता इसमें नहीं क्यौंकि ईश्वर की सत्तामें एकसे एक नई अनूठी बात होतीहै इसी हेतु से कोई उसकी इच्छाका अंत नहीं पाताहै और इसीसे वेदौंकी श्रुतियां भी नेति नेति की पुकार किया करती हैं ॥

(पुनरावर्त्तिनोलोकाः)

तत्राष्टाशीतिसाहस्रामुनयोगृहमेधिनः। पुनरावर्तिनोवीजभूताधर्मप्रवर्तकाः १८६

अर्थः—तहाँ अट्ठासी हजार मुनीश्वर गृहमेधी सर्वधर्मौंके प्रवर्तक वीजभूत होके रहित्ते जो पुनरावर्ती होतेहैं=अर्थात—यह संदेह खड़ा होताथा कि प्रलय के होजाने बाद पढ़ानेवालौं के मिटिजाने से नवीन सृष्टि में नवीन देहौंको वेद विद्या आदिका वोध कुछ न होने से अग्निहोत्र आदिकर्म कैसे होसकते होंगे कि जिन धर्मौंके होने विना कैसे स्वर्ग मिलिसक्ता होगा—इसका समाधान समझाते हैं कि—तहाँ पूर्वोक्त पितरौंके मार्गवाले देशमें (प्रलयके समयपरभी) अट्ठासी सहस्र मुनीश्वर जो गृहस्थ धर्मके जाननेवाले (पंचयज्ञ आदि नित्य नैमित्तिक धर्मौंकी साधना करनेवाले) सव सामग्री साथलिये तबतक वहां टिकतेहैं कि जवतक दूसरी सृष्टिका प्रारंभहोय•फिर वहाँसे आकर अपना वही जन्म यहाँ पातेहैं कि जैसा कुछ पहिली सृष्टिमें था इसी हेतुसे पुनरावर्ती कहाते हैं कि फिर फिर लौटि आना होता है•वेही आकर सृष्टि के नवीन लोगौंको वेद विद्या आदि सिखलाकर धर्म मार्गमें प्रवृत्त करते हैं (फिर क्रम क्रमसे पढ़ने और पढ़ानेवाले और भी उत्पन्न होते रहिते हैं कि जैसे एक दीपक से असंख्य दीपक जुड़ते रहिते हैं) इसीलिये धर्मरूपी नवीन वृक्षको उपजानेवाले वीज भूत वे अट्ठासी हजार मुनि कहाते हैं क्यौंकि जो येही अट्ठासी हजार वीज संचित न रहिते तो फिर अग्निहोत्र आदि कर्म यहां क्यौंकर जारी होसकते और धर्मरूपी वृक्षौंकी वढवारी भी वीजौंविना कैसे होती ॥ १८६ ॥

इसी भाँतिके और भी मुनि होतेहैं सो अगिले श्लोकौं में देखो ॥

(अन्येपिस्वर्गगामिनो मुनयः)

सप्तर्षिनागवीथ्यंतर्देवलोकंसमाश्रिताः। तावंतएवमुनयःसर्वारम्भविवर्जिताः १८७
तपसाब्रह्मचर्येणसंगत्यागेनमेधया। तत्रगत्वावतिष्ठन्तेयावदाभूतसंप्लवम् १८८
यतोवेदाःपुराणानिविद्योपनिषदस्तथा। श्लोकाःसूत्राणिभाष्याणियच्चकिंचनवाङ्मयम् १८९
वेदानुवचनंयज्ञोब्रह्मचर्य्यंतपोदमः। श्रद्धोपवासःस्वातंत्र्यमात्मनोज्ञानहेतवः १९०

अर्थः—सप्त ऋषि जो आकाश में उदयहोते दिखपड़तेहैं•नागवीथी अर्थात् ऐरा-

वन हाथीका रास्ता जो अश्विनी भरणी कृत्तिका नक्षत्रोंके सब तारे मिलि के उत्तर मार्ग में नागवीथी कहाती है वीथियोंका वृत्तान्त अधिकोक्ति में) सप्त ऋषि और नागवीथी का जो बीचरहा स्वर्ग लोकमें तहाँभी उतनेही अट्ठासीहजार दूसरे मुनिलोग जाकर टिकते हैं कि जबतक प्राकृत किस्म का प्रलय होतारहिताहै ये मुनिलोग भी गृहस्थी झगड़ोंसे बचेहुये केवल ज्ञानके स्वरूप और तपस्या ब्रह्मचर्य्यसे संयुक्त होते हैं सब संग छोड़े हुये और मेधा नामकी बुद्धिसे संयुक्त होतेहैं कि जो कुछ पहिलेदेखा सुना तिसकी धारणा बनी राखैं किन्तु भूलैं नहीं॥१८७॥१८८॥जिससे फिर अगिली सृष्टिके प्रारम्भमें•चारी वेद•पुराण•विद्यायें•उपनिषद•श्लोक•सूत्र•औरभाष्यजोसूत्रों की व्याख्यारूप होतेहैं•औरभी जोकुछवाणीरूप शास्त्रहोतेहैंमीमांसा वैद्यकज्योतिष आदि सो सबइन्हीं मुनिसमूहोंसे प्रवृत्त होताहै अर्थात् जो एकसौ छहासीके श्लोकमें गृहस्थी धर्म जाननेवाला एकमुनि समूहकहा दूसरा जो गृहस्थी जंजालोंसे बचाहुआ समूह इसी जगेपर दर्शाया गया इन्हीं दोनों समूह से सब धर्म्म कर्म्म और वेदविद्या आदिजारी होतेहैं इसीलिये ये सब धर्म्म प्रवर्त्तक भी कहाते हैं॥१८९॥इसी हेतुसे वेद अनित्य नहीं कहाजाता क्योंकि प्रलय कालमें भी नाश उसका नहीं होताहै—इसी लिये जो कुछ वेदों के वचनानुसार हो•यज्ञ•ब्रह्मचर्य्य•तप•दम•श्रद्धा•उपवास•स्वातन्त्र्य अर्थात मुक्ति मार्गकी भावना•सो सबआत्मज्ञानके हेतुहैं—अर्थात् जो वेदनित्य और सनातन ठहरा तो उनके द्वारा जो जो धर्म्म कहा गया सो उसवेदकी प्रबलता सेही परमात्माका स्वरूप दर्शनकरानेवाला सत्यहै सन्देहको ठिकानाइसमेंनहीं१९०॥

तथैव=पुष्याश्लेषातथादित्यावीथीचैरावतीस्मृता=अर्थात्—पुनर्वसु पुष्य श्लेषा इन तीनों के जितने तारे हैं आकाश में सो सब मिलिके ऐरावती वीथी कही है=एवं=मूलाषाढोत्तराषाढाअजवीथ्यभिशब्दिता=अर्थात्—मूल पूर्वाषाढ उत्तराषाढ इन तीनों के सबतारा मिलि के अजवीथी कही गई सो यह एकसौ छहासी के श्लोक में आईथी इत्यादि अनेक और हैं पर यहां केवल नागवीथी का प्रयोजन है सो ऊपर लिख चुके॥ ० ॥ यद्यपि संदेहों को मिटाते चलेआते हैं तथापि यहां औरभी नवीन शंकायें खड़ी हुईं कि जब ईश्वर आपही सर्व शक्तिमान् है तब उसको धर्म कर्म और वेद विद्या आदि के बीज संचित करनेकी क्या भीडपरी और क्या ऐसी जरूरत ठहरी जो संसारी किसानों की तरह वह बीज संचय करवाता है क्या जैसे और बडी दुर्लभ चीज़ें उसकी इच्छा से उत्पन्न हुईं और होतीहैं तैसे इनको नहीं उत्पन्नकरसक्ता बल्कि बीजतो असंख्य सब चीज़ों के उसीकी इच्छा से कारण विनाभी उत्पन्न होते हैं—और दूसरी यह शंकाहै कि प्रलय के होजाने में सब सृष्टि निरालोक होजाती है कि जिसके पीछे दिशायें और आकाश वायु आदि सब उत्पन्न किये जाते हैं तब जाकर कहीं दूसरी सृष्टिका प्रारंभ होताहै तो फिर क्या ऐसी दशामें स्वर्ग बनारहता है कि जिसमें अट्ठासी हज़ारसे दूने मुनीश्वर जाकर टिकतेहैं—और तीसरी यहशंका है कि ये मुनीश्वर पुनरावर्ती कहे गये जो पुनः पुनः सृष्टियों के प्रारंभ में स्वर्ग से लौटि आते हैं क्या ब्रह्मा की आयुसे भी अधिक इनकी आयु होती है जो सदा नव सृष्टियों की आदि में येही लौटि आते हैं—समाधान सुनो ईश्वर वही कहाता है जो (कर्तुं अकर्तुं अन्यथा कर्तुं वा समर्थः सईश्वरः शक्तित्रय समन्वितः) इन तीन भांति की शक्तियों से भरा पुराहो अर्थात् जो किसीसे भी न होसके तिस अपूर्व कर्म के करने को समर्थ होय०और जो होनेवाली असिट कोई वार्ता है तिसे मेटि देने को समर्थ होय०और अन्यथा कर्तुं वा किंतु तीसरी यह शक्ति है कि जो कोई बात एकही प्रकार से होती है तिसको भी अन्य प्रकार से करसके और वा गहने के विकल्पमें उस मुख्य प्रकार सेभी करसके अर्थात् जिसमें दोनों तरह स्वाधीन होवें कि चाहै नव और तरहसे करनेलगै या उसी एकप्रकार से होने देवै०इसका यह दृष्टांत यादिकरो कि जैसे मनुष्यके शरीर में सींग और पूंछ नहीं होतीहै यह एकही प्रकार नियमात्मक और सबको मालूम है परंतु ईश्वर ने अपनी अन्यथा करण शक्ति के प्रभाव में शृंगीऋषि आदि मनुष्यभी सींगवाले बनाकर दिखलाये यह कथन वाकी न रक्खा कि सींग होही नहीं सकते हैं ऐसेही किसी देशों में पूंछ वाले भी मनुष्य सुने ब-

और वेदौं की नित्यता पालन करने के हेतुसे मुनीश्वर जगत्कर्ता की इच्छासेही जाते हैं तौ ये एक प्रकार के सरकारी कारपर्दाज़ ठहिरे उनके लिये ठिकाना देना किसको इंकार होगा—तीसरी शंकाका यह उत्तर है कि प्रथम तौ चिरंजीवी मुनियोंकी आयुष् अधिक होना भी असंगत नहीं है मार्कंडेय जी की उत्पत्ति आदि पुराणों में देखो कि प्रलय काल में सब सृष्टि जलमय होजानेपर भी मार्कंडेय जी अक्षयवट के ऊपर बैठि के बचि जाते हैं और वह अक्षयवट भी साक्षात् परमेश्वर की इच्छा और सत्ता रूपी पदार्थ है क्योंकि प्रलय कालिक एकार्णवरूपी भयंकर जल में कोई संसारी वृक्ष नहींठहरसक्ता।तिससे उस परमात्मा की इच्छा में बहुत बडी गुंजायश है जोजो कुछ इच्छा करै सो सब होसकता है—अन्यथा उसवार्ताका यही तात्पर्य नहीं है कि सदा वेही मुनीश्वर उसी देह से आते जाते रहिते होंगे किंतु यह तात्पर्य्य है कि एक प्रकार की सत्ता जाकर टिकतीहै वही सब धर्म और वेदोंको थाँभे रहा करतीहै फिर वही आकर सृष्टिकी आदिमें वैसेही जन्म स्वतः लेतीहै कि जैसे पहिले कल्प में मुनीश्वर हुयेथे उन में आपही सब धर्म और वेदों का बोध ज्ञानरूपसे उत्पन्न होता और पहिले कल्पोंकी व्यवस्था सब याद रही आतीहै (जैसेनारद औरव्यास और शुकदेव आदि को सोचो) फिर उन्हीं के द्वारा आगे को वृद्धि होती जाती है इस रीति से वे लोग धर्मों का बीज कहेजातेहैं॥ १८७॥ १८८॥ १८९॥ १९०॥

(वेदएवात्मज्ञानस्यमूलं)

सद्याश्रमैर्विजिज्ञास्यःसमस्तैरेवमेवतुः। द्रष्टव्यस्त्वथमंतव्यःश्रोतव्यश्चद्विजातिभिः १९१
यएनमेवंविंदंतियेचारण्यकमाश्रिताः। उपासतेद्विजाःसत्यंश्रद्धयापरयायुताः १९२

अर्थः—वही वेद सबआश्रमौंके द्विजातीलोगौंकरके जाननेकी इच्छा उत्पन्नकरने योग्यहै (अर्थात् ब्रह्मचारी गृहस्थ वानप्रस्थ संन्यासी जो ब्राह्मण क्षत्री वैश्य वर्णों के हों इन सबको अच्छे प्रश्नोत्तरौं से जानना उचित है) फिर देखना भी उचित है कि यातौ अपनी सामर्थ्य हो तौ आपही [illegible] देखै या जहां कहीं [illegible] वेदोंका व्याख्यान होताहो तहाँ जाकर सुनना चाहिये [illegible] निर्णय अर्थात् मननभी करनाचाहिये [illegible] उसको [illegible] प्रमाणों से [illegible] (अर्थात् युक्तियौं से विचार करिके प्रमाण में [illegible] तीलोग [illegible] [illegible]) इस परमात्मा सत्यरूपको ऐसे पूर्वोक्त प्रकारों से [illegible]

में• फिर दक्षिणायन के लोकमें• फिर पितरौं के लोकमें• फिर चन्द्रमा के लोकमें (इन सब देवतौंसे सत्कार पाने पीछे) फिर वायुके लोकमें जाकर वायुरूप होताहै• फिर वर्षाके लोकमें जाकर वृष्टिरूप होताहै•फिर जलके लोकमें आकर जलहीका रूप होके पृथ्वीपर आजाता है• फिर उस जलसे धरती में नानाअन्न औषधीकारूप होकर जीवौंके आहारद्वारा वीर्यरूप होजाता है•फिर वीर्यभी संसारी योनिमें पडिके कोईसा गर्भरूपहोजाताहै•फिर वह गर्भ इसी संसारमें पैदाहोकर वेहीदुखसुखभोगता है कि जो कुछ शेषकर्मौंके प्रभावसे उस योनिमें भोगनेयोग्य ठहिरेहों॥१९५।१९६॥ जोकोई अच्छी होशियारी से ये दोनौं मार्ग नहीं जानता किन्तु दोमें से किसी एक मार्गमें जाने योग्य उपायरूपी धर्मौंको नहीं सम्हारता है सो दंद शूकनाम सर्पआदि की योनि में जाताहै या पतंग टीड़ी आदि की योनि में या कीट झींगुर आदि की योनिमें या कृमि जो विष्ठाआदिमें सूंडी परजातीहैं तिनकी योनिमें होताहै॥ १९७॥

अनंतरोक्त नीचयोनि में जानेको बचाना चाहैं तिनके लिये उत्तम योग साधनेकी उपासना अगिले परिच्छेद में दर्शावैंगे॥

—※—

अथ-अणिमाद्यष्टविभूतिप्रापकयोगाभ्यासनिरूपणादि मोक्षस्वरूपविवेकोनामविंशःपरिच्छेद २०॥

इस परिच्छेद में योगाभ्यास रूपीमोक्षका प्रकार जानाजायगा कि जिसके सिद्ध होजाने में अणिमा आदि विभूतें भी मिलसकती हैं—और योगाभ्यास के उपरान्त इतर प्रकारौंसे भी मोक्षहोताहै वो भी वर्णन होंगे

(उपासनायाःप्रकारःयोगाभ्यासः)

ऊरुस्थोत्तानचरणःसव्येन्यस्योत्तरंकरम्। उत्तानंकिंचिदुन्नाम्यमुखंविष्टभ्यचोरसा १९८
निमीलिताक्षःसत्त्वस्थोदन्तैर्दन्तानसंस्पृशन्। तालुस्थाचलजिह्वश्चसंवृतास्यःसुनिश्चलः १९९
संनिरुध्येन्द्रियग्रामंनातिनीचोच्छ्रितासनः। द्विगुणंत्रिगुणंवापिप्राणायामानुपक्रमेत् २००
ततोध्येयःस्थितोयोऽसौहृदयेदीपवत्प्रभुः॥ धारयेत्तत्रचात्मानंधारणांधारयन्बुधः २०१

अर्थः—दोनौं जाँघपर उताने दोनौं चरण स्थापित किये जो (पद्मासन) पद्मासन बांधनाभी कहाता है•बायें हाथ चित्तकिये हुवे पर दाहनाहाथ चित्त किया

टकी बजाई जाती है उतनी पंद्रह मात्राओं से प्राणायाम अधम कहाता है मध्यम उससेदूना कहा और श्रेष्ठ उससे तिगुना होताहै तैसेही उत्तम मध्यम नीच धारणाभी कहातीहैं कि जैसे प्राणायामों से साधी गईहों किंतु तीन तीन प्राणायाम से एकएक धारणा कही गई है तैसी तीन धारणा से एक योगभी तैसाही उत्तम या मध्यम या अधम योग होता है कि जैसी धारणा योगीने निज शक्तिके अनुसार साधीहो•ऐसा योग एकबार भी जो रोज़ रोज़ साधै सो योगी पुरुष कहाताहै•जो बारंबार अहर्निश ऐसे योगों का अभ्यास किया करताहो वही पूरा पूरा योगाभ्यासी होगा ॥२०१॥

पूरे पूरे योगाभ्यास के सिद्ध होजाने में जो शक्ति आदि फल होते हैं तिसके लक्षण आगे कहेंगे ॥

(योगस्यसंसिद्धिलक्षणं)

अंतर्धानंस्मृतिःकांतिर्दृष्टिःश्रोत्रज्ञतातथा। निजंशरीरमुत्सृज्यपरकायप्रवेशनम् २०२
अर्थानांछंदतःसृष्टिर्योगसिद्धिर्हिलक्षणम्। सिद्धेयोगेत्यजन्देहममृतत्वायकल्पते २०३

अर्थः—अंतर्धान•स्मृति•कांति•दृष्टि•श्रोत्रज्ञता•तथा अपने शरीरको छोडि के पराये शरीर में प्रवेश होजाना•और इच्छासे अर्थोंकी सृष्टि करलेना• यह सब योगसिद्धि का लक्षणहै और योगसिद्ध होजाने में देहको त्यागतेहुये अमृतत्व के लिये भी हक़-दार होताहै=अर्थात—अणिमानामकी विभूति जिसका यह लक्षणहै कि अत्यंत सूक्ष्म रूप धर सकताहै जिसको और कोई न देखिसके वह सबकोदेखै यह अंतर्धान सिद्धि कहातीहै•स्मृति भी एक विभूतिहै कि जैसे मनुआदि महाऋषीश्वर उन पदार्थों को याद करसकते थे जिनका याद करना या देखना सुनना इन्द्रियोंके वशका न हो क्योंकि इन्द्रियाँउन्हीं वस्तुओंको ग्रहणकरसक्तीहैं जो प्रत्यक्ष हो किन्तु स्मृतिरूपी सिद्धिवाला गुप्तपदार्थोंका स्मरण करसक्ताहै•कांति नामकी विभूति जिसको सिद्ध होजाय सो चाहैं तैसा कुरूप होनेपरभी अति सुन्दरकांति जैसी देवतोंकी

अपने शरीरको चाहै तैसा (गुरु) गरुआभारी वोझिल बनाइलेता है जैसे हनूमानजी लक्ष्मणके जिवाउनेको सजीवन मूल लेनेगये तब असंख्य औषधियों में उसको नहीं पहिँचानि सके तिससे अपने शरीरको इतना भारी वोझिल बनाया कि समस्तपर्वत को उखाड़ि के अपने शरीरपर धरिलासके—४लघिमा विभूतिवाला अपने शरीरको चाहैं तैसा(लघु)हलुका बनाइलेताहै जो उड़िकरचाहैं तिस ऊँचेसे ऊंचेलोकमेंजासके—५ईशिता विभूतिवाला ईश बनिसक्ताहै अर्थात चाहैं तहाँ किसी समाज में या किसी प्रबल मनुष्यके ऊपर भी ईशकी तरह आज्ञा चलाइ सक्ताहै कि उसके ईशित्वके प्रभाव से हर कोई आज्ञा मानिलेता है•यहाँतक कि स्थावर वृक्ष पत्थर आदि भी आज्ञा उसकी मानते हैं कि जिनपर चलाना चाहै•केवल आपही नहीं किन्तु जिस किसी को चाहै तिसके ऊपर भी ईशित्वका प्रभाव आरोपित करके आज्ञा दायक बनादेवै और इसीप्रकार अन्य विभूतियोंवाले भी अपने समानशक्ति औरोंको देसक्तेहैं जितनी देरतक देना चाहैं—६वशिता विभूतिवाला अपने वशित्व के प्रभावसे चाहैं तिसको वशीभूत करसक्ता पर आप किसी के वश में नहीं आता किन्तु सदा स्वतंत्र बना रहिता है—७ प्राप्ति नामकी विभूतिवाला चाहैं तहाँ अति दूर स्थानतक शीघ्र पहुँचि सक्ताहै—८प्राकाम्य नामकी विभूतिवाला जैसी कामनाकी इच्छा करै सो इच्छा पूरीहोतीहै॥ पहिले श्लोक में कामावसायिता नाम जो आठवीं विभूति सबसे अधिक प्रतीत होतीहै तिसको अधिक नहीं समुझना किन्तु इसीदूसरे श्लोकमें जो गरिमानाम तीसरी विभूति कही सोई अधिक समझना क्योंकि गरिमा ऐश्वर्यों में गिनती नहीं मानीगई है— और कामावसायिताका प्रयोजन यद्यपि प्राकाम्य के समानही देखिपरताहै तथापि दोनोंमें भेदहै कि प्राकाम्य तो केवल उसीकी इच्छा पूरी करनेवाली विभूतिहै और कामावसायिताका यह तात्पर्य है कि सिद्ध पुरुष जो शुद्ध अन्य जीवोंके लिये अपने संकल्पसे (अवसाय) निश्चय करार देवै कि अमुक प्राणी को मैं धनी या राजा या पहलवान या काना या कोढ़ी करदेना चाहताहूं सो अवश्य करि दिखाऊंगा वही करि दिखाताहै चाहैं निपट वंध्याके पुत्र पैदा करवावै इत्यादि अपनी बुद्धिसे समझना=ये आठो विभूतियाँ साक्षात परमेश्वरके ऐश्वर्य हैं इसी हेतु महादेव आदि बड़े बड़े सब ईश्वर इन विभूतियों में सर्वथा आठों अंग भरे पूरे होतेहैं और इन्द्रादिक लोकपाल आदि सब देवता इन विभूतियोंसे बहुत या थोड़ाही यथायोग्य भरे रहिते किन्तु उनमें जन्मके साथही ईश्वरकी दीहुई स्वाभाविक सिद्धि आतीहैं—इनके सिवाय संन्यासी आदि पूरे योगीश्वर अपनी योग साधना के

प्रभावसे यदि कोई एक दोहीको सिद्ध करिपातेहैं सोउनमें भी अद्यापिहोतीहै दृष्टांत जैसे सैकरौं वा हजारौं की सामग्री उधार मगाकर बडा भंडारा किया फिर पीछेसे खाली तुंबी कमण्डलको औंधा करिके रुपये उलटदिये वह सभी सौदावालौं को देदियेगये पर आप उसी तुंबी और लँगोटीके सिवाय कुछ आडंबर साथ नहीं राखते• दूसरा दृष्टांत जैसा किसी दुखियाने बूझा कि बाबाजी मेरे पुत्रको सोरहवर्ष बीते कि वह घरसे निकसि गया कभी उसकी खबरतक न मिली जानै कहां होगा•उत्तरदिया कि बचा तेरापुत्र अमुक विदेशमें था अब फलाने शहरमें आगया है बारहवेंदिन तेरे पासभी आवैगा सोई सब सत्यहुआ इत्यादि परे सिद्धलोग पृथ्वीपर अनेकहैं पर ऐसे लोग अपने आपेको छिपाये रहाकरते हैं क्यौंकि संसारीलोग एकहू का भला होता देखि सिद्धों की वाणी सत्यजानिके उनको चैन नहीं लेनेदेते किन्तु घेरते और अपने अपने दुखहेतुसे सताते हैं—योग साधना के बिनाभी ईश्वरकी इच्छासेही बिरले लोग सिद्धियोंको साथलिये पैदाहोतेहैं उनकी पहिले जन्मकी तपस्या साथ आकर यहां सिद्धिका फल देतीहै यद्यपि मूलश्लोकों में योगीश्वरके उच्चारण किये नाम अणिमा आदीसे मिलते नहींहैं तथापि वेनाम भी सब इन्हीं आठ विभूतियोंका विकार हैं सो इन्हींसे उत्पन्न होतेहैं संदेह न करना चाहिये॥२०२॥२०३॥

पूर्वोक्त प्रकारौंसे यज्ञ दान तपस्या आदि जिन लोगौंने नहीं किया और योग साधना भी करनेकी शक्ति जिनसें न हो तौ ऐसे लोग जो अपने सत्त्वकी शुद्धि किया चाहें तिनकेलिये सुगम उपाय भी दर्शावैंगे सो अगिले श्लोकौंसे देखना॥

(उपायांतरंच)

अथवाप्यभ्यसन्वेदंन्यस्तकर्मावनेवसन्। अयाचिताशीमितभुक्परांसिद्धिमवाप्नुयात् २०४

अर्थः—अथवा (जोपूर्वोक्त नियम योग आदि न होसके तौ) न्यस्त कर्माहोकर (अर्थात सब कर्मों का त्यागी और विशेष कर निषिद्ध कर्म्मों का त्यागी होकर) वन में निरुपद्रव स्थानपर बसता हुआ और शक्तिके अनुसार वेदको अभ्यास करते हुये बिना मांगे जो प्राप्त होय उसी का परिमान से (थोडा थोडा क्षुधा निवारण के अनुमान से) भोजन करिके आयुको बितावै जिससे सत्वकी शुद्धि होजाय औरयथा शक्ति पूर्वोक्त आत्मा की उपासना में भी चित्तको लगायेरहै तौ यह पुरुषभी मुक्ति के लक्षण वाली परम सिद्धि को पावता है॥ २०४ ॥

मुक्ति जो पदार्थ है सो केवल संन्यासी योगीको नहीं किंतु गृहस्थी भी मोक्षपद

को जातेहैं सो अब नीचे कहेंगे—इसी लिये अध्यात्म ब्रह्मकी उपासना वाले प्रकार ध्यान योगआदि जो जो कुछ वर्णन किये तिनकी साधनाका अधिकारी गृहस्थी सब से प्रथम है जो उससे बनिआवै—अर्थात् संसारी सामग्री छोडिके संन्यासी होजाने से ही ब्रह्मकी उपासना का अधिकारी नहीं किंतु गृहस्थ में रहितेभी अधिकारीहोता है—तिससे अध्यात्मविद्याका प्रकरण जो ६२ बासठिकेश्लोकसे लेकरअबतकसंन्यासी के प्रसंगमें दर्शायागया सो सब गृहस्थीकोभी पढनाऔरअभ्यासकरनाचाहिये॥

(गृहस्थस्यापिमुक्तिर्भवति)

न्यायागतधनस्तत्वज्ञाननिष्ठोऽतिथिप्रियः। श्राद्धकृत्सत्यवादीचगृहस्थोपिहिमुच्यते २०५

अर्थः—गृहस्थी कि जिसके न्यायमार्ग सेही धन आता हो अन्याय से नहीं•और अतिथि प्रियहो किंतु आये हुये अभ्यागतों का सत्कार नित्य निरंतर करताहो•और श्राद्धकर्ता हो अर्थात् नित्य श्राद्ध और नैमित्तिक आदि श्राद्धों के अनुष्ठान में तत्पर बना रहिताहो•और सत्यही वचन बोलनेका स्वभावहो•और तत्वज्ञान (जैसा चौंसठि श्लोक से लेकर अभी तक वर्णन होतारहा तैसे आत्मतत्त्व के ध्यान) में भी विचार पूर्वक लगा रहिता हो•ऐसा गृहस्थी पुरुषभी मोक्षपद को पहुँचताहै=तिससे यही न समझ लेना कि ऊपर जो अध्यात्म विद्या संन्यासी के प्रसंग में कहीगई उससे केवल संन्यासी मुक्ति पाता होगा॥ २०५॥

इति अध्यात्मप्रकरणं यह प्रकरण बहुत बडाहै कि आठवें परिच्छेदसे लेकर यहाँ तक बारह तेरह परिच्छेदों में पूराहुआ॥

आचार कांडके प्रारंभ में यह कहाथा कि छे प्रकारके स्मार्त धर्महैं सो सबतीनों कांडमें वर्णन कियेजायेंगे (वर्ण धर्म•आश्रम धर्म•वर्णाश्रम धर्म•गुणधर्म•साधारण धर्म•निमित्तधर्म•) अर्थों सहित लक्षण इनके आचार कांडके प्रथम श्लोकमें देखो इन से पांच धर्म तो अबतक वर्णन होचुके केवल निमित्त धर्म शेषरहा सो अब आगे से प्रायश्चित्तों के स्वरूप द्वारा दर्शावेंगे किंतु निमित्त धर्म का यह अर्थ है कि जो करना चाहिये सो न किया जैसे उचित कालपै पर दर्शपौर्णमास नहीं किया अथवा उचित समयपर कन्याका विवाह न करना गोरक्षा न किया इत्यादि नाना प्रकारके जिनके न करने का दोष अथवा जो न करना चाहिये सो निषिद्ध कर्म किया जैसे सुरापान आदि नाना प्रकार हैं जिनके करने का दोष•ये दोनों भांति के दोष हैं जो निमित्त माने जाते हैं कि इनको मिटाने के निमित्त में जो कुछ प्रायश्चित्त करना

आवश्यकहो वही प्रायश्चित्त का नियम है सो निमित्त धर्म कहा जाताहै तिसका प्रारंभ अगिले परिच्छेद मे होगा—तहाँ प्रथम उसके अधिकारी लोग वर्णन हेंगे कि प्रायश्चित्त किनको करना आवश्यक है॥

—— —— * —— ——

अथ-प्रायश्चित्तापेक्षायांकर्मविपाकस्वरूप विवेकोनाम एकविंशः परिच्छेदः २१

इस परिच्छेद में प्रायश्चित्तों का प्रारंभ करनाचाहिके उसके योग्य अधिकारियों का कर्म विपाक वर्णन होगा जो प्रायश्चित्त करनेसे बचिगये हें॥

(कर्म विपाकः)

महापातकजान्घोरान्नरकान्प्राप्यदारुणान्। कर्मक्षयात्प्रजायंतेमहापातकिनस्त्विह २०६

अर्थः—महापातकों से उत्पन्न घोर दारुण नरकों को पायके कर्म भोग नाश होने मे वेही महा पातकी यहाँ जन्मतेहैं=अर्थात—ब्रह्महत्याआदि पाँच महा पातक जो आगे कहे जायँगे तिनके करने वाले महापातकी कहातेहैं तिनके जुदे कर्मों के अनुरूप जो जो नरक स्थान महाघोर भयंकर दारुणदुःख मिलनेवाले नियत होतेहैं तिनमें जायके निज निज अवधितक भोगने से कर्म भोगों का अंत होजाने पीछे शेष पापों के प्रभावसे वेही नारकीलोग इहाँ संसार में फिर आकर शूकर शृगाल आदि खोटी योनियोंमें वारंवार जन्मते रहिते हैं अर्थात अनेक जन्मोंतक पीछा उनका नहीं छूटने पाताहै। तथैव उपपातकी आदि भी निज कर्मोंके अनुरूप योनि पाते हैं सो सब आगे वर्णन करेंगे ॥ २०६ ॥

(कर्माधीन योनि भेदाः)

मृगाश्वसूकरोष्ट्राणांब्रह्महायोनिमृच्छति। खरपुल्कसवेनानांसुरापोनात्रसंशयः २०७
कृमिकीटपतंगत्वंस्वर्णहारीसमाप्नुयात्। तृणगुल्मलतात्वंचक्रमशोगुरुतल्पगः २०८

अर्थः- ब्रह्महत्यारा अपने योग्य नरकों को भोगे पीछे मृग हरिण आदि वनजीवोंकी योनि वा कुत्ता सूकर ऊंटों की योनि पाता है अर्थात जिसके जैसे कर्मोंका प्रभाव ऊंच नीच होता है तैसीही योनिभी इन्हीं में से ऊँचीनीची उसको मिलतीहै-

एवं मदिरा पीने वाला अपने योग्य नरकों को भोगे पीछे गदहा की योनि में या पुल्कस प्रतिलोम जाति (जो निषाद नाम एक मछेहरे के बीज से शूद्रीके पेटमें उत्पन्न होती है तिसके) यहाँ जन्मता तथा ऐसेही वेन एक महानीच जाति होतीहै तिसमें जन्म पाता है इसमें संदेह नहीं ॥२०७॥ सोना हरनेवाला अपनेयोग्य नरकों को भोगे पीछे कृमि कीट पतंग रूपपाताहै अर्थात मांस विष्टा गोवरआदिमें वारीक सुंडी जो अनेक तरह की उत्पन्न होते सो कृमि कहाते और उनसे कुछमोटे वडे विना हाड विना परों के तुच्छ जीव चींटी दीमक आदि अनेक भाँति के सब कीट कीडे कहातेहैं और टीडी ततैया आदि अनेक तरहके परवाले जीव उडने वाले पतंग कहाते हैं तिन में जन्म पाता है—एवं गुरुतल्पग जो गुरानी आदि पूज्य स्त्रियाँ गमन करनेवाला महापातकी है सो अपने योग्य नरकों को भोगने पीछे क्रमसे तृण गुल्म लता तीनोंका रूप जाकर होताहै अर्थात काँस डाभ आदि अनेक तृण होतेहैं तथा गुल्म भी गुच्छाके आकार वृक्ष जैसे सरौ या मूंज आदि वडे छोटे अनेक भाँति होते हैं तथा वनमें लता वेलिभी वडी छोटी अनेक भाँति होतीहैं इन तीनों में क्रमसे जन्म पाता है (इसी प्रकार ऊपर के ब्रह्महत्यारे आदिमें क्रमसे मब योनि मिलनी मसभि लेना जोडनके लिये कहिचुके किंतु जैसा विकल्प उनमें लिखागया तिमका नियम नहींरहा क्योंकि क्रमसे यह कथन उन सबही का अध्याहार है ॥ २०८ ॥

२०७ अधिकोक्तिः—दोनों श्लोक में योगीश्वर के कहे नियम सर्वथा उन दशा पर आरूढ कियेगये कि जो इच्छा विना ऐसे महापातक हुयेहैं—अन्यथा इच्छा सहित इन्ही पापों के करने वाले इनसे भी अधिक दुखदाई योनियोंमें जन्मते हैं यथाह मनुः=श्वसूकरखरोष्ट्राणांगोऽजाविमृगपक्षिणाम् चंडालपुल्कसानांचब्रह्महायो निमृच्छति ॥ कृमिकीटपतंगानांविड्भुजांचैवपक्षिणाम् हिंस्राणांचैवसत्वानांसुरापो ब्राह्मणोव्रजेत ॥ लूताहिसरटानांचतिरश्चांचांबुचारिणाम् हिंस्राणांचपिशाचानां स्तेनोविप्रःसहस्रशः ॥ तृणगुल्मलतानांचक्रव्यादांदंष्ट्रिणामपिक्रूरकर्मकृतांचैवशतशो गुरुतल्पगः=अर्थात—जानि बूझिके इच्छा पूर्वक महा पाप करनेवालों की व्यवस्था मनु कहते हैं कि उन में से ब्रह्म हत्यारा अपने योग्य नरक भोगे पीछे•कुत्ता•सूअर• गदहा•ऊट•बैल•बकरा•मेढा•और वनके मृग•पक्षी• और चण्डाल•पुल्कस•इन सब की योनि अनेक वार पाताहै ॥ एवं मदिरा पीनेवाला ब्राह्मण भी•कृमि•कीट•पतंगों मे और विष्टा खानेवाले कौवा आदि पक्षियोंमें और हिंसक जीवोंमें जाकर जन्मता है ॥ एवं चोरी करने वाला ब्राह्मण भी•मकरी आदि जाल पूरने वाले जीव•सांप•

सरट अर्थात् गिरगिट॰और तिरछे उडनेपैरनेवाले जलचर जीव॰और हिंसा करनेवाले अनेक जीव॰और पिशाच॰इनमें हजारों वार जन्मता है॥ एवं गुरुतल्पग पुरुष॰तृण॰गुल्म॰लताओं में॰और मांसभक्षी क्रव्याद राक्षस गिद्ध आदि में॰और दाढ़ वाले सिंह व्याघ्र वाराह आदि में भी॰और कसाई आदि क्रूर कर्म्म करनेवालों में सैकरों बार जन्म लेता है॥०॥ये चार भाँति के महापातकी होतेहैं सो कहे गये पाँचवां इनका मददगार भी महापातकी होता है यह दोसौ सत्ताइस के श्लोक में विवेचन होगा तहाँ समझ लेना॥०॥ येही महापातकी लोग इतने खोटे जन्म पाने पीछे जब कभी फिर मनुष्ययोनिमें आतेहैं तहाँ भी इनपापोंका बचाहुआ अंशांश पीछा नहींछोडता है अर्थात् उसकी यह पहिचान है कि जन्म के साथही कोई महारोग लगाआता है सो व्यौरे वार अगिले श्लोकोंसे दर्शावेंगे॥ २०७॥ २०८॥

(मानुष्येपिजन्मनिदुरितशेषेणैव क्षयरोगादियुक्ताजायंते)

ब्रह्महाक्षयरोगीस्यात्सुरापःश्यावदंतकः। हेमहारीतुकुनखीदुश्चर्मागुरुतल्पगः २०९
योयेनसंवसत्येषांसतल्लिंगोऽभिजायते। अन्नहर्ताऽऽमयावीस्यान्मूकोवागपहारकः २१०
धान्यमिश्रोऽतिरिक्तांग.पिशुनःपूतिनासिकः। तैलहृत्तैलपायीस्यात्पूतिवक्त्रस्तुसूचकः २११

अर्थः—ब्रह्महत्यारा फिर मनुष्य योनिमें आनेपर जन्मके साथही या थोडी उमरमें क्षयी रोगसे संयुक्त होताहै जोप्रायश किसी औषधी से जीता नहींजासक्ताहै इसीको जन्म रोगी कहा करतेहैं—ऐसेही निषिद्ध मद्यों का पीनेवाला पूर्वोक्त रीति से नरक आदि भोगने पीछे मनुष्य योनि में फिर आकर जन्म के साथही श्यावदंत होता है अर्थात् काला पीला मिलेहुये भद्दे वर्ण के दाँत उसके राक्षसी दाँतोंके समान होते हैं इसीसे पहिचाना जाताहै कि पूर्व जन्मों में निषिद्ध मदिरा पानकरी थी—इसीप्रकार जन्मांतर में ब्राह्मण का सुवर्ण हरनेवाला फिर मनुष्य योनि में आनेपर कुनखीहोता है अर्थात् उसके बीसों नख कोढ़ियों के समान बुरे बिगडे होते हैं—इसी प्रकार गुरुदारागामी अपने कर्मोंके नरक भोगने और उक्त योनियोंमें रहिआनेपीछे मनुष्य योनि में फिरि आनेपर दुश्चर्मा होताहै अर्थात् सब देहकी खाल उसकी बुरे कोढसे बिगडीहुई होतीहै॥२०९॥पाँचवां वह कि जो इनचारोंमें जिस किसीके साथ सहायता देने आदि प्रकारों में बसा हो सोभी उसीके समान नरक जन्म राजरोग आदि भोगने वाला होता है (यहांतक स्थूल रूप में जो पांच महापापी कहे उन्हींमें चोरों के कुछ और भी विशेष भेद आगे दर्शाते हैं कि) चोरों में जो अन्न का हरनेवाला

होय सो जन्मांतरमें आमयावी अर्थात् मंदाग्नि से संयुक्त महारोगी होताहै कि जिस को अन्न कभी पचता नहीं—एवं वाणी हरनेवाला जो किसी की अति प्रयोजनवाली वार्त्ता चुपके सुनिके चुरावै और विद्या संबंधी पुस्तक चुरावै या कोईसी मूल रूपी विद्या गुरु के दिये विना किसी औरही के द्वारा वार्त्ता प्रसंगसे चुराकर सगावै ऐसा वाग पहारक पुरुष जन्मांतर में गूंगा होकर जन्मता है॥ २१०॥ धान्यमिश्र जो मिलेहुये धान्य सतनजा आदि का हरनेवाला है सो अति रिक्तांग होता है अर्थात् यातौ कोई अंग उसका हीन हो या कोई अंग अधिक हो जैसे छे अँगुरी आदि का होना—एवं पिशुन चुगुलीखोर जो पराये सच्चे दोषको भी जहाँ तहाँ सुनाते फिरने का स्वभाव राखै सो पूतिनासिक रोगी होता है कि उसकी नाक से पीनसकी दुर्गंधि आयाकरै यह पहिँचान है—एवं तैल हरने वाला जन्मांतर में तेलही का पीनेवाला जन्तु विशेष होताहै जैसे दीपक में तेल पीनेको वहुतेरे जन्तु आतेहैं यद्वा मनुष्य ही के शरीर में कोई कर्म ऐसा कि जहाँ वारंवार तेलही मुहमें देनापरै सो समझलेना- एवं सूचक जो तर्कना की युक्तियौं से पराये में दोषौं की कल्पना सूचित करता या सो पूतिवक्त्र होके जन्म लेताहै अर्थात् सदा उसके मुहमें से दुर्गंधिआया करती है कि जिसपर कोई औषध भी नहीं चलिसक्ती है॥ २११॥

२०६. अधिकोक्तिः—ऊपर श्लोकों में जो भाव वर्णन किया तिसका प्रमाण मनुके यथोक्त वचनसे भी ठीकहै=यथा=यद्वातद्वापरद्रव्यमपहृत्यवलान्नरः अवश्यंया तितिर्यक्त्वंजग्ध्वान्यैवहुतंहविः=अर्थात्—जो कुछ हो सोई सही पराया द्रव्य कैमाह्र प्रवलता से हरिके वह अवश्यही तिरछी योनियों में जन्मता है तथा औरों का होमाहुआ हविष्य खाइके भी तिर्यक् योनियौंमें जाता है (इसमें हविष्य कहने में हर किसी तरहका धर्म संबंधी या पूजा संबंधी धन समझलेना

का भी अलट पलट होजाता है तथापि उसको कभी न भी अंत में मनुष्य योनि भी अवश्य आकर मिलतीहै तभीउसके कर्म विपाक भी पहिचाने जातेहैं और भाग्यवश होकर उनका उपाय भी इसी मानुष योनिमें होसक्ताहै अन्यत्र नहीं क्योंकि कर्म्मों को उत्पन्न करने योग्य धरती एक यही मानुष देह होतीहै कि जैसा पहिले भी इसी मानुष देह से पाप कर्म हुयेथे ॥ २०९ ॥ २१० ॥ २११ ॥

(मनुष्येतरयोनिष्वपि दुरितचिह्नानिभवन्ति)

परस्येयोपितंहृत्वाब्रह्मस्वमपहृत्यच । अरण्येनिर्जलेदेशेभवतिब्रह्मराक्षसः २१२
हीनजातौप्रजायेतपररत्नापहारकः । पत्रशाकंशिखीहृत्वागन्धान्छुच्छुन्दरीशुभान् २१३
मूषकोधान्यहारीस्याद्यानमुष्ट्रःकपिःफलम् । जलंप्लवःपयःकाकोगृहकारीह्युपस्करम् २१४
मधुदंशःपलंगृध्रोगांगोधाऽग्निंबकस्तथा । श्वित्रीवस्त्रंश्वारसन्तुचिल्लीलवणहारकः २१५

अर्थः—पराई लुगाई को हरिके या ब्राह्मण का धन कोई सा सोनेके विना हरि के रोमे वन में जाके ब्रह्मराक्षस (एक भूत विशेष जो किसीको न देखि परै) होता है कि जहाँ पीने को जलभी नहीं ॥ २१२ ॥ पराये रत्नोंको हरनेवाला हीन जातिमें उत्पन्न होता है—साग जो अनेक पत्तोंका होताहै तिसको हरनेवाला मोरहोता है—इत्तर अतर आदि सुगन्धों की वस्तु चुरानेवाला छछूँदरि होता है कि वेही सुगन्धें उसकी देहसे दुर्गन्धि होकर फैलती हैं ॥ २१३ ॥ धान्योंका हरने वाला मूसा होता है- सवारी को हरने चुराने वाला ऊँटका जन्म पाताहै—फलहरने वाला वानर का जन्म- जलहरने वाला जलचर पक्षियोंका जन्म—दूध हरनेवाला कौवेका जन्म—घर की सामग्री चलनी चाकी आदि हरनेवालागृहकारी नामकीडा होताहै कि जोगीली माटी लाकर कुप्पीके समान घरचिनताहै कुम्हारी और लखहरी भी कहाताहै २१४॥ मधुसहत आदि हरने वाला दंश डाँस माछड की योनि पाता है—पलमांस को हरने वाला गिद्ध होता है—गऊ आदि हरनेवाला गोधा गोहो का जन्म पाता—अग्निको हरनेवाला बगलेकी योनि में जाताहै—कपड़ा हरनेवाले श्वित्री अर्थात उनकी देह में सुफेदकोढहोजाते हैं—गाँडे आदिकारस हरने वाला कुत्ता होताहै—नमकहरनेवाला झिल्लीकानाम झींगुरहोताहै जो रातिमें बड़े ऊँचे स्वरसे चिल्लायाकरता ॥ २१५ ॥

ठठेरे आदि वर्णसंकर जातियों में उत्पन्न होता है ((यही मनुका वचन प्रमाण देकर प्राचीन टीकाकारने ऐसा अर्थ कियाहै कि (हीनजातौ हेमकाराख्यायांपक्षिजातौ) अर्थात हेमकारी नाम से कोई एक पक्षी चिडिया की जाति में उत्पन्न होगा)) परंतु इस व्याख्या को आधुनिक लेखक अपने ध्यान से प्रमाण में नहीं लासका आगे जो कुछ हो सो सही ॥ २१३ ॥

(अभिप्रायविशेषादन्येपिकर्मविपाकाः)

प्रदर्शनार्थमेतत्तुमयोक्तंस्तेयकर्मणि। द्रव्यप्रकाराहियथातथैवप्राणिजातयः २१६

अर्थः—प्रदर्शन के लिये मैंने भी यह इतना चोरी सबंधे कहा द्रव्यौंके प्रकार जैसे अनंत हैं तैसे प्राणियों की जातें भी=अर्थात—योगीश्वर याज्ञवल्क्य (जिनके मुख मे थोड़े अक्षरोंवाले थोड़ेशब्द निकसेहैं जिसका अर्थ बड़े विस्तार वाला बड़ेविज्ञानियौं के समझने योग्य होताहै) आपही सब ऋषीश्वरोंको समझातेहैं कि मैंने यहथोड़े ही श्लोकों से प्रदर्शन एक नमूना मात्र समझाने के लिये केवल चोरी सबंधे कहा (किंतु चोरीके सिवाय पाप और भी अनेकहैं) और चोरी में भी केवल यही द्रव्य या येही प्राणी नहीं हैं जो मैंने कहि सुनाये क्यौं कि संसारमें जैसे द्रव्योंके प्रकार भेद असंख्य तैसे प्राणियौं की जातें भी अनंत हैं जो सब के सब नहीं सुनाये जासक्ते हैं तिससे इसी नमूना के अनुसार अपनी बुद्धिसे समझते रहिना यहा और भी स्मृतियां जो संसार में अनेक हैं तिनमें से जो जो बातें विशेष हों सो लेते रहिना ॥ २१६ ॥

२१६अधिकोक्तिः—इसी नमूना के अनुसार समझते रहिना॰इसका दृष्टांत जैसे काँसा हरनेवाला हंस होगा॰अथवा इसढंगसे कि जिस कामकी वस्तु जिसने हरीहो (जिस कामकी हानि किसी को पहुँचीहो) उसी कामके भंग होजाने वाला लक्षण उसको प्राप्त होगा॰दृष्टांत जैसेघोडा हरनेवालेको हाँथ लूलीहोंगी या तृना हरनेवाला उसका घोडा जाकर कैरा इत्यादि बहुत भेद अपार है॰॥ स्मृतियों में जो जो बातें विशेष हों सो लेते रहिना इसका भा॰ दृष्टांत जैसे शंखस्मृति में शंखनामा मुनि ने किन्ही बातों पर विशेषता दर्शाई है=यथाचाहशंखः=ब्रह्मघ्नःकुष्ठी [illegible] [illegible] देवब्राह्मणक्रोशकः खल्वतिः [illegible] [illegible] प्रचंड. स्वर्णपत्नीं[illegible] [illegible] [illegible] पांडुरोगी[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] कृष्णकर्मा

वामनः वस्त्रापहारीपतंगः शय्यापहारीक्षपशाकः शंखशुक्त्यपहारीकपालीदीपापहारी कौशिकःमित्रध्रुक्क्षयी मातापित्रोराक्रोशःखराडकार इति–अर्थात्–शंखमुनिने कहा है कि•ब्रह्महत्यारा कोढी भी होता है (तात्पर्य्य इसका यह कि जैसा ब्रह्महा को क्षयीरोग होना मैं कहिचुका सोई नियम नहीं किन्तु विरला कोढी भी होताहै ऐसे-ही सबके साथ विकल्प भेदोंको समझते रहिना) धातुओं का हरनेवाला मराडली होता अर्थात उसकी देहमें चक्रमराडल के आकार कोढ़ होता है (धातुकहिनेसेसिर्फ सोना आदि लोहा पर्य्यंतही न समझनी किन्तु पारा फिटकरी हरिताल हिंगुल गेरु मनसिल आदि भी अनेक जो जो पर्वत की खानिसे उत्पन्न हों सो सब समझलेनी) देवता या ब्राह्मण को खोटा वचन कहिने वाला गंजा होताहै–विषदेने वाला और आगि लगानेवाला दोनों भ्रष्टबुद्धि सिडी विक्षिप्त होतेहैं–गुरुओंके वचन को अपनी तर्कसे काटने उडानेवाला अपस्मारनाम मृगी रोगसे संयुक्त होताहै (कि जिसमिरगी के आते समय सब शरीर की सावधानी भूलिजाती है यथार्थ से यही उसका प्रति-कार टीकटीक है) गऊको मारनेवाला अन्धा होता है–विवाहिता पत्नी को निपट छोड़िके और स्त्रियों में प्रवृत्ति करनेवाला शब्दवेधी नामसे कोई नीच जन्तु होता है जो शब्दही के प्रभाव से वेधा जाता है–कुराडाशी पुरुष अर्थात पतिके जीवते जिस स्त्रीने जारके वीजसे जो पुत्र पैदाकिया हो सो कुराड कहाताहै ऐसे किसी कुराड के हाथमे जो कोई अन्न भोजन करै या कुराड की छटी दसूठनि आदि में भोजनकरै सो कुराडाशी एक प्रकारका पापी होताहै वही जाकर जन्मांतर में भगभक्ष प्राणी होता है अर्थात (भगनाम यहाँ योनि और गुदा का भी समझना तथा भगनाम स्त्री और पुरुषों के वीर्यका भी होता है तहां) भगंदर आदि दुष्ट रोगों में कीड़े जो पड़ते हैं सो भगभक्ष कहाते हैं क्योंकि सड़ेगले वीर्य्य को या रक्त मांसको भक्षण करतेहुये उसी जगे रहितेहैं ऐसा जन्म उस कुराडाशी को मिलता है–देवता का द्रव्य और ब्राह्मण का द्रव्य हरनेवाला पाराडुरोगी होताहै–न्यास धरोहरिका हरनेवाला काना होता है (धरोहरि भी दोभांतिकी होतीहै एकतो दिखाइके सौंपीहुई दूसरी मुदीर्ढ की जो चीज सौंपी जाय या कहिकर कहीं गाडिदीजाय तिनका हरनेवाला न्यासापहारी कहा-ता) स्त्रियों को वेचिवेचिकर या विकवाइकर दलालीमें जीविका रोजिगार करने-वाला निपट नपुंसक होताहै–कौमार अवस्था (सोरह वर्षकेलगभग) वाली भार्य्या को त्यागनेवाला दुर्भग होता है अर्थात महादरिद्री कुरूप कुबुद्धी आदि सब तरह से दुर्भागी–मीठी स्वादी वस्तुको अकेलाही छिपायकर खानेवाला तथा स्वकीय वच्चे

आदिसे छिपाइकर खानेवाला वायगोलाके असाध्य रोगसे अत्यंत पीडित होताहै-अभक्ष्य वस्तु जो खाने योग्यनहीं तिनको खानेवाला गराडमाली अर्थात कंठमालाके रोगसे संयुक्त होताहै (इन वातों में ये भेद भी सर्वत्र लगे हुये हैं कि जिसने थोडा ही अभक्ष्य खाना खाया हो तिसकारोग दवा करने से दविजायगा पर जिसने अच्छा निर्भय होके सदा सेवन कियाहोगा तिसका रोग भी असाध्य होकर सदा वनारहिता है) क्षत्री आदि अन्य वर्णों का मनुष्य जो ब्राह्मणी से गमन करनेवाला हो निर्वीजी अर्थात वीर्य्य से विहीन और वंशसन्तान से विहीन होता है(सर्वत्र केवल यही नियम नहीं है कि जन्मांतर में जाकर फलहो किन्तु वहुधा पाप ऐसे तीव्रहोतेहैं कि जिनका इसी देहमेंफल होताहै फिरअगले जन्मोंको भी सायजाताहै इसवातका वृत्तांत पहले एक सौ तेंतीस के श्लोकमें लिखचुके तहाँ देखो सोसर्वत्र समझते रहिना) क्रूरकर्म जो अनेक भाँति के सव जीवों को दुखदेना आदि भयंकर होतेहैं तिनका करनेवाला वौना होता है अर्थात विलंदिया डील जो सवकामों में निकम्मा और किसी की निगाह में कुछ नहीं जँचता है-वस्त्रों का हरनेवाला पतंग जाकर होता है अर्थात टीडी ततैया आदि उड़नेवाला जन्तु-पलँग विछौना आदि शय्या सेजकी सामग्रीहरने-वाला खपराक होता है अर्थात नंगा निर्लज्ज फिरा करता है कि जिसके घर ठौर ठिकाना कपड़े आदि कुछ भी नहीं-शंख सीपी आदि चीजोंका हरनेवाला कपाली होताहै अर्थात नकली अघोरी जो मनुष्यकी खोपडी लिये फिरता और उसी में सव जातिकी जूठखाया करताहै-दीपापहारी जो देवताके स्थानपर या कहीं पथिकोंको आरामको प्रकाश किये हुये दीपक उठालेजाने का हमेशाही अभ्यास रखताहो सो उल्लू चिडियाका जन्म पाता है जो दिनभर अँधेराभोगे-मित्रों मे द्रोह तथा चोरी वडी करनेवाला क्षयी रोग से संयुक्त होता है-माता पिताको गाली देने और क्रूर वचनों से घुड़कने वाला खराइकार के घर जन्म पाता है अर्थात दीवार वनाना या धरतीखोदना या लकडी पत्थरकाटना आदि नीचकर्मवाले मजदूरहकार [illegible] यह सव शंखजीने कहा॥०॥इसके सिवाय जो कुछ गौतमने विशेषता कही सो अव आगेसे दर्शाते हैं=यथाह गौतमः=अनृतवागुल्वण तुतुंतु [illegible] वा [illegible] त्यागी कूटसाक्षीश्लीपदी उच्छिन्नजंघाचरणा विवाहविघ्नकारी [illegible] छिन्नहस्त मातृगोऽन्धः स्नुषागामीवातवृषणा चतुष्पथे [illegible] कन्यादूषकःषंढः ईर्ष्यालुर्मत्तक [illegible] विक्रयीपुरुषमृग वेदविक्रयीद्वीपी [illegible]

संचितभेदी वायसः निन्दकभोजी वानरः यतस्ततोऽश्नन्मार्जारः कक्षवनदहनात्खद्योतः दारकाचार्यो मुखविगन्धिः पर्युषितभोजी कृमिः अदत्ताऽऽदायी बलीवर्दः मत्सरी भ्रमरः अग्न्युत्सादी मण्डलकुष्ठी शूद्राचार्यः श्वपाकः गोहर्त्ता सर्पः स्नेहापहारी क्षयी अन्नापहारी अजीर्णी ज्ञानापहारी मूकः चण्डालीपुल्कसीगामी अजगरः प्रव्रजितागमने मरुपिशाचः शूद्रीगमने दीर्घकीटः सवर्णाऽभिगामी दरिद्रः जलहारी मत्स्यः क्षीरहारी बलाकः वार्धुषिकोऽङ्गहीनः अविक्रेयविक्रयी गृध्रः राजमहिषीगामी नपुंसकः राजाक्रोशको गर्दभः गोघाती मण्डूकः अनध्यायाध्ययने शृगालः परद्रव्यापहारी परप्रेष्यः मत्स्यववेग भंगाभीइत्येतेऽनर्वगवनाः इति=अर्थात्–गौतमजी कहिते हैं कि–मिथ्यावादी पुरुष हिलबिल्ली वा तीसे संयुक्तपैदा होताहै पर जो झूंठबोलनेका वारंबार अभ्यास रखताहो सोनिपट हकला पैदाहोताहै–स्त्रीकात्यागनेवाला जलोदर महारोगसे पीडित होताहै–कूटसाक्षी जो जानमाजीमें गवाहीदेतारहा वह श्लीपद रोगीहोताहै कि जिसकापावँ हाथीके पैर समानरोगीहो और जाँघपैरभी कटाटूटाहोताहै–जिसने किसीके विवाहमें भंगडाला वो सोफटे ओंट या गालकटा होताहै–अवगोरणी जो घुडकी साथ मारनेको हाथ या डंडाआदि उठावनेका अभ्यास रखताहो तिसकाहाथ लुंज या कटाहोगा–मातावोमारनेवाला आंखों से अंधा मराहोताहै–पुत्रकीवधूगमनकरनेवालेकेआँडोंमें सोजादिआदि वातरोग महाभयंकर होतेहैं–चौराहामें विष्ठा मूत्र करने वा फेंकनेवाले को मूत्रकृच्छ्ररोग चिनिग प्रमेह–कन्यादूषक जो कन्यादूषितकरै वा दूषणलगावै सो जन्महीसे नपुंसक पैदा होताहै–ईर्षालु जो पराई उन्नति आदिको देखि सुनिके न सहिसकै सो मशक योनिमें मच्छर होताहै–माता पिता से विवाद रखनेवाला अप-

जो तेलको बहुधा पियाकरता है मुखमें उसकेदुर्गंधि बहुत आतीहै जो किसी चीजमें मुहलगावै तौ तत्काल उस चीज़में दुर्गंधि आने लगतीहै इसी हेतु उस कीड़े के नाम भी तैलपायी मुखविष्ठा आदि कहेजाते हैं—पर्युषित भोजी जो पकान्नको सिवाय घरे बासी आदि तुसे अन्नभोजनकरै सो हासिका जन्मपाताहै—अदत्त आदायी जो बिना दई वस्तुको आपहीलेले सो बैलहोगा—मत्सरी जो अति क्रोधी और ईर्षावान् हो सो भौंरा होगा—अग्न्युत्सादी जो दबी हुई अग्नि को उखाड़ि के छेदि कोंचि बिगाड़ै सो मंडल कोढीहोगा—शूद्रों को आचार्य बनिके वेदोक्त यज्ञकरावै सो श्वपाकजाति होता है कि जंगलों में रहिते हुये कुत्तोंको पकाकर खातेहैं—गऊहरनेवाला सांप होगा घी तेल आदि चिकनाई हरनेवाला क्षयरोगसे असाध्य होताहै—अन्नोंको हरनेवाला मंदाग्निरोग से अजीर्णवाला होगा—ज्ञानापहारी जो किसी को उचित सत्प्रपात्र ज्ञान देना बोधकराना योग्यथा सो जानि बूझिकर न दे तो निपट गूंगा पैदाहोगा—चांडाली और पुल्कसी नीच स्त्रियों का रमन करनेवाला अजगर होगा—संन्यासिनी के साथ भोग करने से मरुतदेश में पिशाच होगा जहां झंझावायु तथा रेत आदिके सिवाय जल फल फूल वृक्ष आदि कुछनहो—शूद्रीकेसाथ मैथुनकरनेसे बड़ाकीड़ाहोगा अपने वर्णकी स्त्रियां रमनकरनेसे दरिद्रीहोगा—जलहरनेवाला बड़ामत्स्यमगरघड़ियाल आदिहोगा—दूधहरने वाला बगुलाहोगा—वार्धुषिक जो बहुतकड़ा विष्याज किश्त आदिसे लेकर जीविका करै सो अंगहीनहोगा—निजवस्तुओं का बेचना निषेधकिया

वाली जाकर होती है ॥ अधिकोक्ति पूरी हो चुकी तथापि इसके साथ एकशास्त्रार्थ का निर्णय करना श्रेयस्कर सो जुदा नीचे लिखते हैं ॥ २१६ ॥

गूढाभिप्रायानांनिर्णयः—दोसै नौ (२०९) श्लोकपर ध्यानकरो वहाँसे लेकर यहांतक कर्मोंके विपाकसे क्षयीरोग आदि जो अनेक दोषोंके चिह्न होने लिखेगये सो इसलिये कि ब्रह्महत्यारे आदिअनेकपापी लोगोंकोभय सूझिपरनेसे प्रायश्चित्तों पर दृष्टि पहुंचे—अन्यथा यह प्रयोजन उसका नहींहै कि क्षयी आदि रोगोंवाले मनुष्योंको वे प्रायश्चित्त करायेजायँ जो (द्वादशवार्षिकव्रतआदि) बारहवर्ष आदि के विधान आगे आवेंगे• और यह प्रयोजन भी नहींहै कि उसभांतिके रोगियोंको पापी समझके संसर्ग छूनाआदि उनसे न कियाजाय—क्योंकि—प्रायश्चित्त के विधान जो आगे कहेजायँगे सो पापोंका क्षय होनेके निमित्त होंगे किन्तु इसके लिये नहींहै कि पहिले पापोंका स्वोंहाफल प्रारब्ध हुआ सोभी नाशहोनके या बिनादेखे बिनाजाने समझके पूर्वजन्मोंके अदृष्ट पापहू नाशहों—क्योंकि इसपर एक न्यायका दृष्टांतहै कि जैसे किसी धनुषसे छूटाहुआ बाण निशानापर लगनेमध्ये न उसधनुष और धनुषवाले के कब्जामें रखताहै न उसके किये और उपायोंसे छूटे पीछे कोईभी अपेक्षा रखताहै (अर्थात् ठीक निशानाके सन्मुख छोड़ दिये पीछे जो चाहै कि अब निशाने पर न लगे या गैर निशाने मे छूटे हुयेको चाहै कि यह ठीक निशानेपर लगे इसका कोई इलाज उसके काबूमें नहीं रहिता यह तात्पर्य है) और यह भी नहीं कि उससे प्रारब्ध हुये खोटे फलका विनाश चाहिकर धनुष का तोड़ना शोचा जाय क्योंकि कुम्हारके चाक डंडेला तरता आदि (जो न्यायमतसे निमित्तकारण कहाते हैं तिन) का विनाश करनेसे भी वे करवा और हांडी आदि नहीं नाश होसकते हैं जो उन्हीं निमित्त कारणोंके प्रभावसे बनिचुके• और इसीप्रकार नैसर्गिक स्वाभाविक महारोग जो पूरे नख होना आदि जन्महीमें उत्पन्नहोचुके तिनका प्रत्यानयन वापिस होजाना शक्तिमें बाहरहै—क्योंकि—बिना देखेहुये पहिले महापापोंका प्रतिकार नरकभोगना और तिरछी योनियों में बहुतेरे जन्मलेकर उनके दुःखों को भोगे पीछे सबसे आखीर यहीमनुष्ययोनि सो कुनख होने आदिसे प्रत्यक्षमेंआया तिसके उत्पन्नहोनेसाथमेंही उसकेउत्पन्न करनेवाले कारणभूत पहिले पापोंका नाशहोजाताहै• कि जैसे लकड़ियोंसे रगड़से अग्निका प्रतिकार अग्नि उत्पन्नहोताहै उसके उत्पन्न होतेही लकड़ियां जलिकर नाश होजातीहैं (अर्थात् उनलकड़ियोंके विनाशके लिये कोई दूसरा उपाय करना नहीं है) तैसेही जिन बिनादेखे पापोंकाफल प्रत्यक्षमें आचुका तिनका वि-

नाश चाहिकर कोईसा प्रायश्चित्त करना आवश्यक नहीं है•और न इसके लिये प्रायश्चित्त हैं कि लोकाचार परस्पर जाति बिरादरी के व्यवहार वर्ताने उन कुनखी आदि रोगियों से होसकें क्योंकि प्रायश्चित्त किये बिना भी अच्छे विवेकी लोग कुनखी दुश्चर्मा आदि रोगियोंसे व्यवहार नहींत्यागतेहैं यह परंपरासे चलाआताहै• किन्तु अभी अनंतर जैसा कहिचुके कि लकड़ियों की तरह पहिले पापोंका नाश होचुका तो फिर बिरादरी के व्यवहार में भी क्या दोष रहा जिसके लिये प्रायश्चित्त की ज़रूरत होय ॥ ० ॥ कदाचित् यह तर्कना उठाईजाय कि वशिष्ठ मुनिने कुनखी आदि रोगियों को प्रायश्चित्त करना क्यों कहा जैसा यही आगे वचन है=तथाच वशिष्ठः=कुनखीश्यावदंतश्चकृच्छ्रंद्वादशरात्रंचरेत्=अर्थात्–खोटे नखोंवालाकुनखी और बुरे दाँतोंवाला श्यावदंतभी बारह दिनका कृच्छ्रव्रतलावै=सो यह वशिष्ठजी का कहा नियम एक नैमित्तिक धर्महै इस भाँतिका कि जैसे सामवती आदि यज्ञों का करना केवल शांतिदायक होताहै अर्थात् वशिष्ठका यह वचन कुछ पहिले पापोंके विनाशनार्थ्ये नहींहै न जातीय व्यवहारोंके निमित्तहै ॥ ० ॥ सामवती इष्टि इसनाम से वेदों में यज्ञ विशेष कहाहै वल्कि उसप्रकारके और भी सामान्ययज्ञ जुदे नामोंमे कहेहैं•इसका प्रसंग प्रायश्चित्ततत्त्व में भविष्यत्पुराणके प्रमाणमें दृष्टांतकेकर आया है=यथा=सामवत्यादिनायज्ञकर्मणांप्रतनाण्ततैदैवदोषादकरणेजातेदोषकदम्बकेहोमे नैकेनदोषाणांसर्वेषांक्षयसादिशेदितिभविष्ये–एवंचएकप्रायश्चित्तेनानेकदोषक्षयाय सामवतीष्टिःसर्वत्रदृष्टांतःइतिप्रायश्चित्ततत्त्वं=अर्थात्–हे राजन् दैवयोगसे जिन किन्हीं को नित्य नैमित्तिक धर्म कर्मोंके न करने में अनेक दोषों का समूह पैदा होजानेपर सामवती आदि कोई एक इष्टिकरनेसे सब दोषोंकी शांति एकसाथ जैसे होजातीहै तैसे सब ग्रहोंके दोष एक होमसेही क्षयहोते हैं यह आदेशकरे• यह भविष्यत्पुराण में कहाहै–इसीप्रकार जहां एकही प्रायश्चित्त से अनेक पापोंके क्षयहोनेका प्रसंग हो तहां तहां सर्वत्र सामवती इष्टि का दृष्टांतहै यह प्रायश्चित्ततत्त्वमें कहाहै ॥ इसी प्रकार वशिष्ठका यहवचन एक शांतिरूप समझना ॥ २५६ ॥

(वर्णितस्यैवानुसारांशः)

होतेहैं कलङ्गा मे कुरूप और दरिद्री=तिससे निष्कल्मष हुये बड़े कुल में भोगी जन्मतेहैं जो विद्यासे संपन्न और धनधान्यसे भरेपुरे होतेहैं=अर्थात्—कर्मोंका विपाक जो अबतक सुनातेरहे उसी सबका तोड निचोड यहां इकट्ठाकरिके समझातेहैं कि-जैसा जैसा जिनका खोटाकर्मथा तिसकाफल नरकभोग और तिरछी योनिका जन्म भी पाइकर कालकी चालिसे अतिकालमें पापकर्मोंके क्षीणहीन होजानेसे मनुष्य की योनि में भी आकर अधम ओछे पुरुषोंका जन्म लेतेहैं कि जहां दरिद्री धनहीन और कुनख दुश्चर्म आदिखोटे चिह्नोंसे कुरूपभी होतेहैं॥२१७॥ततः तिसके भी अनन्तर (उक्तभोगोंकेभोगनेसे) पापोंसे छुटकारा पाये हुये वेही प्राणी (अपने किसी पूर्व जन्मांतर के संचित पुण्यकर्म जो प्रबलित पापों के वेगसे रोकमें आगये थे तिनकी आड़ मिटिजाने और सत्प्रभाव उदय होनेसे) फिर अगिले जन्मसे बड़े किसी उत्तम कुलमें भोगी पुरुष होके जन्मलेते हैं कि जहां विद्या आदि गुणोंसे संयुक्त और धन धान्यसे भी संपन्न हों=परन्तु=यह नियम सिर्फ उन्हींका समझना जिनका पहिला पुण्य अधिक होतेहुये पापोंके उत्पन्न होनेसे रोक में आगया हो॰ अन्यथा जिनका पहिला पुण्य भी सचय नहीं केवल पापी हों वे फिरभी अगिले जन्मोंमें दरिद्रीआदि मंद पुरुष होतेहैं कि जबतक बीचमें कोईसा सत्कर्म उनसे न बनै॥ २१८॥

इतिकर्मविपाकानांसंक्षिप्तानिलक्षणानि॥

—— —— ✻ —— ——

अथ—प्रायश्चित्ताधिकारिलक्षणविवेकोनाम द्वाविंशःपरिच्छेदः२२॥

इस परिच्छेद में उन पुरुषोंके लक्षण कहे जायँगे कि जो तत्काल प्रायश्चित्त करनेके अधिकारी होतेहैं॥

दोषी होताहै=।तिससे उसको इहाँ इसी देहमें पापोंसे शुद्धहोजानेकेलिये प्रायश्चित्त करना चाहिये ऐसे प्रकार से इस मनुष्यका भीतरला आत्मा भी प्रसन्न रहता और संसार भी इसकेऊपर प्रसन्न होताहै=अर्थात्—मनुष्योंको लोकरीतिसे और शास्त्रकी आज्ञासे भी नित्य नैमित्तिक धर्म जो कुछ करना उचित है (दृष्टांत जैसे संध्योपासन आदि पंचयज्ञ जो हैं सो नित्य कर्म हैं तथा तीसवां श्लोकसे आदि लेकर अशुद्धों का स्पर्श होजाने में स्नानआदिकरना कहा सो नैमित्तिकधर्मथा याउससेपहले मृतकोंकी शुद्धिकरना जो कहा गया वह भी नैमित्तिक था या कन्याका विवाह और गौनाभी उचित समयपर करदेना कहा सो भी नैमित्तिक धर्मथा इत्यादि औरभी समझने)सो विहित कहाताहै तिसको न करनेसे मनुष्य दोषीहोताहै तथैव निंदितकर्मोंके करनेसे भी दोषी होताहै) निंदितकर्म सब शास्त्रोंमें और लोक मेंभी प्रसिद्धहैं अभक्ष्य भक्षण या चोरी या जारी आदिबुरेकर्म) और इन्द्रियोंको वशमें न रखनेसेभीदोषीहोताहै ॥ २१६॥ तिसकारणसे उस दोषीको तत्काल उसीदेहसे कि जिसमें दोष खड़ाहुआ हो दोषको मिटानेके प्रयोजनसे प्रायश्चित्त करनाचाहिये जिससेउसके भीतरले आत्मा की शुद्धिसे प्रसन्नता और संसारी लोग भी प्रसन्न होते हैं ॥ २२० ॥

हुयेकोभी चाटतीहै तिसकी योनिमें वांताशी जन्मपाताहै और विद्वान् विप्र जो अपने धर्म्म कर्म्मसे गिरिजाय सो प्रेतयोनि होताहै अर्थात् प्रेतों मे उल्कामुखप्रेत जिनका मुख अग्नि के तुल्य जलता रहता है तिसते अधिक पीडा उनको मिलती है इसी से वह प्रेत भी औरोंकी वमन चाटि चाटि मुंहठंढा करते फिरते हैं तिसकी योनिमें वह विप्र जाताहै जो नित्य और नैमित्तिक धर्म्म कर्म्मों का त्याग करदेताहै और क्षत्रीका धर्म्म यद्यपि उचित मांस खानेका नियत है तथापि जो कोई क्षत्री अशुद्ध जीवों के मांस या मरे जीवों के मांस खानेलगै वह मरने वाद मुर्दा ढकेलने वाली चाण्डाल जाति या मरेजीवोंको खानेवाले गिद्ध काक आदि योनि में जन्मता है और गुदा से व्यवहार प्रकाश करनेवाला वैश्य या मित्रोंसे कपटका व्यवहार फैलानेवाला वैश्य याब्राह्मण से द्यूत खेलिके धन हरनेवाला वैश्य भी मरने पीछे पीवराद भोगनेवाला कीडा या मलिन प्रेत जाकर होताहै और शूद्र अपने मुख्य धर्म्म से च्युत हुआ मरने के बाद जाकर विलासक वा विलास नाम एक अशुभजाति विशेष (वेश्याओं का भडुआ जो प्रसिद्ध है) सो होताहै =ये मनुके सर्व वचन विहित के न करने का दोष जतानेवाले हैं सो कैसे घटन होतेहैं—कहते हैं—जैसे रद्द किये को खाते हुये ऊंक से जलते मुखवाले दुःख तैसे इसको भी विहित (उपदेश किये हुये शास्त्रोक्त) के न करनेवालेका पुरुषार्थ सिद्ध न होनेसे॰सो यह न करने की निन्दा अनुष्ठान करने में रुचि उत्पन्न होनेके लिये समझनी तिसते कुछ विरोध नहीं है॰ अथवा पूर्व जन्म के खोटे आचरणोंके भेजेराग आलसआदि जो उचित अनुष्ठानके विरोधीहोके वांताशी और उल्कामुख प्रेतत्व आदि दुःख पैदाकराते हैं तिनते भावहो सिद्ध दशा [illegible] कहीं भी अभाव का कारणत्व कोई नहीं यह मानना चाहिये॰ क्योंकि यह मानना चाहिये सो माना परन्तु पुंश्चली बंदर गर्दभ इनका देखाहुआ और कुत्तादोष लगाये हुये आदि औरोंमें भी उचितका न करना आदि निमित्तोंमें किसी प्रकारके अभावसे कैसे दोष लगताहै और उसके अभाव में प्रायश्चित्त का विधान किया गया कहते हैं सुनो इससेही पापक्षय होनेके लिये प्रायश्चित्त के विधानने [illegible] किये निषिद्ध सेवन आदि जिससे पैदा पाप कहे प्रेरित हुआ [illegible] आदि तिसके निमित्त प्रायश्चित्तने [illegible] हुआ यह [illegible] ना होय है क्योंकि पुरुष के प्रयत्न से अपेक्षा नहीं रखने में [illegible] पापकी उत्पत्ति लगत नहोनेसे और न पुंश्चली आदिके [illegible] [illegible] है कर्तानिं [illegible] [illegible] नियत है [illegible] दोनों [illegible] है [illegible] प्रायश्चित्त

से तीन निमित्त जो गिनाये सो गिनना ठीकही है जैसा मनुका वचन यह प्रमाण है=तदाह मनुः= अकुर्वन्विहितंकर्मनिंदितंचसमाचरन् प्रसक्तश्चेंद्रियार्थेषुप्रायश्चित्तीयतेनरः=अर्थात्–विहित कर्म कोनकरते हुये और निंदित कर्मको आचरण करते हुये और इंद्रिय भोगोंमें लगाहो सोभी नर प्रायश्चित्तीहोताहै=इसमें नरशब्द कहनेसे वर्णों और अनुलोमों के सिवाय प्रतिलोम जातियोंको भी प्रायश्चित्त का अधिकार पहुँचता है क्योंकि साधारण धर्मोंमें अहिंसा आदि जोजो धर्म उनके लिये उचित हैं तिनका व्यतिक्रम उनसेभी होना संभवहै(प्रायश्चित्तकाशब्दभीपापोंके क्षयहेतुक जो नैमित्तिक कर्म विशेष हैं तिनमें रूढहै) और प्रायश्चित्तका समस्त प्रकरणमात्रभी नैमित्तिक धर्म माना जाता है•तिससे अर्थवाद के द्वारा किसी पापका क्षय सिद्ध हो जाने परभी प्रायश्चित्तस्वीकार कियाजाताहै उसन्यायसेकि जैसे पुत्रजन्मके होनेसेही पितरों की संतुष्टि होजातीहै तथापि जातेष्टि कर्म करना स्वीकार किया जाता है कि अतिशय संतुष्टि होय परंतु ऐसा नियम होनेपरभी यह तात्पर्य नहींहै कि कोई इस कामना से भी प्रायश्चित्तकरै कि उसके करने से मुझसे कोई पाप आगेको नहोने पावे तो यह आगंतुक पापों की रोक उससे नहोगी न इस अपेक्षा से प्रायश्चित्त करना चाहिये क्योंकि यह फिर कामना का विषय ठहर सक्ता है सो नहीं केवल नैमित्तिक धर्म समझना चाहिये और करना भी अवश्य चाहिये क्योंकि न करने से यह दोष है=यथा=चरितव्यमतोनित्यंप्रायश्चित्तंविशुद्धये निंद्यैर्हिलक्षणैर्युक्ताजायंतेनिष्कृतैनसः इत्यकरणे दोषः=अर्थात्–पाप करने वाले प्रायश्चित्तों के विना जा कर निंद्य लक्षणों सहित अंग भंग होके जन्म पाते हैं इस हेतु से नित्यही कि जब जब कभी पाप होजायँ तभी उनकी शुद्धि के लिये प्रायश्चित्त करना चाहिये यह बहुत आवश्यक जानो ॥ २१९ ॥ २२० ॥

अथाकृतप्रायश्चित्तानांयेयेनरकाभवंतितेषांनामप्रकाश कोयंपरिच्छेदःत्रयोविंशः२३॥

इस परिच्छेद में उन्हीं नरकोंकेनाम और स्वरूप भी प्रकाश किये जायँगे जो प्रायश्चित्त न करनेवालोंको होतेहैं और प्रायश्चित्त करनेके फल विशेष भी जो लाभ होतेहैं सो भी इसके बीचमें दर्शावेंगे॥

(प्रायश्चित्ताकरणेदोषः)

प्रायश्चित्तमकुर्वाणाःपापेषुनिरतानराः। अपश्चात्तापिनःकष्टान्नरकान्यांतिदारुणान् २२१

अर्थ–पापों में निरत नर पछितावा न करके प्रायश्चित्त न करते हुये दारुणनरकों को जातेहैं=अर्थात्–शास्त्रके अर्थोंसे विपरीत कर्मों के द्वारा उत्पन्न हुये पापोंमें लगे भये मनुष्य उनपापोंके होजानेका उद्वेग मानकर ऐसा पछिताउ भी नकरैं कि हमसे यह दुष्कर्म हुआ और पीछे उसका प्रायश्चित्त भी नकरैं सो सब लोग महाभयंकर नरकोंको भोगतेहैं जो सहे नहीं जासक्ते॥ इसते यह तात्पर्य ठहरा कि धर्मवान् की यही पहिचान है जब उससे कोई पापलाचारी धोखे आदि से होजाय तब तत्काल उसका पछितावा करै और धर्मशास्त्र के विचारसे प्रायश्चित्तका निर्णय करावै कि हमसे यह पापहुआ इसका क्या प्रायश्चित्त है सो करूं॥ २२१॥

(नरकनामस्वरूपाणि)

सूताहो—२० असिपत्रवन वहनरकहै कि एकवन में तलवारकी धारावालेपत्ते टपकते रहते हैं तिसमें यमके दूत उन पापियों को लेजातेहैं जिन्होंने वेदकामार्ग अपना धर्म छोड़ के पाखण्ड मतलियाहो वहाँ उनको चमड़े की रस्सियों से पीटते हैं तब जहाँ तहाँ भागते हुये ऊपरसे वनके पत्ते गिरगिर मांस काटतेहैं तब अत्यंत विलाप करता है—२१ तापन वह नरक है जहाँ नीचे धरती भी तपाये लोहे के समान तथा रेत तालू की भाड़ के समान और ऊपर से करोड़ों सूर्य्य के समान घाम और लूंकी लपट सी वायुके झकोरे जिसमें गरम रेत वरसताहोताहै—येइक्कीसनाम नमूना मात्रसे दर्शाये इनसे उपरान्तभी अनेक नरक होतेहैं सो सब समुझलेने॥ २२३॥ २२४॥ इनमें वेही अधम लोग जाते हैं जो महा पातक या उपपातकों से उत्पन्न दोषों से युक्त होकर प्रायश्चित्तनहीं आचरते हैं॥ २२५॥

प्रायश्चित्त करनेसे कौन पातकी नरकनहीं जाता यह विशेषता आगेकहिते हैं॥

(प्रायश्चित्तस्यविशेषफलं)

निर्णय कियाजाताहै कि(नकुर्यादित्येकेनहिकर्म्मक्षीयते)विरलेमुनि कहतेहैं न करें क्योंकि पापकर्म्मका नाशही न हुआ तो करनाफजूलहै और(कुर्य्यादित्यपरे)करें यह अनेक मुनि कहते हैं—क्योंकि (पुनः स्तोमेनेष्ट्वापुनः सवनमायांतीतिविज्ञायते) फिर भी प्रायश्चित्त के वाद स्तोम नामक यज्ञ साधन करने से उक्त पापी लोग•फिर भी सवन को आइ पहुँचतेहैं अर्थात् द्विजाती के धर्म्म मे मिलाये जासक्ते हैं कि जिससे ज्योतिष्टोम आदि कर्म्म करनेके अधिकारी होजाते हैं ऐसा विचार यह मीमांसा से जानागया है•इसका प्रमाण और भी अग्रोक्त वचन है कि (व्रात्यःस्तोमेनेष्ट्वाब्रह्मचर्य्यंचरेदुपनयनंत इतिसर्वंपाप्मानंतरति ब्रह्महत्यांयोऽश्वमेधेनयजतइति) व्रात्य जो पंचायती कर्म्म धर्म्मों से गिरगयाहो वह स्तोमयज्ञ करके यज्ञोपवीत करावे तिसके अनन्तर फिर ब्रह्मचर्य्यका आचरण कियाकरै तो इन प्रकार से सब पापोंको तरि जाता है जैसे अश्वमेध करने वाला ब्रह्महत्या को पार उतरता है—यह वर्णन केवल अर्थवाद मात्र नहीं है किंतु विरले किसी योग्य अधिकारी का विशेषण ढूंढने के निमित्तमें रात्रिसत्र नामक न्याय की रीतिसे अर्थवादके फलहीकी कल्पनाहै इससे योगीश्वरके सब प्रतीकमें वह पद ठीकहै कि प्रायश्चित्तोंसे पाप नाशहोताहै ॥ अन वितर्कः—क्योंजी कामनासेकियेपापमें प्रायश्चित्तके अभावमेंकेग्व्यवहारयोग्यलोग और प्रायश्चित्तका अभाव अगिले वचनोंसे प्रत्यक्ष प्रतीत होताहै—यथा (अनभिसन्धिकृतेऽपराधेप्रायश्चित्तं इतिवशिष्ठः) तथा (इयंविशुद्धिरुदिता प्रमाप्याकामतोद्विजं कामतोब्राह्मणवधेनिष्कृतिर्नविधीयते इतिमनुः) अर्थात्—वशिष्ठ ने यह कहा है कि प्रायश्चित्त उस अपराध में चाहिये जो बुद्धिके प्रतिज्ञा से न किया हो•तैसाही मनु ने यह कहा कि यह विशुद्धि उसको कही गई जो ब्राह्मण को इच्छा बिना मारने पापी हुआहो किन्तु इच्छासे ब्राह्मण का वध करनेसे निस्तार नहींहोता है ॥ समाधान—सुनो जैसा तुमने समझा सो नहीं है क्योंकि अगिले वचनों को समझो यथा (अकामतोमहापापं नरःकुर्यात्कथंचन [illegible]) तथा (विहितंयदकामानां कामात्तद्द्विगुणं [illegible]) अर्थात्—जो कामना बिना भी कामना से महापाप करै तिसकी निस्तारि नहीं देखी गई है [illegible] या तो बहुत ऊंचे पर्वत से गिरै [illegible] शांतिक प्रायश्चित्त देखागया है• [illegible] करने वालों को प्रायश्चित्त [illegible] यह कामना से पाप करने वालेको भी प्रायश्चित्त [illegible]

जाना अयुक्त नहीं है यदि प्रायश्चित्त होजाय—और जो अग्रोक्त मनुका वचनहै कि (अकामतःकृतेपापे प्रायश्चित्तंविदुर्बुधाः कामकारकृतेप्याहुरेकेश्रुतिनिदर्शनात) बिना चाहे पाप होजाने में पण्डितों ने प्रायश्चित्त कहा और कामना से किये हुये पाप में भी किरले लोग श्रुति की आज्ञा से बताते हैं—तो इस वचन का भी यहीतात्पर्य है कि इच्छा सहित किये पाप में भी प्रायश्चित्त पहुँचताहै परन्तु यह तात्पर्य नहीं है कि पाप भी नाश होसकेगा—फिरभी अपनी ऊपरकी पहिलीबातपर ध्यान करो कि—गौतम के सिवाय पतनीय कर्मों के दो भेद जो कहिचुके तिनको छोड़ि के उनसे उपरान्त जोजो अपतनीय पापकर्म्म होते हों कि जिनसे संसारी व्यवहार नहीं रुकता हो तिनको यदि इच्छा से भी कियाहो तोभी प्रायश्चित्त करने से पाप नाश होजाता है इसका प्रमाण आगे मनुका यह वचन है कि (अकामतःकृतंपापंवेदाभ्यासेनशुध्यति कामतस्तुकृतंमोहात्प्रायश्चित्तैःपृथग्विधैः) अपतनीय कर्मों में जो बिना चाहे पाप किया हो तो वेदका अभ्यास पाठकरने से शुद्धि जाताहै कदाचित मोह के अँधेरे से इच्छा सहित किया हो तोभी उन पापों को जुदे जुदे प्रायश्चित्तों से विनाश होता है—फिर भी अपने ऊपरले मुख्य प्रयोजन पर ध्यान करो कि पतनीय कर्मों के दो भेद जो गौतम के वचन से कहिचुके उनका कहा गया भेद जो इच्छा सहित किये पापोंका ठहर चुका—तिसमें भी [illegible] प्रायश्चित्त से पापों का क्षय होता है कि जो जो मरणांतिक प्रायश्चित्त किये जायँ क्योंकि देह त्याग हो-जाने से संसारी व्यवहार आदि कोईभी दूसरा [illegible] [illegible] पाप का नाश ही फल उत्पन्न होता है=तदाह [illegible] [illegible]यते कल्मषन्तुनिर्हरयति=अर्थात देहत्यागरूपी प्रायश्चित्त से [illegible] प्राप्ति उसके लिये नहीं दिखलाता रहती है तिससे पाप भी नाश जाताहै ॥ २२६ ॥

महापातकआदि पापोंके भेद आगे वर्णन होंगे [illegible] ।

महापातक समझ लेना—कदाचित कहो कि आपस्तंब के वचन में नहीं है इसका उत्तर योगीश्वर के वचन में सोना भी नहीं है० किंतु सुवर्ण शब्द नकदीका भी वाचक है ॥ ब्रह्महत्या आदि पापों को पातक इस हेतु से कहाकि (पातयंति इतिपातकाः) मनुष्य को लोक धर्मसे गिराय देतेहैं इसलिये पातक इनका नामहै औरमहा शब्द जोड़ने से उनकी बड़ाई जाहर होती है कि महापातक बहुत बड़े होते हैं तिनका उत्पन्नकर्ता महा पातकी कहता है और उसको सहायता देने आदि कारणों से या विना कारणके भी जोकोई उसके साथवसै सोभी महापातकी होताहै यह न्याय भी उस भांति से समझना जैसा २६१ दो सौ इकसठि मूल श्लोक में (एभिस्तु संवसे द्योवैवत्सरंसोपितत्समः) यही अदा आवैगा कि इनके साथ जो कोई एक सालभर निवासमात्र करै सो भी इनके समान दोषीहोजाताहै ॥ ०॥ मूलश्लोक में तथा शब्द जो आयाथा सो और प्रकारसे भी पापके कर्ता लोग अनुग्राहक प्रयोजक आदि होते हैं तिनका भी संग्रह मानलेने के लिये आया था तिनके लक्षण यहां समझाते हैं कि—अनुग्राहक उसका नामहै जोधनप्राणोंके भयसे भगेहुयेको याविनाभगेहीकिसीको घेरिके मारनेवाले के तर्फ पहुँचावै जिसमे मारनेवाला उसको मारिसके अथवा ऐसाकरै कि मारनेवाले को बचावै या उसको अपनी रक्षामेंराखै कि जिसमे मारि सकनेकी दृढता उसकी होजाय तो भी अनुग्राहकने सहायताकरी कहाती है० इसी लिये मनुने फौजदारी के व्यवहार में उनको भी मारनेका फलभागी होनाकहाहै जो मारनेवालेके साथ पकड़ने घेरनेवाले आदि ग्राहक हों (ग्राहक अर्थात् अनुग्राहक) यथा=बहूनामेककार्याणांसर्वेषांशस्त्रधारिणाम् यद्येकोघातयेत्तत्र्सर्वेतेघातकाः स्मृताः अर्थात्—बहुत मनुष्य एकही साथ कार्य करनेवाले शस्त्र बांधेहों तिनमें यद्यपि कोई एकाही शस्त्र चलाकर घातकरै तहां सब साथवाले भी घातक होंगे० इति अनुग्राहकलक्षण—इसीप्रकार प्रयोजक आदि सहायकोंको फलभागी होना आपस्तंब ने दर्शायाहै=यथा= प्रयोजयितानुमंताकर्ताचेतिस्वर्गनरकफलेषुकर्मसुभागिनो यो भूयआरभतेतस्मिन्फलविशेष=अर्थात् प्रयोजक और अनुमन्ता और स्वयकर्ता भी ये तीनोंही जैसा कर्महो तैसे फलके भागीहोतेहैं कि स्वर्गफल [illegible] कर्म हो तिनमें स्वर्गभागी या नरक फलदिलानेवाला कर्महो तिनमें नरकभागी और जो कोई प्रेरणायाज्ञानिके कर्मका आरम्भ कराना या करना है तिनको [illegible] होना है—इस वचन में जो [illegible] तिनके भी लक्षण समझने हैं कि प्रयोजक या प्रयोजककारक उसकाहै जो [illegible] प्रथम में [illegible]

तौ भी उस प्रवृत्ति के भंग होजाने के भयसे यद्वा दण्ड आपरनेके भयसे अपने कर्त्तव्यमें शिथिल ढीला होके राजा आदि स्वामी से या उस प्रकार के औरही किसी समर्थ से हिम्मति बांधने की अनुमति चाहता हो तहां (यह काम तुमने अच्छा सोचा बेखटकेकरौ) इतनी हिम्मति के बँधाने से उसका ढीलापन जाता रहिता है कि जिस ढीलापन से उस कामके करनेतक हाथ उसका नहीं पहुँचता इसी हेतुसे हिंसा कर्म्म का फल भी हिम्मति बँधाने वाले अनुमंता को पहुँचता है॥ ०॥ इनके सिवाय एक और भी निमित्ती नाम अपराधी होताहै अर्थात् यद्यपि साक्षात्कार अपने देहसे हत्या नहीं करता है पर हत्या होनेका निमित्त हेतु वही उत्पन्न करता है इसढंगसे कि ब्राह्मणका अपमान बडी क्रूरतासे करना या घुडकीदेनी ताडनाकरनी या धन छीनिलेना आदि प्रकारौं से इतना क्रोध पैदा करावै कि वह जिस के ऊपर अपघात करिके आपही मरजाय तौ यह क्रोधका दिलानेवाला निमित्त कर्त्तानामक ब्रह्मघाती ठहेरता है और उसी क्रोधके दिलानेद्वारा हिंसाका फलभागी भी होता है क्योंकि उसके मरजाने का हेतुरूप निमित्त इसीने उत्पन्न किया=यथाह विष्णुः आक्रुष्टस्ताडितोवापिधनैर्वापिप्रयोजितः यमुद्दिश्यत्यजेत्प्राणांस्तमाहुर्ब्रह्मघातकम तथा=ज्ञातिमित्रकलत्रार्थंसुहृत्क्षेत्रार्थमेवच यमुद्दिश्यत्यजेत्प्राणांस्तमाहुर्ब्रह्मघातकम =अर्थात्—जब कोईगालीगलौज या खींचाखांची कियाहुआ या पीटाहुआ या धनों से विमुख कियाहुआ जिसके नाम निशानपर अपने प्राण त्यागिदेवै तिसको ब्रह्मघातक कहितेहैं=तैसेही=कुछजाति कलंक लगाने आदि प्रयोजनोंमें या प्रिय मित्रके बाबत या स्त्रियों के निमित्त से या प्यारे खेत आदि स्थानों के निमित्त में झगडा उठनेमे जिसके ऊपर नामलेकर अपनेप्राणखोदेवै तिसको ब्रह्मघातक कहितेहैं इस वार्त्ता में=यह विचार करना आवश्यकहै कि जब किसीका अपमान गाली आदिसे कियाजाय या धनसे दुर्भागी कियाजाय तब उसके मनमें क्रोध न होनेपरभी यहनहीं कहाजासक्ता है कि क्रोधवाला कारण कोई नहीं या वह कृपालु मनथा क्योंकि मनुष्योंके स्वभाव नाना भाँतिसे विचित्र होतेहैं जिनमें एकतर ... कारतासे भी

में आपत्तिरूपी दोष माना जाता है) अब संदेह का निवारण कहिते हैं सुनो•शास्त्रोक्त फल कार्यसे लगाने वाले प्रयोक्ता को होय इस न्यायसे अधिकर्ता स्वामीको पहुँचने योग्य फल उत्पन्न करने के हेतुसे कूप तड़ाग देव मंदिरका बनाना आदि होता है पर दरोगा या मिस्तरी आदि कारीगर इन कामोंके बनाने आदिमें स्वर्गफल प्राप्त होने आदिके मालिक नहीं होते क्योंकि स्वर्ग आदि फल पानेकी कामना से काम नहीं किया मजूरी मिलने की कामना से करतेहैं वही फल मिलताहै•और इसमेंभी यही दूसरा भेदहै कि दरोगा और कारीगर आदि भी बिराने प्रयुक्त कियेहुये अहिंसा के अधिकारी होतेहैं कि किसी प्राणीकी हिंसा नहोने पावे इस ढंगसे कामकरना तहाँ जो उन लोगोंसे व्यतिक्रम होजाय किंतु किसी मनुष्यके प्राण खोजजायँ तो उस व्यतिक्रम करने के दोषमें फलभागीभी होतेहैं यह न्यायभी समाप्तभया-अब-अनुमंता पुरुषको प्रयोजकों से भी थोड़ा फल प्रायश्चित्त पहुँचना उचित है क्योंकि प्रयोजक वाले व्यापारसे वह बाहर गिनाजाता है तिसते और इससे भी कि उसका अनुमत रूपी कर्म जो है सो उन सबके कामोंसे छोटाहै अब-निमित्तकर्ता जो विष्णु के वचनसे उपरान्त ब्रह्मघातक ठहिराएगये कि यद्यपि हथियार से नहीं मारा परन्तु कुवचन सुनाना आदि कोई उपद्रव रूपी निमित्त पैदा कियाहो जिससे आपही अपने प्राण उसको त्यागि देने परे•तैसे निमित्तकर्ता भी अपराधी क्योंकि होते हैं•तिन निमित्त कर्ताओंको अनुमंतासेभी थोड़ा फल प्रायश्चित्त पहुँचताहै•क्योंकि यद्यपि मरनेपर उतारू होने योग्य क्रोधरूपी कारण उसीने उत्पन्न किया परन्तु निपट मार डारने के विचार से नहीं उद्यत हुआ था तिसते यह ढँका छिपा घातक ठहरा यही न्याय निश्चित कियागया इससे कुछ सन्देह योग्य नहीं है=यद्यपि-यहाँ अपनी वाचालतासे वितर्कवाद खड़ा करता है कि भला अब ढँके हुये कोनो हत्या होने का कारण पहुँचिगया तो फिर उसको माता पिताकोभी हत्यारा पन्य पैदा करनेके सम्बन्धद्वारा हत्या करनेका प्रसंग दोष

टहिरै पर उसका नहीं कि जिसका उसने वृथा नाम वग हो-तथैव-जहां टीकही गाली गुपतार आदि कोई सा कारण क्रोध उपजानेवाला उत्पन्न कियागयाहो जिस के हेतुसे छुरी आदि अपने अंगमें घुसेड़कर जबतक मरा न हो उसके क्रोधका उपजाने वाला पुरुष धनदेने आदि किसी प्रकारसे प्रसन्नकरि संतुष्ट करिलेवै कि जिससंतुष्टि के प्रभावसे बहुत मनुष्योंके सामने ऊँची आवाजसे पुकारिके सुनाय देताहै कि अब मेरे मरजानेमें भी खोटावचन सुनानेवाले अमुक मनुष्यका कुछ दोष नहींरहा मैं संतुष्टहुआ फिर चाहैं वह मरजाय या जीतारहै दोनों दशामें उसको दोष नहीं लगता सो यह दोषका न रहिनाभी वचनके प्रभावसेही जैसा यह आगे विष्णुका वचन है =यथाह विष्णुः=उद्दिश्यकुपितोहत्वातोषितःश्रावयेत्पुनः तस्मिन्मृतेनदोषोऽस्तिद्वयो रुच्छ्रावणेकृते=अर्थात्-क्रोध करायाहुआ कोई जिसका नामलेकर अपने प्राणोंको विनाशि कर संतुष्ट कियाहुआ सबोंको सुनाइ देवे कि मैं सन्तुष्ट हुआ और वह अपराधीभी अपने अपराधको सुनाइदेवै कि मैंने इसका यह अपमान किया था लेकिन अब अमुक प्रकारसे सन्तुष्ट करदिया तो इनदोनोंके ऊँचे स्वरसे सुनाइ देने वाद जो मरजाय तौभी हत्याका चिह्न उसमें नहींरहा ॥ २२६ ॥

इसअधिकोक्तिमें महापातकियोंके प्रसंगसे ब्रह्मघातीके साथी लोग अनुग्राहक प्रयोजक आदि जो जो कहेगए तिन सबकी बड़ाई छोटाईके अनुसार प्रायश्चित्तोंमें न्यूनाधिक विशेषता जैसी चाहिये सो दोसौतेतालिस २४३ की श्लोककी टीकामें देखना वगैरे दार वर्णन करैंगे ॥ २२७ ॥

॥ जैसा ऊपरले परिच्छेदसे महापातकोंका स्वरूप समझाया तैसा निचले परिच्छेदसे अतिपातक और पातकोंका स्वरूप कहा जायगा अर्थात् महापातक सबसे बड़े प्रधानहैं अतिपातक उनसे कुछ नीचे केवल उन्नीस बीस के अन्तर समान समझे जातेहैं तथा पातक अतिपातकोंसे भी कुछ नीचेहैं या बराबर सिर्फ नामहीका भेद. इन सबकी बड़ाई छोटाईका विशेष भेद आगे दोसौतेतालिस २४३ की श्लोककी टीका से देखना क्योंकि वहांपर अनेक ऋषियोंके वचन इकट्ठे किये जायँगे जिनमें औरभी तरह भेद इन्हीं पापोंके होजायँगे ॥

—•—

जो आपही सबलोग जानि जायँ और संसारी व्यवहारसे गिराने लगें तो फिर सबके साथमें शिष्यादिक दोषी न ठहिरैंगे अन्यथा जो शिष्यही पहिले प्रकाश करने लगें या व्यवहारसे गिराने लगें तो वह शिष्य ब्रह्म हत्या करनेका पातकी माना जाकर उससे प्रायश्चित्त कराया जाय तथा प्रायश्चित्त करने से पहिले व्यवहारों से भी त्यागि दिया जाय—अब ऊपरकी बातपर ध्यानकरो कि गुरुका दोष यद्यपि सचाहै परन्तु जब तक सबलोगोंने नहीं जाना तब तक झूंठेकी बराबरहै तो इस दशा में जो शिष्य प्रकाश करै सो झूंठा दोष प्रकाशकिया कहाता है इसी लिये (अनृताभिशंसन) यह नाम धरागया॥ २२८ ॥

॥ अब आगे सुरापान महापापके समान पाप कहेजायँगे इसके मध्ये यहभी याद राखना कि जो जो पाप समानके नामसे दर्शाये जातेहैं उन सबका एक मुख्य नाम अति पातक समझते रहिना जो परिच्छेदके प्रारम्भमें लिख चुके हैं॥

(सुरापानसम पापानि)

ही कुटिलता रूपी निमित्त में बड़ाई कल्पित करना योग्य है॥ और छोटी मोटी कुटिलता का प्रयोजन आगे उपपातकों में देखना॥ २२९॥

(सुवर्णस्तेयसमपापानि)

अश्वरत्नमनुष्यस्त्रीभूधेनुहरणंतथा। निक्षेपस्यचसर्वंहिसुवर्णस्तेयसंमितम् २३०

अर्थः—घोड़ा•रत्न•मनुष्य•स्त्री•धरती•हालकी विआनी दूधवाली गऊ•इनकाहरना तथा धरोहरि का हरना यह सब सुवर्ण की चोरीतुल्य महापातक है॥ २३०॥

२३० अधिकोक्तिः—इस वचन में रत्न शब्द जो है तिसका अर्थ उत्तरत्नों से नहीं मिलता जो हीरा लाल आदि जवाहिरात पत्थर की जाति में प्रसिद्ध और सोने की अपेक्षा उनका बहुत मोल होता है इसका यह दृष्टांत देते हैं कि और मणियों में गोमेद मणि थोड़े मूल्यकी होतीहै तिसकाभी यदि बहुत उत्तम किस्मकी होतीसोने में दूना मोल होता है या सोना के मोल बराबर (गुरुस्यगोमेद मणेस्तु मूल्यं सुवर्णतो द्वैगुणमाहुरेके अन्येतथा विद्रुमतुल्यमूल्यं) तिससे उत्तरत्नोंकी चोरी तो मुख्यमहापापों में समझना जो २२७ श्लोक वाली अधिकोक्ति में कहिचुके—और यहां इसी रत्न शब्दको उस अर्थ में लगाना कि जो वस्तु अपनी जिन्सि जातिमें अति उत्तमहो सोई रत्न कहाती है जैसा (अश्वरत्न) कहिने से घोड़ों में अति उत्तम घोड़ा समझा जाय—और जो यह अश्व घोड़े का नाम कहा तिसके उपलक्षण में हाथी भी समझ लेना बल्कि सवारी सब जो उत्तम होतीहों तिनकी भी चोरी सुवर्णकी चोरी तुल्य ठहिराती क्योंकि घोड़ा आदि ये भी सब चीजें सुवर्णके समानहैं यद्यपिटीकाकार ने ऐसा अर्थ कियाहै कि घोड़ा आदि ये सभी चीजें यदि ब्राह्मणकी हरीजायँ और धरोहरि जो सुवर्ण से उपरान्त हरीजाय तभी सुवर्णकी चोरीतुल्य पातक ठहिराना परंतु इससे यह भ्रांति भी होती है

की चोरी तुल्य पाप समझना अन्यथा जो येही चीजें बहुत कीमती या अति उत्तम न हों और ब्राह्मण से उपराल किसी की हों तो उनको चोरीका पापइससे अगिले परिच्छेद में जाकर देखना जहां उपपातक वर्णन होंगे ॥ अब दोसौ इकतीसके श्लोक में गुरुभार्या भोग महापाप के समान पातक दर्शावैंगे ॥ २३० ॥

(गुरुतल्पसमपापानि)

सखिभार्याकुमारीषुस्वयोनिष्वंत्यजासुच । सगोत्रासुसुतस्त्रीषुगुरुतल्पसमंस्मृतम् २३१ ॥

अर्थः—सखा मित्र होताहै तिसकी पत्नी में•कुमारी कन्याओं में जो उत्तम जाति हों•स्वयोनि अपनी बहिनोंमें•अंत्यजाचांडालियोंमें•सगोत्रा अपने समान गोत्रवालियोंमें•सुत स्त्री पुत्र वधुओंमें•जो कोई संगम करै तो यह गुरुतल्पगमनके समान महा पातक होते कहेहैं ॥ २३१ ॥

२३१अधिकोक्तिः—कुमारीके प्रसंगसे व्यवहारकांडमें यह वचन आया था (स कामास्वनुलोमासुनदोषस्त्वन्यथादमः—दूषणोतुकरच्छेद उत्तमायांवधस्तथा) कि जो कन्या कामसे पीड़ित होके निज इच्छासेही पुरुषको चाहै और अनुलोम जातिहो अर्थात पुरुषसे नीचेवर्ण कीहो तो इस दशामें उस पुरुष का कुछदोष नहीं है परन्तु जहां इसते अन्यथा डौलहोय कि पुरुष नीचा और कन्या उत्तमजाति की या नीची जाति होनेपर भी कन्याने कामपीडा और इच्छा अपनी न उत्पन्न करीहो तहां पुरुष दोषी होकर दण्डपावै=और हाथसे दूषित करनेमें हाथ कटायाजाय जो उत्तमजाती कन्या में ऐसा कियाहो तो उस पुरुषको वधदण्ड दियाजाय—जिस अपराध में दंड बड़ा होताहै उससे प्रायश्चित्त भी बड़ा कराया जाता है यह तात्पर्य ठहिरा—इन्हीं दो वचनोंके आशयसे विज्ञानेश्वरने मूलश्लोकमें भी उत्तमजाती कन्या ठहिराई ॥०॥ मूलश्लोकमें जिन स्त्रियोंका संगम गुरुतल्पके समान कहा सोभी उसदशामें समझना जहां योनिमें वीर्यभी सींचाहो•अन्यथा जो वीर्यपात होनेसे पहिले लौटिगयाहो तो वह पाप भी गुरुतल्पकी बराबर नहीं किन्तुथोड़ाही प्रायश्चित्त कराने योग्य ठहिरै क्योंकि मनुने वीर्यपातकोही लक्षणामें गुरुतल्प के समान पाप ठहिराया है=यथा= रेतःसेकःस्वयोनीषुकुमारीष्वंत्यजासुच सख्युःपुत्रस्यचस्त्रीषुगुरुतल्पसमंविदुः=अर्थात वीर्य सींचना अपनी बहिनों में•कुमारियों में•चंडालियों में•मित्र की स्त्रियों में•पुत्र की स्त्रियोंमें•गुरुतल्पके समान कहिते हैं ॥ ० ॥ योगीश्वरने मूल श्लोक में सगोत्रा स्त्रियां कहीं पुत्रकी वधूभी सगोत्राहोतीहै इसको फिर दुबारा पुत्रवधूके नामसेकहिना

कुछ आवश्यक नहींथा परंतुदुआरानामवरनेसे उसके मध्ये बहुत बडादोष औरबहुतबडा प्रायश्चित्त दर्शायाहै ॥ ० ॥ एकसौ उनतीस श्लोकसे आदि लेकर ब्रह्म हत्या आदि के समान समझाने वाले जो वचन हैं तिनका यही तात्पर्य है कि गुरुओं का अधि क्षेप आदि जो जो कर्म यहां तक बताये गये तिनमें वही ब्रह्महत्या आदिका प्रायश्चित्त कराना समझा जाय तहां यह शंका खड़ी होतीहै कि वेदकी निंदा आदि जो छोटे छोटे दोष हैं तिनमें ब्रह्महत्या आदि के बहुत बड़े प्रायश्चित्त कराने योग्य नहीं समुझि परते हैं—इसका यह समाधान है कि ऐसा उलटा मतसमुझौ किंतु वह प्रायश्चित्त का उपदेश होनेसे उपदेश की प्रबलासे ही दोषका बड़ा-पन पाया जाता है—क्योंकि वह वचन केवल ब्रह्महत्या आदि प्रायश्चित्त ही के अतिदेश मध्ये नहीं किंतु दोषों की बड़ाई सिद्ध करने केभी निमित्त है—जिससे कि जो केवल वही दर्शाना अभीष्टहोता तो जुदा जुदा ऐसे भेदसे न कहिते कि ब्रह्मह-त्या के समान या गुरु तल्पके समान या सुवर्णस्तेय के समान या सुरापान के समान अर्थात सभीको सामान्य भाव ऐसा कहिदेते कि ये सभी महा पातक हैं॥ ० ॥ और भी यह विशेषता है कि सम शब्दसे उपदेश किये प्रायश्चित्त भी सर्वत्र कुछ कमती करिके आदेश कियेजाते हैं बराबर नहीं•इसपर यह दृष्टांत है कि जैसा न्याय और व्याकरणके प्रयोगों में यह नियमरक्खागयाहै कि(लोकराज समोमंत्री)इत्यादि ऐसे अन्यवाक्यों में भी जिसकी उपमासम कहिके दीजातीहै वह प्रधानसे कुछ न्यून हो-ताहै जैसे इसीवाक्यमें देखो कि यद्यपि मंत्रीको लोकराजके समानकहा तौभीप्रधान लोकराजकेसाथ मंत्री कहांतक बराबरी करसक्ताहै नहीं औ राजाको बराबरी कराप नहीं—इसीप्रकार महापातक और इनसे दूसरे वर्जित पातकोंमें परस्पर तुल्यता होनी अनुचितहै तिससे इनमें कुछन्यून अर्थात एकपाद कमकरिके प्रायश्चित्त देनाचाहिये (इसका विशेषव्योरा २५२ की अविकोक्तिके प्रारंभमें देखना) यह व्यवस्था इस प्रकारसे निश्चित हुई तो फिर इसके विरोधी वचन शोधने चाहिये कि -या- -न- ने जिनपापोंको ब्रह्महत्याके समान कहा तिनको

समान कहिचुके०जो इस विविधा में यह तात्पर्यहै कि चाहें ब्रह्महत्यावाला प्राय॰श्चित्त कराया जाय या सुरापान वाला प्रायश्चित्त हो दोनोंका विकल्पहै कि जैसी दशा देखीजाय तिनके अनुसार दोमेंसे कोई एकप्रायश्चित्त किया जाय०इसीप्रकार अन्यवचनभी जहां कहींविरोधी मिलिजायँ तहाँ ऐसी युक्तियोंसे विरोध दूरकरदेना बुद्धिमानोंका कामहै॥ इसके सिवाय जो वशिष्ठका यहवचनहै कि (गुरोरलीकनिर्बंधेकृच्छ्रंद्वादशरात्रंचरित्वासचैलस्नातोगुरुप्रसादात्पूतोभवति) गुरुके सामने झूठे वा अप्रिय वचनों से आग्रह करनेके पापमध्येबारहदिन का कृच्छ्रव्रत करिके पीछेसचैल स्नान किया हुआ गुरुके चरणोंमें माथाधरने और गुरुको प्रसन्नकरि आशीर्वाद लेने से पवित्र होताहै– सो यह छोटा प्रायश्चित्त उसदशापर समझना जब धोखासे विना जाने सिर्फ एकवार ऐसापापहुआहो॥ २३१॥ इनसे उपरान्त अभी और भी गुरुतल्प के समान महापातकहैं तिनका अतिदेश अगिले श्लोकों में दर्शाते हैं॥

(पुनश्चगुरुतल्पसमपापातिदेशः)

पितुःस्वसारंमातुश्चमातुलानींस्नुषामपि। मातुःसपत्नींभगिनीमाचार्यतनयांतथा २३२
आचार्यपत्नींस्वसुतांगच्छंस्तुगुरुतल्पगः। लिंगंछित्त्वावधस्तत्रसकामायाःस्त्रियाअपि २३३

अर्थः–पिताकी बहिनको॰ माताकी बहिनको॰मामीको॰और इन सबकी पुत्रबधूको॰ जो नातेसे बहिन होती हो तिसको॰ आचार्यकी बेटीको॰तथा आचार्यकी पत्नीको॰ अपनी बेटीको॰ गमनकरता हुआ (गुरुतल्पग) गुरानीगामी ठहरताहै तहां निपट लिंगेन्द्री काटिके राजा उसका प्राणवधकरै यहीदण्डरूपी प्रायश्चित्तहै और कुछ नहीं (केवल पुरुषही को दंड उसी दशामें जब उसने प्रबलता या धोखा आदि प्रकारों से ऐसाकिया हो अन्यथा) जहां उन स्त्रियोंने भी अपनी काम इच्छा आदि प्रकारोंसे उन पुरुषोंकाभोग अंगीकार कियाहो तो उसस्त्रीकाभी बधकियाजाय यही दंड और यही प्रायश्चित्त है॥ २३२॥ २३३॥

सासू•साली•पिताकीबहिनबूआ•चचाकीस्त्री•मित्रकीस्त्री•शिष्यकीस्त्रीबहिन•बहिन कीभनेलीचाहैवहकिसीकीकन्या वास्त्रीहो•पुत्रकीवधू•बेटी•आचार्यकीपत्नी•सगोत्रा अपने गोत्रभरकोई स्त्रीमात्रहो•शरणागता जो कहींसेभगी वहीरक्षा समुझिके अपनी छायामें कुछ समय बितानेको टिकी हो• रानी जो राजकरनेवाले राजाकी भार्याहो (किंतु सामान्य क्षत्राणी जातिमात्र न समझनी क्योंकि उसके गमन मध्ये जुदाप्राय-श्चित्तकहागयाहै)प्रव्रजितासंन्यासिनिआदि साधिनी•धात्रीधाय जिसनेदूधपिलाकर पालाहो•साध्वी जो किसीव्रतादिक नियमोंकोसाधनामेंतत्परहो•वर्णोत्तमाब्राह्मणी• इनमें से किसी एकहीको गमनकरताहुआ पुरुष गुरुभार्यागामी कहाता है लिंग उस का कटवाय डारने के सिवाय कोई और दंड ऐसानहींहै जिससे उस के प्राणबचैं= परन्तु=यह लिंगच्छेद और बधरूपी दण्ड ब्राह्मण से उपरान्त मनुष्यको सूचितहुआ है- क्योंकि (नजातुब्राह्मणंहन्यात्सर्वपापेष्ववस्थित मितितस्यबधनिषेधात) ब्रा-ह्मण को कदापि न मारै सब तरहके पापों पर आरूढ होने मेभी यह उसके मारने का निषेध सर्व शास्त्र में उपस्थित है तिससे• तथापि उक्त कुकर्मों का प्रायश्चित्त यही बधरूपी जो लिखचुके तिसका विरोध दूरकरने वाली व्यवस्था आगे उसस्थल पर लिखी जायगी जहाँ गुरु तल्पीके प्रायश्चित्त का प्रकरण आवै (२५९ श्लोक पर देखना) ध्यान करौ कि २२८ दोसौ अट्ठाइस मूलश्लोक से लेकर यहांतक छः श्लोकों में गुरुओं का अधिक्षेप आदि पुत्री गमन पर्यंत जो कुकर्म वर्णनहुये सो सब महापातकों का अतिदेश हैं (अथही पतन का हेतु होने से पातक कहे जाते हैं) त-दाह यमः=मातृष्वसामातृसखीदुहिताचपितृष्वसा मातुलानीस्वसाश्वश्रूर्गत्वासद्यःप-तेन्नरः=अर्थात्- मातृष्वसा मावसी• माताकी सखी भनेली• बेटी• पिताकी बहिन• मामी• बहिन• सासु•मनुष्य इनको गमन करिके सद्यःतत्काल ही पतित होय अर्थात् जाति और लौकिक धर्मकर्मों से गिराया जाय ॥

वचनं=महापातकतुल्यानिपापान्युक्तानियानितुतानिपातकसंज्ञानितन्न्यूनमुपपातकम=अर्थात्–जो पाप महापातकों के तुल्य या केवल पापही के नाम से दर्शाए होंवे सब पातक नाम कहाते हैं उनसे भी जो न्यून हों सो उपपातक जानो=यह नियम अंगिरा के वचन से भी सिद्ध होता है=यथाहांगिराः=पातकेषुसहस्रंस्यान्महत्सुद्विगुणंतथा उपपापेतुरीयस्यान्नरकंवर्षसंख्यया=अर्थात्–नरकोंकी अवधि जाननेमध्ये वर्षों की संख्या से० पातकों में हज़ार वर्ष नरक भोगै तथा महापातकों में उससे दूना दो सहस्र वर्ष और उपपापों में चौथा भाग २५० दोसौ पचास वर्ष नरक होता है यह नियम जानो॥ २३२॥ २३३ ॥

इस प्रकारसे चौबीसवें परिच्छेदमें महापातकोंका स्वरूपकहाऔर पचीसवेंपरिच्छेदमें पातकोंकास्वरूपकहाअवआगलेपरिच्छेदमेंसबसेछोटेउपपातकजुदेनामोंसेदर्शावेंगे॥

अथ उपपातकादीनांस्वल्पपापानांविवेकविषयोऽयंपरिच्छेदःषड्विंशः २६॥

——*——

इस परिच्छेद में तीसरे दर्जेवाले उपपातक और उनसे भी छोटे अनुपातक आदि दर्शाए जायँगे॥

(गोवधाद्युपपातकानि)

गोवधोव्रात्यतास्तेयमृणानांचानपाक्रिया । अनाहिताग्नितापण्यविक्रयःपरिवेदनम् २३४

देव ऋषिपितरोंके ऋणका उद्धारन करने—अनाहिताग्नित्व अर्थात्जिसके कुलमें अग्नि स्थापनका अधिकारहै सो अग्निको नहीं स्थापै तो यह भी उपपातकहै—अपण्य जो नहीं बेचने योग्य चीजें कि जिनका निषेध छत्तीसवें मूलश्लोकसे आदि लेकर हो-चुका तिनको बेचै तौयह उपपातक होताहै—परिवेदनदोष उसकानामहै कि जेठेभाई का विवाह न होकर पहिले छोटेभाईका विवाह कियाजाय और जेठेभाईके अग्नि का स्थापन न होतेहुये छोटाभाई अग्नि स्थापनकरै तो छोटे को परिवेदन पापहोता है—ये सब एक एक उपपातक होतेहैं ॥ २३४ ॥

२३४अधिकोक्तिः—मूलश्लोक में यहकहाथा कि स्थापनाका अधिकार कुलमें होते हुये जो अग्न्याधान को न राखै सो उपपातकी होताहै—इसमें एक तर्कना है क्यों जो ज्योतिष्टोम आदि यज्ञोंकी अनुज्ञा देनेवाली श्रुतियां अपने अंगभूत अग्नि की सिद्धि होने के लिये अग्निका आधान स्थापन अवश्यही प्रयुक्तकर वातीरहि-तीहैं यहबात मीमांसा में प्रसिद्ध है—तो इसनियमसे यह बातभी स्वतः पाईजाती है कि जिसके कुल में अग्नियोंसे प्रयोजनहोगा तिसकी उसके उपायरूपी आधान में स्वतः प्रवृत्ति होतीरहेगी जैसे हरतरहकेधन संचय करनेवालों में जिसको नाजलेनेकी गर्जहै वह नाजहीपर उतारूहोगा०और जिसके कुलमें अग्नियोंसे प्रयोजन कुछनहीं है तिसकी प्रवृत्ति उसके आधानपर न होगी०तो फिर कैसे अनाहिताग्नित्वकादोष ठहरायागया= समाधान—सुनो इसी मूलश्लोकरूपी वचनसे(कि जिसमें उपपातक दर्शानेद्वारा आधानकी आवश्यकता ठहराईगई तिससे नित्यश्रुतियांभी और अधि-कारवाला पुरुष भी अविशेषता से आधानके प्रयोजक होते हैं अर्थात् स्थापनाकी प्रवृत्ति करवाते और करते भी रहिते हैं यही स्मृतियोंके बनानेवालों का अभिप्राय पायाजाताहै ॥ २३५ ॥

दनके नामसे उपपातक होता है सो २३४ केश्लोक में कहिचुके) वार्धुष्य कर्म्म जो इस प्रकारसे ब्याजवृद्धि की जीविका करै जिसका निषेध है—लवण क्रिया अर्थात खानिसे नमक सोरा आदि अपने हाथसे बनाना एक उपपातकहै॥ २३५॥ स्त्रीका वध करना चाहै ब्राह्मणी आदि कोईजातिहो (परंतु रजस्वला आदि आत्रेयी स्त्रियों को छोडिके यह नियम समझना आत्रेयीके टीकलक्षण दोसौ इक्यावन की अधिकोक्तिमें देखना) शूद्रका वधकरना एक उपपातकहै—वैश्य या क्षत्री जो किसी यज्ञ आदि दीक्षा से दीक्षित नहीं तिनका वध करना उपपातक है—निंदित अर्थोंसे उपजीवन करना अर्थात् जीविका करनेका जो प्रकार राजाने नहीं स्थापित किया और लोकमें भी निंदितहो तिसके द्वारा—नास्तिक्य उसका नामहै कि हठपूर्वक ऐसा कहै कि परलोक आदि झूठी कल्पना है—व्रत का लोप करना दृष्टांत जैसे ब्रह्म चारी होकर स्त्रीसे प्रसंगकरै—सुतानांविक्रय अर्थात् लडका लडकी आदि संतान बेचना-ये सभी बातें एक एक उपपातक हैं॥ २३५॥ २३६॥

(अन्यानिच उपपातकानि)

धान्यकुप्यपशुस्तेयमयाज्यानांचयाजनम्। पितृमातृसुतत्यागस्तडागारामविक्रयः २३७
कन्यासंदूषणंचैवपरिविंदकयाजनम्। कन्याप्रदानंतस्यैवकौटिल्यंव्रतलोपनम् २३८

अर्थः—धान्य सब तरह के नाज की चोरी—कुप्य सीसा राँग पीतल आदि छोटी धातुओं की चोरी—उन पशुओं की चोरी जो दोसौ तीस २३० मूल क में लिखे हुये कीमती घोड़ा हाथी आदि या हाल की बियानी दूध देती उत्तम गऊ से उपरान्त गऊ आदि हर किस्मके पशु जो कमकीमत समझे जाते हैं—अयाज्य शूद्र आदिया व्रात्य दोष वाले त्रैवर्णिक भी हो अथवा जाति या कर्मों से दूषितहों तिनकोयज्ञ करावै अर्थात उनको पुरोहिताई पाधाई करै तो यह भी उपपातक है—अपतित माता पिता या पुत्रों को पालनासे न्यारो अर्थात् घरसे निकासिदेवै तो यह उपपातक है तडाग बावली धर्मशाला आदि जो पुण्य के निमित्त से बनाये गये यश पुन का नाम रहिने के लिये बनाये हों तिनका बेचिदेना॥ २३७॥

कन्या को दूषित करना अर्थात भोग बिनाही अँगुरी आदि से योनि बिगाना या और किसी प्रकार से छेड छाड करना उपपातक है और यह भी कि यदि किसी कुमारी कन्या को ऐसा कोई दोष लगावै जिससे विवाह रुकिजाय (कुमारी के दूषित करना इस पाप से बहुत गुरुतर है जिसको २३१ श्लोक से गुरुतल्पकेसमान

कहिचुके हैं)—परि विन्दक पुरुष को विवाह कर्म्म आदि कोई सा यजन कराना (परिविन्दक उसको समझना जो जेठे पुत्रको विवाहे विना छोटेका विवाह करै या जेठी पुत्री विवाहे विनालघुरी का विवाह करै तिनको विवाह करानेवाला पण्डित भी उपपातकी होताहै)—परिविन्दक पुरुष को कन्यादान करिके देनाभी उपपातक है—कौटिल्य कुटिलता के लक्षण पहिले दोसौ उनतीस मूल श्लोक में लिखि चुके तहां देखो परंतु वहांपर बहुत बडी कुटिलता का प्रयोजन था कि जिसका न्याय निर्णय उसी की अधिकोक्ति में दर्शाया गया॰किंतु यहां छोटी मोटी कुटिलता करै सो उपपातक है बल्कि इस प्रकार से भी भेद किया गयाहै कि वहांपर अपने गुरु के साथ कुटिलता करने का तात्पर्य था यहां जो औरों के साथ कुटिलता करै सो उपपातकहै छोटी बड़ी से कुछ भेद नहीं पर विवेकी पुरुष दोनों प्रयोजनको सोचा- न से न्याय करै—व्रत का लोप करना उपपातक है यद्यपि दोसौ छत्तीस मूलश्लोक में व्रत लोप करना कहिचुके परंतु यहां पर शिष्ट और अप्रतिषिद्ध सामान्य छोटे व्रतोंका प्रयोजन है दृष्टांत जैसे श्रीहरि चरणों के दर्शनकिये विना तांबूलआदि कुछ नहीं खाताहूं यह मेरा नियम है इसको बहुत दिन माचने पीछे छोडि देना आदिस- मझने किंतु २३६ के श्लोक में स्नातक ब्रह्मचारी आदिके व्रतभंग होने कहेथे यहां स्नातक व्रतवाले स्वल्प नियमों की भी पहुँच नहीं मानी गईहै क्योंकि स्नातकों के छोटे व्रतलोप होजाने मध्ये मनुने छोटा प्रायश्चित्तही जुदा कहा है कि एक दिन भोजन का त्याग राखै यही प्रायश्चित्त है॥ २३८॥

यातौ किसी औरही आश्रम का सहारा लेवै या शीघ्र अपना विवाह करिके गृहस्थ का आश्रम साधै परन्तु यह नियम केवल उसके लिये है कि जो विवाह करने का अधिकारी सचाहोय अर्थात् पुत्र लाभकी कामना शेषहोय या रति भोग की इच्छा शेषहोय यद्वा गृहस्थवाले धर्मोंका आराधन करना चाहे किंतु इनमेसे कोई बात जिस के चित्तमें नहो अर्थात् जिसके पुत्रपौत्र आदि मौजूदहों या इनके मौजूद न होने पर भी शरीरसे बूढा शिथिल होय या शिथिलताके न होनेपर भी कामभोग की इच्छा शेष न होय यद्वा किसी विशेष परमधर्मरूपीकार्यमें संलग्नहोनेसेगृहस्थकाआडंबर नहींशेषपाचाहै तौ वहपुरुषविवाहकरनेका अधिकारीनहींहैजोअधिकारीनहीं उसको उपपातकभी न है०॥ तथाचविज्ञानेश्वराचार्यः–अगृहीताश्रमत्वंसत्यधिकारे॥ २४१ ॥

(अन्यानिच उपपातकानि)

असच्छास्त्राधिगमनमाकरेष्वधिकारिता। भार्यायाविक्रयश्चैषामेकैकमुपपातकम् २४२

अर्थः–असत् शास्त्रोंका विचारनाअभ्यासकरना(असतशास्त्र उनकानामहै जो चार्वाक आदि नास्तिक जनोंके शास्त्र हों जिन से विपरीतरीतें होती हैं) आकर खानि जो सुवर्ण आदि सब चीजों के उत्पत्तिस्थान कहाते हैं तिनमें राजकी आज्ञासे ठेका आदि अधिकार करना–भार्या का बेचना–इन सबमें कि जो जो कर्म ब्राह्मण गोवध आदि दोसौ चौंतीस श्लोक से लेकर यहां तक वर्णन किये सो एक एक हुई उपपातक हैं॥ २४२ ॥

वाणिज्य और शूद्रकी सेवा करना ये सब अपात्रीकरण पाप होतेहैं जैसे असत्य बोलनेकी भांति—कृमि कीट पक्षी इनकी हत्या और मद्यानुगत भोजन अर्थात् जो चीजें बनाने वा परस्पर मिलानेसे मद्यके अनुरूप होजातीहों तिनका भोजन करना फलकी चोरी ईंधन की चोरी फूलोंकी चोरी और धीरज राखनेके स्थलपर धैर्य छोड़िदेना ये सब मलावह नामके पाप कहातेहैं (इनके सिवाय जो पापरूपी निमित्तकोई उत्पन्न हों सो प्रकीर्णक कहाते हैं) ॥ ० ॥ वृहद्विष्णुने सभी प्रायश्चित्तों के निमित्त रूपी पाप यथाक्रमसे (उत्तरोत्तर) पीछे पीछे छोटे करिके जुदे संज्ञा भेदोंसे दर्शाएहैं जोसब चौदह भेदहोते हैं=तथाच वृहद्विष्णुः=ब्रह्महत्यासुरापानं ब्राह्मणसुवर्णापहरणं गुरुदारागमनमिति महापातकानि तत्संयोगश्च—मातृगमनंभगिनीगमनं दुहितृगमनंस्नुषागमन मित्यतिपातकानि—यागस्यक्षत्रियवधोवैश्यस्यच रजस्वलायाश्चांतर्वत्न्याश्चा त्रिगोत्रायाश्चाविज्ञातस्यगर्भस्य शरणागतस्यचघातनं ब्रह्महत्यासमानि—कौटसाक्ष्य सुहृद्वध इत्येतौसुरापानसमौ—ब्राह्मणस्यभूमिहरणं सुवर्णस्तेयसमं—पितृव्यमातामह मातुलनृपपत्न्यभिगमनंगुरुदारगमनसमं—पितृष्वसृ मातृष्वसृ गमनं श्रोत्रियर्त्विगुरुपाध्य मित्रपत्न्यभिगमनंचातिपातकसमं—स्वसुः सख्याः सगोत्राया उत्तमवर्णायारजस्वलाया शरणागतायाः प्रव्रजितायानिक्षिप्तायाश्च गमनमित्येतान्यनुपातकानि—अनृतवचनंसमुत्कर्षे राजगामिच पैशुन्यंगुरोश्चालीकनिर्बन्धो वेदनिंदाअधीतस्यत्यागो ऽग्निपितृमातृसुतदाराणांच अभोज्यानांभक्षणं परस्वापहरणं परदारानुगमनमयाज्यानांचयाजनं ब्रात्यताभृतकाध्यापनं भृतादध्ययनादानं सर्वाकरेष्वधिकारो महायंत्रप्रवर्तनंद्रुमगुल्मवल्लीलतौषधीनां हिंसयाजीवनमभिचार मूलकर्मसुच प्रवृत्तिरात्मार्थं क्रियारंभोऽनाहिताग्नितता देवर्षि पितृणा मृणस्यानपाक्रिया असच्छास्त्राधिगमनं नास्तिकता कुशीलवता मद्यप स्त्री निषेवणमित्युपपातकानि—ब्राह्मणस्यरुजःकरणमघ्रेयमद्ययोर्घ्राणंजैह्म्यंपशुपुंसिच मैथुनाचरण मित्येतानिजातिभ्रंशकराणि—ग्राम्यारण्यपशूनांहिंसनं संकरीकरणं—निंदितेभ्योधनादानं वाणिज्यं कुसीदजीवनमसत्यभाषणं शूद्रसेवनमित्यपात्रीकरणानि—पक्षिणांजलचराणांचघातनं कृमिकीटघातनं मद्यानुगतभोजनमित्यादहानि —यदनुक्तंतत्प्रकीर्णकं=अर्थात्—विष्णुमुनि की बड़ी स्मृति में क्रम से सभी पापों के बड़े छोटे इतने भेद किये गए हैं कि—ब्राह्मण की हत्या • सुरापान • ब्राह्मण का सोना हरना • गुरु की दारा भोग करना • ये महापातक हैं (और इनको मिलानेवाला भी महापातकी होता है—माता या भगिनी या बेटी या पुत्रकी बहू गमन करना यह अतिपातक है अर्थात् महापातकों मे कुछनीचेर

यज्ञ में लगे हुये क्षत्रीका वध करना तथा वैश्यभी यज्ञ में लगे हुये का वध करना या रजस्वला नारीका वध करना या गर्भवती का वध करना या अत्रिमुनि के गोत्र वाली किसी प्रकार की स्त्रीका वध करना या बिनाजाने गर्भका वध करना या अपने शरणागत का घात करना ये सभी पाप ब्रह्महत्या के समान हैं ३ जालसाजी की गवाही या मित्र का वध करना ये दोनों पाप सुरापान के समान हैं ४ ब्राह्मण की धरती हरना सुवर्ण की चोरी के समान है ५ चचा या नाना या मामा या राजा इनकी पत्नी से अभिगम करना गुरुदार गमन महापाप के समान हैं ६ पिताकी बहिन या माता की बहिन से गमन करना तथा श्रोत्रिय जो वेद की किसी शाखा के पढने में तत्पर हो रहा यद्वा पढिचुके पीछे उसके अनुसार षट्कर्मों में निरत ब्राह्मणहो या ऋत्विक् या गुरु जो अपने मुख्य गुरु से उपरालू कोई सामान्य गुरुमाना हो या उपाध्याय या मित्र इनमें किसीकी पत्नी से अभिगम करना ये अति पातक के समान हैं ७ बहिन की सखी या अपनी सगोत्रा किसी स्त्री से या अपना से ऊँचेवर्णवाली स्त्री से या रजस्वला चाहैं निज अपनीही भार्या हो तिससे या शरणामें आई टिकी हुई किसी स्त्रीसे या संन्यासिनि आदि साधिनी से या किसीने कोई स्त्री अपने धरोहर की रीति से सौंपी तिसके साथ भी गमन करना ये सब इतने अनुपातक हैं ८ उत्कर्ष के स्थान में असत्य बोलना (उत्कर्ष के स्थान यज्ञ मंडप राजद्वार तीर्थ स्थान सभा पंचायत आदि अनेक हैं सो समझ लेने) वह पिशुनता जो राजा तक पहुँचे• गुरुके साथ प्रतिज्ञा पूर्व हठकरना• वेदकी निंदा करना• पढेहुये वेदका छोड़ि देना• अग्नि की सेवा छोड़ि देनी• पिता या माता या पुत्र या भार्या इनको छोड़ि देना• नखाने योग्य चीजों को खाना• पराया धन हरना अर्थात चोरी करना और अपने भागी या साझी आदि का उचित भाग न देना• पराई भार्याका भोग• अयाज्योंको

दन आदि मंत्र यंत्र होतेहैं तिनमें प्रवृत्तिकरना भी पाप है॰ अपने आत्माके निमित्तमें रसोईआदि क्रियाका आरम्भ॰ अधिकारके होतेहुये अग्निको नहीं स्थापन करना॰ देवता या ऋषियों वा पितरों का ऋण नहीं शोधना॰ असत् शास्त्र नास्तिकजनों के बनाये हुये तिनको पढना विचारना॰ कुशीलवत्ता अर्थात् कुशील खोटे स्वभाव के द्वारा नट नर्तक आदि वाली जीविकावृत्ति धारण करनी मद्यपीनेवाली स्त्रीसेसंभोग करना ये सब उपपातक हैं ९ ब्राह्मण के देहमें घाव करना या चोटलगाना॰ नसूंघने योग्य मैली चीज औ मद्य इनका सूंघना॰ जैह्म्य कुटिलता॰ पशु में या पुरुष में मैथुन करना ये सब इतने पाप जातिभ्रंशकर कहातेहैं १० गावँके या वनके पशुओं की हिंसा करनी यह संकरीकरण पाप कहाताहै ११ निंदित कसाई॰चंडालआदि मनुष्यों से और निंदित प्रकारों से धन लेना या चोर आदि दुष्टों से धन लेना और उनके साथ वाणिज्य करना॰ब्याजसे जीविका करनी॰ असत्य बोलना॰ शूद्रकी सेवा करनी ये सब इतने पाप अपात्री करण कहाते हैं १२ पक्षियों वा जलचर जीवों का घात करना तथा कृमि कीट इन जीवों का घातकरना॰ मद्यानुगत भोजन करना जो चीजें किसी रीतिसे बनाने या परस्पर मिलाने से मद्यके अनुरूप होजाती हों ये सब इतने पाप मलावह कहाते हैं अर्थात् मलके धारण करानेवाले १३ जोकुछ इस पाद में न कहाहो और वही उपराल झगड़ा आनि परे तौ प्रकीर्णक उनका नामकहा जाता है १४ ॥ ० ॥ कात्यायन ने सब पापों के मुख्य पांचही भेद कहे उनका भी दर्शाना इसजगह पर आवश्यक है कि ऊँच नीच का भेद समझाजाय=यथाह कात्यायन=महापापंचातिपापंचतथापातकमेवचप्रासंगिकंचोपपापमित्येवंपंचकोगणः= अर्थात् महापाप१अतिपाप२पातक३प्रासंगिक ४ उपपाप५ यह पांच भेदोंसे इनका

कि यद्यपि पातकोंमें तत्कालही पातित्य उस तरहसे नहींहोताहै कि जैसे महापातक और उनके समानपातकोंमें सद्यहीपतनहोजाताहै तथापि वारंवार अभ्यासकी अपेक्षा से उनमें भी पातित्य (गिराइदेने) का हेतु होना कुछ विरुद्ध नहींहै क्योंकि उसी पूर्वोक्त गौतमके वचनमें (निंदितकर्माभ्यासी) निन्दितकर्मका अभ्यास वारम्वार करने वालाभी गिनती हुआहै तिससे यह समाधान किया करते हैं सो ऐसा नहीं माना जा सक्ताहै क्योंकि अभ्यासका भी निरूपण उसकी तौलके द्वारा करना उचितहै अथवा जो तौलकी विशेषता विना ऐसाही साधारण अंगीकार कियाजाय कि एकवारके सिवाय जब दोवार किया तौभी अभ्यासहै तैसा सौवार किया तौभी अभ्यास है तो इस अंगीकारमें यह दोष आताहै कि जैसे (दिनमें सोना या गऊका वधकरना दोनों वरावर होतेहैं) जो दिनमें दोवार सोया और जिसने सौवारमें सौ गौयें मारीं तिनदोनों का एकहीसा वरावर पातित्य होवे॥ समाधान इसका सुनो—धर्मशास्त्रमें वहुधाकरके अर्थवाद खडा करनेसे भी सकप्रकारका पाप लगता सुनतेहैं (जैसा आचारकांडमें मनु के दो वचनहैं सो देखो कि॰ १ श्रुतिस्मृतीउभेनेत्रे इत्यादि और २ तेउभेयोऽवमन्येत हेतुशास्त्राश्रयात इत्यादि) अर्थात नास्तिकता दोष लगताहै—और—उस निन्दितकर्म रूपी छोटे दर्जाके पापमें जो वडा प्रायश्चित्त पहुँचने का तर्क तुमने उठाया तिसका यह तात्पर्यहै कि वारवार अभ्यास करते हुये जवतक महापातकसे तुल्यता होजाय उतना अभ्यास पातित्य (गिराइदेने) का हेतु ठहिरताहै तभी उसको वडे प्रायश्चित्त का अधिकार पाया जाता है अन्यथा छोटे प्रायश्चित्त का अधिकार—और दिनमें सोना आदि जो छोटे उपपातकहैं कि जिनसे केवल कर्ताहीकी पृथक् पराक्रमकी हानि होतीहै किसी दूसरेकी कुछ हानि या पीडा होती नहीं समस्त ऐसे छोटे उपपापोंमें सहस्रवारसी अभ्यास करनेसे महापातककी तुल्यतानहीं होतीहै इसहेतु उनमें पातित्य नहीं होताहै—और विरले उपपातक आदि ऐसेहैं कि उनमें दोही चार या दस पांच वारके अभ्यास होनेसे पातित्य लगिजाताहै—इसका दृष्टांत जैसे दूध मातापिता या सदान पुत्र पुत्री या सुशीला भार्या घरसे निकासिदेना उपपातक कहाताहै यद्यपि वचन प्रभावसे तो यही अर्थहै कि निकासि देनेवाला सकारणही पातक लगा तौभी महापातकसे तुल्यता होनेकी अपेक्षासे यह तात्पर्यहै कि सदा दो दिनके लिये निकासि देनेमात्रसे पातित्य नहीं लगि जाताहै उपपातकही गिन्ती होसक्ती है परन्तु जो वारम्वार सदा सर्वदा ऐसा कियाकरै या दो दिनके लिये निकासि देइ तो यह भी पुरापातक होजायगा कदाचित् नित्य निकासि देवे कि फिर घरमें पग न आवे

है तो यह भी महापातक तुल्य होजायगा इत्यादि प्रकारों से अभ्यास का निरूपण कियाजाता है और यही उसकी तौलहै• तिससे वही नियम ठीकहै कि उपपातक आदि छोटे दर्जाके पापोंमें अभ्यासकी अपेक्षासे पतन [गिरजाने] का हेतुपैदा होता है॥ २४२॥ ध्यान करना चाहिये कि योगीश्वरने पापोंके मुख्य तीनिही भेद कहे जिनके तीन परिच्छेद जुदे किये गये ऐसेही कात्यायन ने पांच भेद कहे वृहद्विष्णु ने उन्हींका विस्तार करिके चौदह भेद कहे परंतु तात्पर्य सबका एक है प्रायश्चित्त के विचारनेमें मुख्य योगीश्वरका बांधा क्रम देखना चाहिये कदाचित् उसमें सन्देह या झगड़ा बाकी रहिजाय तब अधिकोक्ति में चौदह प्रकारों का मीलान करिके संदेह मिटाइलेना विवेकियोंका कामहै क्योंकि जिन ऋषीश्वरोंने बहुतसेना भेदकिये सो केवल इसलिये हैं कि पापोंकी बडाई छोटाई शीघ्र समुझीजाय॥ २४२॥

यहांतक व्यवहार वर्तावकी सुगमताके लिये प्रायश्चित्तों के निमित्तरूपी पापों को संज्ञा भेद मे वर्णन करचुके अब आगे उनके नैमित्तिक रूपी प्रायश्चित्त कहे जायँगे तिनमें ये सब संज्ञा काम आवैंगी॥

अथ ब्रह्महत्यायाः प्रायश्चित्त विवेकानां प्रदर्शकोऽयंपरिच्छेदः सप्तविंशः २७



इसपरिच्छेदमें ब्रह्महत्यारूपी महापापके प्रायश्चित्तवर्णन होंगे औरब्रह्महत्याके अनेक भेद हैं कि एकही ब्राह्मण मारा या अनेक मारे या धोखासे मारा या जानिबूझि के मारा या वैदिकमारा और प्रथम मारा कईवार पहिले भी ब्रह्महत्याकरचुका इत्यादि कर्ताओं के भेदसे भी नियम कियेजायँगे॥

(ब्रह्महत्यायांप्रायश्चित्तस्य द्वादशवार्षिकादि नियमाः)

लाठी आदिके सिरेपर बाँधिके ध्वजा बनानीकही तिसकोभी ऊँची किये बगल में दबायेरहै— यह खोपडी उसी ब्राह्मणकी लेनी कही जिसको मारिके हत्याराबनाहो (कृत्वाशवशिरोध्वजमितिमनुः) मनुने यहकहाहै कि मुर्दाके शिरकी ध्वजाबनाकर लेजाय= ब्राह्मणोब्राह्मणंघातयित्वातस्यैवशिरः कपालमादायतीर्थान्यनुसंचरेदिति शातातपः=अर्थात—ब्राह्मण ब्राह्मणकोमारिके उसीकेमूड़काखपरा हाथलेकर तीर्थों में विचरै यह शातातपनेकहा—परन्तु जो उसका शिर न मिलै तो औरही किसी मरे ब्राह्मणका लेआवै उसकी ध्वजाबनावै (खट्वांगकपालपाणिरितिगौतमोपि) गौतमने भी कहाहै कि खट्वांग और कपाल हाथमें हो—खट्वांगनाम यद्यपि खाटकेपावे पट्टी आदि किसी एक अंगकाहै परंतु यहाँ केवल ध्वजाका प्रयोजन है तिससे गौतम ने यह तात्पर्य दर्शाया है कि खाटकी पाटी में खोपडी बाँधिके ध्वजाबनावे (खट्वांग यद्यपि समस्त नरपंजर अर्थात मनुष्यकी शरीरकाभीनामहै पर उससे कुछ प्रयोजन यहाँ नहींहै) (कपालआदिका धारण करना यह केवल हत्यारेका तुकमा चिह्न है अर्थात उस खोपडी के खपरा में न भोजन करनेका प्रयोजन है न भिक्षा मागनेका क्योंकि (मृन्मयकपालपाणिर्भिक्षार्थैग्रामंप्रविशेदितिगौतमः) गौतमने उन्हीं गौतम ने यहभी कहाहै कि मट्टीका ठीकरा हाथमेंलेकर भिक्षाकेलिये वस्तीमेंघुसै अन्यथा जंगल आदिमें रहाकरै=तथाचमनुः=ब्रह्महा द्वादशाब्दानिकुटिंकृत्वावनेवसेत कृतवा पनोवानिवसेद्ग्रामांतेगोव्रजेऽपिवाआश्रमेवृक्षमूलेवासर्वभूतहितेरतः=अर्थात -मनुने ये नियमकहेहैं कि ब्रह्महत्यारा बारहवर्षतक कुटी बनाइके वनमेंवसै अथवा यह संभव न हो तो बालमुड़ाये वा जटारखायहुये किसीग्रामके समीपरहै या गोव्रजमें कि जहाँ बहुत गौओं की चराईवाले जंगल में निवास हो या किसी प्रसिद्ध जंगलके बनेहुये आश्रमों में टिकै अथवा वृक्षके नीचे रहिके सर्वभूतों की भलाईवाले आचरण करै (उक्तवचनोंमें कृतवापनोवा) इसविकल्पसे कि मूडमुड़ायेहुये

कि=स्थान वीरासनी मौनी मौंजी दण्डकमंडलुः भिक्षाचर्याग्निकार्यंचकूष्मांडीभिःसदाजपः–तस्यभवेदितिशेषः=अर्थात्–स्थानपर वीरासन जमाये मौनसाधे मौंजी धारणकिये दंड और कमंडलुभी लियेहुये भिक्षामांगि निर्वाहकरना और अग्निकार्य भी होम आहुति करना कूष्मांडियोंसे सदाजपकरै=ऊपर गौतमके वचनसे यह कहा गया कि वनोंमें सर्वत्रजलाशय पाकर स्नानकरनेका नियमराखै•तहां स्नानके विधान से उसके अंगभूत मंत्रादिकी प्राप्ति समझी जातीहै कि जो स्नानकरै तौ मंत्रोंका भी उच्चारण करै–तथैव(शुचिनाकर्मकर्तव्यं)पवित्र होके सबकर्मकरने चाहिये यहवचन सर्वत्र सब कर्मोंपर साधारण भावसेआरूढहै तिससे भी यहबात पाईजातीहैकिप्रायश्चित्तरूपीव्रतचर्यामें तत्पर होनेसे उसव्रतको अंगभूत जो शौचकी संपत्तिहैतिसकेलिये स्नानोंकी तरह संध्योपासन भी करना चाहिये तिसका भी यह प्रमाण है कि संध्या करना सबकर्मोंके साथ पहिलेही आवश्यकहै जिसपर दक्षका यह वचन प्रमाण है कि=संध्याहीनोऽशुचिर्नित्यमनर्हःसर्वकर्मसु यदन्यत्कुरुते किंचिन्न तस्य फलभाग्भवेत्–अर्थात्–संध्याकर्मसे विहीन जो पुरुष है सो नित्यप्रति अशुद्ध रहता और सब तरह के कर्मोंमें अयोग्य होताहै अर्थात् जबतक संध्या नहींकरै तबतक देव पितर आदि सम्बन्धी कोई कर्म करनेका अधिकारी नहीं ठहरता है क्योंकि ऐसा पुरुष जो कुछ कर्म थोड़ा बहुत करै भी तौ उस कियेका फलभागी नहीं होताहै यह ईश्वरकी आज्ञा रूपी वचनका प्रभावहै (तौ इसके बिना हत्यादि का ब्रह्मचर्य आदि व्रतभी निष्फल जासकताहै) और इसमें यह शंका कभी न करनी चाहिये

करने में निस्तार नहीं होता=अथाप्यर्थवादः—इसमें यह सोचना चाहिये कि विना इच्छा मारडारने मध्ये जो विशुद्धि कहीगई तहां क्या दो तीन ब्राह्मणों के मारने में प्रायश्चित्त का (तंत्रत्व) एकीभाव कहिके (आवृत्ति) उसको फेरभी दोहराय कि फिर फिर किया जाय॰ तहां कोई ऐसा मानते हैं कि (ब्रह्महाद्वादशाब्दानि) इसमें ब्रह्मशब्द है सो एक और दो और बहुत भी ब्राह्मणोंपर जाति वाचकता से साधारण आरूढ़है तिससे जो एक ब्राह्मणके वधमें प्रायश्चित्तहै वही दूसरे और तीसरे में भी समुझाजाय॰तहां एक ब्राह्मणके मारनेनिमित्तसे एक प्रायश्चित्तका अनुष्ठान होनेसे वहकियागया यह नहीं ऐसी तकरारपर यह कहिनेको सामर्थ किसीको नहींहै कि॰ तरह तरहके देश जुदे जुदे प्रभावोंवाले काल अनेक लक्षणोंवाले हत्याके कर्ता लोग नानाभाँति उनके किये कर्मोंकी युक्तियां जिनमें विलक्षण चिह्नोंसे जुदे अनेक दोष फिर इच्छा या विना इच्छासे मारनेका अनुबंध यह उपरालहै तहां यह विशेष कारण सबसे जुदाहै कि इन सबके जुदे भेदों से निर्णय कियेविना या इस अपेक्षामें कि भेद के विनाही उन सबका विशेष कोई चिह्न हाथ आजाय सो नहीं हाथ आता है तिस कारणसे (तन्त्रानुष्ठानहीसे अर्थात् एकही वार बारहवर्षकी व्रतचर्याकरनेसे पापनाश होजानेवाले कार्य की सिद्धि ठहराती ठीकहै॰जैसा इसपर यह दृष्टांत है कि तन्त्र रूपी (अर्थात्दोयातीनोंकेएकहीबार) अनुष्ठानोंसे प्रयाज आदि यज्ञोंके द्वारा अग्नि संबंधी आदि देवताओंसें तंत्ररूपहीसे अनेकोंके उपकारवाले कार्योंकी सिद्धिहोतीहै- और ऐसा न कहिना चाहिये कि दो तीन ब्राह्मणों के वधमें पाप के गरुआपन से गौतमका वचन लेनाहोगा यथाहगौतमः (एनसिगुरुणिगुरूणि लघुनिलघूनि,अर्थात् बड़ेपापमें बड़ेप्रायश्चित्त औरछोटेमें छोटेइसवचनसेहिसाबविचारनाहै प्रायश्चित्तों।

हानिका जो वचनहै सो जहां उसके प्रयोजनकी प्राप्ति देखीजाय तहां मानाजासक्ता है कि—हत्यारेसे न कोई पढ़ै न उससे किसी कर्मकी आज्ञा बूझै न उसके द्वारापूजन आदि कोई कर्मकरै न उसको दानदेवै (यहां भी फिर वही विचार करनाहोगा कि उसको दानदेनेके निषेध से भिक्षा देनेका निषेध न समुझि लेना, क्योंकि भिक्षा का विधान उसके निमित्तपर लिखचुके हैं तिससे भिक्षा देना एक वाचनिक धर्म है) इसी प्रकार न कोई हत्यारे को पढ़ावै न यज्ञ आदि कोई सा कर्मठ विधान उसको करावै न करनेकी आज्ञादेवै न संभाषणकरै न रासरसौआदि का सम्बन्ध रक्खै न उस से कुछदान लेवै न विवाह आदि सम्बन्ध उससे करै—अब ऊपरकी प्रकृति वार्त्ता पर ध्यान करो कि—हत्यारेकी व्रतचर्या जो मनु और याज्ञवल्क्य और गौतम आदि ऋषीश्वरोंकी नियत करीहुई बारहवर्ष की अवधिसे एकही है कुछ जुदे जुदे ग्रन्थों में जुदी तरह नहीं है किंतु अविरोधी मत परस्पर सबका एकहीहै—तिसका यहउदाहरण समुझिलेना चाहिये कि जैसे इसी २४३के श्लोकमें (भिक्षाशीकर्मवेदयन्) यह योगीश्वरने कहा कि अपना कर्म पुकारते हुये भिक्षा भोजन करै और कुछ नहीं कहा तो यह अपेक्षा शेषरही कि भिक्षा मांगनेका कैसा पात्रहो या किनके घर मांगनीचाहिये या कितने घरोंमें॰ तहां यह शेष अपेक्षा आपस्तंब आदिके उन वचनोंसे पूरीहोजाती है जो (लोहितकेनखंडशरावेण इत्यादि) पहिले लिखचुके हैं सो यह कोईसा विरोध नहींहै=इसीलिये सब ऋषीश्वरों का एकही कल्पना रूपी उपदेश होनेसे निरले संग्रहकारोंने अपने ग्रन्थमें यह लिखा है (मनुगौतमाद्युक्तेतिकर्त्तव्यतायाःपरस्पर सापेक्षत्वेपिविकल्पइति तदनिरूप्यैवोक्तमिति मंतव्यमितिविज्ञानेश्वरः) अर्थात् मनु गौतम आदिकी कही इस कर्तव्यताके परस्पर एकसी होने परभी विकल्प समुझाजाता है॰ सो यह विकल्प समुझने वालोंने व्यवस्था निरूपण किये विनाही कहि दियाहै यह समुझिलेना ऐसा विज्ञानेश्वरने कहा कि जिनका निरूपण कियाहुआ मिताक्षरा नाम ग्रन्थहै—अब ऊपरसे वर्णन किये हुये सबका तोड यहां करते हैं कि—इसी उक्त प्रकारसे बारह वर्षकी व्रतचर्या पूरीकरिके ब्रह्महत्यारा शुद्धिको पहुँचे अर्थात् फिर भी पहिलेकी तरह अपने सब धर्म कर्मोंमें लगायाजाय ॥ ० ॥ यह व्यवस्था जोकही गई सो इच्छा विना किसी धोखा आदि औरही कारणसे ब्राह्मण मारडालने मध्य समुझनी क्योंकि=मनुका यहवचन पहिले लिखि चुकेहैं (इयंविशुद्धिरुदिताप्रमाप्या कामतोद्विजम् कामतोब्राह्मणवधेनिष्कृतिर्नविधीयते) कि यह विशुद्धि उसके लिये कहीगईहै जो कामनाके बिना ब्राह्मण मारिके त्यागा हुआहो किन्तु कामना से वध

करने से निस्तार नहीं होता=अथाप्यर्थवादः—इसमें यह सोचना चाहिये कि विना इच्छा मारडारने मध्ये जो विशुद्धि कहीगई तहां क्या दो तीन ब्राह्मणों के मारने में प्रायश्चित्त का (तंत्रत्व) एकीभाव कहिके (आवृत्ति) उसके फेरेभी ठहिराय कि फिर फिर किया जाय० तहां कोई ऐसा मानते हैं कि (ब्रह्महाद्वादशाब्दानि) इसमें ब्रह्मशब्द है सो एक और दो और बहुत भी ब्राह्मणोंपर जाति वाचकता से साधारण आरूढहै तिससे जो एक ब्राह्मणके वधमें प्रायश्चित्तहै वही दूसरे और तीसरे में भी समुझाजाय०तहां एक ब्राह्मणके मारनेनिमित्तसे एक प्रायश्चित्तका अनुष्ठान होनेमें यहकियागया यह नहीं ऐसी तकरारपर यह कहिनेको सामर्थ किसीको नहींहै कि० तरह तरहके देश जुदे जुदे प्रभावोंवाले काल अनेक लक्षणोंवाले हत्याके कर्त्ता लोग नानाभाँति उनके किये कर्मोंकी युक्तियां जिनमें विलक्षण चिह्नोंसे जुदे अनेक दोष फिर इच्छा या विना इच्छासे मारनेका अनुबंध यह उपरालूहै तहां यह विशेष कारण सबसे जुदाहै कि इन सबके जुदे भेदों से निर्णय कियेविना या इस अपेक्षासे कि भेद के विनाही उन सबका विशेष कोई चिह्न हाथ आजाय सो नहीं हाथ आता है तिस कारणसे (तन्त्रानुष्ठानहीसे अर्थात् एकही बार बारहवर्षकी व्रतचर्याकरानेसे पापनाश होजानेवाले कार्य की सिद्धि ठहरानी ठीकहै०तैसा इसपर यह दृष्टांत है कि तंत्र रूपी (अर्थात्दोयातीनोंकेएकहीबार) अनुष्ठानोंसे प्रयाज आदि यज्ञोंके द्वारा अग्नि संबंधी आदि देवताओंमें तंत्ररूपहीसे अनेकोंके उपकारवाले कार्योंकी सिद्धिहोतीहै- और ऐसा न कहिना चाहिये कि दो तीन ब्राह्मणों के वधमें पाप के गरुआपन से गौतमका वचन लेनाहोगा यथाहगौतमः (एनसिगुरुणिगुरूणिलघुनिलघूनि)अर्थात् बड़ेपापमें बड़ेप्रायश्चित्त औरछोटेमें छोटेइसवचनसेद्विवारातिवाराहोजुदेप्रायश्चित्तों का करना ठीक होगा इसहेतुसे कि (विलक्षण) अर्थात्) जिनके लक्षण आपस में एकसे नहीं ऐसे दोकार्योंकी सिद्धि एकसाथही कभी नहींहोती—ऐसा किएजाये न कहिनाचाहिये कि यह गौतमका वचनहीं (आवृत्तिविधायक)फेरे करवानेवाला नहीं अर्थात् दो तीनवार जुदे प्रायश्चित्त करानेकी आज्ञा इसमें नहींहै० किन्तु एक समयपर एकसाथ बैठेहुये बड़े छोटे पापोंकी व्यवस्था दर्शानेवाला ठीकहै और यह भी न कहिना चाहिये कि दूसरा ब्राह्मण मारने से मिलकर पहिले पापमें बड़ापन होसकाहै सो नहीं क्योंकि इसबातका प्रमाण कहीं नहींहै०बल्कि जो मनु और देवलका एकही यहवचनहै (विधेःप्राथमिकादस्माद्द्वितीये द्विगुणंभवेत् तृतीये त्रिगुणं प्रोक्तंचतुर्थेनास्तिनिष्कृतिः) कि इसपहिले अपराधपर कहे विधानसे दूसरेमें दूनाहोय

तीसरेसें तिगुना करनाकहा चौथामारने सें अपराधीका निस्तार किसीप्रकारसे भी न होलो इसनियमका यह तात्पर्य है कि प्रत्येक पापके निमित्तपर पहिलेकी अपेक्षा अगिलेमें प्रायश्चित्तकी आवृत्ति बढ़ती जाय कि जितना प्रायश्चित्त पहिले पापमें कराया गयाहो तिससे दूना उसीपापके दुबाराहोनेमें इसीतरह तिबारामें सबसे प्रथम की अपेक्षा तिगुना करायाजाय॰ यद्यपि एकसाथ एकही प्रायश्चित्तवाला पहिला अर्थ इससे नहीं सिद्धहुआ परन्तु जैसे इसमें नैमित्तिक दूना आदि बढ़तादोहरा तैसा इसीके न्यायसे अर्थात् यही वाक्यभेदका दृष्टांत लेकर दो तीन ब्राह्मण एक साथ भी जो नैमित्तिक शास्त्र का विचार है तिसकी आवृत्ति के अनुवादसे यह निश्चित भया कि चौथा ब्राह्मण मारने मध्ये उस प्रायश्चित्त का न करना आया गया क्योंकि करने से निस्तारनहीं होताहै तथापि यह वचन उसवार्त्ता मध्ये नहीं है कि कालान्तर से दूसरा ब्राह्मण मारनेमें प्रायश्चित्तका अनुष्ठान पहिलेकी अपेक्षा दूना आदि कराया जाय॰ क्योंकि मनु और देवल के उसवाक्य से इसबात में वाक्य भेद रूपी प्रसंगदोष पायाजाताहै तिससे–दोतीन ब्राह्मण मारडारनेमें भी बारहवर्ष आदि कोईसा प्रायश्चित्त एकहीबार कियाजाय यही उसक्रममें आताहै क्योंकि (यहांएक मीमांसाका दृष्टांतहै कि) जैसे अष्टाकपाल होमहै जो आठ मट्टीके खपरोंमें चरुधरि के होमहोताहै इसकामनासे कि मेरे सब घरोंमें कभी आगि न लगै उसमें यह नियम नहींहै कि अनेक घरोंके जलिजानेके निमित्त उतने जुदे होम किये जायँ किन्तु एक साथ अनेकघर जलने मध्ये एकहीबार अनुष्ठान कियाजाता है ऐसे कामवती आदि और भी अनेकयज्ञहैं जो इसीप्रकार एकजातिके अनेक निमित्तोंपर एकहीबारकिये जातेहैं–तथाच मिताक्षरा(यथा–अग्नयेकामवतेपुरोडाशमष्टाकपालंनिर्वपेत–इत्यादि गृहदाहादिनिमित्तेषुचोदितानांकामवत्यादीनांयुगपदनेकेष्वपि गृहदाहादिनिमित्तेषु सकृदेवानुष्ठानं) तैसे यहां भी दो तीन हत्याका प्रायश्चित्त एकहीबार किया जाय= समाधान– इसकानिर्णय सुनो–वचनके विरोधमें न्यायनहीं सिद्धहोताहै और वचन जो मनु और देवलका लिखा गया वह दो तीन ब्राह्मणोंके मारने में प्रायश्चित्त के अनुष्ठानकीआवृत्ति बढाने परही आरूढहै परऐसा होनेमें न्यायलभ्य जो(तंत्रानुष्ठान) एककाल व्रतचर्याका करना तिसमें रोकाहुआ आवृत्तिका विशेष करनेवाला न्याय होजाहै और इसमें अन्यथा शास्त्रोंकी पहुंच का अनुवाद खडाकरने से अनर्थक लक्षण होजाने सकताहै और वाक्यभेदका चर्चा जो चलाया सोकुछ वाक्यभेदभी नहीं है क्योंकि मनुदेवलके इस वचन में चौथे ब्राह्मणको आदिलेकर जो बहुत मारेजायँ

तिसवधका चर्चाछोडिकर जहाँ दोहोतीन मारेजायँ तिनका दूनातिगुना आवृत्तरूपो प्रायश्चित्तका विधानहै(क्योंकि चौथेको आदिलेकर चौगुना पचगुना छोगुनाआदि होसकनेकी प्राप्तिसे भी बाहरहै) तिससे वचनोंमें एकहीअर्थ समझने योग्य तात्पर्यहै कुछ भेद नहींहै अर्थात् (चतुर्थेनास्तिनिष्कृतिः) चौथेके मारनेमें प्रायश्चित्त से उद्धार नहींहोता इस कथनसे पांचवां छठा आदि सब समझेजाते हैं कि बहुतों के मारने में दोष बहुत बड़ाहै जो प्रायश्चित्त से नहीं मेटाजासक्ता है यही आशय देवल आदि ऋषियोंके इसवचनसे भी ठीकहै कि (यत्स्यादनभिसंधायपापंकर्मसकृत्कृतम् तस्ये यंनिष्कृतिर्दृष्टाधर्मविद्भिर्मनीषिभिः) जो पाप एकबार कियाहो और बिना कामनाके इच्छारहित होगयाहो तिसका यह प्रायश्चित्तरूपी निस्तार बहुतसेधर्मज्ञ बुद्धिमानों ने निर्णय किया और प्रायशलोक में ऐसाही वर्ताव देखा- और बिलक्षण दोष जिनके परस्पर लक्षण एकसे नहों और बड़े छोटेहों तिनका क्षयहेतु प्रायश्चित्त एक साथ नहीं सिद्ध किया जाता है-इन सब कारणोंसे इस प्रकारके अपराधों में दोष के बड़ा पनसे और कार्य्यों के बिलक्षण भावसे भी प्रत्येक पापके निमित्त पर जुदे जुदे प्रायश्चित्तकी फेरी होनी ठीकहै-औरक्षामवती आदि विधान जिनका स्वरूप और प्रयोजन दोसौ सत्तरह २१७की अधिकोक्तिमें कहिचुके कि एकही बारकरनेसे अनेक पाप क्षय होतेहैं,तिनमेंभीउनअनेक कार्य्योंकी बिलक्षणताके बिनाही एकसाथविधान होनायोग्यहै कि जब एकही लक्षणवाले अनेक पाप हों(इसका भी दृष्टाँत जैसे पंच यज्ञोंके त्यागरूपीपापके निमित्तपर क्षामवती आदि नैमित्तिक विधान करना चाहा तहां यद्यपि पांचयज्ञोंके स्वरूप सबजुदे जुदेपांच होतेहैं तथापि लक्षणसबका एकही माना जायगा क्योंकि वे सभी नित्यकर्म कहातेहैं) यहचर्चायहां प्रसंग मानके किया गया=और जोवचनऊपरीलिखचुके,चतुर्थेनास्तिनिष्कृतिः)चौथामारडारनेमेंनिष्कृति नहींहोतीहै सोयह महापातकोंके विषयपरआरूढहै क्योंकिपापकेअतिबड़ायनसे प्रायश्चित्तका अभाव इसमें कहागया तिससे-और इसीसे शूद्रका अन्नखाना आदि छोटे पापोंमें चौथीबारसेभी अधिकबहुतबारके अभ्यासकरनेपरभी उसकेअनुरूपप्रायश्चित्त की पुनः पुनः (आवृत्ति) फेरी से कल्पना होनी चाहिये किंतु प्रायश्चित्तका अभाव इनमें न चाहिये ॥ ८ ॥ बारह वर्षका व्रत वर्णन किया सो यह मुख्य मारनेवाले के निमितमें कहा गया क्योंकि ब्रह्महा नाम उसीका कहिचुके हैं-अर्थात् अनुग्राहक प्रयोजक आदि हत्यारे के सहायक जो दोसौ सत्ताइस २२७ वाली अधिकोक्ति के प्रारंभ में दर्शाएगये तिनका जैसा दोषहो या जितनी सहायता हत्यारे को मिली हो

तिसके अनुसार उनके प्रायश्चित्तोंकी वडाई छोटाई कल्पित करनी चाहिये अथवा जहां सहायता की विशेष तौल नाप न होसके तहां यह सामान्य एक नियम है सो लेना चाहिये कि अनुग्राहक पुरुष हत्यारेके प्रायश्चित्तसे चौथाई कम करै तिससे जहां हत्यारेको बारहवर्ष नियतहो तहां उसको नौवर्ष की व्रतचर्या करनी चाहिये और प्रयोजक पुरुष हत्यारेसे आधा कमकरै तिससे उसके बारह वर्षके नियम साथ छैवर्षकी व्रतचर्या करनी चाहिये और अनुमन्ता पुरुष को अढाई पाद कम करके डेढपाद करना चाहिये तिससे उसको बारह वर्षके स्थलपर४॥ साढेचार वर्षकी व्रत चर्या करवाई जाय और निमित्ती पुरुष हत्यारेसे चौथाई तीनवर्ष की व्रतचर्याकरै= अतएवसुमन्तुः—तिरस्कृतोयदाविप्रोहत्वाऽऽत्मानंमृतोयदि निर्गुणःसाहसात्क्रोधाद्गृहक्षेत्रादिकारणात् त्रैवार्षिकंव्रतंकुर्यात्प्रतिलोमांसरस्वतीम् गच्छेद्वापिविशुद्ध्यर्थंतत्पापस्येतिनिश्चितम्=अत्यर्थंनिर्गुणोविप्रोह्यत्यर्थंनिर्गुणोपरि क्रोधाद्व्रियतेयस्तु निर्निमित्तंतुभर्त्सितः वत्सरत्रितयंकुर्यान्नरःकृच्छ्रं विशुद्धये(गुणवद्वाह्मणास्तु वर्षमात्रेणैव शुद्ध्यति तदपिसुमंतुः) केशश्मश्रुनखादीनां कृत्वातुवपनंवने ब्रह्मचर्यंचरन्विप्रोवर्षेणैकेनशुद्ध्यति=अर्थात—सुमंतुने निमित्तीके भी कई भेद कियेहैं कि—जब कोई गुणवान् ब्राह्मण अपमान किया हुआ देहको विनाशै के जिसके निमित्तसे मरजाय या निर्गुण ब्राह्मण घर खेत आदि छिन जानेसे साहस करि क्रोधसे जिस किसी के निमित्त पर मरजाय सो निमित्ती पुरुष तीन वर्ष का व्रत करै या इस पापकी शुद्धिके लिये सरस्वती नदीकी धारके सन्मुख उतने वर्ष यात्रा करै यह निश्चित हुआ=यद्वा=अतीव निर्गुण ब्राह्मण हो सो अत्यन्त निर्गुणी किसी मनुष्यके ऊपर क्रोधसे मरजाय जो घर खेत आदि किसी झगड़े वाले निमित्त के विनाही घुडकी ताडना आदिसे सताया वा लज्जित किया गया तो जिसके ऊपर यह मरजाय सो पुरुष अपने पापकी शुद्धिके लिये तीनवर्षतक कृच्छ्नामक व्रतकरै तो शुद्धहोय(कदाचितगुणवान्ब्राह्मणके ऊपर किसी निमित्तसे निर्गुण ब्राह्मणअपघात करै तौनिमित्ती गुणवानब्राह्मण एकहीवर्षमें ब्रह्महत्या का व्रत करिके शुद्ध होजाता है यह भेदभी सुमंतुने कहाकि) विद्वान् क्रियावाह विप्र एकवर्षमे पवित्र होताहै बाल दाढी मूछ नख आदिका मुंडन करायके वनमें ब्रह्मचर्य से आचरण करतेहुये॥०॥ जैसा यह अनुग्राहक प्रयोजक आदिकों का क्रम कहागया इसी मार्गमे यथायोग्य उनकी भी प्रायश्चित्त कल्पना करनी चाहिये जोकि इन प्रधान अनुग्राहक प्रयोजक आदिके साथी अनुग्राहक प्रयोजक आदिकहैं•इस व्यवस्थाका मूल यही आपस्तंबका वचन है जो२२७वोंमो

सत्ताइस की अधिकोक्ति में व्यौरेवार अर्थोंसे लिखचुके केवल मूलमात्र यहांफिर भी लिखे देतेहैं कि (प्रयोजयिताऽनुमंताकर्ताचेति स्वर्गनरकफलेषुकर्मसुभागिनो यो भूयआरभतेतस्मिन्फलविशेषः) ॥ ० ॥ तथैव प्रोत्साहक उत्साह दिलाने वाले आदि कुछ औरभी अपराधी होते हैं तिनको भी दंड और प्रायश्चित्त दोनों विधि कल्पना करनी चाहिये=तदाह पैठीनसिः=हंतामंतोपदेष्टाच तथासंप्रतिपादकः प्रोत्साहकःस-हायश्चतथमार्गानुदेशकः आश्रयःशस्त्रदाताचभक्तदाताविकर्मिणाम उपेक्षकःशक्तिमां श्चदोषवक्ताऽनुमोदकः अकार्यकारिणास्तेषांप्रायश्चित्तंप्रकल्पयेत यथाशक्त्यनुरूपं चदण्डंचैषांप्रकल्पयेत=अर्थात—हंता•मंता•उपदेष्टा•संप्रतिपादक(औरकुकर्मियोंका) प्रोत्साहक• सहायक•मार्गानुदेशक• आश्रयदाता• शस्त्रदाता•भक्तदाता• उपेक्षक जो शक्तिमान हो• दोषवक्ता•अनुमोदक• ये सब अकार्य कारी होते हैं तिनका जुदाजुदा प्रायश्चित्त निरूपण करे और उनकी यथाशक्तिके अनुरूप तथा कर्मोंकी गुरुता लघुता के अनुरूप उनको दण्ड भी निरूपण करै=यहां=पैठीनसि के बताये अपरा-धियोंकी जो नाम संज्ञा लिखीगई तिसके अर्थ समझने चाहिये कि—सबसे प्रधान हंता मारनेवाला ठहिरता है—और मंता अनुमंता कोभी कहिते हैं कि जिसके दो भेद पहिले २२७ दोसौ सत्ताइस की अधिकोक्ति में लिखचुके तथापि अर्थांतर से इसमें कुछ विशेषता है कि वह अनुमंता प्रवृत्त हुये को प्रवृत्ति करता है सोभी अपने या परायेमतलबकेलिये किंतु यह मंतापुरुष विना प्रवृत्तकोभी प्रवृत्त करताहै सोभी उप-मासे किजिस में न अपना मतलब न अपने किसीमित्रकाहो(इसका यहदृष्टांतहै किदो एकदुर्जनोंने आकर ऐसाकहाकि आपकेसमीपही अमुक देवदत्तका निवासहै हमलोग उसके साथ ऐसा उपद्रव किया चाहतेहैं जोआप इसमें दखल देकर हरज नकरें अर्थात् निपट कुछ दखल न करैं बल्कि गुलगपाडा के होनेपरभी चुपचाप होके अजानबनि जायँ तो हमारा यह काम अच्छा बनिजाय इसऐसी प्रार्थना को जिसने मानलिया वही मंता माननेवाला कहाया सो अनुमंता से कुछ विशेष अपराधी जानो क्योंकि धर्म मर्यादा के अनुसार इसको यह चाहिये था कि प्रार्थनाकरने वालोंको निषेधक-रता और साफ कहिदेता कि मैं ऐसे अनर्थ को नहीं मानि सक्ता बल्कि उनकोकिसी प्रकार भय दिखाकर हिम्मति तोड देता और समर्थों के सन्मुख उसका प्रकाशभी करदेता कि ऐसा उपद्रव मेरे समीप न होने पावै तो कदापि न होसक्ता)—उपदेष्टाके लक्षण २२७ की अधिकोक्ति में लिखचुके हैं कि वह तीनि भांति के प्रयोजकों में एक उपाय का उपदेश बताने वाला होता है—संप्रतिपादक उसका नामहै जो मारने

वाले के जरूरी उपाय सामग्री आदिका अवसर ठौर ठिकाना तैयार करै जैसे जहरमि-ली मिठाई बनाकर लादेना या जिसको मारना चाहते हैं तिसको किसी बहाने से बु-लाकर मौजूद करदेना आदि सिद्धि के अनेक ढंग होते हैं—प्रोत्साहक तर्गीबदेनेवाला कहाता जो हता को अतिशय उत्साह दिलाकर बुरा करने पर उतारू करै इसको प्रयोजिता भी कहितेहैं—सहायक जो साथ रहिकर सहायता करै इसीको २२७वा-ली अधिकोक्तिमें अनुग्राहक इस नामसे लिखचुके हैं ठीक ब्यौरा उसी जगह देखो—मार्गानुदेशक जो मारने वा तों को साथलेकर मार्ग बतावै अर्थात जिसको लूटा मारा चाहते हैं तिसके ठिकाने तक पहुँचावै—आश्रयदाता जो घातियों को उनकी घात ठीक लगने के लिये अपने पास टिकावै—शस्त्रदाता जो तलवार छुरी या फांसी जहर आदि मौत के औजार घातियों को देवै—भक्तदाता जो विकर्मियां घातियों को भो-जन देकर उनको मजबूत करै—उपेक्षक जो आप शक्तिमान बलवानहोकर ठीकअव-सरपर पुकार सुनिके उपेक्षा करके चुपकारहिजाय उद्रवहोते देखै वाचुनैं परवावा करिके दुष्टों को मारै भगावै नहीं—दोषवक्ता जो घातियों को भेदबतावैकि जिस को मारना चाहते हो वह अमुक समयअमुक ठिकानेबैठताहै तहां अमुकहोशियारी आदिदोषके प्रभावसे तुम्हारा काबू न चलैगारातिको या दिनमें अमुकठिकानेवहनशा पीके सोताहै तभी तुम्हारा कार्य बनैगा इत्यादि याइसरीति से दोषों को सुनावै कि उसके बेटा या भाई से इन दिनों पूरा वैरहै जो तुम उनको अपनी राहमें मिलालो तो बड़ी सुगमता से कार्य बनि सक्ताहै इत्यादिकोऐसा दोषभेद बतावै सो दोषवक्ताहोता है—अनुमोदक जो घाती का अनुमोदन इस प्रकार से करै कि जो काम तुमने करना विचारा वह मैंने भी पसंद किया अवश्यकरो—ये सभीविकर्मी अकाजकरनेवालेहोतेहैं यथा योग्य सबके लियेदण्ड और प्रायश्चित्तका निरूपण करैयहपैठीनसि का कथन है॥०॥ इन्हीं पूर्वोक्त नियमोंके अनुसार जहां बालक बूढे आदि अपराधी यदि सा-क्षात्कार आपही कर्ता बने हों तौभी उनको सूचित प्रायश्चित्त से आधा करने की आज्ञा देनी चाहिये=तदाहांगिरा:=अशीतिर्यस्यवर्षाणि बालोवाप्यूनषोडशः प्राय श्चित्तार्द्धमर्हन्ति स्त्रियोरोगिणएवच=तथा२अन्यत्रवचनांतरन्तु=तथा२वालिद्वादशादर्वागी ...स्त्रियस्तथा अर्द्धमेवभवेत्पुंसां तुरीयंतद्योषितास्=अर्थात—अंगिरा ने कहा है कि जिसकी अवस्था अस्सीवर्ष पूरी होचुकी सो बूढा समझना और बालक सोरहवर्षमें ... जिसको समझना बहा विकल्पमें बारह वर्षके भीतर भी बाल अवस्था होती ... ये लोग आधा प्रायश्चित्त करने के योग्यहैं और स्त्रियां जो पूरी अवस्था की हों

बालक बूढ़ी नहीं सोभी अर्ध प्रायश्चित्तके योग्यहैं तथैव रोगी पुरुष भी बूढ़ेके समान आधा करने के अधिकारी होतेहैं=ऐसाही दूसरा यह वचन है कि–तहत बारह वर्षके भीतर और अस्सी वर्षसे ऊपरभी पुरुषोंको आधा प्रायश्चित्तहोय तहां स्त्रियों को चौथाई करवाया जाय क्योंकि पहिले वचनमें स्त्रीपनसे आधा कहाथा अब यहां उनके वृद्धापन और बालपनसे आधेका आधा रहिगया (बालकपनके दोभेद इस हेतु से कहेगए कि सोरह वर्ष पूरे होनेपर गृहस्थी के व्यवहारभार सौंपे जातेहैं तबसे पूरा पुरुष गिनाजाता है सोरहके भीतर बाल अवस्था मानी जातीहै क्योंकि संसारी व्यवहारोंकी निपुणता नहीं आतीहै•परन्तु बिरला सोरहके भीतर भी डीलडौल और बुद्धि की चतुरतासे अति निपुण होजाता और व्यापार आदिके धंधे साधन करता है तिससे ऐसा सोरहके भीतरभी पूरे प्रायश्चित्तके योग्य माना जासक्ताहै तिससे यह बारहवर्ष के भीतर बालक मानाजाता है और बारहके भीतरही आधे प्रायश्चित्तकी योग्यता इसको रहिती है किन्तु बारहवर्ष पूरे होनेसे ऊपर यह पूरे प्रायश्चित्तका भागीहोता है)=और भी यह भेदहै कि=बारहवर्ष के पहिले जिसका उपनयन कर्म जनेऊ आदि न हुआहो तिसके लिये आधेका आधा सिर्फ चौथाई व्रतचर्या प्रायश्चित्त की चाहिये=तदाह विष्णुः=स्त्रीणामर्धंप्रदातव्यं वृद्धानांरोगिणांतथा पादोबालेषुदातव्यःसर्वपापेष्वयंविधिः=अर्थात्–निरोगिनि पूरी स्त्रियों को आधा प्रायश्चित्त देना कहा तथा बूढ़े पुरुष औ रोगी पुरुषों को आधा कहा बालकों को चौथाई देना चाहिये सभी पापोंमें यह विधि जानो (यहां चौथाईकी अपेक्षामें बालक उन्हींको समुझना जिनका संस्कार न हुआहो क्योंकि पहिले वचनों में आधा देना कहि चुके हैं तहां उपनीत बालक समुझना होगा) इस प्रश्नकी अपेक्षामें कि अज्ञान बालकोंसे क्योंकर प्रायश्चित्तकी साधना होगी यह उत्तरहै कि अगिला वचन देखो=यदाहशंखः=ऊनैकादशवर्षस्यपंचवर्षात्परस्यच प्रायश्चित्तंचरेद्भ्राता पितावाऽन्यःसुहृज्जनः (इत्येवं प्रतिपाद्यपश्चादुक्तंच) अतोबालतरस्यास्य नापराधोनपातकम् राजदण्डोनतस्यास्ति प्रायश्चित्तंनविद्यते इति (तदपि स्वस्पर्शप्रायश्चित्ताभाव प्रतिपादनपरं न पुनः सर्वस्मिन्न तदभाव प्रतिपादनपरं इति मिताक्षराकारः) अर्थात्–शंखने कहाहै कि पांच वर्षसे ऊपरका बालक जो ग्यारह वर्षके भीतर अवस्थामें हो तिसके किसी अपराध के होनेसे प्रायश्चित्त उसका भाई वा पिता या कोई और हितूहो सो करै (यहकहि कर पीछे यह भी कहा कि) अतः इस पांच वर्षसे भी नीचे अति बालक जो कोईसा पापकरै तौ उसका न अपराध कोई जुर्महै न पातक (उसको जातिसे गिराना) है न

उसके लिये राजदंड है न प्रायश्चित्त है (इसपर मिताक्षराकारने यह भी लिखाहै कि यह नकारोंवाला शंखका वचन है सो भी संपूर्ण प्रायश्चित्तका अभाव दर्शानेवाला नेशक है परन्तु यह नहीं कि बिल्कुलही प्रायश्चित्त न कियाजाय क्योंकि) शास्त्र में एक यह वचन है कि ब्राह्मण कहीं न माराजाय जहां मारेजाने के समय पुकार हो उसको सुनि कर भी सबलोग दौड़िके बचावैं किन्तु जहाँतक पुकार की आवाज पहुँचतीहो उस टप्पेके भीतर जे कोई कहीं मौजूदहों यह उजर नहीं कर सक्ते हैं कि हम इतनी दूरथे या हम अमुक आश्रम संन्यासी आदि कोई थे हमको कुछ सम्बन्ध न था•दूसरा यह वचनहै कि तिससे ब्राह्मण क्षत्री और वैश्य भी सुरा न पीवैं इत्यादि ऐसे और भी वचनहैं इनमें अवस्था की विशेषता लिये बिनाही जातिमात्रके अधिकार प्रकट किये हैं तिससे उस पांचवर्षसे नीची अवस्थाके अपराधी बालोंके बदले प्रायश्चित्त उनके पिता भ्राता आदि को करना चाहिये कि जिससे पापों के द्वारा उनका प्रारब्ध न बिगड़ने पावै (किन्तु पिता या भ्राताको अपराधी का प्रतिनिधि होना कहा तिसका यह कारण है•वेद और धर्मशास्त्र में पिता का अधिकार है कि पुत्रोंको जन्म देकर पाले फिर संस्कार करै वेद विद्यामें चतुर बनावै और सदाकेलिये उनकी जीविका वृत्ति भी कायम करदेवै•जहां पिता नहो तहाँ जेठे भाईको यह सब करनेका अधिकार होता है क्योंकि पिताके पदपर जेठा पुत्र स्थापित होता है•जहां जेठा भाईभी न हो तहाँ बालकों की रक्षाके अधिकारी उनके कुटुंब या नाते रिश्तेके लोग रक्षक होतेहैं कि जिनको तन धन आदि सर्वथा रक्षा करनेका अधिकार न्याय मार्गसे पहुँचता हो) जहांपर प्रायश्चित्तों का सन्निपात आनि परै तहाँ का निर्वाह आगे लिखते हैं ॥८॥ सन्निपातका यह उदाहरण है कि जैसे किसी पुरुषने एकजगह एक ब्राह्मण मारा तिसका पूरा प्रायश्चित्त उसको लगा और दूसरीजगह वही अपराधी किसी ब्रह्मघाती का प्रयोजक आदि सहायक बना तिस अपराधका पूराप्रायश्चित्त नहींहै अर्थात आधा तिहाई चौथाई जो कुछ विचार से उसके जिम्मे ठहिरै सो ऊना प्रायश्चित्त भी करना चाहिये तौ यह बड़े छोटे प्रायश्चित्तों का सन्निपात कहाता है तहाँ बारह वर्ष आदि का जो बड़ा प्रायश्चित्त है तिसके बीच आइ परने वाला प्रयोजयित्व आदिसे सहायता संबन्धी जो छोटा प्रायश्चित्तहो सो बिनाकिये भी प्रसंग नामक मर्यादासे कियेके समान माना जाता है अर्थात एकही अनुष्ठान से दोनों कार्यकी सिद्धि होजाती है (धर्मशास्त्रमें प्रसंगमर्यादा इसीका नामहै कि एक प्रधान कार्य करनेसे उसका प्रासंगिक भी दूसरे पुरुषका सम्बन्धी कार्य बिना किये

भी सिद्ध हुआ माना जाय) परन्तु इससे यह शंका न करनी चाहिये कि जब यही निर्वाह की मर्यादा ठहिरी तो इसके प्रभाव से सामान्य विशेष के समुझे बिना भी छोटे कल्पका अनुष्ठान करनेसे बड़ेभी प्रायश्चित्तकी सिद्धि बिना किये होजायाकरै॰ क्योंकि इसी शंका की अपेक्षा से इस निर्वाह के और भी तात्पर्य पाए जाते हैं कि प्रथम तो जहाँ देशकाल दोनोंके कुछ अन्तरसे बड़े छोटे दो प्रायश्चित्त लगेहोंगे तहाँ दोनोंही भिन्न भिन्न अनुष्ठान कराए जायँगे तिससे यह निर्वाह की मर्यादा केवल उसी जगहपर समुझनी चाहिये कि जहां एक साथही दोप्रायश्चित्त किसी पर आरूढ हुयेहों अर्थात् अति स्वल्पकालके बीचमें कुछ आगे पीछे आरूढ हुयेहों तहाँभी उन के निर्वाहका विचार आगे पीछे लगने के अनुसार नहीं किया जासक्ता है कि जो पहिले छोटा लगाहो तो पिछला बड़ा भी उसके करनेसे सिद्धहुआ मानाजाय किन्तु यही नियम सिद्ध होताहै कि बड़े प्रायश्चित्तके करनेसे छोटा प्रायश्चित्त प्रसंगमात्र ने सिद्धहुआ माना जायगा चाहैं कोईसा पहिले या कोईसा पीछे उत्पन्न हुआहो कुछ इसपर नियम नहीं है—और—यह भी तर्क न करनी चाहिये कि चैत्रके वध करने से उपजे पापके विनाशको अनुष्ठान किये हुये से कैसे उस पापकी निवृत्ति होगी जो विष्णुमित्रका मरवाना चाहने से उत्पन्नहो—क्योंकि चैत्र आदिकी अपेक्षा यहांनहीं है—इससे यह समुझना चाहिये कि जैसे कामनाके नियोगोंकी सिद्धि के लिये और स्वर्ग प्राप्त होनेके लिये भी अनुष्ठान किये आग्नेय आदि कर्मों से नित्य नियोग भी सिद्ध होजातेहैं तैसे यहां भी बड़े प्रायश्चित्तमें छोटे प्रायश्चित्तका करना सिद्धहोता है॥ अब इससे आगे दो एक पंचायती व्यवस्था कही जायँगी क्योंकि यहां तक तो मनु याज्ञवल्क्य आदिके वचनों में विरोध कुछ नहीं था परन्तु अंगिरा आदि कुछऋ-षीश्वरों के ऐसे वचन आगे आवैंगे कि जिनसे परस्परभी कुछ विरोध देखने में आता है और अबतक जो व्यवस्था सिद्ध होचुकी तिससेभी निराला मार्ग उनका प्रतीतहोता है उन सबको इसी॰व्यवस्थाके अनुकूल सिद्ध करनेकेलिये सब ऋषियोंकी पंचायती तोड मरोडसे व्यवस्था कही जायगी कि जिससे सबकी रियाअत कुछ कुछ बनी रहै॥०॥पंचायती अनुकल्प—ये अनुकल्प उनके लिये कहे जायँगे कि जो कोई प्रायश्चित्त की साधना में असमर्थ हों परंच धनसे कुछ संपन्न हों—तहाँ—एक अंगिरा का वचन है (गवांसहस्रंविधिवत्पात्रेभ्यःप्रतिपादयेत् ब्रह्महाविप्रमुच्येतसर्वपापेभ्य एवच) अर्थात्—एक सहस्र गौएँ जुदे योग्यपात्रों को विधि से समर्पण करै तो ब्रह्म घाती ब्रह्महत्या से और सबतरह के पापों से छूटि जाय—सो यह सहस्र गौओं का

दान उस दशापर आरूढ है कि जहां गुणवान् ब्राह्मण यज्ञमें बैठा हुआ माराजाय जैसा२५२ दोसौ बावन श्लोकमें योगीश्वर कहेंगे (निर्गुणंसवनस्थेतुब्राह्मणेव्रतमादि शेत) कि बारह वर्ष से दूना चौबीस वर्षका व्रत उसको आदेश करै जिसने यज्ञस्थ ब्राह्मण माराहोय) तहां जो चौबीस वर्षकी व्रतचर्या करसकनेमें असमर्थहो तिसको पूर्वोक्त हजार गऊका दानकरना सूचित हुआ है क्योंकि वह प्रायश्चित्त बहुतबडा है—अन्यथा जहां सिर्फ बारह वर्ष का व्रतप्रारंभ किये पीछे कभी पूरा करनेमे असमर्थ पाई जाय तहां सहस्र गऊदान करना नहीं सूचित है क्योंकि उसके लिये केवल ३६० तीनसौ साठि गोदान की योग्यता पाई जाती है क्योंकि वहां बारहवर्ष की व्रतचर्या में बारह बारह दिनके अनुष्ठान वाले अनेक प्राजापत्योंके फल सिद्ध होतेहैं तिनकी सब गिनती जोडनेसे ३६०तीनसौ साठि प्राजापत्यहोते हैं तिनकी साधनाअशक्ति से न होसकने से तीनसौ साठि गऊदानकी योग्यता पाई जातीहै (प्राजापत्य क्रियाऽशक्तौधेनुंदद्याद्विचक्षणः गवामभावेदातव्यंतन्मूल्यंवानसंशयः) यह भी एक नियम है कि जिसको किसी हेतुने प्राजापत्य करनेकी आवश्यकता टहिगेहो और वह करने में अशक्त हो तहां विवेकी पुरुष दूध और बच्छा सहित गऊदान करै तौ प्राजापत्य करने का फल पावे जो गऊ ना मौजूद हों तौ निःसंदेह उनका मूल्य देना चाहिये—इस न्याय के अनुसार जो प्रत्येक प्राजापत्यके बदले एक गोदान कियाजा तौ तीनसौ साठि प्राजापत्यों के प्रतिनिधान तीनसौसाठि गऊ चाहिये पर एक हजार गऊ देना इसमें नहीं चाहिये क्योंकि न्याय वही कहाताहै जो जिसके योग्यकाम या वस्तु हो उसीसे योग उसका किया जाय (यह तर्कना इसमें शेष रहीकिप्राजापत्य के विधान में इतना विशेष नियम है कि बारह दिन में पूरा करिके पीछेतीन दिन उपवास भी होता है और यहां जो न्याय अभी लिखचुके तिसमें बारह वर्षके सभी दिन हिसाब में जोड़े गये उपवासों के निमित्त से तीनि वर्ष और चाहिये तब तीनसौ साठि प्राजापत्य पूरेहों सो किसलिये अबरे गिनती किये गये० इसका यह समाधान है

समझ लेना उचित है=यथाह शंखः=पूर्ववदमतिपूर्वंचतुर्षु वर्णेषुविप्रंप्रमाप्य द्वादश वत्सरान् षट्त्रीन्सार्धसंवत्सरंचव्रतान्यादिशेत्तेषामन्ते गोसहस्रं तदर्धंतस्यार्धं तदर्धंद द्यात्सर्वेषांवर्णानां मानुपूर्व्येणेति=अर्थात्—पहिले नियम के समान अज्ञानतासेहो-गये पापों मध्ये चारों वर्णोंमें समझना कि ब्राह्मण को मारिके बारह वर्ष क्षत्री को मारिके छः वर्ष वैश्य को मारिके तीन वर्ष शूद्रको मारिके डेढ़वर्षकेव्रत आदेश करै तिनकेसमाप्त होनेके अंतमें उसीवर्ण क्रमसे हजार गऊतिसकी आधी पांचसौ तिसकी आधी अढ़ाई सौ तिसकीआधी सवाउसौ गऊदान करै•सो यह व्रत और गोदानदोनौ कर्मकी आज्ञाआचार्य कुलप्रधान आदि उत्तमपुरुषोंको मारनेमध्ये समझनीक्योंकि दो बात मिलके बहुत बडा कर्म ठहिरा तिससे उत्तम पुरुषों का विषय समझना—इस वचन में जो प्रायश्चित्त के बड़प्पन से उत्तम पुरुष के मारने मध्ये पापका वड़ा पन प्रकटकियागयातिसके प्रमाणकी अपेक्षापरदान और हिंसाका फलपुरुषहीकी उत्तमता से दक्षनेभी दर्शाया है तिसको यहां लिखते हैं=यथाह दक्षः=सममब्राह्मणे दानंद्विगुणंब्राह्मणब्रुवे आचार्येशतसाहस्रंसोदर्येदत्तमक्षयम—समंद्विगुणंसाहस्रमानं त्यंचयथाक्रमम् दानेफलविशेषःस्याद्धिंसायांतद्वदेवहि=अर्थात्—दक्षने कहाहै कि अब्राह्मणको देनेसे समानफल और ब्राह्मणब्रुव को देनेसे दूनाफल और आचार्य ब्राह्मणको देनेसे सैकरों हजारफल होतेहैं और सहोदर भाईको देनेमें अक्षयफलअर्थात् जिसका अंतनहीं होता ऐसा वडा फल मिलता है इसी वचनकी व्याख्या आगे अर्थांतर से फिर होगी क्योंकि दो अर्थ इसमें होते हैं) समान और दूना और हजारों और अनंत ये चारों भाँतिके फल यथा क्रमसे दानमें विशेषता रखते हैं तैसेही यथा क्रमसे हिंसा करने में भी विशेषता रखते हैं कि जैसे उत्तमको मारा होगा तैसा अधिक पाप होगा उसीके अनुकूल प्रायश्चित्त भी अधिक ठहिराया जाताहै (इस वचनमें अब्राह्मण और ब्राह्मणब्रुव जो कहेगये•तहां छः भांतिके अब्राह्मण कहाते हैं=तदाह शातातपः=अब्राह्मणास्तुषट्प्रोक्ता ऋषिणातत्त्ववेदिना अद्योराजभृतस्तेषां द्वितीयःक्रयविक्रयी तृतीयोवहुयाज्यःस्याच्चतुर्थोग्रामयाजकः पंचमस्तुभृतस्तेषांग्रामस्यनगरस्यच अनादित्यांतुयःपूर्वांसादित्यांचैवपश्चिमाम नोपासीतद्विजःसंध्यांसषष्ठो ऽब्राह्मणःस्मृतः=अर्थात्—तत्त्व जानने वाले ऋषियों ने छः अब्राह्मण कहे तिनमें पहिला तौ राज का पलाऊ भृतक दूसरा क्रय विक्रय करने वाला तीसरा बहु याजक जो बहुत से जनहों से पावाई करै चौथा ग्रामयाजक जो गावँमें सब जातियों को पुरोहिताई राखै पांचवां जोग्राम या नगरमें मजूरीकरै छठा वहकि यद्यपि इनकामों

को नकरताहो परन्तु सांझ सवेरे संध्या कर्मकी उपासना न रखताहो येबहुब्राह्मणाकहातेहैं और ब्राह्मण ब्रुव उसका नाम है जो ब्राह्मशास्त्र के संस्कार चिह्न आदि सब रखता हो तथापि नित्य नैमित्तिक धर्मोंका आचार नकरताहो और आचार्य अनेक तरहके होते हैं जैसे मंत्रोंकी व्याख्या सहित श्रुति स्मृति का पढाने वाला अथवा किसी उत्तम संप्रदाय का आचारी जो अन्यलोगों को भी आचार के मार्ग पर चलावै इत्यादि=औरभी=आपस्तंबने बारह वर्ष की व्रतचर्या सामान्य कहिकर पीछे एक विशेष वचन कहाहै=यथा=अस्मिन्नेवविषये॰ गुरुंहत्वा श्रोत्रियंवा एतदेव व्रतमुत्तमादुच्छ्वासाचरेत (तत्र यावज्जीवमावर्त्यमानेव्रते यदा त्रैगुण्यं चातुर्गुण्यं वा सम्भाव्यते तदा तत्रासमर्थस्य बहुधनस्यायं दान तपसोः समुच्चयो द्रष्टव्य इति मिताक्षराकारः) अर्थात—आपस्तंब ने यह कहा कि इसी बारहवर्ष की अपेक्षा में गुरुको मारि के या श्रोत्रिय को मारिके यही पहिले दर्शाया हुआ व्रत उत्तम श्वासापर्यन्त आचरे अर्थात जब तक जीवन की श्वासा बनी रहे तब तक करे केवल बारहवर्ष से प्रयोजन नहीं है परंतु एतदेव यही व्रत बारह वर्ष वाला जो इशारा किया तिससे बारहवर्षों काभी तात्पर्य समझलेना चाहिये॰इसी गूढहेतुसे मिताक्षराकार ने व्यवस्था इसपरलिखीहै कि(तहां जबतक जीवे तब तक बारह बारह वर्षों की कई आवृत्तियां करतेहुये आयुको बितावे इसी हिसाब के अनुसार जहां ऐसा संभव देखि परै कि प्रायश्चित्ती की अवस्था इतनी शेष है तिसमें दो या तीन या चार आवृत्तिहोसकैंगी इसकादृष्टांत जैसे अनुमानहै कि छत्तीसवर्ष अभीजीवैगा तो बारह तिया छत्तीस इसमें तीन आवृत्ति होसकैंगी तहां प्रायश्चित्ती एकही दो आवृत्ति पूरी करिके असमर्थ होजाय और बहुत धनवानहो तिसके लिये यह दान और तपस्या दोनों का समुच्चय समझना चाहिये कि एक दो आवृत्ति जो करिगुजारी सो तपस्या ठहरी और उसकी शेष अवस्थाके अनुमानसे दो या तीन आवृत्ति जो करने योग्य बाकी रहीं तिनके पलटे में दान करदेना चाहिये पावै॰यह सब तात्पर्य आपस्तंब और पूर्वोक्त शंख तथा दक्ष के इन तीनों वचनके मिलानसे ठहिरा॰क्योंकि वर्तमान आपस्तंबके वचनमें दानका चर्चा नहीं है अर्थात ऊपरके दो वचनोंमें यह तात्पर्य लिखागया कि शंखने ब्रह्महत्यापर एक हजार गऊ दान करना कहा और दक्षने यह भेद किया कि अब्राह्मण मारने की ब्रह्महत्या में उसका दान करना चाहिये कि जो हजार गऊ शंख ने बताई और॰ब्राह्मण ब्रुवके मारनेमें दूना दान अर्थात दोहजार गऊ और आचार्यके मारने में भी हजारकी संख्याने दूने तिगुनेको यदि विद्याजाय तो यह दान अक्षय हो

जाता है॰सो यह इतना बडादान केवल इसी दशा पर ठहिराया गया है कि जहां प्रायश्चित्ती पूरा धनवान्हो और आपस्तंब के वचनानुसार (जनमकैदी केसमान) जन्म भरेका यावज्जीवन प्रायश्चित्त ठहिरै जिसको वह पूरा पूरा न कर सक्ताहो तब यह विचार किया जाय—इस व्यवस्थाको रियाअतसे पूर्वोक्त दक्षका वचन यहाँ दुवारा अर्थांतर से दर्शातेहैं कि (समसब्राह्मणेदानंद्विगुणंब्राह्मणब्रुवे आचार्येशतसाहस्रंसो दर्यैदत्तमक्षयं) इसकाअर्थ अभी इसीजगह लिखि चुकेहैं कि अब्राह्मण की हत्या में समदान करना कि जितना शंखने कहा हो और ब्राह्मण ब्रुवकी हत्यामें उससे दूना दान करना और आचार्य की हत्या में सौहजार की संख्यावाला दान जो उन्हीं के सगे भाइयोंको दियाजाय तो अक्षयफल करताहै (यह संदेह न करना कि जो अर्थ इसका पहिले लिखि चुके सो ठीकथा या यह ठीकहै क्योंकि दोनों सत्यार्थ हैं पर वहां उसी अर्थसे प्रयोजन था यहां इसीसे प्रयोजनहै)॥०॥ व्यवस्था पंचायत—व्यवस्था की पंचायत वाद विवाद से इस लिये यहाँ लिखते हैं कि सुमंतु और पराशर आदि अनेक मुनीश्वरों के वचन जो कुछ पहिले लिखि चुके और बहुधा दोसौ पचास २५० की अधिकोक्ति तक देखते रहिना लिखे जायँगे तिनमें बारह वर्ष की अवधि छोडि के औरही और नियम पायेजाते हैं॰ तिनकी व्यवस्था विषय भेदसे कल्पना करी जायगी— तहाँ— उस पंचायत में सबसे प्रथम नैयायिक वाचालता से यह तर्कना खडी होती है कि—प्रायश्चित्तों में बारहवर्ष आदि अनेक तरह के कल्प जो जो मानेगये तिनकी व्यवस्था कहाँसे जानीगई और किसकारण से बाँधीगई॰ लेकिन यह उत्तर हम न मानेंगे कि बारहवर्ष आदिका विधान बताने वाले वचनों से जानी और बाँधीगई क्योंकि उनमें प्रतीति नहीं लासक्ते हैं॰ और यह भी न कहिना चाहिये कि परस्पर प्रमाणों से जानेहुये बड छोटे कल्पों में रुकावट रूपीवादखडा न होसके इसकारण से व्यवस्था में विषयभेदकी कल्पना करीजाती है यह उत्तर इस हेतु से न मानेंगे कि जिसबाध की रुकावट दूरकरना चाहते हो सो अच्छीतरह इन प्रकारों से भी दूर होसक्ता है कि यातो विकल्प या समुच्चय या अंगांगीभावका सहारा लियाजाय॰ अर्थात (विकल्प इसका नामहै कि बड छोटे सभी कल्पों में चाहैं इसको करो या उसको करना) और (समुच्चय यह कहताहै कि सभी कल्प ठीकहैं इसको भी करो फिर उसको भी करना) और (अंगांगीभाव दो शब्द मिलके अंग और अंगीका संबंधहै सो अंगांगीभाव कहाता है दृष्टांत जैसे देहमें सिर या वड प्रधान अंगीहोता और शेष हाथपैर आदि सब उसी

अंगीका अंगहै तैसे यहाँ भी समझना कि सबसे बडा बारहवर्षरूपी कल्प जो है सो प्रधान अंगी और उससे निचले कल्प सब उसी अंगीके अंगहैं तौ भी प्रथम बड़े का अनुष्ठान करिके छोटेभी सब अंगमानिके साथेजायँ) इन तीनोंमें कोई एक मार्गभी स्वीकार करने से उक्त बाध नहीं खडा रहिसक्ता• तिससे विषय भेदपर व्यवस्था की कल्पना वृथाठहिरैगी—सुनो उत्तर कहितेहैं व्यवस्था भेदोंमें कुछ बारहवर्षवाले और सुमन्तु आदि के दर्शाये विषम कल्पोंका विकल्प नहीं कल्पित होताहै कि चाहैं इनको करो या उसको करो क्योंकि विकल्पका सहारा लेनेमें बड़े कल्पोंका अनुष्ठानहोना संभव न रहिनेसे अनर्थक दोषका प्रसंग आताहै कि जब इच्छाके आधीन होजाय तो फिर बड़े कल्पका करना कौन चाहै• और ऐसा भी न कहिना चाहिये कि चन्द्रग्रहण की तरह छोटे बड़े दोनोंकी विषमता में भी विकल्प की सिद्धि पाई जासक्तीहै क्योंकि उसकी उपमादेना तो दूररहा प्रथम उस ग्रहण में भी विकल्प का होना ठीक नहीं है अर्थात जो किंचिन्मात्र भी ग्रहण का देखिपरना संभव हो फिर चाहै पीछे न देखि परो तो भी ग्रहण होगा ऐसा मानिके सूतक आदि का स्वीकार करना उचित है विकल्प नहीं माना जासक्ता है कि चाहैं सूतकमानो या मतमानो (इस उपमाको झूंठी कहिनेका यह तात्पर्य है कि जब एक ग्रन्थके गणितसे चन्द्रग्रहणका न देखि परना सिद्धहोताहै दूसरे गणितसे कुछ समीक्षा देखि परने की ठहिरती है तहां दोनों की विषमता ठहिरती है और इसी में विकल्प का संदेह खडा होताहै तथापि विकल्प नहीं माना जासक्ताहै अर्थात जहाँ दोनोंके विचारसे चन्द्रग्रहणका देखि परना सिद्ध होजाता या दोनों मे न देखि परना पाया जाता है तहां विषमता के न होनेसे आपही विकल्प का प्रसंग नहीं आताहै) अथवा उसी चन्द्रग्रहण में पूराकरनेकी दृष्टिसे प्रारम्भ किया जो अतिरात्रनामा यज्ञ हो तिसके लिये यह कल्पना करनी चाहिये कि ग्रहण देखिपरनेसे शीघ्रही स्वर्गादिफल सिद्ध होगा कदाचित न देखि परा तो भी कुछ विलंब से नहीं स्वर्गफल प्राप्त होगा किंच और किसी तरह से विकल्प अंगीकार करने में अनर्थ होजानेका प्रसंग खडा होताहै कि यदि प्रथम से उसका न देखिपरना मानिके सूतकआदि विधिके त्याग पूर्वक भोजन आदि कियागया और भोजन करते ग्रहण देखि परने लगा तब कितना बड़ा अनर्थ होगा या अतिरात्रयज्ञ जिसका दोनों दशा में अवश्य फलहोता तिसको विकल्पका सहारा लेकर न करना आदि अनर्थ खड़े होते हैं—और—समुच्चय से काम चलसक्ता है सो कहा यह समुच्चय भी इसमें ठीकनहीं किन्तु उपदेश और अतिदेशके द्वारा प्राप्त

हुये विना समुच्चय नहीं संभव होताहै क्योंकि उपदेशकेद्वारा समझीहुई जो निरपेक्षा है तिसके वाधका प्रसंग आता है—और—तीसरा अंगांगी भावका सहारा लेना तुमने जताया सो अंगांगी भावहू इसमें नहीं है क्योंकि श्रुति आदिसे उसका भाव विनियोगकरनेवाले कोई नहींहै अर्थात् किसी ने अंगांगी भावका स्वीकार करना कहा नहीं—इसीसे उन सब कल्पोंके परस्पर उपमर्द होना जो संभव है तिसका परिहार कर देनेके लिये विषय व्यवस्था की कल्पना करनी उचित है वह भी विशेषकर जाति और शक्ति और गुण धन आदि की अपेक्षा से कल्पना होनी चाहिये क्योंकि इसी विधि का प्रमाण भी देवलने कहा है=यथा=जातिशक्तिगुणापेक्षंसकृद्बुद्धिकृतंतथा अनुवंधादिविज्ञायप्रायश्चित्तंप्रकल्पयेत्=अर्थात्—अपराधी तथा जिसके साथ अपराध किया गया इनकी ऊंच नीच जातिके विचार से तथा उनकी शक्ति और गुण की अपेक्षा से और यहभी कि अपराध यही एकवार हुआ या पहिले भी करचुका है तथा यह अपराध सिर्फधोखे में होगया यद्वा बुद्धिसहित किया और भी अपराधी के अनुवंध अवस्था आदि भेदों को जानि के विज्ञानी पण्डित प्रायश्चित्त कायम करें क्योंकि इन भेदोंके समझे बिना प्रायश्चित्त बताने में अवश्य कुछ अनर्थ खड़ा होगा॥ २४३॥

इसी दोसौ तेंतालिस २४३के श्लोक और उसकी अधिकोक्ति में यहां तक ब्रह्महत्या के प्रायश्चित्तमध्ये जोकुछ नैमित्तिक दर्शाया गया तिसके मध्यमकालमें भी समाप्त होजानेवाली अवधि समझाना चाहतेहैं सो अगिले परिच्छेदमें देखना॥

अथ असंपूर्णेद्वादशवार्षिकेऽपिकालेतत्फलसिद्ध्यवधिविवेकाविधायकोऽयंपरिच्छेदः अष्टाविंशः२८

——*——

इसपरिच्छेद में यह विवेक जाना जायगा कि जो अवधि वारह वर्षकी कहिचुके जिसका किसी प्रायश्चित्तीने प्रारम्भ करदिया हो वह वीचमें भी किसी समय पूरी होजाती और पूरे किये का फल देतीहै॥

(आरब्धनैमित्तिकस्यसमाप्त्यवधिः)

ब्राह्मणस्यपरित्राणाद्गवांद्वादशकस्यच। तथाश्वमेधावभृथस्नानाद्वाशुद्धिमाप्नुयात् २४४

अर्थः—एक ब्राह्मण के परित्राण से या बारह गौओं की प्राणरक्षा से भी यद्वा

अश्वमेधमेंभी अवभृथ नाम का स्नानकरनेसे भी शुद्धि को पावै—अर्थात्—जहां किसी प्रायश्चित्तीने बारह वर्षका प्रायश्चित्त या दूनी अवधि चौबीस वर्षकाप्रारम्भकिया हो और उसके बीचमें किसी समय दैवकी इच्छासे ऐसा बानक बनिजावै कि वनमें किसी ब्राह्मण को चोर बटमार मारेडारते हों या सिंह बाघ वन बाराह आदि कोई फाड़ डारता हो और प्रायश्चित्ती ऐसा देखि के तत्काल अपने प्राण का लालच छोड़ हुये उसके ऊपर जाइ गिरै और किसी कठिनता के साथ उसके प्राण बचावै तो वह उसीसमय शुद्ध होजाताहै अर्थात् जो कुछ वर्ष बाकी रहिगई तिनका पर्यटन किये बिनाही पूराफल सिद्ध होजाता है वह अपने घर लौटि आवै—इसी प्रकार जो बारह गौओं के प्राण चाहैं एक बार या दो तीन बार में बचावै तो वहभी पूरी अवधिका फल उसी समय पाकर शुद्ध होजाता है (इसकी जो विशेषता है सो अधिकोक्ति में देखो) अथवा जहां किसी राजा आदि ने अश्वमेधका प्रारम्भ किया हो तिसका अंगभूत जो अवभृथ नामका स्नान विधान उसके यजमानको कराया जाता है तिसके ठीकसमयपर यदि प्रायश्चित्ती पहुंचिकर आपभी उस विधिसे स्नानकरै तो भी अवधि पूरी हुये बिना ब्रह्महत्या से छुटकारा मिलजाता है (इसका भी विशेष व्यो० अधिकोक्ति मे देखना ॥ २४४ ॥

२४४ अधिकोक्तिः—ब्राह्मण या गौओंकी रक्षाकरनेमें जो अपनेप्राणखोयेसमझि के उतारू हुआ कदाचित रक्षा न करिपाई पर उसके साथ आप भी मरिगया हो तो भी शुद्ध होजाताहै अर्थात् शेष प्रायश्चित्तका पातक उसकेसाथ नहीं जाताहै• यही अभिप्राय मनुके वचनमें प्रत्यक्षहै=यथाहमनुः=ब्राह्मणार्थेगवार्थेवासद्यःप्राणान्परित्यजेत् मुच्यतेब्रह्महत्यायागोप्तागोर्ब्राह्मणस्यवा=अर्थात्—ब्राह्मण के अर्थ या गौओंकेअर्थ जो शीघ्र अपने प्राणखोदेवै सो ब्रह्महत्यासे छुटकारा पाइजाताहै और वह भी जो गऊ या ब्राह्मणकी रक्षा करिके आप मरा या बचिगया हो (इसमें जुदे जुदे दो तीन बातें सनेहै कि बातें रक्षा करतेहुये अपने भी प्राण खोदेवै चाहैं रक्षा न करिसका तोभी अपने पातकसे शुद्धहोके मराठहरता है अन्यथा जो रक्षाभी करि पावै और आप माराजाय या बचिजाय सो भी शुद्ध होताहै ॥ ० ॥ विराजे अश्वमेध में स्नान करना कहा सो भी अपने पापको छिपाये बिना उजागर करिके और यज्ञके यजमान आदि से आज्ञा पाकर करना कहा है=तदाह मनुः=शिष्ट्वावाभूमिदेवानां नरदेवसमागमे स्वमेनोऽवभृथस्नातो हयमेधेविमुच्यते (भूमिदेवाब्राह्मणास्त्विज स्तेषांनरदेवेनराजादर्यजमानेनसमवाये स्वीयमेनःपापंशिष्ट्वाविख्याप्यअश्वमेधावभृथे

स्नात्वाशुध्येत् यदितैरनुज्ञातोभवतीत्यभिप्रायः) अर्थात्—यज्ञकरनेवाला नरदेव राजा तिसके और सवनोंके में आयेहुये राजालोग तथा भूमिदेव ब्राह्मण जो यज्ञका विधान करवाने वाले ऋत्विज आदि इन सबके समाज में अपने पापका वृत्तांत और इतने दिन प्रायश्चित्त करते बीते इतने बाकी रहे सब सुनाइ के स्नान की अभिलाषामात्र मनसे प्रकट करै किन्तु मुखसे न उच्चार करै इस दशामें यजमान और विद्वान् अपनी धर्मज्ञ संमति से इसका कल्याण सोचिकरस्वतः स्नानोंकी आज्ञा देदेवैं तो उस अश्वमेध में अवभृथ विधिसे स्नानकरिके शुद्ध होताहै=यही नियम शंखने दर्शाया है= यथा=अश्वमेधावभृथंगत्वातत्रानुज्ञातःस्नात्वासद्यःपूतोभवति=अर्थात्—अश्वमेध में अवभृत के समय पर जाइ के तहाँ अनुज्ञा पाया हुआ प्रायश्चित्ती स्नान करिके सद्यही तत्काल शुद्ध होताहै=इन वचनोंमें अश्वमेधावभृथकी समस्या कहीजानेके उपलक्षण से और भी अनेक यज्ञ जैसे अग्निष्टुत नाम जोअग्निष्टोमका रूपांतर विशेष होताहै और अग्निष्टुत के अंतर्गत पंचदशरात्र आदि यज्ञ जो अग्निष्टुत की समाप्ति पर्यंत उसके अंगभेद हों तथा सर्वमेध आदि जो वेद में प्रसिद्ध हैं तिनमें से किसी एक यज्ञमें जाकर अवभृथ स्नान करिके पवित्र होसक्ता है जो दैवकी इच्छा से वानक ऐसा मिलिजाय किन्तु अश्वमेधसे उपरान्त यज्ञों में शुद्धिपाने का प्रमाण गौतमका वचन है कि (अश्वमेधावभृथेवान्ययज्ञेऽप्यग्निष्टुदंतश्चेदित्यादिः) अश्वमेध के अवभृथ में वा और किसी यज्ञमें भी जो अग्निष्टुत अंत कहाता हो स्नान करै=यह सब नियम उसीकेलिये समझना जोबारह वर्षकी व्रतचर्याकरनेमें लगारहाहो और बीचमेंकदाचित् ब्राह्मणकी रक्षा आदि दैवयोगसे बनिपरै तो उसव्रतचर्य्याकी अवधिपूरीहोजायगी—परन्तु यहतात्पर्य नहींहै कि प्रायश्चित्तका आरम्भ न करिके अपनीस्वतंत्रतासे इन्हींकामोंकोढूंढै कि यहभी एक प्रकारके प्रायश्चित्त होंगे—क्योंकि—शंखनेसन्देह मिटाइके स्पष्ट यही कहाहै=यथा=द्वादशेवर्षेशुद्धिंप्राप्नोत्यंतरावा ब्राह्मणंमोचयित्वागवांद्वादशानांपरित्राणात् सद्यस्त्वाश्वमेधावभृथस्नानाद्वापूतोभवति=अर्थात्—बारहवाँवर्ष पूरा होने में शुद्धिको पाताहै अथवा बीचमें भी ब्राह्मण को मौतसे छुड़ाकर शुद्धहोताहै अथवा बारह गौओंकी रक्षा करने से यद्वा अश्वमेध मे अवभृथ विधि का स्नान करने से सद्यही पवित्र होताहै=इसी लिये=मनुने यह डौल बांधा है कि प्रथम तो मुंडन कराइ के वनमें बसै इत्यादि बारह वर्षकी गुरा विधि में तत्पर कराने पीछे वह विधानकहा जो अभिदोनोंके शुरूमें लिखि चुकेहैं कि ब्राह्मणके अर्थ या गौओं के अर्थ अपनेप्राण खोदेवै इत्यादि अश्वमेधके स्नान पर्यंत बीचमेंकोहकर तिस

पीछे यह दर्शाया है कि जिसको बीचमें ब्राह्मणकी रक्षा आदिकोई प्रकारन बनिआवे सो बारह वर्षपूरेकरे=यथा—एवंदृढव्रतोनित्यंब्रह्मचारीसमाहितः।समाप्ते द्वादशेवर्षेब्रह्महत्यांव्यपोहति=अर्थात्—इसप्रकार व्रतको मजबूतीसे थाँभेहुये नित्यंप्रति ब्रह्मचारी बनाहुआ चित्तको सावधानरखिकर बारहवां वर्षसमाप्तहोनेमेंब्रह्महत्या दूरकरदेताहै ॥ ० ॥ जो नियम अभी कहिचुके उसपर वादी तर्क उठाता है कि ब्रह्महत्या से छुटि कर शुद्धि पावै यह उसी लपेट के साथ कहागया है जो ब्राह्मणकी रक्षाकरना आदि कई प्रकार या बारह वर्षकी व्रतचर्या करना सबदशा में शुद्धि पासक्ताहै तिससे सब कार्यों में एकही तुल्य फल ठहिरा इसन्यायसे अपराधी को स्वतंत्रताहोनी--योग्य है कि वह चाहे तिस प्रकार से अपना पीछा छुडासके अर्थात् निज इच्छा से कोई एक प्रायश्चित्त इनमें से करै परन्तु ऐसा नहीं उचित है कि ब्राह्मण की रक्षा आदि प्रकारोंको बारह वर्षोंका अंगत्व माना जाय कियेभी उसी प्रधान कर्म का अंगहैं और अंगत्वभी नहीं सिद्ध होताहै क्योंकि प्रधान कर्मका विरोधी (बीचही में रोकिदेनेवाला) होने से भी अंग नहीं कहा जासक्ता है किन्तु अंग वही होता है जो प्रधान का अनुग्राहक (पीछा पकड़ने वाला साथ देने वाला) हो और यह विधान भी बारह वर्ष आरम्भ करने वाले का नहीं है जिससे कि उसी कार्य का जुदा विधानपायाजाता है इसपर यह दृष्टांत भी मीमांसा के अनुसार है कि जैसे सत्र नामक यज्ञ करने पर उत्ताख होकर विश्वजित यज्ञसे यजनकरै यह सत्रके प्रयोगमें प्रवृत्तहुये का उसके पूरे करने मे असमर्थ का विश्वजित विधान एकदृष्टान्त है इससेभी स्वतंत्रता का होना ही युक्त पायाजाताहै कि जैसा (आगे दोसौ सैंतालिस २४७ श्लोक से आदिलेकर) शरीर के सिरको सरजाना• तीरन्दाजों का निशाना बनिके मरजाना आदि जो कल्प कहे जायँगे तिनमें भी यह शंका न करनी चाहिये कि वेभी बारह वर्षके प्रारम्भ और समाप्ति के बीचमें लिखे पड़े गयेहैं तोवेभी बारहवर्षोंका एक एक अंग होंगे इससे वे सभी कल्प बारह वर्ष के बीचमे करने होंगे इससे कि यद्यपि पाठबीच में आया पर उसके बीचमें होनेपर भी उनका प्रयोजक (लगानेवाला) जो नहीं जाना जाता और प्रयोजन की आकांक्षा भी बारह वर्षों से जुदी देखि परतीहै तिससे परस्परउनका अंग और अंगीपना नहीं साबित होसक्ताहै जबकि अंगांगित्व साबित नहुआ तो बारह वर्षों के बीच उनका साधन भी आवश्यक नहीं ठहिरा—इसपर भी मीमांसामें दृष्टान्त है कि जैसे वेदमें सामिधेनी ऋचाओं के प्रकरण में अग्निचित्कर्म की ऋचायें भी लिखी हैं जिनके दो भांति के अर्थ हैं कि अग्निसमिन्धन और अग्निप्रकाशनये दोनों

कर्म अग्निहीके साथहोते हैं तहांभीअग्नि रूप एकही कार्यके हेतुसे सामिधेनी ऋचाओं के साथ उनका अंगत्व नहींमाना गया है—और बारह वर्ष की व्रतचर्या मध्ये ठीकठीक उनका पाठहू बीचसें नहींहै जो अग्निमें प्रवेश होजाना आदि जुदे कल्पहैं क्योंकि वशिष्ठ गौतम आदि अनेक ऋषियों ने बारह वर्ष का चर्चा छेडनेसे प्रथमही उनको लिखाहै और यही स्वतंत्रता जाहर करदेने के लिये मनुने हरएक वाक्यों के साथ विकल्प दर्शानेवाला वा शब्दभी लगाया है कि (लक्ष्यंशस्त्रभृतांवास्यात प्रास्येदात्मानमग्नौवा)या तो शस्त्रधारियोंका निशाना बनै या शरीरको अग्निमें भस्म करै इत्यादि और उन्हींमनुजी ने प्रत्येक प्रायश्चित्त के साथ एवमेवं ऐसेही ऐसे यह प्रकार साधै यह ऐसा उपसंहार भी लगाया है तिससे भी सब जुदे जुदे प्रतीत होतेहैं और यहभी साफ कहा है कि (अतोऽन्यतसमास्थायविधिंविप्रःसमाहितः ब्रह्महत्याकृतंपापंव्यपोहत्यात्मवित्तथा) इनमें से किसी एक विधिपर आरूढ हो ब्राह्मण अपने चित्तको सावधानराखै आत्मवेत्ता होके रहै तो ब्रह्महत्या के निमित्त का पाप जो है सो दूरहोजाता है—वादी सबका तोड करताहै कि इनसब कारणोंसेमेरी समझमें यह आता है कि अग्नि मेंजलजाना आदि प्रायश्चित्तोंमें स्वाधीनता प्रत्यक्ष बहुतठीकहैं कि अपनीइच्छाके अनुसार कोई एकविधान साधै और इसीसे ब्राह्मण गऊकोरक्षा आदिवाले विधानों में भी बारहवर्षका अंगत्व नहीं सिद्धहोता है क्योंकि उनका और इनकाभी फल एकहीठहिरा कि ब्रह्महत्यासे छूटिजाताहै तिससे भेद मानना नचाहिये= उत्तर कहिते हैं सुनो=परिहृतमेतदंतराब्राह्मणांसोचयित्वा इत्यादिनाग्रंथवचनेनांगत्वावगमात् अंगस्यैवसतःप्रधानद्वारेणफलसंबंधः नचप्रधानविरोधः यतोब्राह्मणत्राणावधिकस्यैवव्रतानुष्ठानस्य फलसाधनत्वंविधीयते इतिनविरोधः=अर्थात्—सबकुछ कहा पर यहतो छोडिही दिया जो ग्रंथके वचन में कि बारह वर्ष के बीचही में ब्राह्मण को मौत से बचाइ के इत्यादि व्यवस्था कही तिससे साफ साफ बारह वर्षों का यह अंग पाया जाता है और अंगहीके होते हुये प्रधान के द्वारा उसमें फल होता है और बीचहीमें प्रधान कर्म का त्याग होजानेपरभी प्रधानका विरोध इससे नहीं है क्योंकि उस अनुष्ठान का पूरा फल ब्राह्मण के प्राण बचाने को ही अवधि तक विधान किया गयाहै तिससे कोई विरोध इसमें नहींहै॥ ७४४ ॥ ब्राह्मण गऊको रक्षा तथा अश्वमेध का स्नान जैसे कहेगये तैसे उनके साथी कुछ औरभी ग्रंथहैं सो अगले श्लोकोंमें देखना॥

———※———

(पूर्वोक्तानांशेषप्रकाराः प्रायश्चित्तभेदाः)

दीर्घतीव्रामयग्रस्तंब्राह्मणंगामथापिवा । दृष्ट्वापथिनिरातंकंकृत्वावाब्रह्महाशुचिः २४५
आनीयविप्रसर्वस्वंहृतंघातितएववा । तन्निमित्तक्षतंशस्त्रैर्जीवन्नपिविशुद्ध्यति २४६

अर्थः—यद्वा अतिलंबे और तीव्र रोगासे ग्रसे ब्राह्मणको अथवा ऐसी गऊको मार्ग में देखि निरोग करिके भी ब्राह्महन शुद्ध होताहै=अर्थात्—कुष्ट आदि महारोगों से यदि कोई ब्राह्मण या गऊ दुखी देखै उसको औषधी झाड़बूटीआदि किसी अपनी युक्ति से चिकित्सा करिके निरोगीकरै तो वहभी तत्काल शुद्ध होकर छुटकारा पावै किन्तु बारह वर्ष पूरे करनेसे अपेक्षा कुछनहींरही॥२४५॥ और भी यदि ब्राह्मणाके हरे हुये सर्वस्वको ल्याइकर देवै या चाहै घायलहोके मरजाय या उसधनके निमित्त शस्त्रों से घायल होकर जीतारहै तौभी शुद्ध होजाताहै=अर्थात्—ऊपरले श्लोक में दो प्रकार से शुद्ध होना कहा इसमें तीनप्रकार से कहाहै कि जिस किसी ब्राह्मणका कोई गावनचोरों आदि किसी बलवान ने हरा हो तिससे दुःखी देखि के यातो सबराधन छीनिके ल्यादेवै या उनधनकेलिये युद्धकरिके प्रायश्चित्ती आप माराजाय या घायल होके मरनेके समान होजाकर भी जीतारहै चाहै धनको नहींलासका तौभी शुद्ध होजाताहै॥ २४६ ॥

२४६ अधिकोक्तिः—वादी ने फिर इसमें भी यह तर्क उठाया है कि एकसौचवालिसके श्लोकमें ब्राह्मण गऊकी रक्षा करनी कहिचुके थे अब यहाँ दुबारा फिर क्योंकहा-तिसका यह उत्तर है कि हाँ सत्यकहा वहाँ और यहाँ भी इसका यह तात्पर्य है कि वहां तो अपने प्राण खोइ कर भी रक्षाकरनी कही थी और यहाँ केवल चिकित्सा या मंत्र यंत्र आदि उपायोंसे रक्षाकरनी कही कि जिसमें अपने प्राणोंको संदेह नहीं यह दोनोंमें विशेषता है—इसी अभिप्राय से मनुने यह कहाहै कि (विप्रस्यतन्निमित्तेवाप्राणालाभेविमुच्यते) ब्राह्मण के प्राण बचाइ के या उसके निमित्त अपने प्राण खोइके छुटकारा पाजाताहै ॥ २४५ ॥ दोसौ छयालिस में जो शस्त्रोंका उपयोगनहै सो इसलिये कि एकही घावखाकर भागिपरे तो यह प्रायश्चित्ती बारह वर्षोंकी अवधि पूरी किये बिना शुद्ध न होगा अर्थात् जो बहुत से घाव अपने देह पर खाकर भी न भागा और मरने के तुल्य होकर दैवकी इच्छा में जीता रहिगया हो तिसकी अवधि अभी पूरी होगई मानी जायगी—इसीहेतु मनुने ऐसा वचन कहाहै कि (सर्वस्वंप्रतिरोधायार्थभतस्त्रिवारमवजित्यवा) तीन वा तीनसे अधिक डाकुओंको रोकनेवाला

बनै अर्थात बहुतों को रोकने लड़ने से माराजाय या बहुत घायलहोके दैव योग से बचिजाय फिर चाहैं धन को न छीनि पावै तौ भी शुद्धि होजायगी क्योंकि छीनि पाउनेवालाकाम उसने सद्भावसे किया अथवा चाहैं एकबाण वा ईंट तक भी देहमें न लगीहो और डाकू चाहैं अनेक वा एकही हो परन्तु सबधन उनसे छीनके ब्राह्मण को ल्यादेवै कि जिसका जितना चोरों ने लूटा था तौभी यह प्रायश्चित्ती शुद्ध होजावै॥ ये पाँचौ भाँतिके कल्प भी ऐसेहैं कि इनमें अपराधीकी इच्छासे स्वाधीनता नहींहै कि बारह वर्षोंकी व्रतचर्या प्रारम्भ किये बिना प्रथमसेही गऊ ब्राह्मण की चिकित्सा या लूटा हुआ धन छीनि के शुद्ध होजानेका अधिकारी बनै किन्तु दो सौ चवालिस की २४४ कीअधिकोक्ति के अंत में जो कुछ निपटारा सिद्ध होचुका सो यहांभी समझ लेना॥ २४६॥

अगिले परिच्छेदमें प्रायश्चित्तके अनुकल्प कहेजायँगे कि जो बारह वर्ष की व्रतचर्य्या करना न चाहै सो इनको करै॥

अथ प्रायश्चित्तान्तरानुकल्पप्रदर्शकोऽयंपरिच्छेदः २९ ऊनत्रिंशः॥

इसपरिच्छेदमें ब्रह्मघ्नके कुछ और भी प्रायश्चित्त कल्पनाहोंगे कि उनमें प्रायश्चित्ती को स्वाधीनता भी दहिरैगी कि चाहैं यह करौ या वह करौ—यद्यपि बारहवर्षके स्थानी भूतकल्प कहेजायँगे तथापि उनमें भी अपराधीकी विशेषता अनुसार विषय भेदसे विचार करना होगा सो अधिकोक्तियों में देखना॥

(अग्निप्रवेशरूपंप्रायश्चित्तांतरं)

लोमभ्यःस्वाहेत्येवंहिलोमप्रभृतिवैतनुम्। मज्जांतांजुहुयाद्वापिमंत्रैरेभिर्यथाक्रमम् २४७

अर्थः—यद्वा (लोमभ्यःस्वाहा) इत्यादि रीसे इनमंत्रों से यथाक्रम रोम आदि मज्जा पर्यन्त तनुं (शरीर) को होमही करै—अर्थात—इस वाक्यमें वापि यद्वा शब्द उस पक्ष से दूसरा पक्ष दर्शाने वाला है कि जो बारह वर्षका पक्ष पहिले कहि चुके और हि शब्द इस निमित्त है कि अन्य स्मृतियों में त्वचा आदि जो व्योरेवार प्रसिद्धहैं सोभी

समझिलेना क्योंकि यहां केवल रोमा आदि कहिके संक्षेप किया गयाहै—इससे यह अभिप्राय दहिरा कि यदि बारह वर्षकी व्रतचर्या न करना चाहै तौ यह करै कि अग्नि में अपने शरीर को होमै सो किस विधान से कि (रोमा• त्वचा• रक्त• मांस• मेदा• स्नायु नसें• हाड• मज्जा) ये आठ वस्तू होम की सामग्री मानै और इन्हीं से प्रत्येक जुदे द्रव्यका स्वाहांत मंत्र बनावै सो अधिकोक्ति में देखो ॥ २४७ ॥

२४७ अधिकोक्तिः—शरीरके धातुरूपी होम की सामग्री से जुदे जुदे आठौ मंत्र बनाकर वशिष्ठ ने प्रकाश किये हैं=यथाह वशिष्ठः=ब्रह्महाग्निमुपसमाधायजुहुयात् लोमानिमृत्योर्जुहोमि लोमभिर्मृत्युंवासय इतिप्रथमां १ त्वचंमृत्योर्जुहोमित्वचामृत्युं वासय इति द्वितीयां २ लोहितंमृत्योर्जुहोमिलोहितेन मृत्युंवासय इतितृतीयां ३ मांसानिमृत्योर्जुहोमि मांसैर्मृत्युंवासय इति चतुर्थीं ४ मेदोमृत्योर्जुहोमि मेदसामृत्युं वासय इति पंचमीं ५ स्नायूनिमृत्योर्जुहोमि स्नायुभिर्मृत्युंवासय इतिषष्ठीं ६ अस्थीनिमृत्योर्जुहोमि अस्थिभिर्मृत्युंवासय इति सप्तमीं ७ मज्जांमृत्योर्जुहोमि मज्जाभिर्मृत्युंवासय इत्यष्टमीम् ८ =अर्थात्—वशिष्ठ ने यहकहा है कि ब्रह्महत्यारा पुरुष अग्नि का स्थापन अपने समीप नियत करिके इन आठौ चीजके आठ मंत्रों से आठ होम करै (इसी हेतु मूल श्लोक में योगीश्वर ने (लोमप्रभृति) रोम आदि आठ द्रव्य बताये और (लोमभ्यःस्वाहा) ऐसे मंत्र बताये तिनको भी इन्हीं वशिष्ठ के बताये मंत्रों में इस रीतिसे जोड़ै कि) लोमानिमृत्योर्जुहोमिलोमभिर्मृत्युंवासय लोमभ्यःस्वाहा १ यह एक मंत्रबना इसी प्रकार आठौ मंत्र बना लेवै=इस पर शंका होती है कि लोमभ्यःस्वाहा कहिने से रोम आदि द्रव्यही देवता समझे जाते हैं क्योंकि जैसे (इंद्रायस्वाहा सूर्यायस्वाहा इत्यादि) चतुर्थी विभक्ति से देवता का सब संदेह जाते हैं कि इंद्र के लिये स्वाहा या सूर्यके अर्थ स्वाहा—तैसे यहां रोमों के अर्थ स्वाहा या त्वचाके अर्थ स्वाहा इनमें रोमत्वचा आदि आठौ धातु देवतारूप प्रतीत होते हैं तथापि देवतारूप नहीं हैं क्योंकि (रोम आदि शरीर को होमै) इस कथन से उनको द्रव्यरूपही कल्पित कियाहै और द्रव्यही से होम सिद्धहोताहै बिना द्रव्यके नहीं और (लोमभिर्मृत्युंवासय इत्यादि वशिष्ठ के मंत्रोंमें मृत्युही को हवि की आहुति बताने से देवता यहां मृत्यु इनमें प्रधान है जो अग्नि के द्वारा रोमादि हवि खायगी—इससे—यह तात्पर्य दहिरा कि ब्रह्मा ब्रह्महा आदि शब्दसे अपनी सामर्थ्यके अनुसार एक रोमा आदि अपने शरीर से जुदे करि करि मृत्यु के नामसे आठौ होम करिके पीछे शरीर अग्नि में झोंकि देवै (इतना यह संदेह अभी शेष है कि एक मंत्रसे एकही

आहुति वा अनेक या अष्टोत्तर शत आदि कोई संख्या भी नियत करैं क्योंकि आठ होम करने कहे पर इसकेमध्ये कोईसंख्या नहींबाँधी तिससे एकहोम एकहीआहुति का प्रतीत होताहै) इसका समाधान यहहै कि (संख्या का नियम बाँधना कर्ता के स्वाधीन रहा कि प्रत्येक मंत्रकी आहुति जितनी करसकै वही संख्या आठौकी जुदी जुदी राखै इसीलिये यह लिखिचुकेहैं किअपनी सामर्थ्यके अनुसार लोमखालआदि उपाड़ै=यहाँ श्रीमद्विज्ञानेश्वर कहिते हैं कि रोम खाल आदि का हवि रूपी द्रव्य ठीकठीक सिद्धहुआ इसमें कुछ संदेहनहीं परंतु किसीविरले टीकाकारोंने प्रथमऐसा अर्थ लगायाथा कि मूलमें होमकेलिये कोईद्रव्यनहीं अदेशकिया तिससे इनमंत्रोंसे घीका होम करना चाहिये•सो वह निरूपण किये विना घीका होम कहा तिससे उस अर्थका आदर न करना चाहिये ॥ ० ॥ मूलश्लोक में (जुहुयात्) होमै इसप्रयोग सेही अग्निका नाम लिये विना उसका प्रयोजन सिद्ध होजाता है कि होम करैं तौ अग्नि भी अवश्य चाहिये परन्तु वशिष्ठ के वचन में जुहुयात् होने पर भी (अग्निं उपसमाधाय)यहदुबारा कहागयाहै कि अग्निकोपासराखिके होमकरैं तौ इसदुबारा के लेखसे लौकिक अग्निकी ध्वनि पाई जातीहै कि उसमें होम करैं और यही वात उचितहै क्योंकि जो पुरुष अग्निमानहोके पतितहुयेहों तिनके अग्नि भी पतित हो जातेहैं तिससे वे पतिताग्निपुरुष कहाते और उनकेलिये एकविधानकहागयाहै कि जिसके हेतु से उनकोभी लौकिकाग्नि सेही प्रयोजन आपस्तंब=यथाहोशना=आ-हिताग्निस्तुयोविप्रोमहापातकभाग्भवेत् प्रायश्चित्तैर्नशुध्येततदग्नीनांतुकागतिः वै तानंप्रक्षिपेत्तोयेशालाग्निंशमयेद्बुधः =कात्यायनस्तु =महापातकसंयुक्तोदैवात्स्यादग्निमान्यदि पुत्रादिःपालयेदग्नीन्युक्तश्चादोषसंक्षयात् प्रायश्चित्तंनकुर्याद्यःकुर्वन्वा म्रियतेयदि गृह्यंनिर्वापयेच्छ्रौतमप्स्वस्येत्सपरिच्छदम्=अर्थात्–जो ब्राह्मण (आ-हिताग्नि) अग्निमान् है वह महापात की होजाय और प्रायश्चित्तों से न शुद्धहोवै तिसके अग्नियों की क्यागति होगी (सो कहिते हैं कि) उसका वैतान जो वेदकी विधिसे स्थापनकिया विस्तारहै सामग्री उपकरण औजार आदि सो सब जलप्रवाह में हत्यारा या कोई और ज्ञानी छोडि आवै तथा शाला के अग्निको वुझाइ डारै= कात्यायन भी कहिते हैं कि=जो अग्निमान् है वह दैवयोगसे यदि महापातकी हो-जाय तौ उसका कोई पुत्र वा शिष्य आदि अग्नियोंको पालै फिर दोषी भी अपना दोष मिटाने के वादिसे पालै•अथवा यदि ऐसा हो कि प्रायश्चित्तको न करै यद्वा प्रायश्चित्त प्रारम्भ करिके मरजाय तौ गृह्य अग्नि को वुझावै और श्रौत को जल में

मसभिफलेना क्योंकि यहां केवल रोमा आदि कहिके संक्षेप किया गयाहै—इससे यह अभिप्राय ठहिरा कि यदि बारह वर्षकी व्रतचर्या न करना चाहै तौ यह करै कि अग्नि में अपने शरीर को होमै सो किस विधान से कि (रोमा॰ त्वचा॰ रक्त॰ मांस॰ मेदा॰ स्नायु नसैं॰ हाड॰ मज्जा) ये आठ वस्तू होम की सामग्री मानै और इन्हीं से प्रत्येक जुदे द्रव्यका स्वाहांत मंत्र बनावै सो अधिकोक्ति में देखो ॥ २४७ ॥

२४७ अधिकोक्तिः—शरीरके धातुरूपी होम की सामग्री से जुदे जुदे आठौ मंत्र बनाकर वशिष्ठ ने प्रकाश किये हैं—यथाह वशिष्ठः—ब्रह्महाग्निमुपसमाधायजुहुयाव लोमानिमृत्योर्जुहोमि लोमभिर्मृत्युंवासय इतिप्रथमां १ त्वचंमृत्योर्जुहोमित्वचामृत्युं वासय इति द्वितीयां २ लोहितंमृत्योर्जुहोमिलोहितेन मृत्युंवासय इतितृतीयां ३ मांसानिमृत्योर्जुहोमि मांसैर्मृत्युंवासय इति चतुर्थीं ४ मेदोमृत्योर्जुहोमि मेदसामृत्युं वासय इति पंचमीं ५ स्नायूनिमृत्योर्जुहोमि स्नायुभिर्मृत्युंवासय इतिषष्ठीं ६ अस्थीनिमृत्योर्जुहोमि अस्थिभिर्मृत्युंवासय इति सप्तमीं ७ मज्जांमृत्योर्जुहोमि मज्जाभिर्मृत्युंवासय इत्यष्टमीम् ८ =अर्थात—वशिष्ठ ने यहकहा है कि ब्रह्महत्यारा पुरुष अग्नि का बहुत बड़ा कुण्ड अपने समीप नियत करिके इन आठौ चीजके आठ मंत्रों से आठ होम करै (इसी हेतु मूल श्लोक में योगीश्वर ने (लोमप्रभृति) रोम आदि आठ द्रव्य जताये और (लोमभ्यःस्वाहा) ऐसे मंत्र बताये तिनको भी इन्हीं वशिष्ठ के बताये मंत्रों में इस रीति से जोड़ै कि) लोमानिमृत्योर्जुहोमिलोमभिर्मृत्युंवासय लोमभ्यःस्वाहा १ यह एक मंत्रबना इसी प्रकार आठौ मंत्र बना लेवै—इस पर एक विचार है कि लोमभ्यस्स्वाहा कहिने से रोम आदि द्रव्यही देवता समझे जाते है क्योंकि जैसे (गणेशायस्वाहा सूर्यायस्वाहा इत्यादि) चतुर्थी विभक्ति से देवता के मंत्र कहेजातेहैं कि गणेश के लिये स्वाहा या सूर्यके अर्थ स्वाहा—तैसे यहां रोमों के अर्थस्वाहा खालके अर्थ स्वाहा इनमें रोमखाल आदि आठौ धातु देवतारूप प्रतीत होते हैं तथापि देवतारूप नहींहैं क्योंकि (रोम आदि शरीर को होमै) इस कथन से उनको द्रव्यरूपही कल्पित कियाहै और द्रव्यही से होम सिद्धहोताहै विना द्रव्यके नहीं और (लोमभिर्मृत्युं वासय)इत्यादि वशिष्ठ के मंत्रोंमें मृत्युही को हवि की आहुति बताने से देवता यहां मृत्यु इनमें प्रधान है जो अग्नि के द्वारा रोमादि हवि खायगी—इसीसे—यह तात्पर्य ठहिरा कि फरसा गँडासा आदि शस्त्रसे अपनी सामर्थ्यके अनुसार उक्त रोमा आदि अपने शरीर से जुदे करि करि मृत्यु के नामसे आठौ होम करिके पीछे सर्व शरीर अग्नि में झोंकि देवै (इतना यह संदेह अभी शेष है कि एक मंत्रसे एकही

आहुति वा अनेक या अष्टोत्तर शत आदि कोई संख्या भी नियत करैं क्योंकि आठ होम करने कहे पर इसकेमध्ये कोईसंख्या नहींबांधी तिससे एकहोम एकहीआहुति का प्रतीत होताहै) इसका समाधान यहहै कि (संख्या का नियम बांधना कर्त्ता के स्वाधीन रहा कि प्रत्येक मंत्रकी आहुति जितनी करसकै वही संख्या आठोंकी जुदी जुदी राखै इसीलिये यह लिखचुकेहैं किअपनी सामर्थ्यके अनुसार लोमखालआदि उपाड़ै=यहां श्रीमद्विज्ञानेश्वर कहिते हैं कि रोम खाल आदि का हवि रूपी द्रव्य ठीकठीक सिद्धहुआ इसमें कुछ संदेहनहीं परंतु किसीविरले टीकाकारोंने प्रथमऐसा अर्थ लगायाथा कि मूलमें होमकेलिये कोईद्रव्यनहीं अदेशकिया तिससे इनमंत्रोंसे घीका होम करना चाहिये•सो वह निरूपण किये विना घीका होम कहा तिससे उस अर्थका आदर न करना चाहिये ॥ ० ॥ मूलश्लोक में (जुहुयात्) होमै इसप्रयोग सेही अग्निका नाम लिये विना उसका प्रयोजन सिद्ध होजाता है कि होम करें तौ अग्नि भी अवश्य चाहिये परन्तु वशिष्ठ के वचन में जुहुयात् होने पर भी (अग्निं उपसमाधाय)यहदुबारा कहागयाहै कि अग्निकोपासरखिके होमकरैं तौ इसदुबारा के लेखसे लौकिक अग्निकी ध्वनि पाई जातीहै कि उसमें होम करैं और यही बात उचितहै क्योंकि जो पुरुष अग्निमान्होके पतितहुयेहों तिनके अग्नि भी पतित हो जातेहैं तिससे वे पतिताग्निपुरुष कहाते और उनकेलिये एकविधानकहागयाहै कि जिसके हेतु से उनकोभी लौकिकाग्नि सेही प्रयोजन आपरैण=यथाहोशना=आहिताग्निस्तुयोविप्रोमहापातकभाग्भवेत् प्रायश्चित्तैर्नशुध्येततदग्नीनांतुकागतिः वैतानंप्रक्षिपेत्तोयेशालाग्निंशमयेद्बुधः =कात्यायनस्तु =महापातकसंयुक्तोदैवात्स्यादग्निमान्यदि पुत्रादिःपालयेदग्नीन्युक्तश्चादोषसंक्षयात् प्रायश्चित्तंनकुर्याद्यःकुर्वन्वाम्रियतेयदि गृह्यंनिर्वापयेच्छ्रौतमप्स्वस्येत्सपरिच्छदम्=अर्थात्—जो ब्राह्मण (आहिताग्नि) अग्निमान् है वह महापात की होजाय और प्रायश्चित्तों से न शुद्धहोवै तिसके अग्नियों की क्यागति होगी (सो कहिते हैं कि) उसका वैतान जो वेदकी विधिसे स्थापनकिया विस्तारहै सामग्री उपकरण औजार आदि सो सब जलप्रवाह में हत्यारा या कोई और ज्ञानी छोडि आवै तथा शाला के अग्निको बुझाइ डारै= कात्यायन भी कहिते हैं कि=जो अग्निमान् है वह दैवयोगसे यदि महापातकी होजाय तौ उसका कोई पुत्र वा शिष्य आदि अग्नियोंको पालै फिर दोषी भी अपना दोष मिटाने के बादिसे पालै•अथवा यदि ऐसा हो कि प्रायश्चित्तको न करै यद्वा प्रायश्चित्त प्रारम्भ करिके मरजाय तौ गृह्य अग्नि को बुझावै और श्रौत को जल में

सब सामग्री सहित छोड़ि आवै ॥ ० ॥ पूर्वोक्त होमका शेष कार्य अब कहिते हैं कि शक्तिके अनुसार होम कियेपीछे अग्निमें सबशरीर झोंकना कहासो तीनवार उठि उठि के औंधे मुख गिरना चाहिये=तदाह मनुः=प्रास्येदात्मानमग्नौ वासमिद्धेत्रिरवाक्शिराः=अर्थात्–जो पूर्व कल्पोंको न करै तौ अच्छे प्रज्वलित अग्निमें शरीरकोही औंधे मुख तीनवार झोंके=गौतम ने कुछ और भी विशेषता इसमें करी है कि (प्रायश्चित्तमग्नौ सक्तिर्ब्रह्मघ्नस्त्रिरवस्थातस्य) ब्रह्मघ्न को प्रायश्चित्त यह है कि अवस्थात नाम लंघन किये हुये का अग्नि में प्रवेश करना तीन वार उठि उठि कर (लंघन इस लिये कहा कि शरीर दुर्बल और शुद्ध होजाने से अग्नि उसको शीघ्र भस्म करसके) तैसेही काठकी शाखावालोंकी यह श्रुतिहै कि (अनशनेन कर्षितोऽग्निमारोहेत्) लंघन से दुर्बल होकर अग्निपर सवारहोवै=अब यह विचार भी कर्तव्य है कि यह मरजानेका प्रायश्चित्त उसकेलियेहै जिसने कामनासे इच्छासहित महापाप किया हो जैसा अंगिराकी बिचली स्मृतिका वचन है=यथाह मध्यमांगिराः=प्राणांतिकंचयत्प्रोक्तंप्रायश्चित्तंमनीषिभिः तत्कामकारविषयंविज्ञेयंनात्रसंशयः=तथा =यःकामतोमहापापंनरःकुर्यात्कथंचन नतस्यशुद्धिर्निर्दिष्टाभृग्वग्निपतनादृते=अर्थात्–अंगिराने कहाहै कि जो जो मरणांतिक प्रायश्चित्त बुद्धिमानों ने कहे सो सब कामकारोंका विषय समझना इसमें संदेह नहींहै=तैसे=एक यहवचनहै कि जो आदमी किसी तरह कामना से चाहिकर महापाप करै तिसकी शुद्धि नहीं होती कहीहै सिवाय पर्वतके शिखर आदि ऊंचेसे गिरने के या अग्निमें गिरनेबिना=यह प्रायश्चित्त जो इसी २४७ श्लोकमें कहा गया सो बारह वर्षोंके विनाही स्वतन्त्र किया जाताहै अर्थात् इससे पहिले परिच्छेदमें जो ब्राह्मणकी रक्षा आदि कहेगये तिनकी तरह बारह वर्षोंके साथ करना नहीं सूचित हुआहै ॥ २४७ ॥

(शस्त्रसंपातमध्ये स्थितिरूपंप्रायश्चित्तांतरं)

संग्रामेवाहतोलक्ष्यभूतःशुद्धिमवाप्नुयात्। मृतकल्पःप्रहारार्तोजीवन्नपिविशुद्ध्यति २४८

अर्थः–अथवा लड़ाईके बीच लक्ष्यभूत होके माराजाय तौभी शुद्धि को पावै या शस्त्रोंके प्रहारसे अतिपीड़ित मरनेके तुल्य होजाकर दैवयोग से जीवता रहि कर भी शुद्ध होताहै=अर्थात्–जहां कहीं दुतरफा युद्ध होताहो या सीखनेवाले निशाना लगातेहों इत्यादि जिस ठिकाने पर बहुतसे बाण आदि शस्त्रों का पात होता हो उसी रूपे प्रायश्चित्ती जाकर युद्धवालोंका निशाना बनिके बीचमें बैठे कि जिससे दुतरफा चले हुये बाण आदि शस्त्र उसके ऊपर लगैं तहां मरजाय तौ यह शुद्ध होजाताहै यहां

बहुत घायल होकर मरनेके समान मूर्च्छा पाकर पीछे दैवकी इच्छा से यदि होश में आजाय तौ यह जीता रहिजाने पर भी शुद्ध होजाता है॥ २४८॥

२४८ अधिकोक्तिः—निशाना बनिके बैठे इसमें राजा आदि किसी प्रबल की प्रबलता रूपी आज्ञासे प्रयोजन नहींहे अर्थात् आपही अपनी इच्छासे धनुष आदि शस्त्र विद्याके योद्धाओंसे प्रार्थना प्रकट करै कि मैं प्रायश्चित्तीहूं इसलिये तुम्हारा निशाना बना चाहता हूं=यथाह मनुः—लक्ष्यंशस्त्रभृतांवास्याद्विदुषामिच्छयात्मनः= अर्थात्—शस्त्रधारी विद्वानोंका लक्ष्य बनै अपनी इच्छासे॥ यह प्रायश्चित्त जो मरणांतिक रूप ठहरा तिससे यह सबके लिये नहीं किन्तु उसके लिये समझना जो प्रायश्चित्ती आप क्षत्रीहो और इच्छा सहित ब्राह्मणको मारा हो बल्कि जिस क्षत्री में यज्ञ करनेकी समर्थहो तौ अश्वमेध आदि यज्ञोंसे विकल्प भी होसक्ताहै क्योंकि मूल श्लोक में अपि शब्द जो आया तिसके ध्वन्यर्थसे ऐसा क्षत्री अश्वमेध आदि यज्ञों से भी शुद्ध होताहै=तदाहमनुः=यजेतवाश्वमेधेनस्वर्जितागोसवेनच अभिजिद्विश्वजिद्भ्यां वात्रिवृत्ताऽग्निष्टुतापिवा=अर्थात्—पूर्व कहे कल्पोंको न करसकै तौ अश्वमेधसे यज्ञ करै या स्वर्गजित् नाम यज्ञकरै या गोसव यज्ञ करै या अभिजित् यज्ञ या विश्वजित् यज्ञोंसे यजन करै या त्रिवृत् नाम यज्ञसे या अग्निष्टुत् नाम यज्ञसे प्रायश्चित्तकरै— इनमें एक अश्वमेधका यज्ञ केवल सार्वभौम क्षत्रीको सूचितहै जो सब धरतीके राजाओं पर आज्ञाकारक महाराजाधिराजहो-क्योंकि पराशर ने ऐसा कहा है (यजेतवाश्वमेधेनसार्वत्रियस्तुमहीपतिः) कि जो क्षत्री सब धरतीका पति होय वह अश्वमेध से यजन करै (नासार्वभौमोयजेतेत्यसार्वभौमस्यप्रतिषेधदर्शनाच्च) और जो सार्वभौम न हो सो अश्वमेध न करै क्योंकि हरकोई अश्वमेधका अधिकारी नहीं यह प्रतिषेध भी देखा जाताहै=सार्वभौम को यह अश्वमेध रूपी प्रायश्चित्त उस दशा में कि जहां इच्छा सहित हत्या आदि करने से मरणांतिक प्रायश्चित्त ठहरा हो (इससे यह बात भी स्पष्ट होगई कि सार्वभौम से उपरान्त राजाओंको अश्वमेधके सिवाय जो अन्ययज्ञों के नाम कहे सो सब समझने) सार्वभौमके मध्ये यह वचनभी यमस्मृति का प्रमाण है कि=महापातककर्तारश्चत्वारोमतिपूर्वकम अग्निंप्रविश्यशुद्ध्यंतिस्थित्वावामहतिक्रतौ=अर्थात्—चारो महापातकी जो जानि बूझिके पाप करने वाले हुये हों सो अग्निमें प्रवेश करिके शुद्धि होतेहैं कि जैसा २४७ में बर्णन होचुका अथवा महायज्ञ जो अश्वमेधहै तिसमें बैठके शुद्धहोते हैं सो यह अधिकार सार्वभौम को कहिचुके तिससे उसको अग्निमें प्रवेश करना आवश्यक नहीं रहा किन्तु जिनको अश्वमेधक

अधिकार नहीं तिनको अग्निका अधिकार ठहिरा—क्योंकि यमस्मृतिके वचनद्वारा अग्निमें मरजाना और अश्वमेध करना दोनों फल बराबर सिद्धहुये ॥ ० ॥ और अनेक यज्ञ जो स्वर्जित आदि ऊपर दर्शाएगए तिनका अधिकार तीनोंवर्णोमें जो आहिताग्नि पुरुषहों और पहिले भी यज्ञ कर चुकेहों उन्हींको आवश्यक है (सबको नहीं) सो उनके लिये बारह वर्षोंसे विकल्पहै कि चाहैं बारह वर्ष की व्रतचर्या करैं या वही यज्ञकरैं जो पहिले कभी किया हो—परन्तु ऐसा नहीं कि प्रायश्चित्तही के निमित्त पर स्वर्जित आदि यज्ञ करना चाहिके अग्निका स्थापन करे या पहिला यज्ञ करे॰ क्योंकि जोपतित होचुका उसको द्विजातियोंवाले कर्मका अधिकार नहींरहा॰और तर्कभी न करनी चाहिये कि जैसे दोसौ तेंतालिस २४३ की अधिकोक्तिमें संध्योपासन करनेका अधिकार सिद्ध किया था तैसे उसकी तरह अग्निका स्थापन और प्रथम यज्ञका करना भी अविरुद्ध ठहिराया जाय॰ सो यह तर्क इस हेतुसे न करनी चाहिये कि वहां तो यह तात्पर्य था कि सभी कर्मोंके प्रारम्भमें शरीरकी शुद्धि करनी आवश्यक होतीहै वह शुद्धि स्नान और संध्यासे होतीहै जब कि प्रायश्चित्ती को स्नान करना उस अधिकोक्तिमें कहागया तो यह बात आपही सिद्ध होजाती है कि शुद्ध होनेके लिये स्नान करना कहा तिससे स्नानकी अंगभूत संध्याभी अवश्य करनी शेष रही सो करनी चाहिये—और यहां यह प्रयोजनहै कि अग्निका स्थापन और पहिला यज्ञ ये उस पिछिले यज्ञके अंगभूत नहींहैं जो प्रायश्चित्त रूपी करना कहा तिससे उसका शेष कर्मभी ये नहींहै जो संध्योपासनकी भाँति तत्काल करिलेना जातीकर्म से अविरोध माना जासके॰क्योंकि यहां यही तात्पर्यहै कि जिसके अग्निकी स्थापना का अधिकार होनेसे नित्यंप्रति अग्निहोत्र कर्म होता रहा और दोषी होजानेसे पहिले कोईसा यज्ञ भी उसने किया हो तिसको यह अधिकार पाया जाता है कि बारह वर्ष वाले प्रायश्चित्त के बदले उसी यज्ञ को फिरि करै जिसको पहले कभी किया था—अश्वमेधके उपरान्त जिन यज्ञोंका करना जिन लोगों पर ठहिराया गया तिनके लिये यह विचार भी करना आवश्यक है कि साक्षात् हन्ता पुरुष को बारह वर्ष के बदले पूरी दक्षिणा से कराया जाय और उसके सहायक आदि जिस किसी को आधा प्रायश्चित्त छै वर्षका ठहिराहो तिसको आधी दक्षिणा से और जिसको चौथाई तीनवर्ष के बदले यज्ञ ठहिरा हो तिसको चौथाई दक्षिणासे कराया जाय इत्यादि अपनी बुद्धि से व्यवस्था कल्पित करि लेनी चाहिये ॥ २४८ ॥

———

(अन्यच्चप्रायश्चित्तांतरम्)

अरण्येनियतोजप्त्वात्रिर्वैवेदस्यसंहिताम्। शुद्ध्येतवामिताशीत्वाप्रतिस्रोतःसरस्वतीम२४९
अर्थः—वनमें नियताहार होके वेदकी संहिता को तीनवार जपिके भी शुद्ध होय यद्वा मिताहारी होके स्रोत स्रोतके प्रति सरस्वती को जाइके भी शुद्ध होय=अर्थात् थोड़े भोजनका एकसा नियम बाँधि के निर्जन वन में किसी पुनीत स्थानपर वेद संहिताकी तीन आवृत्ति पाठकरै या उसी तरह थोरे प्रमाण का भोजन भिक्षा खाते हुये पूर्व देशमें प्लक्षनाम उपद्वीप के झरने से यात्रा प्रारम्भ करिके पश्चिम समुद्र तक पहुँचे फिर वहाँसे झरने और स्रोतोंके सहारे रास्तालेकर सरस्वती नदीको पहुँचे तौ शुद्ध होजाता है इससें बारह आदि वर्षोंका कुछ नियम नहीं रहा किन्तु जितने दिनमें उक्त कार्य होसकै वही नियम है॥ २४९॥

२४९अधिकोक्तिः—इसप्रायश्चित्त वालेको वह भिक्षालेनीचाहिये जो हविष्य में गिनती हो जैसे हेमंतिका आदि मुन्यन्न बहुधा होतेहैं क्योंकि (हविष्यभुग्वानुचरेत्प्रतिस्रोतःसरस्वतीम) मनुने यह कहाहै कि हविष्य भोजन करते हुये स्रोत स्रोत के द्वारा सरस्वतीको चलाजाय अथवा इस वचनका यह अर्थहै कि नित्यंप्रति हवन करिके उसका शेष बचाहुआ हविष्य भोजन करै किन्तु भिक्षा मध्ये कुछ हविष्य का नियम नहीं॥ वेद संहिताका जप करना कहा तीन वार सो मंत्र और ब्राह्मण रूप संहिता समझनी और संहिता लेनेसे वेदका पद क्रम इससें नहीं सूचित किया किन्तु केवल मंत्र ब्राह्मणात्मक संहिता का पाठ करना चाहिये•सो यह प्रायश्चित्त केवल उसी पर आरूढ है जो वेद पढा हुआ विद्वान् हो और निर्धनी भी हो जिसने आप गुणवान् होकर निर्गुण ब्राह्मणका वध किया हो और इच्छा बिना धोखा से वध कियाहो॥ दूसरा सरस्वती को जाना कहा सो निर्गुणी विद्या विहीन हत्यारा जो धनसे भी हीनहो जिसने किसी निर्गुणी ब्राह्मणको मारा हो तिसके लिये आवश्यक जानो क्योंकि (निरस्ततोयदाविप्रोनिर्गुणोम्रियतेयदीत्यादिनासुमन्तुवचनस्यदर्शितत्वात्) ये सुमंतु के वचन पहिले२४३की अधिकोक्ति मे लिखेगये तिनको भी देखौ=और जो मनुका यह वचनहै (जपित्वाऽन्यतमंवेदंयोजनानांशतंव्रजेत्) कि अन्यतम किसी एक वेद को जपिकर सौ योजन (चारसौकोस) की यात्रा भी करै सो भी यह वही प्रकारहै जो वनमें संहिता जपना कहागया मनुके इस वचन में सौ योजनकी यात्रा अधिकहै सो चलसकने में समर्थहो तिसकेलिये समझना तहाँ वेद

का जप एकही आवृत्ति है अर्थात जहाँ मात्रा करनी नहीं कही उसमें तीन आवृत्ति पाठ करना कहा ये दोनों बात एकसी बराबर हैं कुछ भेद नहीं ॥ अब जो बड़े धनवान हों तिनके लिये विकल्प नीचे कहेंगे ॥ २४९ ॥

(धनाढ्यानांप्रायश्चित्तान्तरंच)

पात्रेधनंवापर्याप्तंदत्त्वाशुद्धिमवाप्नुयात् । † आदातुश्चविशुद्ध्यर्थमिष्टिर्वैश्वानरीतथा २५०

अर्थः—यद्वा पात्रमें ठीक धन देकर शुद्धि को पावे † तथा उस धनका प्रतिग्रह लेने वालेकी विशुद्धि के लिये वैश्वानरी इष्टि करनी चाहिये अर्थात वैश्वानर देवता है जिसका ऐसा यज्ञकरे ॥ २५० ॥

२५० अधिकोक्तिः—पात्र ब्राह्मण वह कहाता है जो दान देने योग्य पात्र हो जिसके लक्षण शास्त्रों में प्रसिद्ध और आचार मर्यादा में कहिचुके हैं तैसेको धन धरती गऊ आदि उसके जीवन पर्याप्त ठीक ठीक देवै कि जिसते वह अपनी अवस्था भरका निर्वाह विधिपूर्व करसके ॥ † ॥ जिस पात्रने इस हत्याका प्रतिग्रह अंगीकार करिके लिया हो उसको भी अपने आत्मा की शुद्धि के अर्थ वैश्वानर यज्ञ करना चाहिये सो यह नियम अग्नि होत्रीपात्र का समझना किन्तु जो अनाहिताग्निपात्र होय सो अपने उस देवता का होमकरै जिसकी उपासना रखता हो (यएवाहिताग्ने धर्मःसएवौपासनिकस्येतिगृह्यकारवचनात) क्योंकि गृह्य सूत्रके संग्रहकार ने लिखा है कि जो आहिताग्नि अग्निहोत्री काधर्म है वही उपासनीय देवतावाले का धर्म है बराबर समझो ॥ पात्रेधनं वा यह विकल्प वाची वा शब्द जो मूल श्लोक में आया तिसके ध्वन्यर्थ से यह सूचना है कि इतना धन नहीं तौ सामग्री सहित घरही दान करै=यदाहमनुः=सर्वस्वंवावेदविदेब्राह्मणायोपपादयेत । धनंवाजीवनायालंगृहंवास परिच्छदम=अर्थात—मनु ने तीन कल्प कहे हैं कि यातो अपना सर्वस्व जितना धन घरमें संचितहो सब वेदवेत्ता ब्राह्मण को समर्पण करै या उस ब्राह्मण की जिंदगी भरके अनुमान धनदेवै या निज मकान घरकी सामग्रियोंसे सयुक्त भरापुरा दान करै तब शुद्ध होय=इसमें भी यह विषय व्यवस्था करनी आवश्यकहै कि सुपात्रको धन का देना कहा सो उस विषयमें समुझना जहाँ मारनेवाला निर्गुण और धनवान हो तथा निर्गुणको माराहो और इसी हत्यारेके यदि पुत्रादिक वंश न होतौ जैसा मनुने सर्वस्व दान कहा सोभी उचित है और जो उसके पुत्रादि वंश हो तौ सामग्री सहित घर देना उचितहै सर्वस्व नहीं पर ब्राह्मणको आयु भरके योग्य धनदेना यह वंशके

उपस्थितहोते भी उचितहै ॥ पराशरस्तु=चातुर्विद्योपपन्नस्तुविधिवद्ब्रह्मघातके समुद्र सेतुगमनंप्रायश्चित्तंविनिर्दिशेत सेतुबन्धपथेभिक्षांचातुर्वर्ण्यात्समाहरेत वर्जयित्वा विकर्मस्थान्छत्रोपानद्विवर्जितः अहंदुष्कृतकर्मावैमहापातककारकः गृहद्वारेषुतिष्ठामि भिक्षार्थीब्रह्मघातकः गोकुलेषुचगोष्ठेषुग्रामेषुनगरेषुच तपोवनेषुतीर्थेषुनदीप्रस्रवणेषुच एतेषुख्यापयन्नेनः पुण्यंगत्वातुसागरम् ब्रह्महाविप्रमुच्येत स्नात्वातस्मिन्महोदधौ ततःपूतोगृहंप्राप्यकृत्वाब्राह्मणभोजनम् दत्वावस्त्रपवित्राणि पूतात्माप्रविशेद्गृहम्=गवांवापिशतंदत्वा चातुर्विद्यायदक्षिणाम् एवंशुद्धिमवाप्नोति चातुर्विद्यानुमोदितः=अर्थात्–जहां चारों वेद आदि विद्यासे संपन्न ब्राह्मणही किसी विधि विधान के विज्ञाता ब्राह्मणको घातक करै तहां यह प्रायश्चित्त आदेश किया जाय कि समुद्रके पुल तक यात्राकरै और सेतुबन्ध रामेश्वरके मार्गमें चारों वर्णोंके घरोंसे भिक्षा मांगै परन्तु खोटे कर्म करने वालोंसे न मांगै और उनको साथ नलेकर और छत्री जूता छोड़े हुये इस रीतिसे मांगै कि मैं महापातकी कुकर्मा ब्रह्मघाती हूं घरके द्वार खड़ा हूं भिक्षा पानेको और भिक्षा मांगनेके समयसे उपरान्त भी जहां तहां गौओंके समूह पास जंगल और गौओंको रहायसके स्थानों पास तथा ग्रामों वा कसबों और बड़े शहरों में होकर जहां निकसनाहो और तपोवन जहां वनमें तपस्वी रहिते हों तिनमें तथा तीर्थके स्थानोंमें और नदीके घाट वा झरना सोता आदि कोईसा आश्रमहो तहां सर्वत्र अपना पाप सुनाते हुये पुनीत सागर समुद्र सेतुवन्धको पहुँचिके उस महोदधि में स्नान करिके हत्यारा मुक्तिपावै वहांसे पवित्र हुआ अपने घर जाइके ब्राह्मणभोजन कराइके पवित्र वस्त्र आदि दान देकर शुद्ध हुआ अपने घर में घुसै=अथवा=यह न होसकै तौ एकसौ गौऐं विधि विधानसे चारवेदके विज्ञाताको दक्षिणा देकर भी शुद्ध होताहै क्योंकि चातुर्विद्य दानपात्र के आशीर्वचनों से शुद्धि प्राप्त होती है–सो यह दोनों कल्प भी उसीके समान समुझने जैसा योगीश्वरके मूलश्लोकमें कहागया कि जो धनवान् और विद्यासे हीनहो तौ धनदान करै तैसा यहां विद्वान् हत्यारे का चर्चाहै कि यातो समुद्रकी यात्रा करै या एकसो गौऐं दानकरै ॥ ० ॥ जोकि सुमंतु का यह वचन है कि=ब्रह्महासंवत्सरंकृच्छ्रं चरेदधः शायी त्रिषवणी कर्मावेदको भैक्षाहारो द्विवय नदीपुलिन संगमाश्रम गोष्ठ पर्वत प्रस्रवण तपोवन विहारीस्यात्स्थान वीरासनी संवत्सरे पूर्णे हिरण्यमणि गोधान्य तिलसर्पि र्षि ब्राह्मणेभ्योदद्यात् पूतोभवति–तदपिहंतुमूर्खस्यधनवतोजाति मात्रव्यापादनेद्रष्टव्यं=अर्थात्–सुमन्तु ने जो कहा कि–ब्रह्महत्यारा एकवर्ष भर कृच्छ्रव्रत करै धरती में सोवै तीनों संध्या में

स्नानकरे अपना कर्म सुनाता रहै भिक्षा भोजन करै दिव्य नदियों के किनारे और नदियों के संगम स्थानपर और जहां तपस्वियोंके आश्रम हैं गौओंका निवास हो पर्वत के आश्रम और झरने और तपोवन हैं सबमें विहार करतारहै स्थानपर टिके तहां आसन का वीर होके रहै इसतरह एकवर्ष पूरा होनेपर सोना चाँदी मणिगऊ अन्न तिल धरती घी ये चीजें ब्राह्मणों को दान करता हुआ पवित्रहोजाता है—सो यह नियम भी ऐसे विषयपर समझना जहां मारने वाला मूर्ख और धनवान्होऔर अपने वर्ण जाति मात्र की हत्या करीहो॥ और जो वसिष्ठ का यह वचनहै (द्वादशरात्रमब्भक्षोद्वादशरात्रमुपवसेत) कि बारह दिन जलपीके रहैफिर बारह दिनकोरा उपवास करै • सो यह कल्प ऐसे विषय पर आरूढहै कि जहां मन से ब्राह्मण का मारडालना चाहि के मारने गया फिर आपही कुछ सोचि के विना मारे लौट परा हो जैसा २५२ मूलश्लोक में कहेंगे तहां देखना॥ और जो षट्त्रिंशत मतका वचन है (यंदंतुब्राह्मणंहत्वाशूद्रहत्याव्रतंचरेत चांद्रायणंवाकुर्वीत पराकद्वयमेववा इति तदप्रत्यानेय पुंस्त्वस्यसप्रत्ययवधेद्रष्टव्यं) किनपुंसब्राह्मणको मारि के शूद्रकी हत्यावाला व्रतकरे या चांद्रायण करै या दो पराक साधै—सोयह उस विषय पर विचारना कि जहां मरे ब्राह्मण की नामर्दी निपट असाध्य हो अर्थात पुंस्त्व चिकित्सा आदि से न होने योग्य ठहिरै और प्रत्यय सहित वध किया गया हो—इसी विषयपर अप्रत्यय वध होने मध्ये बृहस्पतिका वचन है (अरुणायाःसरस्वत्याःसंगमेलोकविश्रुते शुद्धेत्रिषवणस्नायीत्रिरात्रोपोषितोद्विजः)अर्थात— अरुणा और सरस्वती के संगमका स्थल जो लोकमें प्लक्षद्वीप से विख्यात है तिसमें त्रिकाल स्नान करने और तीनरात्रि निराहार व्रतकरनेसेद्विजाती शुद्धहोताहै—इसीप्रकार और भी स्मृतियोंके वचन ढूंढिकर जो विषय हों तिनकी व्यवस्था बुद्धिमानीसे कल्पित करनी चाहिये जो परस्पर समान हों तिनका विकल्प मानना चाहिये॥ ० ॥ ध्यान करो कि बारह वर्षको आदिलेकर वनवास पर्यंत जो प्रायश्चित्त लिखे गये सो सब केवल ब्राह्मण के मारने के निमित्त में समझने किन्तु क्षत्री आदिको लिये दूना आदि नियम समझना सो अंगिराके वचनमें देखो=यथाहांगिराः=पर्षद्वाब्राह्मणानांतुसाराजन्ये द्विगुणास्मृता वैश्यानांत्रिगुणाप्रोक्तापर्षद्वच्चव्रतंस्मृतम=अर्थात—ब्राह्मणोंकीपर्षत सभा का परिमाण जितनाहो उससे दूना राजाओंकी सभाका और तिगुणा साहूकार वैश्योंकी सभामध्ये कहाहै और पर्षद के समान सबका व्रत भी होय दूना तिगुना—इनवचनों के यह तात्पर्य ठहिरा कि जिस दशा में दो ब्राह्मणों के परस्पर एकमारा

जानेमें दोनोंके गुण लक्षण आदि विचार से जो प्रायश्चित्त ठहिरै वही प्रायश्चित्त उसी गुणवाले क्षत्री को दूना उपदेश किया जाय जिसने उसी गुण वाला ब्राह्मण मारा हो तथा वही प्रायश्चित्त उसी गुणवाले वैश्यको तिगुना उपदेश किया जाय जिसने उसी प्रकारका ब्राह्मण मारा हो और इसी मर्यादासे यहभी नियम निश्चित हुआ कि जो जो प्रायश्चित्त ब्राह्मणोंके परस्पर नियतहोचुके वही प्रायश्चित्त उत-नेही परिमाणसे उन दशामें क्षत्री आदिको भी दिये जायँ कि जब उनके अपने वर्ण-मात्रमें परस्पर कोई उसी वर्णका मनुष्य माराजाय (इसका विशेष व्योरा नीचे चतु-र्विंशतिके वचन से भी समझना) और इसी मर्यादासे जहाँ क्षत्री वैश्य या वैश्यऔर शूद्र में ऊंचे नीचे के विरुद्ध से ऊंचा मारा जाय तहां भी दूना आदि आदेश करना जैसा ब्राह्मण और क्षत्री आदिके मध्ये अभी कहिचुके—यह सब दोष की वडाई के अनुसार प्रायश्चित्तों की कल्पना होतीहै जहाँ कहीं दोष की वड़ाई छोटाई पहिँ-चानने में संदेह खड़ा होय तहाँ दण्डकी वडाई से भी दोषकी वड़ाई समझी जातीहै जैसा व्यवहार में कहचुके हैं कि (प्रतिलोमापवादेषुद्विगुणास्त्रिगुणोदमः वर्णानामा नुलोम्येचतस्मादर्धार्धहानितः)अर्थात प्रतिलोम अपवादोंमें कि जहाँ नीचावर्ण ऊंचे वर्ण का अपराध करै तहां दूना तिगुना दण्डहै अर्थात शूद्र जो वैश्यका अपराधी होय तिस पर दूना जो क्षत्री का अपराधी होय तिसपर तिगुना इसी तरह वर्णोंके अनुलोम अपराध में कि जहां ऊँचा वर्ण नीचेका अपराधी होय तहाँ आधा आधा दण्ड घटजाताहै यह व्यवहार मर्यादा परिपाटीमें देखो ॥ ० ॥ और जो चतुर्विंशति मतका वचन है कि (प्रायश्चित्तंयदाम्नातं ब्राह्मणस्यमहर्षिभिः पादोनंक्षत्रियःकुर्या दर्द्धंवैश्यःसमाचरेत् शूद्रःसमाचरेत्पादमशेषेष्वपिपापसुइति तत्प्रतिलोमानुचितचतु-र्विधसाहसव्यतिरिक्तविषय मितिविज्ञानेश्वरः) अर्थात—चतुर्विंशति मत वालोंने कहाहै कि महर्षियोंने जो प्रायश्चित्त ब्राह्मणको बताया वही प्रायश्चित्त चौथाई कमकरिके क्षत्री करै और वैश्य आधा करै शूद्र चौथाईकरै यह अशेषसभी पापोंमें समुझना०इसपर विज्ञानेश्वर व्यवस्था देते हैं कि यह नियम उन पापों को छोड़ि के समुझना जो अपराध प्रतिलोम छोटी जातोंने ऊँची जातोंकेसाथ कियेहों और उनको भीछोड़िके समुझना जो चारभाँति के साहस व्यवहारकांड में लिखे गये क्योंकि जो ऊँची जातोंके साथ किये गये तिनका प्रायश्चित्त ऊपर अङ्गिरा के वचन से दूना तिगुना ठहर चुका और साहस चाहैं किसी के साथ किये जायँ तौभी वडे अपराध हैं उनका भी दूना तिगुना ठहिराना चाहिये इनसे उपरान्त और सब अशेष पाप जो

अपनी जाति के साथ किये जायँ या छोटी जातों के साथ किये जायँ उनके मध्ये चौथाई आदि कम करिके क्षत्री आदिका नियम इस वचनमें ठीकरहा (चार प्रकार के साहस मनुष्य मारडालना १ प्रबलता से चोरी करना लूटना आदि २ पराई स्त्री के साथ प्रबलता करनी ३ प्रतिलोम गालीदेना आदि कुवचन ४) इन अपराधों में चौथाई आदि कमका नियम नहीं होसक्ता यह तात्पर्य है ॥ ० ॥ तथैव मूर्द्धावसिक्त आदि अनुलोम जातों का प्रायश्चित्त उनके दंडके अनुरूप विचारना चाहिये (दंड प्रणायनं कार्यं वर्णा जात्युत्तराधरैः)यहवचन व्यवहारकांडमें आचुका है इसीसेउनका दण्ड विचार होता है प्रायश्चित्त इस रीतिसे विचारा जाय कि जहां मूर्द्धावसिक्त ने ब्राह्मणका वध किया हो तो उसको ब्राह्मणसे अधिक और क्षत्रीसे न्यून प्रायश्चित्त चाहिये तिसमें बारहवर्ष के जगह अठारह वर्ष निश्चितहुये इसी नमूनासेऔरोंकोभी समुझि लेना और स्त्री बालक बूढा रोगी होनेआदिके विचार सबके साथकरने जो पहिलेलिखचुके हैं ॥ इसी मार्गसे प्रतिलोमोत्पन्न जातोंका प्रायश्चित्त बढ़ाकर ऊहा करलेनाचाहिये॥ तथैव आश्रमके निवासियों को अंगिराने विशेषता दर्शाईहै=यथा ऽंगिराः=गृहस्थोक्तानिपापानिकुर्वंत्याश्रमिणोयदि शौचवच्छोधनंकुर्युरर्वाग्ब्रह्मनिदर्शनात्=अर्थात्–गृहस्थोंके मध्ये कहे पाप जो ब्रह्मचारीआदि आश्रमीलोगभी करैं तो अपने अपने शौचकेतुल्य पापोंका शोधन प्रायश्चित्त करैं यह ब्रह्मनिदर्शन से पहिलेसमुझना(ब्रह्मके निदर्शनमें अर्थात् ब्रह्मज्ञानसे पहिले•इसबातका यह तात्पर्यहै कि जब तक अपने आश्रम धर्मोंकी साधनासे पूरे सिद्ध न होचुकेहों केवल अभ्यास किया करतेहों तभी तक अपने शौचके अनुसार वेही प्रायश्चित्त करैं जो गृहस्थोंके निमित्त कहेगये और आगे कहेजायँगे परन्तु जो विरला कोई ब्रह्मचारी या वानप्रस्थ व यती सन्यासी अपने धर्मकी साधना अति कालसे करते करते योग धारणा आदि पूरी सिद्धिको पहुंचिके ब्रह्मज्ञानमें पूरा और ब्रह्मस्वरूप की तन्मयतामें दृढ़ होगया हो उसके लिये यह गृहस्थोंवाले प्रायश्चित्त नहींहैं क्योंकि प्रथम तो ऐसे महात्मा से महापाप होना भी सम्भव नहींहै तथापि जो कदाचित्काल जगदीश की इच्छामे कोई सा निमित्त आनि पड़े तब उनका नैमित्तिक प्रायश्चित्त भी उन्हीं के हाथ में रक्खा रहता है कि बहुतर प्राणायाम आदि योगोंकी धारणा से विशुद्ध होंगे और अपने आप विशुद्धि करनेपर समर्थहोंगे यद्वा अपने आप उपेक्षा देखिपरनेमें उन्हीं के परिकर वालोंको प्रेरणा उनपर होगी कि जैसे गृहस्थी को गृहस्थी पतित करिदेता त्याग देताहै तथापि गृहस्थी मात्रको प्रेरणा उनपर उचित नहीं) इस प्रकार के

विशिष्टोंको छोड़िकर शेष आश्रमियोंको शौच के तुल्य कहा तिसका यह तात्पर्य है (एतच्छौचंगृहस्थानां द्विगुणंब्रह्मचारिणाम् त्रिगुणंतुवनस्थानांयतीनांतुचतुर्गुणं) इस वचन से आचार मर्यादा में कहिचुके हैं कि यह शौच का प्रमाण कहा सो गृहस्थोंका जानना और ब्रह्मचारियों को इससे दूना चाहिये वानप्रस्थों को तिगुना चाहिये यती संन्यासियों को चौगुना–इसी के तुल्य प्रायश्चित्त भी दूना तिगुना चौगुना समुझिलेना ॥ परन्तु ब्रह्मचारीको सोरह वर्षकी अवस्था उपरान्त दूना चाहिये क्योंकि (बालोवाप्यूनषोडशः) सोरहसे कम अवस्थामें बालक कहाता है (प्रायश्चित्तार्द्धमर्हति) बालक बूढे आदि आधे प्रायश्चित्तके योग्य होते हैं यह पहले कहिचुके ॥ ० ॥ यह शंका न करनी चाहिये कि यती को बारह वर्ष का चौगुना अरतालीस वर्ष करनेका अवकाश मिलसकना सम्भव नहीं क्योंकि इतनी अवस्था उसकी कहां रही बीचहीमें देह छूटिकर प्रायश्चित्त पूरा न होगा तिससे प्रारम्भ न करना चाहिये–सुनो प्रारम्भ करना चाहिये क्योंकि प्रारम्भ करिके मरजाने पर भी पापका विनाश होजाता है=तथाच हारीतः=प्रायश्चित्तेव्यवसितेकर्तायदिविपद्यते पूतस्तदहरेवासौ इहलोकेपरत्रच=व्यासोप्याह=धर्मार्थंयतमानस्तु नचेच्छक्नोतिमानवः प्राप्नोभवतितत्पुण्य मत्रनैवास्तिसंशयः=अर्थात्–प्रायश्चित्त करने पर निश्चय से उतारू होनेमें जो कर्ता मरजाय तो वह उसी दिन पवित्र होजाता है इसलोक और परलोक में भी यह हारीतनेकहा और=व्यासभी कहिते हैं कि=धर्म के निमित्त यत्न करता हुआ यदि कोई पुण्य न करसके तोभी उसके किये तुल्य पुण्य फल मिलता है इसमें संदेह नहीं ॥ २५० ॥

॥ अब निचले परिच्छेद में और भांतिके पातकमें भी इसी ब्रह्महत्या वाला प्रायश्चित्त अति देश किया जायगा ॥

———॰———

अथक्वचिद्ब्रह्मवधादन्यत्रापिब्रह्मवधप्रायश्चित्तातिदेशप्रदर्शकोऽयंपरिच्छेदः विंशः२०॥

इस परिच्छेदमें पूर्वोक्त ब्रह्महत्याका प्रायश्चित्त विरले उनपापों पर भी अतिदेश दिया जायगा जो साक्षात् ब्रह्मवध नहीं है॥

(यागस्थक्षत्रियघातकादिष्वतिदेशः)

यागस्थक्षत्रियविड्घातीचरेद्ब्रह्महणिव्रतम्। गर्भहाचयथावर्णंतथाऽऽत्रेयीनिषूदकः २५१

अर्थः—यज्ञकर्म पर आरूढ क्षत्री या वैश्यको घात करनेवाला ब्रह्महत्या का व्रत करे एवं गर्भका मारनेवाला यथा वर्णके अनुसार तथा (आत्रेयी) रजस्वला आदि स्त्री का वध करनेवाला भी वर्णके अनुसार प्रायश्चित्त करे॥ २५१॥

२५१ अधिकोक्तिः—यहां याग शब्दसे सोमयाग लिया गया है कि सोमयाग की दीक्षा प्रारम्भ होनेसे लेकर समाप्ति पर्यन्त मध्यकाल में जो क्षत्री या उस भांति यज्ञमें लगे हुये वैश्यको मारै सो ब्रह्म हत्यारे मध्ये बारह वर्ष आदि व्रत कहा गया वही करै (ब्रह्महणिप्रत्येयद्व्रतमुपदिष्टंद्वादशवार्षिकादितदेवचरेत्)—यद्यपि याग शब्दसे सब यज्ञ समुझे जातेहैं तथापि यहां सोमयागही मानागयाहै क्योंकि (सवनगतौचराजन्यवैश्यावितिवासिष्ठे सवनत्रयसंपाद्यस्य सोमयागस्यैवनिर्दिष्टत्वात्) वसिष्ठ की स्मृति में सोमयागही का निर्देश इस रीतिसे हुआ है कि सवन में लगे हुये क्षत्री वैश्यको इत्यादि कहिकर तीन सवनसे पूरा होने योग्य सोमयाग दर्शाया है=इसमें भी=बड़े छोटे व्रत बारहवर्ष आदि के जैसे ब्रह्महत्या पर कहेगए तैसे बड़े छोटे आदि यहां भी इच्छाकी ज्ञाति शक्ति गुण आदिकी अपेक्षासे विचार कर लेने चाहिये—ऐसेही गर्भका वध करने और आत्रेयीका वध करनेमें भी समुझना—परन्तु—इसविषय पर कोई प्राचीनका यह नहीं मानतेहैं जो मरणांतिक अग्निमें जलिजाना आदि कहे गए हैं क्योंकि योगीश्वरने लगाएलोकामें व्रत करना कहागया है इसी कारणसे यह कल्पना किया गयाहै कि जिसने बिना इच्छाके वध कियाहो तिसको बारह वर्षका दूना करा और जिसने इच्छा से चाहिके वध किया हो तिसको मरणांतिक प्रायश्चित्तके बदले बारहवर्ष का दूना चौबीस वर्ष व्रतही आदेश कियाजाय सोभी

इसमें पूरा व्रत करना चाहिये (अर्थात् मूलश्लोकमें योगीश्वरने अतिदेश रूपी धर्म कायम कियाहै तिससे यद्यपि एक पाद कम करिके नौवर्ष और दूने के स्थान पर अठारह वर्षका औचित्य पाया जाता है तथापि ऐसा न करना किन्तु पूरा ही व्रत करना चाहिये) क्योंकि यह केवल आतिदेशिक नहीं वल्कि आपस्तंब के वचना-नुसार औपदेशिक धर्म सिद्ध होताहै सो सब आगे देखो कि आपस्तंबने (पूर्वयोर्वर्णयोर्वेदाध्यायिनंहत्वा इतिप्रक्रम्यापस्तंवेनद्वादश वार्षिकाभिधानात्) प्रथमके दोनों वर्णमें वेद पढनेवालेको मारिके इत्यादि कहिकर पीछे बारहवर्षका अभिधानकिया है तिससे यह उपदेश ठहरा॥ ० ॥ गर्भ जो विज्ञाहिता और सुरक्षिता स्त्रियों में हो तिसको हनन करिके यथा वर्ण के अनुसार प्रायश्चित्त करै अर्थात् जिस वर्ण का पुरुष मारने में जो प्रायश्चित्त कहा हो वही प्रायश्चित्त उस वर्णका गर्भहतकरनेमें भी आचरै सो यह नियम इसलिये है कि जब तक गर्भ पैदा न हुआहो तबतक स्त्री पुरुष नपुंसकया पैदा होगा यह नहीं मालूम होसक्ता और इसी लिये (हत्वागर्भमविज्ञातं इत्यादि) यह मनुने विशेष नियम किया है कि विना पहिचाने गर्भ को मारिके अमुक प्रायश्चित्त करै—इसमें यद्यपि यह कहिसकते हैं कि जो गर्भ ब्राह्मण का प्रत्यक्ष है उसके वध करने में ब्राह्मणत्व से ही ब्राह्मणके मारने का प्रायश्चित्त पहुंचता तौभी यह शंका है कि शायद कन्या पैदा होती यह मारने वाद मालूम होजाय तो यह उपपातकों में गिनती होना चाहिये क्योंकि (स्त्री शूद्र विट् क्षत्र वधो) यह दोसौ छत्तीस मूलश्लोक से उपपातक वताइचुके हैं तिसका थोड़ा प्राय-श्चित्त पहुँचता है इस हेतु से विनाजाने गर्भ को पुरुषही मानिके उसके मारनेका वही प्रायश्चित्तकरार दिया है जो ब्राह्मण के मारने में होता कहिचुके हैं॰ परंतु जो गर्भ उत्पन्न होने वाद माराजाय या मारि गिराय देने वाद मालूम होजाय किपुरुषया स्त्री या नपुंस है तो फिर उसी के अनुसार जैसा चाहिये सो प्रायश्चित्त करायाजाय ॥ ० ॥ जिसने आत्रेयी स्त्री का वध किया हो सो भी गर्भकी रीतिसे व्रतकरै अर्थात् आत्रेयी का जो वर्णहो उसी वर्णको वध करने का प्रायश्चित्तकरै (आत्रेयी नाम से ऋतुमती कही जाती है जिसको सात्विक ऋतुकाल(वर्त्तमान हो)तदाह वशिष्ठः= रजस्वलामृतुस्नाता मात्रेयीमाहुरत्रह्येष्यदपत्यंसंभवति=अर्थात्—रजस्वला स्त्री जिसने ऋतुकाल का स्नान कियाहो तिसको आत्रेयी शब्द से कहिते हैं इसमें संतान होने की संभावना पाई जातीहै अनन्तर वीर्यदान पहुँचने से॰ इसीलिये इसके मारने का महिनक पातक है जिसको जुदा करिके योगीश्वर आदि अनेक ऋषियों ने दर्शाया

है (अत्रि मुनि के गोत्र की सब स्त्रियों कोभी आत्रेयी कहितेहैं रजस्वला होनेबिना भी उनके मारने का विशेष पाप समझना जैसा रजस्वलाका कहिचुके) यथाह विष्णुः=अत्रिगोत्रजांवानारीम=यह बातभी अगिले वचन में स्पष्ट है=यथा=ब्राह्मणगर्भवधे ब्राह्मण्याआत्रेयीवधेचब्रह्महत्याव्रतं (अत्रक्षत्रियगर्भवधे क्षत्रियाऽऽत्रेयीवधेचक्षत्रहत्याव्रतमेवमन्यत्रापि) अर्थात्–ब्राह्मण का गर्भ वध करने में और ब्राह्मणी जो आत्रेयी रजस्वला या साक्षात् अत्रिके कुलकी हो तिसके वध करने में ब्रह्महत्या का व्रत करे (इसमें इसी रीति से यह भी जोडि लेना कि क्षत्री का गर्भ वध करने और क्षत्राणी जो आत्रेयी रजस्वला हो तिसके वध करनेमें क्षत्री की हत्या वाला व्रत करे इसी तरह वैश्यआदि मेभी जोडि लेना) यह प्रयोजन यहां नहींहै कि रजस्वला मारी गईहो क्योंकि यद्यपि ऊपर के वर्णनमे आत्रेयी ऋतुस्नाता मात्र प्रतिपादन करीगई तथापि ऐसा मत समझना किंतु इस वार्ता का यह तात्पर्य है कि जितनी अवस्था तक रजो धर्म होता बना रहै उस अवस्था के भीतर जो वध करै तौ यह आत्रेयी वध कहावै क्योंकि अनेक संतान होनी सम्भवथीं अर्थात् जिस स्त्री का मासिकधर्म निपट बंद होगया हो सो आत्रेयी नहींहै उसके वधकरने में सामान्य स्त्री वध कहावै और प्रायश्चित्त भी उपपातकों वाला करना ठहिरै क्योंकि निपट कोई भी संतान होने की आशा नहीं रही यही न्याय दाय भाग के अनुसार ठीक ठीक है• अन्यथा जो केवल उन्हीं तीनि दिवसों में गर्भ होना सम्भव जानि के आत्रेयी ठहिराओगे तब यह अत्यंत प्रबल दूषण खडा होगा कि यदि रजस्वला होने से पांच दिन पहिले उसकावध किया जाता तौभी अनेक गर्भ होना संभव थे क्योंकि अभी दश वर्षतक औरभीरही आती उसमे १२० एकसौ बीस बार रजोधर्म्म होता और अनेक सन्तान होसक्ती फिर क्यों बार उसके हन्ता को छोटा सा प्रायश्चित्त कराया जाय) इस व्यवस्था की सूक्ष्मता पर दृष्टि देनी चाहिये कि यद्यपि स्त्रियों की हत्या पुरुषोंसे आधी कहिचुके तथापि आत्रेयी वध करने मे पुरुषकी बराबर हत्या होती है॥०॥

योगीश्वर के श्लोक मे (गर्भहाच) यह चकार जो पालतू रहा तिसके अन्वयार्थ से झूंठी गवाही देने वाले आदि भी समझने=यथाहमनुः=उक्त्वाचैवानृतंसाक्ष्ये प्रतिरभ्यगुरुंतथा अपहृत्यचनिक्षेपंकृत्वाचस्त्रीसुहृद्वधं=अर्थात्–जिस मुकद्दमात में अनृत्य होनेसे किसी वर्णके मनुष्यकी मौत वगह मिलना सम्भवहो ऐसी गवाहीमें अनृत्य बोलिके और गुरुसे झूठ बोल करिके और ब्राह्मणकी धरोहरि हजम करिके और स्त्री तथा मित्र का वध करिके ब्रह्महत्याका व्रत करै–इसमें जैसे असत्य की विशेषता

बहुत बडी कही और गुरुसे क्रोध करना भी विशेष है और धरोहरि भी ब्राह्मण की ठहिराई तैसे स्त्रियांभी विशेष लक्षणवाली समझनी क्योंकि प्रायश्चित्त बहुत बड़ा है तिससे आहिताग्नि पुरुष अग्निहोत्रीकी भार्या और पतिव्रत आदि गुणोंसे संयुक्त जो स्त्री हो और सवसस्था जो यज्ञपर समुद्यत होरहीहो तिसका बध समझो सब स्त्रियों का नहीं (क्योंकि आत्रेयीको अभी ऊपर कहिचुके और उससे उपरालू अनार्त वा स्त्रियां उपपातकों में गिनतीहैं तिससे इन दोनोंसे उपरालू जो विशेष लक्षण वाली हों तिनका बध मनुने दर्शाया है तिसका स्पष्ट ब्यौरा आगे अंगिरा और पराशर के वचनों में देखो) यथाहांगिराः=आहिताग्नेर्द्विजाग्र्यस्यतथापत्नीमनिंदिताम् ब्रह्महत्याव्रतंकुर्यादात्रेयीघ्नस्तथैवच=सवनस्थांस्त्रियंहत्वाब्रह्महत्याव्रतंचरेदितिपराशरोपि =अर्थात्–द्विजातियोंसें अग्रगण्य अग्निहोत्री की पत्नी तथा और जो पतिव्रत आदि गुणोंसे अनिंदितहो तिसको और आत्रेयीको मारने वाला ब्रह्महत्या का व्रत करै यह अंगिराने कहा=सवनस्था जो किसी प्रकारके यज्ञ पर उतारूहो ऐसी स्त्रीको मारिके ब्रह्महत्याका व्रतकरै यह पराशरने कहा=इन वचनोंसे यह तात्पर्य ठहिरा कि सवन॰ स्था स्त्री और अग्निहोत्रिणी और पतिव्रता और आत्रेयी इनको मारने वाला ब्रह्महत्याका प्रायश्चित्त करै यह अतिदेश कहागया इसी से यह बातभी स्पष्ट हुई कि दोसौ छत्तीस २३६ मूलश्लोक में जोस्त्रियों का वध कहाथा सो इन उत्तम स्त्रियों से उपरालूका समझना=यहांभी=वादी तर्क उठाता है कि (ब्राह्मणोनहंतव्यः) ब्राह्मण न मारना चाहिये यह निषेधका वचन जो नियत है तिसमें कोई ऐसा चिह्न नहीं है जिससे लिंग वचन आदिकी विशेष विवक्षा जानीजाय और ब्राह्मणकी जातिभी स्त्री पुरुष दोनों मिलिके विना विशेषताके होती है॰ उस निषेध का अति क्रम करने के निमित्त पर प्रायश्चित्त की विधि जो (ब्रह्महाद्वादशाब्दानि) इत्यादि पहिले कहि चुके सो स्त्री पुरुष दोनोंको जुदी जुदी हत्यापर पहुँचतीहै तौ फिर किसलिये आत्रेयी को मारने वाला यह अतिदेश वचन कहागया–सुनो–इसलिये कहा गया कि ब्राह्मणीमें ब्राह्मणत्व के होते हुये भी जो ब्राह्मणी आत्रेयी नहो तिसके बध होने में महापातकोंका प्रायश्चित्त निकासि देनेके लिये वचन कहागया इसीसे दोसौछत्तीस श्लोकसे उपपातकोंमें उसका पाठ और प्रायश्चित्तभी उपपातकों वाला सूचितहुआ है (और अतिदेश वाले जो अपराध हैं तिन में केवल प्रायश्चित्तही का अतिदेश किया गयाहै किन्तु पातित्य का अति देश नहीं इससे पतित का त्याग आदि कार्य्य इसमें नहीं होता इति विज्ञानेश्वराचार्यः॥ २५१॥

अब नीचे यह कहेंगे कि मारनेको जाइके लौटि आवै सोभी व्रतकरै और विरली हत्यामें दूना व्रत करना होगा ॥

(अहननेपिक्वचित्प्रायश्चित्तंहननेतुक्वचिद्द्विगुणं)

चेन्द्रनमहत्त्वापियातर्थचेत्समागतः । द्विगुणंसवनस्थेतुब्राह्मणेव्रतमादिशेत् २५२

अर्थः—न मारिके भी व्रतकरै जो घातके लिये पास आयाहो । सवनस्थ ब्राह्मण के मारनेमें द्विगुण व्रत आदेश करै=अर्थात्—यथावर्णोके अनुसार यह संबन्ध पहिले श्लोक में से चला आताहै कि यदि कोई किसीको शस्त्र लेकर मारने उसके समीप तक गया हो और विना मारे कुछ सोचि के लौटिआवै या उसके न मिलने से घात खाली चलाजाय तो यह हत्यारा ठहिरा तिससे जिस वर्णके मनुष्य को मारने गया उसी वर्णकी हत्या में जो प्रायश्चित्त का व्रत लिखा हो सो इसको करना चाहिये ब्रह्महत्या या क्षत्रहत्या आदि के प्रायश्चित्त करै शेष अधिकोक्तिमें देखौ । सवनस्थ अर्थात् सोमयाग में स्थित होते ब्राह्मण को जिसने मारा हो तिसके लिये बारह वर्ष आदि का दूना व्रत बताया जाय ॥ २५२ ॥

२५२ अधिकोक्तिः=न्यायचेद्ब्राह्मणवधे अहत्वा पीति गौतमः=अर्थात्—गौतमने भी कहा है कि जो ब्राह्मण के वध करने में गयाहो फिर चाहैं किसी हेतुसे न मारि पावै तौभी वही पाप है जो मारने मे होता—अथवितर्कः—क्यों जो मारडारने और न मारनेमें भी एकही प्रायश्चित्त तो नहीं ठीक है—यह सत्य कहा इसी लिये औ- पदेशिकों से आतिदेशिकों की न्यूनता अनुसार उनसें चौथाई कम करिके ब्रह्म- हत्या आदि के व्रत होते हैं जो बारह वर्ष आदिके कहे गये यह प्रपंच पहिले २३१ श्लोकोक्तगतिस की अधिकोक्ति में लिखि चुके तहाँ देखौ (औपदेशिक विषय वे कहाते हैं कि जिनके ऊपर मुख्यतामें उपदेश किया गया हो जैसे ब्रह्महत्याके ऊपर बारह वर्ष आदिके अनेक उपदेश किये गयेहैं और आतिदेशिक विषय वे कहाते हैं जिनके ऊपर मुख्यता से उपदेश नहीं कियागया किसी और का उपदेश लेकर उस पर भी उतार दिया गया सो अतिदेश होताहै उसी अतिदेश के प्रभाव से वह विषय भी आतिदेशिक कहाता है जैसे २५१ के श्लोक वाले विषय पर ब्रह्महत्या का अतिदेश उतार दिया गया तिससे वह विषय आतिदेशिक ठहिरा यह पूर्वार्ध की अधिकोक्ति पूरी हुई अब आगे उत्तरार्द्ध की कहेंगे । सवनस्थ के मारे जाने में दूना व्रत करना कहागया तहां मूलश्लोकमें यद्यपि सवनस्थ ब्राह्मणके साथ कोई विशेषण

ऐसा नहीं है कि जिससे उसका गुणवान् या निर्गुण होना आदि विशेष चिह्न पायाजाय या हंताके विशेषण जाति आदि कुछ समझे जायँ॰ तथापि दोसौतेंतालिस२४३की अधिकोक्ति और दोसौ सत्ताइस२२७की अधिकोक्तिमें पहिलीकही रीतोंसे यहांभी सवनस्थ ब्राह्मण और उसके हंताकी जाति शक्ति गुण विद्या आदि और बड़े छोटे व्रतों की अपेक्षासे व्यवस्था निर्णय करनी चाहिये क्योंकि मुख्यनिय जो एक स्थलपर कहाजाता है वही सर्वत्र काम आता है॰इन बातों का दृष्टान्त जैसे अति बूढे या बालकने मारा तो उनको बूढापन और बालपनके हेतुसे चौबीस वर्ष की आधी बारहवर्ष रहिगई इत्यादि=इसी दोसौबावनके श्लोकमें उपदेश और अतिदेश दोनों मवजूदहैं तिनको सोचो कि उत्तरार्द्धमें सवनस्थके मारनेपर जो दूना प्रायश्चित्त बताया सो तो साक्षात् उपदेशहै किसीका अतिदेश इसमें नहीं है तिससे यह पूराही प्रायश्चित्त कराया जायगा केवल मारनेवाले की अवस्था आदि के अनुसार रिआयत होगी और नहीं-और इसी मूलश्लोक पूर्वार्द्धमें जो मारने को पहुंचि के न मारिपावै तिसके लिये जो ब्रह्महत्या वाले व्रतका आचरण कहा सो उपदेश नहींहै अर्थात् अतिदेश उतार दियाहै तिससे यद्यपि पूरे बारह वर्षका अतिदेश कहा तो भी पूरा नहीं कराया जाय किन्तु चौथाई कम करिके नौवर्ष का व्रत कराना होगा यही तात्पर्य दोसौ इकतीसकी अधिकोक्ति में दर्शाइ चुके सो सर्वत्र समझते रहिना॥०॥ दूसरी यह व्यवस्था याद रक्खौ कि ब्रह्महत्या के समान जो पाप दोसौ अट्ठाइस मूल श्लोकसे गुरुओंका अधिक्षेप आदि कहेगए सो सब आतिदेशिकों से भी कुछ हलुके पापहैं तिससे उनमें बारह वर्ष आदि का आधा कम करिके व्रत करायाजाय क्योंकि एक चौथाई तो आतिदेशिकमें कम होचुकी ये उनसे भी हलुके छोटे पातकहैं॥२५२॥

इति ब्रह्महत्यायाः प्रायश्चित्त प्रकरणं॥

इस प्रकरण में समस्त दश परिच्छेद हैं इक्कीस से तीसतक तिनमें तेईस तक तीन परिच्छेद परलोक और नरक आदि के स्वरूप कथ्ये नियत हैं चौबीसवें परिच्छेद से पांच महापातकियों के लक्षण कहि कर यहां तक ब्रह्महत्या का निपटारा किया गया—अब आगे सुरापान महापाप का प्रायश्चित्त और यथा क्रमसे सभी पापोंके प्रायश्चित्त कहे जाअँगे॥

अथ सकाम सुरापान महापातक प्रायश्चित्त विवेको नाम परिच्छेदः एकत्रिंशः ३१

—※—

इस परिच्छेद में उन महापापों के प्रायश्चित्त जाने जायँगे जो निषिद्ध मदिराके इच्छा सहित पीने से होते हैं अर्थात् उत्तम और मध्यम और सुरा इनसे उपरालुसभी मद्यों के॥

(सुरापान प्रायश्चित्तानि)

सुराम्बुघृतगोमूत्रपयसामाग्निसंनिभम्। सुरापोऽन्यतमंपीत्वामरणाच्छुद्धिमृच्छति २५३

अर्थः—मदिरा•जल•घृत•गोमूत्र•दुग्ध•अग्निके समान तपेहुये इनमें किसी एकही को पीकर सुरा पीनेवाला मरजाने मे शुद्ध होताहै=अर्थात्—जिसने सुरापान कियाहो उसका यही प्रायश्चित्त है कि मदिरा आदि पांच द्रव्यों में से किसी एकही को गरम करि खूब तपाइके पीजावे जिससे हृदय जलि के मरजाय तब शुद्धि उसकी होय॥ २५३॥

२५३ अधिकोक्ति—गोमूत्र के साथ कहिने से घी दूध भी गायके लेने चाहिये तथा मूत्र गऊका हो बैलका नहीं—यह पीना उसको भीगे वस्त्र पहिन के करनाचाहिये=तदाह पैठीनसिः=सुरापआर्द्रवासाश्च अग्निवर्णांसुरांपिबेत्=अर्थात्—सुरापीने वाला पापी भीजे वस्त्र पहिने हुये अग्निके समान खूब तपी हुई सुराको पीवै=प्रचेतासे लोहेका पात्रभी कहाहै=यथा=सुरापोऽग्निवर्णां सुरामायसेनपात्रेणापिबेत्=अर्थात्—सुरा पीनेवाला अग्निके रूपसमान तपाई हुई सुराको लोहेके वासनसे पीवै तब शुद्ध होय=यह प्रायश्चित्त भी उसको हैकि जिसने एकही वार सुरापी हो=तथा हारीत=सुरापानंसकृत्कृत्वाग्निवर्णांसुरांपिबेत्=अर्थात्—एकही वार सुरा पीकर यह प्रायश्चित्त करै कि अग्नि के समान सुरापीवै=और जो वशिष्ठका यह वचनहै कि (अभ्यासेतुसुरायाअग्निवर्णांसुरांपिबेत्तद्विजः) अभ्यास मे वारम्वार सुरा के पीने से द्विजाती अग्नि के तुल्य सुरा पीवै सो यह वचन मुख्य सुरा से उपराल मद्यों के अर्थात् गौडी और माध्वी के पीने मध्ये समझना॥ सुरापान का प्रायश्चित्त जो

कहागया सो उस दशापर आरूढ़ समझना कि जिसने इच्छा सहित सुरा पी हो क्योंकि अगिले बृहस्पति के बचन से यही तात्पर्य है=यथाह बृहस्पतिः=सुरापाने कामकृतेज्वलंतींतांविनिक्षिपेत् मुखेतयाविनिर्दग्धे मृतः शुद्धिमवाप्नुयात्=अर्थात्— इच्छा से सुरापान करने में जलती हुई सुराकोही मुखमें छोड़ै तिससे हृदय जलि जाने से मरिके शुद्ध होय=और जो मनु का वचन है कि (सुरांपीत्वाद्विजोमोहाद· ग्निवर्णांसुरांपिवेत्) इसमें जो मोहसे पीकर•ऐसा कहा सो इसलिये कि शास्त्रार्थके तात्पर्य को न जानिके जिसने पीहो ॥०॥ इसमें यह विचारनाचाहियेकि सुराशब्दजो है सो सभी मद्यमात्रपर आरूढ़है या गौडीगुड़की बनी माध्वी महुआकी बनी पैष्टी धान आदि पिसान की बनी केवल इन्हीं तीन मद्यों पर अथवा इनमें भीकेवल पैष्टी पर आरूढ़ है—तहां—कितने एक विरले ऐसा कहिते हैं कि सुरा शब्द सभी मद्योंका बोधक है इस तर्कसे कि वशिष्ठ का बचन जो ऊपर लिखि चुके तिसमें सुराका अभ्यास जो बार बार का पीना कहा वह गौड़ी १ माध्वी २ पैष्टी ३ तीनो से उपराल छोटेमद्यों परभी प्रयुक्त ठहिरा—तिससे बड़े छोटे सभी मद्य सुरा कहिने से समझे जासक्ते हैं—और यहशंका नकरनी चाहिये किवह प्रयोगहीगौण मध्यसहै क्योंकि सभीमद्यों से मद पैदा होनेकी शक्तिरूपी उपाधिसे सर्वत्र मुख्यताही सिद्ध होनेमें गौणत्व कहिना अन्याय ठहिरता है सो यह न्याय अयुक्तहै ठीकनहीं क्योंकि पुलस्त्यमुनि के वचनों को देखौ=यथाह पुलस्त्यः=पानसंद्राक्षमाधूकं खार्जूरंतालमैक्षवम् मधुत्थंसैरमारिष्टंमैरेयंनालिकेरजम् समानानिविजानीयान्मद्यान्येकादशैवतु द्वादशन्तुसुरामद्यंसर्वेषामधमं स्मृतम्=अर्थात्—ये मद्योंके नामहैं कि पानस जो कटहर के दूधसे बनता हो १ द्राक्ष जो दाखसे बनै २ माधूक जो महुआसे बनै ३ खार्जूर मद्य छुहारे खजूरसे बनता है ४ ताल मद्य जो ताड़ीसे बनता है ५ ऐक्षव जो ईख गन्नेका बनताहै ६ मधुत्थ सहतसे ७ सैर जो सीरासे बनै ८ आरिष्ट जो मट्ठा और अनेक फल फूलोंके अरिष्टसे बनता है ९ मैरेय जो सिरादेशकी प्रक्रिया से धात की फूल आदि कई चीजों से बनता है १० नालिकेरज नारिअर के दूधसे बनताहै ११ इन ग्यारह मद्योंको एकसां बराबर जानैं कोई इनमें कम दर्जेका नहींहै और बारहवां सुरा मद्यहै जो सबसे अधम ओछा कहा गयाहै इस प्रकारसे पुलस्त्यने सुराको एक प्रकारकी विशेषता निर्देश करी है इसमें भी सुरा शब्दका प्रयोग मद्यमात्र सभीमें गौण पायाजाता है=दूसरे लोग यों कहिते हैं कि=पैष्टी गौडी माध्वी ये तीन भाँति मुख्य जो प्रसिद्धहैं इन्हींमें सुराशब्द निरूढ़ है सर्वत्र नहीं क्योंकि यह तर्क देखौ (यद्यप्यनेकत्रसुराशब्द प्रयोगोदृश्यते तथापि

लिये यह वचन है कि=सुरावैमलमन्नानांपाप्माचमलमुच्यते तस्माद्ब्राह्मणराजन्यौ वैश्यश्चनसुरांपिवेत्=अर्थात्—निश्चय हुआ कि सुरा जो है सो अन्नोंका मलहै और मलहै सो पाप कहाताहै तिससे ब्राह्मण क्षत्री और वैश्य भी सुराको न पीवैं—इस वचन में केवल पैष्टी सुराका निषेध तीनों वर्णों के लिये किया गया है परन्तु गौड़ी आदि सुराओं और मद्यों का निषेध केवल ब्राह्मण के संबंध पर नियत है क्षत्री वैश्य को नहीं निषेध है•क्योंकि मनुका यह वचन देखो (यक्षरक्षःपिशाचानांमद्यंमांसंसुराऽऽसवम् तद्ब्राह्मणेननात्तव्यंदेवानामश्नताहविः) अर्थात्—यक्ष राक्षस पिशाच इनका आहार है मद्य मांस सुरा आसव सो यह चीजें ब्राह्मणको न खानी चाहिये जो देवताओं का हवि खानेवाला प्रसिद्धहै—इसमें भी सुरा आदि चीजों का निषेध मनुने केवल ब्राह्मणकी विशेषता पर कियाहै तिससे—और अग्रोक्त वृहद्विष्णु का वचन है कि (मधूकमैक्षवंमैरंतालंखार्जूरपानसे मधूत्थंचैवमाध्वीकं मैरेयंनारिकेरजम् अमेध्यानि दशैतानिमद्यानिब्राह्मणस्यतु) अर्थात्—ये दश मद्य हैं कि माधूक १ ऐक्षव २ मैर ३ ताल ४ खार्जूर ५ पानस ६ मधूत्थ ७ माध्वीक ८ मैरेय ९ नारिकेरज १० ये दश मद्य ब्राह्मणको सदाही अपवित्र हैं—इसमें भी ब्राह्मणकोही प्रतिषेध कियागयाहै—एवं—वृद्धयाज्ञवल्क्यने भी क्षत्री वैश्य दोनोंको दोषका नहोना दर्शाया है=यथा=कामादपिहिराजन्यो वैश्योवापिकथञ्चनमद्यमेवसुरांपीत्वा नदोषंप्रतिपद्यते=अर्थात्—क्षत्री या वैश्य ये किसी प्रकार कभी इच्छासेभी चाहिकर मद्य वा सुरा पीकर दोषी नहीं होतेहैं=अब इस व्यवस्थाके तोड़पर ध्यान धरो कि इसप्रकार उक्त वचनोंमें ब्राह्मण के लिये मद्यमात्रका निषेध ठहिरा तथापि यह मनुका जो वचनहै कि (गौडीमाध्वी चपैष्टीच विज्ञेयात्रिविधासुरा यथैवैकातथासर्वा नपातव्याद्विजोत्तमैः) इसमें जैसी एक तैसी सबैं यह कहिके जो गौड़ी और माध्वी दोनोंका जुदा निर्देश ठहिराया सो उनके दोषकी बड़ाईसे सुरा केही समान दर्शाने के लिये ठहिराया और द्विजोत्तम इस में ब्राह्मणहीको समुझना किन्तु तीनों वर्णोंको नहीं ॥०॥ सुराका निषेध जो ब्राह्मण आदिको ठहिरा सो विना जनेऊ के लड़कों तथा विना विवाही कन्याओं को भी होताहै कि लडका लडकी भी न पीवैं क्योंकि यह वचन है (तस्माद्ब्राह्मणराजन्यौ वैश्यश्चनसुरांपिवेत् इतिजातिमात्रवच्छेदेननिषेधात्) अर्थात्—ब्राह्मण क्षत्री वैश्य भी सुराको न पीवैं इसमें जातिमात्रको निषेध कियाहै कि ब्राह्मण या क्षत्री या वैश्य न पीवैं तो उनके लडका लड़की भी उसी जातिमें शामिल हैं—इसीलिये अग्रोक्त मनु का वचन है कि (सुरांपीत्वाद्विजोमोहा दग्निवर्णांसुरांपिवेत्) इसमें द्विज शब्द

श्यानादित्वं इतिसंदेहे•गौडीमाध्वीचपैष्टीचविज्ञेया त्रिविधासुरा• इति मनुवचनात् गुड पिष्ट मधु विकारेष्वनादित्वनिर्धारणात् तत्रैवमुख्यत्वंयुक्तं) अर्थात् (सुरा शब्द का प्रयोग यद्यपि अनेक मद्योंपरदिखाई देताहै तथापि जो ऐसा संदेह कियाजाय कि ठीक ठीक अनादित्व किन मद्योंपर मिलताहै तहां यह सोचना चाहिये कि मनु ने गौडी पैष्टी माध्वी तीन भाँतिकी सुरा दर्शाई हैं तिससे गुड पिसान महुआ इनके बने विकारों में आदित्व प्राचीनता स्वीकार करने से उन्हीं तीनि पर मुख्यता ठीक आतीहै) परन्तु ऐसा होनेसे भी मद उत्पन्न करनेवाली शक्तिकी कल्पना अनेक मद्यों पर करना कुछ दोष नहींहै क्योंकि मदशक्ति की उपाधिका सहारा लेने से मद्य का त्याग करना और कराना बहुत सुगमहै•इसीलिये यह वचन है (यथैवैकातथासर्वा न पातव्याद्विजोत्तमैः) कि जैसी एक तैसी सबैं द्विजोत्तम लोगों को न पीनी चाहिये यह वचन तीनों सुराका बराबर दोष जताताहै पर गौड़ी माध्वी दोनों को कुछ पैष्टी के बराबर नहीं जताता है•वचनमें द्विजोत्तम शब्द जोहै सो द्विजाती मात्रका उपलक्षण है—यह दूसरोंका मत भी ठीक नहींहै क्योंकि पुलस्त्य का वचन ऊपर लिखचुके उस में सुरा मद्यको सबसे अधम कहिकर गौडी माध्वीसे भी जुदाई प्रकट करी है तिससे- तथैव (सुरावैमलमन्नानांपाप्माचमलमुच्यते) यह वचन है कि सुरा निश्चय करिके अन्नोंका मलहै और पाप भी मल कहाताहै•इस वचनसे यह तात्पर्य पाया गया कि सुरा उसीको कहिना चाहिये जो धान आदि अन्नके कीट से बनती हो किन्तु गौडी माध्वी जो गुड और महुआसे बनतीहै तिसमें सुरा शब्दकी प्राप्ति इसी हेतुसे नहीं ठहर सक्तीहै कि ये दोनों वस्तु रस रूपहैं कुछ अन्नमें गिनती नहीं बल्कि सौत्रामणी नाम एक यज्ञ वेद विहित है कि जिसमें ब्राह्मणको भी सुरा पीनी कहीहै पर वहां भी अन्न हीके रससे सुरा शब्द श्रुतियोंने कहाहै•इन सब तर्कोंसे यह निश्चित भया कि पैष्टी जो है सोई मुख्य सुराहै और गौड़ी माध्वी दोनोंमें सुरा शब्द गौण मध्यम है—और यह तर्क जो ऊपर लिखा था कि मनुके वचनसे गौडी माध्वी पैष्टी तीनोंमें सुरा शब्द की प्राचीन निर्धारणा स्वीकार करें सोभी ठीक नहींहै जिससे कि यह विषय कुछ शब्दानुशासन की तरह अर्थ संपादन करनेका सम्बन्ध नहीं रखता है केवल प्रयोजन की बातसे सम्बन्ध रखता है इससे प्रायश्चित्तकी बड़ाई पर ध्यान करो कि प्राय- श्चित्त बहुत बड़ा कहा गयाहै तिससे गौडी और माध्वीमें सुराशब्दका प्रयोग गौण रूपसे समझना•इसरीतिसे नतो अनेकअर्थशक्तिकी कल्पनारूपीदोषरहा न उपाधिका आश्रय लेना परा न इसमें द्विजोत्तम शब्दमे द्विजातीमात्र का उपलक्षणठहिा—इसी

लिये यह वचन है कि=सुरावैमलमन्नानांपाप्माचमलमुच्यते तस्माद्ब्राह्मणराजन्यौ वैश्यश्चनसुरांपिवेत=अर्थात—निश्चय हुआ कि सुरा जो है सो अन्नोंका मलहै और मलहै सो पाप कहाताहै तिससे ब्राह्मण क्षत्री और वैश्य भी सुराको न पीवैं—इस वचन में केवल पैष्टी सुराका निषेध तीनों वर्णों के लिये किया गया है परन्तु गौड़ी आदि सुराओं और मद्यों का निषेध केवल ब्राह्मण के संबंध पर नियत है क्षत्री वैश्य को नहीं निषेध है•क्योंकि मनुका यह वचन देखो (यक्षरक्षःपिशाचानांमद्यंमांसंसुराऽऽसवम् तद्ब्राह्मणेननात्तव्यंदेवानामश्नताहविः) अर्थात—यक्ष राक्षस पिशाच इनका आहार है मद्य मांस सुरा आसव सो यह चीजें ब्राह्मणको न खानी चाहिये जो देवताओं का हवि खानेवाला प्रसिद्धहै—इसमें भी सुरा आदि चीजों का निषेध मनुने केवल ब्राह्मणकी विशेषता पर कियाहै तिससे—और अग्रोक्त वृहद्विष्णु का वचन है कि (माधूकमैक्षवंसैरंतालंखार्जूरपानसे मधूत्थंचैवमाध्वीकं मैरेयंनालिकेरजम् अमेध्यानि दशैतानिमद्यानिब्राह्मणस्यतु) अर्थात—ये दश मद्य हैं कि माधूक १ ऐक्षव २ सैर ३ ताल ४ खार्जूर ५ पानस ६ मधूत्थ ७ माध्वीक ८ मैरेय ९ नालिकेरज १० ये दश मद्य ब्राह्मणको सदाही अपवित्र हैं—इसमें भी ब्राह्मणकोही प्रतिषेध कियागयाहै—एवं-वृहद्याज्ञवल्क्यने भी क्षत्री वैश्य दोनोंको दोषका नहोना दर्शाया है=यथा=कामादपिहिराजन्यो वैश्योवापिकथञ्चनमद्यमेवसुरांपीत्वा नदोषंप्रतिपद्यते=अर्थात—क्षत्री या वैश्य ये किसी प्रकार कभी इच्छासेभी चाहिकर मद्य वा सुरा पीकर दोषी नहीं होतेहैं=अब इस व्यवस्थाके तोड़पर ध्यान धरो कि इसप्रकार उक्त वचनोंमें ब्राह्मण के लिये मद्यमात्रका निषेध ठहिरा तथापि यह मनुका जो वचनहै कि (गौडीमाध्वी चपैष्टीच विज्ञेयात्रिविधासुरा यथैवैकातथासर्वा नपातव्याद्विजोत्तमैः) इसमें जैसी एक तैसी सबैं यह कहिके जो गौड़ी और माध्वी दोनोंका जुदा निर्देश ठहिराया सो उनके दोषकी वड़ाईसे सुरा केही समान दर्शाने के लिये ठहिराया और द्विजोत्तम इस में ब्राह्मणहीको समुझना किन्तु तीनों वर्णोंको नहीं ॥०॥ सुराका निषेध जो ब्राह्मण आदिको ठहिरा सो विना जनेऊ के लड़कों तथा विना विवाही कन्याओं को भी होताहै कि लड़का लड़की भी न पीवैं क्योंकि यह वचन है (तस्माद्ब्राह्मणराजन्यौ वैश्यश्चनसुरांपिवेत इतिजातिमात्रवच्छेदेननिषेधात) अर्थात—ब्राह्मण क्षत्री वैश्य भी सुराको न पीवैं इसमें जातिमात्रको निषेध कियाहै कि ब्राह्मण या क्षत्री या वैश्य न पीवैं तो उनके लड़का लड़की भी उसी जातिमें शामिल हैं—इसीलिये अग्रोक्त मनु का वचन है कि (सुरांपीत्वाद्विजोमोहा दग्निवर्णांसुरांपिवेत) इसमें द्विज शब्द

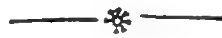
तीनों द्विजातियों पर आवश्यक है कि ब्राह्मण या क्षत्री या वैश्यभी सुरा पीकर यह प्रायश्चित्त करें क्योंकि जब ऊपरले निमित्तरूपी वचनमें ब्राह्मण आदि तीनों वर्णों का नाम लेकर सुरा पीनेका निषेध करचुके तो फिर यहां भी उसके वास्ते दार नैमित्तिक विधिके वचनमें द्विज शब्द तीनों वर्णोंके प्रायश्चित्त पर आरूढ हुआ•जब कि इस रीतिसे दोनों संबंध में जातिमात्र को निषेध पक्काहुआ तब लड़के लड़कियां क्योंकर जातिमात्रसे बाहर समुझेजायँ—इसपर—एक मीमांसाका दृष्टांतहै कि (यथा ऽभ्युदितेष्टयांयस्यहविर्निरूप्तंपुरस्ताचन्द्रमा अभ्युदेति इतिनिमित्तवाक्ये हविर्मात्रा भ्युदयस्य निमित्तत्वावतौ तत्सापेक्षनैमित्तिकवाक्ये त्र्यधमाणार्मापत्रेधा तन्दुलान्वि भजेदिति तन्दुलग्रहणं तन्दुलादिस्वरूपहविर्मात्रोपलक्षणं) अर्थात् (जैसे अभ्युदय रूपी यज्ञमें जिसके हविस् यथा विभागोंसे धरागया तिसके आगे पूर्णचन्द्रमा उदय होताहै इस फलके जतानेवाले निमित्तरूपी वाक्यमें सकल हविमात्र चन्द्रमा उदय होनेका निमित्त होता है यह समुझलेनेमें इसीके संबंधी नैमित्तिक वाक्य में यद्यपि ऐसा कहाजाय और मुनिपरें कि तन्दुलोंको तीनजघे विभागकरो तो यह केवलतन्दुल कहिना भी तन्दुल आदि सभी साकल्य हविमात्र का उपलक्षण होताहै कि तन्दुल तिल जो घृत शर्करा मेवा आदि मिलेहुये साकल्यको तीन जघे विभागकरनाचाहिये) क्योंकि तन्दुलोंमें सभी चीज शामिलहैं और तन्दुल नाम अनेक चीजोंके संघको भी कहिते हैं तैसे तीनोंवर्ण कहिनेसे उसीजातिमें लड़का लडकीभी शामिलहैं कुछ जुदा नाम धरनेकी जरूरत नहींथी•परन्तु जातिमात्रके पुरुषोंमें लड़का लड़कियोंमें इतना भेदहै(पादोबालेषुदातव्यःसर्वपापेष्वयंविधिः) सभी पापों में यह विधिहै कि बालकों को एक चौथाई प्रायश्चित्त देनाचाहिये—इसवचनके तात्पर्य से बालकोंको मरणांतिक प्रायश्चित्त उस दशामेंभी नहीं है कि जब उन्होंने इच्छा से चाहिकर सुरापान कियाहो परंतु मरण के पलटे उस चौथाई को दूना करिके छःवर्षका व्रत करानाचाहिये कि जैसा आगे २५४की अविकोक्तिमें दर्शावैंगे तैसा यहांभी समुझलेना और दूना कराने मध्ये अंगिराका वचनहै कि=विहितंयदकामानांकामात्तद्द्विगुणंचरेत= अर्थात्—विना इच्छा किये पापवालों को जो कुछ प्रायश्चित्त कहागया है वही उनको दूना करवाया जाय जिन्होंने इच्छा से पाप किया हो•यही व्यवस्था वृद्ध वा रोगी आदि में जोड़लेनी चाहिये=तथैव (यक्षरक्षःपिशाचानांमद्यंमांसंसुराऽऽसवम् तद्ब्राह्मणेननात्तव्यंदेवानामश्नताहविः) इस वचन में मद्य भी ब्राह्मण की जातिमात्र को निषेध है तिससे विनाजनेऊ के बालक सुरा और मद्यभी न पीवें यह व्यवस्था सिद्ध

होचुकी–तथापि थोड़ासा तर्कवाद है कि–कैसे विना जनेऊको दोष वताया (प्रागुपनयनात् कामचार वादभक्षाः इति गौतम वचनात्) तथामद्यमूत्रपुरीषाणांभक्षणे नास्तिकश्चनदोषस्त्वापंचमाब्दादूर्ध्वंपित्रोः सुहृद्गुरोरितिकुमारवचनाच्चदोषाभावावगतेः) अर्थात्–गौतम का वचन है कि वालक जनेऊ से पहिले चाहै तैसे रहैं फिरैं चाहैंसो मुखसे वकैं चाहैंसो भक्षण करैं तौ कुछ दोष नहीं है) तथैव (कुमारकावचन है कि मद्य या मूत्र या विष्टा इनके भक्षण करनेमें कोई दोष नहींहै पांचवर्षके भीतर और पांच के उपरांत जो ऐसा करैं तौ उनके पिता माता बड़े भ्राता आदि मित्रजनों तथा गुरुओं को दोष है• तौ यह कैसे कहा कि बालक भी मद्य पीवैं तौ दोष है प्रायश्चित्त भी कराना होगा=इस का समाधान कहिते हैं=सुनो सुरा और मद्य इनके निषेध वाले वचन में जातिमात्र के लिये जो निश्चय होचुका तिससे वह निषेध की प्रवृत्ति रोकी नहीं जा सक्ती है जिससे वालकों वाले नियम स्वीकार किये जायँ–ऐसाही स्मृत्यंतर में यह निषेध का वचन है कि (सुरापानिनिषेधस्तुजात्याश्रयइतिस्थितिः) सुरा पीने का निषेध जो है सो समस्त जातिमात्र के आश्रयभूत है यही मर्यादा जानौ अवस्था भेदका प्रयोजन इसमें नहीं है–इसी हेतुसे(पादोवालेषुदातव्यसर्वपापेष्वयंविधि रितिसर्वपापेषुसुरापानादिषु इतिवचनात् पादस्वसुरापानेप्रायश्चित्तं) चौथाई वालकों को देना चाहिये सुरापान आदि सभी पापों में यह विधि जानो इसवचन से चौथाई प्रायश्चित्त सुरा पीने में ठीक रहा• इच्छा सहित पीने में चौथाई का दूना कर्तव्य होगा=तथैव=सुरा से उपराल मद्यपीने में भी जातूकर्णने प्रायश्चित्त कहाहै=यथाहजातूकर्णः=अनुपेतस्तुयोवालो मद्यंमोहात्पिवेद्यदि तस्यकृच्छ्त्रयं कुर्यान्माताभ्रातातथापिता=अर्थात्–विना जनेऊका वालक जो अज्ञानता से मद्य पीलेवै तिसका पिता या माता या भ्राता तीन कृच्छ्र व्रत करैं–तिससे यह वात सिद्ध हुई कि (चाहैं सो भक्षण करैं) इत्यादि गौतम का वचन जो अभी ऊपर लिख चुके सो कुछ विशेष कर सुराके नाम से भी नहींहै न सुरा और मद्यके ऊपर उसका तात्पर्य कुछ पहुँचताहै अर्थात् सुरा और मद्य आदिसे उपराल निषिद्ध अन्नादिक जैसे सूखी और वासी भोजन आदि के विषयपर आरूढ है=और कुमार का जो वचन कहा सो केवल इस आशय पर आरूढहै कि जो पाँचवर्षके भीतर अनिमय अज्ञानता में यदि कोई वस्तु मलीन भक्षण करि वैठे तौ अत्यन्त दोष नहीं है पर थोड़ा दोष उससें भी अवश्य होता है=इसीलिये मनुने यह कहा है कि उपनयन कर्मसे पहिले जो कुछ वालक से दोष हुआहो तिसका प्रायश्चित्त वही उपनयन

संस्कार होता है=यथाह मनुः=गर्भैर्होमैर्जातकर्मचूडामौञ्जीनिबंधनैः वैजिकंगार्भिकं चैनोद्विजानामपमृज्यते=अर्थात्–द्विजातियों के गर्भ में आतेहुये जो गर्भ संस्कार संबंधी होम होते हैं तिनसे और जन्म होनेसे जातकर्म और मुंडनआदि चूडाकर्म और मौञ्जीबन्धन आदि यज्ञोपवीत कर्म इन कर्मोंके होनेसे पिता के बीज का दोष और माताके गर्भरक्तका दोष और बालपनकी अज्ञानतासे जो कुछ पाप लड़के ने किया हो सो भी दूर होजाता यह द्विजाती लोगोंका विधानहै॥ अधिकोक्तिफलं–अब समस्त अधिकोक्तिका निपटारा यह समुझना चाहिये कि पैष्टी सुरा का निषेध तीनों वर्णोंको जन्महीसे लेकर निश्चितहुआ और ब्राह्मण को जन्महीसे लेकर सभी मद्य मात्रका निषेधहै परन्तु क्षत्री और वैश्यको पैष्टीसुरा छोड़िके गौड़ी आदिका निषेध किसी भी अवस्थामें नहींहै और शूद्रको न सुराका प्रतिषेधहै न किसी मद्यमात्र का निषेध है–इसी के अनुसार प्रायश्चित्तों का विचार करना चाहिये॥ २५३॥ यहाँ तक इच्छा सहित सुरा पीनेके प्रायश्चित्त सब कहे गए अगिले परिच्छेद में इच्छा विना धोखे आदिसे पीने मध्ये कहेंगे॥ २५३॥



अथ अकामतः सुरा मद्यादीनां पाने प्रायश्चित्त विवेको द्वात्रिंशः परिच्छेदः ३२



इसपरिच्छेदमें कामना और इच्छाके विना धोखे आदिसे सुरा पीजाने के प्रायश्चित्त कहे जायँगे॥

(सुरापानेप्रायश्चित्तांतराणि)

बालवासाजटीवापिब्रह्महत्याव्रतंचरेत्। पिण्याकंवाकणान्वापिभक्षयेत्त्रिसमानिशि २५४

अर्थः–यहा बालों का वस्त्र धारण किये जटा रखाये ब्रह्महत्या का ही व्रत आचरे। अथवा तीनवर्ष रात्रि में पीना या अन्न के कणों कोही भक्षण करे=अर्थात्–दोसौतेपन २५३ श्लोकसे कहे प्रायश्चित्त यदि होने संभव नहीं तो गऊ बकरी आदि के ऊन से बना कंबल आदि के जटा रखाकर इस विशेष चिह्न के साथ पूर्वोक्तब्रह्म-

हत्या वाला व्रत बारह वर्षका करे ॥ † ॥ अथवा तीन वर्ष तक तिलों की खलि पीना तिसके पिराडबना के रात्रि में खाया करे दिन में निराहार व्रत किया करे यद्वा चावलों की कनकी या ससा आदि सुन्यन्न को रात्रि में चबाकर तीनि वर्ष काटे ॥ २५४ ॥

२५४ अधिकोक्तिः—ऊन वस्त्र के उपलक्षरा में चीर और बक्कल भोजपत्र आदि भी समझने क्योंकि प्रचेता का वचनहै=यथा=सुरापगुरुतल्पगौ चीर वल्कल वाससौ ब्रह्महत्याव्रतंचरेयातास=अर्थात—सुरापीनेवाला और गुरु भार्या गामी ये दोनों चीर वस्त्रयावक्कल देह में लपेटे हुये ब्रह्महत्या वाला व्रत बारह वर्षकरें(चीरफटे पुराने वस्त्रों केचीथड़े कहातेहैं) जटा रखाना कहा तिस्से बाल मुडाने का निषेध पायागया=ब्रह्म हत्या का व्रत करना कहा तिसके साथ बालों का वस्त्र आदि जो अधिक दर्शाया तिसका यह तात्पर्य है कि ब्रह्महत्या में खोपडी की ध्वजा बनानी जो कहिचुके तिसका वर्जित करना इसमें सिद्ध हुआ=यह प्रायश्चित्त भी उसके लिये आवश्यक है जिसने सुरा मद्यकी इच्छा विना जल के धोखे पीलिया हो क्योंकि (इयंविशुद्धि-रुदिता प्रमाप्याकामतोद्विजं) ब्रह्महत्या के स्थलपर इस नियम से बारह वर्ष कहे गयेथे कि जिसने विना इच्छाके ब्राह्मरा मारा हो उन्हीं बारह वर्षों का अतिदेश यहां उतारा गया तो यहां भी वही उपाधि लगी रही कि जिसने इच्छा विना मद्य पियाहो=यहां यद्यपिव्रतका अतिदेश उतारागया तिससे दोसौबावन२५२अधिको-क्ति के प्रारंभ में चेताई हुई दोसौ इकतिस २३१ की अधिकोक्ति वाले नियम से चौथाई कमकरिके प्रायश्चित्त ठहिरता॰परंतु सुरापान महा पातकों में गिनती हो-चुका है तिससे अतिदेशके होनेपर भी पौना नहीं किंतु पूराही बारह वर्षका व्रतक-राया जाय॰ इसपर वृद्ध हारीत का यह वचन भी प्रमारा है कि (द्वादशभिर्वर्षैर्महा पातकिनःपूयंते)सबतरह के महापातकी बारह वर्षों से शुद्ध होलेहैं तिससे यह उपदेश ही रहा अतिदेश नहीं ठहिरा जो पौना किया जाता ॥ † ॥ तीनि वर्षवाले प्रायश्चि-त्तमें जो पीना या कनकी चावनी कही सो रात्रि में एकहीबार का नियमहै बारंबार नखाय यही बात अगिले वचन में स्पष्ट है=यथामनुः=करणान्वाभक्षयेदब्दंपिरायाकं वारकांनिशि=अर्थात—रात्रि में एकहीवार वर्षमात्र भर पीना या तंडुल के किनके भ-क्षरा करै—यह पीना आदि उसका भोजन कहा गया है तिससे और कोई वस्तु न भोजन करै॰ यह प्रायश्चित्तभी उसीके निमित्त मे समझना जिसने जलके धोखे सुरा पान किया हो॰सो यह साधना भी तब करै कि पहिले उलटी रद करिके हृदय शुद्ध करचुकै क्योंकि व्यासका यह वचन है कि=एतदेवव्रतंकुर्यान्मद्यपश्कर्दनेकृते पंचग-

वयंतुतस्योक्तंप्रत्यहंकायशोधनम=अर्थात—यही व्रत मद्यपकरै छर्दि किये पीछे और पंचगव्य उसका शरीर शुद्धकरने को रोज रोज पीना कहाहै—परंतु ऐसा तात्पर्य समझना अच्छा नहीं है कि यह पंचगव्य का पीना साक्षात सुराके पीने मध्ये ठीक है परन्तु जिसने उस वासन में धरा हुआ या डारिके जल पियाहो जिसमें कुछ थोड़ी सुरालगी लिपटी गंधभी आतीहो तिसके लिये छर्दि करना और पंचगव्य पीना कुछ आवश्यक नहीं—क्योंकि जलके संसर्ग मे होजाने से भी सुरा का सुरापन नाश नहीं होता है तिससे•इसपर यह दृष्टांतहै कि जैसे दहीमिलायेहुये घीमेंसे घी का भावनहीं मिटि जाता है (इसीलिये न्याय जानने वालोंने कहा है कि दही के छींटे लगा घी पीने वालों को घृतपान करै या निश्चय करने किन्तु पृषदाज्यके पीवै या न कहिने चाहिये अर्थात पृषदाज्य उसी घी का नाम है जिसमें दहीकेबूंद छींटे गयेहों ॥ ० ॥ और जो आपस्तम्ब का वचन है कि=स्तेयंकृत्वासुरांपीत्वा गुरुदारान्गत्वा ब्राह्मणाहत्यांकृत्वा चतुर्थकालंमित भोजनोयोऽभ्युपेयात सवनानुकल्पं स्थानासनाभ्यां विहरन्स्त्रिभिर्वर्षैः पापंव्यपनुदति=एवंयत्र्वंगिरोवचनं=महापातकसंयुक्तावर्षैःशुद्ध्यंति तैस्त्रिभिः=अर्थात्—आपस्तम्बने यह कहा कि चोरी करिके सुरापीके गुरुभार्या गमन करिके ब्राह्मणका वध करिके तीनिवर्षमें पाप नाश होता है जो पापी सवनयज्ञ के अनुकल्पको पहुँचै अर्थात स्थान और आसनकी बैठक सब छोड़हुये तीनि वर्ष तक विचरता हुआ निरन्तर नियमसे चौथेका संध्यासे पहिले थोड़ासा भोजन प्राणधारण मात्र किया करै तो यह एक यज्ञही का अनुकल्प होजाता है• अथवा ऐसा अर्थ लगताहै कि (सःपापात्मापुरुषः वनानुकल्पंअभ्युपेयात) वह पापी अपना स्थान आसन छोड़हुये वनके अनुकल्पको अर्थात् वनको नहीं परन्तु वनके अनुरूप वेहड़ गोव्रज आदि जंगलोंमें तीनि वर्षतक सायंकाल थोड़ भोजन करिके पापमोचन परमेश्वर का भजन कियाकरै•तौभी उसी अर्थके समान ठहिरा क्योंकि पहिले अर्थमें भी सवन यज्ञ करनेका उपदेश नहींहै यह आपस्तंबका कथन है=ऐसाही अंगिराका यहकथन है कि=महापातकोंसे संयुक्त हुये पापीलोग तीनिवर्षोंसे पवित्र होतेहैं—इन दोवचनों में जो तीनि वर्षोंका नियम बाँधागया सोभी उसीके अनुरूपहै कि जैसा मूलश्लोक मे योगीश्वरने पीना आदि खानाकहा तिससे सिर्फ मूलश्लोककी विवक्षा वाले पापी पर इन वचनोंको जोड़िलेना पर सर्वत्र नहीं ॥ ० ॥ जोकि यमने दो प्रायश्चित्त और भी कहेहैं सो देखो=यथा=बृहस्पतिसवनेनेष्ट्वासुरापोब्राह्मणः पुनः समत्वंब्राह्मणैर्गच्छेदित्येषावैदिकीश्रुतिः (तथा) भूमिप्रदानंयःकुर्यात्सुरांपीत्वाद्विजोत्तमः पुनर्नचपिवेत्तां

तुसंस्कृतःसविशुध्यति=अर्थात्–वृहस्पतिके नामसे सवन करिके सुरापीनेवाला ब्राह्मण फिर भी ब्राह्मणोंके साथ बराबरी दर्जेमें आजाताहै यह वेदकी श्रुतिसे प्रसिद्ध है= तथैव=जो ब्राह्मण सुरा पीकर संस्कार कराइके भूमिदान करै और फिर कभी उसको न पीवै तौ यज्ञोपवीत संस्कारसे संयुक्त होके शुद्ध होजाता है–सो ये दोनों भी उसी पहिलेके साथ मिलिकर एकही विषय समझना कि तीनि वर्ष पीना आदि भक्षण किये पीछे यह सवन या संस्कार और भूमिदान करना होगा (अथवा वृहस्पति सवन करना जो कहा तिसका बारहवर्षोंके साथ बदल भी होसक्ता है कि जैसा पूर्वार्द्ध मूलश्लोकमें योगीश्वरने बारहवर्ष ब्रह्महत्याके व्रतवाले को कहे और उन्हीं बारहवर्ष की योग्यता जिसको ठहिरै और वही अपराधी बहुत धनवानहो तौ अधिक दक्षिणा वाला वृहस्पतिसवन करिके छुटकारा पासके यह तात्पर्यहै॥ ०॥ इस व्यवस्थामेंभी स्त्रियां और बालक बूढ़ेआदिको तीनवर्षका आधाडेढ़वर्ष व्रतदेनाचाहिये और बालक जो बिना जनेऊका अनुपनीतहो तिसको चौथाई अर्थात् नौ महीने का व्रतदेना चाहिये इत्यादि पहिली रीतोंसे कल्पना करलेनी चाहिये॥ ०॥ एक जो मनु का यह वचन है कि (कणान्वाभक्षयेदब्दं पिण्याकंवासकृन्निशि सुरापानापनुत्यर्थंबालवासाजटी ध्वजी) छरे कूटे अन्नकी कनकी या पीना एकवर्षभर एकही वार सदा रात्रिमें भक्षण कियाकरै सुरापानका दोष मिटानेके लिये) इसमें जो एकही वर्षकहा सो यह प्रायश्चित्त उसके लिये समझना जिसने बिना समझे जलके धोखे मुखमें डालिके सिर्फ तालूतक पँची हुईको उलटि दीहो=इसपरभी तर्कनाहै कि=द्रवचीजें जो पीनेयोग्य पतलीहोती हैं तिनका घूंटिजाना पान कहाता है और घूंटिजाना कंठ के नीचे उतर जाना प्रसिद्धहै कुछ तालूके संयोग मात्रसे पीना या घूंटिजाना नहीं सिद्धहोताहै फिर कैसे मनुके वचनमें सुरापानापनुत्यर्थं यह कहिके पीजानेके निमित्त प्रायश्चित्त दर्शाया गया–सुनौ–जिस तालू आदिसें पहुँचने बिना पीनेकी क्रिया नहीं चलसक्ती है तिससे पानक्रियाके निषेध से तालू आदि सें पहुँचना भी निषिद्ध किया है• इसी कारणसे यद्यपि ठठ पीलेने बिना महापातक नहीं सिद्धहोता तथापि पीलेनेके निषेधसे उसका अंगभूत तालू आदिका संयोग भी प्रतिषिद्ध ठहिरा क्योंकि तालू तक पहुँचनेसें भी दोष मौजूदहै उस दोषके होनेसे प्रायश्चित्त भी अवश्य होताहै इसका यह प्रमाण भूत दृष्टांत है कि जैसे (चरेद्व्रतमहत्वापिघातार्थंचेत्समागतः) इस वचन में जैसा कहिचुके हैं कि ब्राह्मणको मारडारना सोंचिके गया हो फिर चाहैं न मारिपावै तौ भी प्रायश्चित्त करै जैसा मारडारने के निषेध से उसका अंगभूत जो नि-

प्रचय करिके पहुँचना आदि तिसका भी निषेध होनेसे प्रायश्चित्त कहा गया तैसा पीजानेके निषेध से तालूतक पहुँचाना निषिद्ध हुआ ॥ ० ॥ एक बौधायनका वचन है कि=त्रैमासिकं समत्या सुरापाने कृच्छ्राब्दपादंचरित्वापुनरुपनयनमिति=दूसरा यमका वचन है कि=सुरांपीत्वाद्विजंहत्वारुक्मंहृत्वाद्विजन्मनः संयोगंपतितैर्गत्वा द्विजश्चान्द्रायणंचरेत्=तीसरा वृहस्पतिका वचन है कि=गौड़ीमाध्वीसुरांपैष्टींपीत्वा विप्रःसमाचरेत् तप्तकृच्छ्रं पराकंचचांद्रायणमनुक्रमात् (तत्त्रितयमप्यनन्यौषधसाध्य व्याध्युपशमार्थेपानेवेदितव्यं प्रायश्चित्तस्याल्पत्वात्=अर्थात्—बिना जाने सुरापान में एक वर्ष के कृच्छ्र व्रतकी चौथाई तीन महीनें करिके पीछे उपनयन संस्कार करै यह बौधायन का कथन है=और यमस्मृति का यह वचन है कि=सुरा पीकर ब्राह्मण को मारिके ब्राह्मण का सोना चुराय के पतितों के साथ संयोग संसर्ग में जाइके ब्राह्मण चांद्रायण व्रतकरै=और वृहस्पति का यह कथनहै कि=गौडी १ माध्वी २ पैष्टी सुरा ३ को पीकर ब्राह्मण यथा क्रम से तप्तकृच्छ्र १ पराक २ चांद्रायण ३ इनको करै प्रत्येक पर एकएक समझ लेना (सो यह बौधायन आदि के तीन वचन वाले प्रायश्चित्तों को उस रोगी के निमित्त में समझना जिसका रोग सुरा के सिवाय किसी औषध से न जाता दीखै और सुरा पीनेसे साध्य जानिके वैद्यने पिलाई हो चाहैं बिना जाने या कहिकर पिलाईहो क्योंकि इनवचनोंमें प्रायश्चित्त अतिछोटे कहेगये हैं तिससे ॥ ० ॥ जब कहीं सुराका मिला हुआ सूखेही रस का अन्न कोई भक्षण करै बिनाजाने तिसका फिर उपनयन कर्म यज्ञोपवीत होना चाहिये=यदाह मनुः=अज्ञानात्प्राश्यविण्मूत्रंसुरासंस्पृष्टमेवच पुनःसंस्कारमर्हंतित्रयोवर्णाद्विजातयः= अर्थात्—बिनाजाने विष्ठा या मूत्र मुहमें जाय या सुरा से संस्पृष्ट कोई सूखी वस्तु जैसे सुरा के सूखेपात्र में धरीगई हो इत्यादि तिसको मुह में धरिके तीनों द्विजाती लोग फिर संस्कार होने के योग्य हैं ॥ ० ॥ जबकोई सूखे सुराके बासन में धरा हुआजल पीलेवै तब शातातप का कहा प्रायश्चित्त करै=यथाह शातातपः=सुराभांडोदकपाने छर्दनंघृत प्राशनमहोरात्रोपवासश्च=अर्थात्—सुरा के पात्रमें धरा जल पीनेमें छर्दि उलटी करै घी चाटै और एक दिन राति का उपवास भी करै=इसी सध्ये बौधायन का जो वचन है कि=सुरापानस्यश्रोभांडेऽप्यपःपर्युषिताःपिबेत् शंखपुष्पी विपक्वंतुक्षीरंम तुपिबेत्त्र्यहम्=अर्थात्—सुरापीने के पात्र में धरा हुआ जल अनेक दिनका जो कोई पीलेवै सो शंखपुष्पी (शंखाहूली) में खूब औटे हुये दूध को तीन दिन पीवै—सो यह अधिक विधान इसी हेतु से जानो कि अनेक दिनका धराजल पीने में शातातप

का कहा वमन घी उपवास ये तीनों पहिले करिके पीछे दूधभी तीनदिन पीवै=इसी जल को विना चाहे जिसने कई बार धोखा से पिया हो तिसके लिये मनु ने पांच दिनका प्रायश्चित्त कहा है=यथा=अपःसुराभाजनस्थामद्यभांडस्थितास्तथा पंचरात्रं पिवेत्पीत्वाशंखपुष्पीशृतंपयः=अर्थात्–सुराके पात्रमें धरेहुये तथा मद्यके पात्रोंमें धरे जल पीकर पांचदिनतक शंखपुष्पीका औटाया दूधपीवै तब शुद्धहोय ये पांचदिनभी शातातप की कही विधि करनेसे उपराल्‌ करनेहेंगे=जो कि विष्णुने सातदिन कहे है कि–अपःसुराभाजनस्थाः पीत्वासप्तरात्रंशंखपुष्पी शृतंप यःपिबेत्=अर्थात्–सुरा के भाजनमेंधरे हुये जलपीकरशंखपुष्पी मिलाकर औटा दूध सातदिन पीवै•सो यह सात दिन उसके लिये कि जिसने जानिबूझि के पिआहो और शातातपकी कही विधि करिके पीछेउपराल्‌दूध पीवै=और जिसने जानिबूझिके अनेकवार पिआहो तिसके लियेवृहद्यमकावचनहै=यथाहवृहद्यमः=सुराभांडस्थितंतोयं यदिकश्चित्पिवेद्द्विजः द्वादशाहंक्षीरेणापिवेद्ब्राह्मींसुवर्चलाम्=अर्थात्–सुराके भाडमेंधरेजलको यदि कोई द्विजाती पीलेवै सो बारह दिन तक दूधमें औटी हुई ब्राह्मी बह्मनेटी सुवर्चला औषधी जो वही शंखपुष्पीहै तिसको पीवै यह भी शातातपकी विधिसे उपराल्‌ करनाहोगा ॥ ० ॥ सुरा पिये हुयेके मुखकी दुर्गंधि सूंघने मध्ये मनुका वचन है=यथा=ब्राह्मणस्यसुरापस्य गंवमाघ्रायसोमपः प्राणानप्सुत्रिरायम्य घृतंप्राश्यविशुद्ध्यति=अर्थात्–जहां कोई सोमप सोमयज्ञमें सोमपीने पीछे किसी सुरापियेहुये ब्राह्मण के मुख की गंधि सूंघै सो जलमें खड़ा होके तीनवार प्राणायाम करिके और घी चाटिके विशुद्ध होताहै (इसमें शातातपकी विधिसे कुछ संबंध नहीं) यह नियम केवल सोम यज्ञ करनेवालेका उस दशामें समझना कि जब विना जाने धोखामें गंध सूंघी हो किन्तु जानि बूझिके सूंघनेमें यही उसको दूना कर्तव्य होगा–इसीके अनुसार जो सोमयाजी या सोमपीनेवाला न हो तिसने गंधि सूंघीहो उसके लिये कल्पना कर लेनी चाहिये इसरीतिसे कि (घ्रातिरघ्रेयमद्ययोः) इस वचन से सुरा और मद्यकी वास का सूंघना तथा न सूंघने योग चीजोंका सूंघनाभी जाति भ्रंशकर पापोंमें गिनती होचुकाहै तिस से इसमें जाति भ्रन्शकर पापोंका प्रायश्चित्त देनाचाहिये जो मनुने कहा है=यदाह मनुः=जातिभ्रंशकरंकर्म कृत्वाऽन्यतममिच्छया चरेत्सांतपनंकृच्छ्रं प्राजापत्यमनिच्छया=अर्थात्–जातिभ्रन्शकर जो जो कर्म पहिले कहिचुके उनमें से किसी एकही कर्मको जानि बूझिके कियाहो तो कृच्छ्रसांतपन व्रतकरै जिसने विनाजाने अनिच्छा से कियाहो सो प्राजापत्य व्रतकरै ॥ २५४ यहां तक मुख्य सुरापान के प्रायश्चित्त

कहेंगाग अब अगिले परिच्छेदमें सुरासे उपरालू मद्योंके पीनेमध्ये कहेंगे ॥ २५४ ॥

अथसुरावर्जित मद्यानां पानविषये प्रायश्चित्तांतर प्रदर्शकोऽयंपरिच्छेदः त्रयस्त्रिंशः ३३ ॥

— —*——

इस परिच्छेदमें उस भाँतिके मद्यपान मध्ये प्रायश्चित्त कहे जायँगे जो मुख्य सुरासे उपरालू मद्य होतेहैं ॥ मद्य उनका नामहै जिनमें सुराके समान मद नशा होताहो-और मद्यसे उपरालू जो अभक्ष्य वस्तू होतीहैं तिनके प्रायश्चित्त का चर्चा दोसौ छप्पन की अधिकोक्ति में ॥

(सुरेतरमद्यपानप्रायश्चित्तं)

अज्ञानात्प्राश्यविण्मूत्रं सुरासंस्पृष्टमेवच। पुनःसंस्कारमर्हंतित्रयोवर्णाद्विजातयः २५५

अर्थ:—अज्ञानतासे जलके धोखे जो कोई मद्यरूपी सुरापीवै या पुरुष का वीर्य या मूत्रको मुखमें जानेदे सो तीनोंवर्णा के द्विजाती लोग पुनः संस्कार उपनयन होने के योग्य होते हैं ॥ २५५ ॥

२५५ अधिकोक्तिः—मिताक्षराकार इसपर व्यवस्था देतेहैं कि तप्तकृच्छ्रका प्रायश्चित्त करनेके वाद अनन्तर पुनः संस्कार यज्ञोपवीत होनाचाहिये परन्तु तीनोंवर्णा को यह संस्कार वीर्य और मूत्रहीके पीनेमें समझना किन्तु मद्यपान मध्ये केवल ब्राह्मण का पुनः संस्कार होनाचाहिये क्योंकि क्षत्री और वैश्यको मद्यपीने की अनुज्ञा सिद्ध होचुकीहै २५४ की अधिकोक्तिमें देखो तिससे इन दोनोंको केवल तप्तकृच्छ्र करना होगा—और यहां जो मूलश्लोकमें सुराशब्द आया तिससे मद्य समझना मुख्य सुरा नहीं क्योंकि प्रायश्चित्त वहुत छोटाहै तिससे और इससेभी कि अज्ञानतासे मुख्य सुरा पीजानेपर वारहवर्ष का प्रायश्चित्त पहिली अधिकोक्ति में कहिचुके हैं—इसी हेतुसे गौतमने इस विषयपर मद्य शब्दहीका वर्ताव कियाहै कि जिससे सदेह न उठै= यथाह गौतमः=अमत्यामद्यपानेपयोघृतमुदकंवायुं प्रतित्र्यहंतप्तानि पिवेत्सतप्तकृच्छ्रः ततोऽस्यसंस्कारो मूत्रपुरीषरेतसांप्राशने च=अर्थात—विना जाने मद्य पान करने मे तीन तीन दिन ये चीजें गरम करि करि पीवै कि पहिले तीन दिन दूध फिर तीन दिन घृत फिर तीनदिन जलही गरम पीवै फिर तीनदिन केवल वायु जो सूर्यके आताप

से स्वतः तप्त हुईहो तिसे पीके रहै सो यह तप्त कृच्छ्र नाम का प्रायश्चित्त कहाता है यह करने पीछे इसका उपनयन संस्कार भी कियाजाय तब शुद्ध होताहै और यही प्रायश्चित्त उपनयन सहित उनकोभी कराना कि जिसने मूत्र या विष्ठा या पीवराधि वगैरे कोई सड़ाईंधि या पुरुषका वीज भक्षण कियाहो–इसी पर और भी वचनांतर है कि (तप्तकृच्छ्रं चरन्विप्रोजलक्षीरघृतानिलान् प्रतित्र्यहंपिबेदुष्णान्सकृत्स्नायीसमाहितः) अर्थात्–ब्राह्मण जो तप्तकृच्छ्र करना चाहै सो जल और दूध और घी और हवा इन प्रत्येकको तीन तीन दिन गरम करिके पीवै तबतक एकही बार स्नान किया करै=पराशरने इन चीजोंका परिमाण विशेषभी कहा है=यथा=षट्पलंतुपिबेदंभस्त्रिपलंतुपयःपिबेत् पलमेकंपिबेत्सर्पिस्तप्तकृच्छ्रं विधीयते=अर्थात्–तप्तकृच्छ्रव्रत उसका नामहै जो छेपलकी तौलसे जलपीवै तीनिपल दूधपीवै एकपल घी पीवै आगे तीनि दिना केवल वायुभक्षण कहिचुके हैं=और जो मनुका यह वचनहै कि (अज्ञानाद्वारुणींपीत्वा संस्कारेणैवशुद्ध्यति) विना जाने वारुणी मदिरा पीकर संस्कार होने से विशुद्ध होताहै) सो इसमें भी वही तात्पर्यहै कि पहिले तप्तकृच्छ्रकी साधनाकरिके तबसंस्कार कियाजाय क्योंकि गौतमके वचनसे मुताबिक होना चाहिये (पुनःसंस्कार द्विवारा जनेऊ करना कहाताहै) सो यह आश्वलायन आदि कर्मकांडियों के बांधे क्रमसे करना चाहिये कि जैसा (अथोपेतपूर्वस्यकृताकृतंकेशवपनं मेधाजननंचानिरुक्तंपरिदानं कालश्चतत्सवितुर्वृणीमहे इतिसावित्रीम) प्रथम वेदीके पास बैठारे हुये का मुंडन कियाजाय चाहैं बाल मुड़े हों या नहीं दोनों दशामें रखे और विना रखेबाल सर्वथा कृताकृत पवन कियाजाय फिर मेधाजनन कर्म कियाजाय जिससे उत्तमबुद्धि उत्पन्न होय फिर अनिरुक्त कर्म कियाजाय फिर परिदान कर्म होय फिर कालकर्म तत्सवितुः इत्यादि ॥ ० ॥ जिसने जानि बूझिके मद्यपान कियाहो तिसको वसिष्ठोक्त विधिसे प्रायश्चित्त देना चाहिये=यथाहवसिष्ठः=मत्यामद्यपानेत्वसुरायाःसुरायाश्चाज्ञानेकृच्छ्रातिकृच्छ्रौघृतप्राशनं पुनःसंस्कारश्च=अर्थात्–सुरा के विना उपरान्त मद्य जानि बूझिपीने से कृच्छ्रनामक व्रतकरै और साक्षात् सुराका अज्ञानतासे पीनेमें भी अतिकृच्छ्र व्रतकरै और दोनोंके व्रतकिये पीछे घी चाटै और दुवारा संस्कारकरावै=अथवा (असुरामद्यपायीचान्द्रायणंचरे दितिशंखोक्तोविकल्पः) सुरा विहीन मद्यका पीनेवाला चान्द्रायण व्रतकरै यह शंखमुनिका कहा विकल्प भी कियाजासक्ता है (यहां जिन व्रतोंके नामही केवल कहेगए तिन सबके विधान चाले आवैंगे तहां ब्यौरा समझिलेना क्योंकि चान्द्रायण व्रत एकही नामहै उसके चारिभेद होतेहैं एवं

प्रायश्च वारहदिनके नियम साथ कृच्छ्र और अतिकृच्छ्र ये दोनों जुदेव्रतभीहोतेहैं तथा कृच्छ्रातिकृच्छ्र दोनों मिलिके एक तीसरा जुदा होताहै और भी छै दिन का कृच्छ्रार्द्ध होताहै फिर कृच्छ्रहीके नामसे कृच्छ्रसान्तपन आदि व्रत होते हैं तिससे इनका बिस्तार लिखनेको यहां पर अवकाश नहींहै ॥ ० ॥ जिसके सिर्फ मुखहीमें मद्यपहुँचा हो गलेकेनीचे नउतराहो तिसके लिये छैदिनका व्रत आपस्तंबके विधानसे विचारना चाहिये=यदाहापस्तंबः=अभक्ष्याणामपेयाना मलेह्यानांचभक्षणे रेतोमूत्रपुरीषाणां प्रायश्चित्तंकथंभवेत् पद्मोदुम्बरविल्वानांपलाशस्यकुशस्यच एतेषामुदकंपीत्वायड्रात्रेणविशुद्ध्यति=अर्थात्–नखानेकी न पीनेकी न चाटनेकी निषिद्ध चीजों के भक्षण करिजानेमें तथा पुरुषका बीज और मूत्र और विष्ठा इनके भक्षण करनेमें प्रायश्चित्त कैसे होवै सो कहिते हैं कि•पद्म•उदुंबर गूलर• बेल• पलाशढाख• कुशा• इनपत्तोंका जल औटिके छैदिन तक पीने से पवित्र होता है–सो यह नियम सिर्फ ताड़ी आदि मद्योंके विषयपर समझना कि जैसे गूह मूत आदि धोखा से मुहमें जाते सार थूंकि दिया तैसे ताड़ी आदि मद्यको मुहमें जातेसार थूकि दियाहो तिसको शुद्धि छैदिन में होजायगी=अन्यथा गौड़ी और माध्वीको विनाजाने मुखमें डारिके विना घूंटेजो थूकिदेइ तिसके लिये जैसा वसिष्ठ के वचनमें ऊपर (असुरायाः सुरायाश्चाज्ञानतः) यह लिखि चुके सो कृच्छ्रातिकृच्छ्र सहित दुवारा संस्कार और घृत का चाटना भी दराना होगा (परंतु यह संदेह न करना कि पहिली अधिकोक्ति में तालू तक पहुँचने मध्ये मनुके वचन से एक वर्षभर पीना खाना कहाथा यहां क्योंकर थोड़ा रहिगया• क्योंकि वहां सबसे वड़ी पैष्टी सुरा का प्रायश्चित्त कहा और यहां उससे छोटी गौड़ी माध्वी का प्रसंग है तिससे थोड़ा रहिगया बल्कि (उन्हीं गौड़ी और माध्वी को जानि बूझि एकवार के निपट पीजाने मध्ये (पिण्याकंवाकणान्वापी तिब्वेदार्शकं) यह दोसौ चौवन के उत्तरार्द्ध से कहिचुके जैसा तीनि वर्ष तक पीना खाकर प्रायश्चित्त करना चाहिये=और जिसने अपनी चाहना तथाकामनासे उन्हीं गौड़ी या माध्वी को वारम्वार पीने का अभ्यास कियाहो तिसके लिये वसिष्ठ का दर्शाया मरणांतिक प्रायश्चित्त चाहिये जैसा २५३ दोसौ त्रेपन की अधिकोक्तिमें लिखि चुकेहैं कि (अभ्यासेतुसुराया अग्निवर्णांसुरांपिवेन्मरणात्पूतोभवतीतिवसिष्ठः) सुरा के वारम्वार अभ्यास पूर्वक पीने में यही प्रायश्चित्त है कि अग्नि के समान लाल तपाई हुई सुराकोही पीवै जो हृदय जलिकर मरजाने से पवित्र होता है• इनमें सुराकहिनेसे गौड़ी और माध्वी सुरासे प्रयोजनहै किंतु पैष्टी सुराका अभिप्राय

इसमें नहीं है— क्योंकि पैष्टी सुरा सबमें मुख्य होती है तिसके एकही बार पीनेपर मरणांतिक प्रायश्चित्त २५३ दोसौ त्रेपन श्लोक और उसीकी अधिकोक्तिसे कहि चुके हैं तिससे ॥ ० ॥ मद्य धरने के सूखे बासन में भरा हुआ जल बिनाजाने एकही बार पीलेमें वृद्धयमका कहा प्रायश्चित्त विचारना=यदाह वृद्धयमः=मद्य भांडस्थितंतोयंयदिकश्चित्पिवेद्द्विजः कुशमूलविपक्वेनत्र्यहंक्षीरेणवर्तयेत=अर्थात–मद्य के भांडमें धराहुआ जलजो कोई द्विज पीवै सो दूधमें कुशा की जडका क्वाथ पकाय के तीन दिन पीवै=बिना जाने अनेक वार पीते रहिने में वसिष्ठ का कहा प्रायश्चित्त विचारना=यदाहवसिष्ठः=मद्यभांडस्थितंतोयंयदिकश्चित्पिवेत्द्विजः पद्मोदुंबरविल्वापलाशस्यकुशस्यचएतेषामुदकंपीत्वात्रिरात्रेणविशुद्ध्यति=अर्थात– मद्यके भांड में धराजलजो कोई द्विजपीवै सो•पद्म•गूलर•बेल•ढाखा•कुशा•इनकाकाढा रोजपीकर तीन दिनमें शुद्ध होताहै=जानते हुये पीलेनेमें विष्णुकाकहा प्रायश्चित्त विचारना=यदाह विष्णुः=मद्यभांडस्थितंतोयं पीत्वापंचरात्रंशंखपुष्पीशृतंपयःपिवेत=अर्थात–मद्यके बासन का जल पीके पाँच दिनतक शंखपुष्पी का औटाया दूध पीवै–जानते हुये वार वार पीने से शंखजीका कहा विचारना=यदाहशंखः=मद्यभांडस्थितंतोयंपीत्वासप्तरात्रंगोमूत्रंयावकंपिवेत=अर्थात–मद्यभांडका जल पीके गोमूत्र लाखये सात दिनतक पीवै=जिसने अत्यंत अभ्यास कियाहो किंतु जानतेहुये बहुत दिनतकपिया हो तिसकेलिये हारीत का कहा प्रायश्चित्त विचारना=यथा हारीतः=मद्यभांडस्थितंतोयंयदिकश्चित्पिवेद्द्विजः द्वादशाहंतुपयसापिवेद्ब्राह्मीसुवर्चलाम=अर्थात–मद्यपात्रका धरा जल जोकोई द्विज पीवै सो दूधमें औटिके ब्राह्मी वह्मलेट: नाम सुवर्चला का पंचांग बारह दिनतक पीवै तब शुद्ध होय (सभी इन वचनों में द्विज शब्द जो आया सो केवल ब्राह्मण का बोधक है) क्योंकि क्षत्री और वैश्य को मद्यका निषेध नहीं है यह पहिले कहि चुके हैं दोसौ त्रेपन आदि अधिकोक्तों से देखो) मद्य के पात्र में धरे जलके मध्ये जो जो वचन यहांपर लिखे गये सो सब गौडी माध्वीके पात्र में धरे जलका विषय समुझना क्योंकि प्रायश्चित्त के वड़ापन से यही तात्पर्य ठहरता है तिससे ताडी आदि छोटे मद्यों के सूखे पात्रका धरा जल पीने मध्ये कुछ न्यून कल्पना करनी चाहिये ॥ २५५ ॥

यहांतक पुरुषों के प्रायश्चित्त कहेगये अब आगे जो स्त्रियां मदिरा पीवैं तिनके प्रायश्चित्त दर्शावैंगे ॥

(स्त्रीणांसुरापाने प्रायश्चित्तानि)

पतिलोकंनसायातिब्राह्मणीयासुरांपिवेत् । इहैवसाशुनीगृध्रीशूकरीचोपजायते २५६

अर्थः—जो ब्राह्मणी सुरा पीवै सो पतिके लोक को नहीं जाती है वह इसीलोक में कुतिया गिद्धिनी सूकरी होके जन्मती है=अर्थात्—ब्राह्मणी आदि तीनों द्विजातियों की भार्या यद्यपि पतिकी सेवा आदि अनेकपुण्य करने वाली हो तौभी जोसुरा पीवे सो पतिके पुण्य लोकों को नहीं जाने पाती है इसी लोक में कुत्ता आदि तिर्यक योनियों मे वारवार क्रम से जन्म पाती है ॥ २५६ ॥

२५६ अधिकोक्तिः—मूल श्लोक में योगीश्वर ने केवल ब्राह्मणी शब्द रक्खाहै तौभी मिताक्षराकारने व्यवस्थाको अपेक्षा से तीनों वर्णोंकी भार्या अर्थ कियाहै इस हेतुसे कि आचार मर्यादा परिपाटीमें ५७ मूलश्लोक से आवश्यक निर्वाह निश्चित होचुकाहै कि ब्राह्मणके ब्राह्मणीआदि चारोंवर्णों की भार्याभी होती हैं क्षत्रीके क्षत्राणी आदि तीनिवर्णों की भार्याभी होतीहैं वैश्यके बनेनी आदि दोवर्णोंकी भार्याभी होतीहै(शूद्रके केवल शूद्रा भार्याहोतीहै) इसीन्यायसे यहांभी जिसद्विजातीकेजितनी भार्याएँ होनीकहीगईं तिनमवहीका उपलक्षण एकब्राह्मणी कहिनेसे लियाहै इसका इभीसे दृष्टांत समझो किब्राह्मणी भार्या अर्थात् ब्राह्मणकी भार्या चाहें क्षत्रीवर्णा या वैश्यवर्णा या शूद्रवर्णा की कन्या हो तौभी सुरा पीने से पतिका लोक न पावैगी इसी प्रकार क्षत्री और वैश्य की भार्याएँ समझलेना=इसीआशयपर मनुका वचन है,कि= पतत्यर्द्धशरीरस्ययस्यभार्यासुरांपिवेत् पतितार्द्धशरीरस्यनिष्कृतिर्नविधीयते=अर्थात्—जिस किसीकी भार्या सुरापीवै तिसके शरीरका आधा भाग पतित होजाताहै पतित हुये आधे शरीर की निष्कृति नहीं होती है—क्योंकि धर्म अर्थ काम इन तीनों में स्त्री पुरुष दोनों का साथही अधिकार होने से दोनों का एकही शरीर माना गयाहै तिससे भार्या रूपी आधा शरीर पतित होजाता और इसीसे उसकी मुक्ति नहीं होती है तिससे द्विजाती मात्र की भार्या ब्राह्मणी आदि को सुरा न पीनी चाहिये यह प्रतिषेध सिद्ध हुआ—यह वचन पहिले आचुका है २५३ की अधिकोक्ति में देखो (तस्माद्ब्राह्मणराजन्यौ वैश्यश्चनसुरांपिबेत्) कि ब्राह्मण क्षत्री वैश्यभी सुरा न पीवें इससे पुरुषही या स्त्री न पीवे यह लिंग भेद नहीं किया तिससे तीनों वर्णोंकी समस्त नरनारिमात्र को निषेध ठहिरा कि पुरुष और स्त्री और बालकभी न पीवें•इसी वचन से तीनोंवर्णोंकी भार्याओं का निषेध सिद्धहोचुका था तो फिर दुबारा भार्य्याओं का

विशेषता यहां इसलिये कही गई समुझो कि द्विजातियों के कदाचित शूद्री भार्या हो तिसको भी सुरा न पीना चाहिये—इन सब कारणों से यह बात सिद्ध हुई कि द्विजातियों की भार्या चाहैं शूद्री पर्यंत किसी वर्णकी हों सो कदाचित सुरा पीवैं तो उनको भी अपने पुरुषों से आधा प्रायश्चित्त करना चाहिये (२५४ दोसौ चौवन की अधिकोक्ति में भी लिख चुकेहैं कि स्त्रियाँ और बालक बूढे आदि को आधा प्रायश्चित्त देना चाहिये वही तात्पर्य सर्वत्र और यहां भी समुझे रहिना) परन्तु जो शूद्रकी भार्या सुरा पीवे तो उसके लिये शूद्र के समान सुरा पीने का निषेध नहीं है तिससे प्रायश्चित्त भी आवश्यक नहीं है॥ ०॥ और जो २२९ दोसौ उनतीस मूल श्लोक वा उसकी अधिकोक्ति में निषिद्ध चीजों का भक्षण करना भी सुरापान के समान कहा गया है तिनके भक्षण करने में सुरापान ही का प्रायश्चित्त आचरण करना चाहिये अर्थात सुरा पीजाने मध्ये जो कुछ प्रायश्चित्त जिसके लिये जितना करना कहा हो वही उससे आधा करै जिसने निषिद्धचीजें भक्षण करीहों यह पहिले कहिचुके हैं॥ २५६॥

इतिसुरापान प्रायश्चित्त प्रकरणं

॥ इस प्रकरण में इकतिस से तेंतीस तक तीन परिच्छेदों से मुख्य सुरापान और अमुख्यसुरापान और मद्यपान के समस्त प्रायश्चित्तोंकी व्यवस्था कहीगई अबआगे चोरीकरने मध्ये चोरोंके प्रायश्चित्त कहे जायँगे॥

अथ सकामस्वर्णापहारेप्रायश्चित्तानांभेदाविवेचकोऽयं परिच्छेदःचतुस्त्रिंशः ३४॥

इस परिच्छेद में उन प्रायश्चित्तों का भेद विवेचन किया जायगा जो इच्छा और कामना से ब्राह्मणका सुवर्ण आदि हरने के पापों पर आवश्यक होतेहैं॥

(स्वर्णापहार प्रायश्चित्तं)

ब्राह्मणस्वर्णहारीतुराज्ञेमुशलमर्पयेत। स्वकर्मख्यापयंस्तेनहतोमुक्तोपिवाशुचिः २५७

अर्थः—ब्राह्मणका सोना हरनेवाला चोर अपने कर्म (चोरी) को सुनाता हुआ (आपहीजाकर) राजाको मूसल समर्पण करै (उसी मूसर से राजा करके वहचोर)

निपट मारा हुआ या छोड़ि दिया हुआ भी पापसे छुटिजाता है=अर्थात्—यहीउसका प्रायश्चित्त है कि आपही राजाको शस्त्र समर्पण करै फिर चाहैं राजा अपने न्याय विचार से उसको निपट मारिही डारै या दंड देकर छोड़ि देवै तौ भी शुद्ध होजाताहै अन्य या नहीं ॥ २५७ ॥

२५८ अभिन्नोक्तिः—सोना हरनेका शब्द कहिने से इतनी बातें सूचित करी हैं कि चाहैं स्वामीके सन्मुख या औरही किसीके सन्मुख हरलिया हो या स्वामी को आंखि पीछे हरा हो या जबरदस्ती से छीना हो या चोरों की तरह चुराया हो—परन्तु उन बातोंको छोड़ि के समझना कि उसने खरीदने आदि प्रकारों से हरा हो जिसमें निज उसीका स्वत्व (हक्कमालिकियत) किसी हेतु से पहुँचता हो ॥ ० ॥ मुसल समर्पण करै यद्यपि यह सामान्य भाव से किसी लोहा लकड़ी आदि के विशेषण बिना कहागया है तथापि जाहरहै कि मारने के निमित्त देना कहा तिस-से मारनेमें समर्थ लोहे आदि का मुसल समझना=इसी हेतु मनुने यह कहा है कि=स्कन्धेनादायमुशलंलकुटंवापिखादिरं असिंचोभयतस्तीक्ष्णं मायसंदंडमेववा=अर्थात् कांधेपर मूसर या खैर का डण्डा लाठी लेकर या तलवार जो दुधारा खांडा दोनों ओरसे तीक्ष्ण पैनी धारवालीहो यद्वा लोहेका डण्डालाहो=शंखलेभी विशेषता इसपर करी है=यथा=सुवर्णस्तेनःप्रकीर्णकेशआर्द्रवासा आयसंमुशलमादायराजानमुपतिष्ठेदिदमयापापंकृतमनेन मुशलेनमांघातयस्वेति सराज्ञाशिष्टःसद्यपूतोभवति=अर्थात् सुवर्णका चोरवाला छिटकाय औ भीजे वस्त्र पहिने लोहेका मूसरलेकर राजा के पास जाय खड़ाहो कि यह पाप मैंनेकिया इस मूसरसे मुझे मारडालो यह श्रुति

करता है• क्योंजी ऐसा अर्थ क्योंनहीं लगाते कि राजा यदि विना मारेछोड़िदे तौभी शुद्ध होजाय क्योंकि मूलश्लोक में यहभी अर्थ ठीक ठीक होसक्ता है=सुनो यद्यपि ठीक होसक्ता है तथापि (अघ्नन्नेनस्वीराजा•इतिगौतमीये ताडनमकुर्वतोराज्ञोदोषाभिधानात्) न मारते हुये पापी राजा हो•यह गौतम के वचन में राजा को दोष कहा है तिससे नहीं वैसा अर्थ लगाते हैं—अच्छा होउ राजा को दोष तौभी निषेध के उलाँघने वाले राजा ने स्नेह दया भाव आदि किसी हेतु से छोड़दिया न मारा तौ कैसे नहीं शुद्ध होगा=सुनो ऐसा होने में (वृथाही) अकारण अशुद्धि का आपरना होता है—क्योंकर होता है छुटिजाने के पीछे बारह वर्ष आदि के किसी अनुष्ठानसे शुद्धि करना स्वीकार करने से वृथा अशुद्धि न रहेगी• सोभी यह आशय अच्छा नहीं क्योंकि मूलश्लोक में (मुक्तःशुचिः) बचिकर छुटकारा होनाही शुद्धि का हेतु कहा गया है तिससे (मुक्तोवामरणाज्जीवन्नपिविशुद्ध्येदितिप्राच्येवव्याख्याज्यायसी) वही पहिली व्याख्या श्रेष्ठ है कि मूसल आदि मारने में मरने से बचिगया जीवते हुये भी शुद्ध होजाता है ॥ ० ॥ यह मरणांतिक प्रायश्चित्त सभी वर्णों के चोर को समझना किन्तु केवल ब्राह्मण हीको नहीं क्योंकि (ब्राह्मणस्वर्णहारी) यह मूलश्लोक में कहागया सो विना किसी विशेषता केसामान्य भाव कहा हैकि ब्राह्मण का सोना हरने वाला कोई जाति वर्ण का नियम कुछ नहीं है और महापातकों वाले परिच्छेद में क्षत्री आदि कोभी महापातकित्व अविशेषता से कहिचुके हैं और उनके लिये कोई जुदा प्रायश्चित्त भी वर्ण के अनुसार नहीं कहागया=इस दशाके होनेपरभी जो मनु के वचन में (सुवर्णस्तेयकृद्विप्रः) यह विप्रही का नाम कहागया सो भी समस्त नरमात्र का उपलक्षण है कि सबसे मुख्य ब्राह्मण को कहि दिया तब और सबकोई भी न बाकी रहे•बल्कि इसी मनु वचन के पहिले प्रकरण वर्णन में (प्रायश्चित्तीयतेनरः) यही नर शब्द आचुका है जो सम्पूर्ण मनुष्य मात्रका वाचक होताहै— और भी यह प्रमाण है कि पातकरूपी निमित्तों का यह वचन है (ब्रह्महत्यासुरापानंस्तेयंगुर्वंगनागमः) इसमें कोई विशेषता न कहीगई कि ब्राह्मण या क्षत्री आदि कौन करै• तिससे सभी मनुष्य मात्रपर आरूढ जानो• जब कि इस निमित्तरूपी वचन में सभी मनुष्योंका तात्पर्य सुनिचुके तौ फिर इसी वचनका संबंधी जो नैमित्तिक वचन है कि (सुवर्णस्तेयकृद्विप्रः) इसमें विप्र शब्द सुना जाने परभी सर्व मनुष्यों का उपलक्षण माना चाहिये कि जैसा इसके पूर्व संबंधी वचन में सुनचुके क्योंकि ब्राह्मण सबमें प्रधान है उस प्रधान का नाम कहिने से अप्रधान भी

नव समझि लिये जातेहैं, यहां भी मीमांसाका वही दृष्टांतहै जो २५३ की अविकोक्ति में दर्योग्वार लिखचुके तहां देखो कि तदुलका नाम कहिने से होमका सर्वसाकल्य समझि लेते ह) तैसा इसमें भी विप्र के उपलक्षण से सकल मनुष्यमात्र समझे जाते हैं॥ ०॥मसरआदिसे मारना कहा सो ब्राह्मण चोरसे उपरान्त समझना चाहिये क्योंकि (नजानुब्राह्मणांहन्या त्सर्वपापेष्वपिस्थित मितिमानवेब्राह्मणवधनिषिद्धत्वात) मनुस्मृति में यह निषेध है कि ब्राह्मण को कदाचित भी न मारे यद्यपि सबतरह के पापोंपर आरूढ हो—तथापि—जो कभी किसी राजाने निषेध को न मानि के मारि दिया तौभी शुद्ध होताहै•क्योंकि आगला वचन देखो उसमे वधके द्वारा ब्राह्मण की भी शुद्धि होनी कहा है=यथा (वधेनशुद्ध्यतिस्तेनो ब्राह्मणस्तपसैववाइतिविकल्पा भिधानात) अर्थात—वध होने से चोर शुद्ध होताहै पर जो ब्राह्मण हो तौ तपस्या से भी शुद्ध होता है यह विकल्प कहा गया है कि या तौ वध होने से या तप करने से भी॥ ०॥ परन्तु तपसैववा इसमें एव शब्द जो टीका अर्थदेता है तिसकीभ्रांतिसे कुछ ब्राह्मण चोरके वधका निषेध निपट नहींहै कि वह वधसे शुद्ध न होगा केवल तपसे शुद्ध होगा क्योंकि यह एवकार इस लिये है कि जो वध न हो तौ केवल तपसे भी शुद्ध होता है•और भी इस अर्थ की ध्वनि देखो चाहिये कि जो वधसे शुद्ध न होना माना जाय तौ फिर (तपसैववा) यह विकल्प की या और ही दोनों किसकेसाथ जोडी जायँ किन्तु केवल एकही विधि में विकल्प नहीं सिद्ध होताहै—और यह भी नहीं कहि सक्ते हैं कि दंड के अभिप्राय से विकल्प माना जाय क्योंकि दंडका आदेशही नहीं किया गया और भी यह विरोध है कि (एकार्थास्तुविकल्पेरन्नितिन्या येनैकार्थानामेवविकल्पोत्रोभियवधयोरिवनचदंडतपसोरेकार्थत्वं दंडस्यदमनार्थत्वात तपसश्चपापक्षयहेतुत्वात) अर्थात—जिन दोनोंका एकहीसा प्रयोजन हो वेही परस्पर विकल्प से काम आवें इस न्यायसे एकही अर्थ वालोंका विकल्प होताहै धान और जौ की तरह• दंड और तपका एक प्रयोजन नहीं है क्योंकि दंड तौ दमन के प्रयोजन से किया जाताहै तपस्या पापोंका क्षय करने के लिये होतीहै तिससे दोनों का एक अर्थ नहीं रहिता -और- यह भी इसमें विचार है कि (वधेनशुद्ध्यतिस्तेनः ब्राह्मणस्तपसैववा) यह पहिला पाद सामान्य विषय और दूसरा पाद विशेष विषय है कि जो केवल ब्राह्मण पर आरूढ है तौ भी सामान्य और विशेष दोनों का परस्पर विकल्प नहीं सिद्ध होताहै अर्थात सामान्य विषयक वधके साथ विशिष्ट विषय तपका विकल्प नहीं बनता है -किन्तु ऐसा विकल्प वाक्य नहीं होता है कि

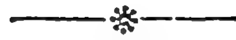
ब्राह्मणों को दही देना चाहिये याकौडिन्य मुनिको मट्टा॰तिससे दोनोंका सामान्य ही विषय हो ॥ ० ॥ अथवा इसरीतिसे भी व्यवस्था है कि इस चोरीके विषयवाले प्रकृत्त प्रायश्चित्त में राजाआदि क्षत्रीकोभी ब्राह्मणके वधका निषेध नहींहै क्योंकि (सुवर्णस्तेयकृद्विप्रः) मनुने इस वचन में विप्रही को कहिकर पीछे (गृहीत्वामुशलं राजासकृद्हन्यात्तुतंस्वयं) तं ब्राह्मणं यह सर्वनाम शब्द के द्वारा चर्चा किये ब्राह्मण ही की परामर्श लेकर एकबार मारने का विधान किया है तिससे॰ इसमें कदाचित् यह कहो कि ब्राह्मण को मारनेका निषेध वचन ऊपर कहिचुके हैं॰तिसका तात्पर्यही कुछ और कि (नजातुब्राह्मणंहन्यात्सर्वपापेष्वपिस्थितं) यह मारनेका निषेध प्रायश्चित्त बाबत नहीं किन्तु प्रायश्चित्त से उपरालू दंड देने की रीति से मारने का निषेध सिद्ध होताहै क्योंकि प्रायश्चित्तके मध्ये साक्षात् मूसर आदि लेकर मारनेका आदेशही जो कहा गया ॥ ० ॥ यह मरण पर्यन्त का प्रायश्चित्त जो कहिचुके सो बुद्धिपूर्व सुवर्ण हरनेपर आरूढहै॰ क्योंकि अंगिराकी विचली मध्यम स्मृतिका यह नियम है कि=मरणांतिकंचयत्प्रोक्तं प्रायश्चित्तंमनीषिभिः तत्तुकामकृतेपापेविज्ञेयं नात्रसंशयः=अर्थात्—बुद्धिमानोंने मरणांतिक जो प्रायश्चित्त कहीं कहा हो सोसर्वत्र कामनासे किये हुये पापमें समझना इसमें संदेह कुछ नहींहै ॥ ० ॥ इस प्रायश्चित्त के प्रसंग में सुवर्णका हरनाजो कहागया वह सुवर्ण भी एक परिमाण विशिष्ट तौल का नाम है कि इतना सोना हरने से सुवर्ण की चोरी कहावै कुछ सोने की जातिहीका नाम नहीं तिससे वह तौल भी समझनी चाहिये सो लिखते हैं=यथा=जालसूर्यमरीचिस्थत्रसरेणूरजःस्मृतम् तेऽष्टौलिक्षयातुतास्तिस्रोराजसर्षपउच्यते गौरस्तुतेत्रयः षड्भिर्यवोमध्यस्तुतेत्रयः कृष्णलःपंचतेमाषस्तेसुवर्णस्तुषोडश= अर्थात्—आचार मर्यादा के अन्त में जो मान की परिभाषा योगीश्वर आप कहिचुके उसके दोही श्लोकों से यहां प्रयोजन है कि—घरों के जालीदार झरोखों में सूर्यकी किरणें जो घुसती हैं तिनमें जो बहुत हलुके छोटे अति सूक्ष्म किनुके से उड़ते देखि परते हैं वही त्रसरेणु रज कहाते हैं वे आठ मिलि के एक लीख कही जाती है तीन लीखें मिलि के राजसर्षप अर्थात् राई कहातीहै तीन राई मिलिके गोली सरसों होतीहै छः सरसों मिलके एक मध्यम जौ कहाता है तीन जौ मिलि के एक कृष्णल अर्थात् घुंघुची की तौल ठहिरती है ऐसी पांच घुंघुची मिलिके एकमाशा होता है इन्हीं सोरह मासे का एक सुवर्ण अर्थात् लोक में अशर्फी कहाती है—इसी तौल के अनुसार इतना सोना हरने से सुवर्ण की चोरी कहाती है (क्योंकि योगीश्वर आपही यह

वैदिनंजपेत् यवमात्रेसुवर्णस्यप्रायश्चित्तंदिनद्वयम् सुवर्णकृष्णलंह्येकमपहृत्यद्विजोत्तमःकुर्यात्सांतपनंकृच्छ्रं तत्पापस्यापनुत्तये अपहृत्यसुवर्णस्यमाषमात्रंद्विजोत्तमः गोमूत्रयावकाहारस्त्रिभिर्मासैर्विशुद्ध्यतिसुवर्णस्यापहरणेवत्सरंयावकीभवेत्ऊर्ध्वंप्राणांतिकंज्ञेयमथवाब्रह्महाव्रतम् (इदंचवत्सरंयावकाशनंकिञ्चिन्न्यूनसुवर्णापहारविषयं० सुवर्णापहारेमन्वादिमहास्मृतिषु द्वादशवार्षिकविधानात्) अर्थात्–बालकोनोक भर सोना हरने में प्राणायाम करै तब शुद्ध होय यही प्रायश्चित्त है० तथा एक लीख बराबर सोना हरने में तीनबार प्राणायाम करै (युवःपंडितः) राई बराबर सोना हरने मे चारि प्राणायाम करै और आठहजार गायत्रीभी जपै उस पापको निवृत्तिकेलिये० सरसों बराबर सोना हरने में आठप्रहरभरि गायत्री जपै० एक जौ भरि सोना हरने में दो दिनका प्रायश्चित्त करै० एक कृष्णल घुंघुची बराबर सोना हरनेमे वह द्विजोत्तम सांतपनकृच्छ्रव्रत करै उसपापकी शुद्धिकेलिये० एक माशेभर सोना हरिके वह द्विजोत्तम गायत्री जपके सिवाय तीनिमासतक गोमूत्र और यावक अर्थात् जौखका रस इनदोहों का आहारकरै तब शुद्ध होय० सुवर्ण अर्थात्सोरहमासेसोना हरनेमें एकवर्षतक यावक खाइके रहै० इससे अधिक सोना हरने में प्राणांतिकप्रायश्चित्त जानो कि जैसे कहीं लिखिचुकेहों अथवा ब्रह्महत्यावाला व्रतकरै(यह एक वर्षतक यावक आहारकरना कहा सोभी कुछ कमती सोरहमासेके हरनेमध्ये समझना० क्योंकि पूरेसुवर्णके हरने मध्ये मनुआदि वडीवडी स्मृतियोंमेंवारहवर्षका प्रायश्चित्त लिखाहै तिससे–बल्कि–जबर्दस्तीसे छीननेआदि प्रकारोंमें सुवर्णकेपरिमाणसे कम सोनाभी हरनेमें मरणांतिक प्रायश्चित्तहोताहै=यथा=बलाद्येकामकारेणगृह्णंतिस्वंनराधमाः तेषांतुबलहर्तॄणां प्राणांतिकमिहोच्यते (सुवर्णपरिमाणादर्वागपीत्यभिप्रेतं) अर्थात्–जे कोई अधम नर इच्छासे जबर्दस्ती धन हरते हैं तिन जबर्दस्ती हरने वालोंको इसमें प्राणांतिकही प्रायश्चित्त कहाहै (सुवर्ण के परिमाण से भीतर भी हरने मे यह अभिप्राय जानो) वरन सोनेके उपलक्षण से चांदी आदि सब समझि लेने ॥ ० ॥ यह चोरी का प्रायश्चित्त जो कुछ कहा गया सो हरा हुआ धन स्वामी को देकर करना होताहै विना वापिस किये नहीं=तथाच वचनं=स्तेयेब्रह्मस्वभूतस्यसुवर्णादेःकृतेपुनः स्वामिनेऽपहृतं देयंहर्त्रैवैकादशाविकम=अर्थात्–ब्राह्मण के स्वत्वभूत सुवर्ण आदि किसी धन की चोरी करने में फिर हरनेवाले करके आपही स्वामीको हरा हुआ देदेना चाहिये (न अवश्यमेवापक्षांतरेसुवर्णेनियोगोविनिग्रहेअतस्माद) यदिहर्ता चयनददातितदागक्का दगगुणाह्स्वादाप्यइतिनतात्पर्यार्थः) अर्थात् जो हरने वाला हरे हुये धनको आपही

न वापिस करै तब राजा उसपर ग्यारह गुणा दिवावै परन्तु ऐसा अर्थ नहींहै कि वह आपही ग्यारहगुणा देनेलगै क्योंकि अपहृतंहृत्वादेयं यह प्रयोग श्लोक में साफ है कि हरा हुआ धन धनीको देदेवै–बल्कि-मनुके भी अग्रोक्त बचन में उतनाही देनेका अर्थ है कि जितना चुराया हो=यथा=चरेत्सांतपनंकृच्छ्रं तन्निर्यात्यात्मशुद्धये=अर्थात्- जो हराहो सो निःशेष देकर अपनी शुद्धिकेलिये सांतपन कृच्छ्र व्रतकरै=और ग्यारह गुणा राजा दिवावै यह कहिचुके सो यह एक दंडकी रीति से दिवाना कहा कुछ प्रायश्चित्त का संबंध उसमे नहीं समझना क्योंकि दंडके प्रकरण में भी ऐसा कहिचुके हैं (शेषेष्वेकादशगुणंदाप्यस्तस्यचतद्धनं) कि बाक़ी सूरतों में उसकावह धन भी ग्यारह गुना करिके दिलावे ॥ ० ॥ जहां कहीं अशक्ति से राजा मारने को असमर्थ हो तहां वसिष्ठजीका कहा प्रकार करना=यथाह वसिष्ठः=स्तेनःप्रकीर्णके शो राजानमभियाचेत ततस्तस्मैराजौदुंबरंशस्त्रं दद्यात्तेनात्मानंप्रमापयेत मरणात्पूतोभवतीतिविज्ञायते (औदुंबरताम्रमयं) अर्थात्–बाल छिटिकाये हुये चोर राजा के पास आकर याचना करै कि मैंने यह महापाप किया मुझे प्रायश्चित्त देनाचाहिये यह सुनिके राजा उसे औदुंबर नामका शस्त्र विशेष जो ताँबेका बना समझा गयाहै सो देवे उसीसे वह चोर अपने शरीरको घातकरै मरनेसे पवित्र होताहै यह जाना गया यद्यपि उन्हीं वसिष्ठने दूसरा भी प्रायश्चित कहाहै कि=निष्कालकोगोघृताक्तो गोमयाग्निनापादप्रभृत्यात्मानं प्रतापयेन्मरणात्पूतोभवतीति विज्ञायते=अर्थात्-निष्कालकनाम समस्त बाल मुड़ाये हुये गऊका घी शरीरमें लपेटेहुये गऊके गोबरके कण्डोंकी प्रदीप्त अग्निमें पैरोंको आदिलेकर सब शरीर भस्म करै तो मरनेसे पवित्र होताहै यह जाना गया–सो यह प्रायश्चित उसके लिये समझना जिसने गुरु या श्रोत्रिय या यागस्थ ब्राह्मण आदिका द्रव्य हराहो यद्वा क्षत्री आदि हरने वालाहो तिसके लिये भी ॥ ० ॥ तथैव अश्वमेध आदि यज्ञ करने से भी शुद्धि होती कहीहै ऐसा प्रस्तावसे मरणांतिक प्रायश्चित्त पहिले दर्शायकर पीछे से कहाहै कि(अश्वमेधेनगोमेधेनवाविशुध्येत) यद्वा अश्वमेध से या गोमेध से यजन करिके भी शुद्ध होय-सो यह प्रायश्चित्त उसके लिये समझना जो वैश्य वा क्षत्री आदि हरने वाले हों ॥ २५७ ॥ आगेअर्धश्लोकसे अनिच्छासे हरनेवालोंकेप्रायश्चित्तकहेंगे।

— ≈ —

अथ अज्ञानतः सुवर्णापहारादि प्रायश्चित्तानां प्रदर्शकोऽयं परिच्छेदः पंचत्रिंशः ३५



इस परिच्छेद में वे प्रायश्चित्त कहे जायँगे जो अनिच्छा और अज्ञानता से सुवर्ण हरने मध्ये चाहिये और सुवर्ण के उपलक्षण से चांदी ताँबा आदि सर्व धातु वा रत्नों के हरने मध्ये भी प्रायश्चित्त कहे जायँगे ॥ केवल उन द्रव्यों के प्रायश्चित्त इसमें न होंगे कि जिनका हरना उपपातक ठहर चुका है ॥

(अकामस्वर्णाद्यपहारप्रायश्चित्तं)

अनिवेद्यनृपेशुद्ध्येत्सुरापव्रतमाचरन् । आत्मतुल्यंसुवर्णवादद्याद्वाविप्रतुष्टिकृत् २५८

अर्थः—राजामें विना जताये सुरापका व्रत करते हुये शुद्ध होय=अर्थात्—चोर अपने पापको राजा पर सुनाये विना भी शुद्ध होता है जो सुरापान वाला प्रायश्चित्त बारहवर्ष करै जैसा दोसौ चौवन २५४ मूल श्लोक पूर्वार्द्ध से कहि चुके। अथवा अपनी देहभरि तौलि के सोना दान करे जो अपहर्ता अति धनी होय अथवा इतना न हो तौ ब्राह्मण की संतुष्टि होने योग्य धन दान करै कि जितने से ब्राह्मण की आयु भर उसका कुटुंब पालन होसके ये तीनों प्रायश्चित्त एकही विषय पर यथा सम्भव से विकल्प हैं ॥ २५८ ॥

२५८ अधिकोक्तिः—क्यों जी (सुरापव्रत) सुरा पीने वाले का व्रत क्योंकहा दोसौ चौवन के पूर्वार्द्ध में सुरापान के ऊपर (ब्रह्महत्या व्रतंचरेत) यह अतिदेश उतार दियाथा कि ब्रह्महत्याका व्रत इसमेंभी करै॰तौ फिर यहांभी यही कहिनाचाहिये था कि ब्रह्महत्या का व्रत करै जोदोसौ तेंतालीस में कहिचुके—सुनो ब्रह्महत्या केसाथमें मुर्दाके माथेकी ध्वजा और खोपड़ी का खप्पर भी लेना कहा गया तिसका सुरापान के प्रायश्चित्त से निराकरण भी होचुका और यहांभी उनका प्रयोजन कुछ नहीं है तिससे ऐसा कहा गया सो संदेह नकरना चाहिये ॥ ० ॥ यह सुराप वाला व्रत जो बारह वर्ष का चोर पर अतिदेश उतारा सो यह अकामकारों का विषय समझना

कि जिसने विना कामना के सुवर्ण चुराया हो क्योंकि (इयंविशुद्धिरुदिता प्रमाप्या कामतोद्विजं इत्यकामतो विहितस्यैव द्वादशवार्षिकस्यातिदेशात्) विना कामना केही द्विज मारने मध्ये जो बारह वर्ष नियत हुयेथे उन्हीं का अतिदेश यहां दिया गया तिससे=अत्रापि वितर्कः—क्योंजो विना कामना के अपहारही नहीं संभव होताहै क्योंकि जिसको अपहार करने की कामना नहीं वह अपहारही क्यों करेगा•तौफिर अकामकार का विषय कैसे यहां कहिते हैं—सुनो जब किसीने विना कहे उसके कपड़े की गांठि मे बांधि दिया यद्वा किसी कपड़े में बँधाहुआ सुवर्ण आदि कहींपरा पाइकर लेलिया यद्वा चांदी आदि अन्य द्रव्य जानिके हरा और तत्कालही किसी औरको देदिया या खोइदिया परन्तु मालिकको ततास करिके नहीं वापिस किया तब यह कामना के विनाभी अपहार होता है॥ ० ॥ जो कोई तांबे आदिको रसवेध आदि लागों के योग मे बनाये हुये सुवर्ण का रूपमात्र कृत्रिम कूट को हरै तिसपर यह प्रायश्चित्त न चाहिये क्योंकि सुवर्ण की मुख्य जातिका समवाय न होनेसे और यह कारण है कि मुख्य वस्तु के सदृश रूप होने मात्र से उस नकली मे असलके गुण धर्म नहीं होते हैं• यद्यपि ऐसाही नकली सोना जो सोना नहीं है तिसको सोने की भ्रान्ति से यथार्थ सोना समझके हराहो तथापि यह सुवर्ण की चोरी वाला प्रायश्चित्त प्रसंग नहीं चाहिये क्योंकि उसने सोना नहीं चुराया तिससे—और यहभी न कहिना चाहिये कि जैसा दोसौ बावन के पूर्वार्द्ध मे यह कहाया कि (चरेद्व्रतमहत्वापि घातार्थंचेत्समागतः) ब्राह्मणके मारने को गयाहो तो न मारि पानेमेंभी प्रायश्चित्त करै तैसा यहां भी दोष मानना चाहिये कि सोना हरने वाला कृत्य उसने किया पर नहीं सोना हरि पाया तोभी दोषी उसी कामका होहिरै• यह इस हेतु मे न कहिनाचाहिये कि यह सुवर्ण के हरने पर

नहीं ठहिर सक्ता है० परंतु जैसा ऊपर कहिचुके कि चाँदी आदि के ज्ञान से मुख्य सोना हरै या गांठि में बँधा हुआ आदि तौ वह विना कामना का अपहार कहाता है उसमें प्रायश्चित्त भी करना होगा। इसी पहिले विषय पर कि विना कामना के सुवर्ण जिसने हरा हो और विना राजा के जताये शुद्ध होना चाहै और अपहर्त्ता पुरुष अतिशय धनवान् हो तौ अपनी देह की बराबर तौलि के सोना दान करै अथवा देह की बराबर सोना जिसके पास न हो और पूर्वार्ध में कही ब्रतचर्या भी बार वर्ष करने को समर्थ जिसको न हो तौ ब्राह्मण की आयु भर उसका कुटुंब पालनहो सकने योग्य धनदान करै कि जिससे ब्राह्मण उसपर संतुष्ट होय॥ ०॥ जब किसी निर्गुणी स्वामी का द्रव्य हरा हो तौ व्यासजीका कहा नौवर्षका प्रायश्चित्त करै (एतदेवब्रतंस्तेनःपादन्यूनंसमाचरेत्) अर्थात् व्यास ने कहा है कि यही ब्रतचोर करै चौथाई कम करिके अर्थात् बारह की चौथाई तीनि छोड़ि के नौ वर्ष करै= और जहां कहीं इसी प्रकारका धन ऐसा कोई हरै जो भूखों मरते कुटुम्ब की रक्षा हेतुसे हरने गया हो तहां अत्रिमुनिका कहा छेवर्षका प्रायश्चित्त या स्वर्जित् आदि यज्ञ या तीर्थों की यात्रा करावै=यथाहात्रिः=षडब्दंवाचरेत्कृच्छ्रं यजेद्वाक्रतुनाद्विजः तीर्थानिवाभ्रमन्विद्वांस्ततःस्तेयाद्विमुच्यते=अर्थात्–द्विजाती ऐसी चोरी में यातो छेवर्षका कृच्छ्रब्रत करै या क्रतुयज्ञसे यजन करै या विद्वान् हो तौ तीर्थोंका भ्रमण करै तब चोरी के पापसे छूटै (इसमें लेख बढ़िजाने के भयसे आधुनिक लेखक इस तर्कपर आरूढ न होसके कि प्राक्तन संग्रहीताने क्या सोचिके ऐसा कहा होगा कि जिसका कुटुम्ब भूखों से मरता था वही स्वर्जित् आदि यज्ञभी कर सकैगा–तथापि उत्तर इसका वहुत सुगमहै कि सिर्फ यज्ञही करने नहीं कहे और प्रकार के भी प्रायश्चित्तोंका विकल्प कहाहै कि इनमें से जो कुछ करसके सोईकरै)॥ ०॥ जब कोई अपहर्त्ता अपहार करने के साथही तत्काल ऐसा पछितावा करै कि मैंने वहुत बुरा किया इस पछितावेके साथ अपना हराहुवा द्रव्य उसके स्वामीको प्रत्यर्पण करै या छोड़ि भागै सो आपस्तंब का दर्शाया चौथे काल में एकबार भोजन तीन वर्ष तक पावै और एक ठिकाने दुरश्चरण की रीति के अनुसार बैठै अथवा अंगिरा मुनि का कहा तीनि वर्ष का वज्र नामक प्रायश्चित्तकरै=यहाँ भी= वादी तर्क उठाता है कि स्वामी को वापिस करदेने या छोड़ि भागने में अपहार की वातुवाला अर्थ सिद्ध हो जाने अर्थात हरना साबित होजानेसे कैसे प्रायश्चित्तमें छोटाईकी रिआयत कीगई और जो यों कहो कि हरना साबित न हुआ तो फिर प्रायश्चित्त का नियम न होना

मूत्र और यावक पीना कहाथा॰ तथापि इतना भेद समुझिलेना कि वहां तो इच्छा सहित चुराने मध्ये तीनमहीने कहे और यहां एक महीना या बारह दिवस केवल अनिच्छासे हरने मध्ये नियत हुये ॥ ० ॥ सुमन्तुने एक दूसरा भी यह कहाहै कि (सुवर्णस्तेयीद्वादशरात्रंवायुभक्षःपूतोभवति) सोना चुराने वाला केवल वायु को पीकर बारह दिनकाटे और कुछ न करे तौभी शुद्धहोताहै॰ सो यह उसके लिये समझना जो केवल मनके विचारसे अपहार करनेपर उतारूमात्र हुआ परन्तु आपही अपहार करने से निवृत्त होगया किन्तु नहीं कियाहो ॥ ० ॥ यहां भी स्त्री बालक बूढे आदि जो चोरहों तिनसे जो जो प्रायश्चित्त कहिचुके सो सब आधे आधे करवाने चाहिये ॥ ० ॥ जिन चोरियोंको दोसौ तीस २३० मूलश्लोक में घोडा रत्न मनुष्य आदि को सुवर्णकी चोरीके समान कहिचुके तिनके चुरानेवालों को अवोक्त प्रायश्चित्तों से आधा करवाना चाहिये उनमें भी यदि स्त्री या बालक बूढे आदि चोर हों तिन पर आधेका आधा चौथाई करवाना होगा ॥ ० ॥ और ये वचन चतुर्विंशतिमतकेहैं कि= रूप्यंहृत्वाद्विजोमोहाच्चरेच्चांद्रायणव्रतम् गद्याणदशकादूर्ध्वमाशतादृद्विगुणंचरेत् आसहस्रात्तुत्रिगुणमूर्ध्वंहेमविधिःस्मृतः सर्वेषांधातुलोहानांपराकन्तुसमाचरेत् धान्यानां हरणेकृच्छ्रं तिलानामैन्दवंस्मृतम् रत्नानांहरणेविप्रश्चरेच्चान्द्रायणव्रतम् (याद रक्खो कि गद्याणा एक वांटहै सो वैद्यक परिभाषा में यद्यपि दवाइयों की तौल मध्ये ६४ चौंसठिगुंजा भरि होताहै तथापि यहां धर्मशास्त्रमें ४८ अडतालिस रत्तीभरि गद्याणा कहाताहै सिर्फ चांदी की तौल मध्ये उसका प्रयोजन है कि) जो कोई द्विज मोह अज्ञानतासे रूपा चांदी हरे दश गद्याणके भीतर और पूरे दशगद्याणा हरनेमें भी चांद्रायण व्रतकरै और दश गद्याणसे ऊपर सौगद्याणा तक चांदी हरे वह दोवार चांद्रायण करे और सौगद्याणा से लेकर हजार गद्याणा तक चांदीहरै सो तिगुना चांद्रायण करै इसके ऊपर सोने वाली विधि कही है अर्थात् पूरे हजार गद्याणा या इससे भी अधिक चांदी हरे तिसके लिये सुवर्णकी चोरीवाले प्रायश्चित्त बारहवर्ष आदि के समझने और तांवा लोहा पीतल आदि सब धातुओं की चोरी करिके पराक नाम काव्रत प्रायश्चित्त करै और नाजों॰के हरने मध्ये कृच्छ्र व्रत करै और तिलोंके हरने मध्ये चांद्रायण व्रत करै तथा रत्नों की चोरी मध्ये ब्राह्मण चांद्रायण व्रत करै—इन वचनोंसे जोहजार गद्याणसे अधिक चांदी चुरानेका प्रायश्चित्त सुवर्णस्तेयकेसमान कहा सोभी सोनेका बडापन दर्शानेको लिखित है पर उनकी निवृत्तिकोलियेनहींहै— और जो रत्नोंके हरने मध्ये सिर्फ चांद्रायण कहा सोभी हजार गद्याणसे कम चांदी

के तुल्य वाले रत्नों को समझना किन्तु हजार से लेकर ऊपर अधिक मूल्य के रत्नों में सुवर्ण की चोरी समान प्रायश्चित्त होंगे ॥ २५८ ॥

इति सुवर्णस्तेय प्रायश्चित्त प्रकरणं ॥

———※———

(यह प्रकरण केवल चौंतीस पैंतीस दो परिच्छेदों से पूरा हुआ अब आगे गुरु-दार गामीके प्रायश्चित्त कहे जायँगे)

अथ जनन्यादि गुरुदार गमन प्रायश्चित्तानां भेद प्रदर्शकोऽयंपरिच्छेदः षट्त्रिंशः ३६

———※———

इस परिच्छेद में केवल उन्हीं पातकों के प्रायश्चित्त भेद कहे जायँगे जो देह जननी या पिता की सवर्णा आदि भार्या या उनके तुल्य जेकोई अन्य स्त्रियांमानी जाती हैं जिनके अज्ञान और अकाम गमन करनेसे होतेहैं या भोग करने पर उतारू होकर लौट आने से भी जो पाप होतेहैं ॥

(अकामगुरुतल्पगानां प्रायश्चित्तं)

२५९ अधिकोक्तिः=लोहेकीस्त्री साथ सोते समय पहिले अपना पापसबलोगों को ऊँची आवाज से सुनाइ देवै कि मैंने गुरुभार्या गमन किया तिसकी शुद्धि को यह प्रायश्चित्त करताहूँ (गुरुतल्पोऽभिभाष्यैनः इति मनुः) क्योंकि मनुने ऐसाकहा है गुरुतल्पग अपना पाप सुनाइ के लोह शय्या पर चढ़े =और यह भी एक नियम है कि जैसे स्त्री को आलिंगन किया था उसी तरह लोहे की मूर्त्ति को लिपटाइके सोवे• जैसा वृद्धहारीत ने कहाहै कि=गुरुतल्पगोमृन्मयी मायसींवास्त्रियःप्रतिकृतिमग्निवर्णां कृतेकार्ष्णायसशयने अयोमय्यास्त्रीप्रतिकृत्या कृत्वातामालिंग्यपूतोभवति=अर्थात्–काले लोह के बने पलँग तपेहुये पर मिट्टी या लोहेकी स्त्री की नकली मूर्ति अग्नि के वर्ण समान तपी हुई लाल करिके उस लोहे की मूर्ति साथ आलिंगन कस करिके मरने से पवित्र होता है=तथा बालों को सर्वथा मुडाइके सब देहमें घी लपेटिके यह शयन करना चाहिये=यथाह वशिष्ठः=निष्कालकोघृताभ्यक्तस्तप्तांस्त्रीं मृन्मयींपरिष्वज्य मरणात्पूतोभवतीतिविज्ञायते=अर्थात्–सब देह के बाल वा रोम पर्यंतमुड़ाये और घी लपेटे हुये मट्टीकी तपाईहुई स्त्री को खूब आलिंगन करिके मरजानेसेही पवित्र होताहै यह जानागया(यहां केवल मट्टी कही तौभी लोहे और मट्टी का विकल्प वदल समझलेना क्योंकि लोहा भी मृद्विकार धातु होता है दोनोंमें कुछ भेद नहीं है ॥ ० ॥ अग्रोक्त मनुके वचनमें लोहेके पलँग पर सोना या लोहे की मूर्त्ति को चिपटाना कितोल करना ये दोनों बात जुदी जुदी प्रतीत होती हैं=यथाह मनुः=गुरुतल्पोऽभिभाष्यैनस्तप्ते स्वप्यादयोमयेसूर्मीं ज्वलंतींवाश्लिष्यमृत्युनासविशुद्ध्यति=अर्थात्–गुरु तल्प पापी अपने पाप को सुनाइ के तपाये हुये लोहे के शयन पर सोवे या जलतीहुई मूर्ति को अंग से लगाय के मौतही से विशुद्ध होता है• इसमें या शब्दके विकल्प से साफ दो जुदी बातें होगई कि चाहै यह करो या वह–तौभी मिताक्षराकार ने व्यवस्था इस पर दीहै कि मनु के इस वचन का अविरोधीमहारा चाहि कर योगीश्वर के मूलश्लोक में भी ऐसा न समझि लेना कि दो जुदे प्रायश्चित्त हैं क्योंकि (आयस्यायोषितास्वपेत) जब यह कहागया कि लोहे की स्त्री साथ सोवै तब यहभी समझना चाहीरहा कि कहां सोवे तिसका यही संबंध है कि लोहेके शयन पर सोवै तिससे दोनों बातका संबंध परस्पर मिलाहुआ एकहै एकही प्रायश्चित्त समझना कि जैसा पहिले कहिचुके• यह पूर्वार्द्ध की व्यवस्था हुई॥ अब उत्तरार्द्ध पर ध्यान धरो कि दूसरे प्रायश्चित्त मध्ये मनुने भी लिङ्ग और अंड काटने कहे हैं=यथा=स्वयंवाशिश्नवृषणावुत्कृत्याधायाञ्जलौ नैर्ऋतींदिशमातिष्ठेदानिपा

तादजिह्मगः=अर्थात=जो पहिला कहा न करसके तौ आपही लिंग और वृषणोंको काटि के अंजुरी में धरिके नैऋत्य कोने की दिशामें टेढी चालिके विना सूधा चला जाकर शरीर गिरपरनेकी जगह पर थँभै=यह चलाजानाभी पीठि पीछे घूमिके न देखे विना करना चाहिये=यथाहतुःशंखलिखितौ (क्षुरेणशिश्नवृषणावुत्कत्यानवेक्षमाणो व्रजेत) अर्थात–शंख और लिखितमुनि दोनों भाइयोंने निज निज ग्रन्थमें एकही वचन कहाहै कि• छुरी छुरासे लिंग और आंड काटिके पीछे को न देखताहुआ सूधा चला जाय=तथा यह वशिष्ठका अग्रोक्त वचन है कि जहां प्राण छूटनेलगैं उसीजघे थँभे कहीं बीच में न रुके=यथा=सवृषणंशिश्नमुत्कृत्यांजलावाधायदक्षिणाभिमुखो गच्छेद्यत्रैवप्रतिहतस्तत्रैव तिष्ठेदाप्रलयादिति=अर्थात–आंड सहित लिंगको काटिके अजलीमें धरिके दक्षिण दिशाके सन्मुख मरनेपर्यन्त चलाजाय जहांकहीं दीवार टीले आदिके धक्कासे गिर परै उसी जघे प्राण छूटने तक थँभै=जैसा नारदने दण्ड देने की अपेक्षा मे भी लिंग काटना कहा है=तथाच=आसामन्यतमांगच्छन्गुरुतल्पगउच्यते शिश्नस्योत्कर्तनात्तत्रनान्योदंडोविधीयते=अर्थात–इतनी स्त्रियां जो मैंने गिनाईं इनमें किसी एकको गमन करते हुये गुरुतल्पग ठहिरताहै तहां शिश्न काटिलेनेके सिवाय और कुछ दण्डभी नहीं दिया जाताहै अर्थात उसका यही प्रायश्चित्त और यही दंड है ॥ ० ॥ इस प्रकार दण्ड देनेके लिये जो लिंग आदि किसी अंगका काटना होताहै सोभी पापहीके विनाश हेतु होताहै–इसी मरणांतिक दंडका अभिप्राय लेकर मनु ने यह कहाहै कि (राजभिर्धृतदंडास्तुकृत्वापापानिमानवाः निर्मलाःस्वर्गमायांतिसंत:सुकृतिनोयथा) पाप करनेवाले मनुष्य प्रायश्चित्त के विना राजाओंसे ठीक दण्ड दिये हुयेभी निर्मल होकर स्वर्गमें आतेहैं जैसे सुकृत करनेवाले सत्पुरुष स्वर्गमें जाते हैं इस नियमसे यह तात्पर्य है कि जहां राजा केवल धनदण्ड जुर्माना लेकर छोडि दे तहां उस दण्डसे उपरान्त प्रायश्चित भी लगता है–क्योंकि उन्हीं मनुने यह वचन भी कहा है कि=प्रायश्चित्तंतुकुर्वाणाःसर्वेवर्णायथोदितम् नांक्याराज्ञाललाटेस्युर्दाप्यास्तूत्तमसाहसम्=अर्थात–जिन पापोंका जैसा प्रायश्चित्त शास्त्रमें कहाहै तिसको ठीक ठीक करनेवाले सर्वो वर्णों के लोग केवल उत्तम साहस आदि धन दण्ड लेकर छोडि दियेजावें किन्तु राजाको उनके माथेपर दागदेनाआदि कोईसा चिह्न न करना चाहिये अर्थात इस चिह्नके निषेध से समस्त देहदंडों का उपलक्षण प्रकट किया है कि मारना पीटना आदि कोईसा देहदण्ड न देना चाहिये ॥ ० ॥ मूलश्लोकमें योगीश्वरने जो प्रायश्चित्त कहे दोनों मरणांतिक हैं इनमें कोईसा एक प्रायश्चितकरने

से गुरुतल्प गामी शुद्ध होता है—गुरुतल्पगामी कहा इसमें गुरु शब्द जो है सो मुख्य वृत्तिसे पितामें वर्त्तमान समझा जाताहै क्योंकि मनुने बड़े पुरुषोंका गुरुत्व समझाने मध्ये यह कहाहै कि=निषेकादीनिकर्म्माणि यःकरोतियथाविधिसंभावयतिचान्नेन सविप्रोगुरुरुच्यते=अर्थात—निषेक नाम गर्भमें बीज धरना आदि सभी संस्कारकर्मों को जैसी उनकी विधि होतीहै तिस रीतिसे जो कोई करताहै और अन्नसे भी पोषण करता है वही गुरु कहाता है॰तो यह मुख्य गुरु पिता ठहरा—इसी तरह योगीश्वर ने भी निषेक आदि कर्मोंके अभिप्रायसे ऐसा कहाहै (सगुरुर्यःक्रियाःकृत्वावेदमस्मै प्रयच्छति) अर्थात—आचारमर्यादामें कहिचुके हैं कि वह गुरु है जो सब संस्कारों की क्रियाएँ करिके लडकेको वेद विद्या देताहै॰ये सभी काम पिताके करनेसे होते हैं—क्योंजी—गुरु शब्दका वर्ताव अन्य पुरुषों में भी देखि परताहै जैसा आचार मर्यादा परिपाटी में (उपनीयगुरुःशिष्यं) इत्यादि मूलश्लोक से आचार्य को भी गुरु कहा था॰ और भी यह वचन है कि (स्वल्पंवाबहुवायस्यश्रुतस्योपकरोतियः तमपी हगुरुंविद्यादित्युपाध्याये) इसमें उपाध्यायकोभी गुरु ठहरायाहै कि थोडा या बहुत जिसका पढने सुनने में उपकार जो करता है तिसको भी गुरु जानो—व्यासजी ने भी इसको गुरुओं में गिना है=यथा (गुरु वो मातृ पितृ पत्याचार्य विद्यादातृ ज्येष्ठ भ्रातरऋत्विजोऽभयत्राताऽन्नदाताचेति) अर्थात—माता पिता पति आचार्य्य विद्या का दाता जेठे भैये ऋत्विज अभय देके रक्षा करने वाला प्राणों के संकट से और अन्नदाता भी कि जिसके सहारे से उदर पूर्ण होती हो ये सब गुरु हैं अर्थात बड़े हैं और इसी मान्यता के योग्य हैं॰देखो पिता के सिवाय येभी सब गुरु ठहिरे और अनेकों में गुरु के अर्थ की कल्पना होना कुछ दोषभी नहीं क्योंकि जिस मान्यताऔर पूज्यता के निमित्तसे गुरुशब्दकी प्रवृत्ति ठहिराई गई वह मान्यता और पूज्यता का निमित्त इन सबही में कुछ न कुछ लगा हुआ है बल्कि उस मान्यता का निमित्तत्व योगीश्वर ने आचार मर्यादामें दर्शाया भी है कि (एतेमान्यायथापूर्वमेभ्योमातागरी यसी) इतने जो गिनाये सोसभी माननीयहैं तथापि जिससे जो पहिले कहा वह उस से अधिक मान्य होता है और माता इन सबसे बड़ी पूजनीयहै—इसमें प्रथमसभी को मान्य कहिकर माता उनसे भी बड़ी ठहिराई—और (उपाध्यायाद्दशाचार्यआचार्याणां शतंपिता) जैसा यह वचन है कि उपाध्याय से दश गुणा आचार्य बड़ा और आचार्यों में पिता सौ गुना तो इन कथन के अनुसार उपाध्याय से अधिक आचार्य है तिससे भी पिता अतिशय बड़ा इसमें पिताकोही यदि मुख्य कहा चाहें और

नादजिह्मगः=अर्थात्=जो पहिला कहा न करसके तो आपही लिंग और वृषणोंको काटि के अंजुरी में धरिके नैऋत्य कोने की दिशामें टेढी चालिके विना सूधा चला जाकर शरीर गिरपरनेकी जगह पर थँभै=यह चलाजानाभी पीठि पीछे घूमिके न देखे विना करना चाहिये=यथाहतुःशंखलिखितौ (क्षुरेणशिश्नवृषणावुत्कृत्यानवेक्षमाणो व्रजेत्) अर्थात्–शंख और लिखितमुनि दोनो भाइयोंने निज निज ग्रन्थमें एकही वचन कहाहै कि• छुरी छुरासे लिंग और आंड काटिके पीछे को न देखताहुआ सूधा चला जाय=तथा यह वशिष्ठका अग्रोक्त वचन है कि जहां प्राण छूटनेलगें उसीजघे थँभे कहीं बीच में न रुके=यथा=सवृषणंशिश्नमुत्कृत्यांजलावाधायदक्षिणाभिमुखो गच्छेद्यत्रैवप्रतिहतस्तत्रैव तिष्ठेदाप्रलयादिति=अर्थात्–आंड सहित लिंगको काटिके अंजलीमें धरिके दक्षिण दिशाके सन्मुख मरजेपर्यन्त चलाजाय जहांकहीं दीवार टीले आदिके धक्कासे गिर परै उसी जघे प्राण छूटने तक थँभै=जैसा नारदने दण्ड देने की अपेक्षा से भी लिंग काटना कहा है=तथाच=आसामन्यतमांगच्छन्गुरुतल्पगउच्यते शिश्नस्योत्कर्तनात्तत्रनान्योदंडोविधीयते=अर्थात्–इतनी स्त्रियां जो मैंने गिनाई इनमें किसी एकको गमन करते हुये गुरुतल्पग ठहिरताहै तहां शिश्न काटिलेनेके सिवाय और कुछ दण्डभी नहीं दिया जाताहै अर्थात् उसका यही प्रायश्चित्त और यही दंड है ॥ ० ॥ इस प्रकार दण्ड देनेके लिये जो लिंग आदि किसी अंगका काटना होताहै सोभी पापहीके विनाश हेतु होताहै–इसी मरणांतिक दंडका अभिप्राय लेकर मनु ने यह कहाहै कि (राजभिर्धृतदंडास्तुकृत्वापापानिमानवाः निर्मलाःस्वर्गमायांतिसन्तःसुकृतिनोयथा) पाप करनेवाले मनुष्य प्रायश्चित्त के विना राजाओंसे ठीक दण्ड दिये हुयेभी निर्मल होकर स्वर्गमें जातेहैं जैसे सुकृत करनेवाले सत्पुरुष स्वर्गमें जाते हैं इस नियमसे यह तात्पर्य है कि जहां राजा केवल धनदण्ड जुर्माना लेकर छोड़ि दे तहां उस दण्डसे अपरालु प्रायश्चित भी लगता है–क्योंकि उन्हीं मनुने यह वचन भी कहा है कि=प्रायश्चित्तंतुकुर्वाणाःसर्वेवर्णायथोदितम् नांक्याराज्ञाललाटेस्युर्दाप्यास्तूत्तमसाहसम्=अर्थात् –जिन पापोंपर जैसा प्रायश्चित्त शास्त्रमें कहाहै तिनको ठीक ठीक करनेवाले सभी वर्णों के लोग केवल उत्तम साहस आदि धन दण्ड लेकर छोड़ि दियेजावें किन्तु राजाको उनके माथेपर दागदेनाआदि कोईसा चिह्न न करना चाहिये अर्थात् इस विषयके निषेध से समस्त देहदंडो का उपलक्षण प्रकट किया है कि मारना पीटना आदि कोईसा देहदण्ड न देना चाहिये ॥ ० ॥ मूलश्लोकमें योगीश्वरने जो प्रायश्चित्त कहे दोनो मरणांतिक हैं इनमें कोईसा एक प्रायश्चित्तकरने

से गुरुतल्प गामी शुद्ध होता है—गुरुतल्पगामी कहा इसमें गुरु शब्द जो है सो मुख्य वृत्तिसे पितामें वर्तमान समझा जाताहै क्योंकि मनुने बड़े पुरुषोंका गुरुत्व समझाने मध्ये यह कहाहै कि—निषेकादीनिकर्म्माणि यःकरोतियथाविधिसंभावयतिचान्नेन सविप्रोगुरुरुच्यते—अर्थात—निषेक नाम गर्भमें बीज धरना आदि सभी संस्कारकर्मों को जैसी उनकी विधि होतीहै तिस रीतिसे जो कोई करताहै और अन्नसे भी पोषण करता है वही गुरु कहाता है॰तौ यह मुख्य गुरु पिता ठहरा—इसी तरह योगीश्वर ने भी निषेक आदि कर्मोंके अभिप्रायसे ऐसा कहाहै (सगुरुर्यःक्रियाःकृत्वावेदमस्मै प्रयच्छति) अर्थात—आचारमर्यादामें कहिचुके हैं कि वह गुरु है जो सब संस्कारों की क्रियाएँ करिके लडकेको वेद विद्या देताहै॰ये सभी काम पिताके करनेसे होते हैं—क्योंजी—गुरु शब्दका वर्तावा अन्य पुरुषों में भी देखि परताहै जैसा आचार मर्यादा परिपाटी में (उपनीयगुरुःशिष्यं) इत्यादि मूलश्लोक से आचार्य को भी गुरु कहा था॰ और भी यह वचन है कि (स्वल्पंवावहुवायस्यश्रुतस्योपकरोतियः तमपीहगुरुंविद्यादित्युपाध्याये) इसमें उपाध्यायकोभी गुरु ठहरायाहै कि थोड़ा या वहुत जिसका पढने सुनने में उपकार जो करता है तिसको भी गुरु जानो—व्यासजी ने भी इसको गुरुओं में गिना है—यथा (गुरु वो मातृ पितृ पत्याचार्य विद्यादातृ ज्येष्ठ भ्रातरऋत्विजोऽभयत्राताऽन्नदाताचेति) अर्थात—माता पिता पति आचार्य विद्या का दाता जेठे भैये ऋत्विज अभय देके रक्षा करने वाला प्राणों के संकट से और अन्नदाता भी कि जिसके सहारे से उदर पूर्ण होती हो ये सब गुरु हैं अर्थात बड़े हैं और इसी मान्यता के योग्य हैं॰देखौ पिता के सिवाय येभी सब गुरु ठहिरे और अनेकों में गुरु के अर्थ की कल्पना होना कुछ दोषभी नहीं क्योंकि जिस मान्यताओर पूज्यता के निमित्तसे गुरुशब्दकी प्रवृत्ति ठहिराई गई वह मान्यता और पूज्यता का निमित्त इन सबही में कुछ न कुछ लगा हुआ है बल्कि उस मान्यता का निमित्तत्व योगीश्वर ने आचार मर्यादामें दर्शाया भी है कि (एतेमान्यायथापूर्वमेभ्योमाताग़रीयसी) इतने जो गिनाये सोसभी माननीयहैं तथापि जिससे जो पहिले कहा वह उस से अधिक मान्य होता है और माता इन सबसे बड़ी पूजनीयहै—इसमें प्रथमसभी को मान्य कहिकर माता उनसे भी बड़ी ठहिराई—और (उपाध्यायाद्दशाचार्यआचार्याणांशतंपिता) जैसा यह वचन है कि उपाध्याय से दश गुणा आचार्य बड़ा और आचार्यों से पिता सौ गुना तो इन कथन के अनुसार उपाध्याय से अधिक आचार्य है तिससे भी पिता अतिशय बड़ा इसमें पिताकोही यदि मुख्य कहा चाहे और

कहिना चाहिये क्योंकि ऐसीअतिशय मुख्यता आचार्यसें भी कही है यथा (उत्पा
दकब्रह्मदात्रोर्गरीयान्ब्रह्मदःपिता) किंतु देह उत्पन्न करनेवाला और वेद विद्या देकर
देह को योग्यता देनेवाला ये दोनों पिता होतेहैं तिनमें वेदकादेनेवाला पिताश्रेष्ठहै—
जिसमे पिता और आचार्य दोनों में बराबरी के सिवाय कोई विशेष लक्षण किसी
तर्क में न ठहिरा—वल्कि गौतमनेभी आचार्यही को श्रेष्ठ गुरु कहा है (आचार्यः
श्रेष्ठोगुरूणां) कि सब तरह के गुरुओं में आचार्य गुरु श्रेष्ठहै—और भी यह तर्क है
कि जो ऐसे वचनों के अनुसार अतिशयित्व से ही पिता को मुख्यता बताते हो
तो फिर (सहस्रमिति वचनान्मातुरेव गुरुत्वंस्यात्) जिस वचन में ऊपर पिता को
सौगुना कहा या उसके शेष पाठ में माता को हजार गुणा कहा है जिससे पिता को
भी छोड़ कर माताकोही मुख्य गुरु मानना चाहिये—भला यहभी कोई नियम नहीं
ठहिरा किसी वचनमें कोई बडा किसीमें कोई तिससे जो जो गुरु कहेगये सो सबही
गुरु हैं यह मानके ऐसी व्यवस्था लगानी चाहिये कि इन सबही की पत्नियों का
गमन करना गुरु दारगमन मानाजाय तो यह व्यवस्था निर्दूषित होजाय=सुनो ये सब
तर्क तुम्हारे ठीक हैं तथापि गर्भ में बीज धरना यह सबसे बडी बातहै इसीलिये (नि
षेकादीनिकर्माणि इत्यादि मनुका वचन जो हम लिखचुके उसमें मनुने बीजबोने
वाले पिताकाही गुरुत्व प्रतिपादन किया है और किसी का अधिकारही उसमें नहीं
पहुँचताहै और तुमने जो व्यास और गौतमके वचन ऊपरसुनाये सो गुरुओंकी सेवा
पूजा आदि करने की विशेषता से पिता से उपरान्त गुरुओं की स्तुति प्रशंसा पर आ
ठहरतेहैं ॥ [illegible] गर्भाधानकी प्रधानता द्वारा पिता का गुरुत्व दर्शानेवाले मनुके वचन
से यह ठीक [illegible] कि पिताही मुख्यगुरु है औरोंको अमुख्य गुरु समझना—इसीहेतुसे
वसिष्ठने (आचार्य पुत्रशिष्य-भार्यासुचैवं० इत्याचार्यदारेष्वातिदेशिकं गुरुतल्पप्राय-
श्चित्तमुक्तं) इस वचनने सब वहिकर आचार्यकी स्त्रियां भोग करने पर गुरुतल्प प्राय-
श्चित्तका अतिदेश [illegible] कियाहै—तैसेही [illegible] आदि ग्रन्थकारोंनेभी (आचार्य
[illegible] भार्या [illegible]) इत्यादि वचनों मे कहा है कि आचार्य आदिकों
की [illegible] गुरुतल्प का व्रत करे कि जैसा मुख्य पिताकृपी गुरु
[illegible] उपदेश किया गया—अब सोचो कि जब ऐसी दशापर्यं
[illegible] प्रायश्चित्त इसमें पहुँचे जो मुख्य
[illegible] समझा जाय तो वही प्रायश्चित्त [illegible] खड़ा होता है कि आचार्य आदि
[illegible] है० [illegible] यह दोष खड़ा होता है कि आचार्य आदि
[illegible] सो सार्थक ठहिरे—इन्हीं सब कारणों से मात
[illegible]

साफ पिता की ही स्त्रियां कहिकर नियम बांधा है (पितृदारान्समारुह्यमातृवर्ज्यं नराधमः) कि जो कोई अधम नर निज माता को छोड़ि पिता की अन्य दाराओं पर चढिके इत्यादि० सो गुरुदार गामी कहाता है=ऐसाही=षट्त्रिंशन्मत में कहा है कि (पितृभार्यांतुविज्ञाय सवर्णांयोऽधिगच्छति) पिता की सवर्णाभार्या को जानि के अधिगमन करे इत्यादि० सो गुरु दार गामी होता है— इन वचनोंसेभी निषेक गर्भाधान करने वाला पिताही मुख्य गुरु ठहरा ॥ ० ॥ यह गुरुत्व जो पिता पर आरूढ हुआ सो चारों वर्णों में अविशिष्ट एकसां समुझना क्योंकि गर्भाधान सभी वर्णों में एकसाँ होताहै -- इन कारणों से (सविप्रो गुरुरुच्यते) गर्भाधान वाले मनु के वचन में यह विप्र शब्द जो आयाथा सो भी एक मुख्यता का उपलक्षण है॥ तिससे पिताकी पत्नी गमन करनाही महापातक है (यहाँ निज जननी से उपरान्त विमाता आदि का चर्चा है इसी लिये माता शब्द नहीं कहा पिता की पत्नी शब्द कहा गया) गमनका अर्थ भी चरम धातुके विसर्गतक सिद्ध होताहै कि जिसने वीर्य भी गिराया हो—इसी हेतुसे यह नियम है कि वीर्यपात से पहिले जो लौटि परा हो तौ महापातक नहीं सिद्ध होता है अर्थात् पातक सिद्ध होता है तिसके भी दो भेद हैं कि एक तौ इच्छासहित पास पहुँचा दूसरे जो इच्छा विना पास जा पहुँचा हो इसभेदके अनुसार आगे इसी अधिकोक्तिमें बारह और छेवर्षके दो जुदे प्रायश्चित्त कहेजायँगे मरणांतिक नहीं अत्रोक्तप्रायश्चित्तानांविभागः—मुख्य गुरु जो पूर्वोक्तव्यवस्था से पिता ठहिरा तिसकी अन्य पत्नी में जानिकर वीर्य सींचने से महापातक होताहै उस महापातक में वही दोनो प्रायश्चित्त सूचित हुयेहैं कि जिनको इसी दोसौउनसठि २५९ मूलश्लोक से कहिचुकेदोनों मरणांतिक विधान हैं दोमें से कोई एक अनुष्ठान कियाजाय० कदाचित् विनाजाने धोखा आदि से वीर्यपात किया हो तिसके लिये मरणांतिक नहीं किन्तु बारह वर्षकी व्रतचर्या है सो आगे चढिकर शंखजीके वचन में देखो— परन्तु ठेठ जननी में अज्ञानता आदि धोखे से भी वीर्यपात करने पर वही दोनो मरणांतिक प्रायश्चित्त हैं—किन्तु जननी की सौति जो पिता और जननी की सवर्णा हो या केवल पिता की सवर्णा हो या केवल जननी की सवर्णा हो या जननी से उत्तम वर्णा हो या पिता से भी उत्तम वर्णा की हो तिसमें जानि के वा इच्छासे वीर्यपात करनेपर वही दोनो मरणांतिक प्रायश्चित्त हैं (अर्थात् नीचेवर्णा की विमाता के भोग मध्ये अगिली अधिकोक्ति में व्यवस्था कही जायँगी) यहां केवल जननी और सवर्णा तथा उत्तमवर्णा सौतिका प्रसंगहै इसी मध्ये षट्त्रिंशन्मत

कहना चाहिये क्योंकि ऐसीअतिशय मुख्यता आचार्यसे भी कही है यथा (उत्पा दकब्रह्मदात्रोर्गरीयान्ब्रह्मदः पिता) किंतु देह उत्पन्न करनेवाला और वेद विद्या देकर देह को योग्यता देनेवाला ये दोनों पिता होतेहैं तिनमें वेदकादेनेवाला पिताश्रेष्ठहै– तिससे पिता और आचार्य दोनों में बराबरी के सिवाय कोई विशेष लक्षण किसी तर्क में न ठहिरा–बल्कि गौतमनेभी आचार्यही को श्रेष्ठ गुरु कहा है (आचार्यः श्रेष्ठोगुरूणां) कि सब तरह के गुरुओं में आचार्य्य गुरु श्रेष्ठहै–और भी यह तर्क है कि जो ऐसे वचनों के अनुसार अतिशयित्व से ही पिता को मुख्यता बताते हौ तो फिर (सहस्रमिति वचनान्मातुरेव गुरुत्वंस्यात्) जिस वचन में ऊपर पिता को सौगुना कहा था उसके शेष पाठ में माता को हजार गुणा कहा है तिससे पिता को भी छोड़ि कर माताकोही मुख्य गुरु मानना चाहिये–भला यहभी कोई नियम नहीं ठहिरा किसी वचनमें कोई बड़ा किसीमें कोई तिससे जो जो गुरु कहेगये सो सबही गुरु हैं यह मानिके ऐसी व्यवस्था लगानी चाहिये कि इन सबही की पत्नियों का गमन करना गुरु दारगमन मानाजाय तौ यह व्यवस्था निर्दूषित होजाय=सुनो ये सब तर्क तुम्हारे ठीक हैं तथापि गर्भ में बीज धरना यह सबसे बड़ी बातहै इसीलिये (नि षेकादीनिकर्माणि) इत्यादि मनुका वचन जो हम लिखचुके उसमें मनुने बीजबोने वाले पिताकाही गुरुत्व प्रतिपादन किया है और किसी का अधिकारही उसमें नहीं पहुँचताहै और तुमने जो व्यास और गौतमके वचन ऊपरसुनाये सो गुरुओंकी सेवा पूजा आदि करने की विशेषता से पिता से उपरान्त गुरुओं की स्तुति प्रशंसा पर आ रूढ हैं ॥ तिससे गर्भाधानकी प्रधानता द्वारा पिता का गुरुत्व दर्शानेवाले मनुके वचन से यह ठीकभया कि पिताही मुख्यगुरु है औरोंको अमुख्य गुरु समझना–इसीहेतुसे वसिष्ठने (आचार्य पुत्रीगमनेऽप्येवमेव इत्याचार्यदारेष्वातिदेशिकं गुरुतल्पप्राय श्चित्तमुक्तं) इसवचनमें गर्व कहिकर आचार्यकी स्त्रियां भोग करने पर गुरुतल्प प्राय श्चित्तका अतिदेश उतार दियाहै–तैसेही शातातप आदि ग्रन्थकारोंनेभी (आचार्या देरुभार्यां गुरुतल्पव्रतवत्) इत्यादि वचनों से कहा है कि आचार्य आदिकी भार्यागमन करने वाला गुरुतल्प का व्रत करै कि जैसा मुख्य पितारूपी गुरु की स्त्रीसे भोग करने वालेको उपदेश किया गया–अब सोचो कि जब–ऐसी दशापरभी आचार्य आदिको मुख्य गुरु समझा जाय तौ वही प्रायश्चित्त इसमें पहुँचे जो मुख्य गुरु गमनमें उपदेश किया गया है॰ फिरतो यह दोष खडा होता है कि आचार्य आदि गमन पर अतिदेश जो उतारागया सो व्यर्थक ठहिरे–इन्हीं सब कारणों से माक

साफ पिता की ही स्त्रियां कहिकर नियम बांधा है (पितृदारान्समारुह्यमातृवर्ज्यं नराधमः) कि जो कोई अधम नर निज माता को छोड़ि पिता की अन्य दाराओं पर चढिके इत्यादि• सो गुरुदार गामी कहाता है=ऐसाही=षट्त्रिंशन्मत में कहा है कि (पितृभार्यांतुविज्ञाय सवर्णांयोऽधिगच्छति) पिता की सवर्णाभार्या को जानि के अधिगमन करै इत्यादि• सो गुरु दार गामी होता है- इन वचनोंसेभी निषेक गर्भाधान करने वाला पिताही मुख्य गुरु ठहरा ॥ ० ॥ यह गुरुत्व जो पिता पर आरूढ हुआ सो चारो वर्ण में अविशिष्ट एकसा समुझना क्योंकि गर्भाधान सभी वर्णों में एकसाँ होताहै - इन कारणों से (सविप्रो गुरुरुच्यते) गर्भाधान वाले मनु के वचन में यह विप्र शब्द जो आयाथा सो भी एक मुख्यता का उपलक्षण है ॥ तिससे पिताकी पत्नी गमन करनाही महापातक है (यहाँ निज जननी से उपरान्त विमाता आदि का चर्चा है इसी लिये माता शब्द नहीं कहा पिता की पत्नी शब्द कहा गया) गमनका अर्थ भी चरम धातुके विसर्गतक सिद्ध होताहै कि जिसने वीर्य भी गिराया हो—इसी हेतुसे यह नियम है कि वीर्यपात से पहिले जो लौटि परा हो तो महापातक नहीं सिद्ध होता है अर्थात् पातक सिद्ध होता है तिसके भी दो भेद हैं कि एक तो इच्छासहित पास पहुँचा दूसरे जो इच्छा विना पास जा पहुँचा हो इसभेदके अनुसार आगे इसी अधिकोक्तिमें बारह और छेवर्षके दो जुदे प्रायश्चित्त कहेजायँगे मरणांतिक नहीं अत्रोक्तप्रायश्चित्तानांविभागः—मुख्य गुरु जो पूर्वोक्तव्यवस्था से पिता ठहिरा तिसकी अन्य पत्नी में जानिकर वीर्य सींचने से महापातक होताहै उस महापातक में वही दोनो प्रायश्चित्त सूचित हुयेहैं कि जिनको इसी दोसौउनसठि २५९ मूलश्लोक से कहिचुकेदोनों मरणांतिक विधान हैं दोमें से कोई एक अनुष्ठान कियाजाय• कदाचित् विनाजाने धोखा आदि से वीर्यपात किया हो तिसके लिये मरणांतिक नहीं किन्तु बारह वर्षकी व्रतचर्या है सो आगे बढिकर शंखजीके वचन में देखो- परन्तु ठेठ जननी में अज्ञानता आदि धोखे से भी वीर्यपात करने पर वही दोनो मरणांतिक प्रायश्चित्त हैं—किन्तु जननी की सौति जो पिता और जननी की सवर्णा हो या केवल पिता की सवर्णा हो या केवल जननी की सवर्णा हो या जननी से उत्तम वर्णा हो या पिता से भी उत्तम वर्णा की हो तिसमें जानि के वा इच्छासे वीर्यपात करनेपर वही दोनो मरणांतिक प्रायश्चित्त हैं (अर्थात् नीचेवर्णा की विमाता के भोग मध्ये अगिली अधिकोक्ति में व्यवस्था कही जायँगी) यहां केवल जननी और सवर्णा तथा उत्तमवर्णा सौतिका प्रसंगहै इसी मध्ये षट्त्रिंशन्मत

को यह वचन है कि (पितृभार्यांतुविज्ञायसवर्णांयोऽधिगच्छतिजननीचाप्यविज्ञाय नामृतःशुद्धिमाप्नुयात्) पिता की भार्या सवर्णा को जानिके जो गमन करता है या जननी को विनाजाने सो मरजाने विना शुद्धि नहीं पाताहै ॥ कदाचित् कोई जननी में इच्छासाथ गमन करै तिसके लिये वशिष्ठ का दर्शाया प्रायश्चित्त है=यथा=नि-ष्कालकोघृताभ्यक्तोगोमयाग्निनापादप्रभृत्यात्मानमवदाहयेत्=अर्थात्–सवदेहकेरोम और वाल मुड़ाये घीलगाये गऊ के गोवरवाले कडों की अग्नि के समूह में पैरों को आदि लेकर थोडा थोडा देह क्रमसे सब जलावै= जननी या जननीकी सौति सवर्णा या उत्तम वर्णा में कामना के विना भी वारवार धोखेसे अभ्यास गमन होने मे यही प्रायश्चित्त है जो वशिष्ठ ने कहा (सवर्णा और जननी दोनो के योग प्रायश्चित्त जो मरणांतिक नहींहै सो आगे शंखके वचन मे देखना) और सवर्णा विमाता जो व्य-भिचारिणी हो तिसके मध्ये अगिली अधिकोक्ति के प्रारम्भसे देखो ॥ शंका कोजी (मातुःसपत्नींभगिनीमाचार्यतनयांतथाआचार्यपत्नींस्वसुतांगच्छंस्तुगुरुतल्पगः) माता की सौति•वहिन•आचार्य की वेटी • आचार्य की पत्नी• अपनी वेटी• इनको गमन करते हुये भी गुरुतल्पग होताहै–इस वचनमें माताकी सौति पर भी अतिदेश उतारा गयाहै तिससे सौति के गमन में उपदेशिक प्रायश्चित्त ठीक नहीं समझाजाताहै= सुनो अभी जो षट्त्रिंशन्मतका वचन लिखा गया है उस में माताकी सौति सवर्णा कही तिससे इस वचन मे हीन वर्णा सौतिका अभिप्राय ठहिरा तिसपर अतिदेशका उतारना भी विरोध नहींहै ॥ ० ॥ ये प्रायश्चित्त और नियम जो कुछ कहे गये सो सव मुख्यही पुत्रपर आरूढ है क्योंकि और जो अनेक तरह के बनाये हुये नकली पुत्र होतेहै सो केवल पुत्रोंवाले कार्यही करनेका अनुकल्प होतेहैं ठीक ठीक पुत्रत्व उनमे नहीं होता=यथाहमनु=क्षेत्रजादीन्सुतानेतानेकादशयथोदितान् पुत्रप्रतिनिधीनाहुः क्रियालोपान्मनीषिणः=अर्थात्–क्षेत्रजआदि जो ग्यारहपुत्र गिनाये तिनको मनीषी लोग पुत्रके प्रतिनिधि इसलिये कहते हैं कि संसारी कामका लोप न होजाय॥०॥ माता और विमाता आदि जो पिता की पत्नी ऊपर कही गईं तिनमे जो स्त्री पुरुष दोनोंकी चाहना से परस्पर संगम हुआ हो तहां एकही प्रायश्चित्त है जो इसी दोनों उत्सादि २५२ मूल श्लोक में पूर्वार्द्ध से कहा गया=जहां पुरुष ने आपही उत्साह दिलाकर गमन होने पर स्त्री को उत्साह किया हो तहां भी एक प्रायश्चित्त है जो इसी दोनों उत्सादि के उत्तरार्द्ध से कहा गया क्योंकि पाप की चाहना मे अधिकता होनेसे प्रायश्चित्तका बड़ापन होताहै=जहां=स्त्रीने स्वतः पुरुष को उत्साह देकर म-

गम किया हो तहाँ ऐसे पुरुषको मनु वचनके अनुसार दोमेंसे कोई एक प्रायश्चित्त देना चाहिये यथाह मनुः (गुरुतल्पोऽभिभाष्यैनस्तप्ते स्वप्यादयोमये सूर्मीं ज्वलन्तीं वाश्लिष्यमृत्युनासविशुद्ध्यति) अर्थात् गुरुतल्प गामी अपनापाप सुनाइ के तपे हुये लोहेके शयन पर सोवै या दूसरा यह कि लोहेकी बनी स्त्री जलती हुईको लिपिटाइ के मौतही से वह शुद्ध होताहै) इन दोमेंसे कोई एक प्रायश्चित्त जो मौजूद दशाके अनुसार ज्ञानमानों के विचार में आवै सो कराया जाय ॥ ० ॥ यह व्यवस्था एक जुदीहै कि जैसा शंखने द्वादश वार्षिक प्रायश्चित्त कहाहै=अधःशायी जटाधारी पर्णमूलफलाशनः एककालंसमश्नीयाद्वर्षेतुद्वादशेगते रुक्मस्तेयीसुरापश्चब्रह्महागुरुतल्पगः व्रतेनैतेनशुद्ध्यंतिमहापातकिनस्त्विमे=अर्थात्— धरती में लेटै जटा रखावै पत्ते मूल फल भोजनकरै सोभी नियमसे एकहीबार भोजन करै अन्न आदि कुछ न खाय इस रीतिसे बारहवाँ वर्ष बीति जानेपर इस व्रतसे ये सब इतने महापातकी शुद्ध होते हैं कि सोना चुरानेवाला• सुरापीनेवाला• ब्रह्म हत्यारा• गुरुदारगामी भी—सो यह शंखोक्त सर्वसामान्य प्रायश्चित्त भी यहां गुरुदारगामी के लिये उस दशापर विचारना कि समवर्णा या उत्तम वर्णा पिता की भार्या इच्छा बिना किसी धोखे आदि से भोगी हो—इसीमें जो कामना से संगम करनेपर उतारू होकर वीर्य सींचने से पहिले लौटि गयाहो तिसकेलिये यही प्रायश्चित्त आधा किन्तु छवर्षका विचारना—और इसीमें जो इच्छा बिना संगम करने पर उतारू होकर वीर्यपात से पहिले लौटि परा हो तिसके लिये चौथाई किन्तु तीनि वर्षका यही प्रायश्चित्त देना चाहिये=और= यही प्रायश्चित्त पूरा बारह वर्षका उसको देना चाहिये जो अपनी खास जननी में कामनासे उतारू होकर वीर्यपात से पहिले घूमि गयाहो•यदि उसी जननी में कामना के बिना उतारू होकर वीर्यपात से पहिले घूमिगया हो तिसके लिये यही प्रायश्चित्त आधा छे वर्षका देना चाहिये इत्यादि कुछ और भी जैसी ओछी दशा हो तैसी ओछी अवधि चाहिये सो सब अगिली आधिकोक्ति में व्यौरेवार कल्पना करीजायगी बल्कि पिताकी सवर्णा भार्या जो व्यभिचारिणी हो तिसके भी संगम का प्रायश्चित्त कहा जायगा ॥ ० ॥ जो कि संवर्त्तने वीर्य सींचने से पहिले लौटिजाने मध्ये बहुत थोरा प्रायश्चित्त कहाहै कि (पितृदारान्समारुह्यमातृवर्जंनराधमः इत्यादिनासमारोहिता मात्रेतप्तकृच्छ्रउक्तःसहीनवर्णापितृदारेषुरेतःसेकादर्वाग्द्रष्टव्यः) अर्थात्—कोई अधमनर मातासे उपरान्त पिताकी दाराओं पर चढि कर फिरजाय इत्यादि पूरे वचन में चढ़ने मात्र मे तप्त कृच्छ्र व्रत करना कहाजिसकी आवना सिर्फ बारहदिनमें होतीहै—जो यह

प्रायश्चित्त उसके लिये विचारना कि जिसने पिता से हीने वर्णावाली भार्याओंमें संगम करनेपर उतावल होकर वीर्यपातसे पहिले छोडिदिया किन्तु पूरा संगम न करने पाया हो—ये सब नियम ब्योरेवार अगिली अर्थिकोक्ति में क्षत्रिया वनेनी शूद्रा जो पितासे ओछे वर्णकी विमाता हों तिनके जुदेजुदे प्रायश्चित्त पूरे और ओछे भोगभेद मे तथैवइच्छा और अनिच्छा वा परस्पर इच्छाके भेदसे भी कहे जायँगे—अर्थात गुरु दारा भोग संबंधी पातक भेद अनेक अभी उपरालूहैं कि जिनके प्रायश्चित्त इस अ- र्थिकोक्ति में नहीं कहे सो सबअगिली में दर्शावेंगे॥ २५९ ॥

(गुरुतल्पातिदेशादिप्रायश्चित्तानि)

प्राजापत्यंचरेत्कृच्छ्रंसमावागुरुतल्पगः। चांद्रायणंवात्रीन्मासानभ्यसेद्वेदसंहिताम् २६०॥

अर्थ:-अथवा गुरुतल्पगामी कृच्छ्रप्राजापत्य तीन वर्ष करें॥ या तीन महीना चान्द्रायण करे और वेदकी संहिता भी अभ्यास करे=अर्थात—इस ग्रन्थ के अन्तमे सभी अनुष्ठानोंके स्वरूप कहे जायँगे तहां कृच्छ्प्राजापत्य नामका व्रतभी कहाजाय गा तिसको तीनवर्ष करे (अत्र समाः इत्यमराचार्यमतेन वर्षबहुत्वंज्ञेयः) या तीन म- हीनामें तीन चान्द्रायण व्रत यथोक्त विधिसे पूरे करै उन्हीं तीन महीना तक वेदकी संहिता को वारम्वार पाठ करतारहै किन्तु नियत महीनोंमें पाठकी जितनी आवृत्ति होसकें सो निरन्तर करै तब शुद्धहोय• विशेष व्योरा अर्थिकोक्तिमें देखो॥ २६०॥

२६० अर्थिकोक्ति (इस प्रकरणमें सर्वत्र गुरुशब्दको पिताही समझना) यह तीनिवर्षका प्राजापत्यभी इसकेलिये विचारना जो ब्राह्मणीका पुत्र होकर पिताकी शूद्रापत्नी इच्छा सहित भोगै किन्तु अनिच्छासे धोखा आदि में वीर्यपात करने पर एकही वर्षका प्रायश्चित्तहै सो आगे वाढ़कर मनु और सुमन्तु के वचनों से देखना कांटेदार वृक्ष वाली शाखा वगल मे दाविके सोउना आदि कहेंगे तथैव उसके लिये विचारना जो ब्राह्मण पिताकी वनेनी भार्यामें धोखेसे एकवार गमनकरे (आगेइसी अर्थिकोक्तिके बीचमे (गमनेगुरुभार्यायाःपितृभार्यागमेतथा) यह वृद्धमनुका वचन देखो=इसराह मूलश्लोकमे तीनि महीनेका उसके लिये विचारना जो पिताकी स- वर्णापत्नी व्यभिचारिणीहो तिसको विना जाने धोखामें गमनकरे—जो इसी सवर्णा व्यभिचारिणी में इच्छा साथ चाहिके गमन करै तिसके लिये उगना का निर्मित किया प्रायश्चित्त देवै=यथा=गुरुतल्पाभिगामी संवत्सरंब्रह्महत्याव्रतं चरामासान्वा सकृच्छ्र चरेद्=अर्थात—गुरुतल्पगामी एकवर्ष भी ब्रह्म हत्या में कहा व्रत करै या

एक छमाही भर तप्तकृच्छ्र करै ॥ ० ॥ जिसने आप ब्राह्मणोका पुत्रहोते पिताकी क्षत्रिया भार्या जानिबूझि गमनकरीहो तिसके लिये दोसौ बत्तीस मूलश्लोक में उतारे हुये गुरुतल्पके अतिदेश हेतुसे बारहवर्षका पौना नौवर्ष प्रायश्चित्त विचारना होगा (इन बारहवर्षों का नियम इससे पहिली अधिकोक्ति के अन्त में लिख चुके तहां देखो अधःशायी जटाधारी इत्यादि शंखके वचनसे) उसीकी पौनी नौ वर्ष यहां समझनी • इसपर एक दलीलहै कि यहांपर क्षत्रिया भार्याके गमनमध्ये नौवर्ष नियत करीगई और (मातुःसपत्नींभगिनीमाचार्यतनयांतथा) इस दोसौ बत्तीसके श्लोक में माताकी सौति सामान्य भावसे कहीहै तिसका हेतु यहां क्षत्रिया सौति पर घटाया गया क्या कारणहै सो कहो—सुनों इस दोसौ बत्तीस वाले श्लोक में सामान्य वचन होनेपर भी सवर्णा गुरुभार्याका विषय नहीं मानिसक्तेहैं क्योंकि अभी इससे पहिली अधिकोक्तिमें सवर्णा गुरुभार्याके इच्छा सहित गमन मध्ये मरणांतिक प्रायश्चित्त कहिचुके और कामनाके बिना गमनहोनेमध्ये शंख वचनसे बारहवर्षका कथिचुके तिससे दोसौ बत्तीस मूलश्लोक में जो माताकी सौति कही सो क्षत्री आदि हीन वर्णा की समझनी कि जिसके भोगमध्ये बारहवर्षोंका पौना प्रायश्चित्त कहा (इस बात का निर्णय पहिली अधिकोक्तिमें भी निपटिचुका तहां शंका वाले पाठको देखो) और जो इसी क्षत्रिया विमातासें कामनासे बारम्बार का अभ्यास करै तिसके लिये कण्वस्मृतिके अनुसार मरणांतिक प्रायश्चित्त चाहिये=यथाह कण्वः=मत्यागत्वा गुरोर्भार्यांपुनःक्षत्रसुतांद्विजः अंडाभ्यांरहितंलिंगमुत्कृत्यसमृतःशुचिः=अर्थात्—ब्राह्मण अपने पिताकी भार्या जो क्षत्री की बेटीहो तिसको दुबारा इच्छा सहित गमन करै सो पहिले दोनों आँड़काटै फिर लिंग काटै तब मरनेसे शुद्धहोय (यद्यपि इस वचन में ऐसा अर्थभी लगताहै कि पिताकी सवर्णा भार्याको एकबार या पिताकी क्षत्रिया भार्याको अनेक बार जानिबूझि गमनकरै सो इसमें भी पूर्वोक्त नियमोंसे विरोधनहीं है क्योंकि सवर्णाके मध्ये लिंग काटना पहिले भी कहिचुके हैं सो एकबार में समझना जो क्षत्रियाके मध्ये कहा सो अनेकबारके अभ्यासमें समझना और इसीसे प्रयोजन यहां विशेषहै) इसी क्षत्रिया विमाताको अज्ञानतासे एकबार वा अनेकबार भोगने मध्ये जो प्रायश्चित्त है सो आगे इसी अधिकोक्ति में यमके और जातूकर्ण्य के वचनोंसे जुदे दोनोंको देखो ॥ ० ॥ इसी व्यवस्थामें यह नियम है कि जब कोई पातकी लिखे प्रायश्चित्तको न करना चाहै तब उस प्रायश्चित्तके बदले यही दंडहै कि जैसा दोसौ इकत्तिस और दोसौ बत्तीस और तेंतीस मूलश्लोकों में योगीश्वर ने

कहा है (छित्वालिंगंवधस्तस्यसकामायाःस्त्रियाअपि) कि उन श्लोकों वाला कोई अपराधी यदि प्रायश्चित्त करना अस्वीकार करै तौभी उसका लिंगकाटिके प्राणांत वध कियाजाय यही दंड और यही प्रायश्चित्त है (यदि स्त्रीने अपनी ओरसे उत्साह देना आदि कामना खड़ी करीहो या दोनोंकी परस्पर इच्छासे संगम हुआहो तहां उस स्त्री का भी योनिछेदन पूर्वक वधकिया जाय अर्थात् जहाँ पुरुष जोरावरीसे स्त्री की इच्छा विना कामकरै तहाँ स्त्री का वध नहीं चाहिये ॥ ० ॥ जहां कहीं पिता के वनेनी भार्याहो तिसको ब्राह्मणी का पुत्र इच्छा सहित भोगै तहां छवर्षका प्रायश्चित्त चाहिये—इसी आशयसे यह स्मृत्यन्तर वचनहै कि=ब्राह्मणीपुत्रस्यक्षत्रिया यांमातरिगमनेपादहान्याद्वादशवार्षिकमेवमन्यवर्णास्वपि=अर्थात्—ब्राह्मणीकापुत्र अपनी विमाता क्षत्रिया में जो गमन करै तिसको चौथाई कम करिके बारह वर्ष वाला नौ वर्ष का प्रायश्चित्त है (मरणांतिक नहीं) ऐसेही अन्य वर्णों की विमाता में समझना कि ब्राह्मणी के पुत्र ने पिता की बनीनी भार्या भोगी हो तहां दो चौथाई कमी करिके छै वर्ष का प्रायश्चित्त कराया जाय• ऐसेही ब्राह्मण पिता की शूद्री भार्या हो तिसको ब्राह्मणी का पुत्र भोगै तहां तीन वर्ष का प्रायश्चित्त कराया जाय—यहां तक ब्राह्मणी के पुत्र की व्यवस्था पूरी होचुकी•अब क्षत्रिया आदि के पुत्रों की व्यवस्था जुदी जुदी कही जायगी• तिसके मध्ये सर्वत्र यहयाद राखौ कि पहिली अविकोक्ति में ठेठ जननी और सवर्णा विमाता की व्यवस्था जो कहिचुके सो सबके लिये चारां वर्णां में बराबर है दृष्टान्त जैसे क्षत्री पिता के दूसरी क्षत्राणी भार्या हो तौ वह सवर्णा विमाताहुई या शूद्र पिताके दूसरीशूद्री हो तौ सवर्णा विमाता हूई या वैश्य पिता के दूसरी बनेनी हो तौ पुत्रों की सवर्णा विमाता हुई इसी दृष्टांत से अनुलोम प्रतिलोम वर्णसंकर जातियों में भी समझना यह चर्चा एक याद रखने के प्रसंग से किया गया ॥ ० ॥ जैसी ऊपर ब्राह्मणी के पुत्रकी व्यवस्था कही तैसे जो क्षत्रिया माता का पुत्र होकर ब्राह्मण पिताकी बनेनी भार्या भोगै तिसको नौवर्ष का प्रायश्चित्त विचारना• जो वही पुत्र अपने ब्राह्मण पिता की शूद्री भार्या भोगै तिसको छः वर्षका प्रायश्चित्त है ॥ ० ॥ इसी न्याय के अनुसार बनेनी के पुत्र की व्यवस्था है कि जो बनेनी का पुत्र होकर अपने ब्राह्मण पिताकी शूद्री भार्या भोगै तिसको भी नौवर्षका प्रायश्चित्त जानो—परन्तु जो वही बनेनी का पुत्र अपने ब्राह्मण पिता की दूसरी भार्या बनेनीको वारम्वार के अभ्यास पूर्व इच्छा सहित भोगै तिसको मरणांतिक प्रायश्चित्त है=तदाह लौगाक्षिः=गुरो

भार्यांतुयोवैश्यां मत्यागच्छेत्पुनःपुनः लिंगाग्रंछेदयित्वातु ततःशुद्ध्येत्सकिल्विषात= अर्थात–जो पिता की बनैनी भार्याको जानि बूझि बारम्बार भोगै सोलिंगका समग्र भाग कटवाइके उस पापसे विशुद्ध होय (यही व्यवस्था अनंतर उक्त क्षत्रिया पुत्र में भी जोड़िलेनी कि जो क्षत्रिया का पुत्र अपने ब्राह्मण पिताकी दूसरी भार्या क्षत्रिया को जानिबूझि बारम्बार भोगै सोभी लिंग कटाय के शुद्ध होय• और यही व्यवस्था इसी रीति से शूद्री के पुत्र में भी जोड़ि लेनी) और वही बनैनी का पुत्र जो ब्राह्मण पिता की शूद्री भार्या को जानि बूझि कामनासे बारम्बार भोगै तिसके लिये बारह वर्ष का प्रायश्चित्त है कि जैसा उपमन्यु ने कहा=पुनःशूद्र्यां गुरोर्गत्वाबुद्ध्याविप्रः समाहितः ब्रह्मचर्यमदुष्टात्मा सचरेत्द्वादशाब्दिकम्=अर्थात–बारम्बार पिता की शूद्री भार्यामें ज्ञान सहित गमन करिके वह बारहवर्ष का ब्रह्मचर्य अच्छाचित्तलगा कर साधै तब शरीर उसका शुद्ध होय (यद्यपि इस वचन में कर्ता का उद्देशक विप्र शब्द है तथापि यहाँ वैश्य का प्रयोजन है क्योंकि ब्राह्मण के लिये इसी २६० के मूल श्लोक द्वारा तीनिही वर्ष नियत होचुके हैं तिससे) और बनैनी का पुत्र होकर पिता की सत्राणी भार्य्या भोगै तिसका नियम पहिली अविकोक्ति में हो-चुका है कि सवर्णा या उत्तमवर्णा विमाता भोगै तिसको मरणांतिक प्रायश्चित्तभी उसी अविकोक्ति में लिखचुके ॥०॥ ब्राह्मणी का पुत्र होकर जो क्षत्रिया विमाता में अज्ञानतासे धोखेमेंगमनकरै तिसकेलिये यमकाकहा प्रायश्चित्तहै=यथाहयमः=का लेऽष्टमेवाभुंजानोब्रह्मचारीसदाव्रती स्थानासनाभ्यांविचरंस्त्रिरह्नोऽभ्युपयन्नपः अधः शायीत्रिभिर्वर्षैस्तदपोहेत्पातकम्=अर्थात–तीनिवर्षतक चारघड़ीदिनसेरहेपरआठवां समय होता है तिसमें भोजन का एक वार नियम राखै इन्द्रियों को जीति कर ब्रह्म-चारी बनै और ब्रह्मचर्यके व्रतभी साधै और स्थान तथा आसन इन दोनों को छोड़ि के विचरते हुये दिन में त्रिकाल स्नान करते हुये धरती में सोवै तब तीनि वर्षों से वह पातक दूर होय=कदाचित=इसी ने एकवार से उपरालू दुबारा आदि अज्ञानता से ही गमन कियाहो तिसके लिये जातूकर्ण का कहा प्रायश्चित्त विचारना=यथाह जातूकर्णः=गुरोःक्षत्रसुतांभार्यांपुनर्गत्वात्वकामतः अंडमात्रंसमुत्कृत्य शुद्ध्येज्जीवन्मृतो-पिवा=अर्थात–पिता की भार्या जो क्षत्री की बेटी हो तिसको एक वार से उपरालू दुबारा आदि बिना चाहे गमन करै सो अंड पर्यंत मात्र लिंग खूब काटिके अर्थात आंडों को छोड़ि सिर्फ आंडों के ऊपर से लिंग मात्र काटि के मरजाय या जीवता रहिजाय दोनों दशा में शुद्ध होजाता है–इस वचन में निपट मर जाना नहीं कहा

किन्तु दैवेच्छा से जीवते बचिजानेका भी विकल्पहै तिससे आंडोंका जड़से काटना भी नहीं कहा (इसी क्षत्रिया विमाता को जानि बूझि इच्छा सहित गमन करने की दोनोंदशा किन्तु एकवार या अनेक वार मध्ये दोनों प्रायश्चित इसी अधिकोक्ति की आदि में कहिचुके—और फिर भी आगे इसी अधिकोक्ति में उसका प्रायश्चित्त कहेंगे जो क्षत्रिया विमाता में गमन करने पर उतारू होकर वीर्य सींचे विना लौटिगया हो॥०॥ एवं पिता की बनेनी भार्यामें ब्राह्मणी का पुत्र होकर जो विना इच्छा के धोखा से गमनकरै तिसके लिये याज्ञवल्क्यजी ने जो इसी दोसौसाठि मूल श्लोक पूर्वार्धसे त्रैवार्षिक प्राजापत्य कहा सो करवानाचाहिये और यहीप्रमाण वृद्ध मनुके वचनसे मिलताहै=तथाचवृद्धमनुः=गमनेगुरुभार्यायाःपितृभार्यागमेतथाअब्दत्रयमकामात्कृच्छ्रं नित्यंसमाचरेत—अर्थात=गुरुकी भार्या या पिताकी दूसरी भार्या हीनेवर्णा की इच्छा विना भोगे सो तीनिवर्षतक नित्यं प्रतिकृच्छ्र व्रत करतारहै किन्तु बीच में अन्तर कभी न परने देय तब शुद्धहोय=और जो उसी बनेनी विमाता में अज्ञानता से वार वार गमन कियाहो तो हारीत का कहा जीवन पर्यंत ब्रह्मचर्यरूपी प्रायश्चित्त है=यथा हारीतः=अभ्यस्यविप्रोवैश्यायांगुरोरज्ञानमोहितः षडंगंब्रह्मचर्यंच मचरेद्यावदायुषम=अर्थात—ब्राह्मणअपने पिताकी बनेनी भार्यामें अज्ञानता से भूला हुआ यदि वार वार संगसका अभ्यासकरै और पीछे भेद जाना जाय तब यह प्रायश्चित्तहै कि जबतकजीवै तबतक षडंग वेद पाठ की धारणारखै और ब्रह्मचर्यसेरहै किसीस्त्रीसे संगम न करै (इसी बनेनी विमाताको इच्छा सहित भोगनेमध्ये छः वर्ष काप्रायश्चित्त ऊपर कहि चुके हैं इसीअधिकोक्ति में स्मृत्यंतरवचनढूंढो॥०॥ एवं पिता की शूद्री भार्या में ब्राह्मणी का बेटा विना जाने गमन करै तिसके लिये मनु का कहा प्रायश्चित्त है=यथा=खट्वांगीचीरवासावाश्मश्रुलोविजनेवने प्राजापत्यं चरेत्कृच्छ्रं मब्दमेकंसमाहितम=अर्थात—मनुष्य की खोपड़ी लाठी आदि लकड़ी के सिरेपर जड़ी हुईका नाम है खट्वांग जो ब्रह्महत्या के प्रायश्चित्त में कहिचुके तिस को लिये हुये और पुराने चीथड़े या भोज पत्र आदि वक्कल पहिरे लपेटे हुये दाढ़ी मूंछ आदि सब जटा रखाये हुये निर्जन वन में एकला एक वर्ष तक ठीक ठीक विधि से कृच्छ्र प्राजापत्य व्रत करै तब शुद्ध होय—अथवा—यह नहीं तो दूसरा सुमंतु का कहा प्रायश्चित्त करै=यथाह सुमंतुः=गुरुदाराभिगामीसंवत्सरं कंटकिनींशाखांपरिष्व ज्याधः शायीत्रिषवणाभिस्नायीतःपूतोभवति=अर्थात—गुरु भार्या गमन करने वाला एक वर्ष भर बेरी बबूर आदि कांटों वाले रूख की लंबीशाखा टहनी बगल में दाबि

चिपटाय के धरती में सोवै त्रिकाल स्नान किया करै भिक्षासे पेटभरै तब शुद्धहोय—और—जो एक बार के सिवाय दुबारा तिबारा आदि बार बारका अभ्यास किया हो तौ मनुका कहा प्रायश्चित्त है=यथा=चांद्रायणंवात्रीन्मासानभ्यस्यनियतेन्द्रियः=अर्थात्—बार बारका अभ्यास करिके तीन महीना तक निरन्तर चांद्रायण व्रतकरै तब शुद्ध होय (इससें यह शंका न करना कि एकवारके भोगमध्ये बारह महीनेका प्रायश्चित्त और वारवार के अभ्यास में सिर्फ तीनि महीने कहे क्योंकि उस एक वर्ष की अपेक्षा ये तीन महीने बहुत कठिन हैं इस हेतुसे कि चांद्रायणमें एक एक ग्रास अन्न बढाया घटायाजाताहै ऐसा निरन्तर तीनि महीनेतक साधना उसकी अपेक्षा कठिन है जो एक वर्ष तककाँटों की शाखा आदि कहागया) इसी शूद्रा विमाताको जानि बूझि कामनासे भोगने मध्ये तीनिवर्ष का प्रायश्चित्त इसी अधिकोक्तिके प्रारम्भमें और पहिलीअधिकोक्तिके अन्तमेंभी कहिचुके तहां देखौ॥०॥ और जो ब्राह्मणीका पुत्रहोकर क्षत्रिया विमातामें कामनासे जानिबूझि उतारू होकर वीर्यसींचनेसे पहिले घूमिगयाहो तिसकेलिये व्याघ्रोक्त प्रायश्चित्त है=यथाह व्याघ्रपादः=कृच्छ्रंचैवातिकृच्छ्रंचतथाकृच्छ्रातिकृच्छ्रकम् चरेन्मासत्रयंविप्रःक्षत्रियागमनेगुरोः=अर्थात्—पिता की क्षत्रिया भार्या के पास ब्राह्मणी का बेटा यदि पहुँचै सो कृच्छ्रयाअतिकृच्छ्रया कृच्छ्रातिकृच्छ्र तीनि महीना करै—इसमें इसरीति से व्यवस्था है कि जिस पुरुष को स्त्रीने अपनी ओर से उत्साह दिलाकर मोहित किया हो तिसको तीन महीना कृच्छ्र प्राजापत्य करना चाहिये जो दोनों की इच्छा से परस्पर प्रीति उठीहो तौ पुरुषको अति कृच्छ्र व्रत करना तीन महीना चाहिये जहां पुरुषही ने स्त्री को तरग़ीब दी हो तहां ऐसे पुरुष को कृच्छ्रातिकृच्छ्र व्रत तीन महीने करना चाहिये•ये सब तीनों उसी दशापर कहे गये हैं कि जहां संगम न होने पाया किन्तु वीर्य सींचने से पहिले लौटि परेहों=इसी प्रकार—जहां क्षत्रिया विमाता में कामना के बिना किसी धोखे से संगम करने पर उतारू होकर वीर्य सींचने से पहिले बोध होजाने आदि कारणों ने लौटि परा हो तहां कराव मुनिका कहा प्रायश्चित्त है=यथाह करावः=चांद्रायणं तप्तकृच्छ्रमतिकृच्छ्रं तथैवच सकृद्गत्वागुरोर्भार्यामज्ञानात्क्षत्रियांद्विजः=अर्थात्—ब्राह्मण अपने पिता की क्षत्रिया भार्या के पास बिना जाने बूझे एकवारभी जाइकेचांद्रायण करै या तप्त कृच्छ्र करै या अतिकृच्छ्र करै—इसमें भी इस रीतिसे व्यवस्था है कि जिस पुरुषने आपही स्त्री को उत्साह दियाहो तो चांद्रायण करै जहां दोनों ने बराबर प्रीति उभारी हो तहां पुरुष को तप्त कृच्छ्र करना चाहिये जहां सिर्फ स्त्री

ने उत्साह देकर पुरुष को मोहित कियाहो तहां पुरुष अति कृच्छ्र व्रत करै• ये सब उसीदशामें समझने जहां संगम न हुआहो किन्तु वीर्य सींचने से पहिले लौटिपरे हों• इन प्रायश्चित्तोंमें कोई महीना आदिकी अवधि नहीं कही तिससे इनकी वही अवधि समझनी कि जितने दिनों मे एक अनुष्ठान पूरा होताहो जैसा चान्द्रायण एक महीना भरमें होताहै कृच्छ्र अतिकृच्छ्र ये बारह दिनमें होतेहैं ॥ ० ॥ जो ब्राह्मण अपने पिताकी वनैनी भार्यामें जानिबूझि संगम करने पर कामनासे उतारू होकर वीर्य सींचनेसे पहिले घूमिगयाहो तिसके लिये भी कएवमुनिका कहा प्रायश्चित्त है=यथाह कएवः=तप्तकृच्छ्रं पराकंचतथासांतपनंगुरोः भार्यांवैश्यांसकृद्गत्वाबुद्ध्यामासच रेतद्विजः=अर्थात्–ब्राह्मण अपने पिताकी वैश्याभार्या के पास एक बार ज्ञान सहित जाइके तप्तकृच्छ्र या पराक या सांतपन व्रतकरैं–इसमें भी इस रीतिसे व्यवस्थाहै कि जहां पुरुषने आपही उत्साह दिलायाहो तहां पराक व्रतकरै जिसको स्त्रीने उत्साह देकर मोहित कियाहो सो सांतपन व्रतकरै जहां दोनोंने परस्पर प्रीति उभारीहो तहां पुरुष तप्तकृच्छ्र व्रतकरै•ये सब उसी दशापर आरूढहैं कि संगम न होने पायाहो वीर्य सींचनेसे पहिले जुदे होजायँ=इसी प्रकार–जो कामना के बिनाही न जानिकर संगम करनेपर उतारू होकर वीर्य सींचनेसे पहिले फिरजाय तिसके लिये प्रजापतिका वचनहै=यथाह प्रजापतिः=पंचरात्रंतुनाश्नीयात्सप्ताष्टौवातथैवच वैश्यांभार्यांगुरोर्गत्वा सकृदज्ञानतोद्विजः=अर्थात्–ब्राह्मण निज पिताकी वनैनी भार्या पास एकबार बिना जानेबूझे जाइके निपट निराहार व्रत पांच या सात या आठदिन करै–इसमें भी इस रीतिसे व्यवस्था है कि जिसको स्त्रीने उत्साह दियाहो सो पांच निराहार करै जहां दोनो ओरसे परस्पर प्रीति उठीहो तहां पुरुष सात निराहार करै जिस पुरुष ने स्त्री को उत्साह दियाहो सो आठदिन तक निरन्तर निराहार करै•ये सब उसी दशापरहै कि संगम न हुआहो वीर्य सींचनेसे पहिले घूमि जायँ ॥ ० ॥ जो ब्राह्मण अपने पिता की शूद्री भार्यामें जानि बूझि कामनासे उतारू होकर वीर्यसींचनेसे पहिले विचलि जाय तिसके लिये जाबालिमुनिका वचन है=यथा=अतिकृच्छ्रं तप्तकृच्छ्रं पराकंचतथैवच गुरोःशूद्रांसकृद्गत्वाबुद्ध्या विप्रःसमाचरेत्=अर्थात्–ब्राह्मण अपने पिता की शूद्रीभार्या पास जानिबूझि कामनासे एकबार जाइके अतिकृच्छ्र या कृच्छ्र या पराक व्रत आचरै–इसमें भी इसरीतिसे व्यवस्थाहै कि जिसको स्त्रीने मोहित कियाहो सो अतिकृच्छ्र करै जहां दोनोंकी इच्छा से प्रीति उठीहो तहां पुरुष तप्तकृच्छ्र करै जिस पुरुषने स्त्रीको आपही रागवत दिलाईहो सो पराक नामा व्रतकरै• ये सब उसी

दशापर समझने कि जहां संगम न होनेपायाहो—इसीप्रकार—जहाँ कामनाके विना संगम करनेपर उतारू होकर वीर्य सींचनेसे पहिले घूमिगयाहो तहां दीर्घतमस् नाम ऋषिका वचनहै सो देखो=यथा=प्राजापत्यंसांतपनंसप्तरात्रोपवासकम् गुरोःशूद्र्यांस कृद्गत्वाचरेद्विप्रःसमाहितः=अर्थात—ब्राह्मण अपने पिताकी शूद्री भार्या में कामना के बिना एकवार पहुँचिके प्राजापत्य करे या सांतपन करे या सात दिन निराहार उपवास करे—इसमें यह व्यवस्था है कि जिस पुरुष को स्त्रीने उत्साह देकर मोहित कियाहो सो प्राजापत्य करे जहां दोनो ओरसे परस्पर प्रीति उठीहो,तहां पुरुष सांतपन व्रतकरे जिस पुरुषने स्त्री को आपही उत्साह दिया हो सो सात दिन निराहार उपवास करै०ये सब उसी दशापर होसकतेहैं कि जहां संगम न होने पाया हो॥ ०॥ इन्हीं प्रकारोंसे और भी जो स्मृतियोंके वचन उपरालू मिलें तिनकी भी विषयभेदा व्यवस्था ऊहा करनी चाहिये=और=पुरुषोंकी तरह स्त्रियों को भी महापातक बरावर है अर्थात जिन स्त्रियोंके साथ जिन पुरुषोंको महापातक होना कहा उनपुरुषों के साथ उन स्त्रियोंको भी बराबर महापातक लगता है=तथाच कात्यायनः=एषदोष एवशुद्धिश्च पतितानामुदाहृता स्त्रीणामपिप्रसक्तानामेषएवविधिःस्मृतः=अर्थात— यह दोष और उस दोषकी शुद्धि भी पतितों की कही और यही विधि उनमें फँसी हुई स्त्रियोंको भी होतीहै—इस नियमसे कि जो स्त्रियां काम की चाहना से उतारू होकर पूरे महापापकी दशातक पहुँचीहो तिनको भी मरणांतिक प्रायश्चित्त वही है कि जो पुरुषको कहिचुके इसमें कुछ भेद नहींहै—इसीलिये योगीश्वरने दोसौबत्तीस तेंतीस श्लोकों में (छित्त्वालिंगंवधस्तस्य सकामायाःस्त्रियाअपि) पहिले पुरुष को वध प्रायश्चित्त कहिके कामातुर स्त्रियोंकोभी वही मरणांतिक विधिकहीहै॥ ०॥ जो स्त्री कामातुर होने विना अनिच्छा से इन पुरुषों के फंद में आगई हो तिसके लिये मरणांतिक प्रायश्चित्त नहीं है परन्तु मनु का कहा नियम है=यथा= एतदेव व्रतंकार्यंयोषित्सुपतितास्वपीति द्वादशवार्षिकमेवार्द्धंकल्पनीयम=अर्थात—यही व्रत बारह वर्ष का पतित स्त्रियों को भी कराना चाहिये इस नियम से बारह वर्ष का आधा छः वर्ष कल्पना किया जाय (क्योंकि स्त्री और बालक वूढे आदिको आधा व्रत कराने का नियम पहिले दृढ होचुका है) यह सब नियम यहां तक मुख्य महापातकपर कहा गया जिसका लक्षण २२७ दोसौ सत्ताइस मूल श्लोकमें गुरुतल्प गामी कहा गयाथा॥०॥ उसके बादि दोसौ इकत्तिस २३१ मूल श्लोकमें मित्र की भार्या कुमारि कन्या आदि स्त्रियों में गमन करना भी गुरुतल्प के समान पाप

कहा गयाथा जो समान कहिने मात्रसे कुछ नीचा समझागया है तिनमें और दोसौ वर्तीस तेंतीस श्लोकों में जो जो स्त्रियां बूआ मामी आदि गिनाईं जिनका गमन करना गुरुतल्प के अतिदेश में ठहिराया गया वहभी गुरुतल्प से कुछ नीचा पातक है तिनमें भी यदि कोई पुरुष वीर्य सींचै तिसके लिये भी वही बारह वर्षका प्रायश्चित्त है इस हिसाब से कि जिसने बिना जाने धोखा में एकही राति गमन किया हो तिसको बारह वर्ष का आधा छः वर्ष प्रायश्चित्त दिया जाय—और जिसने एक राति से उपरान्त भी जानि बूझि बार बार ऐसा किया हो तिसको बारह वर्ष का पौना नौवर्ष दिया जाय—इसमें भी यह विशेष कर विचार है कि यद्यपि इनपापों को गुरुतल्प से कुछ न्यून कहा इसी हेतुसे प्रायश्चित्त भी कम किया गया तथापि जो इन्हीं स्त्रियों में अत्यन्त ही अभ्यास कियाहो तौफिर इसमेंभी वही मरणांतिक प्रायश्चित्त कराया जाय जो पहिली अधिकोक्ति में कहा गया इसीलिये योगीश्वर ने उसी दोसौ तेंतीसमें यह कहाहै कि (लिंगंछित्वावधस्तस्यसकामायाःस्त्रियाश्रपि) परन्तु उन श्लोकों से गिनाई हुई स्त्रियों में माता की सौति भी कही गई है तिसकी व्यवस्था पहिली अधिकोक्तिमें और वर्तमान अधिकोक्ति मेंभी ऊपरवर्णन होचुकी है तिससे विमातासे उपरान्त स्त्रियां जोइन चर्चा किये तीनि श्लोकों में हैं तिनका नियम यहां पर लिखा गया समझना और उनमें अत्यन्त अभ्यास करने वाले को मरणांतिक जो बताया तिसका प्रमाण हृहद्यमका यह वचन है=यथा=रेतःसिक्त्वा कुमारीष्वन्त्यजासु च सपिंडापत्यदारेषु प्राणत्यागो विधीयते=अर्थात्—कुमारी कन्या चाहें किसी की भी उत्तम जातिहो और अपनी भगिनी और अंत्यजा चांडालियां और अपने सपिंडों की पुत्र वधुओंमें वीर्य सींचिके प्राण त्यागही प्रायश्चित्त है ॥ ० ॥ इस व्यवस्था में अंत्यजाती स्त्रियों का भोग भी गुरुतल्प के समान पातक ठहिरायागया और अंत्यजाके कईअर्थ होतेहैं तिससे मिताक्षराकार ने व्यवस्था इस पर दीहै कि इस मौके पर अंगिरा मुनि के कहे अंत्यजों की स्त्रियां समझनी= यथाह स्मांगिराः=चांडालःश्वपचःक्षत्तासूतोवैदेहिकस्तथा मागधाऽऽयोगवौचैव सप्तैतेन्त्यावसायिनः=अर्थात्—चंडाल• श्वपच• क्षत्ता• सूत• वैदेहिक• मागध• आयोगव• ये सात जातें अंत्यावसायी किन्तु अन्त्यज कहाती हैं तिनकी स्त्रियों से भोगकरना अधिक अशुद्धता के हेतु से गुरुतल्प के समान महापाप ठहिरा• परन्तु (रजकश्चर्मकारश्चनटोवरुडएवच कैवर्तमेदभिल्लाश्चसप्तैतेश्रन्त्यजाःस्मृताः) इसवचनमें यम के कहे सात अन्त्यज ये प्रसिद्ध हैं कि• धोबी• चमार• नट• वरट• कैवर्त• मेद• भिल•

ये सातों अंत्याजाति हैं सो इनको इस ऊपरकी व्यवस्थामें न शामिल करना क्योंकि इनके मध्ये छोटा प्रायश्चित्त है सो आगे उपपातकों के साथ पारदार्य परिच्छेद में देखना—और ऊपर की व्यवस्था में जिन अंत्यजाओं का प्रयोजन है तिनके लिये मनुने भी बहुत बडा प्रायश्चित्त हेतुगर्भित वचन के द्वारा प्रकाश किया है=यदाह मनुः=चांडालांत्यस्त्रियंगत्वाभुक्त्वाचप्रतिगृह्यच पतत्यज्ञानतोविप्रोज्ञानात्साम्यंतुगच्छति=अर्थात्—कोई ब्राह्मण बिना जाने चाण्डाल और अन्त्यजों की स्त्री में गमन करिके याउसके हाथ से कुछ खाइके या उसस्त्रीको घरिणी बनानेके लिये प्रतिग्रह लेके पतित होजाता अर्थात् जाती धर्मसे गिरजाता है और जिसने जानि बूझि के इच्छा सहित ऐसा कियाहो सोउन्हीं चंडालोंकी समता को पहुँचता अर्थात् निपट चंडाल होजाताहै—अब इनदोनों बातको जुदीजुदी सोचौ कि जो पतितहोताहै सोतौ प्रायश्चित्त करिके शुद्ध होसक्ता है दूसरा जो निपट चंडालोंमें मिलिगया वह प्रायश्चित्तसेभी नहीं शुद्ध होताहै अर्थात् उसकेलिये कोई प्रायश्चित्त नहींहै मरजाने के सिवाय—तिससे यह व्यवस्था नियत हुई कि जिस ब्राह्मण से बिना जाने धोखेमें ये पापहुये हों सो पतितहोने के हेतुसे पतितों वाला प्रायश्चित्त पूरा बारहवर्ष सावै तब शुद्ध होय॰ और दूसरा जिसने जानि बूझि इच्छासहित चण्डालीसाथबहुतदिनोंतक संगम या खाना पीना या घरमेंरखिलेना विवाह करलेना आदि किया हो वह शुद्ध होनाचाहै तौ बारहवर्षोंसे अधिक मरणांतिक प्रायश्चित्तहै तिसकोकरैक्योंकि प्रायश्चित्तकी अपेक्षासमौतके बिना उसकी शुद्धि संसारमें नहींहै=परन्तु येदोनों बहुतबडे प्रायश्चित्त जो कहे गये सो बहुत दिनोंके अभ्यासपर समझना किन्तु एकरात्रिभरके अभ्यासमें यद्यपि कई बार संगम हुआ हो तौभी ये प्रायश्चित्त न होंगे क्योंकि एकरात्रिकेअभ्यास मध्ये मनुने तीनि वर्षका प्रायश्चित्तकहा है=यथा=यत्करोत्येकरात्रेणवृषलीसेवनाद्विजः तद्भैक्ष्यभुग्जपन्नित्यंत्रिभिर्वर्षैर्व्यपोहति=अर्थात्—ब्राह्मण जो पापवृषलीके सेवनसे एक रात्रिभरमें उत्पन्न करता है सो तीन वर्ष भिक्षा खाइके जप करतेहुये दूर होजाताहै॰इस व्यवस्थासे यहतात्पर्यठहिरा कि चंडालीका संगमआदि कोई काम जिसने बिना जाने सिर्फ एक राति भर किया हो तिसको तीनि वर्ष का प्रायश्चित्त है और बहुत दिन सेवन करने वाले को बारह वर्ष का प्रायश्चित्त है और जिसके लिये मरणांतिक प्रायश्चित्त कहा उसने जो अतिकाल का अभ्यास न किया हो किन्तु जानि बूझि के इच्छा से दोही चार दिन अभ्यास करिके पछिताया हो कि मुझ को शुद्ध होना चाहिये तौ उसको भी मरणांतिक प्रायश्चित्त के

बदले सिर्फ बारह वर्षका व्रत करना चाहिये कि जिससे फिर जातिमें मिलसके और प्राण हानि भी न हो परंच बहुत दिनोंके अभ्यास में मरणांतिक जो लिखचुके वही नियम है॥ ०॥ यहां मनु के वचन में वृषली कही सोभी चांडाली समझनी क्योंकि अन्य स्मृतियों में पांच भांति की वृषली कहीं उनमें चांडाली भी गिनतीहै) तथाच स्मृत्यंतरे=चांडालीबंधकीवेश्यारजस्थायाचकन्यका ऊढायाचसगोत्रास्याद्वृषल्यःपंच कीर्तिताः=अर्थात्–चांडाली १ बंधकी जो स्वैरिणीहो २ वेश्या ३ जो कन्याकुमारी अपनेपिताकेघर कपड़ोंसेहोनेलगै वह किसीको विवाहीजाय तौभी वृषलीकहातीहै ४ रजस्वला न होनेपरभी जो कन्या अपने सगोत्रीको विवाहीजाय सोभी वृषलीकहाती है ५ ये पांचवृषली कहीगईहैं (परन्तु इनमेंसे केवल चांडालीकाप्रयोजन ऊपरले मनु केवचनमेंसमझना पांचोंको नहीं क्योंकि योगीश्वरनेभी २३१ मूलश्लोकमें अंत्यजामात्र कहीहै=इसके सिवाय जहां सिर्फ एकहीबार चांडाली आदि भोगी अर्थात् एकरात भर नहीं सेवन किया केवल दो घटिकामात्र संगम किया हो तिसके लिये अग्रोक्त यमादिस्मृतियों का वचन देखो=यथाह यमः=चांडालपुल्कसानांतुभुक्त्वागत्वाचयो षितम कृच्छ्राब्दमाचरेज्ज्ञानादज्ञानादैन्दवद्वयम=अर्थात्–चांडाल और पुल्कसजाति योंकी स्त्रीको जानते हुये पास जाइके या केवल भोगमात्र करिके एक वर्षभर कृच्छ्र व्रतसाधै परन्तु जो विनाजाने पास गयाहो या केवल भोगमात्र कियाहो तो दोमहीना के दो चांद्रायण करै (व्यवस्थापर ध्यानकरो कि चांडालियोंके पास जानामात्र या भोगमात्र दो बातें कहीं तिनमें केवल भोग तो मुहूर्त्त भरमें निपटिजाताहै इससे अधिक सेवन कुछ न कियाहो यह तात्पर्य है और पास जाना भोग के विना भी बैठने आदि प्रकारोंसे प्रीति जोड़ना यह अनेकबारके अभ्यास द्वारा एकबारके संगम की बराबर अपवित्र करसक्ता है तिससे दोनोबात एकसी बराबर ठहिरीं इसीलिये दोनो पापका एकही प्रायश्चित्त कहा केवल ज्ञान और अज्ञानताके भेदसे दोतरहके व्रतकहे॥०॥ ध्यानकरौ कि जिस अंत्यजा चांडाली के मध्ये यह व्यवस्था सब कही तिसके साथ दोसौ इकतिस मूलश्लोकमें (सखिभार्याकुमारीषुस्वयोनिष्वंत्यजासुच) भगिनी आदि और भी अनेक अगम्या लिखी गईहैं तिसमे भगिनी आदिसे संगम करनेमे भी यही व्यवस्था समझिलेनी=और इन व्यवस्थामे जहां जहां केवल मरणांतिक प्रायश्चित्त कहागया तहां तहां सर्वत्र अग्निमें गिरिके जलजाना समझि लेना० और इसका प्रमाण यह कात्यायनका वचनहै कि=जननींचभगिनींचस्वसुतांतथैवच स्नुषायां गमनेचैतासु[illegible]यमतिपातकम अग्निमानकिगच्छेत प्रविशेद्धुताशनम=अर्थात्–जननी

या भगिनी या निजबेटी या बेटाकी वधू इनमें गमन करना अति पातक जानो सो इतने सब लोग जो अतिपातकी होजायँ वे अग्निमें प्रवेश करैं (इस वचनके अनुसार भी यह विचार करना सूचितहै कि जननीके एकही बार गमन करनेसे अग्निमें गिरना और भगिनी आदि शेष स्त्रियोंको कईबार गमन करनेसे अग्निमें गिरना सिद्ध होताहै क्योंकि यह वार्त्ता पहिले कई स्थलोंपर निर्णय होचुकीहै कि मातृगमन महा पातकहै और भगिनी आदिका संगम यह उसीका अतिदेश होने से अतिपातक है महापातक नहींहै तिससे दोनोंकी तुल्यता एकसी बराबर होनी उचित नहींहै ॥ ० ॥ इसी व्यवस्थाके विचारमें यह भी ध्यान करना कि वृहद्यमका एकवचन विशेष है यथा (चांडालींपुल्कसींम्लेच्छींस्नुषांचभगिनींसखीम् मातापित्रोःस्वसारंचनिक्षिप्तां शरणागताम् मातुलानींप्रव्रजितांस्वगोत्रांनृपयोषितम् शिष्यभार्यांगुरोर्भार्यांगत्वाचां द्रायणंचरेत्) अर्थात्–चंडाली• पुल्कसी• म्लेच्छिनी•पुत्रवधू•भगिनी• सखीसहचरी वह कि जिस स्त्रीको जिस पुरुषके साथ एकसी अवस्था होने के हेतु से या औरही किसी कारण या विना कारण भी प्रायश रहिना फिरना होताहो और मित्रकी पत्नी भी सखी होतीहै• माताकी बहिन• पिता की बहिन• निक्षिप्ता जो किसी भयादिक सन्देहसे धरोहरिके तौर सौंपीहुई अपने यहाँ रहितीहो•शरणागता जो देशके उपद्रव आदि कारणोंसे कुछ दिनके लिये अपनी रक्षा चाहिकर शरणमें आ टिकीहो•मामी• प्रव्राजिता संन्यासिनि आदि• स्वगोत्रा अपने गोत्र भर की कोई स्त्री हो अर्थात् तीन पीढ़ी या सातशाख भीतर जहांतक परस्पर एकही पुरुषका कुल मानाजाताहो परंतु उसको स्वगोत्रा न समझनी कि जैसे एकही ऋषि गर्ग भारद्वाज आदि गोत्रवाले कहीं दूर बसतेहों तिनकी स्त्रियोंका विचार पर स्त्री संगमके प्रकरणमें आवैगा• राजा या ग्रामके ठाकुरकी भार्या• शिष्यकी भार्या• गुरुकी भार्या यहांपर गुरुशब्दसे आचार्य हीको समझना किन्तु पितानहीं• इन स्त्रियोंके पास जाइके चान्द्रायण व्रतकरै जो एक महीनामें पूरा होताहै–और एक अंगिराका यह वचनहै कि (पतितांत्यस्त्रियो गत्वाभुक्त्वाचप्रतिगृह्यच मासोपवासंकुर्वीतचांद्रायणमथापिवा) अर्थात्–पतित स्त्री जो किसी महापातक या पातकसे पतित होचुकीहो अथवा पतित जातों की स्त्रियां और अन्त्य चंडाल आदि जातोंकी स्त्रियों पास जाइके या उनके हाथ का कुछ खाइ के या उनको परिग्रहमें लेकर एक महीने भर उपवास करै या चांद्रायणकरै तबशुद्ध होय–सो यह अंगिरा और वृहद्यमकी दोनों व्यवस्था गुरुतल्पके अतिदेशपर उतारी गईहैं और इनमें लिखे प्रायश्चित्तोंको उस दशापर समझना कि पुरुष अपनी अना-

ननामें भोग करनेपर उतारू होकर वीर्य सींचनेसे पहिले घूमि गया हो किन्तु पूरा भोग नहीं किया इसी तरह अंगिरा के वचन से परिग्रह में लेनेको समझि लेना कि विवाह फेरेभाव पूरी रीतिसे न होनेपायाहो तभी तक यह छोटा प्रायश्चित्त है=और भी संवर्त का यह वचन है कि (भगिनींमातुराप्तांचस्वसारंचान्यमातृजाम् एतागत्वा स्त्रियोमोहात्तप्तकृच्छ्रं समाचरेत्) अर्थात्—माताके उदरसे प्राप्त हुई सगी बहिन और विमातासे उत्पन्न हुई सौतेली बहिनको और इनसे पहिले जो स्त्रियां कहीं इनस्त्रियों के पास तक अज्ञान मोह से जाइ के तप्तकृच्छ्र व्रत करै—सो यह प्रायश्चित्तभी गुरु तल्प के अतिदेश सध्ये ऐसी दशा पर समझना कि बिना जाने और बिना चाहे अ-ज्ञानमोहसे संगम करले पर उतारू होकर वीर्य सींचनेसे पहिले ज्ञान होजानेसे लौटि गया हो क्योंकि इन सभी वचनोंमें पास जानाभाव कहाहै पूरा भोग नहीं कहा॥०॥ कदाचित् येही सब स्त्रियां कि जिनके भोग मध्ये ऊपर से गुरुतल्प का अतिदेश उतारते चलेआते हैं उनमें जो कोई सी अत्यन्त व्यभिचारिणी हों तिनको पूरी रीति से भोगने मध्ये वही दोनों प्रायश्चित्त होंगे जो अभी ऊपर वीर्य्य सींचे बिना करने कहिचुकेसो इस क्रमसे किये जायँगे कि जिसने उनमेंसे किसी व्यभिचारिणी को जानि बूझि कामना से वीर्य सींचा हो सो चांद्रायण करै और जिसने अपनी रिश्तेदारी को न जानिकर केवल व्यभिचारिणी समझते हुये वीर्य सींचाहो सो तप्त कृच्छ्र करै तब शुद्ध होय=इनके सिवाय=उन स्त्रियों को भोगनेमें गुरुतल्प दोष नहीं है जो सामान्य सबलोगोंके भोग निमित्त सब देशोंमें कुछ वेश्या जगपातुर भगतानी रामजनी आदि नामों से प्रसिद्ध होती हैं तिनको यद्यपि गुरुने भोगाहो तौभी उनके भोगने से गुरुतल्प दोष नहीं ठहिर सक्ता है जैसा व्याघ्रपाद का यह वचन है कि (जात्युक्तपारदार्यंचकन्याट्टूषणमेवच साधारणस्त्रियोनास्तिगुरुतल्पत्वमेवच) अर्था-त—नट नर्तक बेड़िनी आदि जिन जातों में यह रीति प्रसिद्ध है कि अपनी स्त्रियां और बेटियां पराये पुरुषों को मिलाइके या उनके सम्मुख नचाइके जीविका करते हैं तिनकी स्त्रियों से संगम करना पर स्त्री गमन नहीं है तथैव उनकी कुमारियों से संगम या किसी प्रकार की छेड़ छाड़ करना कन्या दूषण के अपराध में गिनता नहीं है और साधारण स्त्रियां जो रामजनी भगताइन आदि नामों से सामान्य सब लोगों के भोग निमित्त से सब देशों में अवश्य कुछ होती हैं तिनका संगम गुरुतल्प दोष नहीं ... गुरुतल्प के अतिदेश में भी गिनती नहीं चाहे उनको गुरु पहिले भोगि चुका हो ... दशा में यह नियम है॥इसी प्रकार और भी स्मृतियों के वचन प्राय-

श्चित्त की व्यवस्था वाले मिलैं जिनसे ऊँच नीच का अन्तर देखि परैं तौ उनकी भी व्यवस्था ऊँचे नीचे विषय भेदसे कल्पना करनी चाहिये कि जिससे कुछ विरोध न रहै• क्योंकि बहुधा वचनों को ग्रन्थ बढ़ि जाने के सन्देह से यहाँपर नहीं लिखा तौ इस न लिखनेसे भी जोवचन कहीं देखिपरैं तिनको निरर्थक न समझिलेना॥ २६०॥

(इतिगुरुतल्पप्रायश्चित्तप्रकरणं)

—*—

इस प्रकरण में अगम्यागमन मात्र केवल एक विषय होनेके हेतुसे परिच्छेद भी एकही रहा अब अगिले सैंतीसके परिच्छेदमें संसर्ग दोषके प्रायश्चित्त कहे जायँगे॥

अथ पूर्वोक्त महापातकिनां सर्वसंसर्गज महापातकस्य प्रायश्चित्त प्रदर्शकोऽयंपरिच्छेदः सप्तत्रिंशः ३७

—*—

इस परिच्छेदमें संसर्गी पुरुष के प्रायश्चित्त कहे जायँगे संसर्गी यद्यपि पांचमा महापातकी होनेसे एकही मानाजाता है तथापि यह चारप्रकार का होताहै क्योंकि ब्रह्महा•मद्यप•सुवर्णस्तेयी•गुरुदारगामी• इनचार महापातकियों में जिसका संसर्ग उसने किया हो॥

(संसर्गेऽतिदेशः)

एभिस्तुसंवसेद्योवैवत्सरंसोपितत्समः। २६१

पूर्वार्द्धश्लोकः

अर्थः—इन करके जो वर्षभर सम्यक् बसै सोभी उसके समान है=अर्थात्—येहीजो ब्रह्महत्यारे आदि ४ महापातकी कहेगये इनके साथ जो कोई एकवर्ष साथ अच्छी तरह बसै किन्तु इन चारोंमें जिस किसी के पास बसै या साथ रहिकर किसी तरह का वर्ताव आचरण करै सो उसीके समान ठहिरै अर्थात् उसी के निमित्त में लिखे हुये प्रायश्चित्तको करै यह अतिदेश उतारा गया इसी अतिदेशके प्रयोजनसे उसके समान होना मूलश्लोकमें कहा (किन्तु पातकत्वको अतिदेश निमित्त नहीं क्योंकि

पातकत्वका अतिदेश(यश्चतैःसहसंवसेत्)यह दोसौ सत्ताइस २२७ मूलश्लोकमें चौथे पादमें कहिचुके तिससे यहां केवल प्रायश्चित्तका अतिदेश उतारनेको उसके समान कहागया) और भी यह विशेषताहै कि यद्यपि अतिदेश उतारागया तिससे चौथाई कम करिके प्रायश्चित्त होरय था तौभी कम न करना चाहिये किन्तु पूराही बारह वर्ष आदि जो अवधि मुख्य पापीको नियत हुईहो सो इसको भी करायाजाय क्यों कि यह संसर्गी पुरुषभी साक्षात् महापातकी कहागया है दोसौ सत्ताइस मूलश्लोक में देखो कि पांचोंका बराबर दर्जा ठहर चुका—परन्तु—इतना अन्तर है कि महापातकियोंके समान प्राण हानि वाले प्रायश्चित्त की आज्ञा इसको नहीं है यह आगे वर्णन होगा तहां समझिलेना अधिकोक्ति में॥ २६१ ॥

२६१ अधिकोक्तिः—इसी पूर्वार्द्ध मूलश्लोकमें अपि शब्द जो आया तिससे यह तात्पर्य है कि जैसे इन महापातकियों का संसर्गी उनके समान कहा तैसे और भी अतिपातकी और पातकी और उपपातकी आदि जो जो पतित होते हैं तिनमें से जिस किसी के साथ कोई संसर्ग करै सो उसी के समान ठहिरै और उसी के समान प्रायश्चित्त करै=इसीलिये मनुने बड़े छोटे सभी पापों के प्रायश्चित्त कहिकर पीछे से यह वचन कहा है (योयेनपतितेनैषांसंसर्गंयातिमानवः सतस्यैवव्रतंकुर्याततत्संसर्गविशुद्धये) अर्थात् इन सभी प्रकार के पतितों में जिसकिसी के साथ जो कोई संसर्ग में जाता है वह उसीके समान होता है तिससे उसका संसर्ग दोष मिटाने को उसी का व्रत करै=विष्णु ने भी सामान्य भाव से उपपातकी आदि पापीमात्र के संसर्ग में उन्हीं का प्रायश्चित्त भजना दर्शाया है कि (पापात्मनायेनसहयःसंसृज्यते सतस्यैवव्रतंकुर्यात्) जिस पापी के साथ संसर्ग जो करै सो उसी का व्रत करै=इसी लिये मनुने सामान्य पापी मात्र का निषेध किया है कि (एनस्विभिरनिर्णिक्तैर्नार्थंकंचित्समाचरेत्) किसी भी एनस्वी के साथ कोईऐसा व्यवहार न करै कि जबतक उसका निर्णय और शुद्ध न होजाय=तथैव एनस्वी को भी यह शिक्षा दईहै कि (नसंसर्गंभजेत्सद्भिःप्रायश्चित्तेऽकृतेसति) प्रायश्चित्त किये बिना शुद्ध लोगों से अपना संसर्ग न करै॥ १॥ पतित के संसर्ग से यह बारह वर्ष आदि का प्रायश्चित्त जो करना ठहिरा सो जानि बूझि के संसर्ग करने पर आरूढ है जैसा देवल का वचन है कि=पतितेनसहोषित्वाजानन्संवत्सरंनरः मिश्रितस्तेनसोऽब्दांतेस्वयंचपतितोभवेत्=अर्थात्—पतित को जानते हुये उसके साथ एक वर्ष मिला हुआ बसकर मनुष्य वर्ष पूरा होजाने बाद आपही पतित होवे॥ अथाज्ञानकृत संसर्ग प्रायश्चित्तं॥ जिसने बिना जाने

अज्ञानतामें संसर्ग कियाहो तिसकेलिये वशिष्ठकाकहा प्रायश्चित्तहै=यथा=पतितसं योगेतुब्राह्मणेन वेदाध्यापनेनयौनेनवा यौवेणावायास्तेभ्यःसकाशान्मात्राउपलब्धा स्तासांपरित्यागस्तैश्चनसंवसेदुदीचींदिशंगत्वाऽनश्नन्संहिताऽध्ययनमधीयानःपूतोभ वतीतिविज्ञायते=अर्थात्–पतित के संयोग में विद्वान् ब्राह्मण पुरोहित आदिने जो कुछ मात्रायें दक्षिणारोक आदि पतितों के विवाह आदि कर्म कराइ के या वेद पढाने आदि पूजा पाठसे या होम यज्ञ कराने आदि से पाई हैं। तिनका परित्याग अर्थात् भूखे दुखे को देदेवै याकिसी तडाग मंदिर आदि की मरम्मतिमें समर्पणकरै और उनके साथ निवास आदि कर्मोंके संबंध न राखै और उत्तर दिशामें पवित्रधरती पर जाइके भोजन का त्याग कियेहुये वेदकी संहिता का पाठ यथा विधि से करता हुआ पवित्र होजाता है यह जाना गया (यद्यपि इसमें कुछ अवधि नहीं कही गई कि भोजनका त्याग कितने दिनकरै तथापि यह सिद्धान्त पाया जाताहै कि जितने दिनमें संहिताका एकही पाठ पूरा होसकै वही अवधि जानों क्योंकि पाठकी अनेक आवृत्ति करना नहींकहा ॥०॥ संसर्गिणांसंसर्गिणश्च–मुख्य महा पातकियोंके संसर्ग से पूरा महापातक संसर्गी को होताहै यह निर्णय किया गया परन्तु निर्णय वाले वचनोंका यह तात्पर्य नहीं है संसर्गी के संसर्गी तीसरे को भी महापातकलगै इसी से यह नियम है कि संसर्गी से जिन लोगों का संसर्ग अर्थात् हेल मेल होजाय तिनको द्विजातियों वाले कर्म धर्म की हानि नहीं पहुँचती है अर्थात् जातिसे गिरि जाना आदि जैसा मुख्योंके संसर्गी को होताहै तैसा संसर्गी का संसर्गी तीसरा पुरुष जाती धर्मसे नहीं गिरायाजाता है तौभी कुछ प्रायश्चित्त इसको भी अवश्य लगताहै (और इसमें यह तर्कना या शंका न करनी चाहिये कि जिसको जाति से गिराना नहीं है तिसको प्रायश्चित्त क्यों लगता है) क्योंकि ऊपर जो मनुका वचनलिखा गया कि एनस्वी अर्थात् पापी मात्र किसी के साथ कोई व्यवहार न करै जबतक उनके निर्णय से प्रायश्चित्त होकर शुद्ध न होजाय०सो इस वचन में सभी पापी मात्र के निषेध के द्वारा पाँचवें महापातकी संसर्गी का भी संसर्ग हेलमेल करना निषिद्ध ठहर चुका तिससे उसका हेलमेल करनेवाला यद्यपि जाति से नहीं गिराया जाय तौभी प्रायश्चित्त करना ठीकही सूचित हुआ है–परन्तु इस तीसरे को पूरा प्राय-श्चित्त नहीं किन्तु चौथाई कम करिके तीनपाद होना चाहिये जैसा यह व्यासजी का वचन है कि=योयेनसंवसेदेषांसोपितत्समतामियात् पादहीनंचरेत्सोपितस्यतस्य मतोद्विजः=अर्थात्–एकवर्ष जो कोईद्विजाती जिसके साथ हेलमेल करै सोभी तिनको

बराबरी को पावै और वह उसी वाला व्रत चौथाई कम करै ॥ ० ॥ जैसा यह दूसरे संसर्गी को कहा गया तैसा इसके हेलमेल से तीसरे को फिर उसके हेलमेल से चौथे को भी यह नियम है कि जानि बूझि इच्छा से हेल मेल करने वाले तीसरे को दो पाद कम करिके दोही पाद अर्थात् आधा प्रायश्चित्त कराना चाहिये और चौथेको जानि बूझि हेल मेल करने के दोष में तीनि पाद कमकरिके सिर्फ एकही चौथाई करना चाहिये=इस में यह शंका है कि एक संसर्गी को पूरा व्रत करना कहा कि जैसा बारहवर्षका ब्रह्महत्यारे आदिको कहिचुकेथे फिर दूसरे संसर्गीको पौनाबताया और तीसरे को आधा और चौथे को चौथाई इसका क्या कारणहै कि एकसंसर्गीपर मुख्य पातकियों से कुछभी रिआयत न करीगई•सुनों २२७ मूलश्लोक देखो उसको भी पांचवां महापातकी कहिचुके तिससे उन्हीं चारों की बराबर प्रायश्चित्त उस पर चाहिये और रिआयत उसपर इतनीबडी करीगई कि साक्षात् ब्रह्महत्यारेआदि चारों को इच्छा सहित पाप करने मध्ये मरणांतिक प्रायश्चित्त कहा गया था सो इसको नहीं है अर्थात् इच्छासहित उनका हेलमेल करनेसे उन्हींकी बराबर व्रतकरना इसको कहागया जो उनको इच्छा बिना पाप होजानेपर बारहवर्षका व्रत ठहिरा था क्योंकि (सतस्यैवव्रतकुर्यात्) इस वचन के तात्पर्यमें उसके व्रतही का अतिदेश दियागयाहै मरजानेका नहीं क्योंकि मरजाना व्रत शब्दके उच्चारणमें नहींहै• तिससे यह व्यवस्था आकर सिद्ध हुई कि जिसने कामनासे चाहिकर हेलमेल कियाहो तिसके लिये बा-रह वर्षकी व्रतचर्या प्रायश्चित्त है जिसने बिना इच्छा के संसर्ग किया हो तिसको बारह का आधा छैवर्ष व्रत करना चाहिये—इसी प्रकार दूसरे तीसरे आदि संसर्गियों को इच्छा सहितके मुआमिलेपर एकएक चौथाई कमहोती चलीजाय और अनिच्छा के हेलमेल मध्ये उससे आधा समझि लेना ॥ ० ॥ अथसंसर्गलक्षणं—संसर्ग अर्थात् हेल मेलका चर्चा जो अब तक किया गया वह संसर्ग भी कर्मोंके निबंध भेदसे अनेक तरह का होताहै जैसा बृहस्पतिने कहाहै कि=एकशय्या २८८सनं २ पंक्ति ३ भांड४ प[illegible] [illegible] याजना ६ध्यापने ७योनि ८स्तथाचसहभोजनम् ९ नववासंकरःप्रो क्तो [illegible]=[illegible]=[illegible]परस्पर्शनिश्वास सहयानासनाशनात् याजना [illegible]=अर्थात्—एकही खाटपर दोनोंका पौढना १ तथा [illegible] २ एकसंग में भोजन करना आदि ३एकही साथ बासनकपड़े [illegible] ४ [illegible] अन्न पकाना ५ पावाई पुरोहिताई के [illegible] वेद विद्या पढाना ७ योनि का संबंध बिवाह

करना ८ एकथाली वा एक चौकेमें साथ भोजन करना ९ यही नौ भांति का संकर अर्थात् संसर्ग हेलमेल कहा गया है कि अधमों के साथ न करना चाहिये यह वृहस्पतिकी सबसे बडी स्मृतिका नियमहै=देवलने भी कहा है कि=संलाप अर्थात् परस्पर पासही बैठिके प्रेम आदिकी बातचीत करने से और स्पर्श उसको छूने से और उसकी श्वासकी वायु नाक लगनेसे और एक साथ यात्रा करने एक सवारी पर बैठने से और एक साथ आसन खाट आदिपर बैठने सोनेसे और एक साथ भोजन करने से और यजन आदि कर्म कराने तथा वेद विद्या पढानेसे और यौन संबंध कन्यादेने या लेनेसे इतनी बातोंसे मनुष्योंपर पाप चढिजाताहै (इन वचनों में जैसा विवाह यौन संबंधका दोष दोनो ओर से दर्शाया गया कि उसको कन्या देना या उसी से आप लेना तैसा सभी बातों का नियम समझि लेना कि विद्या पढाना या उसीसे पढना एवंयजन उसको कराना या उसके द्वारा आप करना इसीतरह और बातोंको समझना) अब यह बात जाननी चाहिये कि इनमेंसे कौन सा हेलमेल कितने दिनमें पतितकर देताहै तिसके लिये वृहद्विष्णु आदिके वचन आगे देखो ॥ ० ॥ वृहद्विष्णुः=संवत्सरेणपततिपतितेनसहाचरन्नेकयानभोजनासनशयनैर्योनिस्रौवमुख्यैस्तुसंबंधैःसद्यएवपतति= अर्थात्–एकसवारी० एकपांतिमें भोजन० एकही आसनपर० एकहीशयन पलँगआदि पर० पतितके साथ इन चारों प्रकारसे आचरण करता हुआ पुरुष एकवर्ष में पतित होताहै और योनिके संबंध से० स्रुवाके संबंध से० मुखके संबंध से० तत्काल पतित हो जाताहै (यहां योनि का संबंध कन्या देना या लेना तथा स्रुवे का संबंध होम यज्ञ आदि उसको करवाना या उसके द्वारा आप करना तथा मुख्य संबंध जो मुख से उत्पन्न होय किन्तु वेद विद्याका पढाना या उससे आप पढना भी कहाता है) और इसी श्लोकमें जो एक भोजन कहा सो केवल एक पांति में बैठि भोजन करने मात्र को समझना किन्तु एकही चौके वा एक थालीमें साथ भोजन मत समझना क्योंकि एक वर्ष में पतित होना कहा गया तिससे और साथ भोजन करने वाला तत्काल पतित होजाता है तिससे भी० बल्कि उसी समय तत्काल पतन होजाने मध्ये देवल का यह वचन प्रमाण है कि (याजनंयोनिसंबंधः स्वाध्यायःसहभोजनम् कृत्वासद्यः पतत्येवपतितेननसंशयः) अर्थात्–याजन कर्म जो पहिले स्रुवेके नाम से कहि चुके और वही पहिला कहा योनिका संबंध और स्वाध्याय पढना पढाना और एकसाथ भोजन करना पतितके साथ इनकामोंका संबंध जोडि के तुरन्तही पतित होजाता किन्तु जातिसे गिरजाता है इसमें कुछ संदेह नहीं और यह भी नहीं कि ये चारो

काम इकट्ठे करै तोई पतित होवै किन्तु इनमेंसे किसी एकही संबंधके जोडतेसार जातिमे छुटिजाताहै—इस बातका प्रमाण भी सुमन्तुका यह वचन है कि (यःपतितैः सह यौनमुखस्रौवाणां संबंधानामन्यतमसंबंधंकुर्यात् तस्याप्येतदेवप्रायश्चित्तमिति) जो कोई पतितोंके साथ• योनि• मुख• स्रुवे•के संबंधोंमें किसी एक संबंध को जोड़े तिसको भी यही प्रायश्चित्त है जो मुख्य पतितोंके लिये हम कहिचुके—परन्तु पहिली चार बातें एक सवारीआदि जिनसे एकवर्ष भरतक हेलमेल होनेमें पतन होना कहाथा सो सबकीसब चारोंसे संबंध जोडनेसेही पतन होताहै जुदी एकसे नहीं• क्योंकि उनके लिये ऊपर वृहद्विष्णु का वचन देखौ तहां (एकयानभोजना नशयनैः)यह इतरेतर युक्त निर्देश किया गया था तिससे किसी एक दोके अनुसार संसर्गी अपने जाती धर्मोंसे नहीं गिर सक्ताहै• तथापि एकही दोके सेवनसे दोषका हेतुखड़ा होता है प्रमाण इसमें पराशर का वचन आगे देखौ (आसनाच्छयनाद्यानात्संभाषात्सह भोजनात् संक्रमंतिहिपापानितैलबिंदुरिवांभसि) अर्थात् पराशर ने इस वचन में जुदे जुदे एकही एक से पापका हेतु जाहिर कियाहै कि आसन बैठने से या खाट आदिपर साथ सोने से या सवारी पर साथ बैठने से या वार्तालाप से या समीप बैठि भोजन करने से पाप इसतरह चढि आते हैं कि जैसे जल में तेल का बूंद फैल जाता है—इनके सिवाय (संलाप स्पर्श निःश्वास) इत्यादि देवल के वचन में कहेहुये येही तीनों हेलमेल अर्थात् पास भिड़िके विशेष वार्तालाप करना और देहसे देह भिड़ाना और मुखकी भाफ अपने ऊपर लगनेदेना यह तीनों बात बहुत छोटीहैं तिससे इनमें किसी एकही के होने मात्र से संसर्गी का जाति से छूटना आदि पतन कभी नहीं होता न इनका कोई जुदा नियम है क्योंकि ये तीनों बात अधिक हेल मेल से उन्हीं चारों के साथ मे उत्पन्न होती हैं कि जिनसे एक वर्षभरके हेल मेल में पातित्य होनाकहि चुके यह समझ लेना•परन्तु पापरूपी दोष मात्र इनसे भी होता है कि जैसा पहिले देवल के वचन में पाप का चढिआना कहा गया था ॥ ० ॥ तात्पर्य निर्णयः—इस व्यवस्था से यह तात्पर्य ठहिरा कि जिसने (संलाप•स्पर्श•निःश्वास) इन तीनि के बिना सवारी आदि चारों भांति के संसर्ग एक वर्ष भरि किये हों तिसको पूर्वोक्त बारह वर्षका प्रायश्चित्त पांचवां भाग छोड़िके करना चाहिये•और जिसने ये तीनों बात भी उनके साथ अधिक हेल मेल में करी हों तिसको एक वर्ष बीति जाने पर बारह वर्ष का पूरा प्रायश्चित्त करना चाहिये• इस रीतिसे योगीश्वर का यही मत है कि (संवत्सरेणपतति पतितेनसहाचरन्) कि इनके साथ जो कोई एक वर्ष

अच्छी तरह बसै जोभी उसके समान पातकी ठहिरै और उसीका प्रायश्चित्त करै—यहभी उन्हीं सवारी आदि चारिही बातों के हे अमेल पर ठीक रहा जिनमें एक वर्ष से पतित होना कहि चुके अर्थात् जिनसे तत्काल पतित होजाना कहा तिनके मध्ये योगीश्वर का मूल श्लोक नहीं है॰ इसी आशय पर मनुका यह वचन है कि (संवत्सरेण पततिपतितेनसहाचरन् याजनाध्यापनाद्यौनान्नतुयानासनाशनात्) अक्षरार्थ इसका यही है कि एक वर्ष से गिरजाता है गिरे हुये के साथ आचरण करते हुये याजन अध्यायन से यौन से नहीं सवारी आसन भोजन से—प्रत्यक्ष तौ व्याकरण काव्य दोनों मार्ग से यह अर्थ अनमेल है इसी से भाषा में भी ठीक नहीं समझि परा कि यह क्या कहा और इसी लिये मिताक्षराकार ने इस वचन के ऊपर बहुत कुछ अर्थवाद खड़ा किया है कि जिसका लिखना कुछ यहां पर आवश्यक नहीं वल्कि निरर्थ जानि के छोड़ि दिया गया तथापि केवल प्रयोजन की बात लेनी आवश्यक है तिसके लिये व्यवहित योजना का संबंध मानि लेना कि (पतित के साथ सवारी॰ बैठका और बैठका के उपलक्षण से खाट आदि शय्या॰ और एक पंक्ति में भोजन इन चारों के हेतु से आचरण करते हुये एक संवत् की अवधि से पतित होता है परन्तु होम यज्ञ और पढ़ना पढ़ाना और योनि के संवन्ध विवाह से नहीं एक संवत् में पतित होता है अर्थात् इनसे तुरन्तही पतित होता है जैसे ऊपरले अनेक वचनों से अर्थ सिद्ध होचुका तैसा इसमें भी वही तात्पर्य है कुछ और नहीं क्योंकि इसमें ढँका हुआ तात्पर्य है उन वचनों में खुला हुआ सिर्फ इतना भेद है अन्यथा धर्म शास्त्रमें एक वचन के लिये अनेक वचनों की स्पष्ट व्यवस्था नहीं उलटी चल सक्ती है॥ ०॥ सिद्धांतार्थ निर्णयः—जबकि यह व्यवस्था ठीक हुईकि विवाहभोजन आदि चारबातोंसे तुरन्त पतित होजाताहै और सवारी में बैठनेआदि चार बातों से निरन्तर एक वर्ष भर अभ्यास करने में पतित होता है तो फिर इसके लिये यह बात भी आवश्यक है कि एकवर्ष के पूरे ३६० तीनसौसाठि दिनकी गिनती करनी चाहिये इसका यह तात्पर्यहै कि जिसने कोई महीने संसर्ग करिके बीचमें कहीं चलेजाने आदि कारणों से छोड़िदिया फिर कभी आकर उसीका संसर्गकिया तिसका हिसाव जोड़ना चाहिये जोड़ने से भी ३६० तीनसौ साठि दिवस जिसके पूरे नहीं तो फिर पतित वाला पूरा प्रायश्चित्त भी उसको नहीं चाहिये किन्तु औरही रीति से प्रायश्चित्त कराना चाहिये कि जैसा आगे पराशर के वचनों से पाया जाय=यथाह पराशरः=संसर्गमाचरन्विप्रःपतितादिष्वकामतः पंचाहंवादशाहंवाद्वादशाहमथापिवा

मासार्द्धमासमेकंवामासद्वयमथापिवा अब्दार्द्धमेकमब्दंवाभवेदूर्ध्वंतुतत्समः (अत्रप्रायश्चित्तभेदः) त्रिरात्रंप्रथमेपक्षेद्वितीयेकृच्छ्रमाचरेत् चरेत्सांतपनंकृच्छ्रं तृतीयेपक्षएवतु चतुर्थेदशरात्रंस्यात्पराकःपंचमेततःषष्ठेचांद्रायणंकुर्यात्सप्तमेत्वैन्दवद्वयम् अष्टमेचतथापक्षेषण्मासान्कृच्छ्रमाचरेत्=अर्थात्–ब्राह्मण किसी पतितआदिके साथविना चाहे यदि भूलसेसंसर्गकोआचरै यदि पांच वा दशदिन या बारहदिन या एकपाख वा एक महीना वा तीनमहीने वा छःमहीने वा पूराएकवर्ष तिसकेउपरांत उसीपतितकेसमान आप होजाताहै (इसकेजुदे प्रायश्चित्तोंकेभेदहैं कि) जिसका प्रथमपाखवाराके भीतर संसर्ग हो सो तीनदिन व्रतादि प्रायश्चित्त करै॰ जिसका संसर्ग दूसरे पखवारामें जा पहुँचाहो सो कृच्छ्रव्रत करै॰ जिसका तीसरेपाखमें पहुँचि गया हो वह सांतपन कृच्छ्र करै॰ चौथे पाखमें संसर्ग पहुँचाहो सो दशरात्र प्रायश्चित्त करै॰ पांचवें पाख में संसर्ग पहुँचाहो तौ पराक नामका प्रायश्चित्तकरै छठेपाखतक पहुँचाहो तौ एकमहीनाचांद्रायण करै॰ सातवें पाख तक संसर्ग हुआ हो तौ दो महीना चांद्रायण का आठवें पक्षतक संसर्गभयाहो तौ छैमहीनेभर कृच्छ्र व्रतकरै॥ अज्ञानपूर्वक संसर्गप्रायश्चित्त जिसने ज्ञानपूर्वक ज्ञानसेसंसर्गकियाहो तिसकोसुमंतुने प्रायश्चित्त विशेषकहेहैं=यथाहसुमंतुः=पंचाहेतुचरेत्कृच्छ्रं दशाहेतप्तकृच्छ्रकम् पराकस्त्वर्द्धमासेस्यान्मासेचांद्रायणंचरेत् मासत्रयेप्रकुर्वीतकृच्छ्रं चांद्रायणोत्तरम् षाण्मासिकेतुसंसर्गेकृच्छ्रं त्वब्दं समाचरेत् संसर्गेत्वाब्दिकेकुर्यादब्दंचांद्रायणंनरः=अर्थात्–पांच दिनके संसर्ग में कृच्छ्र व्रत साधे और दशदिन के संसर्ग में तप्त कृच्छ्र करै एक पाखभर संसर्ग किया हो तो पराक व्रत करै

संसर्ग करनेसे पातित्य लगाना कहा है=यथाह बृहस्पतिः=षण्मासिकेतुसंसर्गेयाजना ध्यापनादिना एकत्रासनशय्याभिःप्रायश्चित्तार्द्धमाचरेत्=अर्थात्—छे महीनेके याजन अध्यापन आदि चारों में किसी एक संसर्ग के होने में तथा एकही बैठका सोउना आदि से भी आधा प्रायश्चित्त करे अर्थात् जो पतितके बारहवर्ष हों तो संसर्गी को छे वर्ष चाहिये—सो इस नियम को ऐसी दशा पर जोडना चाहिये कि जहां संसर्ग करनेकी इच्छा तो नहीं थी परन्तु अत्यन्त आपत्ति आनि परनेमें घरही के पातकी साथ भोजनका संसर्ग करना परा या केवल पंच महायज्ञ आदि में यजन का संसर्ग या पतित अपना बेटा भतीजा आदि अंगही गिना जाता हो तिसका पढाना या योनिका संबंध निज पतित की बेटी बहिन आदि के सिवाय उसके कुल में किसी गैर कन्या वा गैर लडके से किया गयाहो तहां तत्काल के सिवाय छः महीनातक संसर्ग बना रहिने से पातित्य और उसके लिये आधाही छः वर्ष का प्रायश्चित्त कराना ठीक होगा और शेष बातें एक सवारी आदि चारों कि जिनका पहिले एक वर्षभर पूरे से अधिक संसर्ग रहिने मध्ये बारहवर्ष का प्रायश्चित्त कहा गया उन्हीं को इस वचन में आधा कहा सो यह स्वतः ठीक ठीक है कि छः महीना के संसर्ग से आधा रहिगया—यहां तक महापातकियों के संसर्गी को प्रायश्चित्त वर्णन हो चुके॥ अथातिपातक्यादीनां संसर्गप्रायश्चित्तविचारः—इसी पूर्वोक्तडौलमार्ग का सहारा लेकर उनसे नीचे अति पातकी आदिका संसर्ग देखनाचाहिये कि जहां कहीं बेटी या बहिन या पुत्रकी बहू गमन करने वाले अति पातकी का संसर्ग जिसने कियाहो तहाँ चाहिके संसर्ग करनेवालेको नौवर्ष का प्रायश्चित्त और विना चाहे संसर्ग करने वाले को उससे आधा साढे चार वर्ष का करना चाहिये=एवं= जहां मित्र या चचा की दारा आदि पूर्वोक्त स्त्रियां जिनसे पातकमात्र होता कहा गयाथा तिनको गमन करने वाले पातकी पुरुष का संसर्ग जिसने किया हो तहां कामना से संसर्ग करैया को छः वर्ष और विना कामना के संसर्ग वाले को तीनवर्ष का प्रायश्चित्त करना चाहिये=इसी प्रकार=जहां उपपातकी आदि छोटे पापियों का संसर्ग जिसने किया हो तहां कामना से संसर्ग करने वाले को उन्हीं का प्रायश्चित्त तीन महीना और कामना विना संसर्ग वाले को उससे आधा डेढ महीना व्रत करना चाहिये॥ स्त्रीणामपिसंसर्गप्रायश्चित्तं— पुरुषोंकी तरह स्त्रियोंको भी महापातकी आदि के संसर्ग से पातित्य बराबर होता है=यदाह शौनकः=पुरुषस्ययानि पतननिमित्तानिस्त्रीणामपितान्येव ब्राह्मणीहीनवर्णसेवायामधिकंपततीति=अर्थात्—

मासार्द्धंमासमेकंवामासत्रयमथापिवा अब्दार्द्धमेकमब्दंवाभवेदूर्द्ध्वंतुतत्समः (अत्रप्रायश्चित्तभेदाः) त्रिरात्रंप्रथमेपक्षे द्वितीयेकृच्छ्रमाचरन् चरेत्सांतपनंकृच्छ्रं तृतीयेपक्षएवतु चतुर्थेदशरात्रंस्यात्पराकःपंचमेततःषष्ठेचांद्रायणंकुर्यात्सप्तमेत्वैन्दवद्वयम् अष्टमेचतथा पक्षेषण्मासात्कृच्छ्रमाचरेत्=अर्थात्—ब्राह्मण किंवा पतितआदिके साथविना चाहे यदि भूलमेसंसर्गकोआचरै यदि पांच वा दशदिन या बारहदिन या एकपाख वा एक महीना वा तीनमहीने वा एकछमाही वा पूराएकवर्ष तिसकेउपरांत उसीपतितकेसमानआप होजाताहै (इनकेजुदे प्रायश्चित्तोंकेभेदहैं कि) जिसका प्रथमपखवाराके भीतर संसर्ग हो सो तीनदिन व्रतादि प्रायश्चित्त करै॰ जिसका संसर्ग दूसरे पखवारामें जा पहुँचाहो सो कृच्छ्रव्रत करै॰जिसका तीसरेपाखमें पहुँचि गया हो वह सांतपन कृच्छ्र करै॰ चौथे पाखमें संसर्ग पहुँचाहो सो दशरात्र प्रायश्चित्त करै॰पांचवें पाख में संसर्ग पहुँचाहो तौ पराक नामका प्रायश्चित्तकरै छठेपाखतक पहुँचाहो तौ एकमहीनाचांद्रायण करै॰ सातवें पाख तक संसर्ग हुआ हो तौ दो महीना चांद्रायण का आठवें पक्षतक संसर्गभयाहो तौ छमहीनेभर कृच्छ्र व्रतकरै॥ अन्यापिकासकृतसंसर्गप्रायश्चित्तं जिसनेजानिबूझिकामनासेसंसर्गकियाहो तिसकोसुमंतुने प्रायश्चित्त विशेषकहेहैं=यथाहसुमंतुः=पंचाहेतुचरेत्कृच्छ्रं दशाहेतप्तकृच्छ्रकम् पराकस्त्वर्द्धमासेस्यान्मासेचांद्रायणंचरेत् मासत्रयेप्रकुर्वीतकृच्छ्रं चांद्रायणोत्तरम् षाण्मासिकेतुसंसर्गेकृच्छ्रं त्वब्दार्द्धमाचरेत् संसर्गेत्वाब्दिकेकुर्याद्वर्षंचांद्रायणंनरः=अर्थात्—पांच दिनके संसर्ग में कृच्छ्र व्रत साधै और दशदिन के संसर्ग में तप्त कृच्छ्र करै एक पाखभर संसर्ग किया हो तौ पराक व्रत करै एक महीना भर संसर्ग किया हो तौ चांद्रायण करै तीन महीना के संसर्गवाला कृच्छ्रात्मक चांद्रायण करै छे महीना के संसर्ग में एक छमाहीभर कृच्छ्र व्रतकरै एक वर्ष के भीतर संसर्गवाला मनुष्य एक वर्ष तक चांद्रायण करै (इसमें जो पूरे एक सालके संसर्गपर एकही सालका प्रायश्चित्त कहागया तिसको छमाही से ऊपर और बारह मासके भीतर वाले संसर्गोंपर समझना क्योंकि पूरे वर्षके पूरे वा पूरेसे अधिक संसर्ग समय मन्वादिक ऋषीश्वरोंने बारहवर्ष कहेहैं जिसका वर्णन पहिले होचुका सो निरर्थक न ठहिरै ॥ अत्रापिनियमांतर व्यवस्थासाधन—इस व्यवस्थामें यह बात सिद्ध होचुकी है कि एक पात्रमें पतितके साथ मिलके भोजन करने या पतितकी लड़की या लड़केसे विवाह संबंध करने या होम यज्ञ आदि पाजाईके कर्म करने कराने या पतितसे विद्याका संबंध पढ़ने पढ़ानेसे तुरन्त पतित होजाता है॰तथापि इन्हीं चारो संसर्गोंके मध्ये एक बृहस्पति के वचन में छमाही भर

संसर्ग करनेसे पातित्य लगना कहा है=यथाह बृहस्पतिः=षराामासिकेतुसंसर्गेयाजनाध्यापनादिना एकासनशय्याभिःप्रायश्चित्तार्द्धमाचरेत=अर्थात—छे महीनेके याजन अध्यापन आदि चारों में किसी एक संसर्ग के होने में तथा एकही बैठका सोउना आदि से भी आधा प्रायश्चित्त करै अर्थात जो पतितके बारहवर्ष हों तौ संसर्गी को छे वर्ष चाहिये—सो इस नियम को ऐसी दशा पर जोड़ना चाहिये कि जहां संसर्ग करनेकी इच्छा तौ नहीं थी परन्तु अत्यन्त आपत्ति आनि परनेमें घरही के पातकी साथ भोजनका संसर्ग करना परा या केवल पंच महायज्ञ आदि में यजन का संसर्ग या पतित अपना बेटा भतीजा आदि अंगही गिना जाता हो तिसका पढ़ाना या योनिका संबंध निज पतित की बेटी बहिन आदि के सिवाय उसके कुल में किसी गैर कन्या वा गैर लड़के से किया गयाहो तहां तत्काल के सिवाय छः महीनातक संसर्ग बना रहिने से पातित्य और उसके लिये आधाही छः वर्ष का प्रायश्चित्त कराना ठीक होगा और शेष बातैं एक सवारी आदि चारों कि जिनका पहिले एक वर्षभर पूरे से अधिक संसर्ग रहिने मध्ये बारहवर्ष का प्रायश्चित्त कहा गया उन्हीं को इस वचन में आधा कहा सो यह स्वतः ठीक ठीक है कि छः महीना के संसर्ग से आधा रहिगया—यहां तक महापातकियों के संसर्गी को प्रायश्चित्त वर्णन हो चुके॥ अथातिपातक्यादीनां संसर्गप्रायश्चित्तविचारः—इसी पूर्वोक्तडौलमार्ग का सहारा लेकर उनसे नीचे अति पातकी आदिका संसर्ग देखनाचाहिये कि जहां कहीं बेटी या बहिन या पुत्रकी बहू गमन करने वाले अति पातकी का संसर्ग जिसने कियाहो तहाँ चाहिके संसर्ग करनेवालेको नौवर्ष का प्रायश्चित्त और विना चाहे संसर्ग करने वाले को उससे आधा साढ़े चार वर्ष का करना चाहिये=एवं=जहां मित्र या चचा की दारा आदि पूर्वोक्त स्त्रियाँ जिनसे पातकमात्र होता कहा गयाथा तिनको गमन करने वाले पातकी पुरुष का संसर्ग जिसने किया हो तहां कामना से संसर्ग करैया को छः वर्ष और विना कामना के संसर्ग वाले को तीनवर्ष का प्रायश्चित्त करना चाहिये=इसी प्रकार=जहां उपपातकी आदि छोटे पापियों का संसर्ग जिसने किया हो तहां कामना से संसर्ग करने वाले को उन्हीं का प्रायश्चित्त तीन महीना और कामना विना संसर्ग वाले को उससे आधा डेढ़ महीना व्रत करना चाहिये॥ स्त्रीणामपिसंसर्गप्रायश्चित्तं— पुरुषोंकी तरह स्त्रियोंकोभी महापातकी आदि के संसर्ग से पातित्य बराबर होता है=यदाह शौनकः=पुरुषस्ययानि पतननिमित्तानिस्त्रीणामपितान्येव ब्राह्मणीहीनवर्णसेवायामधिकंपततीति=अस्या-

ल—जाति से गिरजाने के जो जो निमित्त पुरुष को होते हैं वही सब स्त्रियों को भी होतेहैं और ब्राह्मणी होकर जो हीनवर्णों की सेवा करै सो पुरुषसे भी अधिक पतित होती है यह शौनक ने कहा=इस हेतुसे उनको भी महापातकी आदि पापियों में जिस किसी प्रकार के पापी साथ हेल मेल होजाय उसी पापी के लिये जो कुछ प्रायश्चित्त ठीक होय तिससे आधा करवाना चाहिये क्योंकि स्त्रियों को पुरुषों से आधाकरना कहिचुके हैं=इसी प्रकारबालक बूढे रोगिओंको भी समझौ कि जिसने कामनासे चाहिके संसर्ग कियाहो तिसको मुख्य पापीसे आधा और विना कामना के संसर्ग वाले को चौथाई करना चाहिये=तथा जो बालक विना जनेऊ का हो तिसको कामना के संसर्ग में चौथाई और विना कामना के संसर्ग में आठवां भाग प्रायश्चित्त चाहिये यह व्यवस्था का मार्ग है†॥ २६१ ॥ यह पूर्वार्ध की अधिकोक्ति पूरीहुई अब दूसराअद्धा अगिले परिच्छेदमें शामिल होगा कि जिसमें पतितकी कन्या विवाहि लेनेकी आज्ञा भी बिरली दशा मध्ये दीजायगी ॥ २६१ ॥

अथ पतितसंसर्ग प्रतिषेधात्प्रतिषिद्धस्य यौनसंबंधस्य प्रतिप्रसव निदर्शकोऽयं परिच्छेदः अष्टात्रिंशः३८

—※—

इस परिच्छेद में पहिले निषेध का कुछ थोड़ासा प्रतिप्रसव दियाजायगा अर्थात ऊपर के परिच्छेद में पतित की कन्या से विवाह करना भी निषेध किया गया था तिसके साथ विवाह बिरली दशामें करिलेना योग्य होता है उस बिरली दशा का स्वरूप कहा जायगा ॥ प्रतिप्रसव इसी का नाम है कि जो बात पहिले मने करचुके हों उसमें थोडीसी करने को भी आज्ञा दीजाय ॥

(यौननिषेधप्रतिप्रसवः)

कन्यांसमुद्वहेदेषांसोपवासामकिंचनाम् २६१

अर्थः—इनकी कन्या को सोपवासा को अकिंचना को भलेही विवाहि लेवै= अर्थात—इन्हीं पूर्वोक्त पतितों की कन्या जो पतित होनेकी दशा में उत्पन्नहुई हो तिसको यदि इच्छा किसीको हो तो बेखटके विवाहि लेवै कुछ दोष नहीं है परन्तु इस रीति से विवाहनी चाहिये कि निराहार उपवास करी हुई और अकिंचना कि

जिसके साथ कपड़े गहिना आदि उसके बाप का कुछ न लिया जाय (और निराहार उपवास का यह तात्पर्य है कि जितना पतित बाप आदिसे संसर्ग रहाहो उसके अनुसार पंचगव्य आदि से संक्षेप यथाशक्ति प्रायश्चित्त करवाइके विवाहनो चाहिये) और विवाहि लेवै इस कथन का यह तात्पर्य है कि पतितके हाथ से कन्या दान आदि करवाइके न लेवै क्योंकि उसको जाती धर्मोंका अधिकार नहींहै तिससे आपही जिस कन्या ने पतितका संसर्ग छोडि के विवाहकी इच्छा करीहो तिसको पतित के घर से उपरालू किसी देवस्थान आदि में शास्त्रोक्त मर्यादा से विवाहि लेवै तौ इस रीति से उस विरोध की शंका भी नहीं खडी होसकी है कि पहिले परिच्छेद में पतितों की कन्यासे यौन संबंध का निषेध कियागया था फिर क्योंकर उसी कन्या से विवाह करना कहा गया॥ २६१ ॥

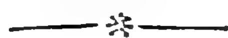
२६१ अधिकोक्तिः—जो व्यवस्था ऊपर कही गई तिसको वृद्ध हारीतने विशेष ब्यौरा से स्पष्ट करिके दर्शाया है=यथा=पतितस्यकुमारींस्वविवस्त्रामहोरात्रमुपोषितांप्रातःशुक्लेनाहतेनवाससाच्छादितांनाहमेतेषांनममैतेइतित्रिरुच्चैरभिदधानांतीर्थे स्वगृहेवोद्वहेत=अर्थात—पतित की कुमारी कन्या को विना वस्त्रों के एक दिन राति उपास करी हुई को प्रातःकाल होतेसार नवीन शुक्ल वस्त्रकी धोवती पहिनाइ ओढाइके उसकन्याकेमुखसेतीन वार ऊँचेशब्दसे ऐसाकहवाइके कि (आजसे न मैं इन सबकी न ये सब घरवाले मेरे रहे) तिस पीछे कन्या लेजाइके किसी देवालय आदि तीर्थ में या अपने घरपर यथा विधान से विवाह करै॥ ० ॥ मूल श्लोक में (एषां कन्यांसमुद्वहेत) यह कहा गया कि इनकी कन्या को चाहैं विवाहि लेवै तिसका यह तात्पर्य ठहिरा कि सिर्फ कन्या चाहैं इन्हीं रीतों से विवाहि लेवै परन्तु पतित के लडकोंको अपनी कन्या न देवै कि जो जो लडके अपने पतितपिता भ्राता आदि में संसर्गी बनेरहे हों या पतित होनेकी दशा में उनके पतित वीर्य से उत्पन्न हुयेहों—इसीलिये वसिष्ठने कहा है कि (पतितेजोत्पन्नःपतितोभवति अन्यत्रस्त्रियाः साहिपरगामिनीमातूरिक्थमुपेयात) पतितसे उत्पन्न होय सोभी पतित होताहै परन्तु कन्या के सिवाय पुत्रही को समझना क्योंकि वह स्त्रीकी जातिहै पराये घर जाने योग्यहै माता का अंगांश उस मे अधिक होने से माता का धन पावैगी थोडासा प्रतिग्रमव इसी हेतुसे यहठहिरा किलडका लडकी दोनोंसे यौन संबंधका निषेध पहिले किया था उसमें केवल पुत्रीसे यौन संबंध की आज्ञा यहां दीगई॥ ० ॥ मूल के अर्थोंमेंयह कहा गया कि पतित होने की दशा मे जो पतित के वीर्य से उत्पन्न कन्याहो ति-

सको इन रीतों से विवाहि लेवें—इस कथन का प्रत्यक्ष यही तात्पर्य है कि प्रायश्चित्त का स्वीकार और उद्योग जिसने नहीं किया और पत्नीने भी संसर्ग उसका नहीं छोडा ऐसीदशामें जो गर्भ रहिकर कन्या हुईहो फिर गर्भ रहे पीछे चाहैंपतित पुरुष प्रायश्चित्तकरने चला गयाहो तौभी वह कन्या पतित वीर्यसे होचुकी तिस को उक्त रीतों से विवाहि लेने में कुछ दोष नहीं है—परन्तु इसी गर्भ से जो पुत्र पैदा हुआहो तिसको कोई अपनी कन्या देकर यौन संबंध से संसर्ग न करे यह निषेध परंपर है=औरभी=उसी कथन का यह तात्पर्यहै कि जिस किसीने प्रायश्चित्त का प्रारंभ ही करदियाहो परन्तु जबतक पूरा न हो तबतक उसको शुद्धि नहींप्राप्तहोती है और वह प्रायश्चित्त अपने ग्राम नगर के समीपही किसी जंगल या गोव्रज देवस्थल आदि में आरम्भ किया गयाहो ऐसी दशा में यद्यपि ब्रह्मचर्य से जितेंद्रीहोके रहिने का आदेशहै और पत्नीको भी पतित पतिसे संसर्ग करने का निषेध है तथापि जो दोमें से कोई एक या दोनों दंपती कामातुर होके धर्म मर्यादाका अतिक्रम करें अर्थात् निकट होने से दर्शन के बहाने मिलिके संगम करें और इसी दशामें जो पतित वीर्य से गर्भ रहिजाय तहाँ पत्नीभी संसर्ग दोषसे पतित हुई ठहिरैगी और इसी गर्भ से यदि पुत्र पैदा होजाय सोभी पतित होगा तिस पतितको कोई अपनीकन्या न देवै यह पहिले परिच्छेद के अनुसार यौन संबंध से संसर्ग का निषेध ठहिरा•परंतु जो इसी गर्भसे कन्या पैदा हुईहो तिसको उक्त रीतों से विवाहि लेने में कुछ दोष नहीं है यह इसी परिच्छेद के अनुसार प्रतिप्रसव ठहिरा=औरभी=उसी कथन का यह तात्पर्य है कि जिस किसीने निपट प्रायश्चित्त करनाही स्वीकार न कियाहो अर्थात् जाति बिरादरी से जुदा रहिना स्वीकार करलिया और उसकी पत्नी आदि परिवारने भी उसको नहीं छोड़ा इसी हेतुसे उसका घरकुटुंब सभी पतित ठहिरे और इसी हेतु से उसके लडका लडकी विवाह से रुके रहिके बहुत बडे हुये होंगे (चाहैं पतित होनेकी दशा में उत्पन्नहुये यद्वा पहिले अच्छी दशामें होचुकेथे कुछ इसका नियम नहीं क्योंकि जो पहिले पैदा होचुके हैं वेभी संसर्गी बने रहिने से उसके समान पतित ठहिरे) तहां उसके लडकों को कोई अपनी कन्या न देवै यह पहिले परिच्छेद से यौन संबंधका संसर्ग निषेध होचुकाहै सो ठीक रहा और लड़कियाँ जो सयानी होचुकीं तिनको इसी परिच्छेद वाली प्रतिप्रसवकी मर्यादा से लिखी हुई रीतों के अनुसार जो चाहो सो विवाहिले इसमें दोष नहीं है (स्त्रीरत्नंदुष्कुलादपि) यह वचन केवल इसी दशाके निमित्त पर आरूढ है सर्वत्र नहीं ॥ ० ॥ इसमें दोष

नहीं बल्कि एक प्रकार का अत्यंत सूक्ष्म और प्रबल पुण्य प्राप्त होता है क्योंकि दोषाभाव तो इसी परिच्छेद के वचनोंसे संसिद्ध है और पुण्य इस ध्वन्यर्थ से उत्पन्न होता है कि जैसे धर्मात्मा लोग बिरानी कन्या सयानी न होने पावै शीघ्र उद्धारकर देने के लिये आप द्रव्य देते और दूसरोंसे दिवाते हैं इसकी बराबर कोई और पुण्य नहीं है जो अपनी या बिरानी कन्या उचित समयपर सत्पात्र को देदीजाय—तिससे इस पुरुष को वही पुण्य होगा जो बहुतबड़े प्रतिबंधसे रुकीहुई कन्या का उद्धार करै या और से करावै—परन्तु इसके साथ यहभी एक प्रतिज्ञाहै जो ऊपरले वचनों में वृद्धहारीतने दर्शाई कि (आजसे न मैं इन सबकी न ये सब घरवाले मेरेरहे) यह तीनि बार कन्या के मुखसे पंचों के सन्मुख उच्चारण कराइ लेवै अर्थात् कन्या भी अपने हृदय से ऐसा विवाह चाहती हो और उसके घरवालेभी यही चाहतेहैं। किसी तरह का दावा झगड़ा शेष न रहि जाय और घरवाले कभी कन्याकोदेखने मिल-ने आदि के अधिकारी न रहैं क्योंकि पतितोंसे संसर्ग अपेक्षित नहींहै केवल कन्या का उद्धार करना एक धर्म है यदि कन्या इन्हीं नियमों पर आरूढ होकर पक्की हो और धर्म तथा अधर्म दोनों को समुझतीहो सो सब नियम ये सयानी और होशदार कन्या से संबंध राखते हैं अबूझ बच्चों से नहीं यह सिद्धांत है॥ २६१ ॥

इतिसंसर्ग प्रायश्चित्त प्रकरणं

इस प्रकरण में सैंतीस और अरतीस दो परिच्छेद हैं जो ऊपर होचुके॥ अब यह बात सोचनी चाहिये कि यहाँ पर उन दोही परिच्छेद में निषिद्ध संसर्ग का चर्चा था उसी चर्चा के प्रसंग से अगिले परिच्छेद में भी उस भांति के प्रायश्चित्त कहे जायँगे जो निषिद्ध संसर्ग (खोटेसंयोग) से उत्पन्नहुये प्रतिलोम जाती अति नीच मनुष्यों का वध करने वाले पर आरूढ हों॥



अथ प्रतिलोमानांवध प्रायश्चित्तस्वरूपस्यच पुनःस्त्री शूद्रादिनिमित्तोनांप्रायश्चित्तकरणेऽधिकारस्यच प्रदर्शकोऽयंपरिच्छेदः ऊनचत्वारिंशः ३९

---※---

इस परिच्छेदमें दो नियम विशेष कहे जायँगे कि प्रथम जो प्रतिलोम जाती पुरुषोंका वधकरनेवाले त्रैवर्णिकहों तिनके प्रायश्चित्त विशेष कहे जायँगे–फिर–स्त्री और शूद्र और प्रतिलोम जन्मा सूत मागध आदि जातें जो वेद आदि मंत्रोंके अधिकारी नहींहैं या अधिकार होते भी जो मंत्रज्ञानसे विहीनहों तिनको प्रायश्चित्त करनेका अधिकार विशेष रीतिसे दर्शाया जायगा कि मंत्रोंके विना भी करसक्ते हैं इत्यादि ॥–

(अवकृष्टवधप्रायश्चित्तं)

चांद्रायणंचरेत्सर्वानवकृष्टान्निहन्यतु † २६२ पूर्वार्द्धश्लोकः ॥

अर्थः–सभी अवकृष्टोंको मारिके चांद्रायण करै=अर्थात्–प्रतिलोम जन्म होने से खींचिकर दूर निकासे हुये सूत मागध आदि जनों में से किसी एकही पुरुष को प्राणों सहित वध करिके एक महीनेका चांद्रायण व्रतकरै तब शुद्धहोय †॥ २६२॥

२६२ अधिकोक्तिः–जैसा इस पूर्वार्ध मूलश्लोकमें योगीश्वरने नियम कहा तैसा शंखने भी कहाहै=यथा=सर्वेयामवकृष्टानांवधेप्रत्येकंचांद्रायणं=अर्थात्–सभी अवकृष्टोंके वधमें प्रत्येक जुदे जुदेके मारने मध्ये एक चांद्रायण करै ॥ और जो अंगिरा का यह वचनहै कि (सर्वांत्यजानांगमनेभोजनेचप्रमापणे पराकेणविशुद्धिःस्यादित्यांगिरसभाषितम्) सबही अंत्यजों के साथ मिलिके कहीं जाने आने या उनके पास बैठिके भोजन करने या उनके प्राण वध करने में पराक व्रत करने से विशुद्धि होय यह अंगिराने कहा॰ सो इस वचनमें ऊपरले चांद्रायण को मिलाइके यह व्यवस्था समुझलेनी कि जहां इच्छा सहित जानि बूझि के वध किया हो तहां सूत आदि सबके वधमें प्रत्येक चांद्रायण चाहिये और इच्छा विना वध होनेमध्ये केवल सूत जातिके मारनेमें पराक व्रत करना चाहिये जो बारह दिनमें पूरा होताहै यही पराक

व्रत पौना करिके नौरोजका वैदेहको मारने में करना चाहिये और यही पराक व्रत आधा सिर्फ छेदिनका चंडालके मारने में करना चाहिये। एवं मागधके वध करनेमें भी यही पराक चौथाई कम करिके नौरोज करना चाहिये और क्षत्ताके वध करने में आधा सिर्फ छः दिन करना चाहिये और आयोगवके वध करने में भी दोही पाद अर्थात् छेदिन व्रत करना चाहिये—इन्हीं भेदोंके अनुकूल इसी मार्ग से चांद्रायण में भी भेद कल्पना करनी चाहिये कि जिसको कामनासे वधकरने मध्ये करना कहा ॥ और एक ब्रह्मगर्भका यह वचन है कि (प्रतिलोमप्रसूतानां स्त्रीणांमासावधिस्मृतः अन्तरप्रभावानांचसूतादीनांचतुर्द्विषट्) अर्थात्—प्रतिलोम जातियों की स्त्रियां वध करनेवाले को एक महीने का व्रत कहा और उन्हीं सूतादि प्रतिलोम जातियों के पुरुष वध करने में चार दो छे महीने व्रत समझना—सो यह इतना बड़ा प्रायश्चित्त आवृत्ति के निमित्त पर आवश्यक है कि जिसने तर ऊपर लगातार दो तीन पुरुष मारे हों तिसके लिये और इसमें जो चार दो छे मास कहे तिनको जातियों की बड़ाई छोटाई के क्रमसे नहीं कहे किन्तु उनकी बड़ाई छोटाई की योग्यता पर संयुक्त करिके आगे के पीछे व्यवहित मार्ग से समझिलेने अर्थात् सूतजाति के पुरुष वध करने में छे महीने और वैदेह जातिके वध करने में चारि महीने चंडाल जातिके वध करनेमें दोमहीने प्रायश्चित्त करै—तथा मागध जातिके पुरुष वधकरने में चारि महीने और क्षत्ताजातिके पुरुष वधकरनेमें दोमहीने और आयोगव जातिके पुरुष वध करने में भी दोमहीने प्रायश्चित्त करै तब शुद्ध होय—इस व्यवस्था में यद्यपि किसी प्रायश्चित्त का नाम नहींकहा सिर्फ महीनोंकी तादाद कही तथापि चांद्रायण व्रत समझना जो एक महीनेमें एक पूरा होताहै दोमें दो इत्यादि ॥ २६२ ॥

अब आगे उत्तरार्द्ध मूलश्लोकसे यह बात सिद्ध होगी कि स्त्री और शूद्र आदि जो जो मंत्र आदि विद्याके अधिकारी नहीं सोभी अपने योग्य प्रायश्चित्तों को मंत्रों के विनाही कर सकेंगे ॥

(शूद्रादिकर्तव्यमंत्रप्रायश्चित्तं)

शूद्रोऽधिकारहीनोपिकालेनानेनशुद्ध्यति २६२

अर्थः—शूद्र अधिकारसे हीनहै तौभी उक्तअवधिके काल सेही शुद्ध होगा=अर्थात्—अबतक यह संदेह खड़ा रहाथा कि प्रायश्चित्तों के नैमित्तिक व्रत जो बहुधा कहे गये या आगे कहेजायँगे सो प्रायशः जप पाठ आदि प्रकारों से करने कहे गये। तहां

जो पुरुष विद्या पढे नहीं या स्त्री और शूद्र आदि अनेक जातें जो निपट मंत्र विद्या के अधिकारी नहीं तिनको उन प्रायश्चित्तों का करना संभव नहीं होगा क्योंकि (जिन कर्मों में घी का दर्शन अर्थात् घीमें अपने मुँह की छाया देखना आदिकोई नियम विशेष लगाहो उन कर्मों में अंधे पुरुषों का अधिकार नहीं सिद्ध होता है) इस न्यायसे विद्या विहीन आदि उन प्रायश्चित्तों के अधिकारी ही न होंगे–यह संदेह मिटाने को अब कहितेहैं कि•यद्यपि शूद्र आदि बहुतेरे मनुष्य जप पाठ आदि करने के अधिकारी नहीं तौभी इसी काल से संशुद्ध होते हैं जो बारह वर्ष आदि के काल नियम कहे गये (यद्यपि मूल में शूद्रही मात्र कहा तौभी यहशूद्र कहिना त्रै-वर्णिक स्त्रियों तथा प्रतिलोम जाती पुरुषों का भी उपलक्षण है ॥ २६२ ॥

२६२ अधिकोक्तिः–यद्यपि शूद्र आदिको गायत्री आदिके जप करने असंभव हैं जो प्रायश्चित्तों में होतेहैं तौभी इनको नमस्कार रूपी जो मंत्र है वही जप करना चाहिये इसीलिये स्मृत्यंतर वचन से यह कहा है कि (उच्छिष्टंचास्यभोजन मनुज्ञातोऽस्यनमस्कारोमंत्रः) शूद्रकेलिये तीनि वर्णोंकी जूठनि भोजनकहा और नमस्कार एक मंत्र है–अथवा यह न माना जाय तौभी वचन की प्रबलता से जप आदिकिये बिनाही व्रत करै यह तात्पर्य है कि जैसा यह अंगिराका वचन है=यथा=तस्माच्छूद्रंसमासाद्यसदाधर्मपथेस्थितम् प्रायश्चित्तंप्रदातव्यंजपहोमविवर्जितम्=अर्थात्–शूद्र को किसी जपमें अधिकार नहींहै तिससे जो सदा धर्मके मार्गपर चलनेवाला शूद्रहो तिसको किसी प्रायश्चित्तके अवसर पर आरूढ करिके जप होम से रहितही प्रायश्चित्त देना चाहिये=उन्हीं अंगिराने इसकेलिये दूसरा भी प्रकारदर्शाया है=यथा=शूद्रःकालेनशुध्येतगोब्राह्मणहितेरतः दानैर्वाप्युपवासैर्वाद्विजशुश्रूषयातथा=अर्थात्–प्रायश्चित्तकी अवधि भर कहे कालसेही शूद्र शुद्ध होताहै जो गऊ ब्राह्मणके हित में लगा रहै अथवा नियत काल भर अनेक दानों के करने से यद्वा उपवासों से और तीनो वर्णोंकी निर्लोभ सेवा शुश्रूषा करनेसे भी शुद्ध होता है=और जो मनु का यह वचनहै कि (नचास्योपदिशेद्धर्मंनचास्यव्रतमादिशेत्) अर्थात् शूद्रको न धर्मका उपदेश देना न कोई व्रत आदेश करना–इसपर मिताक्षराकार कहिते हैं कि यह उपसन्न शूद्रके विषय पर आरूढ वचन है कुछ यहां इस वचनसे तात्पर्य नहींलेनाहै=इसी प्रकार=एकस्मृत्यंतर यह वचन है कि (कृच्छ्रायेतानिकार्याणि सदावर्णत्रयेणतु कृच्छ्रेष्वेतेषुशूद्रस्यनाधिकारोविधीयते) इतने कृच्छ्रव्रत जो कहेगए सोसदा तीनो वर्णोंको करने चाहियें किन्तु इतने कृच्छ्रोंमें शूद्रका अधिकार नहीं कहा–सो

यह निषेध काम्यकृच्छ्रोंके अभिप्रायसे किया गया है कि शूद्र इनको कामना से न साधै किन्तु प्रायश्चित्त मध्ये शूद्रको करनेका निषेध न समझना इसीलिये सदाशब्द का प्रयोगहै कि त्रैवर्णिक लोग जब चाहें तब सदाही करसक्ते हैं शूद्र सदा नहीं=इन सभी वचनोंसे यह तात्पर्य्य सिद्ध हुआ कि तीन वर्णोंकी तरह स्त्री और शूद्र और प्रतिलोम जातोंको भी प्रायश्चित्तके व्रत करने चाहिये=और जो गौतमका यह वचन है कि (प्रतिलोमा धर्महीना) सोभी यह प्रायश्चित्त का संबंधी नहीं किन्तु इसके उपरालू यज्ञोपवीत आदि विशेष धर्मों की अपेक्षा मध्ये कहा समझना ॥ २६२ ॥

इतिशूद्राद्यवकृष्टजातिपर्यंतप्रायश्चित्तप्रकरणं ॥

यह प्रकरण केवल उनतालिसके एकही परिच्छेदसे पूराहुआ दूसरा इसमें नहींहै ॥

इत्यशेष महापातकादि प्रायश्चित्त प्रकरणानां बृहत्प्रकरणं ॥

समस्त महापातकोंके अगिले पिछले कई प्रकरणों के परिच्छेद मिलानेसे यहां तक उन्नीस परिच्छेद होतेहैं क्योंकि वीसवें परिच्छेद तक ब्रह्मविद्याकी समाप्तिहुये पीछे इक्कीसवें परिच्छेदसे लेकर तीसवें तक दश परिच्छेदों में अनेक भेद होनेपरभी केवल ब्रह्महत्याके नाम से प्रकरण पूरा किया था—तिस पीछे इकतीसवां परिच्छेद लेकर यहां उनतालीसवें तक नौ परिच्छेदोंमें छोटे छोटे कई प्रकरण भेद किये उन सबहीको मिलाकर यहां (अशेष महापातकोंके) नामसे वृहत् प्रकरण मानागया कि जिसमें कुल १९ उन्नीस परिच्छेद हैं ॥

॥ जैसे २४२ दोसौ बयालिसकी अविकोक्ति में पापोंके अनेक भेद तेरह चौदह तक दर्शाइकर उनमें से मुख्य पांच भेद माने गयेथे कि महापातक १ अतिपातक २ पातक ३ उपपातक ४ अनुपातक ५—इनमें से महापातकों के प्रायश्चित्त ऊपर के प्रकरणोंमें वर्णन कियेगये उनके साथ अतिपातक और पातकोंके भी प्रायश्चित प्रदर्शित होतेरहे (और कुछ शेष रहाहोगा सो आगे कहीं दर्शावेंगे) परन्तु महापातकों का विशेष वर्णन हो चुका ॥ अब अगिले परिच्छेद में उपपातकों के प्रायश्चित्त कहे जायेंगे ॥

अथोपपातक विषये गोहत्यायाः प्रायश्चित्तैकदेश प्रदर्शकोऽयं परिच्छेदः चत्वारिंशः ४०



इस परिच्छेद में उस प्रकार की गोहत्या के प्रायश्चित्त भेद कहे जायँगे कि जो गाय अति उत्तम स्वामी की नहो और वह गाय आपभी सामान्य जाति मात्र सेही गऊ कहातीहो विशेष गुणावाली गऊ न हो तिसका वध बिनाचाहे दैवयोगसे यदि किसी से होजाय—क्योंकि विशेष गुण वाली गऊ जो उत्तम स्वामी की हो तिसका वध होने मध्ये बडे प्रायश्चित्त हैं सो अगिले परिच्छेदों में हारीत आदि के वचनोंमें दर्शाये जायँगे (गाय की जाति मात्र में वृषभकाभी उपलक्षण वर्तमानहै) इस गोवधके अनेक भेदहैं तिससे इसके प्रायश्चित्त भी चार परिच्छेदों में जाकर पूरेहोंगे= २३४ मूल श्लोक से लेकर २४३ श्लोक तक पचास के लगभग उपपातक वर्णन हुयेथे उनमें गोहत्या यह सबसे पहिला एक उपपातक है ॥

येही ५० नहीं किन्तु औरभी बहुत हैं ॥

(गोघ्नस्यप्रायश्चित्तं)

पंचगव्यंपिबेद्गोघ्नोमासमासीतसंयतः । गोष्ठेशयोगोऽनुगामी गोप्रदानेनशुद्ध्यति २६३
कृच्छ्रंचैवातिकृच्छ्रंचचरेद्वापिसमाहितः । दद्यात्त्रिरात्रंचोपोष्यवृषभैकादशास्तुगाः २६४

अर्थः—गोघ्न पुरुष महीना भर संयत होके गोष्ठ में सोवै गौओं के पीछे फिरै पंचगव्य पीवै फिर एक गऊदान करिके शुद्ध होताहै=अथवा पंचगव्यके पीने बिनाही इन्हीं सब नियमों से महीना भर कृच्छ्र व्रत करै यद्वा उन्हीं नियमों से महीना भर अति कृच्छ्र करै यद्वा उन्हीं नियमों से महीना भर संयत रहेपीछे तीन दिन उपवास करिके दशगौओंके साथ ग्यारहवाँ आँडूवृषभदान करै तब शुद्ध होय ये सब चारि प्रायश्चित्तकहे तिनको ब्राह्मण आदि वर्णोंके भेदसे व्यवस्था करिके कहेंगे सो सब अधिकोक्ति मे देखना ॥ २६३ ॥ २६४ ॥

२६३ अधिकोक्तिः—इन चारोंप्रायश्चित्तोंमें कृच्छ्र और अतिकृच्छ्र भी कहेगये तिनकालक्षण समझलेनाचाहिये जिससे इनकीव्यवस्था जोवर्णनहोगी सोभीसमझी जाय—तहाँ कृच्छ्र नाम है प्राजापत्य और सांतपन आदि अनेक व्रतों का जो कष्ट के

साथ साधनहोते हैं क्योंकि कष्टहीका नाम कृच्छ्र होताहै—तिससे यहां पर कृच्छ्र कहिने से प्राजापत्य समझना जिस कर्मका प्रजापति देवताहोता है उस प्राजापत्यका यह लक्षण है कि (त्र्यहंप्रातस्त्र्यहंसायंत्र्यहमद्यादयाचितम्त्र्यहंपरंचनाश्नीयात्प्राजापत्यमितिस्मृतम्) तीन दिन सबेरे और तीनदिन साँझको किंचित् अन्नखाय और तीन दिन बिना माँगे जो कुछ आजाय सो खाय फिरपीछे तीन दिन कुछ भी न खाय यह बारह दिनका प्राजापत्य कहाता है इसको कृच्छ्रभी कहिते हैं=इससे आधा छः दिन का कृच्छ्रार्द्ध भी कहाता है (सायंप्रातस्तथैकैकंदिनद्वयमयाचितम् दिनद्वयंचनाश्नीयात्कृच्छ्रार्द्धःसोऽभिधीयते) अर्थात्—उसी पूर्वोक्तप्रकार से एक दिन साँझ को एक दिन सबेरे किंचित् अन्न खाय फिर दो दिन बिना माँगे जो कुछ आजाय सो खाय तिस पीछे दोदिन कुछभी न खाय सो कृच्छ्रार्द्ध कहलाता है इसको लघु प्राजापत्यभी कहिना चाहिये=अतिकृच्छ्र इनसे जुदा व्रत है जिसका यह लक्षण है (एकैकंग्रासमश्नीयात्त्र्यहाणित्रीणिपूर्ववत् त्र्यहंचोपवसेदंत्यमतिकृच्छ्रं चरन्द्विजः) अर्थात्—पूर्वोक्त किसी रीति से नौदिन तक एक एक ग्रास भोजन करै फिर तीन दिन कोरा उपवास करै यह अतिकृच्छ्र करते हुये द्विजाती का विधान है ॥ ० ॥ मूल श्लोकों की व्यवस्था अब कहिने का प्रारंभ करतेहैं कि—पंचगव्यका विधान जो शास्त्रोंमें प्रसिद्ध है उसीतरह बनाकरउतनाहीपीवै किन्तु पेट भरीआनहीं पर यही उसकाआहारहै कुछ और भोजन नहीं और (संयतः) अर्थात् शास्त्रोक्त सब नियमों को साधे हुये गौओं के गोष्ठ गौंहरे में सोया करै प्रातःकाल उठ कर उन्हीं गौओं के साथ जाकर पीछे फिरै अर्थात् गौयें जहां विश्राम लें तहाँ आपभी थँभि जाय जहां उनको कोई ऊँचे नीचे की अडचल हो तहां युक्ति से उतारै कि उनको विपत्ति न होने पावै इत्यादि अनेक विधि हैं तिनको करतेहुये फिर सांझ को साथजाकर गोष्ठमें उनकी उचित सेवा किये पीछे धरती पर सोवै और बाकी मूल श्लोकों के अर्थ में देखौ० यह विधि तो पर्व्वन्त लगीरहेगी पर अगिले प्रायश्चित्तोंमें पंचगव्यका आहार छूटि जाय गा क्योंकि कृच्छ्र प्राजापत्य आदि व्रत करने कहे उन्हीं की विधि वर्ती जायगी यह समझ लेना १॥ दूसरा प्रायश्चित्त जिसकानाम कृच्छ्रकहा तिसको प्राजापत्य समझना—इसी हेतु से जाबालिमुनिने सहीनाभर प्राजापत्य करना यह जुदा प्रायश्चित्त बताया है=यथाह जाबालिः=प्राजापत्यंचरेन्मासंगोहंताचेदकामतः गोहितोगोऽनुगामीस्याद्गोप्रदानेन शुध्यतीति=अर्थात्—एकमहीना प्राजापत्य कृच्छ्रव्रतकरै और गौओंकी भलाई वाले काम करतेहुये उनके पीछे फिरै तिस पीछे गोदान करके शुद्ध होताहै पर इसी कि

जिसने इच्छा विना किसी धोखे आदि कारणसे गऊ मारीहो—यह दूसरे प्रायश्चित्त का स्वरूप जो मूलश्लोकमें कहाथा तिसका निर्णय कियागया २ ॥ इन्हीं प्रकारोंसे महीनाभर अतिकृच्छ्र व्रतकरै यह तीसराहै ३ ॥ इन्हीं प्रकारोंसे महीना भर गोसेवा किये पीछेग्यारह गऊ वृषभ देनेकहे वह चौथाहै४ ॥ इनमें किसप्रायश्चित्तको कौन करै यह व्यवस्था आगे देखो॥०॥ जो विशेष गुणवाली गऊ न हो किन्तु सामान्य जातिमात्रसेही गऊकहातीहो और सामान्य ब्राह्मणकीहो जो केवल जातिहीसे ब्राह्मणकहाताहो तिसको विनाइच्छाके बधकरनेवाला पुरुष चौथेप्रायश्चित्तकोकरै जिसमें महीना भर गोसेवा किये पीछे तीन दिन उपवास करिके दशगऊ एक आंडू वृषभ देना कहागया (उत्तम स्वामीकी गऊ तथा उत्तम गुण वाली गऊ मारने मध्ये बड़े प्रायश्चित्तहैं सो हारीत आदिके बचनों से अगिले परिच्छेदमें आवेंगे तिससेयहां सामान्य जाति गऊ और सामान्य जाति ब्राह्मण उसका स्वामी कहा गया यह विशेषता समझि लेनी चाहिये) ४ उसी प्रकारकी गऊ जो क्षत्री स्वामीकी हो तिसको इच्छा विना मारनेवाला पहिले प्रायश्चित्तको करै जिसमें पंचगव्य पीना कहाथा• तिसपर मिताक्षराकारने यह व्यवस्था भी आरोपित करीहै कि महीनाभर पंचगव्य का आहार बहुतही थोडा करना होताहै तिससे वह भी महीना भर उपवास के तुल्य ठहरता है तिस हेतु से उसमें भी कृच्छ्रार्द्ध रूपी छः दिनके आधे प्राजापत्य पांच माने जासक्तेहैं अर्थात् (छपंजेतीस) छे छे दिनके उपवासोंका एक एक लघु प्राजापत्य कल्पना करनेसे पांच कृच्छ्रोंका अभ्यास ठहरता है तिसमें एक एक कृच्छ्रके साथ एक एक गोदानकी पाँच गऊ होतीहैं तथा एक उस गऊको समझना जो महीनाके पीछे देनी कही थी तिससे कुल छे गऊ होतीहैं जो क्षत्रीकी गऊ मारने मध्ये दान करनी ठहिरीं तोभी उनसे कम सख्या ठहिरी जो ब्राह्मण की गऊ मारने मध्ये एक बैल दश गऊ देनी कहीं अर्थात् ऐसा हिसाब लगानेसे भी यह प्रायश्चित्त उससे छोटा ठहिरा• तिसपर यह तर्कनाहै कि ब्राह्मणकी गऊ मारने मध्ये इतना बड़ापन क्योंरक्खागया• इसका यह उत्तर है कि (देवब्राह्मणराज्ञांतुविज्ञेयंद्रव्यमुत्तमम् इतिनारदेनतत्तद्द्रव्यस्योत्तमत्वाभिधानात) देवता और ब्राह्मण और राजा इनका द्रव्य उत्तम होताहै यह नारदने कहा और (गोषुब्राह्मणसस्थास्विति दंडभूयस्त्वदर्शनाच) व्यवहारकांड में ब्राह्मण की गऊ मध्ये दंडभी अधिक देखनेमें आताहै तिससे भी यहाँ ऐसा बड़ापन रक्खागया १ ॥ उसी प्रकारकी गऊ जो वैश्यकी हो तिसको इच्छा विना वध करने वाला महीना भर अतिकृच्छ्र नामक तीसरा प्रायश्चित्त करै और उसी प्रकार गौओं

की सेवा आदि भी महीनाभर करने पीछे पाँच गोदान अर्थात् धेनुकल्प विधान से धेनुका अनुकल्प पांच प्रकारसे करै इनमें एक गऊ साक्षात्कार अपने स्वरूपहीसे देनी होगी जैसा योगीश्वरने महीनाके अन्तमें एक गोदान करना कहा ३॥ उसीप्रकारकी गऊ जो शूद्र स्वामीकीहो तिसको इच्छा विना मारनेमें दूसरा प्रायश्चित्त कृच्छ्र नामक अर्थात् प्राजापत्य व्रत एक महीनाभर करै और गौओं की सेवा शुश्रूषा आदि करने पीछे दो धेनुकल्प और एक गऊ साक्षात्कार दानकरै २ (इसी प्रकार जिसमें छे गौओंका विधान पहिले लिखचुके तहां भी पाँचधेनुके अनुकल्प और छठा साक्षात्कार गोदान समझिलेना॰ परन्तु जिसमें दश गऊ एक आँडू वृषभ कहिचुकेतहां धेनुकल्प नहीं किन्तु साक्षात्कार सभी गौयें समझनी ॥ ० ॥ यह व्यवस्था एक उपरालू याद रखनी चाहिये कि येही चारों प्रायश्चित्त जो साक्षात्कर्ता अर्थात् गोवध करनेवाले पर कहेगये सो कर्ताके अनुग्राहक और प्रयोजक और अनुमन्ताओंमें बडे छोटे भाव को तरतमता देखिभाल के पूर्वोक्तही विषय में संयुक्त करने चाहिये कि जहाँ उनकी इच्छा और चाहना विना सहायता कानी परी हो ॥ ० ॥ इसी गोहत्या मध्ये जो विष्णुके कहे तीनि व्रतहैं कि (गोघ्नस्यपंचगव्येन मासमेकंपलत्रयं प्रत्यहंस्यात्पराकोवाचांद्रायणमथापिवा) गोहत्या करनेवाले को एकमहीना भर तीन पलके परिमान पंचगव्य पीनेका प्रायश्चित्त चाहिये अथवा पराकव्रत करना चाहिये अथवा चांद्रायण करना चाहिये) ये तीनों प्रकार उसी के समान हैं कि जैसा याज्ञवल्क्यने पंचगव्य कहा सो जिसके लिये करना उचित ठहरचुका उसी के निमित्तमें इनको भी समझिलेना=और जो कश्यपजीने कहाहै कि (गांहत्वातच्चर्मणाप्रावृत्तोमासंगोष्ठेशय स्त्रिषवणस्नायी नित्यंपंचगव्याहार·) गाय को मारिके उसकी खालको ओढि कर गौहरे में सोया करै त्रिकाल स्नान भी कियाकरै नित्यं प्रति पंचगव्य पीतारहै) यह भी पूर्वोक्त याज्ञवल्क्यजीके बताये पंचगव्यवाले प्रायश्चित्तका विषय है कि इसको भी उपरालू बातें उसमें मिला लेनो चाहिये=एवं शातातप का वचन भी खुलासा है कि (मासपंचगव्याहारः) एक महीना पंचगव्य का आहार करै—यह भी याज्ञवल्क्यजीके बताये पंचगव्य वाले व्रतके समानहै=और जो शंख तथा प्रचेताने एकही वचन कहा है कि (गोघ्नःपंचगव्याहारः पंचविंशतिरात्रनुपवसेत्सशिखंवपनंकृत्वागोचर्मणाप्रावृत्तोगाश्चानुगच्छन्गोष्ठेशयोगांदद्यात्) गाय मारनेवाला पचीसदिन पंचगव्य खायके उपवास करै चोटी सहित मुंडनकराय के गऊकी खाल ओढे हुये गौओंके पीछे फिरै गोष्ठमें राति काटै औ। पीछे से गऊ

दान करे) यह भी पूर्वोक्त याज्ञवल्क्यजीके एक महीनावाले अतिकृच्छ्रके समान है कि इसमें से उपरालू नियमलेकर उसमें जोड़े जासक्ते हैं० और भी याज्ञवल्क्य ने दोसौ चौंसठिके उत्तरार्द्धमें जो तीनदिनका व्रत करिके ग्यारह गऊ दानकरना कहा तिसके साथभी अग्रोक्त शंख प्रचेतावाले नियम उसदशामें जुड़िसक्ते हैं जो गऊ मारनेवाला अत्यन्त गुणवान्हो यह मिताक्षराकारने व्यवस्था कही ॥०॥ इसी पहिले विषयपर कि जिसमें पंचगव्य का आहार कहागयाथा कदाचित वही प्रायश्चित्त जिसको करनाठहिरे और पंचगव्य उसपर न पियाजाय अथवा न मिलसक्के तिसकेलिये कश्यप का कहा एक दूसरा प्रायश्चित्त विचारना चाहिये जो कश्यपने महीनाभर पंचगव्य पीनेका प्रायश्चित्त पहलेकहिकर दूसरा यहकहाहै कि (षष्ठेकालेपयोभक्षोवागच्छं तीस्त्वनुगच्छेत्तासुसुखोपविष्टासु चोपविशेन्नातिप्लवंगच्छेत्तानिविषमेनावतारयेन्ना ल्पोदकेपाययेदन्तेब्राह्मणान्भोजयित्वातिलधेनुदद्यादितिद्रष्टव्यम) अर्थात—जो पंच-गव्यपीना न होसक्के तौ छठेकालमें केवल दूधपीवै और चलतीहुई गौओंकेपीछेचलै और वे गऊ जब आरामसे बैठैं तब आपहू उनके निकट बैठे और अतिशय दहदलके पानीमें न लेजाय उनको ऊँचे नीचे टीलोंमें नहीं निकासैं किन्तु सूधे मार्गसे निकासै और थोड़े जलमें नहीं पिआवै अच्छे निर्मलपानीमें पिआवै इसतरह प्रायश्चित्तकी अवधि पूरीकरिके अन्तमें ब्राह्मणोंको भोजनकराय तिलधेनुका दानकरै (केवल दूध पीनाजो प्रायश्चित्तकेनिमित्तोंपर बताया तिसका यहतात्पर्यहै कि जीभस्वादुकेअर्थ उसमें मीठा कुछ नहो) जो विरला पुरुष ऐसा भी न करसक्के तिसके लिये अग्रोक्त पैठीनसि का बताया अनुकल्प विचारना चाहिये=यथाह पैठीनसिः (गोघ्नोमासंय वाग्रंप्रसृततंदुलभक्तां भुंजानोगोभ्यःप्रियंकुर्वनशुध्यति) अर्थात—गऊ मारने वाला एक महीना तक एक पसर तंदुल राँधिके उसका दलिया खाते हुये गौओं का हित प्रिय करते हुये शुद्ध होता है ॥ ० ॥ सुमंतु ने जो प्रायश्चित्त कहा है कि (गोघ्नस्य गोप्रदानंगोष्ठेशयनं द्वादशरात्रंपंचगव्यप्राशनंगवानुगमनंच) गोहत्यावालेको गऊका दान गोशाला में सोना बारह दिन पंचगव्य चीखना गौओं के पीछे फिरनाभी योग्य है=और जो संवर्त ने कहा है कि (सक्तुयावकभैक्षाशीपयोदधिघृतंसकृत एतानिक्रम शोऽश्नीयाद्मासार्द्धंतुसमाहितःब्राह्मणान्भोजयित्वातुगांदद्यादात्मशुद्धये) पंद्रह दिन सावधान होके सतुआ या गोमूत्रमें राँधे यवोंका यावक दलिया भिक्षा भोजनकरते हुये गायको दूध दही घी येभी क्रम से प्रत्येक दिन एक एक वार चाटतारहै फिर ब्रा-ह्मणों को भोजन कराइके अपने शुद्धहोने के लिये गौदान करै=और जो बृहस्पतिने

कहाहै कि (द्वादशरात्रंपंचगव्याहारः) बारहदिन पंचगव्यकाआहारकरै सो शुद्धहोय–यहतीनों प्रायश्चित्तभी याज्ञवल्क्यजीकेकहे महीनाभरके प्राजापत्यके समानसमझने चाहिये यहमिताक्षराकारकाकथनहै अथवा जोगऊ मरनेकेतुल्य आपहीथी तिसको हत्याकरनेवालेके निमित्तमेंसमझलेने क्योंकि प्रायश्चित्त बहुतछोटेहैं अथवा जिसने गऊको बहुत ऊँचेनीचे चढ़ाइ घेरि पीटि पाटिके त्रासमात्र दिया हो जिससे रोगपैदा होकर कुछ दिन बाद आपही गऊ मरजाय तिस हत्या के निमित्त में इन प्रायश्चित्तों को विचारना चाहिये ॥ अधिकोक्तिके प्रारम्भसे यहां तक जो कुछ प्रायश्चित्तोंके भेद वर्णन हुयेसोसब केवल उसी दशापर आरूढहैं कि विना इच्छा के जिसपर गऊ दैवयोग से मरगई हो=तथापि उत्तम स्वामी की उत्तम गऊ जिसपर विना इच्छा के मरगई हो तिसके बड़े प्रायश्चित्त अगिले परिच्छेद में सकाम वधके साथ भी प्रसंग से दर्शाये जायँगे तत्रैव देखो ॥ इत्यकामगोवधविचारः ॥ अगिले परिच्छेद में सकाम गोवध के प्रायश्चित्त कहे जायँगे (तथापि उसमें हारीत आदि कई एक ऋषियों के बताये प्रायश्चित्त निष्काम गोवधके ऊपर भी आवैंगे) और यह चर्चाभी उसी परिच्छेद में आवैगी कि इस परिच्छेद में दर्शाये प्रायश्चित्त भी सकाम गोवध में द्विगुण किये जासक्ते हैं अर्थात् केवल वही नहीं कि जो अगिले परिच्छेद में सकाम वधके नामसे वर्णन होंगे–अगिले परिच्छेद में कोई मूल श्लोक इस हेतुसे न आवैगाकिवह पाठभीइसी अधिकोक्तिके शेष वक्तायामें गिनतीहै ॥२६३॥२६४॥

अथोपपातकेषु सकामगोहत्यायाश्च विशिष्ट स्वामिकगोहत्यायाश्च प्रायश्चित्तप्रदर्शकोऽयं परिच्छेदः एकचत्वारिंशः ४१

इस परिच्छेद में उस प्रकार के प्रायश्चित्त कहे जायँगे कि जिसने जानि बूझि इच्छा सहित उसी प्रकार की गाय मारी हो जैसी गऊ दैवयोग से मरजाने के प्रायश्चित्त ऊपरले परिच्छेद में कहि चुके=तिस पीछे इसी परिच्छेद में बढ़िया प्रायश्चित्तभी दर्शावैंगे जो उत्तम स्वामी की उत्तम गऊ दैव योगसे मरजाने मध्ये और जानि बूझि इच्छा सहित मारने मध्ये दोनों दशापर दो भांति के होंगे ॥

जहां उसी प्रकार की गऊ जिसका पहले कथन होचुका है कि जिसमें कोई वि-शेष उत्तमता वाले गुणका चिह्न नहो और जातिसे सामान्य ब्राह्मण की गऊहो तिस को कोई इच्छा सहित चाहिका वधकरै तिसके लिये अग्रोक्त मनु का कहा प्राय-श्चित्त विचारै कि जैसा मनुने एक महीना चौथे काल में जौका दलिया रांधि पीना कहा और दो महीना हविष्य भोजन चौथे काल करना कहा इस तरह तीन महीना गोसेवा तथा ग्यारह गऊ दान यह सब मिलाकर यद्यपि तीनि महीने का एकही प्रायश्चित्त प्रतीत हुआहै तथापि मिताक्षराकारने इसीके तीनि प्रायश्चित्तभी माने और सबके छ महीना जोड़ दियेहैं कि पहला एक महीने का दूसरा दोमहीनेका तीसरा तीनि महीनेका जुदा प्रायश्चित्त है सो इस अंतरको मनुके वचनों से बुद्धि-मान पुरुष विचार करैंगे=यथाहमनुः=उपपातकसंयुक्तोगोघ्नोमासंयवान्पिवेत कृत वापोवसेद्गोष्ठेचर्मणार्द्रेणसंवृतः चतुर्थकालमश्नीयादक्षारलवणंमितम् गोमूत्रेणा चरेत्स्नानंद्वौमासौनियतेंद्रियः दिवाऽनुगच्छेत्तामास्तुतिष्ठन्नूर्ध्वंरजःपिवेत् शुश्रूषित्वा नमस्कृत्वारात्रौवीरासनंव्रजेत् तिष्ठंतीष्वनुतिष्ठेत्तुव्रजंतीष्वप्यनुव्रजेत् आसीनासु त्वासीतनियतोवीतमत्सरः आतुरामभिशस्तांवाचौरव्याघ्रादिभिर्भयैः पतितांपंकलग्नां वासर्वप्राणैर्विमोक्षयेत् उष्णेवर्षतिशीतेवामारुतेवातिवाभृशम् नकुर्वीतात्मनस्त्राणं गोरकृत्वातुशक्तितः आत्मनोयदिवान्येषांगृहेक्षेत्रेऽथवाखले भक्षयंतींनकथयेत्पिवंतं चैववत्सकम् अनेनविधिनायस्तुगोघ्नोगाअनुगच्छति सगोहत्याकृतंपापंत्रिभिर्मा व्यपोहति वृषभैकादशागाश्चदद्यात्सुचरितव्रतः अविद्यमानेसर्वस्वंवेदविद्भ्योनिवे येत् (सततिप्तमयंयाज्ञवल्कीयमासंप्राजापत्य• मासंपंचगव्याशन• वृषभैकादशगोदान युक्तत्रिरात्रोपवासरूप• व्रतत्रितयविषयं यथाक्रमेणद्रष्टव्यमित्यत्रमिताक्षराकारः)= अर्थात्—मनुने यह कहाहै कि इच्छासहित गोवध करनेवाला उपपातकी प्रथम एक महीना जौ का दलिया रांधि पीवै और मुंडन कराइके गोष्ठ गौंहरेमें टिकै कि जहां सैंकरों हजारों गऊ का समूह किसी जंगल में रहिता हो। परन्तु मरी गऊ का गीला चमड़ा ओढ़िके टिकै (मिताक्षराकारने इसी इतनेको जुदाएक प्रायश्चित्त मानाहै) और दिन के चौथे काल में दो महीना तक ऐसा भोजन थोडासा करै जिसमें खारी नमक आदि कुछनहो किन्तु अलोना फीका भोजन होय और जितना थोडानियम साधै उतनाही नित्य निरन्तर भोजन करै न्यूनाधिक नहीं अर्थात् पहिले महीना मे जौका दलिया पीवै फिर दूसरे तीसरे दो महीना यह पिछला कहा भोजन करै तौ यह पूरे तीनि महीनेका एकही प्रायश्चित्त ठहरै और इन्हीं पिछले दोमहीना भ

गोमूत्रसे स्नान भी किया करै सब इन्द्रियों को जीति के वशमें राखै (मिताक्षराकार इसको भी जुदा एकप्रायश्चित्त बतातेहैं) और दिनमें उन गौत्र्योंके पीछे पीछे फिरता रहै जहां कहीं खडी होकर टिकिजायँ तहां आप भी खडे रहिकर ऊपर को मुह पसारि उडती गोधूलिकी रज पीनेलगै फिर संध्या समय उनकी सेवा शुश्रूषा अच्छे करिके और पुनः पुनः दंडवत्त प्रणाम नमस्कार और प्रदक्षिणा आदि उपचार किये पीछे रातिमें उनके समीपही वीरासन बाँधि घुटुनोंके भर चौकस वनिके रहै कि जिससे गोष्ठके भीतर जो खडीहोयँ तिनकेपास आपभी खडा होजाय और जो टहलती हों तिनके पीछे आप भी टहिलनेलगै और जो बैठीहों तिनके पास आपहू बैठिजाय इसीतरह जब गौयें सोजायँ तब आपहू धरतीपर सोवै यह सब आचार मामूली तौरसे मत्सरता को छोड़िके निरन्तर कियाकरै औरभी ये नियम उपरालूराखै कि जब कभी किसी गऊको कुछ रोगसे आतुर देखै या पानीसे भीगीदेखै या मूत्तगोवरसे चिपकी देखै या चोर व्याघ्र आदि किसीके डरसे भयभीत देखै या गिरपडी देखै या कीच दहदल में लिपी वा फँसीदेखै तौ इन सबको प्राणोंसे बचावै इसप्रकारसे कि चाहैं ग्रीष्मकाल की लू चलतीहो या तीव्रवर्षा होती हो या बहुत जाड का पाला परता हो या झंझा वायु तथा भयानक आंधी चलतीहो तौभी दुखी गऊकीरक्षा अपनीशक्ति की बरावर किये विना अपने देहकी रक्षा न करै (यहां गऊ कहिनेसे उसकी जाति मात्रसे गोपुत्रोंकी रक्षाभी समझनी इसका दृष्टांत जैसे किसी बोझिल गाडीका बैल गिरिके गाडी से दवा फँसा हो तहां आपही गाडीमें कंधा देकर बैलको दुख पीडासे उभारै इत्यादि) और भी यह नियम राखै कि चाहैं निज अपने या और किसीकेघर में या खेतमें या खलिहानमें कुछ खातीहो या बछरा छूटा दूध पीताहो तौ मालिकों से न कहै॰इस कहीगई समस्त विधिसे जो कोई गौ मारनेवाला गौओं के पीछे गमण में जाताहै सो गऊहत्यासे किये पापको तीन महीनों से दूर करदेताहै अर्थात पहिले एक महीना जौका दलिया फिर पीछे दो महीना अलोना कुछ और भोजन ये तीन महीने जो कहिचुके उन्हींका इसजघे उपसंहार है और उन्हींके साथ यहांविधि मन्त्र दर्शाईगई तिससे आदिसे अन्ततक एकही प्रायश्चित्तहै दोतीनक जुदेनहीं (मिताक्षरा कार अनोक्ततीन महीने सबसे जुदेमानिके इसको भी जुदा तीसरा प्रायश्चित्त बताते हैं पर आधुनिक अनुवादक ऐसा नहीं कहिसका क्योंकि उस एकही प्रायश्चित्तका संबंध मिलाचला आताहै जो विधि कुछ बाकीरही सो आगे देखो कि) जिसने तीन महीना तक अच्छीतरह व्रतका आचरण किया हो सो पीछे से दशगऊ आरदूवां

एक आंडू वृषभ दानकरै परन्तु जिसकेपास ग्यारह गऊदान करने योग्य द्रव्य न हो वह अपना सर्वस्व अर्थात् जो कुछ थोडीबहुत सामग्री वर्तनभांडे कपड़े पशुआदि घर में हो सो सब लेकर वेदके विज्ञाता विद्वान् विप्रोंको समर्पणकरै तौभी शुद्ध होजाता है॥ ०॥ अंगिराने इसी मनुके कहे प्रायश्चित्त के साथमें कुछ और भी अधिक दर्शायाहै अर्थात् ऐसा लिखा है कि तीन महीने मनुका कहा प्रायश्चित्त साधै पर उसके साथ इतना और करै कि (अक्षारलवणांरूक्षं षष्ठेकालेऽस्यभोजनम् गोमतीं वाजपेद्विद्यामोङ्कारंवेदमेवचव्रतवद्धारयेद्दण्डंसमंत्रांचैवमेखलाम्) अर्थात् इसपापीको मनुका कहा प्रायश्चित्त करतेहुये छठे काल में भोजन करना चाहिये जो खार की वस्तुनहो अलोनी हो रूक्षनहो और गोमती नामक वेदमंत्र की विद्याका जपकरै जो गायत्री प्रसिद्धहै यहा न बनिआवै तौ केवल ओंकार जपै अथवा विद्या में पूरी शक्ति हो तौ वेदकी संहिता पाठकरै और व्रतके नियम की भांति दंड भी धारण करै तथा मन्त्रक्रिया सहित मेखलाभी धारणकरै—मिताक्षराकार कहितेहैं कि इतना अधिक बढ़ाकर अंगिराने मनुके प्रायश्चित्त में बड़ापन ठहिराया तौ इस बड़ेकोभी उसीविषयपर विचारना चाहिये कि जिस पर मनुका प्रायश्चित्त करना कहिचुके तिसमें इतनी और भी विशेषता समुझिलेनी कि जिसने मोटी ताजी या तरुण अवस्थाकी कलोरि आदि थोड़े गुणसे अतियुक्त गऊ मारीहो तिसकेलिये यह प्रायश्चित्त का बड़ापन अंगिरा के वचनानुकूल विचारा जाय—जबकि—मनु और अंगिरा के कहे ये दोनो प्रायश्चित्त केवल उसकेलिये ठहिरे कि जिसने सामान्य ब्राह्मणकी सामान्य गऊ इच्छासहित मारीहो—तौ फिर जिसने सामान्य क्षत्रीकी गाय या सामान्य वैश्य की गाय या शूद्र की गाय इच्छासहित मारी हो तिनको क्या प्रायश्चित्त विचारा जाय सो आगेदेखौ॥ ०॥ (विहितंयदकामानांकामात्तद्द्विगुणंचरेदितिन्यायःप्रसिद्धः) जो कुछ प्रायश्चित्त अनिच्छासे पापहोजानेपर कहा गयाहो वही इच्छासहित पाप करनेवाला दूना प्रायश्चित्तकरै यह न्याय घंटाघोष है तिससे जिसने क्षत्री या वैश्य या शूद्रकी गाय मारीहो तिनको वेही पूर्वोक्त प्रायश्चित्त यहां इच्छा सहित मारने के निमित्त पर दूने अर्थात् दोहरे करने चाहिये जो पहिले परिच्छेद में अनिच्छा से इन्हीं तीनो वर्णों की गाय मारने मध्ये जुदे जुदे तीनो कहिचुके हैं वहांपर योगीश्वरके (२६३। २६४) मूलश्लोकों का अर्थ देखौ॥ शंका—क्योंजी गोहत्या तब एकसी बराबर होनी चाहिये अभी ऊपर जो अंगिराके बताये प्रायश्चित्त में मोटी ताजी कलोरि आदि लक्षणों की परख लगाई गई वह क्या बात है—

मुनो(अतिवालामतिकृशामतिवृद्धांचरोगिणीम् हत्वापूर्व्वविधानेनचरेदर्द्धव्रतंद्विजः) यह वचन आगे आवैगा कि अति बालक बचा या अत्यन्त दुर्बल शरीर की या अति बूढी या अति रोगिनि जो स्वतः मरनेवाली होरही थी इनको मारने से द्विजाती को उस से आधा व्रत करना चाहिये जो पहिले पूरी गाय के मारने मध्ये विधान होचुका है—तो इसी व्यवस्था के अनुरूप यहां मोटी ताजी जुवान अवस्था आदि उत्तम गुण के ऊपर प्रायश्चित्त में बडापन कियागया सो अविरु जानो॥ ०॥ अथविशिष्टस्वामिगोहत्याप्रायश्चित्त=हारीत मुनिका यह वाक्य है कि=गोघ्न स्तच्चर्मोर्ध्ववालंपरिधाय० इत्यादिना मानवी मिति कर्तव्यता मभिधायोक्तं॰ वृ-षभैकादशाश्चगादत्त्वा त्रयोदशेमासेपूतोभवति॰ तत्सवनस्थश्रोत्रियगोवधेअकाम कृतेद्रष्टव्यं=अर्थात्—गऊ मारने वाला उसी गऊ का चमडा जिसके बाल ऊपर को रक्खै सो पहिनके॰ इत्यादि वचनके द्वारा यही मनुकी कर्तव्यता है सो कहि कर हा-रीतने पीछेसे दशगऊ एक आंडू वृषभ देकर तेरहवें मासमें पवित्र होना कहाहै—सो यह बारह महीनेका प्रायश्चित्त उसके लिये विचारना कि जिसने सवन यज्ञमें लगे हुये श्रोत्रिय ब्राह्मणकी गऊको इच्छा बिना किसी धोखे आदि कारणसे वधकिया हो॥ ०॥ और जो वशिष्ठका यह प्रायश्चित्त है कि=गांचेद्धन्यात्तस्याश्चर्मणार्द्रेण परिवेष्टितः षण्मासान्कृच्छ्रतप्तकृच्छ्रावातिष्ठेत् वृषभगवेहतौदद्यात्॰ मितिवशिष्ठेन कृच्छ्रतप्तकृच्छ्रानुष्ठानंषाण्मासिकमुक्तंतद्धारीतीयेनसमानविषयं=अर्थात्— यदि गऊ मारडालै तो उसके गीलेही चमडे से अपना देह ढांकि ओढिके छे महीना भर कृच्छ्र और तप्तकृच्छ्र दोनो तरहके व्रत कियाकरै (इस रीतिसे कि पहिले कृच्छ्रव्रतका एक अनुष्ठान करिके फिर तप्तकृच्छ्र का अनुष्ठान करै फिर कृच्छ्रका फिर तप्तकृच्छ्र का इसी तरह संकलितरूपसे निरन्तर करतारहै) और वृषभके मारनेमें गऊदानभी देवै— यह वशिष्ठने छमाही के दोनों व्रतकहे सोभी हारीतके समान मुआमिले पर समझि लेना कि जैसा हारीतका बारहमासी व्रत सवनस्थ श्रोत्रिय ब्राह्मणकी गऊ मारनेपर कहागया तैसायह छमाही व्रत सवनस्थ किसी क्षत्रीकी गऊ मध्ये विचारना चाहिये जो बिना इच्छाके वध कियाहो॥ ०॥ और जो देवलका कहा प्रायश्चित्त है कि= गोघ्नःषण्मासांस्तच्चर्मपरिवृत्तोगोग्रासाहारो गोव्रजेनिवासीगोभिरेवसहचरन्मुच्यते=' अर्थात्—गऊ मारनेवाला छे महीना उसी का चमडा ओढिके गऊग्रास का आहार करै और गौओंके गोहरेमें निवास करै और गौओंके साथ फिरताहै सो निज पाप से छुटिजाताहै (एसे गोग्रासका आहार कहा जिसका यह तात्पर्य है कि प्रायश्चित्तों

के विधानमें यद्यपि एक ग्रास वही कहा गयाहै जो एक बार बड़े मुहवाले आदमी के मुहमें जासके अथवा मुर्गाके अंडे समान अन्नका परिमान भी कहदिया है तथापि छे महीने तक इतने अन्नसे देह थाँभना संगत नहीं है तिससे यहां गोग्रास कहि कर गऊके मुहका लक्षण दर्शायाहै कि जितना अन्न गऊके मुहमें एक बार जासक्ता हो उतना खाकर प्रायश्चित्तका व्रतसाधै) यह देवलमुनि का कहा छमाही व्रत भी पूर्वोक्त हारीतके समान विषयपर समझिलेना कि जैसे उसमें सवनस्थ ब्राह्मणकी गऊ कहीगई तैसे इसमें सवनस्थ किसी वैश्यकी गऊ वध करने मध्ये इसी प्रायश्चित्तको ठहिराना जो इच्छा विना गऊ मारी हो ॥ अत्रापिसकामवधप्रायश्चित्तं—जिसने कामनासे चाहिकर सवनस्थ श्रोत्रियकी गऊ मारीहो तिसको अग्रोक्त कात्यायनके वचनसे तीनिवर्षका व्रतजानो=यथाह कात्यायनः=गोघ्नस्तच्चर्मसंवीतोवसेद्गोष्ठेऽथवा पुनः गाश्चानुगच्छेत्सततंमौनीवीरासनादिभिः वर्षशीतातपक्लेशवाह्निपंकभयार्दिताः मोक्षयेत्सर्वयत्नेन पूयतेवत्सरैस्त्रिभिः=अर्थात्—कात्यायन ने कहा है कि गऊ मारने वाला उसीके चमड़ासे देह ढांकेहुये वनमें गोव्रजके ठिकाने अथवा गौंहरेमें वसै और तीनि वर्ष तक निरन्तर गौओंके पीछे फिरै तथा मौन साधै और वीरासन होके राति में बैठाहुआ गौओंकी चौकसाई आदि सेवा करते हुये वर्षा शीत आताप तीनोंऋतु के क्लेशोंको आप सहिकर उन्हीं क्लेशोंसे भयभीत गौओं को सब यत्नों से बचाता रहै सो तीनि वर्षोंसे पवित्र होताहै—यह तीनि वर्षोंका प्रायश्चित्त उसी हारीतवाले विषय पर विचारना चाहिये कि जिसने सवनस्थ श्रोत्रिय ब्राह्मण की यज्ञ संबंधी गायको इच्छा सहित माराहो तिसके लिये—परन्तु—जो उस गऊमें थोड़ी बहुत कोई सी विशेषता भी उस तरहकी मौजूदहो जैसी आगे यम और वृहस्पतिके वचनों साथ कही जायँगी तो उस विशेषता पर इसी प्रायश्चित्तके साथ दूसरा वहभी जोडिलेना होगा जो आगे यमके वचन में गो शत १०० दान सहित दोमास का व्रत आवैगा॰ यह विशेषता याद रखनी चाहिये कि जो हत्यारा धनवान् हो तिसके लिये ऐसा नियम है ॥ ० ॥ सवनस्थ क्षत्री और वैश्यकी गाय मारने मध्ये अगिला एकही प्रायश्चित्त है=यदाह शंखः=पादन्तुशूद्रहत्यायामुदक्यागमनेतथा गोवधेचतथाकुर्यात्परस्त्रीगमनेतथा=अर्थात्—पूर्वोक्त महापातकोंमें दर्शाये वारह वर्ष वाले व्रत का एक चौथाई प्रायश्चित्त शूद्रका वध करनेमें तथा रजस्वलासे संगम करनेमें और गायका वध करने तथा पराई स्त्रीसे संगम करनेके पापोंमें भी करै—सो यह तीनि वर्ष का प्रायश्चित्त जिस विषयपर कात्यायनका अभी ऊपर लिखि चुकेहैं उसीपर इसको समझि

लेना कि जिसने सवनस्थ क्षत्री या सवनस्थ वैश्यकी गाय मारीहो–किन्तु वैश्य को गऊ मध्ये विरले कर्मके अंग कमकरिके इसी प्रायश्चित्तको करवाना यदा हत्यारा धनवानहो तौ कुछ दूर आगे बढ़कर (गांचहत्वावैश्यवदितिगोतमः) यह गौतमका वचन जहाँ आवै तहां इसकी अर्थों सहित व्यवस्था देखि भाल कर यहां वैश्य की गायमध्ये उसको भी विकल्प से समझि लेना कि ऊँच नीच दशा के अनुरूप वही किया जाय या अत्रोक्त किया जाय परन्तु अवधि तीनि वर्ष की दोनों में बराबर है केवल विधानका विकल्प लेना होगा ॥ ० ॥ पूर्वोक्त सवनस्थ श्रोत्रिय की गाय मारने मध्ये एक और भी विशेष प्रायश्चित्त है कि–यमने जो अंगिरा मुनि की कही कर्तव्यता पहिले दर्शाइके सहस्र गऊ दान और गोशत १०० दानरूपी दो प्रायश्चित्त दो दो महीनाकी अवधि वाले कहेहैं उनका भी निर्णय यहां करना चाहिये=यदाह यमः=गोसहस्रंशतंवापिदद्यात्सुचरितव्रतः अविद्यमानेसर्वस्वंवेदविद्भ्योनिवेदयेत् (तत्र यदासवनस्थश्रोत्रियातिदुर्गत बहुकुटुंबब्राह्मणसंबंधिनीं• कपिलां कर्मांगभूतां गर्भिणीं बहुक्षीरतरुणीसा्ऽऽदिगुणशालिनीम• निर्गुणोधनवान् सप्रयत्नं खड्गादिनाव्यापादयति तदागोसहस्रयुक्तं द्वैमासिकंकुर्यादित्येकंव्रत मितिमिताक्षराकाराः)गर्भिणीं कपिलांदोग्ध्रींहोमधेनुंचसुव्रताम खड्गादिनाघातयित्वाद्विगुणंव्रतमाचरेदित्ति विशिष्टायांगाविवार्हस्पत्येप्रायश्चित्त दर्शना दितिच मिताक्षराकाराः (अतएव प्रचेतसा• स्त्रीगर्भिणी गोगर्भिणी वाल वृद्ध वधेषु भ्रूणहाभवतीति इतिगवधमेव गोवधमभिसंधाय ब्रह्महत्याव्रतमतिदिष्टं इत्येकस्यैवव्रतस्यनिर्णयः)=तथाद्वितीयंव्रतं• वान्य गोशत १०० दानयुक्त द्वैमासिकमेव कात्यायनीय व्रत विषये धनवतो द्रष्टव्य मित्यपि मिताक्षराकाराः= अर्थात–यह सब निर्णय यमके कहे दोनों व्रतोंका मिताक्षराकार लिखते हैं कि• यमने अंगिरामुनिकी कही दोमासकी कर्तव्यता दर्शानेके साथ ऐसा कहा है कि–इस व्रतका अच्छा आचरण किये पीछे एक हजार गाय अथवा एक १०० सौ गाय दानकरै यदि उसके पास इतना न हो तो अपना सर्वस्व लेकर वेदके विज्ञाता विप्रोंको निवेदन करदेवै (तहां मिताक्षराकार कहते हैं कि पहिला एक सहस्र गाउदान वाला प्रायश्चित्त दोमासका उसको करना चाहिये जो आप निर्गुण और धनवान् होते इच्छा सहित बड़े उपायोंसे तलवार आदि शस्त्रोंसे• उनगऊ का वधकरै जिसका मालिक श्रोत्रिय ब्राह्मण बड़े कुटुंबसे धनहीन दुर्गति में गिरा होनेपर भी सवनयज्ञमें लगाहो• और वह गाय भी जिन आप कपिला वर्ण में और यज्ञमें कर्मांग भूत मानी गई और गर्भसे संयुक्त और बड़ी दुधार और तरुणाई आदि

गुणों से भी उत्तमहो यह एक व्रत ठहिरा) फिर इस बातका प्रमाण भी मिताक्षराकार देतेहैं कि अत्रोक्त सवगायके विशेषणोंको वृहस्पतिने भी ऐसे कहाहै कि॰गर्भवती और कपिला और दुधार और होमके निमित्त दूध देनेवाली और सुव्रता गऊ कि जिसका दर्शन पूजन आदि सत्कार व्रतके नियम साथ कियाजाताहो ऐसी गाय को तलवार आदिसे वध करिके दुगुना व्रतकरै जो वृहस्पति पहिले सामान्य गऊ के मारने पर कहिचुकेहों तिससे॰ यह विशेष लक्षणवाली गऊके वध करने में विशेष प्रायश्चित्त देखा गयाहै तिससे ऊपरली व्यवस्थाको अनर्थक मत समझना यह मिताक्षराकारोंने कहा॰ फिर कहिते हैं कि (इसी हेतुपर प्रचेताने भी ऐसा कहा है कि॰ गर्भवती नारी और गर्भवती गाय तथा बालक और बूढेका वध करनेवाला भ्रूण हत्या भागी होताहै इस हेतुसे इसी प्रकारके गोवधपर ब्रह्महत्यावाला व्रत भी उन्हीं प्रचेताने अतिदेश उतारा है कि गाभिन आदि गाय का वध करिके ब्रह्महत्या पर कहे व्रतको करै॰ इनबातोंको देखनेसे स्वतः सिद्ध होताहै कि इतना बडा प्रायश्चित्त जो सहस्र गोदान सहित कहागया वह सामान्य गऊके वधपर नहीं चाहिये॰यहां तक यमके कहे एकही बड़े प्रायश्चित्तका निर्णय पूरा हुआ)=तैसाही यम का कहा दूसरा व्रत अन्नके गोशत १०० दान सहित दो महीनेवाला जो ऊपर कहिचुके तिसको कात्यायनके कहे तीनि वर्ष वाले प्रायश्चित्त के साथही जोडिके धनवान् हत्यारेपर आरूढ किया जासक्ताहै यदि कोईसी अत्रोक्त विशेषता भी पापमें पाई जाय अन्यथा नहीं ॥०॥ एक और व्यवस्थाहै कि गौतम ने जो प्रायश्चित्त॰ एक आँडू वृषभ और सौ गायके दान सहित तीनिवर्षका प्राकृत ब्रह्मचर्य रूपी॰ वैश्यका वध करनेवालेको उपदेशके प्रधानतासे कहिकर पीछे गोहत्या पर भी उसीका अतिदेश उतार दिया है (गांचहत्वावैश्यवदिति) इस वचन से—यद्यपि—यहां विचार से यह तात्पर्य ठीक होताहै कि ऊपर जहां सवनस्थ क्षत्री और सवनस्थ वैश्य दोनों की गाय वध होनेपर एकही प्रायश्चित्त केवल शंखजीके वचनसे कहागया तहां पर इस प्रायश्चित्तको सवनस्थ वैश्यकी गाय मारनेसम्बन्धे धनवान् हत्यारेपर आरूढ करें अर्थात् उसीशंखोक्तके साथ इसका बदलधनवान् हत्यारेपर ठहिरायाजाय निर्धन पर नहीं—परन्तु—विज्ञानेश्वर मिताक्षराकारके विचारसे किसी नैवार्षिक व्रतमें कहीं नव्वे९० धेनुके साथगौतमोक्त१०२एकसौएक जोडनेसे१९१सौकाम दोसौसंख्या होती हो या नहो तोभी हजार गऊ सहित दोमहीना वाले व्रतसे यहगौतमका छोटा दीख परताहै तिसहेतुसे इसगौतमके कहेप्रायश्चित्तकोउसप्रकारकी गोहत्यापरसमझिलेना

कि जिस गऊ का स्वरूप इससे पहिले परिच्छेद में कहिचुके परन्तु उस परिच्छेद में लिखे प्रायश्चित्तों से यह गौतम का बडाहै तिसके यह भेद है कि वैसेही स्वरूप वाली गऊका वध कोई इच्छा सहित करै तिसकेलिये समझना अथवा उसीस्वरूप की गऊ यदि गर्भ सहित किसीने इच्छा विना धोखे आदि से वध करी हो तिसके लिये भी समझना॰ और भी जैसी उत्तम गऊ सवनस्थ स्वामीकी हालहीके वर्णन में कहीगई सो यद्यपि गर्भ रहितहो और इच्छाविना मारीगई हो तौभी कात्यायनका कहा तीनिवर्षका प्रायश्चित्त कराना चाहिये अर्थात् जो ऐसी उत्तमगऊ गर्भवती हो तौ इच्छाविना मारीजाने में भी इसी कात्यायनके तीनि वर्षोंसाथ हजारगऊ या सौगऊका दान भी दो महीने के प्रायश्चित्त सहित जोड़िलेना चाहिये जो हत्यारा धनवान् होय यह सब ऊपर वर्णन होचुकाहै परन्तु जिसमें बहुत गौओंका दानहो सो धनवान्का प्रायश्चित्तहै निर्धनको सर्वस्व दानकरना आदि उसकी दशाके अनुसार उपाय सोचिलेना ॥ ० ॥ अथशस्त्रविशेषैर्गोहनन प्रायश्चित्तनिर्णयः—जिस किसीने जैसे शस्त्रोंसे गायमारी हो तिसके भी जुदे जुदे प्रायश्चित्तोंका निर्णय यहां यम के वचनों से लिखते हैं=यदाहयमः=काष्ठलोष्टाश्मभिर्गावःशस्त्रैर्वानिहतायदि प्रायश्चित्तंकथंतत्र शस्त्रेशस्त्रेविधीयते काष्ठे सांतपनंकुर्यात्प्राजापत्यन्तुलोष्टकेतप्त कृच्छ्रं तुपाषाणे शस्त्रेचाप्यतिकृच्छ्रकम् प्रायश्चित्तेततश्चीर्णेकुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् त्रिंशद्गावृषभंचैकंदद्यात्तेभ्यश्चदक्षिणाम्=अर्थात्—जो लाठीलकडी या मट्टीकाढील या पत्थरों से गौयें मारीहों या शस्त्रों से तिनका प्रायश्चित्त कैसेहो॰ तहां जुदे जुदे हथिआर पर विधान किया जाताहै कि जहां काठसे मारीहो तहां सांतपन व्रत करै ढलेसे मारीहो तौ प्राजापत्यकरै पत्थरसे मारै सो तप्त कृच्छ्र करै लोहेके हथिआरसे मारीहो तौ अतिकृच्छ्र करै और प्रायश्चित्तों के पूरे होनेपर ब्राह्मण भोजन करावै औरतीस गौयें तथाएक वृषभऔर दक्षिणा भी उन्हीं ब्राह्मणोंको दानकरै यहविधि इतनी सबके पीछे लगीहै यह समुझिलेना—सो ये यमके कहे व्रत थोरेहैं तिनमें ऐसी दशापर समुझिलेना कि जहां लकडी पत्थर आदिसे गऊको बहुत मारने परभी गऊ प्राणोंसे बचिगईहो तौभी इतना प्रायश्चित्त कराना चाहिये अथवा यदि गऊ इन्हीं हथिआरोंसे मरगई हो तौभी पूर्वोक्त प्रकारोंसे प्रायश्चित्त कायम किये पीछे इन्हीं मे इन वचनों की विशेषता जोड़िलेनी चाहिये इसका यह दृष्टांत है कि जैसे जिस किसीपर पूर्वोक्त कात्यायन के वचनों से तीनि वर्ष का प्रायश्चित्त विधान में ठहिराहो या उसकेसाथ हजार या सौगौयें देनी ठहिरी हों तहां यदि वह भी अनिच्

होजाय कि पत्थरों से मारीगई तो फिर उन्हीं तीनि वर्षोंतक तप्त कृच्छ्रव्रत वारबार करतारहै इसीतरह और भी समुझिलेना परन्तु केवल यहीव्रतकरना असंगतहै॥ २६३॥ २६४॥ इन्ही श्लोकोंकी अधिकोक्ति के शेष पाठमें यह परिच्छेद है॥



अतिवृद्धवालादिगोहनन-बहुकर्तृभिहननाद्यनेक गोवधभेदानां प्रायश्चित्तप्रकाशकोऽयं परिच्छेदः द्विचत्वारिंशः ४२

इस परिच्छेद में गोहत्या के छोटे मोटे अनेक भेदों से प्रायश्चित्त वर्णन होंगे-अर्थात् अति वूढ़ी वालक आदि मारने का प्रायश्चित्त १ और गर्भ गिराने मारिदेनेका प्रायश्चित्त २ एकगायको अनेक मिलिकेमारैं तिनका प्रायश्चित्त ३ ऐवि घेर अनेक गौओंको एकही कोईमारैं तिसका प्रायश्चित्त ४ पुण्यके हेतुसेभी अधि आहार आदि खुलाइके मारैं तिसका प्रायश्चित्त ५ गाय मरजाने योग निमित्त करनेवाले का प्रायश्चित्त ६ इतने उक्त भेदोंके प्रायश्चित्त इसी क्रमसे लिखे जायँगे॥

(अतिवृद्धरोगिन्यादिवधप्रायश्चित्तं)

अतिवृद्धामतिकृशामतिवालांचरोगिणीम हत्वापूर्वविधानेनचरेदर्द्धव्रतंद्विजः ब्राह्मणान्भोजयेच्छक्त्यादद्याद्धेमतिलांस्तथा=अर्थात्-अतिशयवूढ़ीया अतिशय वचा या अतिशय दुर्वल या अतिशय रोगिनि गायको इच्छा विना दैवयोगसे यदि कोई द्विजाती पुरुषवधकरै सो उसव्रतकाआधा प्रायश्चित्त करै जो चालिसके परिच्छेद में निरोगिनिआदिपर कहिचुके-या-जिसने इच्छासहित ऐसीहत्या करीहो सो आधा नहींकिन्तु इन्हीं व्रतोंको पूरा पूरा करै जो विना इच्छाके निरोगिनि आदिकावध होजाने मध्ये चालिसवें परिच्छेद में कहिचुके अथवा उन व्रतों को आधा करै जो इकतालिस के परिच्छेद मे इच्छासहित गोहत्यापर कहिचुके=इसी व्यवस्थामें=वचा के मरने मध्ये वृहत्प्रचेता ने छोटे प्रायश्चित्तों के प्रयोजन से विशेष भेदभी दर्शाये हैं कि बचा कितनी अवस्था का हो=यथाह=एकवर्षेहतेवत्सेकृच्छ्रपादोविधीयते अबुद्धिपूर्वेपुंसःस्याद्द्विपादस्तुद्विहायनेत्रिहायनेचिपादःस्यात्प्राजापत्यमतःपरम=अर्थात्-

लाड़ प्यार से राखते हुयेभी एक वर्ष का बच्चा पुरुष की अज्ञानता में यदि आपही मरजाय (अबनहीं जाना जासक्ता है कि भूख पियास आदि किस हेतु से मेरी ग़फ़लत में मरगया)ऐसी दशा में केवल कृच्छ्र प्राजापत्य व्रतका एक पाद चौथाई व्रतकिया जाता है जो तीनिही दिनमें निपटि जाय॰ इसी प्रकार दो वर्षका बच्चा मरजाने में दो पादव्रतकिया जाय जो छै दिन में निपटै॰ इसी ढंग से तीन वर्ष का बच्चा मरजाने से तीनि पाद व्रत कियाजाय जो नौ दिनमें निपटै (अतःपरंप्राजापत्यं) जो तीनिवर्ष से अधिक अवस्था का बच्चा मराहो तौ पूराही प्राजापत्य व्रत करना चाहिये जो बारह दिनमें होता है (इससे ऊपर के वचनों में जो अति बालक बच्चा के मरने पर बड़े प्रायश्चित्तोंका आधा व्रत करना कहा जो यहां के पूरे से भी बहुत बड़ा व्रतहोता है तिसका यह कारण है कि (वहांपर हत्या और यहां पर बच्चेहत) इन क्रियाओं के अर्थ भेद सोचौ कि वहाँ तौ इच्छा बिनाभी पुरुष के हाथ से बच्चा मरने का प्रायश्चित्तहै यहांपर ग़फ़लतसे आपही मरजाने मध्ये छोटे प्रायश्चित्तहैं ॥ ० ॥ गोगर्भनिपातनप्रायश्चित्तं—गर्भिणी गाय मारनेसे गर्भके हतहोजानेमें पापका दूसरा निमित्त खड़ा होताहै कि इसपर दो प्रायश्चित्त कराने चाहिये सो इस गर्भके प्रायश्चित्त पर एक जुदी व्यवस्था है जो षट्त्रिंशन्मत नामके शास्त्र में विशेष ब्यौरासे वर्णन करी गई है=यथा=पादउत्पन्नमात्रेतुद्वौपादौदृढतांगते पादोनंव्रतमुद्दिष्टंहत्वागर्भमचेतनम् अंगप्रत्यंगसंपूर्णोगर्भेचेतःसमन्विते द्विगुणंगोव्रतंकुर्यादेषागोघ्नस्यनिष्कृतिः=अर्थात्—गर्भजो पेटमें हालही जमि चुकाहो तिसके माताके साथ हनन होजाने में सवाया प्रायश्चित्त कराना चाहिये परन्तु जो गर्भ कुछ मज़बूत भी होचुका हो तिसके मध्ये ड्योढ़ा प्रायश्चित्त और जिस गर्भ को चेतना अबतक नहीं उत्पन्नहुई पर बढ़वारी में पूरा पिंड होचुका हो तिसके मध्ये पौनदूना अर्थात् तीनपाद अधिक प्रायश्चित्त चाहिये परन्तु जो गर्भ अपने अंग और प्रत्यंगों से युक्त होकर चेतना से भी संयुक्त हो अर्थात् पेटमें चलता फिरता भी हो तिसके वध होजाने से पूराही दूना प्रायश्चित्त चाहिये किएक उसका और एक उसकी माता का यह दोनों निरन्तर एक साथही दूनी अवधिमें साधन किये जायँगे दोबारमें नहीं—अथवा किसी दशा मेंयदि गर्भका विनाश होकर माता बचिजाय तहां माताके निमित्तका प्रायश्चित्त छोड़िके इसी उक्त हिसाब से एक पाद या दोपाद या तीनि पाद या पूराही प्रायश्चित्त किया जाय किन्तु ऊर्ध्वोक्त छोटे बच्चे वाले छोटे प्रायश्चित्त इसमें उचितन होंगे॥ ० ॥ बहुकर्तृकहननप्रायश्चित्तं—जहां अनेकों ने मिलिकर गऊ मारी हो

तिसके मध्ये संवर्त्त और आपस्तंब दोनोंने एकही तुल्य विशेषता कहीहै=यथा=एका चेद्बहुभिःकाचिद्दैवाद्व्यापादिताक्वचित् पादंपादंतुहत्याया श्चरेयुस्तेपृथक्पृथक्= अर्थात्—कोई एकही गऊ कहीं दैवयोगसे बहुतों ने मारीहो तो वे सभी हत्यारे लोग प्रायश्चित्तकी एक एक चौथाई जुदेजुदे जाकर करें परन्तु यह नियम उसी दशापर समझा जासक्ता है कि जहां मारनेवाले अधिक संख्यामें चाहैं जितनेहैं पर चारिसे कमनहैंक्योंकि दोके उपरान्त तीनि को आदिलेकर बहुत्व कहाताहै जहां तीनिही पुरुषोंने मारीहो एक एकपाद करने से तीनिही पाद प्रायश्चित्तके होंगे चौथाशेष रहिजायगा तिनसे दो या तीनि पुरुषोंके होनेमें दो दो पाद उसीप्रायश्चित्तकेकराये जायँ जो उस भाँतिकी गऊमध्ये पहिले वर्णन होचुकाहो एवं पाँच पुरुषोंको आदि लेकर निःसंदेह एक एक पाद कराया जाय और जैसा एक गाय पर कहिचुकेतैसा जहां दोगौओंको अनेक मिलिकेमारें तिनसे दो दोपाद प्रायश्चित्त कराना चाहिये— परन्तु तीनि आदि अनेक गौओं को अनेक जने मिलिके मारें तहां निर्विकल्प यही नियम जानों कि मारने वाले सब जुदे जुदे तीनि पाद अर्थात् पौन पौन प्रायश्चित्त आचरैं—यह सब नियम इच्छा के विना वध करने का समझना क्योंकि श्लोक में दैवात् दैवयोग से मरजाना कहा गया=तिससे=जहां इच्छा सहित अनेकोंने मिलि के एक गाय का वध कियाहो तहां सब जुदे जुदे पूराही प्रायश्चित्त करें कि जैसे सत्र यज्ञ कार्य में अनेकों का मिलाप प्रत्येक जुदे पुरुष को व्यापार साधन करनेका पूरा फल होता है तैसे ये सब हत्यारे भी पूरे पापके भागी होते हैं बल्कि व्यवहार कांड में (एकंघ्नतांबहूनांतुयथोक्ताद्द्विगुणोदमः) यह दण्ड के स्थलपर कहा गयाहै कि यदि एकही मनुष्य को बहुत जने मिलिके मारैं तिन सबको दूना दण्ड देना चाहिये जो मनुष्यके मारनेका दण्ड लिखाहो तिससे—इस प्रमाण से भी सब जुदे जुदों को पूरा प्रायश्चित्त सूचित होताहै ॥ ० ॥ रोधादिनानिमित्तसमुदायहननप्रायश्चित्त—रूँधने बांधने आदि प्रकारोंसे एकही ने बहुतसी गौएँ मारडालीहों तिसके मध्ये संवर्त्त और आपस्तंब दोनोंने एकही तुल्य विशेषता कहीहै=यथाह्यु=व्यापन्नानांबहूनांतुरोधनेबंधनेतथा भिषङ्मिथ्योपचारेचद्विगुणंगोव्रतंचरेत्=अर्थात्—रूँधने या बांधने में जो बहुतसी गौएँ मारडाले और भी विरोधी चिकित्सा के उपचार मे जो गाय बैल मरजाय तिसको भी दूना प्रायश्चित्त करना चाहिये यही नियमहै— अर्थात् ऐसी दशामें बहुतोंके मरजाने परभी प्रत्येक जीवहानि का जुदा प्रायश्चित्त नहीं कियाजासक्ताहै (और तंत्रात्मक न्याय की प्रबलतासे एकभी नहींकरताग्रोरय)

/

तिससे इसीअग्रोक्त वचन के बलसे दुगुनाही व्रत करना चाहिये कि जैसी प्रतिष्ठा वाली एकगाय के मरजाने पर पहिले वर्णन होचुका हो उसी प्रतिष्ठा वाली एक जनेसे अनेक मरजायँ तिनमें सिर्फ दूनाकरै॰ तथैव इसी अग्रोक्त वचन के बलसे गौओं का चिकित्सक भी विरोधी दवादारू आदि करने से इच्छा विनाही अनेक वा एक भी गऊका प्राण विनाशै सो दूना व्रत करै—यहां पर इच्छा बिनाभी गोवध होजाने में बहुत बड़े प्रायश्चित्तों का दुगुना करना कहा तिसका हेतु केवल बहुत गौसें एक साथही मरजाना समझ लेना॰ अन्यथा रोध बंधन आदि से एकही मरजाने मध्ये छोटे प्रायश्चित्त हैं सो अगिले परिच्छेद में देखना ॥ ० ॥ आहाराद्याधिक्येनापिगो हननप्रायश्चित्तं—पशुवैद्यसे उपराल जो कोई केवल उपकार के निमित्त से ही विप रीत औषध आदि कुछ देकर इच्छा बिनाभी यदि प्राण हरै तिसके मध्ये व्यास का अग्रोक्त वचन है=यदाह व्यासः=औषधंलवणांचैव पुण्यार्थमपिभोजनम् अतिरिक्तं नदातव्यं कालेस्वल्पंतुदापयेत् अतिरिक्तेविपत्तिश्चेत्कृच्छ्रपादोविधीयते=अर्थात्—दवाई या नमक जो पशुओं को दियाजाता है या कोई अपने पुण्यकेलिये अच्छा भोजन श्राद्धके पिंड आदि वा सूखानाज आदि कुछ खवानाचाहै सो अनुचित समय पर भूख परिमान और डील डौल के अनुमान से अधिक न खवावै यह शिक्षा देकर कहिते हैं कि नमक हलदी तेल आदि कोई चीज हितके लिये रोज रोज कल्प के विधान से जो देनी परै सोभी उचित परिमान से कुछ कम करिके ठीक समय पर देना चाहिये जो हजम होके गुण करसके—अन्यथा जहां बहुत खवाइ देने आदि से यदि गायकी प्राण हानि होजाय तहां कृच्छ्र व्रतकी एक चौथाई प्रायश्चित्त कराया जाता है ॥ ० ॥ निमित्तकर्तुः प्रायश्चित्तप्रसंगात् रोधादिषुविशेषोक्तिः—अंगिरा ने रोधबंधन आदि से मरन में विशेषता कही है तिसका ब्योरा समझना चाहिये=यथाहांगिराः=पादमेकंचरेद्रोधेद्वौपादौबंधनेचरेत् योजनेपादहीनंस्याच्चरेत्सर्वं निपातने इति (सद्व्यवहितव्यापारिणो निमित्तकर्तु र्विज्ञेयंनसाक्षात्कर्तुः=अर्थात्—रुँधि के मारने में एक चौथाई व्रत करै और बांधने से मारने में आधा प्रायश्चित्तकरै और दोहरे को वहरा जोड़ने से अर्थात् जोंध में जुड़ा रहिजाने आदि किसी हेतु से मरजाने में एक चौथाई छोड़ि शेष तीनि पाव प्रायश्चित्तकरै और निपातन अर्थात् ऊँचे नीचे गिराइके मारने से पूराही प्रायश्चित्त करै (यह तीनि सहीना वाले तप को कहे प्रायश्चित्त की योग्यता यहां समझो जो २६५ की अग्रिमोक्ति में कहि चुके हैं) यह अंगिराने कहा—सो इसलिये समझना जो साक्षात्कार हत्यारा न हो

किन्तु—निमित्त कर्तात्वय होय—निमित्त कर्त्ता का स्वरूप ब्रह्महत्या के प्रकरण में आचुका है कि ब्राह्मण का मारना नहीं चाहता था पर किसी तरहसे खिझाने लगा या गाली आदि अपमान करनेलगा तिससे ब्राह्मण आप उसके हेतुसे मरगया तो वह निमित्तकर्त्ता हत्यारा ठहिरा—तैसा यहांपर भी समझलेना कि यद्यपि गाय को मारना नहीं चाहा परन्तु ऐसा कोई निमित्त पैदा कि जैसा अपने घर खेत आदि पर आती देखि संकट का मार्ग होतेहुये तीव्र वेग से खेदिकर ललकार मारी या गाय का पीछा किया जिससे वह घबड़ा कर किसी ऊँचे नीचे या जल अग्नि आदिमें आपही गिरिके मरी तो यह निमित्तीहत्यारा ठहिरा॰ यद्वा इन ढंगों से भी मौतका निमित्त होता है कि जंगल में चराते या बांधते छोरते समय ग्वालिया को किसी तरह का झूठ धोखा देवै कि इधर के मूंजवन में तेरा एक बछा कुत्ते खींचे लिये जाते हैं जल्दी दौड वह घबड़ा कर उधर भागा इधर सिंह वा भेड़िये ने आकर एक गाय मार डाली तो यह धोखा देने वाला यद्यपि साक्षात् हत्यारा नहीं है पर निमित्ती हत्यारा ठहिरा इत्यादि नाना प्रकार से निमित्त पैदा होसक्ते हैं किन्तु (साक्षात् हत्यारा जो खैंचिबांधि आदि किसी प्रकार से बहुत गाय मारैं तिसको दूना प्रायश्चित्त ऊपर कहिचुके हैं संवर्त्त और आपस्तंव के वचन में देखो)—यहां पर—मिताक्षराकार कुछ औरही प्रकारसे मुख्य कर्त्ता और निमित्ती कर्त्ता के लक्षण भेद बताते हैं और ऐसा कहिते हैं कि दोनोंका भेद उन्हीं अंगिराने दर्शाया है सो उनका दूसरा वचन आगे देखो=यथाहांगिराः(पाषाणैर्लकुटैर्वापि शस्त्रेणान्येनवाबलात् निपातयंतियेगास्तुकृत्स्नंकुर्युर्व्रतंहिते तथैववाहुजंघोरु पार्श्वग्रीवांघ्रिमोटनैरिति) इस वचनका अर्थ तो प्रत्यक्ष यहीहै कि—पत्थरों या लाठियों या और किसी शस्त्र से जबर्दस्ती जो कोई गौसें विनाश करैं वे पूराही व्रतकरैं तथा वे भी पूरा व्रतकरैं जो गायकी बाहैं जांघ घूटे पँशुली आदि और गर्दन खुर चरण इनको सिरोड़ा देकर मारैं (यद्यपि सब तरहके गोवध परप्रायश्चित्त वर्णन होचुके हैं तिससे इस क्रमेल विशेषणों वाले वचनमे प्रयोजन भी कुछ नहींरहा क्योंकि जिसने दुर्जनता से इच्छा सहित गाय मारनी चाही तिसने चाहैं तैसे मारी सर्वथा हत्यारा ठहिरा उसके लिये दुगने और बड़े बड़े प्रायश्चित्त कहिचुके तो फिर यहां पूरा और अधूरा कहिना वृथाहै) इस योथरी दशाके होनेपर भी हमारे परमपूज्य गुरु मिताक्षराकार अपना मनमौजी नटक इसी वचनके साथ आगे लिखते हैं कि जिसमें प्रत्यक्ष एकही अर्थ ऊपर लिखागया उसी पहिला ववा खींचकर दो भेद खड़ेकरते हैं सो देखो=यथा

हुर्मिताक्षराकाराः (अयैतदुक्तंभवति पाषाणखड्गादिभिर्ग्रीवामोटनादिनावायेगां निपातयंति तेसाक्षाद्धन्तारस्तेष्वेव कृत्स्नंप्रायश्चित्तं॰ येतुव्यवहितरोध बंधादिव्यापारयोगिनस्तेनिमित्तिनः तेषांनकृत्स्नव्रतसंबंधः किन्तु तदवयवैरेकपादद्विपादादिभिरिति॰ तत्ररोधादीनांव्यवहितव्यापारत्वाविशेषेपि क्वचित्पादं क्वचिद्द्विपादं पादोनंक्वचिदितियुक्तं)=अर्थात्—यहाँ अंगिराके वचनपर ऐसा कहीं कहा है कि पत्थर तलवार आदिसे या गर्दनि मिरोडने आदि प्रकारोंसे जो लोग गायको विनाश करते हैं वे साक्षात् मारनेवाले हत्यारे कहाते हैं उन्हीं में पूरा प्रायश्चित्त चाहिये॰ और जे कोई ढँकेहुये रोध बंधन आदि उपाय मिलाने वाले हों सो निमित्ती कहाते हैं उनके लिये पूरे व्रतकी योग्यता नहींहै किन्तु रोध बंधन आदि पूर्वोक्त उसके अंग भेदोंसेही एक पाद या दोपाद आदि व्रत चाहिये जैसा इन्हीं अंगिराके पहिले वचन में ऊपर कहिचुके॰ तहां रोध बंधन आदि जोजो निमित्त कहेगए तिनमें यद्यपि ढँके उपायों का विशेषता कोई नहींहै तौभी उस वचनको यहाँपर निमित्तीके साथ मिलानेकी गरजसे अन्योक्त वचनके अनुसार वहाँ भी यही समझिलेना कि ढँकेहुये उपायों वाले निमित्तीके लिये वहां एकपाद दोपाद कहीं तीनपाद प्रायश्चित्त ठीक होगा (ध्यानकरो यह दूसरी भाँति के निमित्ती वाली व्यवस्था अंगिरा के पहिले वचनसे खींचिके बनाई गई जिस निमित्तीकी ग़र्ज़ से उस ऊपरले पहिले वचन का सचा अर्थ भी बिगडने लगा॰क्योंकि यहाँ पर ढँके हुये उपाय करने वाला निमित्ती ठहिराया गया ढँकेहुये उपाय भी ऐसे ढंगोंसे होतेहैं कि जैसे जिस मार्गमें रातिको बेखटके गौयें निकसा करतीहों उसी मार्गमें कोई दुर्जन ऐसा ढँका उपाय रचिराखै कि जैसी हाथी पकड़नेको ओगी पाटी जातीहै उसमें गिरिके गाय मरजाय अथवा बहुतसे सूखे घास फूसके स्थानपर जहांगौयें सोती बैठतीहों तहां कोई दुष्ट जो छिपि के आगि लगादेवै जिससे गौयेंजलिमरें तौ यह दोनों भाँतिके ढँके निमित्ती ठहिरे परन्तु ऐसे दुर्जन आततायियोंको क्योंकर एक पाद दो पाद आदि छोटे प्रायश्चित्त कहेजाशक्ते हैं किन्तु ऐसे महापापियोंको द्विगुणा चतुर्गुणा प्रायश्चित्त कहेजायँ सो भी थोड़े हैं—और ऊपर (पादमेकंचरेद्रोधे इत्यादि) इस अंगिरा के वचन में जो निमित्ती कहेगए तिनके निमित्त सब खुलमखुला करते हैं जिनसे प्रायश्चित्त कोई योग्य नहीं खासक्ता और यथार्थमें उनके किये खुला निमित्त इस भांतिसे नहींहोते कि गायको मरवाइ डारैं केवल वे अपनी निर्बलता या मोहके स्वभाव से निमित्त पैदा करते हैं तिससे दैवयोगसे यदि गायके प्राण छूटिजायँ तिनहीं निमित्तों ठहिरके एक

दो पाद आदि प्रायश्चित्तके भागी होजाते हैं—इसके सिवाय—उस ऊपरके निर्लेप वचनको खींचिके ऐसे वचनके साथ जोडिलेना जिसमें पत्थर हथियार आदिसे और गर्दनि आदि अंगोंको तोडि मडोरिके मारने वाले निर्दयी कसाइयोंका चर्चाहै यह कोई वात व्याख्यात्मक नहीं देखि परतीहै बल्कि विचारसे वह पत्थर आदिवाला वचन अपने मूलरूपहीसे निरर्थक है तिससे इतनी वडी व्यवस्थामें कोई ठीकठीक सारांश नहीं पाया गया=अथवा=ऊपर जो मिताक्षराकार ने संस्कृत व्यवस्था में यह लिखाहै कि (येतुव्यवहितरोधवंधादिव्यापारयोगिनः तेनिमित्तिनः तेषांनक्षत्रव्रतसंबंधः) इस पंक्ति का ऐसा अर्थ लगाया जाय कि• जे कोई लोग व्यवहित अर्थात् दीवार आदि किसीआडमें या दूसरे सूनेमकान गौहरघेरे आदिमें गौओंको छुट्टा छांडिके या रस्सी आदिसेबाँधिके आप जुदे स्थानआदि पर व्यापार धंधोंका योग प्रवंध करते रहैं कि जिन धंधोंकी भूलमें अकेली बँधी गौओंके प्राण किसी प्रकारसे जातेरहैं तो यह भूलवाले रक्षक या मालिक निमित्ती होतेहैं अर्थात् साक्षात् हत्यारे तो नहींहैं परन्तु निमित्त रूपी हत्याके प्रायश्चित्ती होतेहैं क्योंकि बेखवरीका निमित्त उनपर ठहिरा—फिर इस अर्थके अनुसार अंगिराके सबसे पहिले वचनमें इस तरहसे व्यवस्था जोडीजाय कि रूंधनेसे मरीहोय तो एकपाद व्रत करै (यह एकपाद २२॥ साढे वाइस दिनमें होताहै) जो बँधीहुई मरी होय तो दोपाद किन्तु आधा प्रायश्चित्त करै जो टाँगमें वधा वँधा रहिजानेसे मरीहोय तो तीनपाद व्रतकरै जो ऊँचे नीचे गिरायके मारीहो तो पूरा प्रायश्चित्त करै जैसा हाथसे मारने मध्ये कहिचुके हैं—तो इस व्याख्यासे सारांश यद्यपि निकसता है (तथापि दूसरे पत्थर लाठी हथियार वाले असंगत वचनको इसके साथ जोडना कुछ सारांश नहीं है क्योंकि वैसे मारनेवाले निपट कसाई समझने चाहिये तिनके लिये प्राणांतिक प्रायश्चित्तकी योग्यता पाई जातीहै क्योंकर पूरा व्रतमात्र उनको कहैं) और दूसरा यह विरोध खडा होताहै कि जिस प्रकारके निमित्ती इस व्याख्यामें कहेगए तिनके लिये भूलमात्रका प्रायश्चित्त आगे पराशरके वचनसे छोटासा प्राजापत्य मात्र मानिके एकसा कहा जायगा और संवर्तके पहिले वचनमें वडे प्रायश्चित्तकी चौथाई और आधा और पौना कहे गए तिनकी चौथाई भी (साढेवाइस दिन) प्राजापत्यसे वहुत वडी होतीहै फिर आधा और पौना यहाँ भूल गफ़लत के ऊपर कैसे ठीक ठहिरै—तिससे जिस प्रकारके निमित्ती ऊपर संवर्त वाले पहिले वचनके साथ कहिचुके तिनके लिये तथोक्त प्रायश्चित्त ठीक प्रतीत होतेहैं क्योंकि वे निमित्त

पैदा करने के हेतुसे एक प्रकारके मध्यम अपराधी समझेजाते हैं यह जानो ॥ और शूने मकानमें अकेली बँधी रहिना आदि छोटी छोटी बातें ऐसी बहुत हैं जिनसे भूल वा अज्ञानतामें मरजाने के छोटे छोटे प्रायश्चित्त हैं सो सब अगिल परिच्छेद में पराशर और आपस्तंब और संवर्त आदिके वचनोंसे देखना ॥ २६५ ॥ इसी मूलश्लोक वाली टीकासे यह पाठ चला आता है ॥ २६५ ॥

अथबंधनयोक्त्रदाहवाह्यादिकर्मसुबहुविधव्यतिक्रमभेदोपपातकानांप्रायश्चित्त प्रकाशकोऽयंपरिच्छेदः त्रिचत्वारिंशः ४३॥

——*——

इस परिच्छेदमें केवल बिरली बातें छोडिके सर्वथा अनपेक्षित गोसरक्षाकाचर्चाहै कि यद्यपि किसीने मारना या मरना नहींचाहा परंतु दैवयोगसे बाँधने छोड़नेजोड़ने जोतने बाहने दागने आदि जरूरी कर्मोंके धंधोंमें व्यतिक्रम होजानेसे कोईबैल गाय मरजाय तहाँ रक्षक या स्वामीको उपेक्षाके पलटे कुछ प्रायश्चित्त करना होता है॰ तिसके भेद सबक्रमसे आगे आवेंगे—तहां प्रथम बांधने छोरने आदि बातोंका १ फिर दागने बाहने आदि का २ फिर घंटा बांजके मरने का ३ जंगल आदिमें रखवारी की भूलका ४ कहीं चिकित्सा आदि करते मरजाने का दोषाभाव ५ कहीं हाड आदि टूटिके न मरने सें भी प्रायश्चित्त ६ बिरानी मारी गायके मोल देने का नियम ७ गोवधके पहिले तीनों परिच्छेद वाले प्रायश्चित्तोंका निर्णय वर्णोंके भेदसे ८ फिर स्त्री बालक बूढे रोगी आदिके प्रायश्चित्त भेद ९ ॥

(बन्धन योक्त्रादिभिर्मरणेप्रायश्चित्तं)

ऊपरले परिच्छेद में जो अंगिराके वचनसे गाय बाँधते दुहते आदि समयपर मर जाना कहा सोतौ केवल उपराजू निमित्ती का प्रायश्चित्त था कि यदि कोई और किसी निमित्त को उन्हीं समयों पर उत्पन्न करे=अर्थात=इस परिच्छेद में साक्षात प्रधान कार्योंके प्रयोजन से बाँधने छोरने आदिके नियम कहेजायँगे कि—बैल या गौओं की नाथ गरखोल आदि बंधनसे यदि किसीके प्राण भी जातेरहें तिनका प्रायश्चित्त

पराशरनेकहाहै=यथाह पराशरः=गवांबंधनयोक्त्रैस्तुभवेन्मृत्युरकामतः अकामकृतपापस्यप्राजापत्यंविनिर्दिशेत् प्रायश्चित्तेततश्चीर्णेकुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् अनडुत्सहितांगांचदद्याद्विप्रायदक्षिणाम् (अयंचप्राजापत्योयदिरक्षार्थदेकंठत्वात्तज्जन्यप्रमादपरिजिहीर्षया प्रत्यवेक्षमाणआस्ते तदाद्रष्टव्यः अकामकृतपापस्येति विशेषणोपादानादितिमिताक्षराकाराः)=अर्थात्–जो बांधने जोडने आदि कारणोंसे बैल वा गौओंकी मौत विनाकामनाकेहोजाय तो इसअकामकृतपापका प्रायश्चित्त प्राजापत्यकराया जाय जो सिर्फ बारह दिन में एक होता है फिर प्रायश्चित्त पूरा होजाने बादि ब्रह्मभोज करै और आँडू वृषभ सहित एक गोदान तथा और भी दक्षिणा ब्राह्मणों को देवै–इस वचन में बंधन गरखोल आदि और योक्र बैलों के जोत इन दोही नाम के होने परभी तृतीया विभक्तिके बहुत्व से प्रयोग रक्खा गया तिसका यह तात्पर्य है कि इन्हीं दोबातों के तुल्य जो और बातें होतीहैं तिनकोभी समुझि लेना कि जो जो पहिले संवर्त के वचन में भी आचुकी हैं रूँधना बांधना आदि और इसी प्रकारकी और बातोंको भी लोक वार्ता से सोचि लेना जिनमें केवल भूल गफ़लतसे मरजाना होसक्ताहो तिससे पूलोक में बहुत्व का कुछ दोष नहीं बल्कि (गवांबंधनयोक्त्राद्यैः) ऐसा पाठ भी होसक्ता है–मिताक्षराकार इस पराशरके वचन परभी व्यवस्था देते हैं कि (यह प्राजापत्यरूपी छोटा प्रायश्चित्त उसकेलिये समझना जिसने गौओंको प्रयोजनवाले रोध बंधनआदिमें रखकर उनके उपद्रवोंकी रखवारी करने को आप भी मौजूद रहा हो ऐसी दशा में जो किसी उपद्रव के उठने से गाय बैल मर जाय क्योंकि पूलोकमें अकामकृत पापका विशेषणहै तिससे) परन्तु (जो आप चौकसी के लिये मौजूद न रहाहो और गैरहाजिरी मे उपद्रव उठके गाय मरीहो तो इस निमित्ती के लियेभी वेही पूर्वोक्त संवर्त के वचन वाले प्रायश्चित्त चौथाई वा आधा या पौना वा पूरा जो कुछ दशा के अनुसार ठीकहो सो करवाया जाय॰सोयहचौथाई आदि पूरे तीन महीना वाले प्रायश्चित्त से लेनीचाहिये अर्थात् एकपाद के २३॥ साढे बाइस दिन होते हैं दोपाद के पैंतालिस ४५ दिन तीन पाद के सवा दो महीने और पूरे के तीन महीने यह भी मिताक्षराकारों ने कहाहै यथा (त्रैमासिकपादांकिञ्चिदधिक द्वाविंशत्यहर्गोवध्वव्रतंकुर्यादितिमिताक्षराकाराः)=यहांभी=निर्णय करने का स्थलहै कि पराशरके वचनमें (अकामकृतपापस्य) इस विशेषणसे यह बात नहीं सिद्ध होती है कि जो कोई उपद्रवों का बचाना चाहिके गौओं की रक्षा करने पर मुस्तैद रहा तोभी दैवयोग से कोई गाय मरजाने से उसके ऊपर प्रायश्चित्त लगाया

जाय क्योंकि धर्म की मर्यादा भी लोकवर्ता से विरोधी नहींहोती बल्कि लोकहीसे सब धर्म सिद्ध होते हैं कहीं ऐसा नहीं देखा कि स्वतः दैव योग के उपद्रवों में गायमर जानेपरभी रक्षक यामालिक पर प्रायश्चित्त लगायाजाय जबकि वह अपनी ओरसे चौकसाई पर मौजूद बना रहा तो फिर दैवीगति के उपद्रवों में उसका क्या दोष है (इसके लिये (यंत्रणोगोश्चिकित्सार्थे इत्यादि) यह संवर्त का वचन आगे आवैगा सो चार पाँच पाठों को छोडिके कुछ दूर जाकर ढूंढो तहां अर्थोंको देखिके संदेह जाता रहेगा) तिससे पराशरके वचन में तात्पर्य केवल यहीहै कि जिसके सन्मुख मौजूद न रहिने आदि भूल गफ़लतमें उपद्रव खड़ा होनेसे यदि कोई गाय मरजाय तो हाजिर न रहिने के प्रमाद का अपराध उसपर आता है इसीसे अकामकृत पाप उसका ठहिरा कि गाय मरजाने की कामना उसके नहींथी परन्तु कामनाके विना भी गफ़लत से पाप उसने कमाया तो यह छोटा पाप ठहिरा इसीलिये बारह दिन का प्राजापत्य और वृषभ गायका जोड़ा दान और दक्षिणा सहित ब्रह्मभोज करना पराशर ने कहा (यह निर्णय पहिले संवर्त के वचन वाली व्याख्या में भी सब से अन्त में आचुका तहां देखो॥ ० ॥ अतिदाहवाहनादिभि र्मरणेगुरुप्रायश्चित्तं—जहां किसी को दाह देनेके प्रयोजन में अत्यंत दाह दियाजाने या अतिशयवाहने जोतने आदि बहुधा ऐसे कामोंमें उज ढपनसे कोई गाय बैल मरजाय तिसके प्रायश्चित्त ऊपरले प्रायश्चित्तसे बड़े हैं सो आपस्तंबके वचनसे देखो=यथाहआपस्तंबः= अतिदाहातिवाहाभ्यांनासिकाछेदनेतथा नदीपर्वतसंरोधेमृतेपादोनमाचरेत् (अत्र तु लक्षणमात्रोप योगिना दाहेन दोषः) अन्यत्रांकनलक्षाभ्यांवाहनेमोचनेतथा सायंसंगोपनार्थंचनदुष्येद्रोधवंधने इतिपराशरस्मरणात् (अंकनंस्थिरचिह्नकारणंलक्षणंसंप्रतीपलक्षणंवाहनेशास्त्रोक्तमार्गेणेतिमिताक्षरा=अर्थात्—

पराशरनेकहाहै=यथाह पराशरः=गवांबंधनयोक्रैस्तुभवेन्मृत्युरकामतः अकामकृतपापस्यप्राजापत्यंविनिर्दिशेत प्रायश्चित्तेततश्चीर्णेकुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् अनडुत्सहितां गांचदद्याद्विप्रायदक्षिणाम (अयंचप्राजापत्योयदिशोधादिकंकृत्वातज्जन्यप्रमादपरिजिहीर्षयाप्रत्यवेक्षमाणआस्ते तदाद्रष्टव्यः अकामकृतपापस्येति विशेषणोपादानादितिमिताक्षराकाराः)=अर्थात्–जो बांधने जोडने आदि कारणोंसे बैल वा गौओंकी मौत विनाकामनाकेहोजाय तौ इसअकामकृतपापका प्रायश्चित्त प्राजापत्यकराया जाय जो सिर्फ बारह दिन में एक होता है फिर प्रायश्चित्त पूरा होजाने बादि ब्रह्मभोज करै और आँडू वृषभ सहित एक गोदान तथा और भी दक्षिणा ब्राह्मणों को देवै–इस वचन में बंधन गरखोल आदि और योक्र बैलों के जोत इन दोही नाम के होने परभी तृतीया विभक्तिके बहुत्व से प्रयोग रक्खा गया तिसका यह तात्पर्य है कि इन्हीं दोबातों के तुल्य जो और बातें होतीहैं तिनकोभी समुझि लेना कि जो जो पहिले संवर्त के वचन में भी आचुकी हैं रूँधना बांधना आदि और इसी प्रकारकी और बातोंको भी लोक वार्ता से सोचि लेना जिनमें केवल भूल गफलतसे मरजाना होसक्ताहो तिससे श्लोक में बहुत्व का कुछ दोष नहीं बल्कि (गवांबंधनयोक्राद्यैः) ऐसा पाठ भी होसक्ता है–मिताक्षराकार इस पराशरके वचन परभी व्यवस्था देते हैं कि (यह प्राजापत्यरूपी छोटा प्रायश्चित्त उसकेलिये समझना जिसने गौओंकी प्रयोजनवाले शोध बंधनआदिमें रखकर उनके उपद्रवोंकी रखवारी करने को आप भी मौजूद रहा हो ऐसी दशा में जो किसी उपद्रव के उठने से गाय बैल मर जाय क्योंकि श्लोकमें अकामकृत पापका विशेषणहै तिससे) परन्तु (जो आप चौकसी के लिये मौजूद न रहाहो और गैरहाजिरी में उपद्रव उठिके गाय मरीहो तो इस निमित्त के लियेभी वेही पूर्वोक्त संवर्त के वचन वाले प्रायश्चित्त चौथाई वा आधा वा पौना वा पूरा जो कुछ दशा के अनुसार ठीकहो सो करवाया जाय॰सोयहचौथाई आदि पूरे तीन महीना वाले प्रायश्चित्त से लेनीचाहिये अर्थात् एकपाद के २२॥ साढे बाइस दिन होते हैं दोपाद के पैंतालिस ४५ दिन तीन पाद के ढना दो महीने और पूरे के तीन महीने यह भी मिताक्षराकारों ने कहाहै यथा (त्रैमासिकपादांकिञ्चिदधिकं द्वाविंशत्यहर्गोवधव्रतंकुर्यादितिमिताक्षराकाराः)=यहांभी=निर्णय करने का स्थलहै कि पराशरके वचनमें (अकामकृतपापस्य) इस विशेषणसे यह बात नहीं सिद्ध होती है कि जो कोई उपद्रवों का बचाना चाहिके गौओं की रक्षा करने पर समुद्यत रहा तौभी दैवयोग से कोई गाय मरजाने से उसके ऊपर प्रायश्चित्त लगाया

जाय क्योंकि धर्म की मर्यादा भी लोकवर्ता से विरोधी नहींहोती बल्कि लोकहीसे सब धर्म सिद्ध होते हैं कहीं ऐसा नहीं देखा कि स्वतः दैव योग के उपद्रवों में गायमर जाने परभी रक्षक यामालिक पर प्रायश्चित्त लगायाजाय जबकि वह अपनी ओरसे चौकसाई पर मौजूद बना रहा तो फिर दैवीगति के उपद्रवों में उसका क्या दोष है (इसके लिये (यंत्रणोगोश्चिकित्सार्थे इत्यादि) यह संवर्त का वचन आगे आवैगा सो चार पाँच पाठों को छोडिके कुछ दूर जाकर ढूंढो तहां अर्थोंको देखिके संदेह जाता रहेगा) तिससे पराशरके वचन में तात्पर्य केवल यहीहै कि जिसके सन्मुख मौजूद न रहिने आदि भूल गफ़लतमें उपद्रव खड़ा होनेसे यदि कोई गाय मरजाय तौ हाजिर न रहिने के प्रमाद का अपराध उसपर आता है इसीसे अकामकृत पाप उसका ठहिरा कि गाय मरजाने की कामना उसके नहींथी परन्तु कामनाके विना भी गफ़लत से पाप उसने कमाया तो यह छोटा पाप ठहिरा इसीलिये वारह दिन का प्राजापत्य और वृषभ गायका जोड़ा दान और दक्षिणा सहित ब्रह्मभोज करना पराशर ने कहा (यह निर्णय पहिले संवर्त के वचन वाली व्याख्या में भी सब से अन्त में आचुका तहां देखो ॥ ० ॥ अतिदाहवाहनादिभि र्मरणेगुरुप्रायश्चित्तं—जहां किसी को दाह देनेके प्रयोजन में अत्यंत दाह दियाजाने या अतिशयवाहने जोतने आदि बहुधा ऐसे कामोंमें उज ढपनसे कोई गाय बैल मरजाय तिसके प्रायश्चित्त ऊपरले प्रायश्चित्तसे बड़े हैं सो आपस्तंबके वचनसेदेखो=यथाहआपस्तंबः= अतिदाहातिवाहाभ्यांनासिकाछेदनेतथा नदीपर्वतसंरोधेमृतेपादोनमाचरेत (अत्रतु लक्षणमात्रोप योगिनिदाहेन दोषः) अन्यत्रांकनलक्षाभ्यांवाहनेमोचनेतथासायंसंगोपनार्थंचनदुष्येद्रोधवंधने इतिपराशरस्मरणात(अंकनंस्थिरचिह्नकरणंलक्षणंप्रतीपलक्षणंवाहनेशास्त्रोक्तमार्गेणेतिमिताक्षरा=अर्थात—दाह जो गरम लोहेसे पशुओं का रोग मिटानेआदि के निमित्त कियाजाताहै सो अत्यन्त करनेसे या वाह जो हलवाहन आदि में जोतना प्रसिद्ध है सो अत्यन्त करायाजाय तिलक या नाथ लगाने को नाकछेदने में या नदी पर्वतआदि कठिन स्थानों में रोकने से यदि गऊ वृषभ कोई मरजाय तहां तीनि महीने वाले प्रायश्चित्त का एक पाद छोडिके तीन पाद प्रायश्चित्त करै (परन्तु इसमें जो चिह्न करने मात्र का जरूरी दाह दिया जाय जिससे प्राण हानि न होसके तो कुछ दोष नहीं है) क्योंकि पराशरके इस वचन से नियम है कि आँकने और चिह्न करनेमे जोपशुओंका बन्धन करना पड़ताहै तिसने अन्यत्र उपरान्त तथा वाहन सवारी आदि में वृषन जोड़ने या सांड छोडने या संध्या समय

रक्षा में राखने के लिये जो रूँधना और बाँधना होय तिसका दोष नहीं है (आँकना वह कहाता है जो पक्का चिह्न करना होय हमेशाके लिये और लक्षण वह कहाताहै जो अभी हालके लिये कोई चिह्न करना होय यह मिताक्षराकारोंनेकहा तथापि ऐसा प्रतीत होता है कि आँकना तौ वही समझना जो रोग मिटाने आदि के निमित्त से दाह दिया जाय और लक्ष शब्द से लक्षण उसको समझना जो सांड पहिचानने का चिह्न या बैलों की गिनतीके नम्बर अंक आदि दागे जातेहैं अर्थात दोनों में लोहा गरम से दागना होता है सिर्फ जरूरी प्रयोजन दो जुदे जुदे होते हैं तिससे अंकन और लक्षणकाभेद किया गया कुछ हमेशा और हालका तात्पर्यठीक नहीं है॰ और वाहन सवारी आदि में जोडने बाँधने का जो दोष नहीं कहा सो भी जितनालोक और शास्त्र के अनुसार उचित हो उससे अधिक में दोषभी होता है॥ ० ॥ यद्यपि गऊ वृषभकी रक्षा के निमित्त बाँधि राखने का दोष नहीं बताया तौभी विरले या बहुधा बंधन ऐसेहैं कि उनसे बाँधनेमें दोषकी उत्पत्ति होतीहै तिससे व्यास जी ने उन बंधनों से बाँधने का निषेध भी दर्शाया है=यथाह व्यासः=ननालिकेरेणनशाणावालैर्नचापिमौञ्जेननबन्धशृंखलैः एतैस्तुगावोननिबंधनीयावध्वाऽनुतिष्ठेत्परशुंगृहीत्वा कुशैःकाशैश्चवध्नीयात्स्थानेदोषविवर्जिते=अर्थात्—न तौनारियर कीजटा वक्कल आदिकी बनी रस्सी से न सनकी बनी रस्सीसे न बालोंकी रस्सीसेन मूजकी रस्सी से बाँधै न ऐसी किसी मेखला चमडे आदि की बनीसे बाँधै जिससे पैर फँसिकर चलना फिरना बन्दहोय यद्वा उस मेखलासे न बाँधै जिसमें अनेकपशु एकहीमें फाँसेजायँ (मेखला या शृंखला वही कहातीहै जो जंजेरके आकारहोय) इतने प्रकार के बंधनोंसेगऊ वृषभ न बाँधने चाहिये और जो इन्हींसे बाँधे तौ इतनी बड़ी चौकसाईकरै कि फरसा गँड़ासाआदि हाथ में लेकर उनकेपास पहिरादेवै कि यदि साँपअग्नि आदिका उपद्रव कुछ उठि खडाहो तौ तत्काल बंधन काटि दिये जासकें जिससे प्राण हानि न होने पावै—इसीलिये यह आज्ञा है कि कुश काँश की रस्सी से बाँधे जिसको उपद्रवके समय आपही तोडि भागैं बल्कि ऐसी जगहमें बाँधे जहां उपद्रव न उठिसके या उठनेपरभी प्राण बचाइसकें खत्ती आदिमें न गिरजायँ ॥ ० ॥ अथघंटादिदोषमरणे प्रायश्चित्तं=तदाह आपस्तंबः=घंटाऽऽभरणदोषेणविपत्तिर्यदिगोर्भवेत् कृच्छ्रार्धंतुभवेत्तत्रभूषणार्थंहितत्स्मृतम्=अर्थात्—गले वँधे घंटा की आवाज सुनिके सिंह आकरगाय मारै या पहिराये हुये भूषण के लालचसे चोर डाँकू आदि गऊ मार जायँ तहां घंटा और भूषण पहिराने वाले स्वामीको कृच्छ्र व्रतका

आधा प्रायश्चित्त चाहिये यह दोनों बात भूयरा बांधने के निमित्तसे पाप हुआ कहाता है ॥ ० ॥ अतिदोहनादिभिर्मरणेप्रायश्चित्तं=तदप्याह आपस्तंबः=अतिदोहातिदमनेसंघातेचैवयोजने बध्वाशृंखलपाशैश्चमृतेपादोनमाचरेत्=अर्थात्–अति दूध दुहिलेने से यदि गऊ या बछरा मरजाय तिसके पाप में और प्रवल गाय वृषभ की शिक्षा हेतु से अत्यंत दमन करने में अर्थात् उचित शिक्षासे अधिक ताड़न पीटन करते यदि मरजाय तिसके पाप में भी और आपस के संघात में खबर न लेनेसे लड़ि भिड़के मरजाय तिसके पापसें और गरखोल आदि बंधनमें उलझिके मरजाय तिस बेखबरी के पाप में और दुहिते समय बछरा जोड़ने छोरने के व्यतिक्रम या बैलोंको रथ आदि में जोड़नेके व्यतिक्रम से दो में एक मरजाय तिसके पापसें और लोहेकी जँजीर या रस्सी आदि की सरकफूंद से बाँधने में फाँसी लगिके मरजाय तिसकेपाप में• इतने उक्त निमित्तों पर निमित्ती हत्यारा पुरुष एक चौथाई कम करिके तीन पाद प्रायश्चित्त करै=यह पौना प्रायश्चित्त भी कृच्छ्र प्राजापत्य का समझना जो अभी घंटा के दोष में केवल आधा कहिचुके क्योंकि आपस्तंब के ये दोनों वचन साथही मिले पाये हैं ॥ ० ॥ रक्षणादिव्यतिक्रमतोऽपिमरणेप्रायश्चित्तं–उन्हीं आपस्तंबने जंगल आदि में रक्षाके व्यतिक्रमसे मरजानेमें भी स्वामी को प्रायश्चित्त करना कहा है क्योंकि स्वामीने चतुर मिहनती गोपालको नहीं सौंपी यही उसपर निमित्त ठहिरा=यथाह=जलौघपल्वलेमग्नामेघविद्युद्धताऽपिवा गर्तायांपतिताऽकस्माच्छ्वापदेनापिभक्षिताप्राजापत्यंचरेत्कृच्छ्रं गोस्वामीव्रतमुत्तमम॥ शीतवाताऽऽहतावास्यादुद्बंधनहताऽपिवाशून्यागारउपेक्षायांप्राजापत्यंविनिर्दिशेत्=अर्थात्–बहुतजल के ताल तलैयोंमें डूबी या अति वर्षा और बिजली की मारी मरजाय या गड़हिले खाई आदि में गिरिके मरै या अचानक सिंह व्याघ्र आदि भक्षण करिजाय तौ उस गाय का मालिक उत्तम रीति विधान से कृच्छ्र प्राजापत्य व्रत करै ॥ अथवा अति शीत पाला के परने या झंझा वायु आँधी के चलने से या जेठकी लूमें मरी हो या बंधनकी अलवट फाँसीलगिजानेसे मरीहो या सूनेघरमें अकेली बँधीहोनेकी उपेक्षासे भूखी प्यासी आदि होकरवाहै किसी तरहसे मरीहो तौ प्राजापत्य करना चाहिये क्योंकि येबातें सब स्वामीकीगफलत से उत्पन्न होतीहै परन्तु यह पूराप्रायश्चित्त उसीको करना चाहिये जो किसी बड़े कार्य में न लगाहो किन्तु जोस्वामी किसी कार्य में लगाहुआ व्यग्र हो तिसको आधा करना चाहिये और शेष आधा गोपालपर आरूढ़ कियाजाय=जो इसव्यवस्थाको प्रमाणभी अंगोक्त विष्णुका वचन

है=यदाह विष्णुः=पल्वलौघमृगव्याघ्रश्वापदादिनिपातने श्वभ्रप्रपातसर्पाद्यैर्मृते कृच्छ्रार्धमाचरेत् अपालत्वात्तत्कृच्छ्रः स्याच्छून्यागारउपप्लवे=अर्थात्—विष्णुने कहाहै कि छोटे मोटे ताल तलैयां जहां जलके भीतर बहुत छिपीहों तिनमें डूबिके मरै या वन के बड़े पशुओंसे या बाघसे या भेड़िया कुत्ता आदि किसी से मारीजाय या धरती पोलीके छिद्रमें खुरचलाजानेसे गिरिकेमरै या सांप आदि कोई विषैल जीव काटै तिससे मरै तौ उस गऊका मालिक आधाही कृच्छ्रव्रत आचरै•परन्तु जो मालिक ने रक्षक साथकिये विना छोड़िदीहो या जहां जहां जो खुद रक्षाकरनी योग्य थी सो मालिकने न करीहो और इन्हीं उक्तप्रकारोंसे यदि गऊमरीहो तौ फिर पूराही कृच्छ्रव्रत करना चाहिये तथैव जो सूने घरमें बांधीहुई किसी उपद्रव से मरजाय तौ भी स्वामीको पूराकृच्छ्रव्रत करना चाहिये (अब ऊपरसे मिलाकरदेखौ कि आपस्तंबके वचनसे यह विष्णुजीका वचन तुल्यात्मक होगया ॥ क्वचित्गोप्राणहानौ तुनदोषः—कहीं यहभी एकधर्महै कि जो कोईचाहैं मालिकहो या गैर उसीगऊके उपकार निमित्तसे किसी व्यापारमें समुद्यत हुआहो उसमें गऊ यद्यपि मरजाय तौ भी उसको दोष नहींहै अर्थात् प्रायश्चित्त करने की जरूरत नहीं•सो यह दोषका न होना केवल वचन के प्रभाव सेही सिद्ध होताहै कुछ और दलील की जरूरत इसमें न होगी और वह वचन है संवर्तमुनिका=यथाहसंवर्तः=यंत्रणेगोश्चिकित्सार्थेमूढगर्भविमोचने यत्नेकृतेविपत्तिःस्यान्नसपापेनलिप्यते (यंत्रणंव्याध्यादिनिर्यातनार्थं संदंशांकुशादिप्रवेशनं) तथा—औषधंस्नेहमाहारंददद्गोब्राह्मणेद्विजःदीयमानेविपत्तिश्चेन्नसपापेनलिप्यते ग्रासघातेशरौघेणावेश्यभंगान्निपातने—तथा—दाहच्छेदसिराभेदप्रयोगैरुपकुर्वतांद्विजानांगोहितार्थंचप्रायश्चित्तंनविद्यते=अर्थात्—रोगवाली गऊकी चिकित्साके अर्थमें यंत्रणाकर्म करतेहुये या अटकेहुये गर्भके निकासने में यत्नकरते समय या उस यत्नके होचुके पीछेहो यदि गऊ मरजाय तौ वह करने वाला पापी नहीं ठहरता है (यंत्रणाकर्म उसका नामहै जो किसी बड़े गूमड़े कीरे आदि के नाश करनेको गरम सँडासी आदिसे दागैं या अंकुश कील कांटा आदि चुभावैं और उसी यन्त्रणां शब्द से रस्सा बंधन कर्म का अर्थ लियाजाताहै)=तथैव एक यह वचन है कि=दवाई या घी तेल आदि चिकनाई या दूध खड़ी आदि या बहुत अच्छाभोजन किसी गऊको या ब्राह्मणको देते खिलातेहुये यदि उसकी मौतहोजाय तौवह देने खिलानेवाला कोई द्विजाती पापीनहीं ठहरताहै क्योंकि उसने पुण्यकी अभिलाषा से यहकिया—परन्तु पहिले परिच्छेदमें (औषधंलवणंचैवपुण्यार्थमपिभोजनमति

रिक्तंनदातव्यंइत्यादि) यह व्यासका वचन जो आचुका उसमें गाय की खुराक से अधिक भोजन अच्छा भी खवाना प्रतिषिद्ध होचुका तिससे–यहां भी पचि सकने के अनुसार माफिक देनेसेही यदि कोई गाय मरजाय तिसमें दोषाभाव समझना–अन्यथा ज्ञानमान पुरुष जो सूखानाज पेटभरि तानि के खवावै जिससे गाय पेट फूलि के मरजाय तौ फिर उसी पहिले व्यासवाले वचनके अनुसार प्रायश्चित्त भी अवश्य करना होगा=तथैव गऊ का मालिक या रखवाला उस दशा में भी नहीं पापी होता है जो गावँपर धरि चढि आने से गावँ माराजाय उससें चाहैं बाघों के समूह से गऊ मारीजाय या घर टूटने फूंकिजाने आदि से मारीजाय=तथैव एक यह वचन है कि=रोगवती आदि गऊके हितके लिये गरम लोहे सेदाहदेने या गुमडा आदि चीरने या फस्त खोलने आदि प्रकारों से उपकार करने वाले द्विजातियों को विपत्ति होजाने पर भी प्रायश्चित्त नहीं लगता है=ऐसाही पराशर ने भी कहा है कि=अतिवृष्टिहतानांचप्रायश्चित्तंनविद्यते कूपखातेचधर्मार्थेगृहदाहेचये मृताः ग्रामदाहेतथाघोरेप्रायश्चित्तंनविद्यते=अर्थात्–जो गौयें कहीं अति वर्षा के होनेसे मरजायँ,यहांपर भयानक प्रलयरूपी वर्षा समुझिलेनी कि जिसका प्रबन्ध सब लोगोंसे न होताहो) या धर्मके निमित्त कोई कूप तड़ाग आदि खोदा गयाहो तिसमें गिरिके मरजायँ या घरमें आगि लगिजानेसे मरजायँ या सब गावँ में आगि लगिजानेसे या अतिशय घोर उपद्रव किसी भांतिका उठिखडा होने से मरजायँ तौ इन गौओंके मालिक या रखवाले या कूप तलाव के बनवाने वालोंको प्रायश्चित्त नहीं लगताहै=परन्तु=यहां निपट प्रायश्चित्तका न लगना सिर्फ उन्हीं पशुओं को मौत होजाने मध्ये माना जासक्ताहै जो बंधनके बिना छुट्टा रहितेहों और दैवयोगसे कहीं आगिलगिजाने आदि किसी उपद्रवसे मरजायँ•अन्यथा जो बंधनमें रहितेहों और इन्हीं प्रकारोंसे मरजायँ तिनके मध्ये आपस्तंबकी विशेषता लेनीचाहिये=यथाह आपस्तंबः=कांतारेष्वथदुर्गेषुगृहदाहेखलेषुच यदितत्रविपत्तिःस्यात्पादएकोविधीयते=अर्थात्–ऐसे किसी वनमें या पहाडोंकोट आदिमें कि जहांमार्ग बडादुर्गमहो या घर खलिहान आदि में आगि लगिजानेसे यदि वहां गौओं की मौत अचानक होजाय तौ स्वामी रक्षक आदि अधिकारीको एक चौथाई प्रायश्चित्त करना चाहिये (यह चौथाई उस प्रायश्चित्तकी समझनी जो ऊपर कहीं आपस्तंबके वचन में कृच्छ्रप्राजापत्य करना कहिचुके॥ क्वचित्प्राणहान्यभावेऽपिप्रायश्चित्तं–कहीं कहीं गायकेप्राण बचिजाने परभी प्रायश्चित्त होताहै यदि हाड आदि टूटेहों=य-

था=अस्थिभंगंगवांकृत्वालांगूलच्छेदनंतथा पाटनंदंतशृंगाणांमासार्धंयवान्पिबेत्= अर्थात्–गौओंके हाडोंको तोडिके या पूंछ उनकी काटिके या दांत और सींगों को उखाडिके एक पखवाराभर जौंका दलिया रांधिके पीवै तथा उक्त नियमों को भी साधै=इसी वार्तापर अंगिराने कुछ और भेद कियाहै=यथा=शृंगदंतास्थिभंगेवाचर्म निर्मोचनेपिवा दशरात्रंपिबेद्वज्रं स्वस्थापियदिगौर्भवेत् (अत्रतुवज्रशब्दवाच्यंक्षीरादि र्वतनमुक्तंतदशक्तविषयमिति मिताक्षराकाराः) अर्थात्–सींग दांत हाड टूटिजाने या खाल उधिड़जाने में यद्यपि गऊको आराम होजाय तौभी तोड़नेवाला दशदिन तक वज्रपीकर प्रायश्चित्त साधै (वज्रनाम यद्यपि तालमखाने और सुपेदकुशोंकाभीहोता है परन्तु आचार्योंने दूधका फेना और दूधआदि पीके रहिनेयोग्य आचारोंका नाम वज्र कहाहै॰और इसके साथ यहभी आशय दर्शायाहै कि यह दशदिनकीथोडी अ-वधि और दूधआदि पीना उस प्रायश्चित्तीके निमित्तमें समझना जो अशक्तहो यह मिताक्षराकारोंने कहा॥०॥ हतगोसमानमूल्यदानंच–यह प्रायश्चित्त जो जो क हिचुके सो पीछेकरै किन्तु मरीहुई गऊके समान दूसरीगऊ यद्वा वैसीगऊके बरा-बरमोल उसके स्वामीको प्रथम देकर प्रायश्चित्त का प्रारम्भ करै=तदाहपराशरः= प्रमापणेप्राणभृतांदद्यात्तत्प्रतिरूपकम् तस्यानुरूपंमूल्यंवादद्यादित्यब्रवीन्मनुः=अ-र्थात्–गऊआदि प्राणियोंके मारडारनेमें वैसाही प्राणीलाकर स्वामी को समर्पण करै अथवा वैसा जीव न मिलसके तो उसके अनुमान जितना मोल उचित हो वही देवै यह मनुकीआज्ञा पराशरने कही=एवंमनुने आपभी यह दण्डकेप्रकरणमेंकहा है कि=योयस्यहिंस्याद्द्रव्याणिज्ञानतोऽज्ञानतोऽपिवा सतस्योत्पादयेत्तुष्टिंराज्ञेद द्याच्चतत्समम्=अर्थात्–जो कोई जिसकिसी की कोई चीज बिगाडै या विनाशै सो उसकीसंतुष्टि उत्पन्न करै किन्तु जैसेंहो तैसे उसका राजीनामा प्रकाश करै और उसी द्रव्यकी बराबर वह राजमेंभी जुर्माना भरै ॥ ० ॥ उक्तप्रायश्चित्तानांसर्ववर्णभेदे-नप्राप्तिनिर्णयः–यहां तक पूर्वोक्त प्रायश्चित्त मात्र जो गोवध के मध्ये वर्णनकिये गयेसो सब केवल ब्राह्मण प्रायश्चित्ती के निमित्त में समझने किन्तु जो क्षत्रीआदि कोई अन्यवर्ण हत्यारेहों तिनके लिये वृहद्विष्णुने विशेषता प्रकट करीहै=यथा= विप्रेहसकलंदेयंपादोनंक्षत्रियेस्मृतम् वैश्येऽर्धंपदएकस्तुशूद्रजातिषुशस्यते=अर्थात्– जहां जहां जो कुछ प्रायश्चित्त कहा गया सो ब्राह्मण हत्यारेसे पूराकरवाना चा-हिये और क्षत्री से वही प्रायश्चित्त एक चौथाई कम कराना और वैश्यों से आधा और शूद्र जातोंमें सिर्फ चौथाई करवाना श्रेष्ठ होताहै (यहां गोवध के प्रायश्चित्त

में जो ब्राह्मण पर अधिकता राखी गई सो इस हेतु से कि ब्राह्मण सब धर्मों की मूलहै यदि मूलही बिगडि जायगी तौफिर संसार रूपी धर्मवृक्ष क्योंकर खड़ारहेगा तिससे मूलका सुधारना मुख्य धर्महै जिससे अन्य वर्णोंको शिक्षा प्राप्तहोती है)= एक जो अंगिरा का वचन इससे विपरीत प्रतीत होताहै कि=पर्षद्याब्राह्मणानांतुसा राज्ञांद्विगुणामता वैश्यानांत्रिगुणाप्रोक्तापर्षद्वच्चव्रतंस्मृतम्=अर्थात्–ब्राह्मणोंकीसभा जितनी होती है राजाओं की उससे दूनी होनी कही और वैश्यों की तिगुनी कही और पर्षत् सभा के तुल्य उनके व्रत भी होने कहे हैं (सो इस वचन में व्रत शब्द से प्रायश्चित्त का तात्पर्य न लेना चाहिये क्योंकि यह वचन दंडके प्रकरण में प्रतिलोम नालिशों मध्ये जहां वाग्दंड और वाक्पारुष्य आदि के अपराधी प्रतिलोम जातीहुये हों तिसके विषय पर आरूढ है॥ ०॥ अथ स्त्रीबालवृद्धादीनां प्रायश्चित्तविवेकाः–जैसा हीन वर्णों के पुरुषों में हीन प्रायश्चित्त दर्शाया गया तैसा ही स्त्री और बूढे और बालक तथा रोगियों के लिये उन पुरुषों से भी आधा प्रायश्चित्त चाहिये कि जिन वर्णों को जितना कम करिके कहिचुके और जो बालक अनुपनीत अर्थात् संस्कार से विहीन हो तिसके लिये आधे का आधा सिर्फ चौथाई प्रायश्चित्त चाहिये• ये सब नियम पहिले वर्णन होचुके हैं सो यहां भी समझि लेने=शिरोमुण्डनं–स्त्रियों के लिये पराशरने कुछ और भी विशेषता दर्शाई है= यथा=वपनंनैवनारीणांनानुव्रज्याजपादिकम् नगोष्ठेशयनंतासांनवसीरन्गवाजिनम् सर्वान्केशान्समुद्धृत्यछेदयेदंगुलद्वयम् सर्वत्रैवंहिनारीणांशिरसोमुंडनंस्मृतम्=अर्थात्– स्त्रियोंको प्रायश्चित्त की दशा में न मुण्डन कराना चाहिये न विदेशों का फिरना और जप पाठ आदि चाहिये जो विद्याकी संबंधी बातहैं और गोशालामें सोना कहा सो भी न चाहिये और गऊका चमड़ा ओढ़ना जो पुरुषोंको कहिचुके सोभी न चाहिये किन्तु यह करना चाहिये कि सब केशोंको हाथसे पकडि इकट्ठे ऊँचेकरिके दो अंगुरमात्र कतरि डाले तौ यही उनका मुण्डन है जो सभी ऐसे कामों में सर्वत्र उनका शिरसे मुंडिजाना कहलाता है=एवं=पुरुषों के मुण्डन मेंभी संवर्त ने विशेष भेद प्रकट किये हैं=यथाह संवर्तः=पादेऽङ्गरोमवपनं द्विपादेश्मश्रुणोऽपिच त्रिपादेतु शिखावर्जंसशिखन्तुनिपातने=अर्थात्–जिस पुरुषको एक चौथाई प्रायश्चित्त करने की योग्यता ठहिरी हो तिसके कंठसे लेकर पैरों तक रोमा मुडवाने चाहिये यही उसका मुण्डन है जिसको आधा प्रायश्चित्त करना ठहिराहो तिसको मूछ दाढ़ीभी मुडानी चाहियेयजिसको तीनिपाद प्रायश्चित्तकी योग्यता ठहिरीहो तिसको केवल

चोटी छोडिके सब देहके रोमा और बाल भी मुडाने चाहिये जिसने गऊका पूराही निपात किया अर्थात् जिसको पूरा प्रायश्चित्त करना ठहिरा हो तिसकी चोटी सहित सब देह मुडानी चाहिये॥ श्रीमन्मिताक्षराकार विज्ञानेश्वर आचार्य कहिते हैं कि इसी रीतिसे और भी जे कोई स्मृतियोंके अधिक वचन मिलजायँ तिनकी विषय व्यवस्था अपनी बुद्धिसे विचार लेनी चाहिये परन्तु इसी मार्गके सहारे से कि जैसा डौल हमने बांधा॥ इतिगोवध प्रायश्चित्तप्रकरणं इस प्रकरण में गोवध के जुदे जुदे भेदोंसे चारि परिच्छेद हैं चालीसवेंको आदि लेकर ४३ तेंतालिसतक पूरे हुये॥२६३॥२६४॥ इन्हीं दो श्लोकोंकी अधिकोक्तिके शेष पाठमें यह परिच्छेदहै॥

अब अगिले परिच्छेदसे लेकर व्रात्यता आदि सभी उपपातकोंके प्रायश्चित्त कहे जायँगे तिनपर प्रायश गोहत्यामें कहे प्रायश्चित्तों का अतिदेश उतारते रहेंगे और कुछ कुछ उनके जुदे प्रायश्चित्त भी दर्शाते रहेंगे सो सब उन्हीं ठिकानोंपरदेखना॥

अथोपपातकसामान्येषुसर्वेषु-पूर्वोक्तगोवधप्रायश्चित्तस्यातिदेशप्रदर्शकोऽयंपरिच्छेदःचतुश्चत्वारिंशः ४४



इस परिच्छेदमें पूर्वोक्त गोवधके प्रायश्चित्त लेकर साधारण सभी उपपातकों पर अतिदेश उतारा जायगा कि उन हरएकके जुदे प्रायश्चित्तों से उपरान्तउनपर गोहत्या वाले प्रायश्चित्तभी विकल्पसे लग सकेंगे-परन्तु विरलोंपरनहीं भी लगसकेंगे केवल अपने जुदेही उपदेशक प्रायश्चित्तउनपरलगेंगे॥

(सर्वोपपातकेष्वतिदेशः)

उपपातकशुद्धिःस्यादेवंचांद्रायणेनवा। पयसावापिमासेनपराकेणाथवापुनः २६५

अक्षरार्थः—एवं उपपातकसे शुद्धि होय या चांद्रायणसे या दूधके साथ एक महीना से अथवा पराकसेही॥ २६५॥

अपभिप्राय:—२३४ दोसौ चौंतीस आदि २४२ तक जो मूलश्लोकों से जो जो उपपातक दर्शाये थे उनमे सबसे पहिला गोवध कहा था तिसके प्रायश्चित्त कई परिच्छेदोंसेपूरे हुये अब यहां व्रात्यता आदि सभी उपपातकोंके प्रायश्चित्त कहिना

चाहते हैं—तिसके लिये चालीसवें परिच्छेद में जाकर २६३ दोसौत्रेसठि आदि मूल श्लोकोंके अर्थ और अधिकोक्तिकोभी देखो कि वहांपर योगीश्वरने जो कुछकहाथा उसी प्रायश्चित्तका अतिदेश यहां शेष उपपातकोंपर उन्हीं योगीश्वरने उतारा है—कि—एवं इसीप्रकार जैसा गोवधमें कहिचुके तैसा प्रायश्चित्त करने से शेष उपपातकोंकी भी शुद्धि होसक्तीहै॰परन्तु जो ऐसा करना न चाहै तो चांद्रायणके करने से भी शुद्धि होतीहै जिसका स्वरूपकहीं आगे कहाजायगा॰अथवा एक महीना दूधपीने का नियम साधनेसे भी उपपातकों की शुद्धि होजाती है अथवा पराकनाम का व्रत करनेसे भी शुद्धि होती है॥ २६५॥

२६५अधिकोक्तिः—यहां उपपातकोंके प्रायश्चित्तमध्ये जो अतिदेशदिखागया तिसकीसामर्थ्यसे पूर्वोक्तप्रायश्चित्तोंमें विरली बातोंका कमकरना भी पायाजाताहै कि जोजोबातें ठेठकर गोवधसेही संबंधरखतीहैं इसका दृष्टांत जैसे गऊका चमडा ओढना या गौओंके पीछेपीछे सेवाकरते फिरना इत्यादि बातें खासकर गोहत्याकेही प्रायश्चित्तमें उचितहोंगी सभी उपपातकोंमें नहीं—क्योंकि जो सभी उपपातकोंपर आवश्यकहोतीं तो फिर२६३दोसौत्रेसठिसे जो कुछ प्रायश्चित्त कहिचुके सो केवल गोघ्न पुरुषकेनामसे न कहेजाते किन्तु सभी उपपातकी पुरुषोंकेनामसे कहेजाते—इसीलिये अतिदेशकी सामर्थ्यका चर्चा यहां कियागया कि यद्यपि अन्य उपपातकोंपर गोवधवाले प्रायश्चित्त कियेजासक्ते हैंतथापि उसकी सभीबातें सर्वत्रनहीं स्वीकार होसक्तीहैं अतिदेशका स्वभाव यही होताहै॥ ० ॥ यहां जो २६५ मूलश्लोक में चार प्रकारके व्रत कहेगये तिनको उस प्रकारके उपपातकों पर समझना चाहिये जो इच्छाविना धोखा आदिसे होगये हों तिनमें अपराधीकी शक्ति के अनुसार इन चारों मेंसे कोई एक व्रतकराना चाहिये कि जिसका बोझ उससे उठिसके—अन्यथा—जिसने जानिबूझि इच्छासे कोई एकउपपातक कियाहो तिसकेलिये मनुकाकहा तीनि महीने का प्रायश्चित्त विचारना चाहिये=यथाहमनुः=एतदेवव्रतंकुर्युरुपपातकिनो द्विजाः अवकीर्णिवर्जंशुद्ध्यर्थंचांद्रायणमथापिवा=अर्थातमनुजी पहिले तीनि महीना का जो प्रायश्चित्त कहिचुके हैं उसी का अतिदेश अन्य उपपातकों पर दर्शाते हैं कि—यही तीनिमहीनेका व्रतहै सो और सब द्विजाती जो जो उपपातकी हुये हों सो अपनी शुद्धिकेलिये करें अथवा चांद्रायण करें जो उनका उपपातक छोटा होय तो परन्तु यह नियम अवकीर्णीको छोड़ि के समुझना अर्थात अवकीर्णी भी एक उपपातकी होता है पर उसके लिये जुदा प्रायश्चित्त कहेंगे वही उसको चाहिये—अव-

चोटी छोड़िके सब देहके रोमा और बाल भी मुड़ाने चाहिये जिसने गऊका पूराही निपात किया अर्थात् जिसको पूरा प्रायश्चित्त करना ठहरा हो तिसकी चोटी सहित सब देह मुडानी चाहिये ॥ श्रीमन्मिताक्षराकार विज्ञानेश्वर आचार्य कहिते हैं कि इसी रीतिसे और भी जे कोई स्मृतियोंके अधिक वचन मिलजायँ तिनकी विषय व्यवस्था अपनी बुद्धिसे विचार लेनी चाहिये परन्तु इसी मार्गके सहारे से कि जैसा डौल हमने बांधा ॥ इतिगोवध प्रायश्चित्तप्रकरणं इस प्रकरण में गोवध के जुदे जुदे भेदोंसे चारि परिच्छेद हैं चालीसवेंको आदि लेकर ४३ तेंतालिसतक पूरे हुये ॥२६३॥२६४॥ इन्हीं दो श्लोकोंकी अधिकोक्तिके शेष पाठमें यह परिच्छेदहै॥

अब अगिले परिच्छेदसे लेकर व्रात्यता आदि सभी उपपातकोंके प्रायश्चित्त कहे जायँगे तिनपर प्रायश गोहत्यामें कहे प्रायश्चित्तों का अतिदेश उतारते रहेंगे और कुछ कुछ उनके जुदे प्रायश्चित्त भी दर्शाते रहेंगे सो सब उन्हीं ठिकानोंपरदेखना॥

अथोपपातकसामान्येषुसर्वेषु-पूर्वोक्तगोवधप्रायश्चित्त स्यातिदेशप्रदर्शकोऽयंपरिच्छेदःचतुश्चत्वारिंशः ४४



इस परिच्छेदमें पूर्वोक्त गोवधके प्रायश्चित्त लेकर साधारण सभी उपपातकों पर अतिदेश उतारा जायगा कि उन हरएकके जुदे प्रायश्चित्तों से उपरान्त उनपर गोहत्या वाले प्रायश्चित्तभी विकल्पसे लगि सकेंगे-परन्तु विरलोंपरनहीं भी लगिसकेंगे केवल अपने जुदेही उपदेशिक प्रायश्चित्तउनपरलगैंगे ॥

(सर्वोपपातकेष्वतिदेशः)

उपपातकशुद्धिःस्यादेवंचांद्रायणेनवा। पयसावापिमासेनपराकेणाथवापुनः २६५

अक्षरार्थः—सर्व उपपातकसे शुद्धि होय या चांद्रायणसे या दूधके साथ एक महीना से अथवा पराकसेही ॥ २६५ ॥

अपभिप्रायः—२३४ दोसौ चौंतीस आदि २४२ तक जो मूलश्लोकों से जो जो उपपातक दर्शाये थे उनमें सबसे पहिला गोवध कहा था तिसके प्रायश्चित्त कई परिच्छेदोंसेपूरे हुये अब यहां व्रात्यता आदि सभी उपपातकोंके प्रायश्चित्त कहिना

चाहते हैं—तिसके लिये चालीसवें परिच्छेद में जाकर २६३ दोसौत्रेसठि आदि मूल श्लोकोंके अर्थ और अविरोक्तिकोभी देखो कि वहांपर योगीश्वरने जो कुछकहाथा उसी प्रायश्चित्तका अतिदेश यहां शेष उपपातकोंपर उन्हीं योगीश्वरने उतारा है—कि—एवं इसीप्रकार जैसा गोवधमें कहिचुके तैसा प्रायश्चित्त करने से शेष उपपातकोंकी भी शुद्धि होसक्तीहै०परन्तु जो ऐसा करना न चाहै तो चांद्रायणके करने से भी शुद्धि होतीहै जिसका स्वरूपकहीं आगे कहाजायगा०अथवा एक महीना दूधपीने का नियम साधनेसे भी उपपातकों की शुद्धि होजाती है अथवा पराकनाम का व्रत करनेसे भी शुद्धि होती है॥ २६५॥

२६५अधिकोक्तिः—यहां उपपातकोंके प्रायश्चित्तमध्ये जो अतिदेशदिखागया तिसकीसामर्थ्यसे पूर्वोक्तप्रायश्चित्तोंमें विरली बातोंका कमकरना भी पायाजाताहै कि जोजोबातें हठकर गोवधसेही संबंधरखतीहैं इसका दृष्टांत जैसे गऊका चमड़ा ओढ़ना या गौओंके पीछेपीछे सेवाकरते फिरना इत्यादि बातें खासकर गोहत्याकेही प्रायश्चित्तमें उचितहोंगी सभी उपपातकोंमें नहीं—क्योंकि जो सभी उपपातकोंपर आवश्यकहोतीं तो फिर२६३दोसौत्रेसठिसे जो कुछ प्रायश्चित्त कहिचुके सो केवल गोघ्न पुरुषकेनामसे न कहेजाते किन्तु सभी उपपातकी पुरुषोंकेनामसे कहेजाते—इसीलिये अतिदेशकी सामर्थ्यका चर्चा यहां कियागया कि यद्यपि अन्य उपपातकोंपर गोवधवाले प्रायश्चित्त कियेजासक्ते हैंतथापि उसकी सभीबातें सर्वत्रनहीं स्वीकार होसक्तीहैं अतिदेशका स्वभाव यही होताहै ॥ ० ॥ यहां जो २६५ मूलश्लोक में चार प्रकारके व्रत कहेगये तिनको उस प्रकारके उपपातकों पर समझना चाहिये जो इच्छाविना धोखा आदिसे होगये हों तिनमें अपराधीकी शक्ति के अनुसार इन चारों मेंसे कोई एक व्रतकराना चाहिये कि जिसका बोझ उससे उठिसके—अन्यथा—जिसने जानिबूझि इच्छासे कोई एकउपपातक कियाहो तिसकेलिये मनुकाकहा तीनि महीने का प्रायश्चित्त विचारना चाहिये=यथाहमनुः=एतदेवव्रतंकुर्युरुपपातकिनो द्विजाः अवकीर्णवर्जंशुद्ध्यर्थंचांद्रायणमथापिवा=अर्थातमनुजी पहिले तीनि महीना का जो प्रायश्चित्त कहिचुके है उसी का अतिदेश अन्य उपपातकों पर दर्शाते हैं कि—यही तीनिमहीनेका व्रतहै सो और सब द्विजाती जो जो उपपातकी हुये हों सो अपनी शुद्धिकेलिये करैं अथवा चांद्रायण करैं जो उनका उपपातक छोटा होय तो परन्तु यह नियम अवकीर्णीको छोड़ि के समुझना अर्थात अवकीर्णी भी एक उपपातकी होता है पर उसके लिये जुदा प्रायश्चित्त कहेंगे वही उसको चाहिये—अव-

कीर्णी इसकानामहै (ब्रह्मचार्यवकीर्णीस्यात्कामतस्तुस्त्रियंव्रजन) ब्रह्मचारी होकर जो कामकी अपेक्षासे स्त्री गमनकरै या इसप्रकारका और कोई यती आदि अपना व्रत भंगकरै सो अवकीर्णी कहाताहै–योगीश्वरने२३६ के मूलश्लोकमें(व्रतलोपश्च) इतने पदसे अवकीर्णीका स्वरूप दर्शायाहै॥०॥ जबकि योगीश्वर और मनुकेदोनों के अतिदेश मौजूदहैं तो इन वचनों के प्रभावसे यह प्रायश्चित्तका अतिदेश उनसभी जनोंपर आरूढ समुझना चाहिये कि जो जो उपपातकों के गणमें नाम आये फिर चाहैं उनमें किसीका जुदा प्रायश्चित्त भी कहागयाहो यद्वा बिरलोंकेलिये कोईजुदा प्रायश्चित्त न कहाहो तौभी यह अतिदेश सबकेलिये समझना केवल अवकीर्णीको छोड़के॥०॥ यहां एक तर्कवादहै कि जिनकेलिये कोई जुदा प्रायश्चित्त न कहा जाय उन्हींके निमित्त यह सामान्य अति देशरूपी प्रायश्चित्त मानना उचित होता तौ ठीकथा क्योंकि जो सबकेलिये मानागया तौ यह दोष खडा होताहै कि जिनका नाम लेकर जुदे प्रायश्चित्त कहे जायँगे उन प्रायश्चित्तों का बाध अर्थात रुकावट इन्हीं सामान्य प्रायश्चित्तोंके अति देशद्वारा पाईजातीहै कि जब सभीको सामान्य अतिदेश देचुके तौ फिर बिरलोंको जुदे प्रायश्चित्त बतानेका ठिकाना कहां रहा= इसका यही उत्तरहै कि=ऐसा नहीं क्योंकि जैसा तुमने कहा या समझा तैसा होनें में यह दूषणहै कि जब केवल उन्हीं के लिये अतिदेश होता तौ फिर उनका पाठही जुदा रक्खाजाता अर्थात वैसे दूसरी भांति के उपपातकियों में मिलाकर उनके नाम जो रखिचुके सो अनर्थक हुयेजाते हैं•इसके सिवाय जो सामान्य भावसे उपपातकों के गणमें नाम लिखेगये तिनका अन्य स्मृतियों में जुदा प्रायश्चित्त मिलताहै•तथैव जो उपपातकोंके गणमें बिरलेनाम नहीं कहे तिनके भी प्रायश्चित्त इसमें लिखेदेखि परते हैं इसका दृष्टांत जैसे अयाज्योंका याजक एक उपपातकी लिखिचुकेहैं (२३७ के मूलश्लोकमें देखो) तिसका प्रायश्चित्त आगे दोसौनवासी मूलश्लोक में (त्रीन्कृच्छ्रानाचरेद्व्रात्ययाजको–अभिचरन्नपि) यह कहेंगे इसकेसाथ अभिचारकाभी वही प्रायश्चित्त कहिदिया है कि जिस अभिचार नामका उपपातक अपने गणमें कहीं नहीं आयाथा इसीप्रकार शरणागत के त्यागनेका अधिक प्रायश्चित्त उसी दोसौ-नवासी मूलश्लोक में देखना ये सभी बातें सिद्ध जावें और झूंठी ठहिरैं जो तुम्हारे उक्त विचार के अनुसार मानाजाय•और यहभी नियम नहींहै कि जो जो उपपातक विशेष किसी एकनामसे लिखेगये उनका प्रायश्चित्त जहां लिखा गया तहां खास २ विशेष उसी पूर्वोक्त नामसे लिखा हो इसका भी दृष्टान्त पहिले दोसौचालीस

मूलश्लोकमें (इंधनार्थंद्रुमच्छेदः) इस पदको देखो कि यह एक उपपातकहै विशेष कर वृक्षकाटनेकेहीनामसे लिखागया० फिर इसका प्रायश्चित्तजाकर दोसौछिहत्त-रि२७६ मूलश्लोकमेंदेखो कि (वृक्षगुल्मलतावीरुच्छेदनेजप्यमृक्शतं) वृक्ष० गुल्म० लता० वीरुध० इन चारोंमें किसी के काटने मध्ये एकसौ ऋचा जपनी कही हैं—इन बातोंके पेंचपेंच से यहसार समझलेना कि उपपातकों के समस्त प्रकरण में कोई सा एकही क्रम ऐसा सूधा नहीं है कि जिसके द्वारा मालाके गुरिआ समान गिनती गिनाई जासके—तिससे—यही सिद्धान्त ठीकहै कि दोसौचौंतीस मूलश्लोकमें व्रात्यता को आदि लेकर दोसैंव्यालिस मूल श्लोकतक भार्या के बेचने पर्यंत जो जो उपपातक हैं तिनकेलिये प्रायश्चित्त भी चाहैं इसी ग्रन्थ के शास्त्रमें या और किसी ग्रन्थ में जो कुछ लिखेपायेजायँ सोभी और यहां जो २६५ के मूल श्लोक से चार प्रकार के प्रायश्चित्त कहे वे भी उनमें मीलानकरिके परस्पर उनकी समता और विषमता और बडाई छोटाईकेविचारसे विकल्पनियतकरें यद्वा विषयभेदसे विभागकरना और चाहिये—और वे अन्य स्मृतियोंके कहे प्रायश्चित्त भी व्रात्यता आदिके पाठका क्रम लेकर आगे उन्हींके साथ जोड़ेजायँगे तहां तहां सर्वत्र देखना ॥ २६५ ॥

इत्युपपातकसामान्यप्रायश्चित्तानि

इसी दोसौ पैंसठिवाली श्लोककोटीकाकापाठ बहुत लम्बा है सो आगे आगे अनेक परिच्छेदों में जाकर पूराहोगा कि जबतक (२६६) मूलश्लोक न मिले क्योंकि मिताक्षराकारने इसी (२६५) परटीका बहुत बढ़ायाहै तिसके अनेक परिच्छेद किये जायँगे कि उनमें जुदे जुदे उपपातकोंकी व्यवस्था लिखीजाय ॥

यह भी यादराखना कि यद्यपि इस परिच्छेद में सभी उपपातकों के नामसे सामान्य प्रायश्चित्त कहेगये हैं तथापि बहुतेरे उपपातकोंपर अत्रोक्त प्रायश्चित्तोंकी पहुंच न होनेसे अपवाद मानाजायगा इसका दृष्टान्त जैसे अवकीर्णी ब्रह्मचारी आदि के लिये ये प्रायश्चित्तनहींहैं एवंपरदारगामीकेलिये येप्रायश्चित्त नहींहैं तिससे उनके लिये बड़े बडे औरही प्रायश्चित्त जुदे परिच्छेदों में दर्शायेजायँ तहां समझ लेना ॥ २६५ ॥

——※——

अथोपपातकिनां-व्रात्यप्रायश्चित्तप्रकाशकोऽयं परिच्छेदःपंचचत्वारिंशः ४५॥

इस परिच्छेदमें व्रात्यपुरुष के प्रायश्चित्त कहे जायँगे—व्रात्य उसका नाम है जो तीनिवर्णोंका पुरुष जनेऊआदि संस्कारसे हीनहोनेके कारण—व्रात जो समूह संस्कृत पुरुषोंका या उनकी जातिमात्रका समूह व्रात है तिससे गिरिजाय अर्थात असंस्कृत होनेसे पतितरहिरै वहीव्रात्यकहाजाताहै तिसकी व्रात्यतादूरकरदेनेके प्रायश्चित्तहैं॥

(व्रात्यप्रायश्चित्तं)

व्रात्यता एक उपपातक जो २३४ दोसौ चौंतीस मूलश्लोक में दर्शाया तिसका प्रायश्चित्त योगीश्वरने २६५ दोसौपैंसठिके मूलश्लोकमें अतिदेश मार्गसे सूचन कर दिया अब जुदा कुछ न कहेंगे—परन्तु—अन्य मुनीश्वरों के कहे प्रायश्चित्त यहां लिखने आवश्यक हैं तहां पहिले मनुका कहा देखो=यदाह मनुः=येषांद्विजानांसावित्री नानूच्येतयथाविधि तांश्चारयित्वात्रीन् कृच्छ्रान्यथाविध्युपनाययेत्=अर्थात—जिन द्विजाती वर्णोंको गायत्री का उपदेश उचित समय पर यथोक्त विधिसे नहीं किया जाता है (वेहीव्रात्यकहिलाते हैं) उनका उपनयन जब करनाहो तौ उनसे तीनि कृच्छ्र व्रत कराइके जैसी विधि होतीहै उसी तरहसे उपनयन करावै=यमने भी यही कहा है=यथा=सावित्रीपतिताश्चयस्यदशवर्षाणिपंचच सशिखंवपनंकृत्वा व्रतंकुर्यात्समाहितः एकविंशतिरात्रंचपिवेत्प्रसृतयावकम् हविष्यंभोजयित्वैवंब्राह्मणान्सप्तपंचच ततो यावकशुद्धस्यतस्योपनयनंस्मृतम्=अर्थात—जिस ब्राह्मणके जन्मसे पंद्रह वर्ष पूरेतक सावित्री पतित हुई हो अर्थात गायत्री की शिक्षा न मिली हो (तिसकी संज्ञा व्रात्य होतीहै) उसका जब उपनयन करना होय तब शिखा सहित मुंडन पहिले कराइके इक्कीस दिन सावधान होके व्रतकरै तब तक एक पसर भरि जौका दलियारांधि माड़ पिया करै तिस पीछे बारह ब्राह्मणोंको खीरि पूरी आदि हविष्य भोजन कराइके तब उस यावक पीकर शुद्ध हुयेका उपनयन करना कहा है—यहां पर इस बातको सोचो कि मनु और यमके कहे येही दोनों प्रायश्चित्त उसके बराबर हैं कि जैसा

योगीश्वरने २६५ मूलश्लोकमें एक महीना दूध पीना कहा क्योंकि यद्यपि योगीश्वर याज्ञवल्क्य ने व्रात्यताके नामसे कोई जुदा प्रायश्चित्त नहीं कहा परन्तु सामान्य भावसे मूलश्लोकमें सभी उपपातकोंकी शुद्धिहोना कहिचुके हैं=इसी व्रात्यतामध्ये=वशिष्ठजीने कुछ बढ़िया प्रायश्चित्त कहा है तिसका तात्पर्य भी कुछ और है सो देखो=यथाह वशिष्ठः=पतित सावित्रीकउद्दालकव्रतंचरेत् द्वौमासौयावकेन वर्तयेन्मासंपयसापक्षमाऽऽमिक्षयाऽष्टरात्रंघृतेन षड्रात्रमयाचितेन त्रिरात्रमब्भक्षोऽहोरात्रमुपवसेदश्वमेधावभृथंगच्छेत् व्रात्यस्तोमेनवायजेतेति=अर्थात्—जो पुरुष सावित्री से पतित होय सो उद्दालक व्रतकरै कि दो महीना यावक पीकेरहै फिर एक महीना गऊका दूध पीके रहै फिर एक पाख आमिक्षा पीके रहै फिर एक अठवारा गऊ का घी चाटिके रहै फिर छैदिन विना मांगे जो कुछ आजाय उसीको भोजन करै पर मुहसे न मांगे फिर तीनि दिन केवल जल पीके रहै फिर एक दिन कोरा उपवास निर्जल करै तब अश्वमेधके अवभृथ स्नानको तुल्यताको पहुँचै यद्वा (अश्वमेधके साक्षात्कार अवभृथ स्नानमें जाकर शुद्धहोय सो यह देशकालके अनुकूल अवसर बनि परे का नियम है सर्वत्र नहीं क्योंकि अश्वमेध हरकोई नहीं करसक्ता है न हरएक समयपर ऐसा बानक मिलसक्ता है कि विराने अश्वमेधमें जाकर करै) यद्वा ये बातें भी नहों तौ व्रात्यस्तोम नामक वेदोक्त यज्ञ करै तब शुद्ध होय तिस पीछे उपनयन किया जा सक्ता है अन्यथा नहीं=इस प्रायश्चित्त में यावक पीना कहा गया सो गोमूत्र में जौ रांधिके उसका गाढ़ा माड़ मसलिके छानिलिया जाताहै तिसका नाम यावक होता है जिसपर निपट गोमूत्रका रूँवा यावक न पियाजाय सो निर्वाह के लिये थोड़े गोमूत्रमें जलको मिलाकर पकावै॰परन्तु जहां कहीं पहिलेभी यावक नाम आचुकाहो तहाँ तहाँ सर्वत्र ठीक यही अर्थ समझना किन्तु जो कुछ और लिखा गया हो सो नहीं—इसी प्रायश्चित्तमें आमिक्षा पीनाभी कहागया सो हालके जमाये तरुणा दही का नाम आमिक्षा कहा जाताहै प्रायश्चित्त में यहभी गऊके दूधका जमाया हुआ पीना चाहिये॥ अत्रसर्वेषांव्यवस्थाच यहां पर॰ मनु॰योगीश्वर॰ यम॰ वशिष्ठ॰इन सबके कहे ऊँचे नीचे प्रायश्चित्तों की एकसार व्यवस्था यह समझि लेनी चाहिये कि—जिस किसी ब्राह्मण या क्षत्री आदि वर्णो को आठ वर्ष आदि जो कुछ अवधि यज्ञोपवीतकी होतीहै वही अवधि जिसके उपनयन करानेवाले आदि किसी के न होने या न मिलनेसे हटि गई हो तिसके हटिजाने से थोड़े काल पीछे जो उपनयन करना परै तब तौ २६५ मूलश्लोकमें योगीश्वरके कहे चारो प्रायश्चित्तों में कोई

अथोपपातकिनां-व्रात्यप्रायश्चित्तप्रकाशकोऽयं परिच्छेदःपंचचत्वारिंशः ४५ ॥



इस परिच्छेदमें व्रात्यपुरुष के प्रायश्चित्त कहे जायँगे—व्रात्य उसका नाम है जो तीनिवर्णोंका पुरुष जनेऊआदि संस्कारसे हीनहोनेके कारण—व्रात जो समूह संस्कृत पुरुषोंका या उसकी जातिमात्रका समूह व्रात है तिससे गिरिजाय अर्थात असंस्कृत होनेसे पतितरहिरै वहीव्रात्यकहाजाताहै तिसकी व्रात्यतादूरकरदेनेके प्रायश्चित्तहैं॥

(व्रात्यप्रायश्चित्तं)

व्रात्यता एक उपपातक जो २३४ दोसौ चौंतीस मूलश्लोक में दर्शाया तिसका प्रायश्चित्त योगीश्वरने २६५ दोसौपैंसठिके मूलश्लोकमें अतिदेश मार्गसे सूचन कर दिया अब जुदा कुछ न कहेंगे—परन्तु—अन्य मुनीश्वरों के कहे प्रायश्चित्त यहां लिखने आवश्यक हैं तहां पहिले मनुका कहा देखो=यदाह मनुः=येषांद्विजानांसावित्री नानूच्येतयथाविधि तांश्चारयित्वात्रीन् कृच्छ्रान्यथाविध्युपनाययेत्=अर्थात्—जिन द्विजाती वर्णोंको गायत्री का उपदेश उचित समय पर यथोक्त विधिसे नहीं किया जाता है (वेहीव्रात्यकहिलाते हैं) उनका उपनयन जब करनाहो तो उनसे तीनि कृच्छ्र व्रत कराइके जैसी विधि होतीहै उसी तरहसे उपनयन करावै=यमने भी यही कहा है=यथा=सावित्रीपतितायस्यदशवर्षाणिपंचच सशिखंवपनंकृत्वा व्रतंकुर्यात्समाहितः एकविंशतिरात्रंचपिबेत्प्रसृतयावकम् हविष्यंभोजयित्वैवंब्राह्मणान्सप्तपंचच ततो यावकशुद्धस्यतस्योपनयनंस्मृतम्=अर्थात्—जिस ब्राह्मणके जन्मसे पंद्रह वर्ष पूरेतक सावित्री पतित हुई हो अर्थात गायत्री की शिक्षा न मिली हो (तिसकी सज्ञा व्रात्य होतीहै) उसका जब उपनयन करना होय तब शिखा सहित मुंडन पहिले कराइके इक्कीस दिन सावधान होके व्रतकरै तब तक एक पसर भरि जौका दलियारांधि मांड पिया करै तिस पीछे बारह ब्राह्मणोंको खीरि पुरी आदि हविष्य भोजन कराइके तब उस यावक पीकर शुद्ध हुयेका उपनयन करना कहा है—यहां पर इस बातको सोचो कि मनु और यमके कहे येही दोनों प्रायश्चित्त उसके बराबर हैं कि जैसा

योगीश्वरने २६५ मूलश्लोकमें एक महीना दूध पीना कहा क्योंकि यद्यपि योगीश्वर याज्ञवल्क्य ने व्रात्यताके नामसे कोई जुदा प्रायश्चित्त नहीं कहा परन्तु सामान्य भावसे मूलश्लोकमें सभी उपपातकोंकी शुद्धिहोना कहिचुके हैं=इसी व्रात्यतामध्ये=वशिष्ठजीने कुछ बढ़िया प्रायश्चित्त कहा है तिसका तात्पर्य भी कुछ और है सो देखो=यथाह वशिष्ठः=पतित सावित्रीकउद्दालकव्रतंचरेत् द्वौमासौयावकेन वर्तयेन्मासंपयसापक्षमाऽऽमिक्षयाऽष्टरात्रंघृतेन षड्रात्रमयाचितेन त्रिरात्रमब्भक्षोऽहोरात्रमुपवसेदश्वमेधावभृथंगच्छेत् व्रात्यस्तोमेनवायजेतेति=अर्थात्–जो पुरुष सावित्री से पतित होय सो उद्दालक व्रतकरै कि दो महीना यावक पीकेरहै फिर एक महीना गऊका दूध पीके रहै फिर एक पाख आमिक्षा पीके रहै फिर एक अठवारा गऊ का घी चाटिके रहै फिर छेदिन विना मांगे जो कुछ आजाय उसीको भोजन करै पर मुहसे न मांगे फिर तीनि दिन केवल जल पीके रहै फिर एक दिन कोरा उपवास निर्जल करै तब अश्वमेधके अवभृथ स्नानको तुल्यताको पहुँचै यद्वा (अश्वमेधके साक्षात्कार अवभृथ स्नानमें जाकर शुद्धहोय सो यह देशकालके अनुकूल अवसर बनि परे का नियम है सर्वत्र नहीं क्योंकि अश्वमेध हरकोई नहीं करसक्ता है न हरएक समयपर ऐसा वानक मिलसक्ता है कि विराने अश्वमेधमें जाकर करै) यद्वा ये बातें भी नहों तौ व्रात्यस्तोम नामक वेदोक्त यज्ञ करै तब शुद्ध होय तिस पीछे उपनयन किया जा सक्ता है अन्यथा नहीं=इस प्रायश्चित्त में यावक पीना कहा गया सो गोमूत्र में जौ रांधिके उसका गाढ़ा माड मसलिके छानिलिया जाताहै तिसका नाम यावक होता है जिसपर निपट गोमूत्रका रँधा यावक न पियाजाय सो निर्वाह के लिये थोड़े गो मूत्रमें जलको मिलाकर पकावै॰परन्तु जहां कहीं पहिलेभी यावक नाम आचुकाहो तहां तहां सर्वत्र ठीक यही अर्थ समझना किन्तु जो कुछ और लिखा गया हो सो नहीं–इसी प्रायश्चित्तमें आमिक्षा पीनाभी कहागया सो हालके जमाये तरुणा दही का नाम आमिक्षा कहा जाताहै प्रायश्चित्त में यहभी गऊके दूधका जमाया हुआ पीना चाहिये॥ अत्रसर्वेषांव्यवस्थाच यहां पर॰ मनु॰योगीश्वर॰ यम॰ वशिष्ठ॰इन सबके कहे ऊँचे नीचे प्रायश्चित्तों की एकबार व्यवस्था यह समझि लेनी चाहिये कि–जिस किसी ब्राह्मण या क्षत्री आदि वर्णों की आठ वर्ष आदि जो कुछ अवधि यज्ञोपवीतकी होतीहै वही अवधि जिसके उपनयन करानेवाले आदि किसी के न होने या न मिलनेसे हटि गई हो तिसके हटिजाने से थोड़े काल पीछे जो उपनयन करना पड़ै तब तौ २६५ मूलश्लोकमें योगीश्वरके कहे चारो प्रायश्चित्तों में कोई

एक प्रायश्चित्त करनेवाले की शक्तिके अनुरूप देना चाहिये और उसके साथ यम के कहे नियम भी मिलालेने चाहिये=और जिसके सब सामग्री मौजूद होतेहुये अ-नापत्काल में भी बेपरवाही की उपेक्षासे वह अवधि बीतिगईहो तिसके लिये ऊपर मनुके कहे तीनि कृच्छ्रोंका तीया प्रायश्चित्त कराना चाहिये=और जो इसी अन-न्तर चर्चावालेको इतना काल बीति गया हो कि अपनी मुख्य अवधि से दूना जो गौणकाल माना जाताहै सोभी बीतिजाय (इसका दृष्टान्त जैसे ब्राह्मणकी ठीकठीक आठेमात वर्षकी मुख्य अवधि होतीहै तिसको पूरे पंद्रह वर्ष विना जनेऊ के बीति जायँ इसी प्रकार क्षत्री आदिको उनकी अवधिसे दूना समझि लेना) तिसके लिये वशिष्ठका दर्शाया उद्दालक नामी व्रत करवाना या व्रात्यस्तोम नामी यज्ञ कराना चाहिये=इनके सिवाय जिस किसीके बाप दादे आदि भी विना जनेऊके रहि गये हों (जैसे संप्रति बहुधा क्षत्री और वैश्य भी अनेक पीढ़ियों से असंस्कृत चलेआते हैं तिनका यह चर्चा है कि) उनके लिये आपस्तंबका कहा प्रायश्चित्त कराना=यदा हापस्तंबः=यस्यपितापितामहावनुपनीतौस्यातां तस्यसंवत्सरंत्रैविद्यकंब्रह्मचर्यंयस्य प्रपितामहादेर्नानुस्मर्यतेउपनयनं तस्यद्वादशवर्षाणित्रैविद्यकं ब्रह्मचर्यमिति=अर्था-त्–जिसका बाप और दादा भी असंस्कृत रहिके मरे हों ऐसा पुरुष जो अपना सं-स्कार करानेपर समुद्यत होय तो उसको एक वर्ष भर त्रैविद्यक नाम का वेदोक्त ब्रह्म चर्य व्रत करना चाहिये और जिसके परदादे आदिकी भी यह ठीक यादि न हो कि उनके संस्कार जाने हुयेथे या नहीं तो यह पुरुष बारहवर्षका त्रैविद्य ब्रह्मचर्य साधे तिस पीछे अपना संस्कार करावै तौ फिर आगेको उसके बेटा पोता आदि कुलमात्र के संस्कार विना प्रायश्चित्त किये जारी होसक्ते हैं (यह बात भी कुछ बहुत बडी नहीं है जो कोई अपने कुलका उद्धार करना चाहै सो घरमें एक बड़ा बूढा इस प्रा-यश्चित्त की साधना करिके अपने कुलमें लुप्तहुये संस्कारोंको जारी करावै क्योंकि अपने आगामी कुलके कल्याणहेतु अगिले बड़े बूढे बहुत बढ़िया तप करतेथे उसी तप के प्रभाव से उनकी चिरस्थिकल सन्तति अद्यापि सुख भोगती हैं–अन्यथा जो वर्त्तमान कालमें बहुतसे असंस्कृत क्षत्री और वैश्य भी केवल धनके आकर्षण से पु-रोहित पाधाओंकेद्वारा बहुधा सभा जोड़िके यह वाद विवाद करते हैं कि हमारा संस्कार होनेमें क्या दोषहै सो यह केवल उनका दुराकाण्डमहै क्योंकि पुरोहितपाधा आदिमें कुछ ठीक ठीक उत्तर इसका नहीं बनिआता है जैसे जल के जीव स्थल की बातोंको क्या जानिसक्ते हैं झूठे कुछ उत्तर दिया करतेहैं कितनेही अपनी घुमेरमें

आकर जनेऊकी माला जैसे गुल्लकंठी के समान पहिराइ भी देते हैं ॥ २६५ ॥ इसी मूलश्लोकसे यह पाठ चला आता है ॥

इतिव्रात्यप्रायश्चित्तं

अथ स्तेयोऽपपातकयुक्तपुरुषस्यप्रायश्चित्त

प्रकाशकोऽयं परिच्छेदः षट्चत्वारिंशः ४६



इस परिच्छेद में उन चोरोंके प्रायश्चित्त कहे जायँगे जो सुवर्णास्तेयी से उपराल हों—अर्थात् उस चोरी के करने वाले हों जो उपपातक कहाती है कि जिसका स्वरूप २३४ मूलश्लोक में आचुका—किन्तु उन चोरोंका प्रयोजन यहां नहीं है जो पहिले ब्रह्महत्यारे आदि महापातकियों में गिनती हुये थे—क्योंकि यहां उपपातकों का प्रकरण है ॥

(स्तेयप्रायश्चित्तं)

ध्यान करना चाहिये कि २६५ मूलश्लोकमें योगीश्वरके कहे चारों प्रायश्चित्त सामान्य सभी उपपातकों पर नियत हुये तिससे उपपातक संबंधी चोरी में भी उन चारोंकी पहुँच देखि परती थी परन्तु मनुके कहे प्रायश्चित्तसे उस पहुँचका अपवाद सिद्ध होताहै कि योगीश्वर वाले चारों प्रायश्चित्त एक चोरी को छोड़ि कर अन्य उपपातकों पर आरूढ़ होंगे अर्थात् चोरी के उपपातक में मनुका कहा प्रायश्चित्त विचारना होगा=तथाचाहमनुः= धान्यान्नधनचौर्य्याणिकृत्वाकामाद्द्विजोत्तमः सजातीयगृहादेवकृच्छ्राब्देनविशुद्ध्यति (द्विजोत्तमस्यसजातीयो ब्राह्मणएवातोविप्रपरिग्रहे ब्राह्मणस्यहर्तुरिदंप्रायश्चित्तं क्षत्रियादेस्स्वल्पंकल्प्यं) =अर्थात्—धान्य जो नाज आव कोई सा हो और अन्न जो तैयार सिद्धान्न आटा दालि चाउर आदि हो और धन शब्दसे चांदी तथा ताँबा पीतलि आदि समझने इन चीजों की चोरी जो इच्छा सहित जानि बूझि कोई ब्राह्मण होकर किसी सजातीके अर्थात् ब्राह्मण के घर करै यदि इतनी बातें सब इसी तरह ठीक ठीक हों तो वह ब्राह्मण एक वर्ष भर कृच्छ्रव्रत करिके शुद्ध होताहै (इस बातका यह तात्पर्य ठहिरा कि इतना बड़ा प्रायश्चित्त केवल ब्राह्मणके निमित्त कहा गया है यदि क्षत्री आदि चोरी करने वाले

चोरहों तौ उनके लिये छोटे प्रायश्चित्त कल्पित करने चाहिये—क्योंकि (अष्टापाद्यंस्तेयकिल्विषंशूद्रस्य द्विगुणोत्तराणीतरेषांप्रतिवर्णं विदुषोऽतिक्रमेदंडभूयस्त्व॰ मितिक्षत्रियादेरपहर्तुर्दण्डाल्पत्वस्यदर्शनात्) इस वचन में क्षत्री आदि हीने वर्णों के चोरोंको दंड भी थोड़ा कहा देखि परता है कि—चोरीका दण्ड अठगुणा तक बढ़ता है जिस चोरी में जितना दण्ड शूद्रपर ठहिरै उसी चोरी में औरों को प्रत्येक ऊँचेवर्ण पीछे दूना दूना दण्ड बढ़ाया जाय अर्थात् जो वैश्य ने चोरी करीहो तो दूना दण्ड और क्षत्रीने करी हो तो चौगुना दण्ड और ब्राह्मण चोर हो तो अठगुणा दंड इसी लिये (अष्टापाद्यंस्तेयकिल्विषं) यहपदकहा गया॰इसके सिवाय प्रत्येक वर्णमें जो कोईविदुष ज्ञानी पढ़ा पंडितहो वहीधर्ममर्यादाका अतिक्रमकरै तिसपर उक्तहिसाब सेभी अधिक दंड बढ़ायाजाय) तिससे इसीदंडके अनुसार प्रायश्चित्तभीऊँचेवर्णपर अधिक लगाना चाहिये—तैसाही यह वचनभी प्रसिद्धहै (विप्रेतुसकलंदेयंपादोनंक्षत्रियेस्मृतमित्यादि) अर्थात् जो कुछ प्रायश्चित्त कहींसामान्य लिखाहोसो ब्राह्मणसे पूरं पूरकरवानाचाहिये क्षत्रीसेपौना और वैश्यवर्णसे आधाकरवाना चाहिये शूद्रसे चौथाई—इससे प्रायश्चित्तभी एकएकचरण घटाकरदेनाकहाहै यहसबनियम ब्राह्मणके घरमें चोरीकरनेके प्रायश्चित्तमध्ये कहागया॥०॥ कदाचित् क्षत्री आदि नीचे वर्णों के परिग्रह में जाकर चोरीकरी हो तौ इस न्यूनतासे भी दंडके अनुसार प्रायश्चित्त में कुछ कमी करली चाहिये सो यह कमी उसमेंसे करनी होगी जो ऊपर एकवर्षभर का कृच्छ्रव्रत कहिचुके हैं—अर्थात् जो ब्राह्मणने क्षत्रीके कब्जे में चोरी करी हो तौ वर्ष भरके स्थान छमाहीका प्रायश्चित्त चाहिये॰यदि वैश्यके कब्जेसे चोरी करीहो तौ तीनमहीनेका गोवधवालाव्रत चाहिये जो (२६३। २६४) इन मूलश्लोकोंकी अधिकोक्ति में लिखिचुके हों तहां देखो॰ यदि शूद्रके परिग्रह में जाकर ब्राह्मण चोरीकरै तौ एक महीनेका पूरा चांद्रायण व्रत करना चाहिये॰यह सब नियमसिर्फ ब्राह्मण चोरके मध्ये कहागया इसी रीतिसे यदि क्षत्रीआदि कोई चोर किसी ऊँचे नीचे वर्णकी चोरीकरै तहां भी पूर्वोक्त नियमोंसे विचारकरि लेना चाहिये जिसमें ठीक ठीक व्यवस्था आवै॥ ०॥ ऐसा भी न समझिलेना कि चोरी छोटी बड़ी चाहैं तैसीहो सब में येही प्रायश्चित्त होंगे किन्तु ये प्रायश्चित्त केवल दशकुंभ परिमान धान्य हरने मध्ये नियतहैं—क्योंकि दशकुम्भसे अधिक धान्य हरनेमध्ये मनुने उत्तम साहसका दण्ड देना कहा है (धान्यंदशभ्यः कुम्भेभ्योहरतोदमउत्तमः) कुम्भके परिमाण अनेक तरहसेशास्त्रों॰में प्रसिद्ध हैं परन्तु जो धर्म्मके अनुकूल हो सो यहां पर

समझना और यथार्थसे कुम्भनाम लोकमें मटकेका प्रसिद्धहै तथापि इसकापरिमाण बहुतहै तिससे डिहराडिहरियाका नाम सामान्य भावसे कुम्भ समझिलेना ऐसेदश कुम्भकेभीतर नाजहरनेमध्ये ये प्रायश्चित्त ऊपर कहेगये—और (धान्यान्नधनचौर्याणि)इसमनुकेवचनमें ऊपर जो धान्यकेसाथअन्न और धनकीचोरी कहिचुकेतिसका भीपरिमाण उतना समझिलेना जो दश कुंभ धान्यकेमोल बराबर हों अधिकनहीं= इस परिच्छेद के प्रारम्भ से लेकर जो कुछ प्रायश्चित्त कहा गयासो सब कामकारविषय समझना कि जिसने कामनासे विचारिके चोरीकरीहो उसीपर ये प्रायश्चित्त पहुँचते हैं॥ ०॥ अकामकृत चौर्य प्रायश्चित्तं— जिसने चोरी कामना के विना केवल धोखा आदि कारणों से करीहो तिसके लिये तीनि महीने वाला गोवध का प्रायश्चित्त चाहिये जो कि (२६३ । २६४) इन मूल श्लोकों की अधिकोक्ति में लिखि चुके तहां देखो=यहांपर बहुत बड़ेविचार का यह स्थलहै कि (तथा—मनुष्याणांचहरणेस्त्रीणांक्षेत्रगृहस्यच कूपवापीजलानांचशुद्धिश्चांद्रायणेनतु—इतिसार्द्धशतद्वयपणलभ्यजलापहारे इदंचांद्रायणं प्राप्तमपीतरगोवधव्रतनिवृत्त्यर्थंविधीयते इति मिताक्षराकाराः तावन्मूल्यजलापहारे पानीयस्यतृणस्यचतन्मूल्यद्विगुणोदण्ड इति पंचशत इतिच मिताक्षराकाराः)=अर्थात्—मनुष्योंका हरना स्त्रियों का हरना खेत ज़मीन का हरना घर मकान का हरना कूप बावड़ी आदि जलों का छीनना इन पापों में चांद्रायण करने से भी शुद्धि होती है—इस वचन को दर्शाय कर मिताक्षराकार कहिते हैं कि २५० अढाई सौ पण मोल या महसूल प्राप्त होसकने योग्य जलाशय के हरिलेने में यह उक्त चांद्रायण यद्यपि पहुँचता है तौभी दूसरा गोवध वाला व्रत जो हम दर्शाइचुके तिसकी निवृत्ति इस चांद्रायण से ठहिरतीहै और उतनेही मोल वाले जलके हरने मध्ये कहीं यह भी कहा है कि पानी और तृणफूस के हरने में उस चीज के मूल्य से दूना दंड चाहिये तौ इस हिसाब से पाँच सौ पण का दंडपाता है क्योंकि अढाई सौ पण मोल अभी कहिचुके हैं तिससे दूने पाँचसौ पण दंड समझ में आताहै (यहां पण कहिने से वही रुपया समझिलेना जोजिस राज मे चलता हो अन्यथा चाँदी के पण का और ताँबे के पणका परिमाण आचार मर्यादामें देखो वहींटीकाहै) इतना कहिकर फिरभी मिताक्षराकार इसीबात पर यह लिखते हैं कि (तथेतिचांद्रायणविषये पचशतपण दंड विधानात्तावत्परिमाणदंड चांद्रायणयोर्गोवधादौसहचारित्वाव तथा कृच्छ्रातिकृच्छ्रे न्दवयोःपणपंचशतं तथेति चांद्रायणविषये पंचशतपणदंडविधानाच॰ एतच्चक्षत्रियादि द्रव्यापहारे

द्रष्टव्यं इतिचमिताक्षराकाराः)=अर्थात्—फिर कहिते हैं कि उसी उक्त चांद्रायणके मध्ये पाँच सौ पण दंड ठीक होनेसे उतने परिमान का दंड और चांद्रायण इनदोनों का गोवध आदि उपपातकोंमें सहचार सिद्ध होने तथा२६४ मूल श्लोक में कहेगये कृच्छ्र और अतिकृच्छ्र के साथ अशोक्त चांद्रायण से पाँच सौ पण का योग पाया गया क्योंकि यहाँपर चांद्रायण के मध्ये पाँच सौ पण दंड कहा जानेके हेतुसे=यह भी सब नियम क्षत्रीआदि वर्णोंके धन हरने मध्ये विचारने चाहिये किन्तु ब्राह्मण का धन हरने मध्ये आगे देखना=यद्यपि=सार ढूंढने वाले को सर्वत्र सारही देखि परता है यह नियम अभंग है—तथापि इस बात को हरकोई साफ साफ नहीं कहि सक्ता है कि यहाँपर इन बातों की विलोड से मिताक्षराकार ने क्या सार निकाला किन्तु जिसने कहा वही समझा तौभी कुछ सारनहीं पाया गया इसीलिये बातयही है कि जिसका सार हर किसी के प्रत्यक्ष आवै परन्तु हमको उनका लिखा मेटना योग्य नहीं था ॥ ० ॥ ब्राह्मण संबधी धनके हरने मे यह वचन लेना होगा कि=निक्षेपस्यापहरणेनराश्वरजतस्यच भूमिवज्रमणीनांचरुक्मस्तेयसमंस्मृतम्—तथा—द्रव्याणामल्पसाराणांस्तेयंकृत्वाऽन्यवेश्मनः चरेत्सांतपनंकृच्छ्रन्तन्निर्यात्यात्मशुद्धये॰ इत्यनेनाल्पप्रयोजनत्रपुसीसादिद्रव्यापहारविशेषेणस्तेयसामान्योपपातकप्रायश्चित्तापवाद इदंचचांद्रायण निमित्त भूतार्द्धतृतीयशतमूल्यस्य पंचदशांशार्द्धत्रपुसीसाद्यपहारे प्रायश्चित्तं चांद्रायण पंचदशांशत्वात्तस्यइतिच मिताक्षराकाराः=अर्थात्—धरोहरि या सोंप का हरना तथा मनुष्य का हरना तथा घोडे का हरना तथाचाँदी का हरना तथा धरती का हरना तथा बालक या हीरे का हरना तथा मणिओं का हरना यह सब सुवर्ण की चोरी तुल्य कहाता है—तथा—थोडे सार वाले द्रव्यों की चोरी किसी और के घरसे करिके अपनी शुद्धिके लिये वह चुराया यहा छीनाहुआ द्रव्य वापिस देकर सांतपन कृच्छ्र व्रत आचरै—इसमें थोड सारकी वस्तु कहिने मात्र से थोड़ासा काम देसकने योग्य लोहा सीसा राँग आदि द्रव्यों के हरने का विशेष चिह्न देने से यह बात सिद्ध होती है कि जितनी तरह की चोरी सामान्य भाव से उपपातकों में गिनती हैं तिनसबके लिये जो कुछ प्रायश्चित्त कहीं कहा हो तिसका अपवाद इस ख़फ़ीफ़ चोरीमें समझना अर्थात् उस प्रायश्चित्तको वडासमझिके इन थोड प्रयोजन वाली वस्तुओं की चोरी पर नहीं आरूढ करना चाहिये (और इस ख़फ़ीफ़ चोरी का परिमान कहां तक समझा जाय इस प्रश्न का यह उत्तर है कि) यह सांतपन कृच्छ्र व्रत ऐसी ख़फ़ीफ़ चोरीका प्रायश्चित्त समझना

जो ऊपर के पाठ में चांद्रायण प्रायश्चित्त के निमित्त पर २५० अढ़ाई सौ पण के मोल योग्य चोरी कही गई थी उसका तीसवाँ भाग चोरी करीहो अर्थात् आठ पण के लगभग मोल वाले राँग सीसा लोहा आदि चुराये हैं ॥ ० ॥ इसी प्रकार विरले द्रव्यों की विशेषता (ख़सूसियत) से भी उन प्रायश्चित्तों का अपवाद (इ-स्तस्ना) समझना जो सामान्य (आम तौरसे) उपपातकों पर आरूढ़कियेगयेहैं इसका ब्यौरा आगे देखो=भक्षभोज्यापहरणेयानशय्यासनस्यच पुष्पमूलफलानांच पंचगव्यंविशोधनम्=अर्थात्–चाबने खाने की वस्तु हरने में या चढ़ने और सोउने और बैठने की चीजें हरने में या फूल मूल फल कन्द आदि के हरने में पंचगव्यका पीना प्रायश्चित्त है–यह एक दिन का प्रायश्चित्त है सो केवल एक वार पेट भर भोजन करनेयोग्य भक्ष भोज्यकी वस्तु चुराने मध्ये समझना किन्तु अनियत परिमान से चाहैं जितनी हरने मध्ये नहीं क्योंकि यह बात अगिले पैठीनसि के वचनसे साफ स्पष्ट होती है=यथाह पैठीनसिः=भक्ष्यभोज्यान्नस्योदरपूरणमात्रहरणेत्रिरात्रमेकरात्रं वापंचगव्याहारस्तेति=अर्थात्–खाने चबाने आदिके अन्न जो पेट भरनेमात्र परिमान से हरै तिसको तीन वा एकही दिन पंचगव्य पीकेरहिना प्रायश्चित्तहै–ध्यानकरौ केवल पेटभरनेयोग्य अन्नहरने मध्ये तीन वा एकही दिनका विकल्प दर्शाया तिससे दोनों वार सवेरे साँझ पेट भर सकने योग्य हरने में तीनदिनका प्रायश्चित्त और एक ही वार पेटभरनेयोग्य हरने का एकदिन प्रायश्चित्त ठहिरा–और जिसवचनमें भक्ष्य भोज्यका नाम आया उसीमें यान शैया आसन पुष्प मूल फल ये भीकहे अर्थात् इनका भी वही पंचगव्य का पीना प्रायश्चित्त ठहिरा तिससे भोजन के साथ गिनती होनेसे इनकाभी वही परिमाण समझना कि जितने मोलका भोजनहोताहो और उसी रीति से इनमेंभी दोनोंतरह का प्रायश्चित्त समझलेना कि एकवार पेट भरनेयोग्य अन्नके मोल बराबर जो इन चीजोंकी कीमत ठहिरै तौ एकही दिन पंचगव्य पीनाचाहिये जो दोनोंवार पेट भरने योग्य अन्नके मोलबराबर इनचीजों का मोल ठहिरै तौ इनमें भी तीनदिन पंचगव्य पीनेका प्रायश्चित्त जानों अर्थात् यही न्याय सर्वत्रहै कि चोरी करी हुई वस्तु के थोड़े बहुत परिमाण के अनुसार प्रायश्चित्त की छोटाई बड़ाई कल्पित करी जाय=इसी प्रकार यह वचन है कि (तृणकाष्ठद्रुमाणांच शुष्कान्न स्यगुड़स्यच तैलचर्मामिषाणांच त्रिरात्रंस्यादभोजनम्–इत्येयांतृणादीनां भक्षादि त्रिगुणत्रिरात्रप्रायश्चित्तस्यदर्शनात् तत्त्रिगुणमूल्यापहरणेतत्प्रायश्चित्तं)=अर्थात्–फूस काठ वृक्ष सूखाअन्न गुड़ तेल चमड़ा मांस इनके हरने में तीन दिन निराहार

व्रत करै—इस वचन में फूस घास आदि सभी के हरने मध्ये भोजन आदि पूर्वोक्त चीजों से तिगुना तीन दिनका प्रायश्चित्त है तिसके देखने से यह ठीक हुआ कि भोजन आदि पूर्वोक्त चीजों के मोलसे तिगुने मोलवाली अत्रोक्त चीजों का यह प्रायश्चित्त चाहिये=इसी प्रकार यह वचनहै कि (मणिमुक्ताप्रवालानांताम्रस्यरजतस्य अयस्कांस्योपलानांचद्वादशाहंकणान्विता—अत्रापिभक्ष्यादिद्वादशगुणप्रायश्चित्तदर्शनात् तन्मूल्यद्वादशगुणमूल्य मणिमुक्ताद्यपहारएतत्प्रायश्चित्तमिदंद्रष्टव्यं)=अर्थात्—मणि मोती मूंगा तांबा चाँदी लोहा काँसी रत्न पत्थर आदि इनके हरने मध्ये बारह दिन धानों के कन खाइके रहिना यही व्रत प्रायश्चित्तहै—इसमेंभी उससे बारह गुणा व्रतदेखि परता है कि जो भक्ष्य भोज्य आदि में एकदिनका कहाथा तिससे यह बात यहां ठहरी कि उन चीजों का मोल परिमान जैसा वहांपर कहि चुके तिससेबारह गुणे मोलवाली अत्रोक्तचीजें चुरानेका यह बारहदिन प्रायश्चित्त जानो=इसी प्रकार यह वचनहै कि (कार्पासकीटजीर्णानां द्विखुरैकखुरस्यच पक्षिगंधौषधीनांचरज्वाश्चैवंत्र्यहंपयः—अत्रापिभक्ष्यादित्रिगुणप्रायश्चित्त दर्शनात्तत्त्रिगुणमूल्यानामपहारस्यैवैतत्प्रायश्चित्तंयतः हीयमानद्रव्यन्यूनाधिकभावेन प्रायश्चित्तात्पत्वमहत्वंकल्प्यमेव)=अर्थात्—रुईकी भरी रजाई गदेला आदि,पुराने वस्त्र औरदोखुरवाले तथा एकखुरवाले जीवोंके बालआदि और पक्षीकेपर खाल आदि वा सदेह छोटे पक्षी और सुगन्ध की चीजें तथा दवाइयोंकी चीजें तथा रस्सीआदि इनकी चोरी मध्ये तीन दिन दूधपीके रहिना प्रायश्चित्त है—इसमें भी पूर्वोक्तभक्ष्य भोज्यादि से तिगुना प्रायश्चित्त देखिपरता है तिससे उन चीजों के तत्रोक्त मोलसे तिगुने मोल वाली अत्रोक्त चीजें हरने पर यह प्रायश्चित्त समझना क्योंकि यह सर्वत्र आवश्यक है कि चोरी किये हुये द्रव्य के न्यून वा अधिक होने अनुसार प्रायश्चित्त की लघुता गुरुता कल्पना करीजाय=चोरियों के प्रायश्चित्त जोकुछयहां तक लिखे गये सो सब उस दशा मे होसक्ते हैं कि पहिले अपहार किया हुआ धन धनी को प्रत्यर्पणकरै तिस पीछे प्रायश्चित्त करै इसका प्रमाण यह अग्रोक्त विष्णु का वचन है (दत्वैवापहृतंद्रव्यंस्वामिनेव्रतमाचरेत्) अर्थात् चुराया धन स्वामीको देही कर प्रायश्चित्त करै बिना दिये नहीं ॥ २६५ ॥

इसी मूल श्लोक से यह पाठ चला आता है

(इतिचौर्यप्रायश्चित्तं)

अथ ऋणानामनपाक्रिया या अनाहिताग्नितायाश्च अपण्यविक्रयस्यचत्रयाणामुपपातकानां प्रायश्चित्त प्रकाशकोऽयं सप्तचत्वारिंशःपरिच्छेदः ४७॥

—※—

इस परिच्छेद में तीनि उपपातकों के प्रायश्चित्त कहे जायँगे कि पहिले ऋण उद्धार न करने के पाप में अर्थात ऋण लेकर पचाइजाने का प्रायश्चित्त—फिर अनाहिताग्निता मे कि जिसके कुल में अग्नि स्थापन करने का अधिकार सो नही राखै तिसके पापका प्रायश्चित्त—फिर अपण्य विक्रयमें कि जिन चीजोंका बेचना प्रतिषिद्ध है तिनको बेचनेके पापका प्रायश्चित्त कहा जायगा॥ इन तीनोंके स्वरूप २३४ मूल श्लोक मे देखौ॥

(ऋणस्याशोधन प्रायश्चित्तं)

ऋणका उद्धार करदेना व्यवहार मर्यादा में कहिचुके हैं कि (पुत्र पौत्रैऋणंदेयं) बेटा पोता को भी बाप दादा का ऋण देना चाहिये—तिसके उद्धार न करने में उपपातक लगने से प्रायश्चित्त करना होता है—तथा (जायमानोवैब्राह्मण) इत्यादि ऋचा में वैदिक ऋण भी तीनि भाँति के देव ऋषि पितर इनके निमित्त देने होतेहैं तिनके उद्धार न करनेसेभी प्रायश्चित्ती होता है—इन सबके लिये वेही प्रायश्चित्तहै जो २६५दोसौ पैंसठिमूलश्लोक में सामान्य भाव सभी उपपातकों पर चारभाँति के दर्शाइचुके उनमेंसे कोई एक प्रायश्चित्त कर्ता की शक्तिके अनुरूप करानाचाहिये—उनके सिवाय मनुने और प्रायश्चित्त भी कहा है=यथा=इष्टिंवैश्वानरींचैवनिर्वपेदब्दपर्यये लुप्तानांयग्रुसोमानांनिष्कृत्यर्थमसंभवे=अर्थात—लोप हुये देव यज्ञों के असंभव दशा में एक वर्ष बीति जाने पर निष्कृति प्राप्त होने के लिये वैश्वानरी यज्ञ कोविस्तारै—इतिऋणानांप्रायश्चित्तं॥ ० ॥ अथअनाहिताग्नित्वप्रायश्चित्तं—अनाहिताग्निता भी एक उपपातक है जिसका स्वरूप २३४ मूलश्लोक में वर्णन होचुका—उसके लिये भी वही चारों प्रायश्चित्त हैं जो २६५ मूल श्लोक में दर्शाए गये—परन्तु यहां यह नियमहै कि जिसके कुलमें अग्निस्थापना का अधिकार चला

आता है ऐसा पुरुष यदि किसी आपत्काल के हेतुसे एकवर्ष भर अग्नि का यजन पूजन न करसके सो उस वर्ष के उपरांत उन्हीं चारों प्रायश्चित्त में से कोई एक प्रायश्चित्त अपनी शक्ति के अनुसार साधे जो एक महीना मे होना लिखचुके हैं= किन्तु जिसके कोई प्रबल आपदा नहींथी अच्छे भलेमें एक वर्षभर अग्निका पूजन बन्द कियाहो तिसको मनुका कहा त्रैमासिक प्रायश्चित्त करना चाहिये–यदाह मनुः (एतदेवव्रतंकुर्युरुपपातकिनोद्विजाः अवकीर्णिवर्जंशुद्ध्यर्थं चांद्रायणमथापिवा) इसकाअर्थ दोनौपैंसठिकी अधिकोक्तमेदेखौ वहां तीनिमहीने लिखचुकेहैं ॥ कदाचित कोई वर्षके भीतरही प्रायश्चित्तकियाचाहै तिसकेलिये कार्ष्णाजिन मुनिका वचनहै=यथाह कार्ष्णाजिनिः=कालेत्वाधायकर्माणिकुर्याद्विप्रोविधानतः तदकुर्वन्त्रिरात्रेणमासिमासिविशुद्ध्यति–अनाहिताग्नौपित्रादौअक्षमाणःसुतोयदि सहिज्ञात्येन पशुनायजेत्तद्धिष्क्रयायतु=अर्थात–ब्राह्मण किसी समयपर कर्मोंको स्थापन करिके साधे यदि उन्हीं कर्मोंका नियमछूटिजाय तौ हरएकमहीनापीछे तीनदिनकाव्रतकरने से शुद्धहोताहै अर्थात यदि एकमहीना कर्म छूटिजाय तौ तीनदिनका व्रतचाहिये दो महीनापर छौदिन इत्यादि क्रमसे–दूसरा यहनियमहै कि जिसकेपिता और जेठभ्राता या दादा आदि कोई अग्नि की स्थापना बिना जीते बैठे हों ऐसा पुत्र जो अग्निका स्थापन यजन करना चाहै तो उन बडों के पराभव दोषका भागीहोकर प्रायश्चित्ती होताहै तथापि ऐसे उत्तम कामकी प्रवृत्त करना आवश्यकहै किजिसको बड पुरुषों ने मेटि दिया था तिससे इस दोषकी शुद्धि के लिये व्रात्यपशु नाम का वेदोक्त यज्ञ करिके तब आरम्भ करै इस व्यवस्थाका ध्वन्यर्थ यहभीहै कि जिसके जेठभाई पिता आदि मरचुकेहो सो ऐसा यज्ञ किये विनाही अग्निका स्थापन कर सकैगा=उन्हीं कार्ष्णाजिन मुनिने एकाग्नि पुरुष के सम्बन्धभी विशेषता कहीहै=यथा=कृतदारोगृहेज्येष्ठोयोऽनादध्यादुपासनम् चांद्रायणंचरेद्वर्षंप्रतिमासमहोपिवा=अर्थात–जिसघर में जेठा पुरुष विवाहिता स्त्री सहित हो जिसके केवल वैवाहिक अग्नि होती है सो यदि उपासन अग्नि को नहीं स्थापै न उसकी उपासना करै सो प्रत्येक वर्ष पीछे एक महीना चान्द्रायण किया करै यद्वा प्रत्येक महीना पीछे एक दिवस निराहार उपवास किया करै तब शुद्धि होय–इत्यनाहिताग्निप्रायश्चित्तं ॥ ० ॥ अथअपण्यविक्रयप्रायश्चित्तं–जिन चीजों का बेचना शास्त्र से निषिद्ध है तिनको बेचै सो अपराय विक्रय नाम उपपातक से संयुक्त होता है यह २३४ मूल श्लोक में कहिचुके तिसके प्रायश्चित्त यद्यपि सामान्य भाव से वही पाये जाते हैं जो २६५ मूलश्लोक

में चार प्रकार वर्णन होचुके तथापि स्मृत्यंतरमें विशेषताके साथ प्रायश्चित्त कहा है=यथाहारीतः=गुड तिल पुष्प मूल फल पक्वान्नविक्रये सोमपानं सोमकृच्छ्रः—लाक्षा लवण मधु मांस तैल क्षीरदधिघृतगंधतक्रचर्मवास्त्रसामान्यतमविक्रयेचांद्रायणं—तथा ऊर्णाकेश केशर भूधेनु वेश्माश्मशस्त्र विक्रयेचभक्ष्यमांस स्नाय्वस्थिशृंग नखशुक्ति विक्रये तप्तकृच्छ्रः—हिंगुगुग्गुलहरितालमनः शिलांजनगैरिकलाक्षालवणमणिमुक्ता प्रवालवैणववेणुमृन्मयेषुचतप्तकृच्छ्रः—आराम तडागोदपानपुष्करिणी सुकृतविक्रये त्रिषवणस्नाय्यधःशायी चतुर्थकालाहारोदशसहस्रंजपन्संवत्सरेणपूतोभवति हीनमानोन्मानसंकरसंकीर्णविक्रयेचेति—अर्थात्—गुड० तिल० फूल० कन्दमूल० फल०पक्वान्न बेचने में सोमपान अर्थात् जल पीके सोमकृच्छ्र व्रतकरै तब शुद्ध होय—और० लाख० नमक० सहत०मांस०तेल०दूध०दही० घी०सुगन्ध० छाछ० चमड़ा० कपडा०इनमें कोई एक चीज बेचने वाला चांद्रायण करै—तथा० ऊन० बाल० केशर० धरती० गऊ० घर० पत्थर० हथियार० इनके बेचने और०रोटी भात आदि खानी चीजें० मांस० नसें तांति आदि० हाड० सींग० नख० सीप घोंघी आदि० इनके बेचने वाला तप्तकृच्छ्र व्रत करै—और० हींग० गूगुल० हरिताल० मनसिल० सुरमा० गेरू० लाख० नमक० मणि० मोती० मूगा० बाँस की बुनी टोकरी आदि० बाँस० मट्टी के बासन० इनका बेचने वाला भी तप्त कृच्छ्र व्रतकरै तब शुद्ध होय—और० बाग बगीचा० तालाब० कुआ०कमल आदि सहित पक्का जलाशय० अपना किया हुआ कोई सुकृत पुण्य० सुकर्म आदि०इनका बेचने वाला यह प्रायश्चित्त करै कि सांझ सबेरे दुपहर तीनों कालमें स्नान करते रहिकर धरती पर शयन करै सायंकाल चौथे पहर भोजन करै और दस हजारमंत्र जपते हुये एक वर्ष पूराकरै तब शुद्ध होय और यही प्रायश्चित्त उसको कराना चाहिये जो घटिया बांटों से बेचै या बाँट पूरे होने में भी तराजू की झोंक से घटि बेचे या घटिया खोटी वस्तु उत्तम वस्तु में मिला कर बेचै या गैर जिन्स की चीज दूसरी चीज में मिलावै जैसे घी तेल का मिलाना आदि=इस प्रकार और भी शंख विष्णु आदि के कहे वचनों से युक्त प्रायश्चित्त की विशेषता से कहा है—तहां साधारण उपपातकों पर जो जो प्रायश्चित्त २६५ मूल श्लोक से कहे गये उनकी भी पहुंच यहां अपण्य विक्रयपर होतीहै तिससे यहडौल समझि लेना कि जिसने आपत्काल के हेतुसे अपण्य विक्रय किया हो तिसके लिये उसी २६५ मूल श्लोक में दर्शाये चार भांति के घोसीयर वाले प्रायश्चित्तों में कोई एक चुनिकर कर्त्ताकी शक्ति के अनुसार कराना चाहिये परन्तु जिसने अनापत्काल में अच्छी दशा में अपण्य विक्रय

कि याहो तिसको उसी अधिकोक्ति के प्रारम्भ में मनुका कहा तीनि महीने वाला प्रायश्चित्त देना ॥ २६५ ॥

इसी मूल श्लोक के टीका से यह व्यवस्था चली आतीहै जिसके कई परिच्छेद होचुके और आगे भी अनेक होयँगे ॥ २६५ ॥

अथ परिवेत्तृ परिवित्त्यादीना मुपपातकिनां भृतकाध्यापकादीनांच प्रायश्चित्त प्रकाश कोऽयं परिच्छेदः अष्ट चत्वारिंशः ४८

इस परिच्छेद में परिवेत्ता और परिविति आदि कई उपपातकियों के प्रायश्चित्त कहे जायँगे जो सबके सब एकही परिवेदन कर्म्म के सम्बन्ध से पापी होते हैं जिस परिवेदन का स्वरूप २३४ मूल श्लोकमें कहिचुके हैं—और इन्हीं के प्रसंग से अग्रेदिधिषु दिधिषु आदि सगी बहिनोंके विवाहकी व्यवस्थाआवैगी कि उनके पति और वे बहिनें भी उपपातक से युक्त होकर प्रायश्चित्त के भागी सब होते हैं= और सबसे पीछे भृतकाध्यापक आदि उपपातकियों के प्रायश्चित्त कहेजायँगे कि जो मजूरी लेकर वेद पढ़ावें या देकर पढ़ैं ॥

(परिवेदनप्रायश्चित्तं)

परिवेदन एक उपपातक है जिसका स्वरूप २३४ मूल श्लोक में आचुकाहै उस का करने वाला परिवेत्ता कहाता है जिसका विशेष प्रायश्चित्त वशिष्ठ जीने कहा है=यथा=परिविविदानः कृच्छ्रातिकृच्छ्रौचरित्वातांतस्मै दत्वापुनर्निविशेत तांचैवोपयच्छेतेति=अर्थात्—परिविविदान छोटा भ्राता जो जेठे का विवाह बिनाहुयेही अपने लिये किसी कन्या का फलदान सगाई आदि स्वीकार करै यद्वा किसी प्रकार से कोई कन्या कहींसे अपना विवाह करने के निमित्त से लावै तो यहपरिवेत्ता कहाता है इसको परिवेदन रूपी दोष लगता है कि जेठे का अपमान किया तिससे यह कृच्छ्र और अतिकृच्छ्र नामक दोनों व्रत करिके वह कन्या उस जेठे को देकर फिर विवाह करै (अर्थात् जैसे ब्रह्म चारी भिक्षा माँगि लाता है उसका धर्म

यही है कि गुरुका अपमान मिटाने के लिये गुरु के आगे लाकर धरता है कि यह भिक्षा आपके लिये लाया हूँ तहां गुरुका यह धर्म है कि उसी को आज्ञा देता है कि लेजाकर भोगो तैसेही) उस अपनी लाई कन्या को जेठे भ्राताके समर्पणकरै कि यह तुम्हारे विवाह के लिये लायाहूँ तहां यदि जेठा उसी को आज्ञादेवै तब उसकन्या से विवाह करै—यह तो केवल वररक्षा फलदान आदि करदेनेका प्रायश्चित्त कहा—परन्तु जिसने सब सवियाँ विवाह भी करडाला हो तिनके प्रायश्चित्त बड़ेबड़े हैं सो आगे हारीत आदि के वचनोंसे देखो=हारीत ने ऐसा कहा है कि=ज्येष्ठेऽनिर्विष्टेकनीयान्निर्विशमानः परिवेत्ताभवति परिवित्तिर्ज्येष्ठः परिवेदनीकन्या परिदायीदाता परियष्टायाजकः तेसर्वेपतिताः संवत्सरं प्राजापत्येनकृच्छ्रेणपावयेयुः=एवंशंखोपि=परिवित्तिःपरिवेत्ता चसंवत्सरंब्राह्मणगृहेयुभैक्ष्यंचरेयातास (तदुभयमपिकामकारेण कन्यापित्राद्यनुज्ञातोद्वाहविषयं प्रायश्चित्तस्यगुरुत्वात)=अर्थात्—जेठे के विवाहे विना छोटा विवाह करै सो परिवेत्ता होता है और जेठा परिवित्ति कहाता है कि उसका अपमान हुआ और वह कन्या परिवेदनी कहाती है कि उसके हेतु से दोनों भ्राता दोषी हुये और कन्या का दान करने वाला परिदायी कहाताहै कि उसीने तीनों को दोषी किया और व्याह कराने वाला पण्डित परियष्टा कहाता है कि उसने इतने दोषियों को यजन कराया ये सभी लोग पतित होते हैं यदि एक वर्षमात्र का प्राजापत्य कृच्छ्र व्रत जुदेजुदे सावैं तब शुद्धहोयँ=ऐसेही शंखनेभी कहा है कि=परिवित्ति और परिवेत्ता दोनों एक वर्ष भर ब्राह्मणों के घर भीख माँगि पेट भरा करैं तब शुद्ध होयँ (सो यह दोनों के वचन वाले प्रायश्चित्त उस दशा पर समझने कि जहां कन्या के पिता आदि का लुभाया यद्वा अपने पिता की आज्ञा दियाहुआ छोटा भ्राता कामना से विवाह निपट करचुका हो क्योंकि प्रायश्चित्त के बड़ापन से यही तात्पर्य है=यहां तक जो लिखा गया सो तो ज्ञानमान और स्वाधीन वर की व्यवस्था है=अन्यथा=जो अज्ञान वर पिता आदि के अधीन रहिते पिता आदिकी दी हुई कन्या साथ कामना से विवाह करचुका तिसको २६५ की अविकोक्ति में लिखे मनु के वचनसे तीनि महीनेका प्रायश्चित्त चाहिये और पिता पण्डित आदि पर वेही व्रत आरूढ होंगे जो ऊपर की व्यवस्था में लिखिचुके—और—जिस वर ने इन बातों का बोध न होने में निपट अज्ञानता से विवाह अपना किया चाहैं पिता के आधीन रहिते या अपने ही स्वाधीन कियाहो तिसको २६५ मूल श्लोक में योगीश्वर के कहे चारि प्रायश्चित्तों में कोई एक दशा और शक्ति के अनुसार क-

रना चाहिये और ऊपर इसी परिच्छेद में वशिष्ठ के वचन से कृच्छ्र अतिकृच्छ्र दो प्रायश्चित्त जो कहिचुके तिन में भी इसका अधिकार से चाहैं उन्हीं को विकल्प से करै (पर दोनों एक साथही करने कहे हैं केवल एक नहीं) सो इस अज्ञान वर को एकही करना चाहिये और कन्या को वर से आधा व्रत कराया जाय=इसी अज्ञानताके मुआमिले पर यमने सबके लिये सुगमता करी है=यदाह यमः=कृच्छ्रोह योःपारिवेद्येकन्यायाःकृच्छ्रएवच अतिकृच्छ्रं चरेद्दाताहोताचांद्रायणंचरेत=अर्थात-परिवित्ति और परिवेत्ता इन दोनों को परिवेदन की दशा में क्रम से कृच्छ्र और अति कृच्छ्र करने चाहिये तथा कन्या को भी कृच्छ्र व्रत करना चाहिये कन्यादान करने वाला अति कृच्छ्र करै और होता जिसने फेरे करवाये सो पण्डित चांद्रायण व्रत करै (जैसी यह छोटे बड़े भाइयों की व्यवस्था कही तैसे बड़ी छोटी बहिनों के विवाह पीछे आगे होजाने में भी उपपातक होता है तिसके प्रायश्चित्त आगे की व्यवस्था में देखो॥०॥ अथान्येषामपि प्रायश्चित्त मिदमेव—इस परिच्छेद में यहाँ तक जोजो कुछ प्रायश्चित्त कहेगये सो औरों परभी समान भाव समझिलेना जो पर्य्या हिताग्नि आदि कई एक उपपातकी और होते हैं क्योंकि इन सबका प्रायश्चित्त एकही साथ कहा भी गयाहै कि जैसा आगे गौतम के वचन में देखना=यदाहगौतमः=परिवित्ति परिवेत्,पर्याहित,पर्याधात्,अग्रे दोधिषू, दिधिषूपतीनां,संवत्सरंप्राकृतब्रह्मचर्यं मिति=अर्थात—परिवित्ति और परिवेत्ता वेही कि जिनके लक्षण ऊपर कहिचुके और पर्याहित वह जेठा भाई कि जिसके अग्नि स्थापना न होते हुये छोटा भाई अग्निस्थापन करि बैठे और पर्याधात् यही छोटा भ्राता है कि जिसने जेठे भाई के न होते अग्निस्थापन करलिया और अग्रेदिधिषू आदि तीनों के लक्षण आगे मनु के वचन से कहेंगे तब देखना तिन सबके उपपातकों का प्रायश्चित्त एक वर्ष भरि प्राकृत ब्रह्मचर्य गौतम ने कहा (इन सबकी एक साथ कहे जाने से समानता ठहरी इसी हेतु जिन प्रायश्चित्तों को ऊपर कहिचुके तिनकीपहुँच इनमें भी होसक्ती है) उनके सिवाय जो प्रायश्चित्त अब आगे कहे जायँ तिनको भी समझना जैसा कि अग्रेदिधिषूपत्ति आदि का प्रायश्चित्त वशिष्ठ जीने कहा है=यथा=अग्रेदिधिषूपतिः कृच्छ्रं द्वादशरात्रं चरित्वा निर्विशेत्तां चैवोपयच्छेत दिधिषूपतिः कृच्छ्रातिकृच्छ्रौचरित्वातस्मैदत्त्वा पुनर्निविशेतेति (अग्रेदिधिष्वादेर्लक्षणं स्मृत्यंतरेऽभिहितयथा—ज्येष्ठायांयद्यनूढायां कन्यायामूह्यतेऽनुजायासाग्रेदिधिषूर्ज्ञेयापूर्वातुदिधिषूःस्मृतेति) तत्राग्रे दिधिषूपतिः प्राजापत्यंकृत्वा तामेवज्येष्ठांपश्चाद-

न्येनोढामुद्वहेत्• दिधिषूपतिस्तुकृच्छ्रातिकृच्छ्रौकृत्वातस्योढांज्येष्ठांकनीयस्याःपूर्वंविप्रेन्द्रेदत्वान्यामुद्वहेदिति मिताक्षराकाराः=अर्थात्—वशिष्ठ ने यह कहा कि अग्रेदिधिषूपति बारह दिन का कृच्छ्रव्रत करिके विवाह करै और उसको भी अपने पास लाकर स्वीकार करै• तथा दिधिषू का पतिभी कृच्छ्र और अतिकृच्छ्र दोनो करिके उसकेलिये दीहुई को फिर बिवाहे (इस बात के मध्ये अग्रेदिधिषू आदि का लक्षण भी मनुस्मृति में कहा है यथा—यदि जेठी कन्या के विवाह विना जो छोटी वहिन विवाहिली जाय वही छोटी अग्रेदिधिषू नाम जानों और पहिली जो बिना विवाही रही जेठी सो दिधिषू कहाती है(तहां मिताक्षराकार यह व्यवस्था दर्शाते हैं कि अग्रेदिधिषू का पति जिसने छोटी को बिवाहि के अपने ऊपर दोष लिया सो प्राजापत्य करिके उसी जेठी वहिन को जो पीछे किसी औरने स्वीकार करी हो तिसे विवाहि लेवै• और दिधिषू का पति भी कृच्छ्र अतिकृच्छ्र दोनों व्रत करिके अपनी स्वीकार करी जेठी छोटी के पहिले विप्रेन्द्रको देके और कन्या विवाहै यह मिताक्षराकारों का कथन है=इस व्यवस्था में ऊपर की संस्कृत जो वशिष्ठ के वचन से लेकर लिखचुके उसी के अनुरूप अर्थ लिखे गये—परन्तु बहुधा विज्ञानी इसके समझने में भ्रांति खडी करैंगे तिससे फिरभी निर्णय करना परा—तहां ऐसा समझि लेना कि यद्यपि अग्रेदिधिषू पति को कृच्छ्र व्रत करना कहा तथापि इसको कृच्छ्र अतिकृच्छ्र दोनों व्रत चाहिये क्योंकि अधिक दोषी यही है और दिधिषूपतिके लिये जो दोनों व्रत कहे तिस के लिये एक कृच्छ्रही चाहिये क्योंकि उसमें दोष थोडाहै और यही न्यायकी रीति है (अन्यथा संस्कृत व्यवस्थामें नहीं कहि सकते कि लेखक प्रमाद से वैपरीत्य हुआ हो या किस हेतु से) इसके सिवाय ऊपरली व्यवस्था को ऐसी दशापर समझना कि जब किसीने पहिले छोटी वहिन से सगाई मात्र करीहो और उसकेबाद किसी दूसरेने बडो वहिनसे सगाईमात्र करीहो किन्तु विवाह किसीका न हुआहो क्योंकि विवाहके होजानेपीछे विवाही कन्या किसी दूसरे को देना यह लोक शास्त्र दोनों से विरुद्ध है और ऊपर की व्यवस्था में दूसरे को देना लिखा गया है—तहां खुलासा अर्थ इसरीतिसे लगाना कि अग्रेदिधिषूपति वही है जिसने जेठी वहिन को सगाई हुये बिना छोटी वहिन से सगाई करी तिस को अपने उपपातक पर कृच्छ्र अतिकृच्छ्र दोनों प्रायश्चित्त करने बादि पहिले वह जेठी वहिन भी विवाहिलेनी चाहिये जो दिधिषू होजानेके दोषसे किसीने स्वीकार न करी हो या स्वीकार किये पीछे यह दशा सुनिके सगाई छोडिदी गई हो—इसी

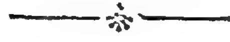
प्रकार वह जेठी बहिन जो दिधिषू ठहर गई तिसके साथ जिस किसीने धोखे से स-गाई करली हो तिसको अपने उपपातक पर यह करना चाहिये कि प्रथम तो कृच्छ्र व्रत प्राजापत्य को आचरे फिर उस जेठी बहिन दिधिषू की सगाई छोड़ि छोटी का विवाह न होने से पहिले उसी को देनी चाहिये जिसने पहिले छोटी से सगाई करी अथवा यह बानक न बनिपरे तो किसी ज्ञानी विप्रेंद्र को देकर आप किसी और निर्दोषा कन्या से विवाह करे (परन्तु किसी विप्रेंद्रको देना यह मिताक्षरा-कारों का लेख है अर्थात् वशिष्ठ के वचन में यह चर्चा नहीं है) इतिपरिवेदनप्रायश्चित्तं ॥ आगे इसी परिच्छेद में अन्य उपपातकों का प्रायश्चित्त कहा जायगा ॥ ० ॥ अथ भृतकाध्यापकभृताध्यापितयोः प्रायश्चित्तं—इन दोनों का लक्षण २३५ मूल श्लोक में कहिचुके हैं=प्रायश्चित्तं यदाह विष्णुः=(पयसा ब्रह्म सुवर्चलांपिबेदित्यधिकृत्यविष्णुनोक्तं—भृतकाध्यापनंकृत्वाभृताध्यापितकस्तथा अनुयोगप्रदानेनत्रीनपक्षान्नियतःपिबेत=अर्थात्—विष्णुने किसी प्रायश्चित्तमें दूधसे ब्रह्मसुवर्चलाका पीना पहिले कहिकर पीछे वही प्रकार इनके मध्येभी कहाहै कि—मजूरी देने लेने आदि अनुयोग के प्रदान से विद्या पढ़िकर या पढ़ाइ के दोनों पुरुष उपपातकी होते हैं सो तीन तीन पाखतक नियत व्रत होके दूध में औटी हुई ब्रह्मसुवर्चलापीवें तब शुद्ध होयँ=इसीलिये=मनु के प्रमाण से स्मृत्यंतर में कहाहै कि (दत्तानुयोगानध्येतुःपतितान्मनुरब्रवीत्) पढ़ने वाले से मजूरी आदि अनुयोग जिनको दिये जायँ तिनको मनु जी पतित कहिचुके हैं=यहां भी इस व्रत के साथ पूर्वोक्त व्रतों को मिलाकर कर्त्ताओंकी शक्ति आदिकी अपेक्षासे यथोचित विकल्प सोचिलेना चाहिये यह मिताक्षरा कारोंने कहा ॥ २६५ ॥

इसी मूल श्लोकसे पाठ अबतक चला आताहै ॥ २६५ ॥

(इति भृतकाध्यापक प्रायश्चित्तं)



अथपारदार्योपपातकप्रायश्चित्तप्रकाशकोऽयं परिच्छेदःएकोनपंचाशत्तमः ४९ ॥



इस परिच्छेदमें उसभाँतिके परस्त्री गमन पापोंका प्रायश्चित्त भेदकहा जायगा कि जो उपपातकों में गिनती है अर्थात उन स्त्रियोंकाचर्चा इसमें नहींहै जिनकेलक्षण पहिले महापातकों में अगम्या गमनके रूप से वर्णनहुयेथे॥ यहां इस परदारा गमनके अनेकभेद कहेजायँगे तिन सबके जुदे प्रायश्चित्तभी दर्शाये जायँगे॥

(परस्त्रीगमनप्रायश्चित्तं)

पराईदारा भोगकरना उपपातक होताहै जिसका स्वरूप लक्षण२३५मूलश्लोक में आचुकाहै और इसीसे सामान्य उपपातकों वाला तीनि मासका प्रायश्चित्त जो २६५की अविकोक्ति में मनुके वचन से आया था सो भी इसपर पहुँचता और उसी २६५ के मूलश्लोक में चारप्रकार प्रायश्चित्त योगीश्वर ने कहेथे उनकी भी पहुंच इसपर होसक्ती परन्तु गुरुदारागमन और उसके समान पचीसवें परिच्छेदमें भी इस का अपवाद कहाजाचुका है=तथैव अन्यत्र भी गौतम आदि ऋषियों ने विशेष पादार्थ के द्वारा भी अपवाद कहाहै (तिनसे उन छोटे प्रायश्चित्तों की पहुँच इसपर नहींहै)=अत्राहगौतमः=द्वेपरदारेत्रीणिश्रोत्रियस्येति=तथावार्षिकंप्राकृतंब्रह्मचर्यं प्रस्तुत्यतेनैवेदमभिहितं=उपपातकेषुचैवमिति=अत्रेयंव्यवस्था (ऋतुकालेकामतोजातिमात्रब्राह्मणीगमनेवार्षिकप्राकृतब्रह्मचर्यं—तस्मिन्नेवकालेकर्मसाधनत्वात् विगुणगामिन्यांब्राह्मण्यांगमनेद्वेवर्षे प्राकृतंब्रह्मचर्यं—तादृश्यामेवश्रोत्रियभार्यागमनेत्रीणिवर्षाणिप्राकृतब्रह्मचर्यं (यदाश्रोत्रियपत्न्यांगुणवत्यांब्राह्मण्यांगैत्रार्षिकं) तदातादृशिवनायामेवक्षत्रियायांद्वैवार्षिकं तादृश्यामेववैश्यायांवार्षिकमितिव्यवस्था इति मिताक्षराकाराः=अर्थात—गौतमने यह कहा कि—दोवर्ष पराईदारामें तीनि श्रोत्रिय को दारामें=तथा पहिले वार्षिक प्राकृत ब्रह्मचर्यको प्रधान कहिकर उन्हींगौतम ने यह कहा कि=इसीतरह उपपातकों में भी वार्षिक ब्रह्मचर्य होय=इसके ऊपर मिताक्षराकार व्यवस्था नियत करतेहैं कि=मासिक ऋतुकाल में कामकी चाहना से

जो कोईब्राह्मणमात्र किसी जातिमात्र ब्राह्मणीसे गमनकरै तौ एकवर्षभरका प्राकृत ब्रह्मचर्य प्रायश्चित्त कराया जाय—और उसी ऋतुकाल में गर्भरूप कर्मका साधन होसकने से दोगुणावाली स्त्री ठहिरतीहै ऐसी दोगुणावाली ब्राह्मणीसे गमन करने में दो वर्षभर प्राकृत ब्रह्मचर्य कराना चाहिये—तैसेही लक्षणावाली श्रोत्रिय की भार्या साथ गमन करने में तीनिवर्षभर प्राकृत ब्रह्मचर्य कराना चाहिये (जब श्रोत्रिय की पत्नी ब्राह्मणी गुणावती में गमन करनेसे तीनिवर्ष प्रायश्चित्त ठहिरा) तौ इसीहेतुसे वैसे लक्षणावाली ब्राह्मण की पत्नी क्षत्राणी गमन करने में दोवर्षका प्रायश्चित्त चाहिये और उसी लक्षणावाली ब्राह्मणकीपत्नी बनैनी गमन करनेमें एकवर्षचाहिये यह मिताक्षराकारों ने व्यवस्था कही फिर कहते हैं कि=इसी न्यायके समान दृष्टि देनेसे ब्राह्मणकी शूद्रामें भी गमनकरनेसे छैमहीनेका प्राकृत ब्रह्मचर्य कल्पनाकरना चाहिये=इसी न्यायके अनुसार शंखने भी चारोंवर्णो की स्त्रियां ब्राह्मण की बिवाहिता कहिकर वर्ण क्रमसे प्रायश्चित्त में कमी दर्शाई है=यथाहशंखः=वैश्यायामवकीर्णःसंवत्सरंब्रह्मचर्य्यंत्रिषवणंचानुतिष्ठेत् क्षत्रियायांद्वेवर्षेत्रीणिब्राह्मणयां(वैश्यायांशूद्रायांब्राह्मणपरिणीतायामितिवर्णक्रमेणह्रासोदर्शितः=अर्थात्—बनैनी में बिगड़ा हुआ ब्राह्मण वर्षएकभरब्रह्मचर्यसाधै और त्रिकाल स्नानक्रियाकरै एवंक्षत्रियामेंबिगडा हुआ दोवर्ष ब्रह्मचर्यकरै ब्राह्मणी में बिगड़ाहुआ तीनिवर्ष करै•और ये बनैनी या शूद्रा आदि जो कही सो किसी ब्राह्मणकी बिवाहिता हों उन्हींका यह चर्चाहै अर्थात् जो धरीबैठारी ब्राह्मणके घरमें तिनका प्रायश्चित्त कहीं आगेकहाजायगा=इसी न्यायके आधीन=कोई क्षत्री किसी क्षत्रीकी बिवाहिता क्षत्रिया या बनैनी या शूद्रा जो वैसेही पूर्वोक्त ऋतुकाल आदि लक्षणों वाली हों तिनमें बिगड़ै सो वर्णक्रम से दोवर्ष या एकवर्ष या छमाही भर प्राकृत ब्रह्मचर्य्यसाधै तब शुद्ध होय=इसी प्रकार=कोई वैश्य किसी वैश्य की बिवाहिता बनैनी या शूद्रा जो पूर्वोक्त लक्षणों वालीहों तिनमें बिगडै सो वर्ण क्रमसे एकवर्ष या एक छमाही ब्रह्मचर्यकरै तब शुद्ध होय=इसीप्रकार=कोई शूद्र किसी गैर शूद्रकी बिवाहिता शूद्री भार्यामें बिगड़ै सो छमाहीभर ब्रह्मचर्य साधै=गौतमके वचनसे लेकर यहां तक जो कुछ नियम कहेगये सो सब केवल एकबार पराई भार्या में बिगडने मध्ये समझना यही तात्पर्य अगिले आपस्तंबके वचनसे पायाजाताहै तिसको देखौ=यथाहापस्तंबः=सवर्णायामनन्यपूर्वायांसकृत्सन्निपातेपादःपतत्येवमभ्यासेपादःपादश्चतुर्थेसर्वमिति (एतदपिगौतमीयत्रिवार्षिकेणसमानविषयं अनन्यपूर्विकायांचतुरभ्यासे द्वादशवार्षिक प्रायश्चित्त

विधानादेकस्यामेव गमनाभ्यासेनेदंप्रायश्चित्तं किन्तुप्रतिगमनंपादपादन्यूनंकल्प्यं) एतत्सर्वंकामकारविषयं=अर्थात्—आपस्तंबने कहाहै कि जो कोईपुरुष अपने सवर्ण पुरुष की सवर्णाभार्या (जो पहिले किसीकी भार्या न होचुकी हो अर्थात् उसीकी विवाहिता हो तिस) में एकहीवार यदि संगमकरै तौ बारहवर्षवाले अगम्यागमनके प्रायश्चित्तकी एकचौथाई तःनिवर्ष प्रायश्चित्त उसपर लगताहै इसीक्रमसे बारबार के अभ्यास में एकएक पाद बढ़ताजाताहै कि दो रात्रिके संगम से आधा प्रायश्चित्त और तीनि रात्रि के संगम से तीनि पाद चौथी रात्रि के संगमसे सभी बारहवर्षों का पूरा प्रायश्चित्त चाहिये (यह आपस्तंबका प्रायश्चित्त भी ऊर्ध्वोक्त गौतम के कहे तीनिवर्षोंकी बराबरहै क्योंकि गौतमने तीनि वर्ष केवल एकबारके संगमपर कहेहैं और यहाँ अन्यनय पूर्विकाके बारबार गमन करनेमें बारहवर्ष कहेगये) अकामकृतगमनप्रायश्चित्तं—यहसब जोकुछ यहांतक प्रायश्चित्तकहेगये सोकामकी इच्छा से संगम करनेमध्ये समझने=परन्तु जहां कहीं=कामकी चाहना बिना किसी धोखे आदिसे उसीप्रकारकी स्त्रियोंमें संगम होगया हो जैसाजैसा ऋतुकाल आदि लक्षण ऊपर कहिचुके तहाँ वेही पूर्वोक्त प्रायश्चित्त सब अपनेअपनेमौकेपर आधेआधे कियेजायँगे ॥०॥ ऋतुकालंविनागमने—जहां कहीं ऋतुकालके बिना संगमकिया जाय तिसकी व्यवस्था अब कहते हैं कि=जब कोई ब्राह्मण किसी जातिमात्र की ब्राह्मणीमें ऋतुकालके बिना कामकी इच्छासाथ गमन करै तब मनुका कहा तीनि महीनेवाला प्रायश्चित्त करायाजाय जो२६५दोसौपैंसठिकी अधिकोक्ति में लिखि चुकेतहां देखो ॥ इसीतरह ऋतुकालके बिना किसी ब्राह्मणकी क्षत्रिया विवाहिता यावैश्या विवाहिता भार्या जो सामान्य जातिमात्रसे प्रसिद्धहो पतिव्रतआदि किसी गुणसे युक्त न हो तिसमें यदि कोई ब्राह्मण कामकी चाहनासे बिगड़ै सो उन्हीं मनु का कहा दोमहीना चांद्रायण और वैश्याकी अपेक्षासे एक महीना चांद्रायणकरै ॥ इसीतरह ऋतुकालके बिना कोई क्षत्री किसी गैर क्षत्रीकी विवाहिता क्षत्राणी या बनेनी भार्यामें कामकी चाहनासे बिगड़ै सो क्षत्राणी की अपेक्षा दोमहीना चांद्रायण और बनेनीकी अपेक्षा एक महीना चांद्रायण करै तथा शूद्रा में बिगड़ने मध्ये इससे आधा समझिलेना ॥ इसीतरह ऋतुकालके बिना कोई वैश्य किसी गैर वैश्य की विवाहिता बनेनीमें कामकी इच्छासे बिगड़ै सोदोमहीने चांद्रायणकरै जो वैश्य की विवाहिता शूद्रासे बिगड़ै सो एकमहीना चांद्रायणकरै ॥ ० ॥ अनाप्यकामकृतगमने—जहां कहीं इन्हीं सब स्त्रियोंमें येही उक्त पुरुष काम की इच्छा बिना कि-

स्त्री धोखेआदि हेतुसे गमन करिबैठेहों तहां ऊर्ध्वोक्त तीनमहीने आदि प्रायश्चित्तों के स्थानपर इनके बदले यथाक्रमसे जो जो प्रायश्चित्त इनसे छोटेहोने चाहिये तिनका स्वरूप (२६३ । २६४) मूलश्लोकों में कहिचुके हैं परन्तु यहां उनका क्रम इसरीतिसे लेना कि ग्यारहवां ऑडवृषभ दयागऊवाला प्रायश्चित्त अर्थात् के तीनि मासके स्थानपर लेना और यहां जिसको दोहीमासका प्रायश्चित्त कहागया हो तिसकेलिये इच्छाविना गमन करनेमध्ये एकमहीना पंचगव्य पीनेका प्रायश्चित्त ठहिराना और यहां जिसको एक महीनेका चांद्रायण कहागया तिनकेलिये इच्छा विना गमन करनेके हेतुसे एक महीनेका प्राजापत्य ठहिराना=इनके सिवाय शूद्रा के गमनमध्ये जो कामनासहितपर एकमहीना व्रत कहिचुके वही कामना से रहित भोगमें आधा करिके एकपाख ठहिराना चाहिये=इसी लिये संवर्त्तने ऐसा कहाहै कि=शूद्रयांतुब्राह्मणोगत्वामासंमासार्धमेववा गोमूत्रयावकाहारस्तिष्ठेत्तत्पापमुक्तये॰ इत्यकामतोऽर्धमासिकमित्यभिप्रेतं=अर्थात्—ब्राह्मण शूद्रीमें गमन करिके एकमहीना वा आधा महीनाभरगोमूत्रमें पकाया जौका दलिया खाकर व्रतकरै॰सो यह आधा महीना विना कामनाके भोगमध्ये अभिप्राय सोचि के कहा है=और भी यह कहा है कि=ब्राह्मणश्चेदपेक्षापूर्वंब्राह्मणदारानभिगच्छेन्निवृत्तधर्मकर्मणः कृच्छ्रोनिवृत्तधर्मकर्मणीति (कृच्छ्रइतिलहाह्मणभार्यायांशूद्रायांद्रष्टव्यंद्विजातिस्त्रीषुचविप्रोढासुविस्त्रिर्व्यभिचारितासु अबुद्धिपूर्वगमनेवा=अर्थात्—यदि ब्राह्मण काम क्रीडा की अपेक्षा से चाहिकर किसी ऐसे ब्राह्मण की दारा में संगम करै जो धर्म्म कर्म्मों से विहीन हो और संगम करनेवाला ब्राह्मण भी धर्म कर्मों से विहीनहो तो इसदशा मे कृच्छ्र प्राजापत्य व्रत कराना चाहिये (सो यह दारा शब्द सामान्य होनेपर भी शूद्र जाति की दारा पर आरूढ समझना अर्थात् शूद्रजाती कन्या यदि ब्राह्मणको विवाही गईहो क्योंकि प्राजापत्य नामक प्रायश्चित्त के छोटापन से यहीबात पाई जातीहै दूसरे धर्म कर्मों से विहीन कहा तिससे भी यही बात सिद्ध होती है कि अपने जाती धर्मकर्म छोड़िके शूद्रा कन्यासे विवाह कियाहो तिस दारामें यदि कोई ओछा ब्राह्मण काम क्रीड़ा की अपेक्षा से सगमकरै तिसपर यह छोटा प्रायश्चित्त चाहिये) और (व्यभिचारितायांगमने) इसीवचन मे ब्राह्मणस्यदाराः दाराओंका बहुत्व कहाजानेसे दूसरा अर्थ यहभी सिद्ध होताहै कि (जिस ब्राह्मण की क्षत्रिया और वैश्या दारा विवाहिता हों या ब्राह्मणी दारा होय परन्तु ये सबदारा दो तीन बार तक व्यभिचारसे बदनाम होचुकी हों तिनमे यदि कोई धर्म्म कर्म्म से विहीन

ब्राह्मण काम क्रीडा की अपेक्षा से गमन करै तिसपर भी यह छोटा प्रायश्चित्त चाहिये क्योंकि दारायें यद्यपि ऊँचे वर्णों की कन्या ठहिरीं परन्तु व्यभिचार से बदनाम दो तीन बार होचुकीथीं तिससे बहुत बड़े प्रायश्चित्त की ज़रूरत भोगनेवाले पर नहीं रही और पूर्वोक्त शूद्रा भार्या यद्यपि नीच वर्ण की कन्या ठहिरी तथापि व्यभिचार से बदनाम नहीं थी इसलिये उसके भोग मध्ये इन्हीं तीनों को बराबर प्रायश्चित्त कहा) और भी इसी वचन में दाराओं का बहुत्व कहा जाने से तीसरा अर्थ यह भी सिद्ध होता है कि (तीनों ऊँचे वर्ण की कन्या जो ब्राह्मण की विवाहिता दारा हों और व्यभिचार की बदनामी भी उनमें जाहर नहो तिनमें कोईब्राह्मण विनाजाने या अपनी भार्याके धोखे आदि से संगम करै तिसपर भी यह छोटा प्रायश्चित्त चाहिये क्योंकि धर्म कर्म से विहीन पुरुष की भार्या उनको कहिचुके और भोगने वाला भी धर्म्म कर्म्म से विहीन कहागया था ॥ ० ॥ श्रेष्ठ ब्राह्मण की दाराओं मध्ये यदि कोई गैर ब्राह्मण विना जानेही व्यभिचार करै तिसमें भी संवर्त ने दो भेद से प्रायश्चित्त कहा है=यथाह संवर्तः=विप्रास्वजानतागत्वाप्राजापत्यंसमाचरेत्=अर्थात्—उत्तम गुणवान् ब्राह्मण की दाराओं में बिना जाने गमनकरिके प्राजापत्य समाचरै (इस वचन में• समाचरेत्• इतने पदके दो तरह से अर्थ लगते हैं कि प्राजापत्य जो बारह दिनमें एक पूरा होता है तिसको सम्यक् अच्छी विधि से आचरै यह एक तरह का अर्थ ठहिरा—दूसरा अर्थ ऐसाहै कि प्राजापत्य नामक जोव्रत है बारह दिनवाला तिसको समा चरेत् एक वर्ष भर निरन्तर आचरै क्योंकि समा संज्ञा एक वर्ष की होती है सो इस दो भाँति का यह भेद है कि जहां गुणवान् ब्राह्मण की भार्या व्यभिचारिणी हो तिसमें बिनाजाने जो संगमकरै सो केवल एकही प्राजापत्य करिके शुद्ध होजाय• जहां उसी गुणवान ब्राह्मण की भार्या निष्कलंक हो तिसमें बिना जाने यदि कोई गैर ब्राह्मण संगम करै सो निरन्तर एक वर्ष भर अनेक प्राजापत्यकरै तब शुद्धहोय॥०॥ रानी संन्यासिनिआदि अनेक उत्तमस्त्रियां जिनका संगम करनेवालेकी इन्द्री कटवाना पहिलेकहिचुके २३२ दोसौ बत्तीस की अधिकोक्ति में नारद के वचन देखौअथवा इन्द्री कटवाने बिनाभी बारहवर्ष आदि केवड बड़े प्रायश्चित्त उसको ऐसी दशापर आरूढहोचुके हैं कि जहां उन स्त्रियोंने आपही पुरुष को उत्साह देकर मोहित किया हो• उन्हीं स्त्रियों के भोग मध्ये यहां पर बहुत छोटा सा प्रायश्चित्त यमने कहा सो अब लिखते हैं तिसका यह कारण है कि वहां तौ कलंक से रहित अतिशय शुद्ध स्त्रियों का चर्चा था और यहांपर

छोटा प्रायश्चित्त इसलिये है कि यदि वेही स्त्रियां पहिले व्यभिचार भी करचुकी और बदनाम हों तिनको यदि कोई पुरुष कामकी चाहना से भोगै यद्वा काम की चाहना बिना उन्ही स्त्रियों ने उत्साह देकर फांसलिया हो तो यह एक उपपातक है तिसपर यह छोटा प्रायश्चित्त चाहिये किन्तु इन्द्री कटवाना आदि कुछ नहीं= यथाह यमः=राज्ञींप्रव्रजितांधात्रींसाध्वींवर्णोत्तमामपि कृच्छ्रद्वयंप्रकुर्वीतसगोत्रामभिगम्यच=अर्थात्–रानी• संन्यासिनि आदि साधिनी• धात्री धाइ जिसने अपने को दूध पिलाकर पाला हो• साध्वी जो नेम धरम आदि से संयुक्त हो वर्णोत्तमा जोअपने से ऊँचे वर्ण की स्त्रीहो• सगोत्रा जो अपने गोत्र भर में दूर नाते की हो• इनके पास जाइके दो कृच्छ्र प्राजापत्य करनेचाहिये (केवल उसीदशामें कि यदि स्त्रियाँपहिले से व्यभिचार में प्रसिद्ध हों और पुरुष ने किसी धोखा आदि अज्ञानतामें संगम एक बार कियाहो अन्यथा इसके बड बड प्रायश्चित्तहैं जैसा अनन्तर अभी लिखिचुके सो देखो॥ ०॥ ऊपर के पाठ में यह चर्चा आचुका है कि (ये सब दारा दो तीन वार तक व्यभिचार से बदनाम होचुकी हों) तहां यही तात्पर्य था कि चौथीवार जिन के व्यभिचार की बदनामी न सुनीहो तिनके मध्ये तत्रोक्त प्रायश्चित्त है-अन्यथा जो चौथीवार किन्तु चौथे पुरुष से बदनाम हुईहो वह स्वैरिणी और पांचवें से बन्धकी आदि होजाती है (चतुर्थेस्वैरिणीप्रोक्तापंचमेबंधकीमता) फिर चाहै किसी कुलकी हो इसका नियम नहीं रहता=स्वैरिण्यादिषुगमने–ऐसी स्त्रियोंमें यदि कोई ब्राह्मण जाके बिगडै तो फिर तत्रोक्त से थोडा प्रायश्चित्त चाहिये=यथा हशंखः=स्वैरिण्यांवृषल्यामवकीर्णःसचैलंस्नात्वोदकुंभंदद्याद्ब्राह्मणाय वैश्यायांचचतुर्थकालाहारो ब्राह्मणान्भोजयेद्यवसभारंचगोभ्योदद्यात् क्षत्रियायांत्रिरात्रोपोषितो घृतपात्रंदद्यात् ब्राह्मण्यांषड्रात्रोपोषितोगांदद्यात् गोष्ववकीर्णःप्राजापत्यंचरेत् शूद्रायामवकीर्णःपलालभारंसीसमाषस्कंचदद्यात्=अर्थात्–स्वैरिणीके कुलक्षण अभी लिखिचुके तैसे कुलक्षणा वाली वृषली अर्थात् शूद्रकी भार्या जो कोई स्त्रीहो तिस में जो कोई ब्राह्मण जाकर एक वार बिगडै सो वस्त्रों सहित स्नान करिके जल का भरा घट ब्राह्मण को दान करै यही प्रायश्चित्त है• एवं जो बनेनी कोई स्वैरिणी प्रसिद्ध हो तिसमें जाकर एक वार ब्राह्मण बिगडै सो एक दिन का व्रत करिकेचौथे काल संध्यासे पहिले थोडा भोजन करै दूसरे दिन यथाशक्ति संख्या से ब्राह्मणोंको भोजन करावे और शास्त्रोक्त परिमानसे एकभार घास लेकर गौओंकोदेवै•एव क्षत्री की भार्या क्षत्राणी कोई स्वैरिणी प्रसिद्ध होय तिसमें कोई ब्राह्मण एक वार यदि

संगम करै सो तीनिदिन उपवास करिके घीका भरा पूर्णपात्र दान करै॰एवं ब्राह्मणी जो स्वैरिणी प्रसिद्ध होय तिसमें कोई गैर ब्राह्मण एकबार संगम करै सो छेदिन उपवास करिके गऊदानकरै तब शुद्धहोय॰एवं जो गौओंकेसाथ मैथुनकरै सो प्राजापत्य करै तब शुद्ध होय॰ एवं अनूढा कन्याचाहैं किसीवर्णकी होय जो विवाहके न होने से पिताके घरमें रहिते रजोवती होकर पीछे स्वैरिणी होगई हो तिसमें यदि कोई ब्राह्मण एकबार संगम करै सो एक भारके परिमान से धान कोदो आदि का पयार गौओं को देकर सीसा लोहाभी दान करै तब शुद्ध होय यह शंख जीने कहा॥ ०॥ और इसी उक्त विषय पर षट्त्रिंशत् मत के ग्रन्थ में भी ऐसा प्रायश्चित्त कहा है कि ब्राह्मणींबन्धकींगत्वाकिंचिद्दद्याद्द्विजातये राजन्यांचेद्धनुर्दद्याद्वैश्यांगत्वातुचैल कम शूद्रांगत्वातुवैविप्रउदकुंभंद्विजातये दिवसोपोषितोवास्याद्दद्याद्विप्रायभोजनम्= अर्थात्–बंधकीके कुलक्षण ऊपर कहिचुकेहैं कि चौथाछोड़ि पांचवेंपुरुषकेघरजैदे यद्वा पाँचवेंसेव्यभिचार करै सो बंधकी कहाती है–ऐसे कुलक्षणवाली कोईब्राह्मणी जो बंधकी प्रसिद्धहोय तिसमें यदि एकबार कोई गैरब्राह्मण जाकर बिगडै सो कुछ एक दान ब्राह्मणको देकर शुद्ध होसक्ता है॰ एवं क्षत्राणी जो क्षत्रीकी भार्य्या बंधकी होय तिसमें एकबार कोईब्राह्मण जाकेबिगडै सो एकधनुष दानकरै॰एवंवैश्यानी जो वैश्यकीभार्या बंधकीहोय तिसमें कोईब्राह्मण एकबारजाके बिगडै सो एक वस्त्रदान करै॰एवं शूद्रा जो शूद्रकी भार्या कोई बंधकी होय तिसमें कोई ब्राह्मण एक बार जाके बिगड़ै सो जलका भरा घट ब्राह्मणको दानकरै अथवा एकदिन उपासकरिके ब्राह्मणको जिमाइ देवै तौ शुद्ध होजाय (यद्यपि इस व्यवस्था में पहिली शंख मुनि की व्यवस्थासे कुछ भेद भी प्रतीत होताहै परन्तु दोनोंका विकल्प समझि लेना कि प्रायश्चित्ती पुरुषकी दशाके अनुसार दो बातोंमें जो एक सम्भव होय सो करवाना चाहिये॥ ०॥ अथगर्भधारण प्रायश्चित्तं (अनुलोमव्यवायेगर्भे द्विगुणंयदिस्या अतिदूषितान प्रतिलोमगानभवति तदैव–अन्त्यजाति गमननाचेपि द्वैगुणं) अर्थात्– उसी मैथुनका चर्चा है जो अनुलोम रास्तेसे होय किन्तु नीचे वर्णकी स्त्रियोंमें ऊँचे वर्णके पुरुष या समान वर्ण के स्त्री पुरुष दोनों व्यभिचार करैं तिनका जो कुछ प्रायश्चित्त जिस क्रमसे पहिले कहिचुकेहैं वही सब अपने अपने स्थलपर यहां आकर दूने किये जायँगे यदि मैथुन से गर्भ धारण भी होगया हो॰ परन्तु यह नियम केवल उन्हीं स्त्रियोंका समझना जो अति दूषित बहुत बदनाम नहीं और प्रतिलोम पुरुषोंसे व्यभिचार जिनका न हुआहो (प्रतिलोमका व्यभिचार वही कहाता है जो

नीचे वर्णके पुरुषों से ऊँचे वर्ण की स्त्रियां करें) इसी प्रकार गर्भ रहिने विना भी पूर्वोक्त प्रायश्चित्त दूने कियेजाते हैं जो अन्य जातिमें व्यभिचार मात्र होय अर्थात् पहिले जो जो कुछ प्रायश्चित्त जिस वर्णके पुरुषको जिस वर्ण की स्त्री साथ गमन करने मध्ये कहिचुके हैं वही दूना उस दशामें करना होगा जो उसी वर्ण का पुरुष उक्त स्त्रीके वर्णसे भी नीचे वर्णकी स्त्री साथ व्यभिचार करै यहा ऐसे वर्ण के समान कोई अन्यजाति ऐसीहो जो वर्णोंसे उपराल्ल होय॥ ० ॥ प्रतिलोमदूषितास्वपिगर्भ धारणे=प्रतिलोमदूषितासु अत्यावसायिस्त्रीषुच चांडालीगर्भेयथागुरुतल्पव्रतं तथा किंचिन्न्यूनंतारतम्यकल्प्यं—चांडालीगमनेवार्षिकं तद्गर्भेगुरुतल्पत्वंतथैवज्ञेयं(इद प्रायश्चित्तजातंगर्भानुत्पत्तिविषयं=अर्थात्—द्विजातियोंकी स्त्रियां जो प्रतिलोमनीचे वर्णों से विगडी हों तिनमें यदि कोई समान वर्ण वाला पुरुष या उनसे ऊँचे वर्ण वाला पुरुष ऋतुकालमें संगम करिके गर्भधारणकरै अथवा साक्षात्कार अंत्यावसायी जो चंडाल आदि होतेहैं तिनकी स्त्रियोंके ऋतुकाल में संगम करिके किसी वर्णका पुरुष अपने बीजसे गर्भधारण करै तौ इन दोनों दशा में वह प्रायश्चित्त विचारना चाहिये कि जैसे चांडाली में गर्भधारण करने से गुरुतल्प रूपी महा पाप दूर करने वाला व्रत होताहै तैसा तरतमके अनुसार कुछ न्यून प्रायश्चित्त होय—तिसका यह द्योतहै कि चांडाली में संगम करने मात्रसे एक वर्षवाला व्रत कराना और चांडाली मे गर्भ जमि जाने से साक्षात् गुरुतल्प रूपी पाप समझना तथापि प्रायश्चित्त उससे कुछ घटाइकर देना चाहिये जो गुरुतल्पके ऊपर व्रतरूपी कहागया हो प्राणत्याग रूपी नहीं (गर्भके मध्ये जो कुछ प्रायश्चित्त यहां तक लिखा गया सो सब केवल उसी दशापर आरूढ है कि यदि गर्भ रहिकर पैदा न होवै किन्तु पैदा होजानेमध्ये आगे देखो ॥ ० ॥ गर्भस्यजननविषये गर्भके उत्पन्न होजाने में उससे भी दूना प्रायश्चित्त चाहिये जो कुछ गर्भके जमने मध्ये ठीकहोय=तदाह विज्ञानेश्वराचार्यः=तदुत्पत्तौतु यद्विशेषेण यत्प्रायश्चित्तमुक्तं तदेवतत्र द्विगुणंकुर्यात् (गमनेतुव्रतंयत्स्याद्गर्भेतत् द्विगुणंचरेदित्युशनसःस्मरणात्=अर्थात्—इस परिच्छेदके प्रारंभ से लेकर जो जो कुछ प्रायश्चित्त जिन वर्णके स्त्री पुरुषोंका व्यभिचार होने मध्ये लिखि चुके हों उन्हींके गर्भ रहिजाने पर वेही प्रायश्चित्त दूनी तादाद से करने कहे और वेही प्रायश्चित्त उन्हीं स्त्री पुरुषोंके गर्भका जन्म होजाने पर उससे भी दूने करवानेहोंगे अर्थात् व्यभिचारको तादादसे चौगुने करने होंगे क्योंकि उशनामुनिका यह वचन है कि (जितना व्रत संगम करने पर कहाहो उसीको गर्भके जमिजाने पर दूनाकरै)

इसी न्यायसे यह नियम ठहिरा कि गर्भका जन्म होजाने पर उसी को चतुर्गुणा करै ॥ ० ॥ शूद्रिनिके गर्भ उपजाने मध्ये चतुर्विंशतिमत ग्रन्थमें कुछ और भी विशेषता वर्णन हुई है=यथा=वृषल्यामभिजातस्तुत्रीणि वर्षाणि चतुर्थकालसमये तक्रभुंजीतेति=अर्थात्–वृषली जो शूद्रिनी है तिसमें ऊँचे वर्णका पुरुष जो अपने बीज से गर्भ रूप होके जन्म धरे सो तीनि वर्ष भर सदा रात्रि में चौथे काल के समय पर अर्थात् डेढपहर रात्रि गये पीछे आधीरातके भीतर भोजनका एकवार नियम राखै तौ शुद्ध होजाता है=और=जो मनु का यह वचन है कि (शूद्रांशयनमारोप्यब्राह्मणोजात्यधोगतिम् जनयित्वासुतंतस्यां ब्राह्मणयादेवहीयते) अर्थात्–शूद्रा को अपनी सेजपर सोवाइके ब्राह्मणअधोगतिको पहुँचता है और उसमें निपट संतान पैदा करवाइ के निपट ब्राह्मणत्वके लक्षणसेही मिटिजाताहै) सो यह मनुका वचन कुछ प्रायश्चित्त की बडाई छुटाईके निमित्त पर नहींहै केवल पापकी बड़ाई जाहर करनेके निमित्त पर आरूढ है॰ क्योंकि निपट ब्राह्मणपनेसे नहीं जाता रहिता किन्तु प्रायश्चित्तसे शुद्ध होकर ब्राह्मण बना रहिता है जो आगेको फिर कभीऐसा न करै–और यहभी याद राखना कि इस वचनमें उसका चर्चा नहींहै जो कोई ब्राह्मण किसी शूद्रकी कुमारी कन्यासे अपना विवाह करिके घर बसावै या सन्तान पैदा करावै या सेज पर सोवावै क्योंकि वह सब निंद्य विवाहोंका धर्ममार्ग जुदाहै उसमें कुछ प्रायश्चित्त की जरूरत नहीं परती॰ तिससे यहां केवल वह शूद्रा समझिलेनी जो किसी शूद्रकी बिवाहिता भार्याहो तिसमें गर्भ धरने आदिका यह प्रायश्चित्त है क्योंकि यह परिच्छेदही पराई भार्या गमन करने मध्ये वर्णन होरहा है इसी से पारदार्य पाप के प्रायश्चित्त इसका नाम है ॥ यहां तक पारदार्य्य के जो कुछ प्रायश्चित्त कहेगये सो सब अनुलोम व्यभिचार मध्ये कहेगये हैं कि नीचे वर्ण की स्त्री और ऊंचे वर्ण के पुरुष हों यद्वा दोनों एकही वर्ण के हों अब आगे प्रतिलोम मैथुन की चर्चा होगी ॥ ० ॥ अथप्रतिलोमव्यवायेप्रायश्चित्तं–ऊँचेवर्णकी स्त्रियों में यदि नीचे वर्णवाले कोईपुरुष व्यभिचारकरें तहाँ सर्वत्र वधरूपी प्रायश्चित्तहै व्रतरूपीनहीं= तथाचवचनं=प्रातिलोम्येवधःपुंसोनार्याःकर्णादिकर्त्तनम=अर्थात्–विपरीत वर्णों के व्यभिचार में पुरुषका वधकरना प्रायश्चित्तहै और स्त्रीके नाक कान आदि उत्तम अंग काटना=इसकेमध्ये=वृद्धप्रचेताका जो वचन आगे लिखतेहैं तिसमें कुछभेदहै= यथाहवृद्धप्रचेताः=शूद्रस्यब्राह्मणींमोहाद्गच्छतःशुद्धिमिच्छतः पूर्णमेतद्व्रतंदेयंमाता यस्मादितस्यजा पादहान्याऽन्यवर्णासुगच्छतः सार्ववर्णिकमेतद्धादशवर्षाणितिदेशः

कं तत्स्वभार्याभ्रांत्यागच्छतोवेदितव्यं मोहादितिविशेषणोपादानादितिमितास-राकाराः=अर्थात्–शूद्रपुरुष जो ब्राह्मणी में मोह (अज्ञान) से गमन करै सो अपनी शुद्धि चाहै तौ यही सार्व वर्णिक जो बारहवर्षका व्रत पहिले कहागया पूरा पूरा उसको देनाचाहिये क्योंकि ब्राह्मणी उसकी माताकहातीहै किन्तु माता में व्यभि-चारउसने किया तिससे•इसीप्रकार ठकुरानी या बनैनी आदि किसी और वर्णकी स्त्रीसेंव्यभिचार शूद्रनेंकिया हो तौ वर्णक्रमसे एकएक पाद घटाकर प्रायश्चित्तकरै (यहइस वचनमें जो वधको बचाइकर बारहवर्षवाले पूर्वोक्त व्रतका अतिदेश उतारा गया सो इसहेतुसे कि ब्राह्मणीको समझे बिना अपनी भार्याके धोखेसे संगमकरि बैठाहो तिसको वधरूपी प्रायश्चित्त न देनाचाहिये क्योंकि मोहात् यह अज्ञानता का बोधकशब्द भी श्लोकमें मौजूदहै तिससे ठकुरानी आदि औरोंमें भी अज्ञानतासे व्यभिचार करने मध्येयह प्रायश्चित्त समझना•अन्यथा इसप्रतिलोम व्यभिचारमें वधरूपी जो प्रायश्चित्त कहिचुके वही ठीकहै ॥ ० ॥ संवर्तनेअत्यन्तव्यभिचारिणी का प्रतिलोम प्रायश्चित्त कहा है=यथा=कथंचिद्ब्राह्मणींगच्छेत्क्षत्रियोवैश्यएववा कृच्छ्रं सांतपनंवास्यात्प्रायश्चित्तंविशुद्धये शूद्रस्तुब्राह्मणींगच्छेत्कथंचित्काममोहि तःगोमूत्रयावकाहारोमासेनैकेनशुद्ध्यति (इतितदत्यंतव्यभिचारिणीविषयं=अर्थात्–कदाचित् क्षत्री या वैश्य ब्राह्मणीसे गमनकरै सो क्षत्री अपनी शुद्धि के लिये कृच्छ्र प्राजापत्य करै और वैश्य अपनी शुद्धि चाहिकर कृच्छ्र सांतपन व्रतकरै•कदाचित् कोई शूद्र कामसे मोहित होकर ब्राह्मणी में संगमकरै सो एक महीनाभर गोमूत्रमें पकाया जौका दलिया खाय तब शुद्धहोय (सो यह अत्यंत व्यभिचारिणी जो प्र-सिद्धहोय तिस ब्राह्मणीका चर्चा है•अन्यथा इस प्रतिलोम व्यभिचार में वधरूपी प्रायश्चित्त जो कहिचुके वही ठीक है ॥ अब आगे जो उत्तम जाती पुरुष अंत्यजा में संगम करैं तिनके प्रायश्चित्त देखो ॥ ० ॥ अंत्यजागमनप्रायश्चित्तं–वृहत्संवर्तने अंत्यजाके संगमका भी प्रायश्चित्त कहाहै=यथा=रजकव्याधशैलूषवेणचर्मोपजीवि नाम् एतास्तुब्राह्मणोगत्वाचरेच्चांद्रायणद्वयम्) इतीदंब्राह्मणस्यकामतः सकृद्गम नविषयंक्षत्रियादीनांतुपादहीनंकल्प्यं=अथैवापस्तंबेनोक्तं (म्लेच्छीनटीचर्मकारीर-जकीवरुडीतथा एतासुगमनंकृत्वाचरेच्चांद्रायणद्वयमिति)=अर्थात्–धोबीरँगरेजछीपी आदि• व्याध चिड़ीमार आदि• शैलूष नट नर्तक आदि नीच जातैं• वेण नामक गति नीची वर्णसंकर जातैं• चर्मोपजीवी चमार मोची खटीक आदि जो चमड़ा के काम से जीवन करैं• इनकी स्त्रियों मे ब्राह्मण यदि एक बार गमन करै वह दो

मास के पूरे दो चान्द्रायण करै तब शुद्ध होय (जैसा यह ब्राह्मण को कामना से एक बार संगम करने मध्ये कहा तैसा क्षत्री आदि पुरुषों को एक एक पाद कम करिके विचारना चाहिये=इसी वार्ता के मध्ये आपस्तंबने भी कहाहै कि (म्लेच्छ देशों की और अत्यन्त नीच अपवित्र जातों की स्त्रियाँ म्लेच्छी कहाती हैं तिनमें और नटिनी चमारी रजकी वरुडी आदि महानीच जाति की स्त्रियां इनमें त्रैवर्णिक पुरुष गमन करिके दो चांद्रायण करै तब शुद्ध होय॥ ०॥ अन्त्यजोंके स्वरूप भेद उन्हीं वृहत्संवर्त ने कहे हैं=यथा=रजकश्चर्मकारश्च नटोवरुडएवच कैवर्तमेदभिल्लाश्चसप्तैतेऽन्त्यावसायिनः=रजक० चमार० नट० वरुड० कैवर्त० मेद० भिल्ल० येसात जातें अन्त्यावसायी अर्थात् अन्त्यज नाम से कहाती हैं इन्हींके संभोग मध्ये प्रायश्चित्त ऊपर कहे गये=इनके सिवाय=चण्डाल आदि और भी सात अन्त्यज इनसे भी अधिक नीच होते हैं तिनकी स्त्रियों के संभोग मध्ये बहुतबड़ा प्रायश्चित्तहै सो २६० की अधिकोक्ति में गुरुतल्प प्रायश्चित्त के साथ में कहिचुके तहां देखो—किन्तु—यहां पर लिखी हुई अंत्यजा स्त्रियों में जो एकही के मैथुन पर प्रायश्चित्त कहागयाहो सो इन सबही स्त्रियोंके मध्ये समझि लेना क्योंकि सब एकही साथ एक सी दर्शाई गई=इस बातका प्रमाण आगे उशनाका वचन है=यथा=बहूनामेकधर्माणामेकस्यापियदुच्यते सर्वेषांतद्भवेत्कार्य मेकरूपाहितेस्मृताः=अर्थात्—बहुतसे ऐसे लोग जिनका एकहीसा वर्ताव या धर्महोय तिनमें किसी एकही के लिये जो कुछ कहाजाय वही कार्य उन सबके लिये होताहै क्योंकि सब एकही रूप हैं तिससे॥ ०॥ चांडाल्यादिष्वकामकृतगमने अन्त्यजा भोगनेकी इच्छा न होतेहुये धोखाआदि से यदि कोई इनको भोगै तिसके मध्ये आपस्तंबने कहाहै=यथा=चंडालमेदश्वपचकपालव्रतचारिणाम् अकामतःस्त्रियोगत्वा पराकव्रतमाचरेत्=अर्थात्—चंडाल० मेद० श्वपच० कपाल व्रतचारी जो कपालका चिह्न पास राखनेका व्रत रखतेहैं कापालिक जाति उसका नामहै यहभी एक अंत्यजोंकी जाति विशेष होती है इनकी स्त्रियां जो हृदय की इच्छा विना एकवार भोगै सो पराक नाम व्रतकरै जो बारह दिन में पूरा होता है परन्तु यह भी नियम नहींहै कि पराक व्रत एकही आवृत्ति करै=संवर्त का यह वचन है कि=रजकव्याधशैलूषवेणुचर्मोपजीविनाम् स्त्रियोविप्रोयदागच्छेत्कृच्छ्रचांद्रायणंचरेत्=अर्थात्—रजक० व्याध० शैलूष० वेणु० वंसफोर की जीविका वाले० चमड़ाकी जीविका वाले इनकी स्त्रियोंमें यदि कोई ब्राह्मण एक वार गमन करै सो कृच्छ्र चांद्रायणका प्रायश्चित्त आचरै (यह वचन उसी दशापर आरूढ है

कि जैसा आपस्तंबका इच्छाके बिना भोग होजाने मध्ये कहिचुके=जोकि शातातप का यह वचन है कि (कैवर्तीं रजकींचैववेणुचर्मोपजीविनीम् प्राजापत्यविधानेनकृच्छ्रेणैकेनशुद्ध्यतीति) अर्थात्—कैवर्त जो धीवर और जालवाले मछेहरे तथा मल्लाह कहाते हैं तिनकी स्त्री कैवर्ती॰ रजकी रंगरेजिन छीपिनि धोबिनि आदि॰ बाँस की जीविका करनेवाली बंसफोरिनि आदि॰ चमडाकी जीविका वाली चमारी मोचिनि आदि॰ इनमें व्यभिचार करनेवाला पुरुष प्राजापत्यके विधानसे एकही कृच्छ्करिके शुद्ध होताहै जो सिर्फ बारह दिन का प्रयोग है (इस वचन का यह तात्पर्य है कि वीर्य सींचनेसे पहिले जो फिरि परै तिस पर यह छोटा प्रायश्चित्त लगाया जाय= और जो=उशनाका यह वचन है कि=कापालिकान्नभोक्तॄणांतन्नारीगामिनांतथा ज्ञानात्कृच्छ्राब्दमुद्दिष्टमज्ञानादैंदवंस्मृतम्॰ इतितदभ्यासविषयं=अर्थात्—कापालिक जातिका अन्न खानेवाले और उनकी स्त्रियोंमें संगम करनेवालोंको ज्ञानपूर्वक ऐसा करनेमें एकवर्ष भर कृच्छ्र व्रत करना कहा और बिना जाने ऐसा करने पर चांद्रायण करना कहा॰ सो यह अभ्यासका विषय समझना कि जिसने बार बार ऐसा किया हो तिसके लिये यह बडा प्रायश्चित्त है ॥ ० ॥ चांडाली गर्भ प्रायश्चित्तं जहां कहीं ऊर्ध्वोक्त चंडाली आदि स्त्रियों में संगम करनेसे गर्भ जमिजाय तहां बारह वर्षका प्रायश्चित्त है=यदाहोशनाः (चाण्डाल्यांगर्भमारोप्य गुरुतल्पव्रतंचरेत्) अर्थात्—चण्डाली आदि में गर्भधारण करिके गुरुतल्प रूपी महापातकवाला बारह वर्षका व्रतकरै तब शुद्धहोय=और जो=आपस्तंब का यह वचन है कि=अन्त्यजायां प्रसूतस्यनिष्कृतिर्नविधीयते निर्वासनंकृतांकस्यतस्यकार्यमसंशयम् (तदेतत्कामकार विषयं)=अर्थात्—अन्त्यजा नामक महाचाण्डाली (दृष्टांत भंगिनि आदि) में जोकोई चार वर्णोंका पुरुष अपने बीज से गर्भरूप होकर जन्म धरै तिसकी निष्कृति नहीं कराई जातीहै अर्थात् उसका प्रायश्चित्त कोई नहींहै कि जिसके करनेसे फिर भी अपनी जातिमें मिलिसकै॰ तिससे निःसन्देह उसका यही कार्यहै कि माथेपर कुकर्म की निशानी अच्छी रीति से मजबूत दागदेकर निर्वासन रूपी दण्ड दियाजाय अर्थात् उसको देश निकाला देकर किसी ऐसे द्वीप (टापू) के वनमें वास करायाजाय जो प्रत्येक राज्योंके अधिकार में कोई एक दुर्गम भूभाग कालापानी आदि नामों से विख्यात होता और इसी निमित्त रहा आता है कि बहुत बडे अपराधी लोग वहां छोडदिये जायँ (सो यह आपस्तंब का वचन केवल उस दशा पर आवश्यक है कि जिसने काम की इच्छा से चांडाली को जानते हुये ऐसा किया हो अन्यथा जिसने

चांडाली को जाने विना किसी और धोखा आदि से गर्भ धारण किया हो तिसके लिये ऊर्ध्वोक्त उशना के वचन से बारह वर्षका प्रायश्चित्त है कि जिसको साधन करिके फिर जाति में मिलि सक्ता है ॥ ० ॥ अन्त्यजों के चौदह भेद पहिले लिखि चुके हैं उनमें सात जातें अभी ऊपर अन्त्यजागमन प्रायश्चित्त के पाठ में वृहत्संवर्त के वचनसे लिखी गईं (रजकश्चर्मकारश्चनटोवरुडएवच कैवर्तमेदभिल्लाश्चसप्तैते अंत्यजाःस्मृताः इति यमस्तु) यही वचन यमका है कि जैसा वृहत्संवर्त का लिखि चुके तहां अर्थों सहित इसको देखो=और इनसेभी अधिक नीच सात जातें अंत्यजों की और हैं (चंडालःश्वपचःक्षत्तासूतोवैदेहकस्तथा मागधाऽऽयोगवौचैवसप्तैतेऽन्त्यावसायिनः इत्यंगिराः) यह मध्यम अंगिरा का वचन दोसौ साठि की अविकोक्तिमें आचुका तहां अर्थों सहित इसको देखो उन्हीं सात में चंडाल श्वपच आदि में भंगी भी एक प्रकार का अन्त्यावसायी जाति होता है• उन्हीं चंडाल आदि अन्त्यजोंकी स्त्रियों में गर्भ पैदा करने का यह चर्चा ऊपर लिखा गया कि जानते हुये तो कुछ प्रायश्चित्त नहीं केवल वनेवास रूपी दण्डहै परन्तु अज्ञानता से उनके गर्भ धरने मध्ये बारह वर्षका प्रायश्चित्तहै वह दण्ड नहीं=यद्यपि अन्त्यावसायी सात भांतिके चंडाल और श्वपच आदि कहे गये तथापि अन्त्यावसायी एक जुदी जाति भी ख़ासकर इसी नामसे होता है जो मुर्दों के ऊपर का फेंका हुआ वस्त्र आदि लेनेकी आशासे श्मशानकी धरपर सदा विचरता फिरताहै यहभी एक भंगियोंमें से भेदविशेष होता है—यथाह मनुः (निषादस्त्रीतुचंडालात्पुत्रमंत्यावसायिनं श्मशानगोचरंसूतेवाह्यानामपिगर्हितं) अर्थात्=निषाद जातिकी स्त्री चण्डाल के बीज से अन्त्यावसायी नामक पुत्र को उत्पन्न करती है जो अपना उदर भरने को चिताकी श्मशान धरती पर विचरता है ॥ ० ॥ यहां पर प्रसंग से यह बात दर्शाते हैं कि यद्यपि चारों वर्णों में शूद्रभी अन्त्यज कहाताहै तथापि यहां शूद्रवर्णका प्रसंग नहीं केवल अधमजातों का प्रसंग है और अन्त्यज वा अन्त्य जातिका अर्थभी सिद्धांत में एकही होताहै कि जैसा अभी ऊपर सात भांति या चौदह भांतिके अन्त्यज वर्णन होचुके तहां देखो— उसी अन्त्या जाति का घरमें घुसि आना भी प्रतिषिद्ध है कि उस घर वाले ब्राह्मण क्षत्री वैश्य और शूद्र कोभी प्रायश्चित्त करना कहा है=तथाच प्रायश्चित्ततत्वं= अंत्यजातिरविज्ञातो निवसेद्यस्यवेश्मनिसवैज्ञात्वातुकालेनकुर्यात्तत्रविशोधनम् चांद्रायणपराकौवाद्विजातीनांविशोधनम् प्राजापत्यंचशूद्राणांतयासंसर्गदूषणे यैस्तत्रभुक्तं पक्वान्नंकृच्छ्रन्तेषांविनिर्दिशेत् तेषामपिचयैर्भुक्तंतेषामर्द्धंविधीयते तेषामपिचयैर्भुक्तं

कृच्छ्रपादोविधीयते इति=अर्थात–अन्त्याजाति चौदह भाँति में किसी प्रकार का मनुष्य जो बिना जाना हुआ किसी अच्छी जाति के धोखे से जिसके घरमें टिके निवास करै सो घर वाला जब कुछ दिनों के बादि उसको अन्त्यजाति जानिपावै तभी जानिकर उस जगह को अच्छी तरह शोधै (कि जैसाआचार मर्यादा परिपाटी के द्रव्य शुद्धि नामक प्रकरण में भूशुद्धि का प्रकार वर्णन हुआ था उसी रीति से इस घर को शोधै) और काल के अनुसार शोधै अर्थात जो चंडाल आदि थोडीदेर घुसिके उसी समय लौटि गया हो तबतौ केवल उस प्रकार की लीपा पोती आदि शुद्धिकरै कि जैसा इसी प्रायश्चित्तकांड के तीसवें ३० मूल श्लोक और उसकी अविकोक्ति में चण्डाल आदि अनेकोंके छुइजाने पर स्नान आदि क्रिया करिके शुद्ध हो जाना वर्णन होचुका है–परन्तु जो उस घरकी धरती में चण्डाल आदि के घुसने से किसी प्रकार की मलीनता आदि चिह्न भी होगया हो या चण्डाल आदि बहुत दिन तक टिका हो तौ फिर ३१ इकतीस मूल श्लोक वाली अधिकोक्ति के विचार से और आचार कांड में लिखी हुई पाँचप्रकार की भूशुद्धि के अनुसार कुछ सूतक-रूपी कालभी मानना और उन्हीं पांचप्रकारोंमें जो कोईसा प्रकार शोधनके योग्य समुझा जाय तिसका वर्तावाभी करना चाहिये–इतना शोधन करनेके उपरांत प्रायश्चित्त भी यह करना कहाहै कि ब्राह्मण का घरहो तौ उसको चांद्रायण करना चाहिये जो क्षत्री अथवा वैश्यका घरहो तौ क्षत्री को दो पराक और वैश्य को एक पराक व्रत करना चाहिये जो शूद्र का घरहो तौ शूद्र को प्राजापत्य करना चाहिये और उसको भी प्राजापत्य करना चाहिये जो उस घरकी शुद्धिहुये बिना किसीवर्ण का मनुष्य जाकर बैठा हो या घर वाले के साथ प्रायश्चित्त करने से पहिले कुछ संसर्ग मेल मिलाप किया हो और जिन मनुष्यों ने उस दूषित घरमें बैठि के पक्वान्न भोजन कियाहो उनको कृच्छ्र व्रत करना चाहिये और उन पक्वान्न खाने वालोंका भोजन और मनुष्योंने कियाहो तिनको आधा कृच्छ्र करना चाहिये और इन आधे वालों का अन्न जिन मनुष्योंने खाया हो तिनको चौथाई कृच्छ्र करना चाहिये॥ इसपर ध्यान देना चाहिये कि जब ऐसी छोटी दशापर इतना प्रायश्चित्तहै तौफिर जिन मनुष्यों ने साक्षात चण्डालीमें संगम करिके गर्भ धारण किया तिनको बारह वर्ष का प्रायश्चित्त जो कहिचुके सो कुछ बड़ा नहीं है॥ ऊपर जो वर्णन होचुका उसमें चण्डाल नामसे प्रायः कसाई आदि समझने औरश्वपच नामसे प्रायः भंगीऔर मलीन कंजर आदि समझने जो कुत्ते कोभी मारि पकाय खाजाते हैं और अन्त्या-

वसायी नाम का अर्थ अभी अनन्तर लिखचुके हैं कि वह श्मशानमें रहिकर मुर्दों का उतारन लिया करता है इत्यादि सब चौदह भेदों के लिंगार्थ लोक वर्तावा में प्रसिद्ध हैं सो समझि लेने ॥ अब आगे के परिच्छेद में स्त्रियों के प्रायश्चित्त कहे-जायँगे ॥ २६५ ॥ इसीमूलश्लोकवाले टीकासेयहपाठ अवतकचलाआताहै ॥२६५॥

अथस्त्रीणां परपुरुष व्यभिचारोपपातकप्रायश्चित्त प्रकाशकोऽयंपरिच्छेदः पंचाशत्तमः ५०



इस परिच्छेद में स्त्रियोंके प्रायश्चित्त कहे जायँगे कि जो स्त्रियाँ पराये पुरुषों के साथ व्यभिचार से उपपातक उत्पन्न करैं सो किस रीति से शुद्ध होयँ ॥

(व्यभिचरितस्त्रीषु प्रायश्चित्तं)

स्त्रीणामपिसवर्णानुलोमव्यवायेपुरुषस्योक्तं त्रिवार्षिकादि
तदेवभवतीतिमिताक्षरा ॥

अर्थात् पहिले परिच्छेदमें जो प्रायश्चित्त परस्त्री संगमकेमध्येपुरुषोंकेलिये कहि चुकेहैं वहीतीनिवर्ष आदि के प्रायश्चित्त स्त्रियोंकोभी योग्यहैं परन्तु उन्हीं सूरतोंमें कि जैसा अपने वर्ण का संगम या अनुलोम संगम कहिचुके हैं कि ऊँचे वर्ण का पुरुष और नीचे वर्ण की स्त्री हो (यत्पुंसःपरदारेषुतच्चैनांचारयेद्व्रतमितिमनुः) यह मनुका वचन प्रमाण है कि जो कुछ प्रायश्चित्त पुरुष को पराई दाराओं में संगम करने का कहाहो वहीव्रत स्त्रीसे उसी संगम के दोष पर करावै यह मिताक्षराकार ने व्यवस्था कही ॥०॥ परन्तु जहां प्रतिलोम मार्ग से मैथुन हुआहोय कि ऊँचे वर्ण की स्त्री और नीचे वर्ण का पुरुष होय तहां प्रायश्चित्त में भेद है सो वशिष्ठ के वचन से देखौ=यदाह वशिष्ठः=शूद्रश्चेद्ब्राह्मणीमभिगच्छेद्वीरणैर्वेष्टयित्वाशूद्रमग्नौप्रास्येत् ब्राह्मण्याःशिरसिवपनंकारयित्वासर्पिषाऽभ्यज्यनग्नांगौरखर मारोप्य महापथ मनुसंव्राजयेत्पूताभवतीति॰ वैश्यश्चेद्ब्राह्मणीमभिगच्छेल्लोहित दर्भैर्वेष्टयित्वा वैश्यमग्नौप्रास्यब्राह्मण्याःशिरसिवपनं कारयित्वा सर्पिषाऽभ्यज्य गौरखरमारोप्य महापथ मनुसंव्राजयेत्पूताभवति॰ राजन्यश्चेद्ब्राह्मणीमभिगच्छेच्छरपत्रैर्वेष्टयित्वा राजन्यमग्नौप्रास्येत् ब्राह्मण्याःशिरसिवपनंकारयित्वासर्पिषाऽभ्यज्यनग्नांगौरखर

मारोप्यमहापथ मनुसंव्राजयेत्पूताभवतीति विज्ञायत इति—एवं वैश्यो राजन्यां शूद्र श्चराजन्या वैश्ययोरिति (पूताभवतीति वचनाद्राजवीथि परिव्राजन मेवदंडरूपंप्रा यश्चित्तांतर निरपेक्षंशुद्धिसाधनमितिदर्शयति इति मिताक्षरा=अर्थात—वशिष्ठ जी कहिते हैं कि जहां शूद्र पुरुष ब्राह्मणी गमन करै तौ उसे फूस पतैल पतावरि से ल- पेटि बाँधिके शूद्र को प्रदीप्त बहुतसी अग्नि में छोड़ देय और ब्राह्मणी का शिर मुडाइके सब देहमें घीलगाइके कपडों विना नंगी करिके गोरखर नाम जो पंजावी गदहा प्रसिद्ध है तिसपर चढ़ाइ के महापथ राज मार्ग रूपी सड़कों पर घुमावै तौ पवित्र होती है• एवं वैश्य जो ब्राह्मणी गमन करै तिसको लाञ कुश काश डाभ से लपेटि बांधिके उस वैश्य को अग्नि में छोड़िके ब्राह्मणीका शिर मुडाय घी लगाय नंगी करिके गोरखर पर चढ़ाइ राजमार्गों में घुमावै सो पवित्र होती है• एवक्षत्री जो ब्राह्मणी गमन करै तिसको शर पत्रों के सरपत्ते से लपेटि बाँधि जलती अग्नि में गिराइके ब्राह्मणी का मूड मुडाइ सब देह में घी लगाय नंगी गोरखर पर चढ़ाइके सडकों पर घुमावै सो पवित्र होती है यह जाना गया—इसी प्रकार वैश्य जो क्षत्रा- णी में संगम करै या शूद्र क्षत्राणी और बनेनी में संगम करै तिनकी भी यहीव्यव- स्था समझि लेनी (पवित्र होती है इस कथन से वशिष्ठ ने यह दर्शाया है कि राज मार्ग में घुमाना ही दंडरूप प्रायश्चित्त है किसी दूसरे प्रायश्चित्त की जरूरत नहीं रही यह मिताक्षरा कार का विचार है) परन्तु महापथ संज्ञा केवल राज मार्गही की नहीं किन्तु हिमालय के उत्तर जाके स्वर्गारोहण नाम से जो मार्ग बद्रीनाथजी से आगे प्रसिद्ध है तिसको मुख्यता के साथ महापथ कहिते हैं (बल्कि राज मार्गों का नाम एक उपलक्षण से महापथ कहा गया है यह भेद जानों) तिससे गोरखर पर चढाइ के उस पाला रूपी देश में जहां तक गोरखर के जासकने का मार्गमिलै तहांतक घुमाइ लावै तौ उस पवित्र भूमिपर भ्रमण करने से शुद्ध होसक्ती है यह व- शिष्ठ जी का तात्पर्य पायाजाता है• अन्यथा सडकों पर घुमाने वाला अर्थ जो मिताक्षरा के अनुसार लिखागया सो यह लोक मे गदहा पर धरिके ढंढाना प्रसिद्ध है इससे केवल पारलौकिक शुद्धि यद्यपि होसक्ती हो तौभी इस प्रकार से हँढाई हुई नारी को लोक में कोई उत्तम नर घर में लेलेना स्वीकार नहीं करसक्ता है तौ फिर किस अर्थ की यह शुद्धि ठहिरी• अगर इसका उत्तर ऐसे दिया जाय कि स्व- र्गारोहण वाली शुद्धि भी प्रयोजन की साधक नहीं दिखाई देती है क्योंकि उस भूमि पर जाके कोई जीता नहीं लौटता बल्कि वेही लोग जाते हैं जो ईश्वर निमित्त अपना

देह छोड़ना चाहते हैं दृष्टान्त मवजूद है कि पांडवों ने जाकर उसी हिमालय पर अपने देह छोड़े हैं• तौ इस उत्तर से भी इसी में जीति देखि परती है कि जिनको उस नारी का लौटिके घर में लेना स्वीकार होगा वे तहांतक लेजायँगे कि जहांतकपाला से देह नहीं गिरता है• अन्यथा जो लोग नारीका अपराध बहुत जानिके घरमें लेना नहीं चाहैंगे और यहभी नहीं चाहैंगे कि हँडाइ के त्यागी हुई फिरभी सर्वत्र कुकर्म ही करती फिरै वे अवश्यही पूरे महापथ में छोड़ि आवैंगे कि जैसे पांडव लोग स्वर्ग को गये तैसे यह नारीभी पापों से छुटिके स्वर्ग जायगी• इसी अर्थ से दोनों मुट्ठी में मोदक देखि परते हैं कदाचित् ऐसा अर्थ न होता तौ फिर गोरखर पर चढाने की जगह केवल खर गदहा कहा जाता किन्तु गोरखर इसी हेतुसे बताया है कि बहुत चलिसक्ता और ठंढेदेशों में जासक्ता है—और वशिष्ठने यह इतना कठिन प्रायश्चित्त जो कहा सो केवल कामना से चाहिकर व्यभिचार करने पर कहा है—क्योंकि इससे पहिले परिच्छेद में (प्रातिलोम्येवधःपुंसो नार्याःकर्णादिकर्त्तनं) यह वचन आचुका है कि प्रतिलोम व्यभिचार में पुरुष का वध किया जाय और नारी के कान आदि काटेजायँ और तात्पर्य इसका सर्वत्र यही समझे रहिना कि प्रतिलोम मैथुन जो कामना चाहिकर किया जाय तिसका प्रायश्चित्त कोई ऐसा नहींहै जिससे शुद्ध होकर स्त्री फिर घरमें आसके• सिर्फ उस दशा में शुद्ध होसक्ती है कि दैव गति से राज विग्रह आदि में फँसिकर बिगडी हो तिसके प्रायश्चित्त आगे सभीक्रयीश्वर वर्णन करैंगे जैसा इसी जगह संवर्त का वचन देखो ॥ ० ॥ अथनिष्कामप्रतिलोम व्यभिचारस्य शुद्धिः=यदाह संवर्त्तः=ब्राह्मण्यकामागच्छेचेत्क्षत्रियंवैश्यमेववा गोमूत्रयावकैर्मासात्तथार्द्धाद्विशुद्ध्यति (कामतस्तुद्विगुणंकर्तव्यं कामात्तत्द्विगुणंभवेदितिवचनादिति मिताक्षराकारास्तदुक्तं=अर्थात्—ब्राह्मणी जो इच्छा के बिना दैव योग से क्षत्री या वैश्य में जाकर फँसे सो क्षत्री के मध्ये एक महीना भर गोमूत्र के रँधे जौ भोजन करने से और वैश्य की अपेक्षा डेढ महीना जौ का दलिया गोमूत्र में रँधा खाकर व्रत राखने से शुद्ध होती है (मिताक्षराकार ने इस पर यह भी कहा है कि जो इच्छा से जाकर फँसी हो तौ इससे दूना व्रत करै क्योंकि इच्छा सहित पापके मध्ये दूना करने का नियम शास्त्र में प्रसिद्ध है) सो यह दूने का नियम ठीक नहीं है इसका निर्णय आगे सकाम मैथुन के चर्चा में देखना ॥ ० ॥ षट्त्रिंशत् मत के ग्रंथ विशेष में ब्राह्मणी आदि सभी स्त्रियों के जुदे प्रायश्चित्त कहेहैं=यथा=ब्राह्मणीक्षत्रियवैश्य सेवायामतिकृच्छ्कृच्छ्रातिकृच्छ्रोचरेत्•

क्षत्रिययोषितात्राह्मण राजन्यवैश्यसेवायांकृच्छ्रार्द्धं प्राजापत्यमतिकृच्छ्रं • वैश्ययोषिताब्राह्मण राजन्यवैश्यसेवायां कृच्छ्रपादंकृच्छ्रार्धंप्राजापत्यं• शूद्रायाःशूद्रसेवनेप्राजापत्यं ब्राह्मणराजन्यवैश्यसेवायांत्वहोरात्रं त्रिरात्रं कृच्छ्रार्धमिति=अर्थात्–ब्राह्मणी यदि एक रात्रि भर क्षत्री या वैश्य की सेवामें जाफँसै सोक्षत्री के व्यभिचारमध्ये अतिकृच्छ्र व्रतकरै औरवैश्यके व्यभिचार बावत कृच्छ्र अतिकृच्छ्र दोनों भांति के व्रत करै तब शुद्ध होय• एवं क्षत्री की योषिता यदि एक रात्रि भर ब्राह्मण या क्षत्री या वैश्य की सेवा में जाफँसै सो ब्राह्मण के व्यभिचार मध्ये आधा कृच्छ्रकरै क्षत्री के व्यभिचार मध्ये प्राजापत्य पूरा करै वैश्य के व्यभिचार मध्ये अतिकृच्छ्र करै• एवं वैश्य की योषिता यदि एक रात्रि भर ब्राह्मण या क्षत्री या वैश्य की सेवा में जाफँसै सो ब्राह्मण के व्यभिचार बावत कृच्छ्र की चौथाई प्रायश्चित्त करै क्षत्री के व्यभिचार बावत कृच्छ्र का आधा व्रत करै वैश्य के व्यभिचार बावत प्राजापत्य पूरा करै• एवं शूद्र की योषिता यदि एक रात्रि भर ग़ैर शूद्र की सेवा में जाफँसै सो प्राजापत्यकरै और ब्राह्मण के व्यभिचार में जाफँसै सो एक दिन राति भर व्रत करै और क्षत्री की सेवा में जाफँसै सो तीन दिनका व्रत करै और वैश्यकी सेवा में जाफँसीहो सो आधा कृच्छ्र करै जो छः दिन में होसकैगा–इन प्रायश्चित्तों के छोटापन से प्रत्यक्ष प्रतीत होताहै कि दैव योगसे क्षण मात्र फँसिजाने बावत ये प्रायश्चित्त हैं तिससे एक राति भर लिखि चुके सो ठीक नहीं ॥ ० ॥ शूद्रसगमेपिक्वचित्शुद्धिरुक्ता=तदाह वृहस्प्रचेताः=विप्राशूद्रेणसंपृक्तानचेत्तस्मात्प्रसूयते प्रायश्चित्तंस्मृतंतस्याःकृच्छ्रं चांद्रायणत्रयम (एतदनिच्छंत्यां स्वपतिभ्रांत्यावावेदितव्यमित्यत्राभिप्रायः) चांद्रायणेद्वेकृच्छ्रश्चविप्रायावैश्यसेवने कृच्छ्रचांद्रायणैस्यातांतस्याःक्षत्रियसंगमे–क्षत्रियाशूद्रसंपर्केकृच्छ्रंचांद्रायणद्वयम चांद्रायणसकृच्छ्रन्तुचरेद्वैश्येनसंगता–शूद्रंगत्वाचरेद्वैश्याकृच्छ्रंचांद्रायणोत्तरम–आनुलोम्ये प्रकुर्वीतकृच्छ्रंपादांतरोपितम=अर्थात्–वृहस्प्रचेताने विरले क्रिया विहीन देशोंके आचार हीन तीनों वर्णा का हित सोचिके उनकी स्त्रियों की शुद्धि शूद्र के व्यभिचार में भी होती कही है कि–ब्राह्मणी जो शूद्र के साथ इच्छा विना या अपने पतिके धोखे से फँसि जाय और उससे गर्भ यदि न रहिने पाया हो तौ इस दशा में उस ब्राह्मणी के लिये प्रायश्चित्त कहा है कि कृच्छ्रात्मक तीनि चांद्रायण करै•इसी प्रकार जो वैश्यकी सेवा मे जाफँसी हो तिसको दो चांद्रायण और उनके बादि एक कृच्छ्र भी करना चाहिये• इसीप्रकार जो क्षत्रीके संगमें जाफँसीहो तिसको कृच्छ्रात्मकदोचांद्रायण

करने चाहिये—ऐसेही जो क्षत्री की भार्या किसी शूद्र के संपर्क में जाफँसी हो तिसको दो कृच्छ्रात्मक चांद्रायण करने चाहिये और जो क्षत्राणी किसी वैश्य के साथ फँसी हो सो एक चांद्रायण और एक कृच्छ्र नाम का जुदा प्रायश्चित्त करै—ऐसेही वैश्यकीभार्या जो किसीशूद्रसे फँसिगईहो सो एक चांद्रायण के पीछे एक कृच्छ्र व्रत भी साधे तब शुद्ध होय—और जहां अनुलोम रीति का मैथुन होय कि पुरुष ऊँचे वर्ण का और स्त्री नीचे वर्ण की तहां कृच्छ्र व्रत वर्णक्रम से एक एक पाद घटा कर करै॥ ०॥ गर्भस्थितौचक्वचिच्छुद्धिःप्रोक्ता—ध्यान करो कि विरले देश विशेष के वर्ताव और तत्रत्य मनुष्यों की प्रकृति चर्य्या के अनुसार उनके निर्व्वाह सोचि के चतुर्विंशति मत नाम के ग्रन्थ विशेष में गर्भ रहिजाने पर भी प्रायश्चित्त से शुद्धि होनी कही है=यथा=विप्रगर्भेपराकःस्यात्क्षत्रियस्यतथैन्दवम् ऐन्दवञ्चपराकञ्चवैश्यस्याकामकारतः शूद्रगर्भेभवेत्त्यागश्चाराडालोजायते यतः गर्भस्रवेधातुदोषैश्चरेच्चांद्रायणत्रयम् (अकामकारतइतिविशेषणोपादानात् कामकारेपुनःपराकादिकंद्विगुणंकुर्यादिति मिताक्षरातद्युक्तं=अर्थात्—ब्राह्मण से गर्भ रहा हो तौ पराक व्रत करै जो बारह दिन में होता है जो क्षत्री से गर्भ रहा हो तौ चांद्रायण करै जो वैश्य का गर्भ रहा हो तौ चांद्रायण और पराक दोनों करने चाहिये यह सब कामना के विना दैवयोग से संगम होकर गर्भ रहिजाने के प्रायश्चित्त हैं और शूद्र से गर्भ रहिजाने में स्त्री का त्यागही किया जाय प्रायश्चित्त की ज़रूरत नहीं है क्योंकि शूद्र के गर्भ से चाराडाल पैदा होता है तिससे• अन्यथा जो गर्भ रहिकर कुछ दिन पीछे गिरजाय तौभी शरीर के भीतर उस गर्भ का रस फैलने से शरीर की सातों धातु में दोष पहुँचिजाने के हेतु से उस दोष की शुद्धि तभी होती है जो लगातार तीन महीना के चांद्रायण करै (मिताक्षराकारकहिते हैं कि इच्छाविना के भोग मध्ये ये प्रायश्चित्त कहे गये तिससे जहां स्त्रीने कामना से संगम करिके गर्भ धराहो तहां ये प्रायश्चित्त दुगुने कराने चाहिये सो यह दुगुने का नियम ठीक नहीं है इसका ब्यौरा पहिले भी लिखि चुके और फिर भी कहीं आगे लिखा जायगा॥ ०॥ जहां यह शूद्रका गर्भ गिरने नहीं पायाकिंतु दशवें महीना तक पेट में रहिकर जन्म पावै तहां फिर नियट प्रायश्चित्तकी जरूरत नहीं रहिती क्योंकि स्त्री का त्यागही किया जाता है=तदाह वशिष्ठः=ब्राह्मणक्षत्रियविशांभार्याःशूद्रेणसंगताः अप्रजाताविशुद्ध्यंतिप्रायश्चित्तेननेतराः=अर्थात्—दैवयोग से ब्राह्मण क्षत्री वैश्य इनकी भार्यायें यदि शूद्र से बिगड़ैं तौ जिनके गर्भ का प्र-

सूत न होने पावैं वेही प्रायश्चित्तसे शुद्ध होजाती हैं जिनके प्रसूत होवे वे नहीं शुद्ध होसक्ती हैं॥ ० ॥ सगर्भायाः शूद्रादि संगमे नियमाः—यदि कोई द्विजाती की भार्या अपने पतिके बीज से गर्भवती होते हुये भी शूद्रआदि से व्यभिचार में फँसि गई हो तिसके लिये स्मृत्यंतर में विशेष नियम कहे हैं=यथा= अन्तर्वत्नीतुयानारी समेता काम्यकामिना प्रायश्चित्तंनकुर्यात्सायावद्गर्भोननिःसृतः जातेगर्भेव्रतंपश्चात् कुर्यान्मासंतुयावकम् नगर्भदोषस्तस्यास्तिसंस्कार्यःसयथाविधि=अर्थात्—यदिकोई गर्भवती नारी किसी कामी पुरुष ने प्रबलता से पकडि के भोगी सो स्त्री तब तक प्रायश्चित्त न करै कि जबतक उसका गर्भ जन्म लेकर बाहर न निकसै (क्योंकि गर्भ की दशा में प्रायश्चित्त कराने से गर्भ गिर जाने की शंकाहै तिससे) जब गर्भ उसका जन्म लेचुके तिस पीछे एक महीना भर व्रत करै तिसमें गोमूत्रके रँधे जौका माड पीके रहै पर उस पैदा हुये गर्भ में कुछ दोष नहीं है क्योंकि शास्त्रोक्त विधि से उसका सस्कार करना चाहिये॥ ० ॥ इन में जो कोई स्त्री अपने उद्दतपन से प्रायश्चित्त न करैं तब (नार्याःकर्णादिकर्तनं) यह वचन पहिले लिखिचुके हैं तिसका वर्ताव किया जाय कि ऐसी नारी के नाक कान आदि उत्तम अंग काटिके कुरूप करैं इस दंड के साथ उसका त्याग किया जाय यह तात्पर्य है॥ ० ॥ अन्त्यज चांडालादिव्यभिचारेपिक्वचित्प्रायश्चित्ते नशुद्धिः—और भी विरले देश विशेषों की अपेक्षा से तत्रत्य मनुष्यों के व्यवहार अनुसार उनके निर्वाहोंके निमित्तसेविरली स्मृतियों में अन्त्यज से व्यभिचार होजाने में भी द्विजातीकी स्त्रियां प्रायश्चित्तकरिके शुद्ध होजातीकही हैं=यथास्मृत्यन्तर वचन=रजकव्याधशैलूषवेणुचर्मोपजीविनः ब्राह्मण्येतान्यदागच्छेदकामादैंदवत्रयम्=अर्थात्—रजक० व्याध० शैलूष० वेणु से० चमडासे उपजीवन करनेवाले इनके साथ जो ब्राह्मणी इच्छाके विना एकवार सगम करै सो तीनि चांद्रायण करिके शुद्ध होती है—इन्हीं अन्त्यजों की बाबत इससे बडा भी प्रायश्चित्त आगे सालभर का कहा जायगा—यहांपर (यहतर्क न करना कि इसमें केवल ब्राह्मणीकही अपर द्विजातीकी स्त्रियाँ ऐसा क्यों लिखिचुके किन्तु जब सबसे उत्तम ब्राह्मणी शुद्ध होसकी तब क्षत्राणी बनेनी कहांरहीं बल्कि ब्राह्मणी को तीनि चांद्रायण कहेगये तो क्षत्राणी को दोही और बनेनी को एकही चांद्रायण से और शूद्राको पन्द्रह दिन के व्रत करने से शुद्धि प्राप्त होसकेगी तिससे तर्कना को अवकाश इसमें नहीं है)=इसी प्रकार=इनसे भी अधिक मलीन चण्डाल आदि अन्त्यजोंके व्यभिचारमें भी प्रायश्चित्तसे शुद्धिहोनी विरली स्मृतियोंनेकही

है=यथा=चांडालंपुल्कसंम्लेच्छंश्वपाकंपतितंतथा ब्राह्मण्यकामतोगत्वाचांद्रायणा चतुष्टयम=अर्थात–चाण्डाल०पुल्कस० म्लेच्छ० श्वपाक० पतित जो चारि प्रकार के महापातकी वर्णन होचुके० इन के फंदा में ब्राह्मणी बिना इच्छाके फँसि कर चार चांद्रायण करै (इसका भी वही अनुक्रम है कि क्षत्राणी तीनिही चान्द्रायण करै वैश्यकी भार्या दोही करै शूद्र की भार्या एकही करै) परन्तु जैसा मिताक्षराकारोंने इन वचनों पर यह कहा है (अकामतइतिवचनात कामतोद्विगुणंकल्प्यं) कि इन वचनों में अकाम संगम के मध्ये जो प्रायश्चित्त कहागया सो कामनाके व्यभिचार में दूना करवाना चाहिये–इस व्यवस्था पर आधुनिक लेखक संमत नहीं देसक्ते हैं क्योंकि मूल स्मृतिकारों ने केवल अनिच्छा के व्यभिचार पर प्रायश्चित्त से शुद्धि होनी कही है इच्छा के व्यभिचार में प्रायश्चित्तसे भी ऐसे महामंद पातकी शुद्धि होनी संभव नहीं है जो ऐसा होसक्ता तो मूलमें भी कुछ प्रायश्चित्त भेदकी स मस्या करीजाती तिससे ऐसी स्त्रियों का परित्याग ही सूचित किया है बल्कि इसी प्रकार का अगिला वचन देखो उसमें भी दैवयोगसे यह नीच संगम होजानेका प्रायश्चित्तहै=तथाच=चांडालेनतुसंपर्कंयदिगच्छेत्कथंचनसशिखंवपनंकुर्याद्भुंजीयाद्या वकौदनम त्रिरात्रमुपवासःस्यादेकरात्रंजलेवसेत आस्मनासंमितेकूपेगोमयोदककर्दमे तत्रस्थित्वानिराहारा सात्रिरात्रंततःक्षिपेत शंखपुष्पीलतामूलंपत्रंवाकुसुमंफलम क्षीरे सुवर्णक्षिप्यंक्वार्थयित्वाततःपिबेत एकभुक्तं चरेत्पश्चाद्यावत्पुष्पवतीभवेत व्रतंचरतिस्ताव त्तावत्तिष्ठेदावसथेततः। प्रायश्चित्तेततश्चीर्णेकुर्याद्ब्राह्मणभोजनमगोद्वयंदक्षिणां दद्याच्छुद्धि स्वायंभुवोऽब्रवीत=अर्थात–यदिकथंचन कभीदैवयोगसेबलात्कारकिसी चांडालके साथ संपर्कमें कोई नारीजाफँसीहो तो वहचोटीतक बालोंको मुडावै और गोमूत्रके पके जौ का भातखायके तीन रात्रि उपवासकरै फिर ऐसेकिसीकूपकेजलमें एकरात्तिभर बसै जो उसकेगले से वैदहुये जलहोय अथवा किसी तलावआदि तीर्थके जल में बसै और अपनी बराबर गहिरे खुदे गडहिले में जो कूपहीके आकार खोदा जाकर उसमें गायका गोबर और जल छोडिके रवदड़ कीचड बनाई जाय उस कीचड में वैठिके तीन रात्रि निराहार बितावै तिसके बादि शंखपुष्पी (ब्राह्मी घास वल्लनेटी जिसके फूल शंखही के आकार होते हैं तिस) के फल फूल मूल आदि पंचांग लेकर दूध में पकावै और पकते समय कुछ सोना उसमें छोडि देय फिर पीछे सोना अशरफी आदि जोकुछ होय सो निकासिके उस दूधको खूब गरम गरम तीन दिन तक पीवै फिर इसके बादि रात्रि में एक बार भोजन करनेका व्रतराखै सो व्रत

तक कि जबतक मासिक रजोधर्म से पुष्पवती फिरके होय और तबतक मुख्य घर से बाहर किसी गौंहरे आदि उचित स्थान में निवासकरै कि जबतक यहप्रायश्चित्त पूरा होय• फिर इसके परे होजानेपर यथाशक्ति ब्राह्मणों को भोजन करायके दो गाय दान करै और दक्षिणा बांटिके तब शुद्ध होती है यह नियम स्वायंभू मनु आपही कहिगयेहैं। अन्त्रसकाममैथुननिर्णयः। यहां इनदोनों बातपर ध्यान देना चाहिये कि यद्यपि चांडाल के संगम से भी स्त्रियों का शुद्ध होजाना स्वायंभू मनु ने कहा परन्तु यह कैसी एक लाचारी दशा का संगम है कि जब किसी चांडालने दैवयोगसे बलात्कार घेरि लियाहो दूसरे इसलाचारी परभी कैसाप्रबल प्रायश्चित्त दर्शाया है कि जिसको देखने सुनने से चित्त गवाही देता है कि हां ऐसा करने से बेशक स्त्री का शरीर शोधन होजायगा और यहीआशय ऊपरले मुनि वचनोंका सर्वत्रहै कि दैव योगसे राजविध्वंस या गदर लूटि फूटि आदि की दशा में यदि ऐसी विपत्ति किसी स्त्री पर आनि परै तौ इन प्रायश्चित्तोंसे शुद्धि मानी जासक्ती है• तौ इस घंटाघोष के होते हुये भी यह कैसे माना जासक्ता है कि जो स्त्री अपने काम भोगकी इच्छासे आपही जाकर चाण्डालोंसेभी मैथुन करवावै सो छोटे प्रायश्चित्तों को दूना साधन करिके घरमें आवैठै (यहदूना करनेका नियम केवल अपने सवर्णी पुरुषके मैथुनमें और अनुलोममार्गके मैथुनमें न्यायात्मक माना जासक्ताहै) यह दूने का नियम प्रतिलोम द्विजातीके मैथुनपरभी नहींशुभदायकहै फिरशूद्र और शूद्रसे भी उतरिके चण्डालआदि अधमजातों से कामिनीकी कामनाका मैथुन• जिस चांडालको एक चमर की लंबाई के भीतर मार्ग चलते समय समीप निकसि जाने का निषेध पहिले होचुका है सो तीसवीं अधिकोक्ति में देखौ—हम इस व्यवस्था का पूरा निर्णय परिच्छेद के अन्त में अवकाश पाकर लिखैंगे यहांपर अवकाश नहींहै—और इसी परिच्छेद के प्रारम्भ से जो पंक्ति लिखी गई हैं तिनको लेकर वशिष्ठ के कहे प्रायश्चित्त को भी देखौ फिर इस दूने की व्यवस्था भी सोचना कितना अंतरहै॥०॥ अंत्यजव्यवायेप्रायश्चित्तांतरन्तु—अंत्यजों के व्यभिचार मध्ये तीनिही महीनाके तीन चांद्रायण ऊपर लिखिचुकेहै तिनके मध्ये ऋष्यशृंगने बारहमासका प्रायश्चित्त करना कहा है=यथाहऋष्यशृंगः=संपृक्तास्यादशांत्यैर्यासाकृच्छ्राब्दंसमाचरेत (अथ अव्ययोऽवसंशये) =अर्थात—ऋष्यशृंग ऋषी कहिते हैं कि जहां इसप्रकारका संशय खड़ा होजाय कि नागहानी जब कोई द्विजातीकी भार्या या शूद्रहीकी भार्या अंत्यजाती रजक व्याध आदि पुरुषोंसे फँसिजाय या उन पुरुषोंकी प्रबलतासे कुछदिन

मिलिके वासकरै (यतःसंपृक्त शब्दःसंबद्धेमिश्रितेचतस्मात्तसंपृक्तास्यादित्यस्यायमेवा र्थः) वह स्त्री एकसालभर छःछब्रत अच्छे विधिकेसाथ आचरै तब शुद्धहोय—इसका निर्णय सोचना चाहिये कि पहिले जो अंत्यजोंके मैथुन में तीनिही महीना के व्रत कहिचुके सोतो केवल एकबारके मैथुन मध्ये कहाथा और यहां जो बारह महीना कहे सो लाचारीसे परवश होकर कुछदिन उनके फन्दमें निवास करना पराहो तिस हेतुसे यह बड़ा प्रायश्चित्त कहा—इसमें भी पूर्वोक्त रीतिसे यह डौलहै कि(ब्राह्मणी एरे बारहमास करे क्षत्राणी इसकी चौथाई छोड़िके नौमासकरै और बनेनी दोपाद छोडिके एक छमाहीभर व्रत करै और शूद्रकी भार्या हो सो तीनि महीने व्रत करै) यहां भी ऋष्यशृंगजीके कहे बारहमहीनोंको पहिले तीनि महीनोंकी अपेक्षा बहुत जानिके हमारे प्राचीन संग्रहकार ने यहकहिदिया है (कामतःसकृद्गमनेइदं) कि यह बडा प्रायश्चित्त एकहीबार कामनाके साथ संगम करनेमध्ये समझना—सो इस कामना और इच्छाके व्यभिचारपर कदापि संमत नहीं देसकते हैं न किसी ऋषी-श्वरने अपने किसी मूल वचन में यहभाव दर्शाया है तिससे इच्छा बिना दैवयोग से कुछदिन उनकेसाथ निवास करना छोटी बातहै और इच्छा साथ एकहू बारका सं-गम बहुत बडी बातही नहीं बल्कि बहुत बड़ा अनर्थहै कि जिसका कोई प्रायश्चित्त त्यागिदेनेके सिवाय सूचित नहींहै ॥०॥ सगर्भायाश्चांडालादिव्यवायेनियमाः— उन्हीं ऋष्यशृंगजीने उस दशाके भी नियम कहेहैं कि जब कोई गर्भिणीनारी किसी अंत्यज चंडाल आदिने भोगीहो=यथाहऋष्यशृंगः=अंतर्वत्नीतुयुवतिःसंपृक्ताचांत्ययो-निना प्रायश्चित्तंनसाकुर्याद्यावद्गर्भोनर्निःसृतः नप्रचारंगृहेकुर्यान्नचांगेषुप्रसाधनम नशयीतसमंभर्त्रानवाभुंजीतबांधवैः प्रायश्चित्तंगतेगर्भेविधिंकृच्छ्राब्दिकंचरेत हिरण्य मथवाधेनुंदद्याद्विप्रायदक्षिणाम=अर्थात—ऋष्यशृंगने ऊपरले प्रायश्चित्तके साथही इस विधिको भी लिखाहै कि—यदि कोई गर्भवती युवती नारी अंत्यज के साथ फँ-सिजाय सो प्रायश्चित्तको तबतक न करै कि वहपातकागर्भ बाहर न निकसिपावै क्योंकि ऐसी दशामें प्रायश्चित्त करनेसे गर्भका गिरजाना आदि उपद्रव खडाहोना संभव है और तबतक प्रायश्चित्तके बिना घरके कामधंधे और घरमें चलना फिरना भी न करै और कंघी सुरमा आदि अंगोंकेसंस्कारभी न साधै और भर्ताके साथभी न सोवैतथा बंधुआदि कुटुम्बकेसाथ भोजनभी न करै फिर उसगर्भका जन्महोजाने बादि वही पूर्वोक्त एक सालभरका छःछव्रत आचरै और पीछेसे ब्रह्मभोजकराइके सुवर्ण या गौदान की दक्षिणा देवै ॥०॥ अथप्रायश्चित्ताकरणपरिणामः=यहां यह

शंका शेषरहीथी कि इन कहेलिखे प्रायश्चित्तोंको जो कोईनारी करनाही स्वीकार न करै तब कैसे शुद्धि होगी—तहां यही नियमहै कि याती पुल्लिंगरूपी मुद्राकादाग उसके माथेपर दगवाइके निकासि देवै या निपट मारडाले यह दंडरूपी प्रायश्चित्त है=तदाहपाराशरः=हीनवर्णोपभुक्तायात्याज्यावध्याऽथवाभवेत्=अर्थात्—जिस स्त्री को उसकी इच्छा बिनाही यदि हीनवर्णके पुरुषोंने भोगा हो और वह प्रायश्चित्त को न साधै तो माथे दाग देनेके योग्य या वध करने के योग्य होय=इसके सिवाय जो नारी अपने भोगकी कामनासे चंडाल आदि किसी अधम के पासजाय तिसका त्याग भी नहीं होता किन्तु केवल मौतहीरूपी दंडहै सोई उसका प्रायश्चित्त जानो जैसा उशनाका वचन आगेकहतेहैं ॥ ० ॥ अथसकाममैथुनप्रसंगः=यदाहोशनाः= अंत्यजेनतुसंपर्केभोजनेमैथुनेकृते प्रविशेत्संप्रदीप्तेऽग्नौमृत्युनासाविशुध्यति=अर्थात्—अंत्यज पुरुषके संपर्कमें जो कोई नारी इच्छा सहित भोजन या मैथुन करने लगै सो जीतेजी कदापि नहीं शुद्ध होसक्ती हैं तिससे प्रज्वलित अग्नि में कूदिपडै सो मौत पाकर शुद्ध होजाती है—इस अर्थ का ध्वन्यर्थ यह भी है जो नारी अपने आप अग्नि में नहीं कूदै सो बलात्कार अग्नि में झोंकी जाय ॥ ० ॥ सर्ववच नानांनिर्णायसारः=इस परिच्छेद के प्रारम्भसे यहांतक यह बात सबने देखी और समझी होगी कि इच्छासे चाहिकर किये हुये मैथुनका प्रायश्चित्त कोई नहीं है जैसा इसी जगह सज्ञान मैथुनका प्रसंगदेखो फिरइससे उपरान्त वचनोंको आगेदेखो कि आचार मर्यादा परिपाटी में यह वचन आचुकाहै (चतस्रस्तुपरित्याज्याःशिष्य गागुरुगाचया पतिघ्नीचविशेषेणजुंगितोपगताचया) अर्थात्—चार प्रकारकी स्त्रियां अवश्यही त्यागिदेने योग्यहोतीहैं एकतो शिष्य या दासोंसे गमन करनेवाली दूसरे जेठ ससुर आदि गुरुजनों के पास जानेवाली तीसरे जो अपने पतिको विषदेनेआदि प्रकारोंसे मारडारैं और चौथी जो जुंगितोंके पासजायँ अर्थात् चर्मकार आदि अति नीचजाती पुरुष जुंगितकहातेहैं जो मद्यके पीनेसे संयुक्त रहितेहों यह वचनभी केवल इच्छाके मैथुनपर आरूढहै इसपरध्यानकरो कि जब नीचके संगसे निपट त्यागही करना चाहा तो फिर प्रायश्चित्त कहांरहा और किसका टुपुना किया जाय=फिर भी यह देवलका वचनहै कि (यस्त्याज्याभिसायपापंकर्मसकृत्कृतम् तस्येयंनिष्कृ तिर्दृष्टाधर्मविद्भिर्मनीषिभिः) अर्थात्—धर्मके जाननेवाले बुद्धिमानोंने जो कुछ प्राय-श्चित्त कहीं लिखे हों सो सब उसकी निष्कृति सोची है जो पापकर्म एकहीबार बिना चाहे भोचे देवभी ने बनिाया हो किन्तु इच्छावाले की शुद्धि मुक्ति नहींहै=

और भी=अंगिराका यह वचनहै कि (मरणांतिकंहियत्प्रोक्तंप्रायश्चित्तंमनीषिभिः तत्तुकामकृतेपापेविज्ञेयंनात्रसंशयः) अर्थात्—अंगिराने यह नियम निश्चित करदिया है कि मनीषी बुद्धिमान विद्वानोंने जो कुछ कहीं किसी शास्त्र में मरणांतिक प्रायश्चित्त कहाहो जिससे प्रायश्चित्ती के प्राणही चलेजायँ सो सर्वत्र कामनासे किये पापके ऊपर समझलेना इसमें कुछ संदेहनहीं—इस बातका प्रमाण भी इसीपरिच्छेद के प्रारम्भसे देखो कि वशिष्ठने मरणांतिक प्रायश्चित्त कहा सोभी कामनासे किये पापके ऊपर कहाहै=और भी=दोसौतेंतीस२३३ वाला मूल श्लोक देखो जहां योगीश्वर याज्ञवल्क्यजी आपही यह कहिचुकेहैं कि (छित्त्वालिंगंवधस्तत्रसकामायाः स्त्रियाअपि) जहां कामनाके साथ अमुकामुक स्त्रियोंमें संगमहोय तहां पुरुषका लिंग काटिके मौतरूपी प्रायश्चित्त उसको दिया जायऔर जो स्त्रीने अपनीओरसे काम की इच्छा प्रकट करीहो तौ उसका भी वध किया जाय—इसीप्रकार सर्वत्र सभी वचनोंका तात्पर्य केवल यहीहै कि कामना से किये व्यभिचारका प्रायश्चित्त मौत के सिवाय यद्वाकान आदि काटिकर कुरूप करदेने के सिवाय और कुछ नहीं है॰ अथवा एक यहधर्महै कि (महताचापराधेनप्रायश्चित्तंविसर्जनं) बहुत बड़े अपराध में भी कि जहां स्त्रीका वधकरना या कुरूप करना उचित न ठहिरै तहां स्त्री को घर से निकालिदेना यही प्रायश्चित्त है और कुछ नहीं—परन्तु इन सभी धर्मोंसे यहबात नहीं पाईगई कि दूना प्रायश्चित्त कराइके घरमें राखै=इसपर भी=कोई यहशंका करै कि यहां उपपातकोंका प्रकरण है और योगीश्वर का दोसौ तेंतीसवाला वचन महापातकों में आया था यहां उसका प्रमाण उचित नहीं—इसका यही समाधानहै कि महापातकों में चाण्डाली आदिका गमन भी आचुका था दोसौइकत्तिस २३१ वाला मूलश्लोक और उसीकी अधिकोक्ति देखो फिर तेंतीसतक देखते चले जाओ कि उसी अंत्यजा चाण्डाली से सकाम मैथुन करने पर लिंग काटिकर वध करना कहागया तौ फिर इस परिच्छेद में उपपातकों के साथ आकर उन्हीं चण्डालों से सकामानारी मैथुनकराइके क्योंकर छोटे प्रायश्चित्तोंको दूनाकरिके शुद्धहोसकैगी यह बड़ा असमंजसहै=और भी=वृहत यमका वचन देखो कि (रेतःसिक्त्वाकुमारी-षुस्वयोनिस्वंत्यजासुच सपिंडापत्यदारेषुप्राणत्यागोविधीयते) अर्थात्—कुमारीकन्या या अपनी बहिन या सब तरह की चांडालियों में या अपने सपिंड और पुत्रादिक संतानकी बधूटियों में कामनाके साथवीर्य सींचनेवाले का प्राणत्यागही प्रायश्चित्त है और कुछनहीं—जैसा सबतरहकी चांडालियों में वीर्य सींचनेवाले पुरुषको प्राण

त्यागरूपी प्रायश्चित्त कहा तैसा सब तरहके चंडालों से मैथुन करानेवाली स्त्री को प्राणत्याग रूपी प्रायश्चित्त सूचित है बल्कि यह बात इस परिच्छेद के प्रारम्भ में खुद मिताक्षरा कारही कहिचुके हैं कि जो जो प्रायश्चित्त पहिले पुरुषोंको कहे गये वेही तीनिवर्ष आदिके प्रायश्चित्त उन पापोंकी करनेवाली स्त्रियों को भी सूचित हैं बल्कि (यत्पुंसःपरदारेषुतच्चैनांचारयेद्व्रतं) यह मनुका वचन भी मिताक्षराकारने प्रमाण दियाहै तिससे हम दूने प्रायश्चित्त में नहीं संमतिदेसक्तेहैं—हाँ—दूने का नियम प्रायश्च नरहत्या गोहत्या और चोरीआदि पापकर्मोंपर जैसा जहाँ लिखिचुके सो सब ठीकहै पर इसमें नहीं और इसी द्विविध आशयके हेतुसे योगीश्वर याज्ञवल्क्य पहिले कहिचुके हैं कि(प्रायश्चित्तैरपैत्येनोयदज्ञानकृतंभवेद् कामतोव्यवहार्यस्तुवचनादिहजायते २२६)इस दोसौ छब्बीस के ठिकाने पर जाकर अर्थ देखो इसका यही तात्पर्य है कि प्रायश्चित्तोंसे वहपाप दूर होजाता है जो अज्ञानता से बनिगयाहो और जो कामनासे जानतेहुये पापकियाहो तिसमें प्रायश्चित्त करने से भी पापतो नहींमिटसक्ताहै परन्तु संसार में मनुष्यों के साथ व्यवहार आदि संबंध जोड़नेके योग्य होजाताहै (इसीलिये दूनातिगुना आदि करायाजाताहै) पर इसमें इतना भेदहै कि (वचनादिहजायते) वचन के बलसे व्यवहार योग्य होताहै अर्थात् जिसकिसी पापकी बाबत मुनीश्वरों ने वचन दियाहोगा कि इसमें दूना आदि करने से व्यवहार के योग्य होसक्ते उसीपापमें उसखास वचनकेबलसे प्रायश्चित्त करिके संसारी व्यवहारों के लायक होजायगा सर्वत्र सभीपापोंमें ऐसा नियम नहीं है—तो इस व्याख्याके अनुसार ठीकठीकहै कि हत्या आदिमें जहां जहां दूनेका वचन पाया तहांतहां प्रायश्चित्त करिके संसारी व्यवहार करसक्ताहै अन्यथा स्त्री व्यभिचारिणी के मध्ये दूनेका वचन कोई नहींमिला सो कैसे घरके व्यवहार योग्यहोसके—केवल एक शूद्रीके लिये दूना करनेका यहवचन मिला है कि (म्लेच्छेनापिगताशूद्राप्रज्ञानात्तुकथंचन शुद्ध्येयंश्कुर्वीतज्ञानात्तुद्विगुणंभवेत्) अर्थात्—किसी शूद्रकी शूद्रिनी भार्या यदि कदाचित नासमझी अपनी अज्ञानतासे म्लेच्छ से फँसिजाय सो अच्छीतरह तीनिकृच्छ्र करै पर जो जानिबूझि फँसीहोय सो दूने व्रतकरै तो संसारी घरके काम योग्यहोजाय—इसवचनमें (शूद्राहि) हि अव्यय विशेषअर्थ पर आरूढ होनेसे भी केवल शूद्राकी खूसूसियत रक्खीगई है कि शूद्रा के सिवाय किसी द्विजाती की भार्या को यह दूनेका अधिकार नहीं समुझना और यहदूनेकी अधिकारी केवल ओछे शूद्रों की भार्या समुझिलेनी कि जिनकी जाति में बरेना

आदिभी होताहो—सो यहवार्त्ता केवल ओछी जाति का घरबसा रहिने को निर्वाह सोचिके कही अन्यथा जो शूद्र उज्ज्वल जातोंमें गिनती होनेसे धरेजा आदि निषिद्धाचार कुछ न करतेहों तिनकी स्त्रियोंको यहभी नहीं सूचित है फिर उत्तम तीनि वर्णों की का कथा २६५ ॥ इसी दोसौपैंसठि मूलश्लोक वाली टीका से यह पाठ चलाआता है २६५ ॥ इतिपारदार्यभेदेपरपुरुषसंगमपरिच्छेदः॥

इतिपारदार्यप्रायश्चित्तप्रकरणं॥

यह प्रकरण केवल उनचास ४९ पचास ५० इन दोही
परिच्छेदों में पूराहुआ (और यहभी यादरक्खो कि)

उनतालिस ३९ परिच्छेद को आदि लेकर ४३ तेंतालीस परिच्छेदके अन्ततक चारि परिच्छेदों में गोवध का प्रकरण पूराहुआथा—तिसके बादि ४४ चवालिसके आदि लेकर ४८ अडतालिस तक पांच परिच्छेदों में ऐसे फुटकर विषय वर्णनहुये थे जिनका एक एक प्रकरण एकही परिच्छेद में वल्कि विरले परिच्छेद में दोदो तीन तीन विषयतक छोटे होनेके हेतु से समाने तिससे उनके प्रकरणों का कुछनाम जुदा न होसका॥

अथ·परिवित्ति·वार्धुष्य·लवणक्रियोपपातकत्रयाणांप्राय
श्चित्तप्रकाशकोऽयं परिच्छेदः एकपंचाशत्तमः ५१॥

इस परिच्छेद में छोटे छोटे तीनि भाँति के उपपातकों का जुदा जुदा प्राय-
श्चित्तकहा जायगा—अर्थात् एक तो परिवित्ति दोष का फिर वार्धुष्य
वृत्तिके दोषका फिर तीसरा लवण क्रिया रूपी दोष का—इन तीनों
के लक्षण सब अपनी अपनी जगह पर देखना॥
(पारदार्य॰ पारिवित्यं॰ वार्धुष्यं॰लवणक्रिया २३५)

ये चारोंनाम दोसौपैंतीस वाले मूल श्लोकमें आचुकेहैं तिनमेंसे पारदार्य नाम का उपपातक ऊपरले दो परिच्छेदों में वर्णन होचुका=अब=उपतेय जिसा पारिवि-

त्यागरूपी प्रायश्चित्त कहा ऐसा सब तरहके चंडालों से मैथुन करानेवाली स्त्री को प्राणत्याग रूपी प्रायश्चित्त सूचित है बल्कि यह बात इस परिच्छेद के प्रारम्भ में खुद मिताक्षरा कारही कहिचुके हैं कि जो जो प्रायश्चित्त पहिले पुरुषोंको कहे गये वेही तीनिवर्ष आदिके प्रायश्चित्त उन पापोंकी करनेवाली स्त्रियों को भी सूचित हैं बल्कि (यत्पुंसःपरदारेषुतच्चैनांचारयेद्व्रतं) यह मनुका वचन भी मिताक्षराकारने प्रमाण दियाहै तिससे हम दूने प्रायश्चित्त में नहीं संमतिदेसक्तेहैं—हाँ—दूने का नियम प्रायश्च नरहत्या गोहत्या और चोरीआदि पापकर्मोंपर जैसा जहाँ लिखचुके सो सब ठीकहै पर इसमें नहीं और इसी द्विविध आशयके हेतुसे योगीश्वर याज्ञवल्क्य पहिले कहिचुके हैं कि(प्रायश्चित्तैरपैत्येनोयदज्ञानकृतंभवेत्कामतोव्यवहार्यस्तुवचनादिहजायते २२६)इस दोसौ छब्बीस के ठिकाने पर जाकर अर्थ देखो इसका यही तात्पर्य्य है कि प्रायश्चित्तोंसे वहपाप दूर होजाता है जो अज्ञानता से बनिगयाहो और जो कामनासे जानतेहुये पापकियाहो तिसमें प्रायश्चित्त करने से भी पापतो नहींमिटसक्ताहै परन्तु संसार में मनुष्यों के साथ व्यवहार आदि संबंध जोड़नेके योग्य होजाताहै (इसीलिये दूनातिगुना आदि करायाजाताहै) पर इसमें इतना भेदहै कि (वचनादिहजायते) वचन के बलसे व्यवहार योग्य होताहै अर्थात् जिसकिसी पापकी बाबत मुनीश्वरों ने वचन दियाहोगा कि इसमें दूना आदि करने से व्यवहार के योग्य होसक्ते उसीपापमें उसख़ास वचनकेबलसे प्रायश्चित्त करिके संसारी व्यवहारों के लायक होजायगा सर्वत्र सभीपापोंमें ऐसा नियम नहीं है—तो इस व्याख्याके अनुसार ठीकठीकहै कि हत्या आदिमें जहां जहां दूनेका वचन पाया तहांतहां प्रायश्चित्त करिके संसारी व्यवहार करसक्ताहै अन्यथा स्त्री व्यभिचारिणी के मध्ये दूनेका वचन कोई नहींमिला सो कैसे घरके व्यवहार योग्यहोसक्वै—केवल एक शूद्रीके लिये दूना करनेका यहवचन मिला है कि (म्लेच्छेनाविगताशूद्राह्यज्ञानात्तुकथंचन शाच्छ्रयंप्रकुर्वीतज्ञानात्तुद्विगुणंभवेत्) अर्थात्—किसी शूद्रकी शूद्रिनी भार्या यदि कदाचित् नागहानी अपनी अज्ञानताभे म्लेच्छ से फँसि जाय सो अच्छीतरह तीनिकृच्छ्र साधै पर जो जानिबूझि फँसीहोय सो दूने व्रतकरै तो संसारी घरके काम योग्यहोजाय—इसवचनमें (शूद्राहि) हि अव्यय विशेषअर्थ पर आरूढ होनेसे भी केवल शूद्राकी ख़ुसूसियत रक्खीगई है कि शूद्रा के सिवाय किसी द्विजाती की भार्या को यह दूनेका अधिकार नहीं समुझना और इसदूनेकी अधिकारी केवल ओछे शूद्रों की भार्य्या समुझिलेनी कि जिनकी जाति में धरेजा

आदिभी होताहा—सो यहवार्त्ता केवल ओछी जाति का घरबसा रहिने को निर्वाह सोचिके कही अन्यथा जो शूद्र उज्ज्वल जातोंमें गिनती होनेसे घरेजा आदि निषिद्धाचार कुछ न करतेहों तिनकी स्त्रियोंको यहभी नहीं सूचित है फिर उत्तम तीनि वर्णों की का कथा २६५ ॥ इसी दोसौपैंसठ मूलश्लोक वाली टीका से यह पाठ चलाआता है २६५ ॥ इतिपारदार्यभेदेपरपुरुषसंगमपरिच्छेदः ॥

इतिपारदार्यप्रायश्चित्तप्रकरणं ॥

यह प्रकरण केवल उनचास ४९ पचास ५० इन दोही
परिच्छेदों में पूराहुआ (और यहभी यादरक्खो कि)

उनतालिस ३९ परिच्छेद को आदि लेकर ४३ तेंतालीस परिच्छेदके अन्ततक चारि परिच्छेदों में गोवध का प्रकरण पूराहुआथा—तिसके बादि ४४ चवालिसके आदि लेकर ४८ अड़तालिस तक पांच परिच्छेदों में ऐसे फुटकर विषय वर्णनहुये थे जिनका एक एक प्रकरण एकही परिच्छेद में बल्कि विरले परिच्छेद में दोदो तीन तीन विषयतक छोटे होनेके हेतु से समाने तिससे उनके प्रकरणों का कुछनाम जुदा न होसका ॥

अथ·परिवित्ति·वार्धुष्य·लवणक्रियोपपातकत्रयाणांप्राय
श्चित्तप्रकाशकोऽयं परिच्छेदः एकपंचाशत्तमः ५१ ॥

इस परिच्छेद में छोटे छोटे तीनि भाँति के उपपातकों का जुदा जुदा प्राय-
श्चित्तकहा जायगा—अर्थात् एक तो परिवित्ति दोष का फिर वार्धुष्य
वृत्तिके दोषका फिर तीसरा लवण क्रिया रूपी दोष का—इन तीनों
के लक्षण सब अपनी अपनी जगह पर देखना ॥

(पारदार्य॰ पारिवित्त्यं॰ वार्धुष्यं॰ लवणक्रिया २३५)

ये चारोंनाम दोसौ पैंतीस वाले मूल श्लोकमें आचुकेहैं तिनमेंसे पारदार्य नाम का उपपातक ऊपरले दो परिच्छेदों में वर्णन होचुका=अब=उद्देश्यगिना पारिवि-

त्य नाम जो दोष है सो जिस पुरुष में होय तिसको परिवित्ति कहिते हैं उसके सब लक्षण और प्रायश्चित्त भी ४८ अठतालीस के परिच्छेद में परिवेदन कर्मके प्रसंग साथ वर्णन करचुके तहां देखो—तथापि यहांक्रमसे उसका नाम आनिपरनेके हेतुसे मिताक्षराकार ने संक्षेपचर्चा लिखाहै सो देखो—परिवित्तिप्रायश्चित्तविषयः= तदाह विज्ञानेश्वरः=परिवित्तिप्रायश्चित्तानामपि परिवेत्तृप्रायश्चित्तवद्व्यवस्था विज्ञेया इयांस्तुविशेषः परिवेत्तुर्यस्मिन्विषये कृच्छ्रातिकृच्छ्रौ तत्रपरिवित्तेः प्राजापत्यं (परिवित्तिःकृच्छ्रंद्वादशरात्रं चरित्वापुनर्निर्विशेत्तांचैवोपयच्छेदिति वशिष्ठस्मरणात)=अर्थात—श्रीमद्विज्ञानेश्वर मिताक्षराकार कहितेहैं कि—परिवित्ति पुरुष के प्रायश्चित्तों की जरूरत अगर किसी को आनि परै तौ उनको भी व्यवस्था परिवेत्ता के प्रायश्चित्त समान जानिलेनी कि जैसी परिवेत्ता की व्यवस्था अरतालिसवें ४८ परिच्छेद में कही गईथी पर इतना दोनों में अन्तर है कि जिस विषय पर परिवेत्ता को कृच्छ्र अतिकृच्छ्र दो प्रायश्चित्त करने लिखे हों उसी विषय पर परिवित्ति को बारह दिनका प्राजापत्य करावैं—क्योंकि वशिष्ठ जी ने यह कहा है (कि परिवित्ति पुरुष अपना दोष मेटने को बारह दिन कृच्छ्र व्रत करिके फिर अपना ब्याह कहीं ढूंढि के करै अथवा उसी कन्या को अपने विवाह में स्वीकार करै यदि छोटे भ्राता ने इसको निपट समर्पण करदी होवै कि जिस कन्याके साथ छोटे ने अपना ब्याह रोपि लिया था जिससे ये दोनों दोषी ठहिरे) अन्यथा जहां छोटे का विवाह निपटिचुके पीछे यह दोष का चर्चा खडा हुआ हो तहां उस कन्याका समर्पण करना शेष नहीं रहा तिससे जेठा परिवित्ति अपना ब्याह ढूंढिके करै यही अर्थ है॰ और छोटे का विवाह नहीं निपटि चुके मे भी यह अर्थ बना रहिता है कि छोटेने प्रायश्चित्त करिके अपनी सगाई वड़े भ्राता को समर्पण करी कि आपहीइस कन्या से विवाह अपना कीजिये परन्तु उस बड़े ने अपने बड़ापन से फिर उसी छोटे को अपनी तर्फ से पूरी पूरी आज्ञादेकर आशीर्वादसे अभिनन्दित किया कि हमने तुम्हारी दीहुई भेट को हर्ष भावसे स्वीकार करलिया पर अब तुम्हीं अपना ब्याह करो फलो फूलो॰ तब इस दशा मे भी जेठे को ढूंढिकर इतना शीघ्र अपना ब्याह करना चाहिये कि उस छोटे से पहिले इसका होजाय और उस छोटे को भी अपना ब्याह तबतक रोकना चाहिये कि जब तक जेठे का पहिले हो जाय—येसब अर्थ ऊपरले वशिष्ठ के ही वचन के ध्वन्यर्थ हैं॰ वशिष्ठ और गौतम आदि मुनिप्रवरों के वचन ऐसे स्वल्पाक्षर और अगनन्त अर्थोंवाले होते हैं कि थोडी सी पंक्तिपर इतने बल्कि

इतने से भी अधिक अर्थ फैलते हैं=इस व्यवस्था को अतालिस के परिच्छेद में मिलाकर समझिलेना क्योंकि विस्तार इसका उसी में लिखिचुके हैं इतिपरिवित्तिप्रायश्चित्तं समाप्तम् ॥

(अथवार्धुष्य लवणक्रिययोः प्रायश्चित्तं)

वार्धुष्य और लवणक्रिया नामों के अर्थ समझा चाहो सो २३५ मूल श्लोक देखो ये दोनों जुदे उपपातक हैं योगीश्वरने जैसे परिवित्ति का कुछ प्रायश्चित्त नहीं कहा तैसे इनका भी कुछ नहीं कहा•परन्तु परिवित्ति का वशिष्ठ जी ने अच्छी तरह से दर्शाया था सो लिखागया•इन दोनोंका छोटा विषय समझिके और भी मुनीश्वरों ने कुछ नहीं कहा तिससे इनके परिच्छेद भी जुदे नहीं नियत होसक्ते हैं तथापि उपपातकों में गिनती होचुकी हैं इस हेतुसे २६५ दोसौपैंसठि मूलश्लोक और उसकी अधिकोक्ति में सामान्य प्रायश्चित्त जो सभी उपपातकोंके निमित्तपर दर्शायचुके उन्हीं को इनके लिये विचारना सो सब चवालिस के परिच्छेद में जाकर देखो–यही डौल मिताक्षरा कारने प्रकाश किया है=यथा=वार्धुष्यलवणक्रिययोस्तुमनुयोगीश्वरोक्तसामान्योपपातक प्रायश्चित्तानिजातिशक्ति गुणाद्यपेक्षयायोज्यानि=अर्थात्–वार्धुष्य और लवण क्रिया इन दोनोंके लिये मनु और योगीश्वर केकहे साधारण उपपातकोंवाले प्रायश्चित्त दोषीकीजाति और शक्ति सामर्थ्य और गुणों को आदि लेकर विशेषताकी अपेक्षासेबड छोटेप्रायश्चित्त सोचिके लगाने चाहिये कि जैसे२६५मूलश्लोक में योगीश्वरने कई प्रायश्चित्त कहे और उसी अधिकोक्ति में मनुके वचनोंसे जुदे प्रायश्चित्त लिखे गयेहैं उनमें से अपेक्षा के अनुरूप चुनिकर समझिलेने इनकी यही व्यवस्था है कुछ और नहीं ॥ २६५ ॥ यहाँतक•उसी दोसौ पैंसठिवाले मूलश्लोककी टीकासे अनेक परिच्छेद होकर लिखेगये अब उसकाशेष पूरा होगया तिससे अगिले परिच्छेद में दोसौछासठिका प्रारम्भ होगा ॥ २६५ ॥

इस छोटेसे परिच्छेद में भी जुदे जुदे तीनि विषय अति छोटे होनेके हेतु से समा गये कि जिनके परिच्छेद भी जुदे न होसके फिर प्रकरण तो बहुत बडी बातहै सो क्योंकर होता–तोभी कुछ प्रकरणका नाम होना चाहिये ॥

इतिपरिवित्त्यादिविषयत्रयप्रकरणं ॥

अथक्षत्रियादिवर्णत्रयबधोपपातकानांप्रायश्चित्त प्रकाशकोऽयंपरिच्छेदःद्विपंचाशत्तमः (५२)॥



इस परिच्छेद में क्षत्री वैश्य शूद्र इन तीनि वर्णों में से किसी पुरुष को यदि कोई मारडाले सो उपपातकी होताहै तिसके सब जुदेप्रायश्चित्त कहेजायँगे=क्योंकि सत्ताइस परिच्छेद में केवल ब्रह्महत्या के प्रायश्चित्त कहे और उनतालिस परिच्छेद में प्रतिलोम जातें जो चारौवर्णसे उपराल सूत मागध वैदेहक आदि वर्ण संकर होतीहैं तिनकावध करनेके प्रायश्चित्त कहे गये= केवल बीचके तीनों वर्ण क्षत्री आदिका वध काहना बाकी रहा था सो इस बावन के परिच्छेद में दर्शाते हैं॥

(क्षत्रियादिवधप्रायश्चित्तं)

ऋषभैकसहस्रागादद्यात्क्षत्रवधेपुमान्। ब्रह्महत्याव्रतंवापिवत्सरात्रितयंचरेत् २६६॥
वैश्यहाब्दंचरेदेतद्दद्यादैकशतंगवाम्। षण्मासान्शूद्रहाप्येतद्धेनूर्दद्यादशाथवा २६७॥

अर्थः—पुरुष किसी क्षत्रीका वध करनेमें एक आंड़ वृषभ और सहस्र गायँ दान करै (तब शुद्धहोय यही प्रायश्चित्त है अथवा यह न करसकै सो) ब्रह्महत्यावाले व्रतकोही तीनिवर्षभर आचरै॥ २६६॥ यही ब्रह्महत्यावाला व्रत एकवर्षभर वैश्य का वध करनेवाला आचरै अथवा एक आंड़ू वृषभ और एकसौगौयें दानकरै=यही व्रत शूद्रका वध करनेवाला पुरुष छमाहीभर करै अथवा हालकी बिआनी बच्छा सहित दशधेनुका दानकरै) हालकी बिआनी यह धेनु शब्दका ध्वन्यर्थ है॥२६७॥

२६६अधिकोक्तिः—दोसौछत्तीस मूलश्लोक में कहिचुके हैं कि (स्त्रीशूद्रविट्क्षत्र वधः) स्त्री॰शूद्र॰वैश्य॰क्षत्री॰ इनका वध करना उपपातक जुदे चार ४हैं—इनमें से स्त्रियोंके वधका प्रायश्चित्त अगिले परिच्छेद में योगीश्वर कहेंगे और शेषतीनोंके प्रायश्चित्त इन्हींदोनों श्लोकोंमें योगीश्वरने इसहेतुसे जुदेकरके दर्शायेहैं कि दोसौ पैंसठि२६५ मूलश्लोकवाले सामान्य प्रायश्चित्तोंको इनपरभी निरपेक्षमत समुझि लेना कि उन्हीं छोटे प्रायश्चित्तोंसे निर्वाह इनपापोंका होजाय—क्योंकि क्षत्रीवैश्य शूद्र ये तीनों सब एकहीसे बराबर नहीं होतेहैं अर्थात् इनमें भी उत्तम मध्यम आदि

कई भेद अपने गुणोंके प्रभावसे सर्वत्र होतेहैं तिनकावध होजानेसे प्रायश्चित्तों के भी कई भेद करने होंगे—तहां किसी निकृष्ट भेदका वध होने में तत्रोक्त प्रायश्चित्त भी कदाचित कामं आसक्तेहैं सो आगे समझलेना=और=यहां जो श्लोकों के अर्थ में व्यवस्था कही गई तिसको भी ऐसे भेदपर जोडना कि जहां उस मारे गये पुरुष में केवल क्षत्री आदि जातिही कहिलाना एक गुण होय किन्तु दूसरी कोई विशेषता उसमें नहो और मारनेवालेने इच्छाके बिना दैवयोगसे वधकिया हो क्योंकि (अकामतस्तुराजन्यंविनिपात्येतिप्रक्रम्य एतेषामेवप्रायश्चित्तानांमानवेऽभिधानात) मनुस्मृति में भी• कामना के बिना क्षत्री को मारिके• यह अनुक्रम पहिले आरम्भ करिके इन्हीं प्रायश्चित्तोंका वर्णन किया गयाहै तिससे यहां भी वही तात्पर्य है= और यहां जो गौओंकादान या व्रतरूपी तपस्या करना कहा तिसकी व्यवस्था हत्यारेकी शक्तिके अनुसार सोचलेना॥ ईषद्वृत्तस्थक्षत्रियादीनांव्यवस्थाभेदः—जिन क्षत्री आदिमें कुछ थोडासा वृत्ताचार भी प्रसिद्धहोय तिनको मारडारनेमें ऊपरलोंसे कुछ बड़े प्रायश्चित्त चाहिये (क्योंकि ऊपरके छोटे प्रायश्चित्त केवल जातिमात्र के एकही गुणपर कहेगये)अत्राहमनुः—तुरीयोब्रह्महत्यायाःक्षत्रियस्यवधेस्मृतः वैश्येऽष्टमांशोवृत्तस्थेशूद्रेज्ञेयस्तुषोडशः=अर्थात—मनुने यह कहाहै कि वृत्तस्थ क्षत्री का वध होने में ब्रह्महत्याका चौथाई प्रायश्चित्त कहाहै जो बारह वर्षकी चौथाई तीनि वर्ष होतेहैं एवं वृत्ताचारसे संयुक्त वैश्यके वधमें ब्रह्महत्याका आठवाँभाग जो डेढ़वर्ष होताहै सो करना चाहिये तद्वत शूद्रके वधमें ब्रह्महत्याका सोरहवांभाग जो नौमास होतेहैं समझना (मिताक्षराकार कहिते हैं कि यद्यपि क्षत्री के बावत इस वचन में तीनिहीवर्ष कहेगये तौभी जो वृत्तस्थ क्षत्री माराजाय तौ फिर डौढ़देकर साढ़ेचार वर्षका प्रायश्चित्त कराना चाहिये क्योंकि ऊपरली व्यवस्थाकी अपेक्षा यहां सभी प्रायश्चित्त डौढ़ेहोजाने उचितहैं=और यहां जो वृत्ताचारसे संयुक्त या वृत्तस्थ यह विशेषण दियागया सो कुछ जातिसे अपेक्षा नहीं रखताहै केवल एक शरीर से संबंध राखता है चाहै किसी जातिका पुरुष हो अपने शिष्टाचार से संयुक्त होय सो वृत्तस्थ कहाताहै इसके भी लक्षण मनुने कहेहैं—यथा(गुरुपूजाघृणाशौचंसत्यमिन्द्रियनिग्रहः प्रवर्त्तनंहितानांचतत्सर्वंवृत्तमुच्यते) अर्थात—गुरुओंकीपूजा• घृणादया• शौचक्रिया•सत्य•इंद्रियोंका वशमें राखना•हितोंका प्रवर्त्तनभी•यह सर्वामिलाभुला आचरण उसका वृत्त कहाता है जो कोई इनका अंगीकार राखै और खुलासा यह भावार्थहै कि जो कोई पुरुष अपनासे बडोंका सत्कार हमेशा किया करै•असमर्थों

पर कृपापात्रनकी दृष्टिराखै॰ शरीरको शुद्धराखै॰सत्यबोलै॰अपनी किसी इन्द्री को कुमार्गपर न चलनेदेय॰और अनेक हितोंके प्रवृत्तकरनेपर उतारू बनारहै अनेकहित वेही कहलाते हैं जिनके जारी करनेसे अनेक संसारी जीवोंकाहित होताहो दृष्टांत जैसे पियाऊ लगवाना या अन्नका सदावर्त लगाना या किसी औरही से उपकार कराइ देना या तालाव कुआ बागीचा पथिकाश्रम धर्मशाला आदिबनाना ये सभी वृत्त कहातेहैं॥ यहांतक तौ इच्छासे चाहे बिना मारडारने के प्रायश्चित्तकहे॥०॥ अथ सकामवधप्रायश्चित्तं—जिसने कामना से बिचार सहित किसीको मारडाला हो तिसके प्रायश्चित्त ऊपरलोंसे बडे हैं सो आगे हारीत आदिके वचनोंसे कहेंगे=यथाह वृद्धहारीतः=ब्राह्मणःक्षत्रियंहत्त्वाषड्वर्षाणिव्रतंचरेत् वैश्यंहत्त्वाचरेदेवंव्रतंत्रैवार्षिकंद्विजः शूद्रंहत्वाचरेद्वर्षंवृषभैकादशाश्चगाः=अर्थात्=ब्राह्मण कामना से चाहिकर क्षत्री का वध करै सो छः वर्ष भर व्रत करै एवं वैश्यको मारिके ब्राह्मण तीनवर्ष का व्रत करै एवं शूद्र को मारिके एक वर्ष भर व्रत करै और व्रत के बादि एकसांडू वृषभ तथा दसगाय दान करै (मारने वाला जैसा इस वचन में स्पष्ट भाव से ब्राह्मण कहागया तैसा इस परिच्छेद भरमें ऊपरली सभी व्यवस्था में ब्राह्मण समझि लेना चाहिये जहां नाम लेकर नहीं कहा तहांभी यही तात्पर्य हैइसका ब्यौरा परिच्छेद के अन्त पर जाके देखो॥ यह सामान्य क्षत्री आदि की व्यवस्था कही जो शास्त्र आदि पढे कुछ नहों॥०॥ कामतःश्रोत्रियक्षत्रियादि वधप्रायश्चित्तं—उन्हीं वृद्धहारीत ने फिर भेद किया है कि जे कोई क्षत्री आदि शास्त्रोंको पढतेहों या पढि चुकेहों तिनका वध करनेवाले के प्रायश्चित्त ऊपरलोंसे बडे है (श्रोत्रियपूराविद्यार्थी भी कहाता है जो अनेक शास्त्र पढने मे तत्पर होरहाहो और ऐसा पूरा विद्वान भी श्रोत्रिय कहलाता है जो वेद शास्त्र पढाहो या सब शास्त्रों में कुछ अच्छा बोध राखता हो)=यथाहवृद्धहारीतः=तुरीयोनंक्षत्रियस्यवधेब्रह्महणोव्रतम् अर्धंवैश्यवधेकार्यंतुरीयंतृयवतस्यतु=अर्थात्—जिसने श्रोत्रिय गुणवान क्षत्री को इच्छा सहित मारा हो सो ब्रह्महत्या परकहे गये व्रतको चौथाई कम करिके तीन पादके नौवर्ष आचरै॰ एव श्रोत्रिय वैश्यको जिसने चाहिकर माराहो सो आधे व्रतको छः वर्ष भर आचरै॰ एवं बहुश्रुत शूद्रको (कि जिसने वेद शास्त्र के अधिकार विना भी संसार में बहुत शास्त्र की मर्यादा विद्वानों से सुनी समझी हो और अपने जाती धर्म से निपुण हो तिसको) जिसने वधकिया होय सो चौथाई के तीन वर्ष भर प्रायश्चित्त करै तब शुद्धि उसकी होती है (इसमें भी मारने वाला ब्राह्मण समझना) क्योंकि हारीत के

समान वशिष्ठ ने भी यही प्रायश्चित्त कहा तिसमें खुलासा ब्राह्मण कानाम भी कहि दिया है=तथाच वशिष्ठः=ब्राह्मणोराजन्यंहत्वाऽष्टौवर्षाणिव्रतंचरेत षड्वैश्यंत्रीणिशूद्रमिति=अर्थात्–कोई ब्राह्मण क्षत्री को मारि के आठ वर्षभर व्रत करै और वैश्य को मारिके छः वर्ष भर व्रत करै और शूद्र को मारि के तीनि वर्ष व्रत आचरै ॥ ० ॥ उभयगुणसंपन्नक्षत्रियादिवध प्रायश्चित्तं–जब कोई क्षत्री दोनों गुणासे युक्तहो अर्थात् ऊर्ध्वोक्त प्रकार वाले लक्षणों से श्रोत्रिय और वृत्तस्थ भी होय तिसको मारडारने में आपस्तंब का कहा बारह वर्ष वाला प्रायश्चित्त चाहिये=यदाह मिताक्षराकार: (यदातुश्रोत्रियोवृत्तस्थश्चभवति तदापूर्वयोर्वर्णयोर्वेदाध्यायिनंहत्वेत्यापस्तंबोक्तंद्वादशवार्षिकंद्रष्टव्यमितिमिताक्षरा)=अर्थात्–जोमारागयाक्षत्री जहां श्रोत्रिय और वृत्तस्थ भी होता है तहां आपस्तंबके उस वचनको देखना जिसमें (ब्राह्मण क्षत्री इन पहिले दो वर्णों में जोकोई वेद पढ़ा होय तिसको मारिके बारहवर्ष व्रत करै इत्यादि यही वचन पहिले तीसवें परिच्छेद में २५१ की अधिकोक्ति में भी देखिके उसी से क्षत्री का वध होनेपर विचारौ=याद रक्खौ कि=जहां जहां केवल जाति क्षत्री लिखीहो कोई उत्तमगुण विशेष जिसमें नहीं बताया तिसको ऐसा समझि लेना कि राजा आदि उत्तम क्षत्रियों में छः प्रकार के गुण होते हैं सो उसमें नहीं हैं तिससे जाति मात्र क्षत्री कहा ॥ यही व्यवस्था जो केवल क्षत्री के नाम से कही गई सो इस प्रकार के दो गुणों वाले वैश्य के मारे जाने में भी जोड़ि लेनी पर बारह वर्षों के स्थान पर आठ वर्ष का प्रायश्चित्त लगाना यही न्याय का स्वरूपहै ॥ ० ॥ श्रोत्रियस्यप्रारब्ध यागेचवधप्रायश्चित्तं–जहां कोई क्षत्री आदि श्रोत्रिय होय उसी श्रोत्रिय ने किसी यज्ञका प्रारम्भ रोपाहो ऐसी दशामें यदि कोई ब्राह्मण उसको मार डारै तहां उस हत्यारे ब्राह्मण को वही ब्रह्महत्या वाला व्रतकरना चाहिये जो दोसौ इक्यावन २५१ मूल श्लोक से तीसवें परिच्छेद में योगीश्वर आप कहिचुके हैं कि (यागस्थक्षत्रिय विड्घातीचरेद्ब्रह्महणिव्रतं) यज्ञ करते हुये क्षत्री या वैश्य को वध करने वाला ब्रह्महत्यापर दर्शाये व्रत को बारह वर्ष करै (या उस क्षत्री और वैश्य में कुछ ओछे गुण समझे जायँ तो बारह वर्ष से कमतीवाले व्रतभी जो ब्रह्महत्या के प्रकरण में उपस्थित हों तिनकाभी विकल्प से वर्ताव करै) और इसमें यद्यपि क्षत्री वैश्य दोनों की अपेक्षा पूरा बारह वर्षका व्रत कहा तौभी वैश्य की अपेक्षा इसकी एक तिहाई छोड़िके आठ वर्षों का व्रत समझि लेना और इसी प्रकार ब्रह्महत्या के छोटे प्रायश्चित्तों में भी वैश्यके नध्ये कुछ भेद कल्पित करना

यह न्याय का स्वरूप है ॥ और तीसवें परिच्छेद को भी देखो कि वहांपर या ग-स्थका अर्थ यद्यपि सोमयागमें बैठा माना गयाहै तथापि यहां उस वन्धनको नहीं मानना किन्तु यहांपर उपपातकोंका प्रकरण वर्तमानहै तिससे सामान्य हरतरहका यज्ञ समझि लेना और इसी से यहभी इतना भेद है कि (वहांपर दैवयोग से मारने मध्ये पूरा व्रतकरना और चाहिकर मारने मध्ये इसीका दूना करना कहागया परंतु) यहां कामना से चाहिकर मारने मध्ये पूरा एक प्रायश्चित्त और दैवयोगसे मारने मध्ये उससे आधा कल्पित किया चाहिये क्योंकि यह व्यवस्था केवल किसीतरह का यज्ञ करने के विचार से प्रारम्भ मात्र पर दर्शाई गई कि जो क्षत्री या वैश्य अब तक यज्ञ करने में न बैठिपाया और प्रथमसे माराजाय॰ किन्तु॰ नियटयज्ञ पर बैठे हुयेंकी व्यवस्था अब नीचे दर्शातेहैं ॥ ० ॥ यागस्थश्रोत्रियचत्रियादिवधप्राय-श्चित्तं–जहां कोई क्षत्री आदि जो अपनी विद्यामें श्रोत्रिय होय वहीश्रोत्रियकिसी यज्ञको कररहाहो और इसयज्ञस्थको यदिकोई ब्राह्मणमार डारै तिसहत्यारे ब्रा-ह्मणको अग्रोक्त गौतम का वताया प्रायश्चित्त है जिसमें दान और तपदोनों करने होतेहैं=यदाह गौतमः=ब्राह्मणस्यराजन्यवधे षड्वार्षिकंप्राकृतब्रह्मचर्यं मृषभैक सहस्त्राश्चगादद्यात् वैश्यवधेत्रिवार्षिकमृषभैकशतागाश्चदद्यात् शूद्रवधेसांवत्सरिक मृषभैकादश गाश्चगा दद्यात्=अर्थात्–ब्राह्मण को क्षत्री का वध करने में प्राकृत ब्रह्मचर्य छः वर्ष भर करना कहा है तिसके पीछे एक आंड़ू वृषभ और हजार गौयें भी दानकरै॰ तथा वैश्य का वध करनेमें तीनि वर्ष का वही ब्रह्मचर्य करै तिसके वादि एक आंड़ूवृषभ और सौ गाय भी दान करै॰ तथा शूद्र का वध करने में एक साल भर ब्रह्मचर्य साधै तिस पीछे एक आंड़ू वृषभ और दश गाय भी दानकरै (प-रन्तु यह व्यवस्था उस हत्यारे पर आरूढ है कि जिसने विना जाने धोखा से वध किया हो) क्योंकि अगिले वचन में शंखने भी इसीके समान व्यवस्था कही तिसमें अज्ञानता से वध करनेका निमित्त भी प्रकाश करिके कहि दियाहै=यथाह शंखः=पूर्ववदसतिपूर्वचतुर्दशर्योयुप्रमाप्यद्वादशषट्त्रीन सार्धवत्सरंचव्रतान्यादिशेत तेयामते गोसहस्रंचततोऽर्द्धतस्यार्धमर्धंदद्यात सर्वेयामानुपूर्वेणेति=अर्थात्–शंखने इस रीति से कहाहै कि हम जैसा पहिले अज्ञानतासे वध करने का प्रायश्चित्त कहिचुके उसी पहिलेके तुल्य इसमें भी अमति पूर्वक समझना कि जिस विप्रने चारो वर्णमें किसी को मारिके हत्या कमाई हो तो ब्राह्मण आदि सभी के वधमें अनुक्रम से इन प्राय-श्चित्तोंका आदेश करै कि बारहवर्ष॰ छवर्ष॰ तीनिवर्ष॰ डेढवर्ष (तो इस क्रमसे सभी

के वधमें छेवर्ष का व्रत सावित हुआ) फिर इनके पूरे होजाने बादि उसी क्रमसे एक सहस्र गोदान॰ पाँच सौ गौएँ॰ अढाई सौ गाय॰ सवाउसौ गायें दान करै (इसमें भी केवल ब्राह्मण हत्यारे के प्रायश्चित्त कहे समझने)=(परन्तु इस भेद की समाधि कुछ नहीं लिखी जासक्ती है कि असल मिताक्षरा में शंखमुनि का यही वचन दो सौ उनचास २४९ मूलश्लोक वाली टीकामें किस हेतुसे और तरह फिर यहाँपर किस हेतुसे और भाँति लिखा गया वही आधुनिकोंको लिखना परा यद्यपि हेतु यह प्रत्यक्ष है कि वहां तो महापातकों के प्रसंगमें ब्राह्मणका वध होनेपर व्यवस्था लेनी स्वीकार थी और यहाँपर उपपातकों के प्रसंग में केवल श्रोत्रिय यागस्थ क्षत्री का वध होने पर व्यवस्था की रचना करनी स्वीकार है॰ और यद्यपि यह कारण भी प्रमाण है कि मुनीश्वरों के वचन स्वल्पाक्षर तथा अनन्त अर्थों वाले होते हैं तथापि इन ऐसे पाठान्तर वाले भेदको मनोज्ञ नहीं कहि सक्ते हैं किन्तु ऐसे भेदसे यहभ्रांति खडी होतीहै कि जानें शंखजीने किस पाठको मुखसे उच्चारण किया था) = अथ मिताक्षराकाराः—इदंचद्वादशवार्षिकं गौतमीयविषयमेव किंचिन्न्यूनगुणोक्षत्रिये गुणाधिकयोर्वैश्यशूद्रयोश्चद्रष्टव्यं (स्त्रीशूद्रविट्क्षत्रवधःइत्युपपातकमध्येविशेषत एव पठितत्वेनोत्सर्गापवादन्यायगोचरत्वाभावादुपपातकसामान्यप्राप्तान्यपि प्रायश्चित्तान्यत्रयोजनीयानि) तत्रदुर्वृत्तक्षत्रियादीकामतोव्यापादितेमानवं त्रैमासिकं द्वैमासिकं चांद्रायणंच वर्णक्रमेणायोज्यम्—अकामततस्तुयोगीश्वरोक्तं त्रिरात्रोपवास सहितमृषभैकादशगोदानं॰ मासंपंचगव्याशनं॰ मासिकंचपयोव्रतं यथाक्रमेणायोज्य म्=अर्थात्—गौतम शंख इन दोनों के वचन ऊपर दर्शाने के बादि मिताक्षराकार कहिते हैं कि—यह बारह वर्ष भी गौतमके समानही विषय समझना सो कुछेक न्यून गुणवाले क्षत्रीके वधमें और बहुत गुणवाले वैश्य शूद्रोंके वधमें विचारना चाहिये और इनके सिवाय उन प्रायश्चित्तोंको भी यहां लाकर जोडना चाहिये जो चवालिसके परिच्छेद में सामान्य उपपातकों के मध्ये कहे गए थे यद्यपि वे छोटे प्रायश्चित्त हैं परन्तु (स्त्री॰ शूद्र॰ वैश्य॰ क्षत्री॰ इनका माराजाना विशेषतासे उपपातकों में गिना गयाहै और शिक्षके साथ अपवाद वाला न्याय भी इस स्थलमें नहींदेख परता है जिससे उन सामान्य प्रायश्चित्तोंकी पहुँच भी यहांपर पाई जातीहै॰ बाकी रही यह तर्कना कि वे प्रायश्चित्त बहुत छोटेहैं जिसके लिये यह अग्रोक्त व्यवस्था कल्पितकरी)अथदुर्वृत्तक्षत्रियादिवधप्रायश्चित्तकल्पः व—किन्तु मिताक्षराकार हीआप कहितेहैं कि क्षत्री आदि तीनों वर्णोंके मनुष्योंमें जो कोई दुराचारीहोयँ तिन

यह न्याय का स्वरूप है ॥ और तीसवें परिच्छेद को भी देखो कि वहांपर या ग-स्यका अर्थ यद्यपि सोमयागमें बैठा माना गयाहै तथापि यहां उस बन्धनको नहीं मानना किन्तु यहांपर उपपातकोंका प्रकरण वर्तमानहै तिससे सामान्य हरतरहका यज्ञ समझि लेना और इसी से यहभी इतना भेद है कि (वहांपर दैवयोग से मारने मध्ये पूरा व्रतकरना और चाहिकर मारने मध्ये इसीका दूना करना कहागया परंतु) यहां कामना से चाहिकर मारने मध्ये पूरा एक प्रायश्चित्त और दैवयोगसे मारने मध्ये उससे आधा कल्पित किया चाहिये क्योंकि यह व्यवस्था केवल किसीतरह का यज्ञ करने के विचार से प्रारम्भ मात्र पर दर्शाई गई कि जो क्षत्री या वैश्य अब तक यज्ञ करने में न बैठिपाया और प्रथमसे माराजाय॰ किन्तु॰ निपटयज्ञ पर बैठे हुयोंकी व्यवस्था अब नीचे दर्शातेहैं ॥ ० ॥ यागस्थश्रोत्रियचत्त्रियादिवधप्राय-श्चित्तं—जहां कोई क्षत्री आदि जो अपनी विद्यामें श्रोत्रिय होय वहीश्रोत्रियकिसी यज्ञको कररिहाहो और इसयज्ञस्थको यदिकोई ब्राह्मणमार डारै तिसहत्यारे ब्रा-ह्मणको अग्रोक्त गौतम का बताया प्रायश्चित्त है जिसमें दान और तपदोनों करने होतेहैं=यदाह गौतमः=ब्राह्मणस्यराजन्यवधे षड्वार्षिकंप्राकृतब्रह्मचर्यं ऋषभैक सहस्राश्चगादद्यात् वैश्यवधेत्रिवार्षिकमृषभैकशतागाश्चदद्यात् शूद्रवधेसांवत्सरिक मृषभैकाद शाश्चगा दद्यात्=अर्थात्—ब्राह्मण को क्षत्री का वध करने में प्राकृत ब्रह्मचर्य छः वर्ष भर करना कहा है तिसके पीछे एक आंडू वृषभ और हजार गौये भी दानकरै॰ तथा वैश्य का वध करनेमें तीनि वर्ष का वही ब्रह्मचर्य करै तिसके बादि एक आंडूवृषभ और सौ गाय भी दान करै॰ तथा शूद्र का वध करने में एक साल भर ब्रह्मचर्य सावै तिस पीछे एक आंडू वृषभ और दश गाय भी दानकरै (प-रन्तु यह व्यवस्था उस हत्यारे पर आरूढ है कि जिसने बिना जाने धोखा से वध किया हो) क्योंकि अगिले वचन में शंखने भी इसीके समान व्यवस्था कही तिसमें अज्ञानता से वध करनेका निमित्त भी प्रकाश करिके कहि दियाहै=यथाह शंखः= पूर्ववदसंतिपूर्वं चतुर्दशवर्षप्रमाप्यहादशषट्त्रीन सार्ववत्सरव्रतान्यादिशेत् तेषामते गोसहस्रचततोऽर्द्धतस्यार्धमर्द्धंदद्यात् सर्वेषामानुपूर्वेणेति=अर्थात्—शंखने इस रीतिसे कहाहै कि हम जैसा पहिले अज्ञानतासे वध करने का प्रायश्चित्त कहिचुके उसी पहिलेके तुल्य इसमें भी असति पूर्वक समझना कि जिस विप्रने चारो वर्णों किसी को मारिके हत्या कमाई हो तो ब्राह्मण आदि सभी के वधमें अनुक्रम से इन प्राय-श्चित्तोंका आदेश करै कि बारहवर्ष॰ छैवर्ष॰ तीनिवर्ष॰ डेढवर्ष (तो इस क्रमसे सभी

के वधमें छेवर्ष का व्रत साबित हुआ) फिर इनके पूरे होजाने बादि उसी क्रमसे एक सहस्र गोदान• पाँच सौ गौयें• अढाई सौ गाय• सवाउसौ गायें दान करे (इसमें भी केवल ब्राह्मण हत्यारे के प्रायश्चित्त कहे समझले)=(परन्तु इस भेद की समाधि कुछ नहीं लिखी जासक्ती है कि असल मिताक्षरा में शंखमुनि का यही वचन दो सौ उनचास २४९ मूलश्लोक वाली टीकामें किस हेतुसे और तरह फिर यहाँपर किस हेतुसे और भाँति लिखा गया वही आधुनिकोंको लिखना परा यद्यपि हेतु यह प्रत्यक्ष है कि वहां तो महापातकों के प्रसंगमें ब्राह्मणका वध होनेपर व्यवस्था लेनी स्वीकार थी और यहाँपर उपपातकों के प्रसंग में केवल श्रोत्रिय यागस्थ क्षत्री का वध होने पर व्यवस्था की रचना करनी स्वीकार है• और यद्यपि यह कारण भी प्रमाण है कि मुनीश्वरों के वचन स्वल्पाक्षर तथा अनन्त अर्थों वाले होते हैं तथापि इन ऐसे पाठान्तर वाले भेदको मनोज्ञ नहीं कहि सक्ते हैं किन्तु ऐसे भेदसे यहभ्रांति खडी होतीहै कि जानें शंखजीने किस पाठको मुखसे उच्चारण किया था) = अथ मिताक्षराकाराः–इदंचद्वादशवार्षिकं गौतमीयविषयमेव किंचिन्न्यूनगुणोक्षत्रिये गुणाधिकयोर्वैश्यशूद्रयोश्चद्रष्टव्यं (स्त्रीशूद्रविट्क्षत्रवधःइत्युपपातकमध्येविशेषत एव पठितत्वेनोत्सर्गापवादन्यायगोचरत्वाभावादुपपातकसामान्यप्राप्तान्यपि प्रायश्चित्तान्यत्रयोजनीयानि) तत्रदुर्वृत्तक्षत्रियादौकामतोव्यापादितेमानवं त्रैमासिकं द्वैमासिकं चांद्रायणंच वर्णक्रमेणयोज्यम–अकामतस्तुयोगीश्वरोक्तं त्रिरात्रोपवास सहितमृषभैकादशगोदानं• मासंपंचगव्याशनं• मासिकंचपयोव्रतं यथाक्रमेणयोज्य म=अर्थात्–गौतम शंख इन दोनों के वचन ऊपर दर्शाने के बादि मिताक्षराकार कहिते हैं कि–यह बारह वर्ष भी गौतमके समानही विषय समझना सो कुछेक न्यून गुणवाले क्षत्रीके वधमें और बहुत गुणवाले वैश्य शूद्रोंके वधमें विचारना चाहिये और इनके सिवाय उन प्रायश्चित्तोंको भी यहां लाकर जोडना चाहिये जो चवालिसके परिच्छेद में सामान्य उपपातकों के मध्ये कहे गए थे यद्यपि वे छोटे प्रायश्चित्त हैं परन्तु (स्त्री• शूद्र• वैश्य• क्षत्री• इनका माराजाना विशेषतासे उपपातकों में गिना गयाहै और शिक्षके साथ अपवाद वाला न्याय भी इस स्थलमें नहींदेख परता है तिससे उन सामान्य प्रायश्चित्तोंकी पहुँच भी यहांपर पाई जातीहै• बाकी रही यह तर्कना कि वे प्रायश्चित्त बहुत छोटेहैं तिसके लिये यह अग्रोक्त व्यवस्था कल्पितकरी)अथदुर्वृत्तक्षत्रियादिवधप्रायश्चित्तानुरूपत्व–किन्तु मिताक्षराकार हीआप कहितेहैं कि क्षत्री आदि तीनों वर्णोंके मनुष्योंमें जे कोई दुराचारीहोयँ तिन

को यदि कोई ब्राह्मण इच्छा सहित मारडारै सो इस क्रमसे प्रायश्चित्त साधै कि उस ४४ के परिच्छेद वाली अधिकोक्तिमें लिखे प्रायश्चित्तोंमें मनुका कहा तीनि महीने वाला दुर्वृत्त क्षत्रीके वधपर करै और दोमहीने वाला दुर्वृत्त वैश्य के वध पर करै और एक महीनेवाला चांद्रायण दुर्वृत्त शूद्रके वधमें करै=परन्तु जिसने कामना के विना दैवयोगिक वध कियाहो सो उस परिच्छेदमें मूलश्लोकसे योगीश्वरके कहे प्रायश्चित्तोंको इस क्रमसे साधै कि तीनि दिनके उपवास सहित ग्यारह गाय बैल के दानवाला प्रायश्चित्त दुर्वृत्त क्षत्रीके वधपर करै और एक महीने पंचगव्य भोजन करने वाला प्रायश्चित्त दुर्वृत्त वैश्यके वधपर करै और एक महीना गाय का दूध पीके व्रत करनेवाला प्रायश्चित्त दुर्वृत्त शूद्रके वधपर करै॥ अथ ब्राह्मणेतरकर्तृकवधप्रायश्चित्तं–मिताक्षराकार अब दूसरी याद दिलाते हैं कि (एतचप्रागुक्तं व्रतजातं ब्राह्मण कर्तृके क्षत्रियादिवधेद्रष्टव्यं) यह परिच्छेदकी आदि से यहां तक पहिला वर्णन प्रायश्चित्तोंका व्रतरूपी सर्वथा ब्राह्मण हत्यारे के निमित्तमें समझना कि जब उसने क्षत्री आदि किसी वर्णकी हत्या करीहो तिसके प्रायश्चित्त कहेगए हैं क्योंकि मनु गौतम हारीत इनके वचन जो पहिले वर्णन होचुके तिनमें ब्राह्मण का नाम साफ़ साफ़ कहागया है यथा (अकामतस्तुराजन्यं विनिपात्यद्विजोत्तमः इति मनुः) तथा (ब्राह्मणस्यराजन्यवधेयड्वार्षिकं इतिगौतमः) तथा (ब्राह्मणःक्षत्रियंहत्वायड्वर्षाणिव्रतंचरे दितिहारीतः)=इस हेतुसे=जहाँ क्षत्री आदि कोई हत्यारे होयँ और इन्हीं क्षत्री आदि तीनि वर्णोंमें किसीका वध कियाहो तहां क्रमसे एक एक चौथाई घटाकर उन्हीं पूर्वोक्त प्रायश्चित्तोंसे व्यवस्था कल्पित करीजाय यह सिद्धांत है और इसीपर अग्रोक्त विष्णु का वचन प्रमाण है=तदाह वृद्ध विष्णुः=विप्रेतु सकलंदेय पादोनंक्षत्रियेस्मृतम वैश्येऽर्द्धमेकपादस्तु शूद्रजातिषुशस्यते=अर्थात्–जो प्रायश्चित्त कहागया सो ब्राह्मण से पूरा करवाना चाहिये और क्षत्री से एक पाद कम कराना कहागयाहै वैश्यपर आधा करवाना और शूद्रसे एक चौथाई करवाना यही ठीक है (परन्तु इस कम कियेहुये को भी प्रातिलोम्य वधकी दशामें दूने तिगुने दइवाला न्याय शोचना होगा) क्योंकि अग्रोक्त विष्णु के वचनका यहां तात्पर्य केवल इतना लेनाहै कि जिस क्षत्रीने क्षत्रीको मारा हो तो उस प्रायश्चित्त में चौथाई कमकरे कि जैसे गुणवाले क्षत्रीके मारनेपर ब्राह्मणको जितना प्रायश्चित्त कहागया हो• और जिन क्षत्रीने वैश्यको माराहो सो उस प्रायश्चित्तमें आधा करै कि जितना उस भांतिका वैश्य मारनेपर ब्राह्मणको लिखचुके हों• और जिन क्षत्री

ने शूद्र का वध किया हो सो उस प्रायश्चित्त का चौथाई व्रत करै कि जितना उस प्रकार का शूद्र मारने पर ब्राह्मण को करना कहिचुके—इसी प्रकार—जिस वैश्य ने किसी वैश्य को मारा हो सो उस प्रायश्चित्त से आधा कम करै कि जितनाउसी योग्यता वाले वैश्य के मारने पर ब्राह्मण को करना कहा गया॰ और जिस वैश्य ने किसी शूद्रका वध किया हो सो उस प्रायश्चित्त का चौथाई व्रत साधै कि जितना उसी भांति का शूद्र वध करने पर ब्राह्मण को लिखिचुके हैं—इसी प्रकार—कोई शूद्र जो किसी शूद्र का वधकरै सो उस प्रायश्चित्त का चौथाई भागसाधै कि जितना उसी योग्यता वाले शूद्र का वध करने पर ब्राह्मण को करना कहा है= अन्यथा=जहां शूद्र किसी वैश्य या क्षत्रीका वधकरै यद्वा वैश्य किसी क्षत्रीका वध करै तौ यह प्रातिलोम्य वध कहिलाता है इसके मध्ये चौथाई आदि कम करने की व्यवस्था इस रीति से लगाई जायगी कि अभी जितना प्रायश्चित्त शूद्रका वध करनेमध्ये शूद्रकेलिये निश्चितहोचुकाहै (कि ब्राह्मणवाले प्रायश्चित्तकी चौथाई करै)सो उसीचौथाईका दूनाव्रत शूद्रसे उसदशामें करवानाहोगा कि जबउसनेकिसी वैश्यकावधकियाहो और उसीचौथाईका चौगुना किन्तु पूराव्रत उसदशामेंकरवाना कि जबशूद्रने क्षत्रीका वधकियाहो—इसीप्रकार—जहां वैश्यने क्षत्रीका वधकियाहो तहां वैश्यको पूरापूराव्रत करनाहोगा कि जितना ब्राह्मणको कहिचुके क्योंकि वैश्य का वधकरने मध्ये वैश्यको आधा करना कहिचुके तिस आधे का दूना फिर पूरा ही क्षत्री के वध पर करना चाहिये यही न्याय का स्वरूप है॰ और इन्हीं अर्थों से यह विष्णु का वचन यहां माना जासक्ता है अन्यथा नहीं=और भी इस व्यवस्था का प्रमाण पूरा चाहिकर उनतीसवें परिच्छेद में २५० दोसौ पचास मूल श्लोक वाली अधिकोक्ति का सबसे पिछला पाठ देखौ जहांपर दूने तिगुने प्रायश्चित्तका प्रसंग छोड़िके अंगिरा के वचन से चतुर्विंशति के वचन तक अच्छा निर्णय किया गया है वही तात्पर्य यहां भी लेलेना होगा क्योंकि ये दोनों स्थल एकही रूप हैं अन्तर केवल इतना है कि वहांपर बहुत बड़ पापों का प्रकरण है यहां उनसे छोटे पापों का प्रकरण है तिस छोटाई से प्रतिलोम अपराधों में यह अपूर्व शक्ति नहीं आसक्ती है कि उत्तम क्षत्री को मारि के शूद्र चौथाई प्रायश्चित्त करै (हां यही विष्णु का बचन तेंतालिस ४३ के परिच्छेद में गोवधके निर्णयपर मिताक्षराकार ने आपही लिखा सोतौ बहुत ठीक है क्योंकि वहां पर उसी न्याय की योग्यता पाई गई और वहां पर एकही सूधे अर्थ से काम चलसक्ताथा) और वहांपर जैसा

एक अंगिरा का वचन पीछे से लिखा वही यहांपर भी लिखा है कि (यत्वं गिरो वचनं—षड्मासाब्राह्मणानांतुआराज्ञांद्विगुणामता वैश्यानांत्रिगुणाप्रोक्तापर्षद्वच व्रतं स्मृतमिति तत्प्रातिलोम्येनवाग्दंडपारुष्यादिविषयं—इसीको यहांपर किन्हींने आदि शब्द छोडिके (वाग्दण्डपारुष्यविषयमित्युक्त गोवधप्रकरणे) ऐसालिखि दियाहै— इसी आदि शब्द के लगे रहिने से प्रयोजन का अर्थ बना हुआथा कि वाक्पारुष्य गाली देना आदि और दण्डपारुष्य लाठीदण्डाचलाना आदि और उसचर्चा किये आदि शब्दसे तीसरा कास निपट मार डारना सिद्धहोताहै अर्थात् ये तीनों बात जो प्रातिलोम उलटे मार्ग से करी जायँ तहां यह अंगिरा का वचन बहुत ठीक है—परंतु किसी विद्वान् ही ने यहांपर उस आदि शब्द को निकासि डारा तिससे तीसरानि॰ पट वध का अर्थ जाता रहा केवल दोही बातों पर अंगिरा का वचन समझा गया॰ सो उस विद्वान् की चतुराई केवल इस हेतुसे उत्पन्न हुई होगी कि ऊर्ध्वोक्त विष्णु के वचन से उनने सूधा सूधा वही अर्थ समझा जो गोवध के स्थल पर सूचित होचु॰ का था इसी लिये गोवध की स्मरणा भी यहां की पंक्ति में जताई है॰ सो यहव्यो॰ रा विज्ञाता जनों को समझना चाहिये कि ऊंचे वर्णों को नीचे वर्ण गाली आदि दुर्वचन कहैं या डंडा लाठी आदि हथियार झुक दिखावैं या चलावैं तिसपर दूने तिगुने दण्ड और प्रायश्चित्त भी कहिचुके तौ फिर निपट मारडारना जो सबसेबड़ा काम है तिसमें यह विपरीत कैसे माना जासकै कि शूद्र क्षत्रीको मारि के चौथाई प्रायश्चित्त करै ॥ ० ॥ अथमूर्धावसिक्तादीनां व्यवस्था—विज्ञानेश्वर कहते हैं कि जैसे वध कहे गये तिनमें मूर्धावसिक्त आदि वर्णसंकर जो हत्यारे बनैं तिनके लिये ये प्रायश्चित नहीं है क्योंकि उनमें क्षत्रीपना या वैश्यपन आदि लक्षण नहीं है तिनसे उनके योग्य लिखे दण्डों के अनुसार इसी भांति के वध में पूर्वोक्त प्राय॰ श्चित्तों का घटाउ बढ़ाउ व्यवहार कांड में दर्शित किया गयाहै कि (दण्डप्रणाय नंकार्यवर्णानात्युत्तरावरैः) यह वचन जहां पर आया हो तहां इसकी व्याख्या जा॰ कर देखो फिर उसीके अनुसार प्रायश्चित्त की कल्पना करो ॥ २६६ ॥ २६७ ॥

इतिक्षत्रियादीनांवधनिर्णयः

—:o:—

अथमंदस्त्रीवधोपपातकप्रायश्चित्तप्रदर्शकोऽयं परिच्छेदः त्रिपंचाशत्तम (५३)

इसपरिच्छेद में उन स्त्रियोंके वध करने मध्ये प्रायश्चित्त कहे जायँगे कि जिनका मार डारना केवल उपपातकों में गिनती होय- अर्थात् उत्तम गुणसे हीन वंध्या आदि वा किंचित् व्यभिचारसेसंयुक्त या अत्यन्त स्वैरिणी आदिखोटी विख्यातहों तिन सबके वधपर योग्यता के अनुसार छोटे बड़ेप्रायश्चित्त भी दर्शावेंगे॥

(स्त्रीवधप्रायश्चित्तं)

दुर्वृत्तब्रह्मविट्क्षत्रशूद्रयोषाःप्रमाप्यतु। दृतिंधनुर्वस्तमविंक्रमाद्दद्याद्विशुद्धये २६८

अर्थः-ब्राह्मण आदि चारों वर्णा में जिस किसीकी स्त्रियाँ जो दुर्वृत्ता स्वैरिणी हों तिनको यदि कोई वध करै सो वध करिके इस क्रमसे प्रायश्चित्त करै कि ब्राह्मणी के मध्ये एक दृति अर्थात् जल भरने की मुशक दान करै और क्षत्राणी की अपेक्षा एक धनुष दान करै और वनेनीकी अपेक्षा एक वस्त बकरा दान करै और शूद्रिणी की हत्या बाबत एक अवि मेढ़ा दान करै तब शुद्ध होय॥ २६८॥

२६८अधिकोक्तिः-मिताक्षराकार कहिते हैं कि योगीश्वर के कहे प्रायश्चित्त अतिशय तुच्छ हैं सो केवल उन स्त्रियों के वध पर समझ लेना जिन्होंने प्रतिलोम नीचे वर्णों या नीची जातें चण्डाल आदि के बीज से संतान पैदा करी हो औरहंता पुरुष ने इच्छा विना इनका वध किया हो=और=जहां कोई इन्हीं स्त्रियों को कामना से वध करै तहां ब्रह्मगर्भ का कहा प्रायश्चित्त लेना होगा=यथाह ब्रह्मगर्भः=प्रतिलोमप्रसूतानांस्त्रीणांमासांवधःस्मृतः अन्तरप्रभवानांचसूतादीनांचतुर्विधः= अर्थात्-ब्राह्मणी आदि चारों वर्णोकी स्त्रियाँ जो प्रतिलोम नीचीजातोंके बीजसेगर्भ लेकर प्रसूत करैं या वर्णों के परस्पर नीचे वर्णों का बीजलेकर जो सूत आदि पैदा करैं या सूतादिक प्रतिलोमोंका बीजलेकरपैदाकरैं इनसबका वधकरना कहा गया है (औरयही वध इच्छा के साथ किया होताहै) तिससे इनकावध करनेमें चार दो छःमास का प्रायश्चित्त चाहिये-सो इस क्रम से कि ऐसी ब्राह्मणीके वध में छः महीना और ऐसी क्षत्रियाके वधपर चार महीने और ऐसी वनेनी के वधमें दोमहीना

और इसी न्याय के अनुसार ऐसी शूद्राके वध में भी एक महीना का प्रायश्चित्त करै तब शुद्ध होय=अन्यथा=जहां गर्भ रहिजाना मात्र या अतिशय व्यभिचार ही देखि भाल जिसने ब्राह्मणी आदि किसी स्त्री का वध कियाहो तिसके मध्ये आंगिरा का अग्रोक्त वचन है=यदाहांगिराः=जलकोशंचकूपंच ब्राह्मण्याः प्रतिपादयेत वधेधेनुःक्षत्रियायावस्तोवैश्यावधेस्मृतः शूद्रायाश्चाविकंवेश्यांहत्वादद्याज्जलंनरः= अर्थात्--ब्राह्मणी मारने की हत्या में जलकोश मुशक और कूप भी दान करै तथा क्षत्राणी की हत्या में दुधार गाय दान करै तथा वैश्या बनैनी की हत्या में एक बड़ा बकरा दान करै तथा शूद्रा के वध में आविक ऊन का बुना कम्बल दान करै और पांचवीं वेश्या को मारि के मनुष्य जल दान करै तब शुद्ध होय (यहां जलकादान जो कहा सो जलाशय में जाकर अंजली देना मत समझना किन्तु पिआउ लगाइ देना या पशु पक्षी आदि को जहां जल न मिलता हो तहां जलका प्रबन्ध करदेना आदि अनेक प्रकारोंसे जलदेना समझि लेना) और (ऊपर ब्राह्मणीके मध्येजहां कूपका दान करना कहागया तहां भी कूपशब्दके कई अर्थ होतेहैं कि एक तौजल भरने का कुआ प्रसिद्ध है फिर छोटे मोटे कुण्ड आदि जलाशय गड्हिले आदि भी कूप कहिलाते हैं और कूप कुप्पा भी कहाता है जिसमें घी तेल भरा करते हैं सो इन सभी अर्थोंको समझि लेना कि जैसी कुछ प्रतिष्ठा की योग्यता वाली ब्राह्मणी व्यभिचारके हेतुसे वध करीहोय तैसेही उत्तम मध्यम आदि कूपोंके अर्थ मानिलेने अर्थात जहां बहुत बड़ी प्रतिष्ठा वाली ब्राह्मणी मारी होय तहां बहुत अच्छा पूरा कुआ बनवा कर दान करना चाहिये इत्यादि कहीं घी का भरा कुप्पा कहीं छोटा मोटा कुण्ड गड्हिला आदि सभी प्रयोजन के अर्थहैं और मुशक सब के साथ लगी रहेगी क्योंकि दोनों वस्तु देनी कहीं॥ अथमिताक्षरा (यदातुवैश्यकर्मणा जीवन्तीं व्यापादयति तदाकिंचिद्देयं॰ वैशिकेनकिंचित॰इतिगौतमस्मरणात्–वैशिकेनवैश्यकर्मणा जीवन्त्यांव्यापादितायां किंचिद्देयं) अर्थात–मिताक्षरामें इस पंक्तिसे यह कहागया है कि जब कोई व्यभिचारिणी आदि चाहे किसी वर्णकी हो किन्तु ब-नियापन दुकानदारी के काममें जीविका रखतीहो तिसको मारडारै तो इस हत्या में कुछ देना चाहिये क्योंकि (वैशिकेनकिंचित) यह गौतमने कहा है कि वैशिक से जीविका चलानेवालोंके वधमें कुछ देना॰ फिर इन्हीं सात या साढ़े छः अक्षरों पर व्याख्या भी लिखिदई है कि वैशिक जो वैश्यों वाला कर्महै तिससे जीविका वालों के मारनेमें कुछ देना=हम इस व्यवस्थाको इन कारणों से अस्वीकार करते हैं कि

प्रथम तौ गौतमका वह वचन पूरा पूरा यहांपर दिया जाता जिसका यह एक पद छै अक्षर वाला लिखागया तौ उसका अभ्यन्तर देखाजाता• फिर इस बात का भी आश्चर्य नहीं है कि गौतमने इसपद में ऊपरले अंगिराके समान वेश्याओंवाले कर्म से जीविका करना दर्शायाहो जिसके अर्थकी प्राप्ति इसमें प्रत्यक्षहै और इसीलिये वेश्याको अतिशय तुच्छ मानिके अंगिरा ने जलदेना मात्र प्रायश्चित्त बताया तैसा गौतमने किंचित् कहा इस किंचित्से किसी वस्तुका नामहीं प्रकट नहीं होता और अतिशय थोडेका नाम किंचित् होता है कि जिसका परिमान भी नहीं कहा जा सक्ता है तौ फिर क्या वस्तु और कितनी देनी चाहिये इस बात के समझे विना प्रायश्चित्त क्योंकर पूरा होसक्ता है—इसके सिवाय यह विरोध है कि चारौ वर्णों के लिये यह एकही बात कही इससे भी अन्याय खडा होसक्ताहै• सबसे ऊपर यह विरोध है कि वैश्यवाले कर्मकी जीविका मध्ये किंचित् कुछ कहि दिया तौ फिर शूद्रकी जीविका वाले कर्मसे या क्षत्री और ब्राह्मणकी जीविकावालेकर्मसे जीविका करतीहों तिनका वधहोने में क्या क्या उत्तर दियाजाय•तिससे यहां वैश्यआदि किसीके कर्मका प्रसंग लाना निपट वृथाहै न उसके चर्चासे कोईसा प्रयोजन देखि परता है• क्योंकि यहां व्यभिचारिणी आदि खोटी स्त्रियोंकी व्यवस्था वर्णन हो रही है तिसमें जो वणिज व्यापारका विशेषण जोड़ैं तौभी यह एक प्रकार का प्रतिष्ठा वाला चिह्न खडा होनेसे उलटा दूसरा पैदा होताहै कि उसी प्रतिष्ठाके अनुसार कुछ बड़ा प्रायश्चित्त कहाजाता• तहां ऐसे निरादरके साथ किंचित् कुछ कहि देना किस प्रकारसे न्यायात्मक मानाजाय• तिससे साफ निश्चित्त होताहै कि गौतमने वेश्याके वधका प्रायश्चित्त निरादर के साथ प्रकट किया होगा फिर चाहैं वह बजारू वेश्या होय यद्वा घरू स्त्रियां वेश्या के तुल्य जीविका करने लगैं जो प्रायः खानगीके नामसे प्रसिद्ध होतीहैं ॥ ० ॥ अथसामान्योपपातकप्रायश्चित्ता नामत्यतिदेशः—मिताक्षराकार कहिते हैं कि पहिले जो ४४ चवालिस परिच्छेद में २६५ दोसौ पैंसठि मूलश्लोक और उसीकी अधिकोक्तिमें साधारण उपपातकों पर गोवध वाले प्रायश्चित्तोंका अतिदेश उतारा गयाथा उसकी पहुँच यहां भी आवश्यक है—तिससे—जहां क्षत्री आदि नीचे वर्णके पुरुषोंमें ब्राह्मणी आदि ऊँचे वर्ण की स्त्रियां प्रतिलोम व्यभिचारसे दूषित हुईहों तिनको यदि कोई मारडारै तिसकी शुद्धिके लिये उसी परिच्छेद केद्वारा पूर्वोक्त गोवध के प्रायश्चित्त लगाने चाहिये और उनमें जो बड़ापन छोटापन देखिपरै सो सब यहां भी ब्राह्मणी आदि वर्णों के

भेदमें लगाइलेना=परन्तु इस परिच्छेद की सभी व्यवस्था जो वर्णन होचुकी तिनमें हनना पुरुष मारनेवाला जो प्रायश्चित्ती होताहै तिसकी जातिभेद से प्रयोजन कुछ नहींहै कि उक्त प्रायश्चित्तों में चौथाई आदि किसी वर्ण को न्यूनाधिक विचारा जाय जैसा पहिले परिच्छेदों में भेद किया गया था ॥ २६८ ॥ अब निचले आधे श्लोकसे उन स्त्रियोंका चर्चा किया जायगा जो अतिशय खोटी नहीं ॥ २६८ ॥

(ईपत्व्यभिचारितावधप्रायश्चित्तं)

अप्रदुष्टांस्त्रियंहत्वाशूद्रहत्याव्रतंचरेत् २६९ (पूर्वार्धः)

अर्थः—अप्रदुष्टा स्त्रीको मारि के शूद्र की हत्या वाला व्रत आचरै=अर्थात्-दुष्टा खोटी और प्रदुष्टा अति खोटी कही जातीहै जो अतिखोटी नहो वही अप्रदुष्टा समझि लेनी और तात्पर्य इसका यहीहै कि यद्यपि व्यभिचार से दूषित होचुकी परन्तु ऐसी अब तक न हुई जो अपने खोटा पन में विख्यात होजाती अर्थात् लुकी छिपी व्यभिचार में होने से ईषद्व्यभिचारित ठहरी• ऐसी ब्राह्मणी आदि का जो कोई वधकरै सो शूद्रकी हत्यापर लिखा हुआ छमाहीका व्रतकरै या दश गाय दूध देती हुई दान करै जैसा दोसौ सरसठि २६७ के उत्तरार्द्ध मूल श्लोक में कहि चुके॥ २६९ ॥ इति पूर्वार्द्ध श्लोकः ॥

२६९ आधिकोक्तिः—यहां मिताक्षराकार कहितेहैं कि यह छमाही वाला व्रत उसके लिये विचारना कि जिसने ऐसी ब्राह्मणी को इच्छाके विना घात कियाहो और यही छमाही व्रत उसके लिये विचारना कि जिसने ऐसी क्षत्राणी को इच्छा पूर्वक वध किया हो और जिसने इच्छा सहित ऐसी वनेनी का वध किया हो सो दश गाय दूध देती हुई दान करै और जिसने इच्छा सहित ऐसी शूद्रा का वध किया हो तिसके लिये चर्याक्रम ४४ परिच्छेद के अनुसार साधारण उपपातकों पर कहागया एक महीने पंचगव्य पीके रहिने वाला व्रत बताना चाहिये—परन्तु जो कोई इच्छा सहित ऐसी ब्राह्मणीका वधकरै तिसको बारहमहीने व्रत करना चाहिये और जो ऐसी क्षत्राणी को विना इच्छाके वधकरै तिसको तीनि महीने व्रत चाहिये तथा ऐसी वनेनीको विना इच्छाके वधकरै तिसको डेढमहीना व्रत करना चाहिये तथा ऐसी शूद्राको इच्छा विना जो वधकरै तिसको डेढमहीने में आधा २२॥ साढे बाइस दिनका व्रत करना चाहिये—ये सब अर्थ अगिले प्रचेता के वचन से स्पष्ट होते हैं=यथाह प्रचेताः=अनृतुमतींब्राह्मणींहत्वा हच्छाव्दयगमा

षान्त्रेति क्षत्रियांहत्वाब्राह्मणमासान्मासत्रयंवेति वैश्यांहत्वामासत्रयंसार्द्धं मासंवेति शूद्रां हत्वासार्द्धमासंसार्द्धंद्वाविंशत्यहाजिवेति=अर्थात्—जो ब्राह्मणी मासिकधर्मसे ऋतुमती कभी न होतीहो तिसका वध करिके एक वर्षभर कृच्छ्रव्रत आचरै अथवा छमाही मात्र (यहां विकल्पका वही तात्पर्य है जो अविकोक्तिके प्रारंभमें कहिचुकेहैं कि विना इच्छाके वध करनेवाला एक छमाही व्रतकरै तौ यह बारह महीनेवाला कृच्छ्र व्रत इच्छा सहित वध करनेवाले पर चाहिये सो यह भी ऊपर लिखि चुकेहैं० इसी तरह आगे क्षत्राणी आदिमें भी विकल्पोंको समझि लेना० और सबके साथ वहभी जोड़िलेना कि जो ऋतुमती कभी न होतीहो) क्षत्राणीको मारिके छेमास या तीनि मास व्रत करै एवं बनैनीको मारिके तीनि महीने या डेढ़ महीना व्रत करै एवं शूद्रा को मारिके डेढ़ महीना या पौन महीना व्रतकरै=इसमें भी मारनेवाला पुरुष चाहैं किसी वर्णका होय प्रायश्चित्त सबके लिये एकसे बराबर हैं यह समझिलेना॥०॥

एक हारीतके वचनमें प्रायश्चित्त बड़े होनेके हेतुसे कुछ भेद विशेषहै सो देखौ=यदाहहारीतः=षड्वर्षाणिराजन्ये प्राकृतंब्रह्मचर्यंत्रीणिवैश्येसार्द्धंशूद्रे (इतिप्रतिपाद्य पुनरुक्तवान्) क्षत्रियवद्ब्राह्मण्यां वैश्यवत्क्षत्रियायां शूद्रवद्वैश्यायांशूद्रांहत्वानवमासान् (तदपिकर्मसाधनत्वादिगुणयोगिनीनां कामतोव्यापादनेद्रष्टव्यं अकामतस्तुस र्वत्रार्द्धंकल्प्यं आत्रेय्यांतुप्रागुक्तमिति मिताक्षराकाराः)=अर्थात्—हारीत ने पहिले पुरुषोंके वधका प्रायश्चित्त कहाहै कि—क्षत्रीके वधसें छे वर्ष प्राकृत ब्रह्मचर्य और तीनि वर्ष वैश्य के वध में और डेढ़वर्ष शूद्र के वध में वही ब्रह्मचर्य प्रायश्चित्त है (यह कहिके फिर हारीत ने कहा है कि) क्षत्री के समान ब्राह्मणी के वध में और वैश्यके समान क्षत्राणीके वधमें और शूद्रके समान बनैनीके वधमें समझिलेना और शूद्रिनीको मारिके नौमासका ब्रह्मचर्य साधै (इस पर मिताक्षराकार कहितेहैं कि हारीतके बताये ये बड़े प्रायश्चित्त भी ऐसी उत्तम स्त्रियोंके वधपर समझिलेना जो कर्मका साधन होसकने की संभावना आदि उत्तम गुणसे संयुक्त होयँ तिनको इच्छा सहित जब किसी ने वध किया हो—अन्यथा यदि इच्छा के विना दैवयोग से वध कियाहो तौ इन प्रायश्चित्तोंका आधा आधा व्रत सबके साथ कल्पित करिलेना—और आत्रेयी लक्षण की स्त्रियों के वध का प्रायश्चित्त पहिले तीसवें परिच्छेद में कहिचुके तहां देखौ यह मिताक्षराकारोंने सब कहा (परन्तु इसका ब्योरा आगे सिद्धांत वाले पाठ में देखो कि जिन स्त्रियों का नाम निकम्मी कहा जाय उन्हीं के वधसें ये हारीत वाले बहुत बड़े प्रायश्चित्त हैं) इस परिच्छेदका सर्व सिद्धांत आगे

देखो ॥ सर्वस्यैवसिद्धांतः—अब इस बातका सिद्धांत सोचना है कि उन्हीं ब्राह्मणी आदि का वध करने मध्ये तीसवें परिच्छेद में बड़ेबड़े वेही प्रायश्चित्तलिखचुके हैं जो ब्राह्मण आदि पुरुषों का वध करने में बारह वर्ष आदिके होते हैं—फिर उन्हीं ब्राह्मणी आदिके वध पर यहां छोटे पापठहिरा कर छोटे छोटे प्रायश्चित्त कहे गये तिसका क्या कारण है=इसका यही कारण है कि यहां सब निकम्मी और खराब स्त्रियोंके वध का प्रकरण जुदा किया गया है॰इनमें निकम्मी तो उनको समझना जो निपट वन्ध्या होयँ या वंध्या यद्यपि नहीं थी पर बुढ़ापा आदि कारणों से रजोधर्म होना बन्द होगयाहो जिससे आगेको संतान पैदाहोनेकी आशा न रही हो तो ये दोनों तरहकी निकम्मी समझी जातीहैं फिर इन्हीं में से तीसरा भेद और है कि जिसका मासिक ऋतुधर्म निपट बन्द तो हुआ नहीं लेकिन बन्दहोनेवाला होरहा है तिसमे कभी कभी दो चार महीने थँभिकर जारी होजाता है इसी ढंगसे वर्ष दो वर्ष पीछे निपट बन्द भी होजाता है तब तक यह आधी निकम्मी कहलाती है क्योंकि बीचमें दैवाधीन संतान पैदा होसकनेकी संभावना वर्त्तमान है॰परन्तु इन तीनोंमें किसी प्रकारके व्यभिचार का दोष कुछ न हो और तीसवें परिच्छेदमें चर्चाकिया सवन यज्ञ वा अग्निहोत्रवाला उत्तम गुणभी इनमें न हो तो ये तीनों साधारण भावसे निकम्मी कहिनी चाहिये (इन्हीं तीनोंके वधका प्रयोजन हारीत के उक्तरीति वचनवाले प्रायश्चित्तों में समझलेना) निकम्मीके सिवाय दूसरी खराब स्त्रियां भी व्यभिचारिणी आदि कई तरह से प्रकाश होती हैं तिनके वध पर जुदे जुदे सबछोटे प्रायश्चित्त लिखचुके तिनको इसी परिच्छेद के प्रारम्भ में आदि लेकर २६८ दोनों अरनटिकी अधिकोक्ति भरने देखो=फिर=यह सोचो कि निकम्मी और खराब इन दोके बीचमें तीसरी भांतिकी स्त्रियां भी कुछ होती अर्थात निकम्मीसे कुछ उत्तम और खराब खोटीसे कुछ उत्तम तिन दोनोंके बीचमें ठहिरी (यहां खराब और खोटीका एकही अर्थ है क्योंकि खोटी यह देशीभाषा और खराब इसका पर्याय यावनी शब्द है) दोनों के बीचमें ठहिरी तिनमें इनका प्रायश्चित्त भी बीचहीमें लिखागया सो देखो इसी ...६९ के पूर्वार्द्ध में देखो कि (ईषत व्यभिचारिता) यहीतात इसका ... परन्तु पाराशर में इकट्ठे इन तीनों हंताओंके प्रायश्चित्त ... पहिले अतिखोटी और खोटियोंके २ फिर बीचमें ईषत व्यभिचारिता को २ फिर सबसे पीछे हारीत के वचन में निकम्मी स्त्रियोंके ३ इनतीनों में निकम्मी सबसे अच्छा समझलेना

क्योंकि इनमें व्यभिचार आदि दूषण कुछनहीं है और बीचवालीको इसलिये कुछ मध्यम ठहराया है कि यद्यपि वह वन्ध्या भी न हो अथवा होय तौ भी कुछ तर्क इस पर नहीं है और यद्यपि वह अनार्तवा भी न हो किन्तु मासिक ऋतुधर्म उसके निरन्तर जारी होताहो अथवा न होताहो तौभी कुछ तर्क इसपर नहींहै परंच थोड़े से व्यभिचारमें एकही दो बार अपने सवर्णी किसी पुरुषसे या ऊँचे वर्णसे केवल इतना दूषित हुईहो जिसको भितरिया लोगोंने जाना कोई बाहरका बदनाम न कर सकाहो न किसीने प्रायश्चित्त उसपर करवाया हो तौ इसका वध करने वाले पर वही प्रायश्चित्त आरूढ होगा जो २६९ के पूर्वार्ध आदि से कहा गया (पर इसमें भी यह विशेषता है कि यदि ऐसी स्त्री से प्रायश्चित्त करवाया गया हो तौ फिर प्रायश्चित्तसे पवित्र होकर यह भी निकम्मी स्त्रियोंके बराबर समझी जायगी और प्रायश्चित्त कराने के बादि यदि कोई मार डारै तिसको हारीत वाला बड़ा प्रायश्चित्त करना होगा) अथवा जो इसके रजोधर्म जारी होता हो तौ फिर यह भी प्रायश्चित्त करने के बादि आत्रेयी मानी जायगी जिस आत्रेयी का वध करने पर वहुत बड प्रायश्चित्त हैं सो सब तीसवें परिच्छेद में देखो (आत्रेयी वही कहाती है जिसका मासिक धर्म हमेशा अपने समयपर जारी होताहो)=अब=तीसवें परिच्छेद का सिद्धान्त सुनो कि उसमें भी चाहैं किसी वर्णकी हो पर इतने उत्तम लक्षणों से संयुक्त स्त्री का वध करने पर पूरे पूरे प्रायश्चित्त हैं कि एक तौ आत्रेयी १ दूसरी पतिव्रता २ तीसरी सवनस्था जो सवन यज्ञमें लगीहो ३ चौथी अग्निहोत्रीकी भार्या चाहैं आत्रेयी के लक्षण से संयुक्तहो या नहो ४ (इन चारोंसे उपरालू जो बाकीरहीं सो सब यहां ५३ परिच्छेदमें आगईं)=इनके सिवाय=उसी तीसवें परिच्छेदमें (गर्भ हाच यथावर्णं) यह कहाहै कि गर्भका विनाश करने वाला भी जिस वर्ण का गर्भ विनाशै उसी वर्णकी पुरुष हत्या वाला व्रत करै—सो यह तात्पर्य यहां ५३ के परिच्छेद में भी लेलेना होगा कि चाहैं व्यभिचारिणी आदि कैसीही दुष्टाहो पर अपने पतिके वीजसे गर्भधारण कियेहोय तिसका वध करनेमें गर्भका विनाश होजाने पर अत्रोक्त प्रायश्चित्तसे उपरालू उस परिच्छेदमें वर्णन करी गर्भकी व्यवस्था भी लेनी होगी और उसमें जो गर्भका प्रायश्चित्त हो सो भी करना होगा क्योंकि इन दोनों परिच्छेदों का संबंध परस्पर मिला झूलासा एकही है॥ २६९ ॥ यह पूर्वार्ध की अधिकोक्ति कही अब इसी मूलश्लोक का उत्तरार्द्ध अगिले परिच्छेद में जा पहुँचेगा—और यहाँपर हिंसा वाले प्रायश्चित्तों का प्रसंग चला आता है तिसमें मनुष्यों

देखो॥ सर्वस्यैवसिद्धांतः—अब इस बातका सिद्धांत सोचना है कि उन्हीं ब्राह्मणी आदि का वध करने सध्ये तीसवें परिच्छेद में बड़ेबड़े वेही प्रायश्चित्तलिखचुके हैं जो ब्राह्मण आदि पुरुषों का वध करने में बारह वर्ष आदिके होते हैं—फिर उन्हीं ब्राह्मणी आदिके बध पर यहां छोटे पापठहिरा कर छोटे छोटे प्रायश्चित्त कहे गये तिसका क्या कारण है=इसका यही कारण है कि यहां सब निकम्मी और खराब स्त्रियोंके बध का प्रकरण जुदा किया गया है॰इनमें निकम्मी तो उनको सम झना जो नि पट वन्ध्या होयँ या बंध्या यद्यपि नहीं थी पर बुढ़ापा आदि कारणों से रजोधर्म होना बन्द होगयाहो जिससे आगेको संतान पैदाहोनेकी आशा न रही हो तो ये दोनों तरहकी निकम्मी समझी जातीहैं फिर इन्हीं में से तीसरा भेद और है कि जिसका मासिक ऋतुधर्म निपट बन्द तो हुआ नहीं लेकिन बन्दहोनेवाला होरहा है तिससे कभी कभी दो चार महीने थँभिकर जारी होजाता है इसी ढँगसे वर्ष दो वर्ष पीछे निपट बन्द भी होजाता है तब तक यह आधी निकम्मी कहला॰ ती है क्योंकि वीचमें दैवाधीन संतान पैदा होसकनेकी संभावना वर्त्तमान है॰परन्तु इन तीनोंमें किसी प्रकारके व्यभिचारका दोष कुछ न हो और तीसवें परिच्छेदमें चर्चाकिया सवन यज्ञ वा अग्निहोत्रवाला उत्तम गुणभी इनमें न हो तो ये तीनों साधारण भावसे निकम्मी कहिनी चाहिये (इन्ही तीनोंके बधका प्रयोजन हारीत के अनतरोक्त वचनवाले प्रायश्चित्तों में समझिलेना) निकम्मीके सिवाय दूसरी खराब स्त्रियां भी व्यभिचारिणी आदि कई तरह से बदमास होती हैं तिनके बध पर जुदे जुदे सबछोटे प्रायश्चित्त लिखचुके तिनको इसी परिच्छेद के प्रारम्भ से आदि लेकर २६८ दोसौ अरसठिकी अधिकोक्ति भरमें देखो=फिर=यह सोचो कि निकम्मी और खराब इन दोके वीचमें तीसरी भाँतिकी स्त्रियां भी कुछ होतीहैं अर्थात् निकम्मीसे कुछ मध्यम और खराब खोंटीसे कुछ उत्तम तिससे दोनोंके बी॰ चमें ठहिरी (यहां खराब और खोंटीका एकही अर्थ है क्योंकि खोंटी यह देशी॰ भाषा और खराब उसका पर्याय यावनी शब्द है) दोनों के वीचमें ठहिरी तिसमें इसका प्रायश्चित्त भी वीचहीमें लिखागया सो दोसौ उनहत्तरि २६९ के पूर्वार्द्ध से देखो कि (ईषत् व्यभिचारिता) यहीनाम इसका धरागया=समस्त परिच्छेद में इनक्रमसे इन तीनों हंताओंके प्रायश्चित्त बंधगए कि सबसे पहिले अतिखोंटी और खोंटियोंके १ फिर वीचमें ईषत् व्यभिचारिता के २ फिर सबसे पीछे हारीत के वचन में निकम्मी स्त्रियोंके ३ इनतीनों में निकम्मी सबसे अच्छी समझिलेना

क्योंकि इनमें व्यभिचार आदि दूषण कुछनहीं है और बीचवालीको इसलिये कुछ मध्यम ठहराया है कि यद्यपि वह बन्ध्या भी न हो अथवा होय तौ भी कुछ तर्क इस पर नहीं है और यद्यपि वह अनार्तवा भी न हो किन्तु मासिक ऋतुधर्म उसके निरन्तर जारी होताहो अथवा न होताहो तौभी कुछ तर्क इसपर नहींहै परंच थोड़े से व्यभिचारमें एकही दो बार अपने सवर्णी किसी पुरुषसे या ऊँचे वर्णसे केवल इतना दूषित हुईहो जिसको भितरिया लोगोंने जाना कोई बाहरका बदनाम न कर सकाहो न किसीने प्रायश्चित्त उसपर करवाया हो तौ इसका वध करने वाले पर वही प्रायश्चित्त आरूढ़ होगा जो २६९ के पूर्वार्ध आदि से कहा गया (पर इसमें भी यह विशेषता है कि यदि ऐसी स्त्री से प्रायश्चित्त करवाया गया हो तौ फिर प्रायश्चित्तसे पवित्र होकर यह भी निकम्मी स्त्रियोंके बराबर समझी जायगी और प्रायश्चित्त कराने के बादि यदि कोई मार डारै तिसको हारीत वाला बड़ा प्रायश्चित्त करना होगा) अथवा जो इसके रजोधर्म जारी होता हो तौ फिर यह भी प्रायश्चित्त करने के बादि आत्रेयी मानी जायगी जिस आत्रेयी का वध करने पर बहुत बड़े प्रायश्चित्त हैं सो सब तीसवें परिच्छेद में देखो (आत्रेयी वही कहाती है जिसका मासिक धर्म हमेशा अपने समयपर जारी होताहो)=अब=तीसवें परिच्छेद का सिद्धान्त सुनो कि उसमें भी चाहैं किसी वर्णकी हो पर इतने उत्तम लक्षणों से संयुक्त स्त्री का वध करने पर पूरे पूरे प्रायश्चित्त हैं कि एक तौ आत्रेयी १ दूसरी पतिव्रता २ तीसरी सवनस्था जो सवन यज्ञमें लगीहो ३ चौथी अग्निहोत्रीकी भार्या चाहैं आत्रेयी के लक्षण से संयुक्तहो या नहो ४ (इन चारोंसे उपरालू जो बाकीरहीं सो सब यहां ५३ परिच्छेदमें आगई)=इनके सिवाय=उसी तीसवें परिच्छेदमें (गर्भ हाच यथावर्णं) यह कहाहै कि गर्भका विनाश करने वाला भी जिस वर्ण का गर्भ विनाशै उसी वर्णकी पुरुष हत्या वाला व्रत करै–सो यह तात्पर्य यहां ५३ के परिच्छेद में भी लेलेना होगा कि चाहैं व्यभिचारिणी आदि कैसीही दुष्टाहो पर अपने पतिके बीजसे गर्भधारण कियेहोय तिसका वध करनेमें गर्भका विनाश होजाने पर अत्रोक्त प्रायश्चित्तसे उपरालू उस परिच्छेदमें वर्णन करी गर्भकी व्यवस्था भी लेनी होगी और उसमें जो गर्भका प्रायश्चित्त हो सो भी करना होगा क्योंकि इन दोनों परिच्छेदों का संबंध परस्पर मिला झुलासा एकही है ॥ २६९ ॥ यह पूर्वार्ध की अधिकोक्ति कही अब इसी मूलश्लोक का उत्तरार्द्ध अगिले परिच्छेद में जा पहुँचेगा–और यहाँपर हिंसा वाले प्रायश्चित्तों का प्रसंग चला आता है तिसमें मनुष्यों

की हिंसा अवतक वर्णन करी• आगे इसीके प्रसंगसे मनुष्योंके उपराल हाथीआदि वडे जीवोंसे लेकर लीख भुनका पर्यन्त सब तरह के प्राणियोंकी हिंसा वाले प्रायश्चित्त अगिले परिच्छेद में जुदे वर्णन करेंगे कि वे पातक यद्यपि योगीश्वरकी विवक्षासे सभी उपपातकों में गिनती होचुके हैं यह ब्यौरा २३४ मूलश्लोक से आदि लेकर देखो• परन्तु मनु और विष्णु आदि कई ऋषीश्वरोंने इन पापों का छोटापन समझिके उपपातकोंसे भी छोटे भेद इनके माने और भेदोंके जुदे नाम कल्पितकिये हैं सो सब २४२ की अधिकोक्ति में समुझो॥ ऊपर जो इसी २६९ के पूर्वार्ध मूल श्लोकमें शूद्रकी हत्यावाला प्रायश्चित्त छेमाही और दश गायका दान जो स्त्रियों हत्यापर कहिचुके वही अगिले परिच्छेद वाले उत्तरार्ध मूल श्लोक में भी तु शब्द के सवबसे अतिदेश दियाजायगा यह याद रक्खो॥ २६९॥ इतिपूर्वार्धः॥

इतिब्राह्मणेतरनरहिंसाप्रकरणं॥

यह प्रकरण दो परिच्छेदों में अर्थात बावन ५२ और त्रेपन ५३ में पूरा हुआ॥

अथनरेतरसर्वप्राणिहिंसोपपातकप्रायश्चित्तप्रकाश कोऽयंपरिच्छेदः चतुःपंचाशत्तमः (५४)

—※—

इस परिच्छेदमें मनुष्यसे उपराल सब जीवोंकी हिंसा सध्ये प्रायश्चित्त उनके जुदे भेदों के साथ कहे जायँगे जो हाथी को आदि लेकर मच्छर लीख पर्यंत भुनगा से भी अति छोटे जीव संसार में होतेहों॥

(सूक्ष्मलघुजंतुसमूह वधप्रायश्चित्तं)

अस्थिमतांसहस्रंतुतथाऽनस्थिमतामऽनः २६९

अर्थः—हाड वालोंका एक हजारा और विन हाड वालों का एक अनस गाडा भरि मारिके भी=अर्थात—छोटी मक्खी आदि तुच्छ जीव उस भांति के कि जिनके कुछ हाड भी होतेहों तिनको एक सहस्र सख्याके अनुमान जो कोई किसी प्रकार से विनाशे सोभी वही प्रायश्चित्त करै (जो स्त्री वध के ऊपर पूर्वार्ध मूलश्लोक में पहिले परिच्छेदमें अतिदेश देचुके हैं कि शूद्र की हत्यावाला छमाही ब्रह्मचर्य या

दश गायका दान करै) क्योंकि यहां उत्तरार्धमें तु अव्यय के योगसे उसको प्राप्ति चली आती है—और उसी प्रायश्चित्तको वह भी करै जो एक अनम् गाडा छकडा भरके अनुमान उन जीवोंका विनाश करै जिनके हाडही निपट न होतेहैं दृष्टांत जैसे जोंक बसीती गेंशा बिंडार बिंजाई मक्खी लतैये बर्र भींगुर खटमल चींटे दीमक आदि बहुधा योनि होती हैं ॥ २६९ ॥

२६९ अधिकोक्तिः—इस २६९ के उत्तरार्धमें तु अव्यय के अर्थसे उसी प्रायश्चित्तका अतिदेश उतारागयाहै जो ऊपरले परिच्छेद में पहिलेअदासे कहिचुके हैं(शूद्र हत्या व्रतं चरेत्)कि शूद्रकी हत्या मध्ये जो२६७ दोसौ सरसठि मूलश्लोक में छमाही ब्रह्मचर्य या दशधेनुदेना कहाथा वही इसहत्यापरभी करै परंतु यहाँ एक हजार छोटे जीवोंकी हत्याका नियम कियागयाहै तिससे जो अधिक जीवमारैसो उससे भी कुछ बडा प्रायश्चित्त करै इसीप्रकार विना हाड वालों को गाडी भरसे अधिक मारै सो अधिक प्रायश्चित्त करै यह तात्पर्य है और जो एकही दो चार आदि जीव मारै हाड़वाले या विना हाडवालों में तिसको प्रत्येक जुरे जीव का प्रायश्चित्त आगे २७५ दोसौ पचहत्तर मूलश्लोकसे योगीश्वर कहेंगे तहां देखो= और=जो मनुका एक वचन मिताक्षरा में धराहै कि.कृमि कीट वयो हत्या० इत्यादि मलिनी करणीय पापों की गिनती किये पीछे—तप्तः कृच्छ्राद्यावकस्थहं—यह प्रायश्चित्त सबका एक साथ कहागयाहै कि तीन दिन गरमगरम यावक पीवै तब शुद्ध होय) सो यह प्रायश्चित्त यद्यपि ऐसे धर्मात्मा पुरुष पर आरूढहै जो प्रायश छोटेजीवों की हत्या से भयमानता हो यद्वा किसी प्रयोग पूजन में लगा हो तिसकी ग्लानि मिटाने के लिये केवल एकही छोटा जंतु हाडों या विनहाडों वाला मरजाने पर यह प्रायश्चित्त है कि जिससे उसके मन को शुद्धि होसके) क्योंकि इसी मनुके वचन में विना हाडों वाले कृमि कीट भी कहे गये और इसी में हाडों वाले वयस पक्षी भी कहे गये किन्तु दोनो का जुदा भेद या जुदा प्रायश्चित्त नहीं कहा—इसपर असल मिताक्षरा में यह न्याय लिखावराहै कि ऊपर योगीश्वर के कहे हाडवाले और बिना हाडवाले अतिशय क्षोदिष्ट बहुत सूक्ष्म जंतु समुझने जैसे लीख जुआ मच्छर खटमल आदि जिनका एक हजारा या गाडाभर मारने पर छेमाही प्रायश्चित्त है क्योंकि हाडों या विन हाडों वाले स्थूल जंतु एकही के मारने पर मनुने तीन दिन गरम यावक पीना कहा है—हम इस न्याय को इस हेतुसे सुडौल नहीं समुझते हैं कि मिताक्षरा पहिले हाडवालों का दृष्टांत हाकतास के-

कला गेंगटा आदि कहिचुकी जो डेढपाव से अधिक भी स्थूल होता है फिर यहां इसन्याय पर लीख जुआ मच्छर आदि समुझाती है जिनका एक छकडाभर मारा जाना एकही पुरुषके हाथसे कदापि संभव नहींहै फिर वही मिताक्षरा मनुके वचन मे कृमि कीटों को स्थूलरूप कहिती है—यथा (एतच्चक्षोदिष्टजंतुविषयं स्थविष्ठास्थियुक्तादिजंतुवधेतुकृमिकीटवयोहत्येत्यादिना मलिनीकरणीयान्यभिधाय मलिनीकरणीयेयुतप्तःस्याद्यावकस्त्र्यहमितिमनूक्तंद्रष्टव्यमितिमिताक्षरा) इसीपंक्ति की व्याख्या ऊपर लिखी गई सो समझि देखो इस न्याय से कुछ सार नहीं मिला॥२६९॥अब दोसैसत्तरिके १ श्लोकमें इनसे बड़े जीवोंकी हत्या बावतकहेंगे॥२६९॥

(मार्जारादि वध प्रायश्चित्तं)

मार्जारगोधानकुलमंडूकाश्चपतत्रिणः। हत्वात्र्यहंपिबेत्क्षीरंकृच्छ्रंवापादिकंचरेत् २७०

अर्थः—मार्जार॰ गोधा॰ नकुल॰ मंडूक॰ पतत्रि॰ इनको मारिके तीनि राततक दूध पीके रहे या एक पाद कृच्छ्र करै=अर्थात्—बिल्ली॰ गोह॰ नेउरा॰ मेढुका॰ और पतत्रि उडने वाले पक्षी काक चाय घुघुआ आदि (जिनके नाम किसी मूल श्लोक में न कहेजायँ) इनका एकही एक जीव घात जो कोईकरै सो तीनि राति तक थोडा दूध पीके व्रत करै या कृच्छ्र व्रत प्राजापत्य की चौथाई व्रतकरै यहभी तीनि दिन में होगा॥ २७० ॥

२७० अधिकोक्तिः—मूल श्लोक चौथे चरण में वा शब्द के अभिप्रायसे यह तात्पर्य दर्शाया है कि अग्रोक्त प्रायश्चित्त से उपरान्त भी योजन मात्र भूमि गमन आदि जो गैर स्मृतियों में लिखे हों वेभी कहीं विकल्प से करने चाहिये=यदाह मनुः=पयःपिबेत्त्रिरात्रंवायोजनंवाध्वनोव्रजेत् अपःस्पृशेत्स्रवंत्यांवासूक्तंवाब्दैवतंजपेत्=अर्थात्—मनुने इतने विकल्प कहे हैं कि यातो तीन रात्रि तक दूध पीवै या चार कोस तक श्रेष्ठ मार्ग नंगे पाओं से जावै (तहाँ उत्तम वायु का भक्षण करै यह विधि आगे दोसै पछत्तरि २७५ की अधिकोक्ति में पराशर के वचनों से देखना) या पर्वत के सोतवाली नदी मे स्नान और प्राणायाम करै या जलदेवकासूक्त जपै॰ ये प्रायश्चित्त केवल एक एक जीव के वधपर आरूढ हैं=परन्तु=जहां कई जातिके अनेक जीव एकही पुरुषने वध कियेहों तिसके लिये मनुका जुदा वचनहै सो देखो=यदाह मनुः=मार्जारनकुलौहत्वाचाषंमंडूकमेवच श्वगोधोलूककाकांश्च शूद्रहत्याव्रतंचरेत्=अर्थात्—बिल्ली नेउरा दोनों को एक साथ मारिके या इनकेसाथ

चाष पक्षी और मेंडुका भी मारिके या कुत्ता और गोह और उल्लू और काकोंको एक साथ मारिके अथवा इनमें एकही किसी जीवकी अनेक संख्या मारिके शूद्र की हत्यावाला व्रत आचरै जो छमाही भरका शूद्र के वधपर कहिचुके हैं (यहाँ यह ध्यान करौ कि मनू का यह वचन मार्जार आदि वाला अनेक जीव मारने पर छमाही प्रायश्चित्त बताता है और योगीश्वर का मार्जार आदि• वाला केवल एक प्राणी मारने पर तीन दिन प्रायश्चित्त कहिचुका कि जिसके मध्ये मनु के ऊपर ले वचन में अनेक प्रायश्चित्तों के अधिक भेद भी दर्शाये गये) इन सबसे निराला एक वशिष्ठ का वचन है=यदाह वशिष्ठः=श्वमार्जारनकुलमंडूकसर्पदहरमूषकान् ह-त्वाकृच्छ्रं द्वादशरात्रंचरेत् किंचिद्दद्यात्=अर्थात्—वशिष्ठने जो बड़ाप्रायश्चित्त कहा है कि—कुत्ता• बिल्ली•नेउरा• मेंडुका• साँप• दहर काँटेदार पहाड़ी वनमूसा• मूषक मूसा• इन प्रत्येक जुदे जीवों का एक प्राणविनाशके बारह दिन का कृच्छ्र अर्थात् प्राजापत्य आचरै (ये बारहदिन उससेचौगुने होतेहैं जो तीनदिनमनु और योगीश्वर कहिचुके तो इस चौगुने का यही प्रयोजन है कि जिसने इच्छा सहित दुबारा ति-बारा वधकियाहो तिसकेलिये यह प्रायश्चित्त है २७० ॥

(हस्त्यादिवध प्रायश्चित्तं)

गजेनीलवृषाःपंचशुकेवत्सोद्विहायनः। खराजमेषेषुवृषोदेयःक्रौंचेत्रिहायनः २७१

अर्थः—हाथी में पाँच नीले वृषभ• शुकपक्षी में द्विहायन बछरा• खर अज मेष इनमें एक वृषभ• क्रौंच पक्षी में त्रिहायन बछरा दातव्य है=अर्थात्—जिसने हाथी माराहो सो पाँच काले बैल दान करै• जिसने तोता पक्षी का वध कियाहो सो दो वर्ष का बछरा दान करै•जिसने गदहा माराहो सो एक आँडूबैल• और बकरा मा-रने वालाभी एकबैल•तथा मेढ़ा मारनेवालाभी एकवृषभदानकरै• जिसने क्रौंचनाम सारस पक्षीका वध कियाहो सोतीनिवर्षकी अवस्था वाला बछरा दानकरै २७१ ॥

२७१अधिकोक्तिः—यद्यपि तोता और सारस ये हाथी आदि के बराबर डील डौलमेंभी नहीं और जातिसेभी पक्षीहैं चौपायेसे मेल इनकानहींहै तथापि इन दोनों की उत्तमता से बड़ापन जाहर करने के लिये बड़े चौपायों के साथ में कहे गये)= इसपर एक मनुके वचन से कुछ और भी विशेषता है=यदाह मनुः=वासोदद्याद्धयंह-त्वापंचनीलान्वृषान्गजम् अजमेषावनड्वाहंखरंहत्वैकहायनम्=अर्थात्—घोड़ा मारि के जैसा घोड़ा होय तैसा उत्तम मध्यम आदि वस्त्र दानकरै और हाथी को मारिके

पांच नीले वैलों का दान करै तथा वकरा या मेढा को मारिके एक एक अंडूवृ-यभ दान और गर्धव को मारिके एक वर्षका वछरा दान करै तव शुद्ध होय (यो-गीश्वर के मूल वचन में गदहा के मध्ये पूरा वृषभ देना कहा गया और यहां पर उसके मध्ये एक वर्ष का वछरा कहा सो इस दो भांतिमें विकल्प गदहा को उत्तम मध्यम जाति के ऊपर समझि लेना॥ २७१॥

(हंसबानरगृध्राादि वधप्रायश्चित्तं)

हंसश्येनकपिक्रव्याज्जलस्थलशिखंडिनः। भासंहत्वाचदद्याद्गामक्रव्यादस्तुवात्सिकाम् २७२

अर्थ:-हंस० श्येन० कपि० क्रव्याद० जलचर० स्थलचर० शिखंडी० इनको और भासको भी मारिके गायँ दानकरै=अक्रव्यादोंको मारिके वछिया वा कलोरिगाय दानकरै=अर्थात्-हंस जो अलभ्य पक्षी विख्यातहै सो अथवा उसी प्रकारके वतक आदि और भी होते हैं० श्येन बाज का नाम है० कपि वंदर प्रसिद्ध है० क्रव्याद उन जीवों का नामहै जो मांस खायँ (वे जल स्थल आकाश वृक्षादि के निवासी कई भांति होतेहैं० शिखंडी मोर का नाम है० भास भी एक पक्षी इसी नामसे प्रसिद्धहै० इनमें से किसी एकही का वध करै सो एक गाय दान करै-और जो क्रव्याद नहीं किन्तु मांसको न खाने वाले जल स्थल दोनों जगहके निवासी जीव तिनमेंसे किसी एकहीको मारै सो कलोरि वछिया दानकरै (अक्रव्याद और क्रव्यादों के विशेष नाम अधिकोक्ति में॥ २७२॥

२७२ अधिकोक्तिः-अक्रव्याद मांसके न खानेवाले वन जीवोंमें हरिण आदि अनेक मृग होतेहैं उडने पक्षियों में खंजर आदि अनेक पक्षी होते हैं-क्रव्याद मांस खाने वाले भी दो तीन भेदके होते हैं कि वन के मृगजीवों में शृगाल व्याघ्र आदि अनेक और पक्षियों में आकाशी कंक चील गृध्र आदि अनेक तथा जलके जीव भी मगर आदि अनेक मांस के खवैया होते हैं-इनसे उपरान्त जल के निवासी बगुला आदि समझने और स्थलके चरने फिरने वाले भी वलाका आदि बहुत होतेहैं=इन्हीं सव जीवोंके वधकी वावत मनुने भी इसी प्रकारसे विशेष भेद कियाहै=यदाहमनुः= हत्वाहंसंवलाकांचवकंवर्हिणमेवच वानरंश्येनभासौचस्पर्शयेद्ब्राह्मणायगाम् क्रव्यादस्तुमृगान्हत्वाधेनुंदद्यात्पयस्विनीम् अक्रव्यादेवत्सतरीमुष्ट्रं हत्वातुकृष्णलम्=अर्थात्=हंस० वलाका० वगला० मोर० वानर० श्येन० भास० इनमें किसीको मारिके एक गाय ब्राह्मण को देवै और क्रव्याद वा मृगों को मारिके दूध वाली गाय दान करै

और जो अक्रव्याद जीव माराहो तौ कलोरि बछिया दानकरै और ऊँटको मारिके कृष्णाल अर्थात् सोने की रत्ती दानकरै॥ २७२॥

(उष्ट्रोरगवराहाश्व क्लीबानांवधे)

उरगेष्वायसोदंडोपंडकेत्वपुसीसकम्। कोलेघृतघटोदेयउष्ट्रेगुंजाहयेऽशुकम् २७३

अर्थः—उरग नाम सरीसृप जाति मात्र में किसी एक जीवके मारने मध्ये लोहेका दण्ड दान करै जिसका अग्रभाग पैनो नोकदार होय॰ पंडक हिजरा के मारने में जस्ता सीसा राँग दान करै॰ कोल सूकर के वध करने में घी का भरा घट दान करै॰ ऊँटको मारने में गुंजा अर्थात् सोने की कृष्णाला रत्ती दान करै॰ घोड़े को मारै सो उसकी उत्तमता आदि के अनुरूप वस्त्रों का दान करै॥ २७३॥

२७३ अधिकोक्तिः=लोहे का दण्ड ब्राह्मण को भोजन कराइके दक्षिणा में देना चाहिये यह व्यवस्था आगे २७५ की अधिकोक्तिमें देखो जहां (हत्वा मूषक मार्जार इत्यादि) पराशर का वचन मिलै उसका अर्थ विचारो॥ पंडक वाली व्यवस्था यहां देखो—पंडकंहत्वापलालभारंत्रपुसीसकंवादद्यादितिस्मृत्यंतरदर्शनात् पलालभारंवादद्यात् त्रपुसीसकंचमाषपरिमितंदद्यादितिमिताक्षराकाराः=अर्थात्=मिताक्षराकार कहते हैं और किसी स्मृति में यह वचन देखा गयाहै कि पंडकका वध करिके यातौ एक बोझ धान कोदों के पयार का दानकरै या सीसा राँगा दानकरै तिससे पयार का बोझ भी विकल्प से समझि लेना और सीसे राँगे का परिमान कुछ नहीं कहा गया है तिससे एक मासेभर देना चाहिये (चाहैं यह पांचहीकौड़ी का माल क्यों न होताहो) भला इस अतिशय तुच्छ प्रायश्चित्तको एकओर धरो॰ प्रथम इस नामही पर संदेह रूपी तर्कवाद है कि (पंडकोलिंगहीनःस्यात्संस्कारार्हश्चनैवसः इतिदेवल वचनेनसामान्येनैव स्त्रीपुंलिंगरहितोनिर्दिष्टः) अर्थात्—देवल का यह वचन है कि जो बालक स्त्री या पुरुषों वाले प्रधान लिंग चिह्न से विहीन पैदा होय सो पंडक अर्थात् निपट नपुंसक होता है उसका कुछ संस्कार भी जनेऊ मूंडन आदि न करना चाहिये=यद्यपि—यह वचन सर्व सामान्य बोधक है तथापि इस वचन के अनुसार यहांपर गाय वृषभ नपुंसक या ब्राह्मण जाति का नपुंसक न समझि लेना क्योंकि इनके बध का प्रसंग इनकी जाति के प्रकरणों में आचुका समझना—इसी प्रकार स्त्री आदि का प्रसंग उनके प्रकरणों में आचुका होगा—और यहां पर पंडक नाम सामान्य कहा गया है कि जिसमें हरकिसीका अर्थलि-

या जासके– तिससे यह कहिने में ठीक ठीक आसक्ता है कि गृहस्थ के घरों में मौजूद नपुंसकों का चर्चा छोडो किन्तु निपट नपुंसकोंका समूह एक जुदाभी होता है जिसमें हर एक जाति शामिल होजाने से ब्राह्मण क्षत्री आदि का कुछ भेदऔर नियम बाक़ी नहीं रहिता उन्हीं का यह प्रसंग है जो लोक में हिजरा इस नाम से विख्यात हैं–परन्तु–मिताक्षरा ने यहांपर यह भी निश्चय किया है कि मृगऔर पक्षियों का प्रसंग वर्तमान है नरचर्चा यहां पर नहीं है तिससे पंडक शब्दसे मृगऔर पक्षी ही नपुंसक बताये होंगे–तथापि–मर्यादा परिपाटी उत्तर देती है कि हिजरा ओं का समूह भी ऐसे निकृष्ट प्राणियों में प्रसिद्ध है कि जिसको मनुष्योंके प्रकरण में गिनती न करसके और इसी हेतु से उसको तिर्यक् योनि के समान मानि के यहां पर लाकर मृग पक्षियों के साथ वर्णन किया होगा बल्कि मृग पक्षियों की अपेक्षा बेक़दरीके साथ उसके मध्ये अतिशय तुच्छ प्रायश्चित्त दर्शाया तो इसबात का अचंभा नहीं है (कि जैसा हाथी आदि चौपायों के साथ में तोता और मोर छोटे पक्षियों की उत्तमता दर्शाने के निमित्तसे, मिलाकर प्रायश्चित्त कहेथे २७१ मूल श्लोक देखो उसी न्याय से अचंभा यहां नहीं है) और जो इस बात को न मानो तो फिर यह उत्तर देना चाहिये कि ऋषीश्वरों ने हिजरों का चर्चा किस परिच्छेद में वर्णन किया तहां देखें यदि नहीं कहीं कहा तो फिर यहीहै–अन्यथा यह उत्तर भी देना चाहिये कि आपने बनवासी मृग पक्षी जो नपुंसक बताये सो क्योंकर पहिँचाने जासक्तेहैं कि नपुंसक हैं या नहीं इसकी क्या परीक्षा (हाँ केवल बनाये हुये दोचार पशू ऐसे हैं जो पहिचाने जाते हैं कि बकरा खस्सी और घोड़ा आख़ता और बैल बधिया आदि सो इनका यहां वन्यजीवोंके साथमें प्रसंग नहीं) कदाचित् प्रसंग भी जबर्दस्ती मानि लिया जाय तो फिर ये खस्सी आदि बड़े क़ीमती प्रयोजन वाले होते हैं तिनपर यह तुच्छ प्रायश्चित्त भी नहीं सूचित होता–तिससे यह पंडकसंज्ञा केवल हिजरा पेशेवालोंकी समुझना बल्कि इसी विषयपर मनुका एक वचनहै उसमें साफ़ साफ़ षंढसंज्ञा कहीहै जो विशेष कर मनुष्यही की बोधक प्रतीत होतीहै=यथाहमनुः=अभ्रिं कार्ष्णायसीं दद्यात्सर्पं हत्वा द्विजोत्तमः पलालभारकं षण्ढे सैसकं चैकमाषकम्=अर्थात्–सर्प सरीसृपजातिका कोई जीवमारै सो काठ और लोहेसे बनी अभ्रिदानकरै जो जहाज नौकाआदिका मैल कीचड साफकरनेके लिये लोहाळकडीकीबनी कुदालकहातीहै और षंढ जो निपटनपुंसकहो तिसका बध करनेमेंएकबोझपयारकादानकरै और एकमाषभर सीसारांगाभीदानकरै॥ २७३॥

(दानाशक्तौप्रायश्चित्तांतराणि)

तित्तिरौतुतिलद्रोणं † गजादीनामशक्नुवन् ॥ दानंदातुंचरेत्कृच्छ्रमेकैकस्यविशुद्धये २७४ ॥

अर्थः—तीतुर पक्षीका वध करने में तिलोंका द्रोण दानकरै (अर्थात् अधिकोक्ति में कहे द्रोण भरि तौलके तिल देवै † हाथी आदि सब जीवों की जुदी हत्यापर जो जो कुछ दान करना लिखचुके सो निर्धन होनेके हेतु से जो कोई उसके देने में असमर्थहोय सो प्रत्येक जुदी हत्याको विशुद्धि होनेके योग्यही कृच्छ्र आचरै ॥ २७४॥

२७४ अधिकोक्तिः=द्रोणाख्यपरिमानं यथा=अष्टमुष्टिभवेत्किंचित्किंचिदष्टौतु पुष्कलम् पुष्कलानितुचत्वारिआढकःपरिकीर्तितः चतुराढकोभवेद्द्रोणइत्येतन्मान लक्षणम्=अर्थात्—धर्मशास्त्रकी स्मृतियोंमें इस रीतिसे द्रोण कहा गयाहै कि आधी छटांक के अनुमान कोई धान्य जो मुट्ठी में आसके सो मुट्ठी कही जाती है० आठ मुट्ठी भर एक किंचित् कहाता है सो पाउ भरिका समझना ऐसे आठ किंचितोंका एक पुष्कल होताहै वह दोसेरके उनमान होगा ऐसे चारि पुष्कलोंका एक आढक होताहै यह आठसेरके अनुमान होगा ऐसे चार आढकोंका एक द्रोण कहाजाता है जो ३२ बत्तीस सेरके लग भग होताहै इतने तिल दानकरै जिसने तीतुर माराहो † ऊपर मूलश्लोक में दानके बदले कृच्छ्र करना कहा गया तहां यदि कृच्छ्रका विशेष कर वही एक प्रधान अर्थ माना जाय कि बारह दिन के प्राजापत्य का नाम कृच्छ्र कहिते हैं तौ यह दोष खडा होताहै कि हाथीके मारने में भी वही बारह दिन और वही तोताके मारनेमें भी कियाजाय सो यह न्यायका मार्ग ठीक नहीं माना जा सक्ता है (कि सब धान बारह पसेरी के भाव) तिससे कृच्छ्र शब्दका अर्थ सामान्य यह अर्थ लियाजायगा कि कष्टसे साधनकिये तपका नाम कृच्छ्रहै चाहे तप छोटा होय या बड़ाहोय—इसी नियमसे छोटी बड़ी हत्याओं की शुद्धि के योग्यही कृच्छ्र होसक्ता है—तौ इस मार्ग से यह न्याय ठहिरा कि हाथी की हत्यापर जहां पांच बैल देनेकहे तिनको न देसकै सो दोमास भर गोमूत्रके रँधे जवोंका यावक खायके कृच्छ्र तपकरै तौ बारहदिन वाले पांच प्राजापत्यकी बराबर प्रायश्चित्त ठहिरै एवं गदहा आदि के बधपर जहां एकही बैल देना कहा तिसको न देसकने में एकही प्राजापत्य करै जो बारह दिनमें होता है एवं जहां तीनि वर्ष का बछरा देना कहा तहां नौ दिनमें तीनिपाद प्राजापत्य करै जहां दो वर्ष का बछरा देना कहा [illegible] छः दिन में आधा प्राजापत्य करै जहां २७२ के श्लोक में गायदेनी कही तहां [illegible] तीन

दिनमें दो प्राजापत्य करै जहाँ कलोरि देनीकही तहाँ एक पखवारेका उपवासकरै जहां २७३ के श्लोक मे घीसे भरा घडा देनाकहा तहां जो दिन में पौन प्राजापत्य करै जहां वस्त्रकादान करना कहा तहां घोड़ेकी बडाई आदिके अनुसार एकमहीने वाला चांद्रायण या चौवीस दिनका या पंद्रह दिनका व्रत करै जहां लोहे का दंड देना कहा तहाँ तीनदिनका व्रतकरै जहां तिलोंका दान करना कहा तहां तीनदिन का उपवास करै(फिर इन व्रतोंका परिवर्तन वदल भी जिस रीतिके व्रतों साथ धर्म शास्त्रके विज्ञाता पुरुष विचारि के ठहिरावैं सोभी दोषीकी दशाके अनुसार कोमलताके निमित्त माना जासक्ता है) और भी (जिन जीवोंके नाम यद्यपि नहीं लिखे गयेहैं तिनके मध्ये २७५ दोसौ पचहत्तरिका मूलश्लोक देखो परन्तु जे कोई जीव इन्हींके समान समझेजायँ जिनकेनाम यहां तक लिखिचुके तौफिर इसी व्यवस्था के अनुरूप उन जीवोंकी उपमा इनमें से ढूंढि मिलाइ के निज बुद्धि से प्रायश्चित्त कल्पित करलेना चाहिये ॥ ० ॥ सामान्य कृच्छ्र शब्द की व्यवस्था जैसी अनेक भेदों से लिखि चुके तिसका प्रमाणभी अग्रोक्त गौतमका वचन देखो=यदाहगौतमः=संवत्सरःषरामासाश्चत्वारस्त्रयोद्वावेकश्चतुर्विंशत्यहोद्वादशाहःषडहस्त्र्यहोऽहोरात्र इतिकलनाएतेऽन्येवाऽतिदेशेविकल्पेनक्रियेरन्नेनसिगुरूणिगुरूणिलघुनिलघूनीति= अर्थात—एकवर्ष•एक छमाहो•चारमहीना•तीनमहीना० दोमहीना•एकमहीना•चौवीसदिनका•वारहदिनका•छःदिनका•तीनदिनका•एक दिनरातिका भी तप होताहै यह कृच्छ्रोंकी कलना अर्थात गणना गिनती कही (पर इतनेही नहीं किन्तु और भी अनेक गिनतीके होतेहैं तिससे) ये इतने या और जे कोई कृच्छ्र तप होते हैं तिनको अति देशके स्थलोंपर विकल्पसे वर्तें किन्तु बड़ेपापसेंबड़े कल्प और छोटे पापमें छोटे कल्पों को यथा योग्य सोचिके ॥२७४ ॥

(अतिसूक्ष्मजंत्वादिवधप्रायश्चित्तं)

फलपुष्पांतरसजसत्ववातेघृताशनम् । किंचित्सास्थिमतांदेयंप्राणायामस्त्वनास्थिके २७५

अर्थः—फल• पुष्प• अन्न•रसोंसे उत्पन्न प्राणिओं के घातमें घीखाइना=अर्थात गूलर आदि वहुधा फलोंमें और महूक आदि वहुधा फूलोंमें वहुत नन्हे जीव होतेहैं और वहुत दिनोंकी धरीहुई खानीपीनी चीजें और लकडीआदि चीजों के वीचमेंभी छोटे जन्तु होजातेहैं तथा मीठे खटमिट्ठे आदि रसों में भी जीव पडिजाते हैं • इन जीवों का प्राण विनाशि के वीचारिजाना उतना कि जितने से मनको शुद्धि प्राप्त

होसके यही प्रायश्चित्तहै। हाड़वालों के घातमें कुछ दान करना चाहिये बिन हाड वालोंके घातमें प्राणाय्राम=अर्थात्–फल फूल आदिसे उपरालू जो प्रत्यक्ष कुछ बड़े जीव होतेहैं जिनका नाम कहीं नहीं लिखा क्योंकि संसार में अनन्त जीव हैं सबके जुदेनाम कहां तक लिखे जायँ तिनके मध्ये सामान्य रीतिसे एकही दो प्रायश्चित्त दर्शाते हैं कि–यदि हाडोंवाला कोई एक जीव कैकलागेंगटा आदि विनाश किया हो तौ प्रत्येक जीवके मध्ये कुछ कुछ अन्न वा नगदी आदि दानकरै॰यद्वा बिन हाड-वाला कोई छोटाजीव झींगुर ततैया आदि विनाशकियाहो तौ प्रत्येक जीवकेमध्ये एकप्राणायाम जैसा संध्याकेउपासनमें होताहै सोकरै तिससेशुद्धिहोजातीहै॥२७५॥

२७५ अधिकोक्तिः=घृताप्राशनेतुमिताक्षरा–पूर्वार्ध में जहां घीका चाटना कहा तिसके मध्ये मिताक्षरा ने यह व्यवस्था है कि निपट घीखाय के एकदिन उपवास करै क्योंकि प्रायश्चित्तोंका रूपहै तपस्या सो किंचित् घी चाटने से नहीं मानी जा-सक्तीहै॰ यहीबात अंगिराके अग्रोक्त वचनसे पाई जातीहै=यथाहांगिराः=प्रायोनाम तपःप्रोक्तंचित्तंनिश्चयउच्यते तपोनिश्चयसंयुक्तंप्रायश्चित्तंतदुच्यते=अर्थात्–प्राय-स्–चित्तइन दो शब्दोंका अर्थ है कि प्रायस् तप कहाता है चित्त निश्चयका नाम है सो तप और निश्चय मिलिकर प्रायश्चित्तनाम धरागयाहै–तिससे किंचित् घी चाटना ठीक नहीं यह मिताक्षराकारोंने कहा–और मूलश्लोक में साफ साफ यही कहाहै कि (घृताप्राशनंकिंचित्) और (देयंकिंचित्) अर्थात् किंचित् शब्दकी यो-जना पूर्वार्ध उत्तरार्ध दोनों अद्धामें प्रत्यक्षहै तौ इसद्विविधा में दोनों तरहसे व्यवस्था समझिलेनी कि जहाँ थोड़ेसेफलफूल आदिके जीव मरैं तहाँ किंचित्ही घी चाटने में शुद्धि होजायगी परन्तु जहाँ कुछ अधिकजीव मरेहों तहाँ निपट घी खायके उप-वास करना भी उचितहै। वही किंचित् देयके साथहै कि हाड़ोंवाला कोई एकही जीव मरजाने में किंचित् देना चाहिये तहाँ किंचित् कुछ का अर्थ तौ प्रधान है कि कुछ दान करनाचाहिये चाहैं अन्न या नगदी आदि जो कुछ बनिपरै फिर उसी कि-ञ्चित्का दूसरा अर्थ आठ मुट्ठी भी कहाता है जैसा (अष्टमुष्टिभवेत्किञ्चित्) यह २७४ की अधिकोक्तिमेंभी आचुका है कि आठ मुट्ठी भरनाज किञ्चित् कहाताहै सो केवल पाउ भरके अनुमान होसक्ता है–इसपर मिताक्षराकार कहिते हैं कि जो धान्य आदि कोई नाज दानकरै तौ एक जीवकी हत्यापर यही आठ मुट्ठी भर देना चाहिये जो नगदी दानकरै तौ उसी किञ्चित् के अभिप्राय से तांबेका एक पण एक जीवकी हत्यापर देना चाहिये॰क्योंकि (अस्थिमतांवधेपणोदेयइतिसुमंतुः) सुमन्तुने

साफ यही कहाहै कि हाडवाले जीवोंकी एक हत्यापरएक=इसपरा शब्दके यद्यपि दोई अर्थ होतेहैं कि सोने की अशरफी या चाँदी का रुपया या तांबेका पैसा जो जिस राजके व्यवहार में चलता हो (क्योंकि पण और नाणक ये दो नाम सिक्के सरकारीके हैं) परन्तु यहाँ छोटे प्रायश्चित्तपर ताँबेकापरा समझना उचितहै और पैसा यद्यपि सोरहमासेका होताहै तिसको भी ताँबेकापण समझतेहैं तथापि शास्त्र की मर्यादासे रुपयेकी सोरहकला अर्थात् आनेपण समझने क्योंकि ताँबेके पणोंमें एक आनाही|प्रधानहै=किन्तु इसप्रायश्चित्तमें जोकुछ उचितजानो सो मानो तहां यदि आठ मुट्ठी नाज के विकल्प को सोचै तवतो उसके जवाब में केवल ताँबे का पैसा समझि परताहै अन्यथा जो शास्त्रके व्यवहारपर ध्यान दियाजाय तो फिर तांबेका पण ठीक ठीक एक आना ठहिरताहै—परन्तु इन बातोंकी अपेक्षा जैसा योगीश्वरने मूलश्लोकमें कहा तैसा ज्योंका त्यों वही किञ्चित्अर्थ ठीकथा कि जो कुछ इच्छा से समाय सो थोडा बहुत दान करै—तिसके ऊपर धान्य और हिरराय नाम धरिके फिर ऐसे छोटे अर्थ दर्शायेगये इस व्याख्याकी जरूरत कुछ नहीं थी कि (अस्थि मतां हकला सादि प्राणिनां॰प्रत्येक वधे किंचित् स्वल्पं धान्य हिरराया दिकं देयं तत्र किंचिदिति यदा हिररायं दीयते तदा पणमात्रं॰ अस्थिमतांवधेपणोदेय इति सुमंतुस्मरणात्॰यदातुधान्यंदेयंतदाऽष्टमुष्टिर्देयं अष्टमुष्टिभवेत्किंचिदिति स्मरणादिति मिताक्षरा) अर्थ इसके सब ऊपर लिखचुके ॥ २७५ ॥ अब नीचे वह व्यवस्था लिखी जायगी कि जब किसी जीव ने किसी तरह का अपराध किया अर्थात् खेत खाय जानाआदि नुकसान या ऊपरसे हगिदेना आदि किसीतरह का दुखदिया तो ऐसेही नाना भांतिके उपद्रव कहाते हैं जो किसी जीवने कुछ कोई सा उपद्रव किया तिसके पलटे क्रोध में आकर जिस किसीने उस जीव को मारडारा हो तिस के लिये भी अति छोटे प्रायश्चित्त हैं सो नीचे देखना ॥

(अथ अपराधजप्रतिकारे सर्वजंतुवधप्रायश्चित्तं) ॥

अथाह पराशर =हंसंसारसंचकाह्वक्रौंचकुक्कुटघातकः मयूरश्येनौहत्वाचएकभक्तेन शुध्यति मुद्गवर्त्तिभंचैव शुकंपारावततथा । ओंडिकांचवकंहत्वाशुद्धेन्नक्तभोजनात् चापकाककपोतानां मारिनितिरघातकः अन्तर्ज्जले उभेसंध्येप्राणायामेनशुध्यतिगृध्र श्येननिहंतानां मुतुकरुणचघातकः अपकाशीदिनंतिष्ठेदर्वीकालोगाहुतामानः हत्वामूष कमार्जारनयांनगरडुंभान । प्रत्येकंभोजयेद्विप्रानृलोहदंडश्चदक्षिणा सेवाकच्छपणौ

थानां शशशल्यकघातकः वृंताकफलं गुंजासीअहोरात्रेणशुद्ध्यतिमृगरोहिवराहाणां सविकावस्तघातनेव्यजंबूकऋक्षाणांतरक्षूणांच घातकःतिलप्रस्थंत्वसौदद्याद्वायुभक्षो दिनत्रयमगजमेषतुरंगोष्ट्रगवयानांनिपातनेप्रायश्चित्तमहोरात्रंत्रिसंध्यंचावगाहनम् ख रवानरसिंघानां चित्रकव्याघ्रघातकः शुद्ध्येतिविरात्रेणब्राह्मणानांचभोजने रिति= अर्थात्–पराशर कहितेहैं कि–हंस•वदक•सारस•चकवा•क्रौंच अर्थात्सारससे जुदा एककुरर वा कुररीपक्षी प्रसिद्धहै औरकहींकहींलोकमें ढोंक या कोंचवक आदिजो पक्षी हैं तिनको क्रौंचकहिते हैं ये सब लम्बी गर्दनिकेहोतेहैं• मुरगा•मोर•मेढ़ा• इन की हत्याकरिके एकहीबार भोजनके नियमसे शुद्ध होजाता है॥ मुद्गपक्षी जो देश भेदी नामोंसे सोगा सोगदर सूसर कहाताहै•टिट्टिभ टिटिहिरी•सुवा• पारावत कबू- तर आदि• आंडिका अनेकजीव जो धरतीपर अंडा धरतेहों• बगुला•इनको मारिके रात्रिमें भोजन करनेका नियम राखने से शुद्धहोताहै (इनदोनों प्रायश्चित्तके साथ २७४ की अधिकोक्तिवाली व्यवस्थाके अनुसार छोटे बड़े कृच्छ्रोंकेदिन भी जोड़ि लेना कि वहांपर जिसजीकी हत्यामें जितनेदिन कृच्छ्र करना समुझिपरै उतने दिन तक यह रात्रिमें भोजन वा एकबार भोजनका नियम समझिलेना सोभी उसदशामें कि यदि अपराध के प्रतिकारमें पाप बनिगया हो अन्यथा जानि बूझि हत्या क- रने में उसी अधिकोक्ति के अनुसार उतनेदिन कृच्छ्रही करना चाहिये• इसीप्रकार यहांके अगिले प्रायश्चित्तोंपर युक्ति सोचिलेना (पराशर कहितेहैं कि•चाष पक्षी जो संसारमें नीलकंठ इसनामसे प्रसिद्धहै अतिसुन्दर और सोनेकेवर्ण सरीखी पीली चोंचवाला•कौआ•पिंडक पिंडखुरी• मैना• तीतर• इनको मारनेवाला सांझ सवेरे दोनों संध्याके ठीक ठीक समयपर जलमें खड़ाहोके प्राणायाम करिके शुद्धहोताहै इसमें भी ऊपरली युक्तिको यथा योग्य सोचिलेना॥ पराशर कहितेहैं कि•गिद्ध• बाज आदिपक्षी जोजो बहुतऊंचे आकाशमें उड़तेहैं•उलूक उल्लू घुग्घू•इनकोहत्या करिके एकदिन इस तरह उपवास करै कि आंचकीपकी वस्तु कुछ न खाय केवल कचेफल खायके रहै फिर दूसरे दिन सवेरे सांझ दोनो समय कुछ भी न खाय के- वल वायु हवा पीके रहै इसकी यह रीतिहै कि जहां वन बाग सड़क आदिमें बहुत उत्तम फलफूल आदिकी सुगन्ध वायु बहितीहो तहां उसके सन्मुख एक योजन अ- र्थात् चारकोसतक हवाको मुखनाक आदि छिद्रोंमें लेता चला जाय तब शुद्धहोय यह योजनभर चलाजाना २७० की अधिकोक्ति में मनुके वचनसे लिखिचुके तहां देखो॥ पराशर कहिते हैं कि•मूसा•विल्ली•सांप•अजगरडुंडुभ डोंड़ा सांप इननाम

से सांपकी जुदीजाति है शायद इसीको दुमुही कहिते हों•इनमें किसी एकही की हत्याकरै सो ब्राह्मणोंको भोजन करावै और पूर्वोक्त रीतिका बनाहुआ लोहेकादंड दक्षिणादेवै॥ पराशर कहितेहैं कि•सेही•कछुवा•गोह• खरहा• शल्यकी• इनकी हत्यामें वैंगन और गुंजा गोंघुचीके पत्ते आदि खाइके व्रतकरै सो एकदिन रातिभर में शुद्ध होताहै॥ पराशरकहिते हैं कि•मृग हरिण•रोही वनजीव जो वृक्षपर चढ़ि जानेवाले वानर विषखपरा आदि होतेहों•वराह•भेड•वकरा• भेडहा•शृगाल• रीछ• तरक्षु तेंदुआ तरख•इनमें किसीकी हत्याकरै सो एक प्रस्थ परिमान तिलोंका दान करै और पूर्वोक्तरीतिसे वायुको पीकर तीनदिनतकव्रतकरै॥ पराशरकहितेहैं कि• हाथी•मेढ़ा•घोडा•ऊँट•गवय नीलगाय रोझ इनमें किसीकीहत्याकरै सो एकदिन रातिका उपवास और तीनो संध्या के समय तीर्थ स्नान प्राणायाम करै॥ पराशर कहितेहैं कि•गदहा•वन्दर• सिंह•चीता•बाघ•इनमें किसीको हत्याकरै सो तीनदिन राति वायु को पीके निराहार उपवास करै और इन सभी पूर्वोक्त प्रायश्चित्तों के पीछेसे यथाशक्ति संख्यासे ब्राह्मणोंको भोजनकरावै यह विशेष नियम सर्वत्रसबके साथ समुझिलेना=और=यह भी यादराखना कि जिन जीवोंकेनाम इस व्यवस्था में न लिखेहों और लोकमें नाम जिनका प्रसिद्ध होय तौ उन जीवों की हत्यापर इस व्यवस्थासे वेही प्रायश्चित्त ढूंढिलेना कि जो जो उन जीवोंके तुल्य डील डौलवालों के नामसे इसमें लिखेहैं। वनजीवों के साथ वनजीवोंकी उपमा और जल जीवोंकी पक्षियों के साथ पक्षियों के डीलडौल या उनके आचरण आदि एक से मिलाकर कामचलाना यह न्यायका स्वरूप है=इसीप्रकार=औरभी विशेष स्मृतियोंके वचन कहीं देखि परैं तिनको भी न्यूनाधिक विषय भेदसे कल्पना करिके समझिलेना और परस्पर वचनों का विरोध बचाते रहिना २७५॥ यह व्यवस्थाभी इसी दोसौ पचहत्तर अधिकोक्ति का शेष है २७५॥

इतिनरेतरसर्वप्राणिहिंसाप्रकरणं॥

इस प्रकरणमे एकही यह चौवनका परिच्छेद है दूसरा नहीं॥

सब जीवोंकी हिंसा वर्णन होचुकी अब अगिले परिच्छेद में इसी हिंसाके प्रसंग से वनवृक्ष आदि काटने तोडने उखाडने के प्रायश्चित्त वर्णन होंगे क्योंकि यह भी एक जड़ स्थावरोंको दुखदेना या विनाश करदेना जडजीवोंकी हिंसाहै और इसका उद्देश भी २४० दोसौचालिस मूलश्लोक से उपपातकों में आचुकाहै उसकी सबकी

और जरूरी अन्यबातेंको भी खींचके यहां दर्शावेंगे कि जिनकाचर्चा वहांपर न होसकाहो सो सब आगे देखो ॥

अथवृक्षगुल्मलतादिसर्ववनस्पतिछेदनोपपातकप्रायश्चित्तप्रकाशकोऽयंपरिच्छेदःपंचपंचाशत्तम(५५)॥



इसपरिच्छेद में सबतरहकी वनस्पति वृथा काटने या तोडने वा उखाडडारने आदि किसी प्रकारसे विनाश करदेने मध्ये प्रायश्चित्त कहे जायँगे चाहें बड वृक्ष हों या गुल्म लता वीरुध आदि छोटी औषधियें पर्यंत कोईसी वनस्पतिहोय ॥

(वृक्षादिछेदनप्रायश्चित्तं)

वृक्षगुल्मलतावीरुच्छेदनेजप्यमृक्शतम्। स्यादौषधिवृथाछेदेक्षीराशीगोऽनुगोदिनम् २७६ ॥

अर्थः—वृक्ष•गुल्म•लता•वीरुध इनको काटने में ऋचाओं का शतक जपनाहोय तथा औषधिके वृथा काटनेमें एकदिन गौओंके पीछे फिरके दूध पीवे=अर्थात—फल देनेवाले,आँब कटहरआदिके पेड और गुल्म जो वनबागोंमें झाड़ी हुआकरतीहैं लता जो हरतरहकी वेलिफल देनेवाली प्रसिद्ध होयँ एवं वीरुध जो वन में वड़ी मोटी वेलि अधिक फैलती हों इत्यादि और भी इसी नमूनेपर समझिलेना•इनमें से कुछ प्रयोजन विना अर्थात यज्ञादि जरूरी कामों के बिना जो कोई कुछ काटै या तोड़ै वा उखाड़ै तिसको गायत्रीआदि पवित्र ऋचाओंका एक सैकरा जपना चाहिये=तथैव=जो वन की या वस्ती के समीप उत्पन्न होनेवाली हरतरह की औषधियें में किसी पेडको रोगादि प्रयोजन के विना उखाडडारै या तोडै तिसको यह प्रायश्चित्त है कि प्रातः-काल से सांझतक गौओंकी नरिहाई के पीछे पीछे उनकी उचित सेवाकरता फिरै पुनि रात्रि में थोडासा कचादूध पीके व्रतराखै तव शुद्धहोय ॥ २७६ ॥

२७६अधिकोक्तिः—यज्ञादि कामों के विना•इस कथन का यह तात्पर्य है कि रोजके जरूरी पंचयज्ञोंके निमित्त फलफूल आदि या सूखी लकडी तोडने का दोष नहींहै—और दूसरा यह तात्पर्य है कि तोडने काटने का दोष जो कहा गया सो भी केवल उन वृक्षादिकोंकी अपेक्षापर आरूढ है जो अपने फल फूल पत्र डालि गोंद आदिसे संसारका उपकार करतेहों—इसकेमध्ये यह वचन भी प्रमाणहै कि=फलदानांतुवृक्षाणांछेदनेजप्यमृक्शतम्गुल्मवल्लीलतानांतुपुष्पितानांचवीरुधाम्=अर्थात—

किसी तरह का गुण उपकार रूपी फल देने वाले वृक्षों के काटने में और इसी प्रकार के फल देने वाले गुल्म वल्ली लताओं के काटने में तथा पुष्पित वीरुधों के अर्थात् जिनमें कोई अन्य प्रकार से फल नहीं देख पड़ता हो तथापि जो वीरुध झमड़ी वेलि आदि केवल फूलों से लदे हुये दिखनौट वनकी शोभा को बढ़ाते हों तिनके भी काटने में प्रायश्चित्त चाहिये=इसके सिवाय जो बातें प्रयोजनकी संसार में प्रसिद्ध हैं दृष्टान्त जैसे खेत खोदना या हलसे जोतना आदि ऐसे प्रसिद्ध प्रयोजनों में ओषधीका वृक्ष कटिजाना आदि दोषमें गिनती नहीं है क्योंकि हल खींचने आदिसे जो कुछ दोष उत्पन्न होताहै तिसका प्रायश्चित्त वहीहै जो खलयज्ञ कहाता है अर्थात् नाजकी राशि तैयार होने तक अनेक तरहसे किसान लोग अन्नादिवस्तुओंका दान पुण्य जो कुछ उनकेलिये शास्त्रमें लिखाहै सो करतेरहितेहैं उसीसे दोष दूरहोजाता है–एवं गऊआदि पशुओंका पालनकरनेके निमित्त जो घासआदिकाटी जातीहै उसमें भी प्रयोजनके हेतुसे कुछ दोष नहींहै क्योंकि पशुओं का पालन कर्म भी पंचयज्ञोंका एक अंगभेदहै=और भी वशिष्ठजीका जो वचनहै सो इसी प्रयोजनपर निषेध और प्रति प्रसवके साथही कहा गयाहै=यथाह वशिष्ठः=फलपुष्पोपभोग्यान् पादपान्नहिंस्यात् कर्षणाकरणार्थंचोपहन्यादिति=अर्थात्–फल फूल आदि किसी प्रकारसे भोगने योग्य वृक्षों को न काटै यह निषेध किया॰ परन्तु जोतने के हेतु से धरती साफ करनेके लिये काटै भी यह निषेध कियेहुये का प्रतिप्रसव कहा ॥ ०॥

परन्तु जहां कहीं स्थान विशेष के हेतुसे काटने पर अधिक दण्ड कहा गयाहो तहां उनके काटने में प्रायश्चित्त भी ऊर्ध्वोक्तसे अधिक लगाया जाता है=यथोक्तं=चैत्य श्मशानसीमासु पुण्यस्थानेसुरालये जातद्रुमाणांद्विगुणो दण्डोवृक्षेतुविश्रुते=अर्थात्–चैत्य जो ऊँचे वृक्ष अस्तल (स्थल) आदि पर पुराने खड़े होतेहैं या मुर्दा फुंकनेकी धरती श्मशान पर होते हैं या सीमाके चिह्न मानेजाते हैं या राह घाट पथिकों के विश्राम योग्य होतेहैं या जिनसे ग्रामोंका दूरी अन्तर कोस योजन आदि जाना जाता है या जिनके नीचे जंगल में पशुओंको छाया मिला करती है या जिन बड़े वृक्षों के विशेषपने किसी ग्राम नगर मुहल्ला देवस्थान खेत कूप आदिका नामही विख्यात या कोई अति प्राचीन वृक्ष किसी कोने मैदानमें केवल अपने नामसे विख्यात होय जिसके होनेसे पुराने कालका प्राचीन चिह्न माना जाताहो या देवालय आदि पुण्य स्थानमें कोई वृक्ष नवीनही अपने आप पैदा हुआ या लगाया गयाहो इत्यादि वृक्षों के काटने में दूना दण्ड होताहै कि जितना साधारण वृक्षों के काटने पर लिखा हो

तिससे—तौ इस दराडके अनुसार प्रायश्चित्त भी दूनां करवाया जाय जितना लिखि चुकेहैं तिससे ॥ ० ॥ एकसौ ऋचाका जप करना जो कहागया सो केवल पढे लिखे द्विजातियों का विसय है तिससे स्त्री और शूद्र आदि के लिये जपके स्थान पर दंड के अनुसार दो रात्र आदि व्रतही आदेश किया जाय ॥ ० ॥ दोसौ पैंसठि २६५ मूल श्लोक और उसी की अधिकोक्तिसे चवालिस ४४ परिच्छेदमें जो जो प्रायश्चित्तों के स्वरूप सब सामान्य उपपातकोंपर अतिदेश उतारे गयथे और इस परिच्छेद की व्यवस्था भी उपपातकों में गिनती होचुकी है तिससे उन प्रायश्चित्तों का अतिदेश भी इसपर जोड़ि लेना चाहिये• और यद्यपि वे प्रायश्चित्त बहुत बडे हैं तथापि यहां ऐसे विख्यात पेडों के काटने मध्ये दूने किये बिनाही आरूढ होसक्ते हैं• अन्यथा इन वृक्षों से उपरान्त सामान्य वृक्षों को बारम्बार काटने के अभ्यास पर भी आरूढ होसक्ते हैं ॥ २७६ ॥

पुंश्चली स्त्रियां और वानर आदि बहुधा दाँत वाले जीवों का मारना जो ऊपर चर्चा किया गया तिसके साथ यहभी संभव है कि जिसको मारनेपर उतारू कोई होताहै तौ वह भी क्रोधमें आकर प्रायः काटि खाताहै इसी प्रसंग से यह बात यहां पर आकर्षण करी गई है कि यदि कोई ऐसे जीवों से काटि खाया जाय तिसको प्रायश्चित्त करना चाहिये फिर चाहैं जैसी दशामें काटा गयाहो कुछ मारनेके स• मय परही यह नियम आरूढ नहींहै किन्तु काटिखाने से अशुद्धि जो उत्पन्न होती है तिसका प्रायश्चित्त अगिले परिच्छेद में देखना ॥

अथपुंश्चलीवानरखरादिदंष्ट्रजीवैर्दष्टपुरुषस्यप्राय श्चित्तप्रकाशकोऽयंपरिच्छेदः षट्पंचाशत्तमः ५६

——※——

इस परिच्छेद में उस पुरुष के प्रायश्चित्त कहे जायँगे जो किसी मलीन पशु पक्षी आदि जीव या मनुष्यही से काटिखाया जाय तिसकी अशुद्धि प्रायश्चित्त करने के विना नहीं मिटती है ॥

(खरवानरकाकादिदष्टस्य प्रायश्चित्तं)

पुंश्चलीवानरखरैर्दष्टश्चोष्ट्रादिवायसैः। प्राणायामंजलेकृत्वाघृतंप्राश्यविशुद्ध्यति २७७

अर्थः—पुंश्चली अति व्यभिचारिणी नारी या वंदर या गदहा या ऊँट आदि

मलीन पशु या कौआ आदि मलीन पक्षी यदि मारने आदि किसी दशा में जिसको काटिखायें सो इनसे दष्ट काटा हुआ जलमें खड़ा होकर प्राणायाम करिके और पीछेसे घी चाटिके शुद्ध होजाता है ॥ २७७ ॥

२७७ अधिकोक्तिः—मूल में जो आदि शब्द आया तिससे और भी कुत्ता जम्बुक आदि कटखन्ने मलीन जीवोंको समझिलेना जो इस भाँतिके होतेहैं=यथाहमनुः=श्वशृगालखरैर्दष्टोग्राम्यैःक्रव्याद्भिरेवच नराश्वोष्ट्रवराहैश्चप्राणायामेनशुद्ध्यति=अर्थात्—कुत्ता• गीदड़• खर• इनसे काटा हुआ या जो ग्राम के रहैया बिल्ली आदि मांस खानेवालों से काटाजाय या आदमी काटि खाय या घोड़ा ऊँट सूअर इनसे काटा हुआ द्विजाती पुरुष प्राणायाम करिके शुद्ध होजाताहै=यह घीका चाटना जो कहि चुके सो केवल भोजन के अभिप्राय पर समझना कि सिर्फ घी चाटिके व्रत करै क्यों कि प्रायश्चित्त तपका रूप होतेहैं और तप उसीका नामहै जिससे देह को कुछ ताप संताप पहुँचै=और यह एकही प्राणायाम जो कहिचुके सो बीमार आदि असमर्थ के निमित्त में समझना क्योंकि सुमन्तुने स्नान विधि और तीनि प्राणायाम कहे हैं=यदाह सुमन्तुः=श्वशृगालमृगमहिषाजाविक खरकरभनकुलमार्जार मूषिकाप्लव वकवाकपुरुषदष्टानामापोहिष्ठायादिस्नानं प्राणायामत्रयंचेति=अर्थात्—कुत्ता• गीदड़• वनमृग• भैंसा• बकरा• मेढ़ा• गदहा• हाथी• नेउरा• बिल्ली• मूसाघूस• प्लवक जो वगुलाकी सूरतिके अनेक छोटी बदक से होतेहैं• कौआ• मनुष्य• इनसे काटे हुये पुरुषोंको आपोहिष्ठा आदि ऋचाओंसे अभिषेक स्नान और तीनि प्राणायाम करने चाहिये=यहां तक जो प्रायश्चित्त कहा सो केवल तोंदीसे नीचे किसी अंगमें थोड़ा सा काटा जाय• अन्यथा किसी ऊपरले अंगमें काटै या तोंदीसे नीचे भी कुछ अच्छी तरह काटै तिनके प्रायश्चित्त कुछ बड़े हैं सो आगे अंगिरा के वचन से देखो ॥ ० ॥ यदाहांगिराः=ब्रह्मचारीशुनादष्टस्त्र्यहंसायंपिबेत्पयः गृहस्थश्चेत्तद्द्विरात्रंतुएकाहंयोऽग्निहोत्रवान् नाभेरूर्ध्वंतुदष्टस्यतदेवद्विगुणंभवेत् स्यादेतत्त्रिगुणं वक्त्रेमस्तके चचतुर्गुणम्=अर्थात्—यदि ब्रह्मचारी कुत्ता आदि किसीसे काटा जाय सो तीन दिन साझ प्राणायाम सहित ऐसा व्रत करै कि सांझको दूध पीकेरहै और जो गृहस्थ काटा जाय तो वह दोही दिन का व्रत करै और जो गृहस्थों में अग्नि होत्री पुरुष काटा जाय तो एकही दिन दूध पीने का व्रत करै• परन्तु यह तीनों का नियम के- वल इसी दशा में समझना जो नाभि से नीचे काटि खाया हो—किन्तु— नाभि से ऊपर काटि खाने में येही सब तीनों को अपने अपने व्रत दुगुने करने चाहिये और

जो मुखमें काटिखायाहो तौ वेही व्रत तिगुने करने चाहिये और जो माथेपर काटा गया हो तौ वेही व्रत चौगुने करै तब शुद्धहोय॥ ये प्रायश्चित्त ब्राह्मण के निमित्त पूरंपूरकहेगयेहैं इनमें से क्षत्रीको पौन और वैश्य को आधाप्रायश्चित्त देनाचाहिये और शूद्र को यदि कुत्ते आदि कोई जीव काटें तब उसके लिये वृहद्व अंगिरा मुनि का कहा विधान बतलाया जाय=यदाह वृहदंगिराः=शूद्राणांचोपवासेनशुद्धिर्दानेनवापुनः गांवादद्याद्वृषंचैकंब्राह्मणार्थविशुद्धये=अर्थात्–शूद्रों की शुद्धि केवल उपवास या दान करने मात्र से होती है परन्तु जो उत्तम अङ्गों में काटा हो तौ एक गाय या वैल का दान करै॥ ०॥ इनसे उपरान्त जो एक सौ प्राणायाम का प्रायश्चित्त है सो उस दशा पर समझना कि मुख मस्तक आदि उत्तम अंग पर काटने से लार आदि मल ओठों से छुइ गया हो=यदाह वशिष्ठः= ब्राह्मणस्तुशुनादष्टोनदींगत्वासमुद्रगाम प्राणायामशतंकृत्वाघृतंप्राश्यविशुद्ध्यति=अर्थात्–ब्राह्मण यदि उत्तम अंग में कुत्ता आदि से काटा जाय सो समुद्र में मिली हुई किसी दीर्घ नदी में जाकर स्नान करै तहां जलमें प्राणायामों का सैकरा पूरा करिके पुनि घी चाटिके विशुद्ध होता है॥ ०॥ अथस्त्रीणांविशेषः–स्त्रियां यदि कुत्ता आदि से काटी जायँ तिनके लिये जुदे प्रायश्चित्त हैं=तदाह पराशरः=ब्राह्मणीतुशुनादष्टाजम्बुकेनवृकेणवा उदितंग्रहनक्षत्रंदृष्ट्वासद्यःशुचिर्भवेत्=अर्थात्–ब्राह्मणी जो कुत्ता या शृगाल भेडहाआदि किसी से काटी जाय सो काटने के वादि आनेवाली रात्रिमें ग्रह नक्षत्रों को उदय हुये देखिके तत्काल शुद्ध होजाती है किन्तुउदयहोनेतक उपवास राखै=और=जोकिसीप्रकार के व्रतआदि नियमों की साधनामें लगरही हो तिसकेलिये औरभी विशेषता उन्हीं नेकहीहै=तदप्याहपराशरः=त्रिरात्रमेवोपवसेच्छुनादष्टातुसव्रतासघृतंयावकंभुक्त्वा व्रतशेषंसमापयेत्=अर्थात् जो व्रतों में लगीहुई कोई नारी कुत्ता आदिसे काटीजाय सो वीचमें उसव्रतादिक नियमको थांभिकर तीनिदिनघीके साथअलोना जौका दलिया खायके उपवासकरै तिसपीछे अपनेवाकीनियमकोसमाप्त करै=एवं=रजस्वलास्त्रियों के निमित्तमें पुलस्त्यमुनिने विशेषनियम कहाहै=यथाहपुलस्त्यः=रजस्वलायदादष्टा शुनाजम्बूकरासभैः पंचरात्रंनिराहारापंचगव्येनशुद्ध्यति ऊर्ध्वन्तुद्विगुणंनाभेर्वक्त्रेतुत्रिगुणन्तथा चतुर्गुणंस्मृतंमूर्ध्नि दष्टेऽन्यत्राप्लुतंभवेत्=अर्थात्–रजस्वला यदि कुत्ता गीदड़ गदहा आदि से काटीजाय तौ वह काटनेके दिनसे लेकर पांच रात्रि तक निराहार व्रत करती और पंचगव्यको लेतीहुई रहिकर शुद्ध होती है–परन्तु जो नाभि से ऊपरले अंग में काटीजाय सो इससे दूना दश दिनका व्रतकरै और मुहमें जो

काटी जाय सो तिगुना किन्तु पखवारा भर व्रत करै और मूड़ पर काटी जाय सो चौगुना बीस दिन का व्रत करै तब शुद्ध होय• रजस्वलासे अन्यत्र कोई साधारण स्त्री जो काटीजाय सो केवल स्नानसे भी शुद्ध होसक्ती है (रजस्वला स्त्रियों के नियम बहुतबड़े हैं तिनको वैद्यक शास्त्र भावप्रकाश आदि बड ग्रन्थोंमें देखो उन्हीं नियमों के हेतुसे यहां भी उसके लिये बड़े प्रायश्चित्त कहे गये हैं कि ऐसे प्रायश्चित्तों से शरीरकी शुद्धि उसकी न करी जाय तो फिर कुत्ते और चण्डाल आदि के स्वभाव लक्षण वाली सन्तान पैदा होगी ॥

पुरुषेष्वपि विशेषः—जहां कुत्ता आदि ने निपट काटा तो न होय पर केवल शरीरको सूंघा या चाटलियाहो तिसकेअर्थ शातातपने छोटा प्रायश्चित्त कहाहै =यथाहशातातपः=शुनाघ्रातावलीढस्य नखैर्विलिखितस्यच अद्भिःप्रक्षालनंशौचम- ग्निनाचोपचूलनम=अर्थात—कुत्ताबिल्लीआदिने देहकोसूंघा या चाटाहो या नख पञ्जों से खरोंचदिया हो तिसकेलिये जलसे धोयडारना और पीछेसे आंचमें सेंकिडारना यही शौच रूपी प्रायश्चित्तहै ॥ ० ॥ जहां कहीं कुत्ता आदि के काटने नचोटने से व्रण घाव होजाय अथवा हथियार आदि और ही किसी चोटसे घाव होके पकि जाय तिसमें राध पड़जाने से कीड़े भी परैं तिसके बाबत मनु ने प्रायश्चित्त विशेष कहाहै=यथाहमनुः=ब्राह्मणस्यव्रणद्वारे पूयशोणितसम्भवे कृमिरुत्पद्यतेयस्य प्राय श्चित्तंकथम्भवेत गवांमूत्रपुरीषेणत्रिसन्ध्यंस्नानमाचरेत त्रिरात्रंपंचगव्याशीत्वधोना भ्याद्विशुद्ध्यति नाभिकंठांतरोद्भूते व्रणेचोत्पद्यतेकृमिः षड्रात्रंतुत्र्यहंपंचगव्याशन मितिस्मृतम=अर्थात—जिस ब्राह्मणके घावके द्वारा रक्त राध पीव होजाने में कीरे पैदा होंयँ तिसका प्रायश्चित्त कैसे होय (घावपूरि जाने के बादि) गौओं के मूत और गोबर से तीन दिन तक त्रिकाल स्नान किया करै और पंचगव्य मिलाइ के पिया करै तौ उस दशा में शुद्धि होजायगी कि जिसके नाभि से निचले अंगों में राध कीड़े परे हों• अन्यथा जिसके तोंदी से गले तक बीचके धड़ में कहीं परेहों तौ कृमिके परने बाबत छः दिन और विना कृमि के राध हो जाने बाबत तीनिही दिन पंचगव्यका पीना आदि व्रत करै=इस व्यवस्थामें इतना भेद विशेष है कि जिसको कुत्ता आदि किसीके काटनेसे घाव होकर कृमिपड़े हों सोतो काटने मात्रके निमित्त का प्रायश्चित्तपहिले करै सो तिथीकेराधि और कृमिके अर्थ्येअवोक्तप्रायश्चित्त को भी करै• परजिनके केवल चोटआदिकुछहथियारसे घावहोकरपीव याकृमिपरे हों सो केवल उपरोक्त प्रायश्चित्त करें जो तीन दिन पंचगव्य पीना आदि कहा॥=॥

ये प्रायश्चित्त भी ब्राह्मणके निमित्तपर कहेगये तिससे ब्राह्मणको पूरंपूर और क्षत्री को पौना और वैश्यको आधा और शूद्रको चौथाई मानदेनाचाहिये यही इसमें न्याय का स्वरूप है—इतिश्वादिदष्टस्यप्रायश्चित्तानि ॥ इस परिच्छेद में कुत्ता कौआ बानर गदहा आदिसे केवल काटिखाने या चोंच पंजासे न घोंटिजाने का प्रसंग है=अन्यथा ब्राह्मण आदि तीनि वर्णोंकी नैत्तिक शरीर शुद्धिके प्रायश्चित्त चौथे परिच्छेद में सर्व सामान्य वर्णन होचुके तहां तीसवें मूलश्लोक और उसीकी अधिकोक्तिमें अच्छी तरह देखो कि सब तरहकी अशुद्ध वा मलीन चीजों के छुइजाने तथा रजस्वला नारी और चंडाल आदि अधम मनुष्योंको छुइजाने तथा कौआ चील्ह गीध चिमगादर आदि और कुत्ता बिल्ली गर्दभ ऊँट सूअर आदि अशुचि जीवों के छुइजाने मात्र के छोटे छोटे प्रायश्चित्त हैं जिनसे नित्यंप्रति शरीर शुद्धि बनी रहि सक्ती है ॥ २७७॥

इतिश्वादिदष्टस्य प्रायश्चित्तानि ॥

इतिस्थावरहिंसादि प्रकरणं॥

(इस प्रकरण में पचपन ५५ और छप्पन ५६ के दोही परिच्छेद हैं)

ऊपरले परिच्छेदमें काटिखानेका चर्चा था जिससे शरीर की एक धातु अर्थात (त्वचा) खाल कटिजाती है और उसीसे दूसरी धातु रक्त और तीसरी धातु मांस और चौथी धातु मेदा और पाँचवीं धातु हाड़ और छठी धातु मज्जातक बिरलेघाव से कटिजाती या गलिके राधि होजाती है तभी कीड़ परते हैं यह सब उसीके ध्वन्यर्थ नें वर्णन होगया अर्थात जो राधि और कीरा परनेके प्रायश्चित्त कहेगये सो सब इन्हीं बातोंकी हानिपर समझने—तहां एक सबसे अन्त का सातवां धातु शुक्र वीर्य है तिसकी हानिका प्रायश्चित्त अगिले परिच्छेद में जाकर सब से जुदा कहा जायगा क्योंकि उसकी हानि भी जुदे प्रकारोंसे होती है कुत्ता काटने आदिके द्वारा नहीं होती ॥

———※———

अथवीर्यस्कंदनाद्युपपातक प्रायश्चित्तप्रकाशकोऽयं परिच्छेदः सप्तपंचाशत्तमः (५७)



इस परिच्छेदमें उन प्रायश्चित्तोंका स्वरूप कहा जायगा जो देहका सातवां धातु शुक्र वीर्य किसी तरह से बिगाड़ि देनेमें होते हैं या जलमें मुह छा या देखि लेनेपर या कोई अशुचि वस्तु देखि लेनेपर या निंदित उपजीवन या नास्तिकता खडोकरने पर प्रायश्चित्त कराये जातेहैं॥

(वीर्यपातप्रायश्चित्तं)

यन्मेयरेतइत्याभ्यांस्कन्नंरेतोऽभिमंत्रयेत् स्तनान्तरंभ्रुवोर्म्मध्येतेनानामिकयास्पृशेत् २७८॥

अर्थः–(यन्मेद्यरेतः) इत्यादि इन दो मंत्रों से गिरे हुये रेतसको अभिमंत्रित करै उस अभिमंत्रित कियेसे अनामिका से लेकर स्तनों के बीच और दोनों भौंहके बीच स्पर्श करै=अर्थात–मनुष्यको ब्रह्मचर्यसे रहना उचितहै कि देहके वीर्यकी हानि न होने देवे यदा गृहस्थी होय सो भार्याके सम्भोग बिना वीर्यको निरर्थक न गिरावे· इसपर भी कदाचित कामदेवकी प्रबलता आपने हठसे या स्वप्न आदि और ही किसी दशामें वीर्यपात होजाय तब यह एक प्रकारका उपपातक आरूढ होताहै तिसकी शुद्धिके निमित्त यह प्रायश्चित्तहै कि–(तन्मेरेतःपृथिवीं० अस्कांपुनर्मामैत्विन्द्रिय) इन दो ऋचाओं का स्वरूप जैसा वेदोक्त मंत्रोंमें उपस्थितहै तैसा दोनों को पढ़कर आपने गिरेहुये रेतस्वीर्यको तत्काल ही अभिमंत्रित करै फिर सबसे छोटी अंगुलियां [illegible] अनामिका [illegible] अंगुली से [illegible] लेकर मंत्रोंको पढ़तेहुये हृदयमें बि-[illegible] [illegible] और [illegible] दोनों भृकुटीके बीचमें छुआवै तिस पीछे [illegible] जो [illegible] तब उपउपपातकसे शुद्ध होताहै २७८॥

आदि में चलताहै तिससे अँगुठा और अनामिका दोनोंकी चुटकी बुद्धिस्थ बनाकर हृदय आदि में छुआनी किंतु वीर्य को न छूना चाहिये (किन्तु मूल में अंगुष्ठ शब्द जोडने से एक अक्षर बढ़िकर छन्दोभंग होजाता तिससे अंगुष्ठको तेन शब्दही से निर्देशकिया होगा यह तर्कना खडी करी है) सो यह अर्थ असत् है क्योंकि बुद्धि के भीतर कोई छिपाहुआ अंगुठा कहीं नहींदेखा सुनाहै बल्कि यह प्रत्यक्ष दूसराहै कि जो शब्द उसके पास है तिसको छोड़िके अर्थ से बुद्धिस्थ अँगुठे को लाकर उसमें जो डै—इसकेऊपर तर्कशास्त्रमें यहमसल प्रसिद्धहै कि (गम्यमानस्यचार्थस्यनैवदृष्टंविशेषणम् शब्दांतरैर्विभक्त्यावाधूमोऽयंज्वलतीतिवत्) जिसअर्थकी प्राप्तिहोय तिसके विशेषणको नहींदेखा शब्दोंके अंतरसे यद्वा विभक्तिसेही कहिदिया सो उस न्याय केतुल्य ठहिरताहै कि बिना प्रमाणोंके धुआँ जलताहै कहिदियाजाय—विज्ञानेश्वर कहिते हैं कि अशुचि होने के हेतु से रेतस् को छूने की अयोग्यता नहीं सिद्धहोती है क्योंकि जो रेतस् को अशुद्ध माना तौ शरीर भी उसकाल में अशुद्ध ही होता है तौ फिर छूने से क्या परहेज़ तिसपर यह कि प्रायश्चित्त रूपी बिधान किया गया और मंत्रों के पढने की आज्ञा ठहिराई तौफिर छूनेमें अयोग्यता कहां रही बल्कि योग्यता ठहिरी० इसका भी दृष्टांत है कि जैसे सुरा पीने वाला उसके पीने से पतित होता है फिर भी प्रायश्चित्त के निमित्त पर गरम करिके वही सुरा पिलानी कहिचुके हैं सुरापान के प्रायश्चित्तों वाले प्रकरणमें देखो० तिससे वही अर्थ ठीक है ॥ ० ॥ यह प्रायश्चित्त जो कहिचुके सो केवल गृहस्थ को उस दशा में समझना कि जहां इच्छा किये बिना निरर्थक वीर्यका पात होय० ब्रह्मचारीके लिये जागते सोते दोनों दशा मध्ये बड़े प्रायश्चित्त आगे आवैंगे—और—मनु का यह वचन है कि=गृहस्थःकामतःकुर्याद्रेतसः स्कंदनंभुवि सहस्रंतुजपेद्देव्याःप्राणायामैस्त्रिभिःसहेति० तत्कालकारविषयं=अर्थात्—गृहस्थी पुरुष यदि इच्छा से वीर्य का पात धरती पर करै तो तीन प्राणायामों सहित गायत्री के हजार मंत्र जपै—यह वचन खुलासा है किजिसने इच्छासे चाहिकर वीर्यपात कियाहो सोयह प्रायश्चित्त करे॥२७८॥

(जलांतःप्रतिबिम्बदर्शनादिप्रायश्चित्तं)

मयितेजइतिच्छायांस्वांदृष्ट्वांबुगतांजपेत् । सावित्रींअशुचौदृष्टेचापल्येनानृतेऽपिच २७९॥

अर्थः—जलमें पहुंची अपनी छाया (मुखकाप्रतिबिम्बआदि) देखिके=मयितेज इन्द्रियं०इस वेदोक्तपूरे मंत्रको (यथाशक्ति एकसे आदिलेकर कुछ कुछ) उसीसमय

अथवीर्यस्कंदनाद्युपपातक प्रायश्चित्तप्रकाशकोऽयं परिच्छेदः सप्तपंचाशत्तमः (५७)

——*——

इस परिच्छेदमें उन प्रायश्चित्तोंका स्वरूप कहा जायगा जो देहका सातवां धातु शुक्र वीर्य किसी तरह से बिगाड़ि देनेमें होते हैं या जलमें मुह छा या देखि लेनेपर या कोई अशुचि वस्तु देखि लेनेपर या निंदित उपजीवन या नास्तिकता खड़ीकरने पर प्रायश्चित्त कराये जातेहैं॥

(वीर्यपातप्रायश्चित्तं)

यन्मेद्यरेतइत्याभ्यांस्कन्नंरेतोऽभिमंत्रयेत् स्तनान्तरंभ्रुवोर्म्मध्येतेनानामिकयास्पृशेत् २७८॥

अर्थः—(यन्मेद्यरेतः) इत्यादि इन दो मंत्रों से गिरे हुये रेतसको अभिमंत्रित करै उस अभिमंत्रित कियेसे अनामिका से लेकर स्तनों के बीच और दोनों भौंहके बीच स्पर्श करै=अर्थात्—मनुष्यको ब्रह्मचर्यसे रहना उचितहै कि देहके वीर्यकी हानि न होने देवे यद्वा गृहस्थी होय सो भार्याके सम्भोग विना वीर्यको निरर्थक न गिरावे॰ इसपर भी कदाचित् कामदेवकी प्रबलता अपने हठसे या स्वप्न आदि और ही किसी दशामें वीर्यपात होजाय तब यह एक प्रकारका उपपातक आरूढ़ होताहै तिसकी शुद्धिके निमित्त यह प्रायश्चित्तहै कि—(तन्मेरेतःपृथिवीं॰ अस्कांपुनर्मामैत्विन्द्रिय) इन दो ऋचाओं का स्वरूप जैसा वेदोक्त मंत्रोंमें उपस्थितहै तैसा दोनों को पढ़कर अपने गिरेहुये रेतस्वीर्यको तत्कालही अभिमन्त्रित करै फिर सबसे छोटीछगुनियां के पासवाली अनामिका उंगली से किंचिन्मात्र लेकर मंत्रोंको पढ़तेहुये हृदयमें बिभूतिकी तरह लगावे और माथेके बीचे दोनों भृकुटीके बीचमें छुआवे तिस पीछे स्नानआदि शौचक्रिया जो उचितहोय सो करै तब इसउपपातकसे शुद्धहोताहै२७८॥

२७८ अधिकोक्तिः—श्रीमिताक्षराकार विज्ञानेश्वर कहते हैं कि मूल श्लोक में ठीक ठीक अर्थ यही है जो लिखा गया। परन्तु कितने टीकाकारोंने यह तात्पर्य मानिकर कि गिरा हुआ वीर्य फिर छूना न चाहिये क्योंकि अशुचि होजाता है तिससे इस कारण अर्थको छोड़िके और ही अर्थ लगायाहै कि—मन्त्रमें तेन शब्दसे अंगूठा मान क्योंकि बहुधा अनामिका के साथ अंगूठा भी कुछ उठाने छूकरने

में चलताहै तिससे अँगूठा और अनामिका दोनोंकी चुटकी बुद्धिस्थ बनाकर आदि में छुआनी किंतु वीर्य को न छूना चाहिये (किन्तु मूल में अंगुष्ठ शब्द से एक अक्षर बढ़िकर छन्दोभंग होजाता तिससे अंगुष्ठको तेन शब्दही से निकया होगा यह तर्कना खड़ी करी है) सो यह अर्थ असत्त है क्योंकि बुद्धि के कोई छिपाहुआ अंगूठा कहीं नहीं देखा सुनाहै बल्कि यह प्रत्यक्ष दूसराहै कि दर इसके पास है तिसको छोड़िके अर्थ से बुद्धिस्थ अँगूठे को लाकर उसमें जो इसकेऊपर तर्कशास्त्रमें यहमसल प्रसिद्धहै कि (गम्यमानस्यचार्थस्यनैवदृष्टंविान शब्दांतरैर्विभक्त्याबाधूमोऽयंज्वलतीतिवत) जिसअर्थकी प्राप्तिहोय तिसके सगाको नहींदेखा शब्दोंके अंतरसे यद्वा विभक्तिसेही कहिदिया सो उस न्याय स्य ठहिरताहै कि बिना प्रमाणोंके धुआँ जलताहै कहिदियाजाय—विज्ञानेश्वर ते हैं कि अशुचि होने के हेतु से रेतस् को छूने की अयोग्यता नहीं सिद्धहोती योंकि जो रेतस् को अशुद्ध माना तौ शरीर भी उसकाल में अशुद्ध ही होता है फिर छूने से क्या परहेज् तिसपर यह कि प्रायश्चित्त रूपी विधान किया गया मंत्रों के पढ़ने की आज्ञा ठहिराई तौफिर छूनेमें अयोग्यता कहां रही बल्कि यता ठहिरी॰ इसका भी दृष्टांत है कि जैसे सुरा पीने वाला उसके पीने से पति ता है फिर भी प्रायश्चित्त के निमित्त पर गरम करिके वही सुरा पिलानी हचुके हैं सुरापान के प्रायश्चित्तों वाले प्रकरणमें देखो॰ तिससे वही अर्थ ठीक ०॥ यह प्रायश्चित्त जो कहिचुके सो केवल गृहस्थ को उस दशा में समझना जहां इच्छा किये बिना निरर्थक वीर्यका पात होय॰ ब्रह्मचारीके लिये जागते दोनों दशा सध्ये बड़े प्रायश्चित्त आगे आवैंगे—और—मनु का यह वचन है =गृहस्थःकामतःकुर्याद्रेतसः स्कंदनंभुवि सहस्रंतुजपेद्देव्याःप्राणायामैस्त्रिभिःसहेति॰ कानकारविषयं—अर्थात—गृहस्थी पुरुष यदि इच्छा से वीर्य का पात धरती करै सो तीन प्राणायामों सहित गायत्री के हजार मंत्र जपै—यह वचन खुलासा कि जिसने इच्छासे चाहिकर वीर्यपात कियाहो सोयह प्रायश्चित्त करै॥२७८॥

(जलांतःप्रतिबिम्बदर्शनादिप्रायश्चित्तं)

मयितेजइतिच्छायांस्वांदृष्ट्वांबुगतांजपेत् । सावित्रींजशुचौदृष्टेचापल्येनानृतेऽपिच २७९॥

अर्थः—जलमें पहुंची अपनी छाया (मुखकाप्रतिबिम्बआदि) देखिके॰मयितेज न्द्रियं॰इस वेदोक्तपूरे मंत्रको (यथाशक्ति एकसे आदिलेकर कुछ कुछ) उसीसमय

उपडारै अशुद्धि देखने में सावित्रीजपै और चपलतासे झूंठ बोलि के भी=अर्थात्-किसी अपवित्र चीज वा ठिकानेका दर्शन अचानक होजाय तौ अपने स्थानपर आकर आसन बिछाने आदि विधिके साथ बैठिकर सविता देवता सूर्यनारायण की ऋचा (तत्सवितुःइत्यादि) एकमालाजपै तथा इसी गायत्रीको वह पुरुष जपै जिसने हाँसी ठट्ठा आदि की चपलता में झूठ बहुत बोला हो (इसका यह तात्पर्य है कि हाँसी आदिके बिना अकस्मात् झूंठ जिसने बोलाहो तिसको इससे बडा प्रायश्चित्त चाहिये और जिसने किसी सामिलेपर असत्य बोलाहो तिसके बहुत बड़े प्रायश्चित्त हैं सुरापानवाले प्रकरण में कहिचुके और बड़ापनका रूपदेखौ२२८के श्लोक वा उसीकी अधिकोक्ति में ॥ २७९ ॥

२७९ अधिकोक्तिः—यहव्यवस्था जो कहीगई सो ऐसी दशापर समझनी कि जहाँ जलमें छाया और अशुचिस्थान वा वस्तु देखने या हाँसी आदिमें झूठ बोलने का बचाव होसक्ते हुये न किया हो अन्य या अपने प्रयत्न से बचाव करते हुये भी बचाव न होसक्ता हो तिसकेलिये अग्रोक्त मनुवचनके अनुसार केवल आचमन करना सूचित होताहै=यदाहमनुः=सुप्त्वाभुक्त्वाचक्षुत्वाचनिष्ठीव्याध्यनृतानिचपीत्वा २२पो२८ध्येयमाणस्यआचामेदप्रयतो२८पिसन्=अर्थात्—सोइके॰कुछ मूली गांड़ा आदि खाइके॰छींक आजानेसे॰ खँखार थूकनेसे॰ बिनाचाही लाचारी की असत्य बोलने से॰कोई पतरीचीज रस दूध आदिजल पर्यंत पीनेसे॰पढ़ना आदि पाठ करनेसे॰ इन सबसे जब निपटै तभी आचमन अर्थात् अच्छीतरह कुल्ला करै यही प्रायश्चित्त है=इसके सिवाय जो संवर्तका वचन है कि=क्षुतेनिष्ठीवनेचैवदंतश्लिष्टेतथा२८नृते पतितानांचसंवादेदक्षिणंश्रवणंस्पृशेत्=अर्थात्—छींकनेपर॰थूकनेपर॰दाँतमें कुछलगाहोने पर॰तथा असत्य के सुननेपर॰पतितों के साथ बात कहिनेपर॰ दाहिनाकान अपना स्पर्श करडारै—सो यह कानका छूनामात्र किसी अतिशय थोड़े प्रयोजनोंपर अथवा जहाँ निपट जलकी प्राप्ति न होसके तहांपर समझना कि अबलाचारी में और क्या होसक्ता ॥ २७९ ॥

योगीश्वरने२३६ वेंश्लोकतीन मूलश्लोक में क्षत्री वैश्य शूद्र और स्त्रियोंका वध गिनती कियेके बाद (निंदितार्थोपजीवन और नास्तिक्य) येदोनो उपपातक दर्शाये थे तिनका भी प्रायश्चित्त इसीस्थलपर क्रमसे कहिना चाहिये सो लिखते हैं॥

———·———

निंदितार्थोप जीवनके अर्थमें स्त्री वा पुरुष आदिका बेंचना भी समझना॥

(निंदितार्थोपजीवनस्यनास्तिक्यस्यचप्रायश्चित्तं)

इन दोनोका मुख्यस्वरूप २३६ मूलश्लोक में देखो परन्तु यहांपर नास्तिक शब्द से भी वेदकी निन्दा करनेके द्वारा उपजीवन ठहरायागया है—इनके प्रायश्चित्तयद्यपि योगीश्वरने जुदेनहीं कहे तथापि २६५ दोसौपैंसठि मूलश्लोक और उसी की अधिकोक्ति में योगीश्वर और मनुके कहे सामान्य उपपातकोंवाले प्रायश्चित्त जो ४४के परिच्छेद में वर्णन होचुके हैं वेही सब इनकेसहये दोषीकी जाति और शक्ति गुण दोषकी तौलके अनुरूप यथायोग्य समझिलेना—परन्तु—वशिष्ठने इन दोनोकी अपेक्षापरजुदे प्रायश्चित्तभीदर्शायेहैं=यथाहवशिष्ठः=नास्तिकःकृच्छ्रंद्वादशरात्रंचरित्वाविरमेन्नास्तिक्याव नास्तिकवृत्तिस्त्वतिकृच्छ्रमिति=अर्थात—नास्तिकताकीबात चीतकरनेवाला बारहदिन कृच्छ्रव्रत करिके नास्तिकताकी बातोंसे हाथखींचे और जिसने उसी नास्तिकता से जीवनकी वृत्ति खड़ी करी होय सो अति कृच्छ्र करिके उस वृत्तिसे हाथ खींचै—सो यह प्रायश्चित्त भी एकहीबार नास्तिकता करनेवालेपर पारूढहैअर्थात्४४परिच्छेदवाले बड़े प्रायश्चित्त उसकेलिये समझना जिसनेनास्तिकता का बहुत दिन अभ्यास किया हो=इसके सिवाय जिसने बड़ी दृढता के साथ बहुतकालतक नास्तिकता सेवनकरीहोय तिसकेलिये आगेशंखऔर हारीतकेवचन देखो॥ ० ॥ यदाह शंखः=नास्तिकोनास्तिकवृत्तिः कृतघ्नःकूटव्यवहारीमिथ्याभिशंसी इत्येतेपंचसंवत्सरंब्राह्मणगृहेभैक्ष्यंचरेयुः=हारीतेनतु=नास्तिकोनास्तिकवृत्तिरितिप्रक्रम्य पंचतापोऽभ्रावकाशजलशयनान्यनुतिष्ठेयुरिति ग्रीष्मवर्षाहेमंतेष्विति=अर्थात—शंखने यह कहा है कि० नास्तिक० नास्तिकवृत्तिवान० कृतघ्न जो किसीके किये उपकार को मेटै० कूट व्यवहारी जो खानी पीनी चीजों में मिलावटकरैं० मिथ्याभिशंसी जो सच्चे पर झूठा पाप लगावै·ये पांचो एकवर्ष भर ब्राह्मण के घरोंमें भीख मांगि खाया करैं और सब नियम सार्वे तब शुद्ध होयँ=हारीत नेभी नास्तिक और नास्तिक वृत्ति आदिके नाम धरिके उन सबकेलिये तीनि भांति से तपस्यारूपी प्रायश्चित्त कहे ह कि·ग्रीष्मकाल में पंचाग्नि तपैं और वर्षाकाल में बरसते हुये मेघों को खुले आकाश के नीचे बैठिके मूडपर झेलैं और हेमंत शीत ऋतु में जलाशय की प्रवाह धारा में बैठिके ध्यान करैं=शंख और हारीत दोनों का कथन मिलाइ के यह तात्पर्य ठहरा कि एक सालभर ऐसा तप करते हुये ब्राह्मणों के

घर से भिक्षा लेकर भोजन किया करैं तब शुद्ध होयँ सो यह इतना बडा कठिन प्रायश्चित्त केवल उनके लियेहै कि जिन्होंने नास्तिकता आदि बड़ी दृढताकेसाथ बहुत कालतक अभ्यास किया हो ॥२७९॥ इसी दोसौ उनासीवाली ऊपरली मिताक्षराका शेष पाठ यहभीहै केवल विषय जुदा होनेसे स्थापना भेदकियागयाहै॥

योगीश्वर ने २३६ मूल श्लोक में नास्तिक्य से अनंतर (व्रतलोप) इस कर्म के नामसे अवकीर्णी ब्रह्मचारी का उपपातक दर्शाया था उसका प्रायश्चित्त भी योगीश्वर आपही अगिले श्लोक से प्रकाश करते हैं ॥

अथ अवकीर्णि ब्रह्मचार्यादीनां शुक्रहानौ प्रायश्चित्त प्रकाशकोऽयं परिच्छेदः अष्टपंचाशत्तमः (५८)

—※—

इस परिच्छेद में उनके प्रायश्चित्त कहे जायँगे जो ब्रह्मचारी आदि अवकीर्णी होगये हों अर्थात् मुख्य तो अवकीर्णी ब्रह्मचारी कहा गयाहै परन्तु उसके उपलक्षणसे वानप्रस्थ और संन्यासी आदि यतीपुरुषोंके प्रायश्चित्त भी वर्णन होंगे क्योंकि वीर्य का थांभनारूपी ब्रह्मचर्य इन सबही के होता है—अथवा इनमेंसे कोई अपना आश्रय छोडि भागै या घर बसावै—यद्वा शास्त्रीय मरणकेधर्मोंसे भागै तिसके प्रायश्चित्तहैं—अथवा मरने के प्रसंगमें अशास्त्रीय मरण पर गृहस्थी आदि कोईभी उपस्थित होय या निपट मरजाय तिसके भी ॥

(ब्रह्मचारिणोऽवकीर्णित्वस्य प्रायश्चित्तं)

अवकीर्णीभवेद्गत्वाब्रह्मचारीतुयोषितम्। गर्दभंपशुमालभ्यनैऋतंसविशुद्ध्यति २८०

अर्थः—ब्रह्मचारी योषिता पास जाय तो अवकीर्णी होय० सो नैऋत गदहा पशु को आलभन करिके शुद्ध होता है=अर्थात्—ब्रह्मचारी दो तरह का होता है एक उपकुर्वाण विद्यार्थी दूसरा नैष्ठिक जो सदा के लिये ब्रह्मचर्य बना राखे यह आचार मर्यादा परिपाटी में उसके नियमों सहित वर्णन होचुका तहां देखो—यहां जो कोईसा ब्रह्मचारी उन्हीं नियमोंकर भंग करै तिसने व्रत का लोप किया कहाता है उसका एक निन्दा के साथ जुदा नाम अवकीर्णी धरा गया है क्योंकि सबमें

प्रधान व्रत वीर्य धातु का रोकना है उस धातु का निकासि डारना अवकीर्ण (विथोरि देना खिंडाइ देना फैलाइ देना यही अवकीर्ण) कहाता है जिसने धातु का अवकीर्ण किया सो अवकीर्ण ठहिरा इसीलिये योगीश्वर ने मूल श्लोक में कहा है कि–ब्रह्मचारी होके यदि किसी भी योषिता नारी से गमनकरै सो अवकीर्णी होता है वह निर्ऋति देवता के निमित्त गदहा पशु का बलिदान करिके उसका नैर्ऋत नाम याग करै तब शुद्ध होय॥ २८०॥

२८०अधिकोक्तिः–गदहा नामसेही पशु समझा जाता फिर उसके साथ मूल में पशुक्यों कहागया॰इसका यह तात्पर्यहै कि(अथपशुकल्पइत्याश्वलायनादिगृह्योक्त पशुधर्मप्राप्त्यर्थं) आश्वलायन आदि के गृह्यसूत्र में इसी रीति से कहागया है कि अथपशुकल्पः जहां इतना लिखा देखा और समझागया कि गर्दभयाग करनाचाहिये सो उस प्रकार के पशुधर्म्म की पहुंच समझी जानेके लिये दुबारा पशु शब्द दिया गयाहै॥ ०॥ गर्दभयाग जो करना बताया सो वनके समीप चौराहेपर लौकिक अग्नि से करना चाहिये क्योंकि वशिष्ठ ने साफ साफ यही कहा है कि=ब्रह्मचारी स्त्रियमुपेयादरण्ये चतुष्पथे लौकिकेऽग्नौरक्षो दैवतंगर्दभंपशुमालभेतेति वशिष्ठः= अर्थातब्रह्मचारी यदि स्त्रीके पासजाय तो वनमें चौराहेपर लौकिक अग्निमें राक्षस देवके निमित्त गदहा पशु को होम करै (क्योंकि गदहा पशु का देवता राक्षसही होते हैं वे उसी अपने पशु के मांससे प्रसन्न होते हैं उन्हीं राक्षसों का प्रसन्न करना आवश्यक ठहिरा कि जिससे फिर आगे को अपनी राक्षसी प्रकृतिका असर ब्रह्मचारी पर कभी न उतारैं जिससे उसे स्त्री संगम की इच्छा उत्पन्न होसक्ती हो॰आलंभन वेदोक्त वध कहाता है उसी से फिर होम याग किया जाता है यह तात्पर्य समझलेना) इसी याग में यह और विधान है कि रात्रि में करना चाहिये और गदहा एक आंखि वाला काना लेआना चाहिये=तदाह मनुः=अवकीर्णीतुकाणेनरासभेन चतुष्पथे पाकयज्ञविधानेनयजेतनिर्ऋतिंनिशि=अर्थात–मनुका यह वचन है कि अवकीर्णी ब्रह्मचारी काने गदहासे चौराहेमें जाकर वहां रात्रिमें निर्ऋति जो राक्षसों का प्रधान अधिपति देवताहै तिसका यज्ञकरै पर कच्चे मांससे न करै किन्तु पाकयज्ञ के विधान से करै जिसमें निर्ऋति अच्छेप्रसन्न होयँ॥ ०॥ पशुयज्ञका वालक न बनि परै तो खीरहीसे होम करै यह इसका अनुकल्प है क्योंकि आगेके वशिष्ठ के वचन से यहबात सिद्धहै=यदाहवशिष्ठः=निर्ऋतिंवाचरुंनिर्वपेत्तस्यजुहुयात् कामायस्वाहा कामकामायस्वाहा निर्ऋत्यैस्वाहारक्षोदेवताभ्यःस्वाहेति=अर्थात–निर्ऋतिपशु नहो

तौ विकल्प से निर्ऋति के नामसे चरु खीरही बोवै किन्तु निर्ऋति के नामसे होमै कि जैसे स्वाहांतचारक मंत्र में लिख दियेहैं तिनसे होमै॥ ०॥ श्रीमन्मिताक्षराकार कहितेहैं कि यह तपके बिना केवल यागमात्र कहा सो उसकेलिये समझना जो पर वश कहीं घिरा फँसा असमर्थ होते अवकीर्णी हुआहो. अन्यथा जो समर्थ ब्रह्मचारी अवकीर्णी हुआ होय तिसके लिये गौतम का कहा पशुयाग या चरुहोम तपस्या सहित उचित होगा=यदाह गौतमः=गर्दभेनावकीर्णी निर्ऋतिंचतुष्पथेयजेत तस्या जिन मूर्ध्ववालंपरिधाय लोहितपात्रे सप्तगृहान्भैक्ष्यंचरेत्कर्माचक्षाणः संवत्सरेण शुद्ध्यतीति=अर्थात्–अवकीर्णी होजाय सो गदहा से निर्ऋति देवको चौराहे परपूजै किन्तु पूर्वोक्त रीति से होम करै फिर उस गर्दभ के बचेहुये पूरे चमड़े को बालऊपर ही रखिकर पहिर ओढ़िके ताँबे के पात्र में सात घरों से अपना कर्म सुनातेहुये भिक्षा मांगाकरै तब एक पूरे वर्ष भरमें शुद्ध होता है=और उसके साथ त्रिकाल स्नान और एकही बार सायंकाल भोजन करने का नियम भी अग्रोक्त मनुके वचन से जोड़ना=यदाह मनुः=एतस्मिन्नेनसिप्राप्ते वसित्वागर्दभाजिनम् सप्तागारान्चरेद्भैक्ष्यं स्वकर्मपरिकीर्तयन् तेभ्योलब्धेनभैक्ष्येणावर्तयन्नेककालिकम् उपस्पृशंस्त्रिषवणमब्दे नसविशुद्ध्यति=अर्थात्–इस अवकीर्ण पापके प्राप्त होने में वह अवकीर्णी गदहाका मृगछाला ओढ़िके अपना कर्म सुनाते हुये सात घरों से भिक्षा मांगते उनसे जो कुछ मिलै उसी भिक्षा से एक समय भोजन का वर्तावा करतेहुये और हररोज त्रिकाल स्नान करते हुये एक वर्षसे विशुद्ध होता है (यह एक वर्ष की तपस्या वाला प्रायश्चित्त भी सिर्फ उसके लिये आवश्यक है जिसने किसी ऐसे अश्रोत्रिय ब्राह्मणकी भार्या में संगम किया हो जो विद्या आदि किसी प्रतिष्ठा से विख्यात नहीं था या ऐसे किसी श्रोत्रिय बनियां की भार्या में संगम किया हो जो पढ़ा गुना भगत वा औरही किसी प्रतिष्ठासे विख्यात बनियां हो) इसका तात्पर्य भी आगे देखा॥०॥ जिस ब्रह्मचारी ने ऐसी कोई ब्राह्मणी या क्षत्राणी संगम करी हो कि जो स्त्रियां जिन अपनेही उत्तम गुणसे विख्यातहों अथवा यद्यपि स्त्रियां अपने गुणसे विख्यात नहीं परन्तु श्रोत्रिय ब्राह्मणकी और श्रोत्रिय क्षत्री की भार्याहों तिनहींमें अवकीर्ण हुआ.होगतो उस ब्रह्मचारी अवकीर्णी के लिये क्रमसे तीन वर्ष और दो वर्ष का तप चाहिये अर्थात् तीनवर्ष उस ब्राह्मणी केसबबसे जो केवल अपने गुणसे विख्यात वा विख्यात पतिकी भार्या हो और दो वर्ष उस क्षत्राणीके सबबसे जो केवल अपने गुण से विख्यात वा विख्यात पति की भार्या हो• व्यवस्था ठीक यही है और इसके

सवतात्पर्य अगिले शंख औरलिखितके एकहीवचनसे उत्पन्नहोतेहैंसमुझो=यथाहतुः शंखलिखितौ=शूद्रायांवैश्यायामवकीर्णः संवत्सरंत्रिषवणमनुतिष्ठेत् क्षत्रियायांद्वेवर्षे ब्राह्मण्यांत्रीणिवर्षाणीति=अर्थात्—पर्देदार बनेनी में अवकीर्ण होय सो एक संवत् पर्यन्त त्रिकाल स्नान पर आरूढ़ होय एवं पर्दा में रहिनेवाली क्षत्राणी में अवकीर्ण हुआ होय सो दो वर्षभर त्रिकाल स्नान और पर्दावाली ब्राह्मणीमें अवकीर्ण हुआ हो सो तीनि वर्ष भर त्रिकाल स्नानसाधे (त्रिकाल स्नानके साथ जो पशुयाग और भिक्षा आदि ऊपर कहिचुके सो सब इसमें भी समझि लेनी ॥ ० ॥ अंगिरा का यह वचन सबसे जुदा है कि=अवकीर्णनिमित्तन्तुब्रह्महत्याव्रतंचरेत् चीरवासास्तुषण्मासांस्तथामुच्येतकिल्बिषात्=अर्थात्—अवकीर्ण होजाने के निमित्त में भी ब्रह्महत्या के समान व्रत एक छमाही भर चीरवासा होकर (भोजपत्र आदि वृक्षोंके बक्कल पहिन कर) आचरै तब उस पापसे छूटै ॥ सो यह छमाही भी उसी प्रकार उसी विषय पर समझनी कि जिस विधिके साथ जिस विषय पर ऊपरले मनु गौतम आदि वचनों में एकवर्ष भर तप करना कहिचुके किन्तु भेद इतना है कि यह छमाहीवाला वर्षसे आधा व्रत उस दशामें करवाना कि जब कोई ब्रह्मचारी अपनी इच्छाके विना कुचाल स्त्री का मोहित किया हुआ लोभमें आकर अवकीर्ण हुआहो और ऊपरले पूरे वर्षभर के प्रायश्चित्त उसके हैं कि जिसने संगम करनेका उद्योग आपही किया हो और उनसे पहिले जो मूलश्लोकसे आदि लेकर सिर्फ तप के विना पशुयागही करना कहिचुके सो उसके हैं कि जब कोई ब्रह्मचारी अपनी स्वाधीनता के विना कहीं घिरा फँसा परवश होकर अवकीर्ण होय॥ ० ॥ जब कोई ब्रह्मचारी किसी वर्णकी अत्यन्त स्वैरिणी में अवकीर्ण होजाय तब ये प्रायश्चित्त नहीं किन्तु छोटे प्रायश्चित्त हैं वे भी शंख लिखित दोनों भाइयोंने जुदे करिके कहे हैं=यदाहतुःशंखलिखितौ=स्वैरिण्यांवृषल्यामवकीर्णः सचैलस्नानमुदकुंभं दद्याद्ब्राह्मणाय • वैश्यायांचतुर्थकालाहारो ब्राह्मणान्भोजयेत् यवसभारंचगोभ्योदद्यात् •क्षत्रियायांत्रिरात्रमुपोषितोघृतपात्रंदद्यात् • ब्राह्मण्यांषड्रात्रमुपोषितोगांचदद्यात् • गोष्ववकीर्णःप्राजापत्यंचरेत् • षंढायामवकीर्णःपलालभारंसीसमाषकंचदद्यादिति=अर्थात्—वृषली शूद्रिनी जो स्वैरिणी होगई हो तिसमें ब्रह्मचारी जाकर अवकीर्ण हुआ होय सो सचैलस्नान करिके जलका भरा घट ब्राह्मणको दानकरै इसीसे शुद्ध होजाताहै• एवं स्वैरिणी बनेनीमें अवकीर्ण होजाय सो दिनभर उपवास करिके चौथे कालमें भोजन करै दूसरे दिन ब्राह्मणोंको जिमावै और घासका एक भार (पलानांद्वेसहस्रेतुभारमे

कंप्रकीर्तितं) अर्थात् बाजारू खांड आदिकी तौल में पल्ला जो तीन साढ़े तीन मन तक देशभेदसे प्रसिद्ध होता है तिसके अनुमान भर घास भी गौओंको देवै• एवं स्वै-रिणी क्षत्रिया ठकुरानी में अवकीर्ण होजाय सो तीन दिन रातिका उपास करिके घीका भरा पूर्णपात्र दानकरै• एवं स्वैरिणी ब्राह्मणी में अवकीर्ण होजाय सो छै दिनका उपवास करिके गोदान भी करै किन्तु चकारके ध्वन्यर्थसे पहिले ब्राह्मणों को भोजन करावै तिस पीछे गोदान करै• एवं यदि कोई ब्रह्मचारी विद्यार्थी आदि जाकर गौओंकी योनिमें अवकीर्ण हुआ होय सो बारह दिनका प्राजापत्य व्रत आ-चरै तब शुद्धहोय• एवं षंढा नपुंसकी नारी कि जिसके योनिका आकार पूरा पूरा नहीं होता है कि जिसमें गर्भकी धारणा न होसके इसीसे वह नारी भी षंढा अर्थात् हिजरी कहाती है तिसमें यदि कोई ब्रह्मचारी जाकर बिगड़े सो एकभार मात्र धान या कोदोंका पयार और एक मासाभर सीसा या रांगा दानकरै ॥ ० ॥ अवकीर्णी के प्रायश्चित्त जो कुछ मूलश्लोकसे लेकर यहाँ तक वर्णन हुये सो सब तीनों वर्णों के ब्रह्मचारीको समान हैं अर्थात् एकसां समझिलेना चाहैं ब्रह्मचारी ब्राह्मण या क्षत्री या वैश्यही क्यों न हो प्रायश्चित्त में न्यूनाधिक भेद न होगा—इसका प्रमाण भी शांडिल्यमुनिका वचन है=यदाह शांडिल्यः=अवकीर्णीद्विजोराजा वैश्यश्चापि खरेणतु इष्ट्वाभैक्ष्याशिनोनित्यं शुद्ध्यत्यब्दात्समाहिताः=अर्थात्—अवकीर्णी ब्रह्म-चारी चाहैं विप्र या क्षत्री या वैश्य भी कोई हो सब खर पशु से यज्ञ करिके नित्य प्रति भिक्षा मांगि खायाकरैं तौ समाहित रहिते एक वर्षभर में शुद्ध होतेहैं अर्थात् समाहित सावधानीसे न रहिकर वर्षके भीतर प्रायश्चित्तके बीचमें भी फिर किसी दिन अवकीर्ण होनेलगे तौ उस प्रायश्चित्त से भी शुद्ध न होगा (यहां तक तौ स्त्रीके संभोग से अवकीर्ण होने का चर्चा है अब आगे स्त्री के विना भी बिगड़ने का चर्चा होगा ॥ ० ॥अथस्त्रीसंभोगंविना।पिवीर्यस्कंदनप्रायश्चित्तं—जब कोईब्रह्मचा-री स्त्री संगम के बिना भी कामदेव की प्रबलता से राति या दिन में और सोते या जागते हुये वीर्य धातु को छोड़ै तिसके लिये वशिष्ठ ने केवल पूर्वोक्त यज्ञही करना कहा है=यथाह वशिष्ठः=एतदेवरेतसःप्रयत्नोत्सर्गेदिवास्वप्नेचव्रतान्तरेषुचैवमिति=अ-र्थात्—यही नैऋत याग जो पहिले प्रायश्चित्त में कहिचुके सो अंगों के उपाय से भी वीर्य्य की हानि करदेने में और दिन में और स्वप्न मे भी वीर्य निकसिजाने पर करना• और व्रतान्तरों मे भी इसी प्रकार अर्थात् कृच्छ्र चांद्रायणआदि व्रत प्राय-श्चित्तों में जहाँ तहां ब्रह्मचर्य्य साधन करने को अतिदेश किये गये हैं उनके बीच

में भी यदि सोते वा जागते किसी दशा में वीर्य का अवकीर्ण होय तौभी पूर्वोक्त रीति से नैऋत यागही करै=परंतु=सोते समय अपनी इच्छाविना दैवयोगहीसे वीर्य गिर जाय तो फिर उक्त नैऋत याग नहीं किंतु मनुका कहा प्रायश्चित्त करै=तदाह मनुः=स्वप्नेसिक्त्वाब्रह्मचारीद्विजःशुक्रमकामतः स्नात्वार्कमर्चयित्वात्रिःपुनर्मामित्यृचजपेत्=अर्थात्—द्विजाती मात्र किसी वर्णका ब्रह्मचारी स्वप्नेमें निज इच्छाके विना वीर्यको सींचिके प्रातःकाल स्नान करिके और सूर्यकी यथोक्त अर्चा करिके तीनि वार (पुनर्मास) इत्यादि ऋचा जपै• इसीसे शुद्ध होजाता है॥ यहां तक ब्रह्मचारी का प्रसंग था अब नीचे वानप्रस्थ आदि जो ब्रह्मचर्य से रहिते हैं तिनका वर्णन किया जायगा=परन्तु ब्रह्मचारी अवकीर्णी होजाने के प्रायश्चित्त जो कुछ ऊपर लिखेगये सो सब उन स्त्रियों के संभोग में समझना जो गुरु की दाराओं से उपराल्लू अगम्याहों और उनसे भी उपराल्लू अगम्याहों जिनका चर्चा गुरुदाराके समान कहि कर २३१ दोसौ इकतीस मूलश्लोकसे लेकर दोतीन अधिकोक्तों में वर्णन होचुका है-क्योंकि उन स्त्रियोंके भोग मध्ये बहुत बड प्रायश्चित्त हैं जो बारह वर्ष को आदि लेकर कई भाँति से दर्शाये गयेथे ब्रह्मचारीको भी उन स्त्रियोंके संगमसे वेही बहुत बड़े प्रायश्चित्त बल्कि उनसे भी दुगुने करने होंगे—क्योंकि बहुत बड़ा पाप जो बारह वर्ष आदिके व्रतोंसे शोधन होने योग्यहो सो इस छोटेसे अवकीर्णी वाले प्रायश्चित्त से मिटिजाना संभव नहींहै और यह भी नहीं कहिसक्ते हैं कि खास कर ब्रह्मचारी के लिये यही छोटासा प्रायश्चित्त कहागया है इससे बड़ा उसको कहीं भी न चाहिये—क्योंकि गृहस्थीसे उपराल्लू आश्रमोंको दुगुने आदि प्रायश्चित्तोंका अधिकार ब्रह्महत्याके प्रकरणमें दर्शित होचुका है—और यहभी नहीं कि ब्रह्मचारीको अगम्यागमनका प्रायश्चित्त जुदा करना चाहिये क्योंकि ब्रह्मचारी को स्त्रीमें अवकीर्ण होनेका प्रायश्चित्त अगम्यागमनके भीतरही समझा गया है इससे कि उसको सदा ब्रह्मचर्यसे रहिना चाहिये॥ २८०॥ इसी अधिकोक्तिका बचा हुआ फाजूल पाठ नीचे जुदा भी स्थापन किया जायगा॥ २८०॥

(अथवानप्रस्थादीनां ब्रह्मचर्यखंडने संन्यासादि व्रतभंगेच ब्रह्मचारि प्रायश्चित्तातिदेशः)

वानप्रस्थके सब धर्म सातवें परिच्छेद में पैंतालिस मूलश्लोकसे वर्णन होचुके हैं उसी वानप्रस्थ या संन्यासी यती आदि किसी और पूरे तपस्वीका ब्रह्मचर्य खंडित

हो जाय अर्थात् वीर्यका अवकीर्ण होजाय तहां उन्हीं सब रीतोंसे ब्रह्मचारी वाले प्रायश्चित्त करने होंगे कि जैसे कई भेदोंसे ऊपर वर्णन होचुके परन्तु इनको कुछ अधिकताके साथ करने होंगे=तदाह शांडिल्यः—वानप्रस्थोयतिश्चैवस्कन्दनेसतिकामतः पराकत्रयसंयुक्तमवकीर्णिव्रतंचरेत्=अर्थात्—वानप्रस्थ और यती संन्यासी और चवव के ध्वन्यर्थसे अन्य प्रकारके तपस्वी लोगभी कामदेवके (स्कन्दन में) खिंडि जाने में (चाहैं स्त्री संभोग द्वारा या इसके विनाही खिंडि जाने में) सर्वत्र सब तरह का अवकीर्णी ब्रह्मचारी वाला ब्रत ये भी आचरैं पराकों के तीया सहित अर्थात् ब्रह्मचारीकी अपेक्षा इनको तीनि पराक ब्रत फालतू करने चाहिये क्योंकि इनका दर्जा भी ब्रह्मचारीसे बडाहै—परन्तु पापकर्मकी व्यवस्था सब इनके लिये भी ऊपर की अधिकोक्ति में विचारना ॥ ० ॥ गार्हस्थ्यपरिग्रहेच—जब कोई संन्यासी (वा नैष्ठिक ब्रह्मचारी) या वानप्रस्थ अपने सन्यास आदि आश्रमको छोडिकर भागेहुये गृहस्थी बनिजायँ तिनका प्रायश्चित्त भी संवर्तने प्रकाश किया है=यदाह संवर्तः=संन्यस्यदुर्मतिःकश्चित्प्रत्यापत्तिंचरेद्यदि सकुर्यात्कृच्छ्रमश्रांतःषड् मासान्प्रत्यनन्तरम=अर्थात्—जब कोई कुबुद्धी पहिले संन्यासीहोकर पीछे उसी छोड़े हुये गृहस्थकी फिर प्रत्यापत्ति संग्रह करै तिसको यह चाहिये कि वह गृहस्थी में अश्रांतही किन्तु टिके थँभे विनाही विश्राम लेनेसे पहिले छै महीने भर अनन्तर कृच्छ्र ब्रत साधै कि जिसके वीच कभी अन्तर न परने पावै तिससे शुद्ध होकर (अगिले पराशरके कहे जात कर्म्म आदि संस्कार करिके) फिर गृहस्थी में शामिल रहिसक्ता है=तथाच पराशरः=यःप्रत्यवसितोविप्रोप्रव्रज्यातोविनिर्गतः अनाशकोनिवृत्तश्चगार्हस्थ्यंचेचिकीर्षति सचरेत्त्रीणिकृच्छ्राणित्रीणिचांद्रायणानिच जातकर्मादिभिःसर्वैःसंस्कृतःशुद्धिमाप्नुयात्=अर्थात्— पराशर ने इस नियम को इस रीति से दृढ किया है कि जो कोई विप्र सन्यासी होके संन्यास धर्म से निकसि कर उस आश्रम से (प्रत्यवसित) गिर जाय॰ या जिसने बहुत दिनों के लिये अनाशक निराहार ब्रत धारण किये हों तिनको झोंक न सहिकर वीचही में लौटि परै अर्थात् ब्रत छोड़ि के आहार करने लगे॰ इत्यादि कोई भ्रष्ट धर्मी संन्यासी आदि गृहस्थ आश्रम लेने की इच्छा करै सो पहिले तीनि कृच्छ्र प्राजापत्य करै फिर तीनि चांद्रायण करै (ये दोनो ब्रत उक्तोक्त संवर्त वाले छमाही कृच्छ्रके साथ विकल्पसे बदल किये जातके हैं अर्थात् उन एकही को करै या इन दोनों को करै) तिनपीछे जातकर्म आदि सब कर्मों से उसी तरह संस्कार करावै कि जैसे बच्चे का जन्म होने बादि किये जाते हैं

क्योंकि इसका भी यह नया जन्म है तिससे सब संस्कारों से शुद्ध होकर गृहस्थ में शामिल रहिने योग्य होजायगा—यह लाचारी दर्जे का निर्वाह कहा गया है कि जिससे संसारी व्यवहार मात्र चल सके— अन्यथा—पारलौकिक फल भोग में यह पाप नहीं मिटता है इस बातका प्रमाण भी वशिष्ठ का अग्रोक्त वचन है= यदाह वशिष्ठ: (यस्तुप्रव्रजितोभूत्वापुनः सेवेतमैथुनं षष्ठिवर्षसहस्राणिविष्टायांजायतेकृमि:) अर्थात्—जो कोई संन्यासी आदि होकर पीछे फिर मैथुन का जोड़ा सेवै वह परलोकों में साठि हजार वर्ष तक विष्टा में कृमि का जन्म धरता है (इसके मध्ये २२६ दोसौ छब्बीस का मूल श्लोक भी देखो)=यहांजो पराशर के वचन में केवल विप्र शब्द है सोभी अपनी प्रधानता से तीनों वर्णों का उपलक्षण है क्योंकि इस व्यवस्था में ब्रह्मचारी के समान तीनों वर्णों के संन्यासी को प्रायश्चित्त एकसाँ हैं कुछ वर्णों के भेदसे न्यूनाधिक नहीं किये जायँगे यह समझि लेना ॥ इनकेसिवाय कुछ ऐसे भी संन्यासी आदि भग्न व्रत होते हैं जो प्रायश्चित्त करिके भी गृहस्थी में शामिल करलेने योग्य नहीं होते तिनका वृत्तान्त आगे देखो ॥ ० ॥ अथामरण संन्यासिव्रतभंगस्यप्रायश्चित्तं=तदाहयमः= जलाग्न्युद्बंधनभ्रष्टाःप्रव्रज्याऽनाशकच्युताः विषप्रपतनप्रायाःशस्त्रघातच्युताश्चये नैवैतेप्रत्यवसिताःसर्वलोकबहिष्कृताः चांद्रायणेनशुद्ध्यन्तितप्तकृच्छ्रद्वयेनच=अर्थात्—जे कोई संन्यासी वानप्रस्थ आदि तपस्या कियेपीछे अति बूढ़ा होजाने पर अथवा बीचहीमें किसी भयानक रोगशिथिलता आदि हेतुसे अपना देहत्यागिदेनेका उपाय सोचिकेजलमें डूबैयाअग्निमेंकूदे या फाँसी फंदे में लटके तहां भयभीत होकर प्राणों को न देसके तिससे उसका व्रतही भ्रष्ट हो जाता है• एवं प्रव्रज्या नाम संन्यासका भेष लेकर निपट अनाशक व्रतरोपा होवै कि अन्नादि कुछ न खाकर तप करेंगे यद्वा केवल एकदो फलही खाकरसदा तप करेंगे ऐसे सदा के नियम छोड़ि भागने से भी व्रत का भंग होता है• अथवा अनाशक वह कि जिसने देह त्यागि देनेके निमित्त पर नियम लेकर आहार छोड़ि दिया हो फिर मरनेसे पहिले अन्न खाने लगा तौ यह भी अनाशकच्युत कहाताहै• एवं जिन्होंने देह त्यागने की सत्य प्रतिज्ञा से विष खाया हो या ऊँचे पर्वत पर चढ़िके नीचे गिरने गये हों या वीरों की तीरन्दाज़ी आदि निशानों के बीचमें जा पहुँचे हों और प्राणों के भयसे भागि परैं या विष खाने वादि उपायों से उलटीकर डारैं या पर्वत से गिरे विना उतरि आवैं तौ ये सब के सब ऐसे हैं कि प्रायश्चित्त करने परभी (प्रत्यवसितानकार्याः) फिर गृहस्थ में शामिल करने योग्य नहीं किन्तु

सब लोगों से बाहर किये जाते हैं॰ तथापि व्रत भंग होजाने के दोषमें यह प्रायश्चित्त उनको आवश्यक है कि एक चांद्रायण और दो तप्तकृच्छ्र करिके शुद्ध होते हैं जिससे अपने पूर्वोक्त तपही में यथासंभव लगे रहिसकें—इति शास्त्रीय मरणाच्युत प्रसंगः॥ ०॥ अथाशास्त्रीयमरणस्यैवसाक्षात्कारस्यप्रायश्चित्तं—अनन्तर जो प्रायश्चित्त कहागया तिसमें शास्त्रीय मरण का प्रसंग था जिसकी समस्या सातवें परिच्छेद में ५५ पचपन मूल श्लोक और उसकी अधिकोक्ति से प्रकाशित हुईथी उस रीति से मरने वाला सन्यासी आदि आत्मघाती नहीं कहाता वल्कि मरजाने पर निश्चय सहित समुद्यत होकर जो मरने से भागि परै तो वह सब लोगों में निंदित और प्रायश्चित्ती भी इस हेतु से होजाता है कि उसको आधे मुर्दा के समान अपवित्र जाना करतेहैं इसीका प्रायश्चित्त ऊपर कहागया—अब—उनकेप्रायश्चित्त कहा चाहतेहैं जो गृहस्थी आदि कोई अच्छे भले में किसी पर क्रोध करने आदि कारणों से अपने प्राण खोवैं तौ यह अशास्त्रीय मरना कहिलाता है क्योंकि वृथा मर जाने की आज्ञा शास्त्र में नहीं है इसीसे वह आत्मघाती भी ठहिरताहै=यथाह वशिष्ठः=जीवन्नात्मत्यागीकृच्छ्रं द्वादशरात्रंचरेत्त्रिरात्रंचोपवसेदिति=अर्थात्—जीवन्सन्॰जोकोई मनुष्य जीवते रहिने की शक्ति मौजूद होतेहुये अपने देहका त्यागीबनै अर्थात् किसी उपाय से मरजाय या मरने लगैसो बारह दिन का कृच्छ्र व्रतआचरै वा तीनि दिन उपवास करै (इसमें मरजाय लिखने से निपट मरिगया न समझि लेना किन्तु छुरी आदि शस्त्र अपने देह में घुसेरके मरने से वचिगया समझना जिस पर बारह दिनका कृच्छ्र कराया जायगा॰ इसी लिये वशिष्ठ के वचन में (आत्मत्यागी—जीवन्सन्) ऐसा अन्वय भी लगता है कि देह का त्यागी बनिके जीवता बचिजाते हुये बारह दिन का कृच्छ्र वा तीन दिनका उपवास कराया जाय) इसमें वा शब्द के विकल्प से तीनि दिनका उपवास मात्र उसके लिये समझना कि जिसने शस्त्र घुसेरिलेना आदि मरनेका काम अबतक नहींकिया सिर्फ मरजाने योग्य निश्चय मुह से कहिकर कियाहो या शस्त्र लेकर दिखलाया वा जल के पासखड़े होकर डूबने का लक्षण प्रकट किया हो इत्यादि बहुत भाँति से समझिलेना॰ इसी प्रकार मरते हुये बचि जानेको भी बहुत भाँति समझिलेनी जिससे थोड़ी बहुतपीड़ा या चोट भी आचुकी हो दृष्टान्त जैसे जल में खूब गोते खाकर बचिगया वा छुरी घुसेरि के जीवता बचिगया या विष खाकर उसके वेग में दबि जाने बादि जीवता बचिजाय वा अग्नि मे कूदि कर खाल आदि जलि जाने पर जीवता बचिगया हो

इत्यादि=तथाच मिताक्षरा (अत्राध्यवसायमात्रे त्रिरात्रं शस्त्रादिक्षतस्यद्वादशरात्रंकृच्छ्रमिति व्यवस्था)—इस व्यवस्था में यह प्रश्न बाकी रहा कि जे कोई उक्त प्रकारों से निपट मरिही गये हैं तिनके इस आत्मघात रूपी पापका प्रायश्चित्त क्योंकर होसक्ता है कौन करै किन्तु वे करने वाले आपतौ मरिगये इसका क्या उत्तर है—इसका यह उत्तरहै कि उनके पुत्रादि सपिगड जो धनके अधिकारी आदि समीपी हितकर्ता समझेजाते हैं वेही उसकी शुद्धि चाहिकर प्रायश्चित्तभोकरैंगे॰यहप्रायश्चित्तभी यमके उसी वचनसे उत्पन्न होताहै कि जो इस व्यवस्थासे अनंतर पहिले संन्यासी के व्रतभंगपर लिखिचुके यहां फिर भी लिखाजाता है कि यहां परअर्थही उसका अन्य प्रकार से लगावैंगे=यदाह यमः=जलाग्न्युद्बंधनभ्रष्टाः प्रव्रज्याऽनाशकच्युताः विषप्रपतनप्रायाःशस्त्रघातहताश्चयेनैवैतेप्रत्यवसिताःसर्वलोकवहिष्कृताःचांद्रायणेनशुद्ध्यन्तितप्तकृच्छ्रद्वयेनच=अर्थात—जे कोई इच्छा सहित जलमें डूबिके वा अग्निमेंकूदि के वा फंदा लगाइ के अपने देहसे भ्रष्ट होके गिरिजायँ अर्थात निपट मरिही जायँ अथवा विदेश में पते ठिकाने विना प्रव्रज्या अटन करते घूमते फिरते मरजायँ या किसी पर अनाशक धन्ना देकर विना खाये मरजायँ या विष खायके मरजायँ या ऊँचे वृक्षादि पर चढ़िजाकर गिरके मरजायँ (या प्रायशब्दके ध्वन्यर्थ से इसी भाँति का कोई और उपाय करिके मरजायँ) या कोई शस्त्र अपनेमारि के मर गये हैं यह इतने आत्मघाती पुरुष प्रत्यवसित नहीं होते किन्तु मुक्ति नहीं पाते और सब लोकों से बाहर किये हुये भूत प्रेतोंकी देह धरे फिरा करतेहैं परंतु एक चांद्रायण और दो तप्तकृच्छ्र व्रतों का फलपाने से शुद्ध होकर मुक्त होजाते हैं तिससे उनका पुत्रादिक अधिकारी यथोचित नारायणबलि पुत्तलविधान आदि शास्त्रोक्त क्रिया करने पीछे इन प्रायश्चित्तों को आचरैं जिससे आत्मघातियोंकी प्रेतयोनि छूटिकर मुक्ति प्राप्त होसके=अत्रोक्त आत्मघातियों के स्वरूप जो अच्छी-तरह देखना चाहो सो इस प्रायश्चित्त कांड के प्रारम्भ से आशौच के प्रकरण में ५—६—२१ पाँचवां और छठा और इक्कीसवां मूल श्लोक तथा उन्हीं तीनों अधिकोक्तों को विचारो॥ २८०॥ इसी दोसौ अस्सी वाली ऊपरली अधिकोक्ति का फालतू पाठ यह भीहै सो विषय जुदा होनेसे स्थापना भेद किया गयाहै॥ २८०॥

अवकीर्णी ब्रह्मचारी के प्रसंगसे विरले और भी अनुपातकरूपी पापोंके प्रायश्चित्त बीचमें दर्शायेगये—अब नीचे फिर अपने क्रम से प्रायश्चित्त कहेजायँगे अर्थात दोसौछत्तीस के मूलश्लोक में योगीश्वर ने (व्रतलोपश्च) यह पद कहाथा ति

सका अर्थ अनेक तरहके व्रतों का खण्डन प्रकट करता है तिसमें से कुछेक व्रत भंग ऊपर अवकीर्णत्व को आदि लेकर वर्णन होचुके और बाक़ीरहे व्रतभगों के प्रायश्चित्त आगे दोसौइक्यासी मूलश्लोक से आदि लेकर कहेजायँगे इसीलिये योगीश्वर ने व्रतलोप नाम रक्खाया कि इसमें बहुतसे अर्थों की गुंजायश पाईजाय—इसी से—यह तर्कना करनी वृथा है कि योगीश्वर ने उपपातकोंके जैसे नाम धरेथे उनमें से कितनेही नामों के जुदे प्रायश्चित्त क्यों नहीं कहे जो ४४ चवालिस परिच्छेद के द्वारा गुजारा करना परताहै—क्योंकि योगीश्वरने ऐसे अनेकार्थ नामधरे हैं जिन के कई भेद होकर जुदेजुदे नामोंसे कईभाँतिके प्रायश्चित्त मिलते हैं फिर क्योंकर उसी मुख्य नाम से प्रायश्चित्त मिलसके—इसका यह दृष्टांतहै कि जैसा उसी दोसौ छत्तीस मूलश्लोकमें (निंदितार्थोपजीवनं) यह एकनाम धरागया है इसका अर्थ मिताक्षरा में यह कियागया है कि (अराजस्थापितार्थोपजीवनं) इन दोनों का तात्पर्य यहठहिरा कि उपजीवन रोजिगार का धंधा उसभाँति का कि जिसको राजाने धर्म के अनुसार निन्दितकियाहो—सो इसभाँतिके निन्दित कियेहुये भी अनेक धन्धेहोते हैं जैसा स्त्रियों को खरीदकर बेचना लडका लड़कियोंको कहींसे लेआकर बेचना अथवा वेद शास्त्रोंकी निन्दा के द्वारा जीविका करना आदि अनेक भेद हैं तिनभेदों के जुदेजुदे प्रायश्चित्त जहाँकहीं लिखेहों सो सब निन्दितार्थके उपजीवन में गिनती होंगे जैसा आगे सुतविक्रय प्रायश्चित्तके प्रसंगमें स्त्रीपुरुषोंका बेंचना (बर्देफरोशी) भी आवेगी इत्यादि अपनी बुद्धि से समझना—यह वार्त्ता यहां विस्तार देकर इसी लिये कहीगई कि थोडी समझवाले को भी संदेह न रहै॥ अवकीर्ण होनेबिना भी ब्रह्मचारी के कुछ और प्रायश्चित्त हैं सो नीचे देखो॥

——*——

अथब्रह्मचारिणोव्रतनियमानांभंगेपिप्रायश्चित्तप्रकाशकोऽयंपरिच्छेदः एकोनषष्ठितमः (५९)॥

—※—

इस परिच्छेद में ब्रह्मचारी के उन प्रायश्चित्तों का वर्णनहोगा जो ब्रह्मचारीके व्रत भंग होजाने पर उसको करने चाहिये—अर्थात—आचार मर्यादा परिपाटी में ब्रह्मचर्य का व्रत साधन करने के अनेक नियम कहेगये थे उन्हीं मेंसे यदि कोईनियम खण्डितहोजाय जैसे मधुमांस आदि खाइलेना या जनेऊ अशुद्ध होजाना आदि के प्रायश्चित्त बताये जायँगे॥

(ब्रह्मचर्यव्रतभंगानांप्रायश्चित्तानि)

भैक्ष्याग्निकार्येत्यक्त्वातुसप्तरात्रमनातुरः। कामावकीर्णइत्याभ्यांजुहुयादाहुतिद्वयम् २८१
उपस्थानंततःकुर्यात्समासिंचत्वनेनतु। मधुमांसाशनेकार्यःकृच्छ्रःशेषव्रतानिच २८२
प्रतिकूलंगुरोःकृत्वाप्रसाद्यैवविशुद्ध्यति। कृच्छ्रत्रयंगुरुःकार्यान्म्रियतेप्रहितोयदि २८३

अर्थः—अनातुर होते सातदिन भैक्ष्य अग्निकार्य दोनों त्यागिके (कामावकीर्ण इत्यादि दोनों मंत्रों से) दो आहुतिहोमै=अर्थात—यदि कोई ब्रह्मचारी किसी रोगसे पीडित न होते हुये अपने भिक्षा धर्मको और अग्निके नैत्तिक होमको भी निरन्तर सात दिन तक न करै सो इस छोटे अनुपातक पर यह प्रायश्चित्त करै कि (कामावकीर्णोऽस्म्यवकीर्णोऽस्मिकामकामायस्वाहा१ कामावपन्नोऽस्म्यवपन्नोऽस्मिकामकामायस्वाहा२)इन्हींवेदोक्त दो मंत्रोंसे आहुतैं होमै(यद्यपि मूलश्लोकमें सिर्फ दो आहुति का भी अर्थ पायाजाताहै कि एकएक मंत्रसे एकही आहुतिकरै तथापि ऐसा नहीं किन्तु संख्याका नियम न मिलनेपर एकएक मन्त्रसे एक एक अष्टोत्तरी मालाभरि आहुतैं छोड़ै तिससे भी आहुति द्वयका अर्थ सिद्ध होजाताहै ॥ २८१ ॥

तिस पीछे (समासिंचतु—इत्यादि) इस मंत्रसे उपस्थानभी करै—अर्थात—उक्तोक्त आहुतैं देचुकने बादि (समासिंचतु मरुतः समिन्द्रः संबृहस्पतिः समायमग्निः सिंचन्तां यशसा ब्रह्मवर्चसेन—इत्यनेनमंत्रेणाग्निमुपतिष्ठेत) इस पूरे मंत्रसे अग्नि के सन्मुख खड़े होके उपस्थान पढै मद्य मांस खालेने में कृच्छ्र करना फिर शेष व्रत भी करने चाहिये=अर्थात—जिस ब्रह्मचारीने दगा धोखेसे मदिरा या मांस खाइ लिया

हो सो बारह दिनका कृच्छ्र व्रत करिके तिस पीछे अपने शेष रहे मासुली व्रतों को भी साधै ॥ २८२ ॥

गुरुका प्रतिकूल करिके उसे प्रसन्न ही करिके शुद्ध होताहै=अर्थात्—जिस ब्रह्मचारी वा विद्यार्थीने गुरुकी उचितआज्ञा न मानने आदि प्रकारोंसे कोई काम गुरु से प्रतिकूल (उसकी अपेक्षासे विपरीत) कियाहो तिसका दोष केवल गुरु के चरणोंमें शिर धरने आदि प्रकारसे प्रसन्न करदेनेसेही मिटिजाताहै उसका यही प्रायश्चित्तहै। कार्यसे भेजा हुआ मरै तौ कृच्छ्रत्रय गुरु करै=अर्थात्—यहां ब्रह्मचारीका प्रसंगथा तिससे उसका गुरुसे सम्बन्ध पाइ कर गुरुका भी प्रायश्चित्त कहिना परा कि—यदि कोई गुरु ब्रह्मचारी आदि किसी शिष्यको किसी जरूरी काम के लिये कहीं ऐसी भयाकुल अंधेरी रातिमें भेजै कि जहां चोर डाकू सर्प्प बाघ आदि प्राणहारी चिन्ह मौजूदहों और भेजा हुआ शिष्य उन्हीं प्रकारोंसे मरजाय तौ उस भेजनेवाले गुरुको तीन कृच्छ्रव्रत करने चाहिये•इसका चर्चा अधिकोक्ति में अच्छीतरह देखि लेना ॥ २८३ ॥

२८१ अधिकोक्तिः—तीनों मूल श्लोक में प्रायश्चित्तोंके चार भेदहैं इस तौरसे कि डेढ श्लोकमें एकही भेदहै फिर बाकी तीन भेदोंका सिर्फ आधा आधा श्लोक है तिनके बीच बीच। ऐसा चिन्ह लगायागयाहै उसी क्रमसें उनकी अधिकोक्तिको अब देखौ २८१ श्लोकमें ब्रह्मचारीको बीमारीके न होतेहुये सात दिन तक भिक्षावृत्ति और अग्निकी सेवा छोड़िदेने पर प्रायश्चित्त कहागया•तिसका यह ध्वन्यर्थ ठहिरा कि यद्यपि रोगी नहीं था परन्तु गुरुकी सेवा आदि कामोंकी बहुताइत में गाफिलहोके भिक्षा और अग्निकार्यको छोड़ाहो तिसको वहप्रायश्चित्त जो लिखि चुके सो करनाचाहिये—और जिसने गुरु सेवा आदिकार्य के भी न होतेहुये निरोगी होकर सात दिन तक वृथाही निज धर्म्मको छोडि दिया हो तिसको यह थोरा प्रायश्चित्त नहीं है अत्यांत वह मनुके वचनानुसार करै=यदाहमनुः—अकृत्वाभैक्षचरणमसमिध्यचपावकम् अनातुरःसप्तरात्रमवकीर्णिव्रतंचरेत्=अर्थात्—निरोगी ब्रह्मचारी सात दिन तक भिक्षावृत्तिको न करिके या अग्निको समिन्धन हीन करिके अवकीर्णी ब्रह्मचारीवाला व्रत आचरै जो २८०मूल श्लोकमें वर्णन होचुका=यहां पर—मूल में हो जानेका प्रसंगहै तिससे जनेऊ टूटिजाने वा अशुद्ध होजाने आदि मनेक बातोंके प्रायश्चित्त भी दर्शाते हैं ॥

यज्ञोपवीतनाशे तु=हारीतः=मनोव्रतपतीभिश्च तिसआज्यहुतीर्हुत्वापुन

र्यथार्थप्रतीयादसकृत् असकृत् क्ष्यभोजनेऽभ्युदितेऽभिनिर्मुक्तेवान्ते दिवास्वप्नेनग्न स्त्री दर्शनेनग्नस्वापेश्मशानमाक्रम्य हयादीनारुह्यपूज्यातिक्रमेचैताभिरेवजुहुयात् अग्नि समिन्धने स्थावर सरीसृपादीनांवधे यद्देवादेवहेडनमिति कूष्माण्डीभिस्त्रिरात्रमाज्यं जुहुयात् मणिवासोगवादीनां प्रतिग्रहे सावित्र्यष्टसहस्रं जपेदिति=अर्थात्—हारीत ने इतनी बातों के प्रायश्चित्त इकट्ठे कहे हैं कि—यज्ञोपवीत किसी प्रकारसे खण्डित होजाय तब (मनोव्रतपतीभिः इत्यादि ऋचाओं से) तीनि तीनि आहुतें असकृत् अनेकवार होमिके फिर यथार्थ रीतिसे मंत्र पढ़िके जनेऊ बदलिडारै अर्थात् यज्ञोपवीत धारण करनेका जो मंत्र प्रसिद्ध है उसीको पढ़कर पहिरै और इन्ही उक्त ऋचाओं से आहुतें उन पापोंमें भी होमै कि जब किसी असत् नीच आदिकी भिक्षा भोजन करी हो जिनका अन्न खाना ब्रह्मचारी को मने है यद्वा ब्रह्मचारी होके अभ्युदित किन्तु सूर्यके उदय होते समय सोता रहिकर उस कालके यथोचित कर्म की हानि करीहो यद्वा अभिनिर्मुक्त किन्तु सूर्य्य के अस्तकाल में निद्राके वशीभूत होके सायंकाल के यथोचित कर्मोंकी हानि करीहो या वमन कियाहो या दिन में सोगयाहो या नंगी स्त्री को देखिलियाहो या आपही नंगा सोया किन्तु सोते समय धोती खुलि गईहो यद्वा श्मशान मुर्दघट की धरती पर चला फिरी करि आयाहो या घोड़ा आदि किसी पशु यान पर सवारी करीहो यद्वा किसी पूज्य गुरु आदि का अतिक्रम (बेअदबी) करि बैठाहो तौ भी उन्हीं मनो व्रत आदि ऋचाओं से आहुतें होमै तब शुद्ध हुआ ठहिरै और होम आदि में अग्नि समिन्धन कर्म अर्थात् लकड़ी आदिका जलाना तिसके साथ किसी प्रकारके जीव स्थावर जो लकडी के भीतर या धरती के भीतर हो एक ठिकाने टिके रहिते हों या सरीसृप सांप आदि रेंगते फिरनेवालेही जलिकर मरजायँ तौ इस गफलतसे उत्पन्न हुये पापका प्रायश्चित्त यह चाहिये कि तीनि रातोंमें घी को आहुतें होमै सो इन मंत्रोंसे कि (यद्देवादेवहेडनं इत्यादि) वेदोक्त ऋचायें जो ऋग्वेदमें कूष्माण्डीके नामसे अनेक ऋचा प्रसिद्धहैं तिनसे होमै तब शुद्ध होय और जिस किसी ब्रह्मचारी ने मणि या कपड़े या गाय आदि पदार्थोंका प्रतिग्रह लेलिया होय वह सावित्री के आठ हजार मंत्र जपै यह सब हारीतने दर्शाया•इसका पहिला प्रायश्चित्त (मनोव्रतपती इत्यादि) समस्यावाली ऋचाओसे बताया तहां यह ब्योराहै कि (मनोज्योतिरित्यादि मनो लिंगाभिस्त्वमग्ने व्रतपाअसीत्यादि व्रतलिंगाभिरित्यर्थः) और भी (पुनर्यथार्थप्रतीयात्) यह कहाथा तिसका भी यहतात्पर्य है कि यदि ब्रह्मचारीका जनेऊ कुछ

विशेष खण्डित होजाय किन्तु निपट टूटिके गिरजाय या और ही कोई प्रकार ऐसा होजाय जिससे निपट विनाधारीके तुल्य समझा जाय तहां पुनर्दधार्थका यह अर्थहै कि जैसा पहिले जनेऊ हुआथा उसीप्रकारकी विधिसे पुनः संस्कार कराइके यज्ञोपवीत ग्रहण करै॰अन्यथा जब केवल अशुद्धमात्र होजाय किन्तु पूरम्पूर खण्डित न हुआहो तब उक्त आहुतियोंको होमिके जनेऊका प्रसिद्ध मंत्र पढ़िके बदलि डारै॥

यज्ञोपवीतं विना भोजनादि करणेतु=मरीचिः=ब्रह्मसूत्रंविनाभुंक्ते विरामूत्र कुरुतेऽथवा गायत्र्यष्टसहस्रेणप्राणायामेनशुद्ध्यति=अर्थात्—कांधे पर जनेऊके न होने या खण्डित होनेकी दशामें जिसने भोजन कियाहो या शंका लघुशंकासे विष्ठा मूत्र का त्याग कियाहो सो यथोक्त रीति से प्राणायाम करिके गायत्री मंत्र आठ हजार जप कर शुद्ध होताहै (इसमें भी जनेऊ का बदलना समुझि लेना) यह मरीचिमुनिने कहा—यहां तक एक साथही डेढ़ श्लोक की अधिकोक्ति पूरी होचुकी॥ २८१॥

अब दो सौ बयासी का उत्तरार्द्ध मूलश्लोकवालाअर्थ देखौ कि मद्य मांस खाइ लेने पर कृच्छ्रकरना लिखचुके सो केवल उन्हीं मांसोंकेखालेनेमें समुझना जो खरगोश आदि खाने के योग्य उत्तम जीव कहाते हैं=तदाह वशिष्ठः=ब्रह्मचारीचेन्मांसमश्नीयोच्छिष्टभोजनीयं कृच्छ्रन्द्वादशरात्रंचरित्वाव्रतशेषं समापयेदिति=अर्थात्—उत्तम पुरुषों के खाने योग्य मांस को यदि ब्रह्मचारी खालेवै तौ बारह दिन कृच्छ्र व्रत करिके तिस पीछे अपने शेष व्रत का साधन करै (इस में बारह दिन की अवधि कही जाने से यह तात्पर्य सिद्ध होता है कि ये बारह दिन अज्ञानता से मांस खा-लेने पर नियत हैं॰ कदाचित कोई जानि बूझिके मांस भक्षण करै या बिना जाने ही बारम्बार भक्षण करै सो इससेभी कठिन अतिकृच्छ्र वा पराकआदि प्रायश्चित्त साधै तब शुद्ध होय) और इसी तरह अभक्ष्य जीवों का मांस खाइ लेने मे अतिशय कठिन प्रायश्चित्त देखे जायँ यह वशिष्ठ ने दर्शाया है=फिर=उन्हीं वशिष्ठ ने रोगी होनेकी दशापर मांस खाने का विधान भी दर्शायाहै=यथा=सचेद्व्याधीयीत कामंगुरोरुच्छिष्टंभेषजार्थंसर्वंप्राश्नीयादिति= अर्थात्—वह ब्रह्मचारी यदि ऐसे रोग से व्याधित होजाय जिसकी औषधी मांस के सिवाय और कुछ न ठहिरै (दृष्टांत जैसे व[illegible] वात व्याधि मे कबूतर का मांस वैद्य बतावै इत्यादि) तो उस मांसको [illegible] खाय यदा [illegible] हो तो गुरुकी आज्ञा लेकर चिकित्सा के निमित्त में सब कुछ खाय—इसमें—सब खायका यह तात्पर्यहै कि मांस [illegible] [illegible] अभक्ष्य हो और उन्हीं से रोग शांति हो सक्ती हो तो गुरु की

आज्ञा लेकर निःसंदेह भक्षण करै और उसके भक्षण से रोग नाश होजाने बादि सूर्यनारायण को उपस्थान करै=यदाह बौधायनः=येनेच्छेच्चिकित्सितुंसयदाऽगदोभवेत्ति तदोत्थायादित्यमुपतिष्ठेतहंसःशुचिषदिति=अर्थात्—अरोगीब्रह्मचारी जिसवस्तु से चिकित्सा करनेकी इच्छा करै तिससे जब कभी वह निरोगी होजाय तबउठिके उस दोष के मिटाने को (हंसःशुचिषत्) इत्यादि वेदमंत्रसे सूर्यके सन्मुख उपस्थान पढ़ै=इन वचनों की सामान्य आज्ञा से यह भी समझि परता है कि यदि वैद्य ने रोगी से कहे विना किसी औषधी में मधु मद्य भी रोगी को खवाया हो तौ इसका दोष रोगी पर कुछ नहीं है अर्थात् रोगी ने जानि बूझिके निषिद्ध औषध जोखाई हो तिसका प्रायश्चित्त रोग मिटिजाने बादिकरै—इसके दृष्टान्तपर मिताक्षराकार ने वशिष्ठ का यह वचन भी दर्शाया है कि (अकामोपनतंमधुवाजसनेयकेनदुष्यतीति वशिष्ठस्मरणात्) जैसा वाजसनेय नामक यज्ञ में उपस्थित लोगों के आगेयदि विना मांगे चाहे मधु मद्य बँटता हुआ आकर स्वतः मिलिजाय तौ उस जगह पर लेलेने का दोष नहीं है यह वशिष्ठ ने कहा) तैसा रोग की दशा में भी यदि चाहे विना वैद्य के देने से खालेना पराहो तिसका दोष नहीं=यह ब्रह्मचारी के व्रत भंग होने का प्रसंग पाइकर थोड़े से प्रायश्चित्त यहांपर लिखे गये—किन्तु रोग होने के विना यदि कोई कुछ अभक्ष्य भक्षण करै वा सूतक आदि अशुद्धिमें किसीका अन्न खाय तिनके प्रायश्चित्त आगे अभक्ष्य भक्षण के प्रकरण में सर्व सामान्य कहेजायँ तहां देखि लेना= और=जो कदाचित् किसी ब्रह्मचारी को कुत्ता आदि काटै वा कौआ आदि छुइ जाय तिसका प्रायश्चित्त २७७ की अधिकोक्ति में देखौ तहां विशेष कर अंगिरा का वचन ढूंढौ ॥ यह दोसौ बयासी का उत्तरार्ध पूरा होगया ॥ २८२ ॥ अब दोसौ तिरासी मूलश्लोक देखौ कि उसके पूर्वार्धमें गुरुके प्रतिकूल करने का प्रायश्चित्त गुरु का प्रसन्न करना कहिकर उसी ब्रह्मचारी के प्रसंग से गुरु को भी प्रायश्चित्त करना उत्तरार्धमें कहा गया—तहां कुछ सन्देह यद्यपि नहीं है क्योंकि (कृच्छ्र त्रयं गुरुः) इतने पद का अर्थ यही है कि तीनि कृच्छ्र गुरुकरै तथापि मिताक्षरा में (कृच्छ्रत्रय) पद के ऊपर उलटी भांति खड़ी करी है तिसको भी चार पंक्ती धरे देतेहैं देखौ=यथा=तदासगुरुः कृच्छ्रादीनां प्राजापत्यादीनां त्रयंकुर्यात् नपुनस्त्रयःप्राजापत्याः तयार्शतिपृथङ्निवेशिनीसंख्याऽनुपपन्नास्यात् नचैकादशप्रयाजान्यजतीतिवदावृत्त्यपेक्षासंख्येति चतुरस्रं स्वरूपपृथक्त्वेसंभवत्यावृत्त्यपेक्षायाअन्याय्यत्वात् यदीयमुत्पन्नगतासंख्यास्यात् तदास्यादपिकर्याचिदावृत्त्यपेक्षा किन्तु

त्पनिगतेयम्अतस्तिस्रआहुतिर्जुहोतीति वस्त्वरूपपृथक्त्वापेक्षयैवत्रित्वसंख्यायत्ता युक्ता–ये पंक्तियां–केवल विद्वानोंका वाग्विनोद है वेही सोचिके देखेंगे कि इनसे क्या क्या सार निकसा–किन्तु सर्व्वजनों के समझने योग्य वही पाठ है जो ऊपर २८३ के अर्त्थ लिखि चुके और वही प्रधान अर्त्थ है–अथवा–यहां की भ्रान्ति जनक पंक्तियों से इतना सार लिया जासक्ता है कि जैसा (२७४ के उत्तरार्द्ध मूल श्लोकवाली अधिकोक्ति में कृच्छ्र शब्द के सामान्य लक्षण कहेगये थे कि) एक वर्ष छमाही से लेकर घटते घटते छः दिन तीन दिन एक दिन का भी कृच्छ्र व्रत होता है इनमें से जहां जैसे बड़े या छोटे की योग्यता समझी जाय तहां तैसाही किया जाय–सो इस व्यवस्था के अनुसार गुरु के प्रायश्चित्त में भी छोटे या बड़े कृच्छ्रों के स्वरूप यदि माने जायँ तो भी तीनि कृच्छ्रों के स्वरूप मिलि कर कोई सी बड़ी या छोटी संख्या दिनों की हो जायगी अन्यथा सीधा अर्त्थ जैसा योगीश्वरने निष्कपट प्रयोग दर्शाया तिससे तीनि कृच्छ्रों के (बारहतिया) छत्तीस दिन होते हैं तिनमे कोईसा अन्याय नहीं प्रतीत होता है• क्योंकि गुरु के लियेयह एक बड़ी ताकीद रक्खी गई है कि ऐसे प्राणहानि वाले स्थान पर शिष्य को न भेजै• फिर भी जहां गुरुने ताकीद को न सोचि कर अतिक्रम किया होय जिससे शिष्य के प्राणही नाश होजायँ•तहां ऐसे गुरुपर छत्तीसदिनका प्रायश्चित्त बहुत बड़ा नहीं है जिसके लिये अयोक्त पंक्तियों का सहारा लिया जाय जिसमें छत्तीस दिन से कुछ न्यून अवधि पाई जाय इसमें कोई सार नहीं है ॥ २८३ ॥

यह आशय भी विदित होना चाहिये कि चौबीसवां परिच्छेद को आदि लेकर यहां तक बहुधा परिच्छेदों में हिंसा के प्रायश्चित्त वर्णन होते रहे अर्थात कहीं ब्रह्महत्या कहीं नरहत्या कहीं गोहत्या कहीं नारी वध कहीं गर्भही का वध कहीं अन्य भांति के पशु आदि जीवों की हिंसा बल्कि इस दोसौ तिरासी में भी शिष्य की हिंसा उसको भेजिदेने के बहाने से दर्शाई गई–सो इन पूर्वोक्त सर्वहिंसाओं का अपवाद आगे दोसौ चौरासी मूल श्लोक से दर्शावैंगे–यद्यपि जहां जहां ब्रह्महत्या गोहत्या आदिका वर्णन किया गया तहां भी ग्रंथांतर के वचनों से अपवाद इनका स्वरूप देतेरहे हैं–परन्तु यहांपर मूल श्लोक से योगीश्वर आपही कूट दर्शावैंगे कि ऐसी अनुकामुक दशाओं में हिंसा होजाने परभी हिंसा नहीं कहाती है ॥

———— ————

(पूर्वोक्तसकलहिन्साऽपवादः)

क्रियमाणोपकारेतुमृतेविप्रेनपातकम् २८४(इत्यर्थमेव)

अर्थः—उपकार करते हुये विप्रके मरने में पातक नहीं है—अर्थात्—जहां गुरु या वैद्य आदि किसीने उसीके उपकार हेतु कहीं भेजा या उसका रोग मिटाने को वैद्य ने चिकित्सा करी हो जिससे कोई ब्राह्मण भी मरजाय तौभी कुछ प्रायश्चित्तकी जरूरत नहीं है ॥ २८४ ॥

२८४ अधिकोक्तिः—यह चौरासी का अङ्क ऊपरले दोसौ तिरासी से संबन्ध राखता है अर्थात् इसके द्वारा गुरु के प्रायश्चित्त पर (अपवाद) नामछूट सूचित करी है कि जब गुरु ने अपने कामको न भेजा हो किन्तु उसी शिष्य का उपकार सोचि कहीं भेजा हो जहां जाकर ब्रह्मचारी वा विद्यार्थी आदि कोई ब्राह्मण मरजाय तौ इस दशा में उस गुरुपर न दोष है न प्रायश्चित्त की जरूरत है—यहीचौरासी का वचन उस गुरु के सिवाय वैद्य आदि उपकारियों से भी संबन्धित है तिससे उनके भी उपकारों में मरजाने का अपवाद रूप यही अर्थ लगाया जाता है कि वैद्यक अनुसार जिस वैद्य ने किसी को कुछ औषध वा पथ्य या कोईसा अन्न आदि अपने हाथसे खिलाया वा बताया हो रोगीका उपकार चाहिकर ऐसी दशामें यदि कोई ब्राह्मण भी मरजाय तौभी वैद्य दोषी नहीं है न उसपर प्रायश्चित्तको अपेक्षाहै (इस व्यवस्थामें विप्र या ब्राह्मण का मरजाना कहा सोभी सबजीवोंका उपलक्षण मानागया कि क्षत्री आदि कोई आदमी या पशु गाय बैल घोड़ा आदि में भी जिस किसीकी भलाई चाहिकर चिकित्सा आदि कोई कर्म कियाजाय या उसीसे करवाया जाय तिसके मरजाने में भी दोष नहीं है—इसी लिये गोवध प्रायश्चित्तों के प्रकरण में (यंत्रणे गोश्चिकित्सार्थे गूढगर्भविमोचने यत्नेकृतेविपत्तिःस्यान्नसपापेर्नलिप्यते) इत्यादि अनेक वचन लिखचुके तहां देखो ॥ २८४ ॥

अमुक दशा में हिंसा का दोष नहीं लगताहै यह कहा गया इसीके प्रसंगसे यह बात भी उत्पन्न भई कि जब कोई किसीपर झूंठा पाप लगावै कि इसने मेराअमुक मनुष्य या गऊ आदि को मार डारा या अगम्यागमन किया या मदिरा पान करी इत्यादि झूंठा दोष लगाने का प्रायश्चित्त आगे देखो ॥

——*——

अथमिथ्याभिशंसनादिदोषस्यप्रायश्चित्तप्रकाश कोऽयंपरिच्छेदः षष्ठितमः (६०)॥

—*—

इस परिच्छेद में मिथ्याऽभिशंसन दोषका प्रायश्चित्त उसकेलिये दर्शावेंगे कि जिसने किसी पर झूंठा पाप लगाया हो—और उसको भी कि जिसपर झूंठा पाप लगाया जाय—इन दोनों के प्रसंग से अपांक्तेयों के प्रायश्चित्त भी सामान्य कहे जायँगे॥

(मिथ्याऽऽरोपितदोषप्रायश्चित्तं)

मिथ्याऽभिशंसिनोद्वेपात्द्विःसमाभूतवादिनः मिथ्याऽभिशस्तदोषञ्चसमादत्तेऽमृषावदन् २८५॥
महापापोपपापाभ्यांयोऽभिशंसेन्मृषापरम् अब्भक्षोमासमासीतसजापीनियतेन्द्रियः २८६॥

अर्थः—द्रोहसे झूंठ अभिशंसन कर्त्ता समाभूतवादी को दूना दोष और अमृषा कहते हुये मिथ्याभिशस्त का दोष भी अच्छीतरह लेताहै=अर्थात्—जब किसी का भाग्योदय प्रतिष्ठा की वृद्धि आदि उत्कर्ष को ईर्षा द्रोह से न सहिकर कोई द्रोही उसको झूंठा ही अभिशाप लगावै अर्थात् मनुष्यों के समाज में कोई सा बड़ा वा छोटा पाप सुनावै कि उसने ब्रह्महत्या करी या मद्यपान वा अगम्यागमन वा गोवध आदि अमुक पाप किया तो उस झूंठ लगाने वाले को वही पाप उससे दूना लगा ठहरता है जो पाप उसने मिथ्याही किसीपर लगाया—और जिसने किसीका सचा ही पाप प्रथम अगुआ बनिकर सब लोगोंके सन्मुख प्रकाश किया हो जिसपापको सबलोग नहीं जानतेथे तो भी उसपापी के और जो पहिले संचित किये पाप हैं सो इस दोषवक्ता के ऊपर चढ़िआते हैं॥ २८५॥ महापाप या उपपापों से जो कोई पराये को मृषाही अभिशंसै सो एक महीना भर जितेन्द्र होके जलही का आहार करते हुये जपमें बैठे॰यह इन्हींका प्रायश्चित्त है॥ २८६॥

२८५ अधिकोक्तिः—वक्ता के ऊपर पाप चढ़ि आते हैं इसीलिये आपस्तंब ने यह कहा है (दोषंबुध्वानपूर्वःपरेभ्यः पतितस्यसमाख्यातास्यात् परिहरेचैनंधर्मेषु) अर्थात् किसी पतित का दोष देखि जानि के प्रथम देखने वाला और लोगों के सन्मुख ख्यापन न करै और व्यवहार के वर्त्तावमें भी इसको ऐसी रीतिसे छोड़ै कि

जिससे सबके सामने ब्यौरा न कहिनापरै किन्तु अपने आपही युक्तिकेसाथ पतित से बचा रहे कि जब तक दोषीका दोष औरोंके द्वारा प्रकाश होय॥ २८५ ॥ इन के प्रायश्चित्तमें महीनाभर जल पीके जप करना जो ऊपर कहिचुके वह जप भी शुद्धवतीनाम की ऋचाओं से करना चाहिये=यथाह वशिष्ठः=ब्राह्मणमनृतेनाभिशं स्य पतनीयेनोपपातकेनवामासमब्भक्षः शुद्धवतीभिरावर्त्तयेदश्वमेधावभृथंवागच्छेत्= अर्थात्–वशिष्ठने भी ऐसा कहाहै कि ब्राह्मणको असत्य पाप जो जाती धर्मसे गिर जाने योग्य महापातक या उपपातकमें गिनती होय तिससे दूषितकरिके यह प्राय-श्चित्त करै कि शुद्धवती इसनामसे प्रसिद्ध जो ऋचा हैं तिनसे जप करै एक महीना तक जलहीके आहारसे उपवास राखै तब शुद्ध होय अथवा यह न होसके तौ जहां कहीं अश्वमेध होता सुनै तहां जाकर उसके अवभृथनाम के अन्तिमस्नान में शामिल होजाय तौ भी शुद्ध होजावे (इसमें जो महापाप और उपपाप कहा तिसके बीचमें अति पातक आदि और भांति के पाप जो कुछ होते हैं सो भी सब समुझि लेना) यह झूठा दोष लगानेकी व्यवस्था जो लिखी गई सो सब उसके प्रायश्चित्तहैं कि जहां ब्राह्मण को किसी ब्राह्मण ने महापातक दोष लगायाहो=अर्थात् जहां कोई क्षत्री आदि इतरवर्णका मनुष्य होकर ब्राह्मणपर झूठा पाप लगावे तहां उस क्षत्री आदि के लिये इन्हीं प्रायश्चित्तोंका दूना तिगुना आदि भार चढ़ायाजाय सो उस न्यायसे कि जैसा (प्रतिलोमापवादेषुद्विगुणास्त्रिगुणोदमः) यह व्यवहार मर्य्यादा में दण्ड दूना तिगुना कहागया था=और जहां क्षत्रीआदि किसी नीचे वर्णको ब्रा-ह्मण आदि ऊंचे वर्णोंके मनुष्यने झूठा पाप लगायाहो तहां (वर्णानामानुलोम्येन तस्मादर्द्धार्द्धहानितः) यह दण्डका प्रकार जैसा व्यवहार मर्यादामें लिखि चुके ति-सके अनुसार यहां प्रायश्चित्त भी कम किया चाहिये=और जिसने सच्चा दोष प्र-काश कियाहो तिसकेलिये २८५वाली व्यवस्थाके अनुरूप केवल आधाही प्राय-श्चित्त विचारा जाय• सो यह उससे आधा समुझना कि जितना झूठा पर साबित किया जाय (यह तौ महापापोंका दोष लगाने मध्ये नियम कहे गये) इन्हीं सब लिखे हुये नियमोंसे पौना पौना प्रायश्चित्त उनकेलिये विचारा जाय कि जिन्होंने अति पातक नामके पापों से दोष लगायाहो• और उनकेलिये आधा आधा प्राय-श्चित्त विचारना चाहिये कि जिन्होंने पातक लक्षण के पापोंसे दोष लगायाहो• और जिन्होने उपपातक लक्षणके पापों से दोष लगाया हो तिनकेलिये इन प्राय-श्चित्तोंका चौथाई भाग देना चाहिये क्योंकि उपपातक रूपी क्षत्री आदि के वध

का जो प्रकरण लिखागयाथा उसमें (तुरीयोब्रह्महत्यायाःक्षत्रियस्यवधेस्मृतः) यही वचन कहागयाथा कि ब्रह्महत्यारूपी महापातक का प्रायश्चित्त जो बारह वर्ष का होताहै तिसका चौथाई भाग क्षत्री के वधमें समुझना• तिससे यहां भी वही तात्पर्य है• और इस चौथाई से भी कुछ न्यून व्रत उनकेलिये लगाना कि जिन्होंने प्रकीर्ण लक्षण के पापोंसे किसीको दोष लगायाहो—इसी नियम का प्रमाण भी यह वचन है कि (शक्तिंचावेक्ष्यपापंच प्रायश्चित्तंप्रकल्पयेत) शक्ति और पाप की बड़ाई छोटाई देखिके प्रायश्चित्त लगावै ॥ ० ॥ इसके सिवाय जिसने झूंठा पाप लगाने का वारम्वार अभ्यास किया हो यहा अन्य लोगों को झूंठे साक्षी आदि बनाकर बड़ी दृढतासे महापापरूपीदोष किसी ब्राह्मणपर लगायाहो तिसकेलिये शंख और लिखितका बताया प्रायश्चित्तहै=यदाहतुःशंखलिखितौ=नास्तिकःकृतघ्नःकूटव्यवहारीब्राह्मणवृत्तिघ्नोमिथ्याभिशंसीचेत्येतेषड्वर्षाणिब्राह्मणगृहेषुभैक्ष्यंचरेयुःसंवत्सरंधौतभैक्ष्यमश्नीयुः षड्मासान्वागाअनुगच्छेयुरिति=अर्थात—दोनों भ्राता मुनीश्वरोंने कहाहै कि एकनास्तिक•कृतघ्न•कूट व्यवहारी जो मिलावकी चीजें बेचै•ब्राह्मण की वृत्ति जीविका बिगाड़ने वाला• और मिथ्याभिशंसी जो किसी को झूंठा पाप लगावै• ये सभी इतने पापी लोग छै वर्ष भर ब्राह्मणों के घर भिक्षामांगैं या एक वर्ष टुकड़े मांगे हुये धोकर खावें या एक छमाही भर गौओंके पीछे फिरिके सेवा करैं तब शुद्धहोयँ—ये बड़े छोटे तीनि प्रायश्चित्त भी अपराधकी बड़ाई छोटाई देखि के अपराधी पर आरूढ कियेजायँगे ॥ २८६ ॥ दोष लगानेवाले के प्रसंगसे उसके लिये भी प्रायश्चित्त आगे दर्शावेंगे कि जिसपर झूंठा पाप लगाया गयाहो उसका नाम अभिशस्त कहाजाताहै ॥

(अभिशस्त प्रायश्चित्तं)

अभिशस्तोमृषाकृच्छ्रंचरेदाग्नेयमेवच। निर्वपेत्तुपुरोडाशंवायव्यंपशुमेववा २८७

अर्थः—मृषा अभिशस्त भी कृच्छ्र करै वा आग्नेय पुरोडाश बोवै या वायव्य पशुही को=अर्थात—झूंठा पाप शाप जिसपर लगाया गया सो मृषाऽभिशस्त कहाता है उसको भी यह प्रायश्चित्त करना चाहिये कि प्राजापत्य नामका कृच्छ्र व्रतसाधे अथवा अग्निदेवता की प्रधानतासे पुरोडाश नामवर शाकल्य होमे अथवा वायुदेवता के नामसे वायव्य पशु॥ को तब शुद्ध होय॥ २८७ ॥

२८७ आदिकि ति:— वायव्यश्वेतंयामालभेतेति श्रुतिदर्शनाच्छागएवपशुः

गौःपशुरत्रापिज्ञायते) अर्थात् मूलश्लोक में यद्यपि वायव्य पशुका कोई नाम नहीं कहा तौभी यह श्रुति जो प्रसिद्ध है कि वायव्य पशुके नामसे सुपेद बकरा बलिदान करै) तिससे यहां भी सुपेद बकरा समझा गया है=मूलश्लोक में प्रायश्चित्तों के दो तीन भेद जो दर्शाये तिनमें कर्ताकी शक्ति और देश काल आदि का अविरोधी स-म्भव जानिके विकल्प किया जासक्ता है कि इनमें से जिस भेदका अवसर ठीकमिलै वही किया जाय ॥ ० ॥ इससे पहिली अधिकोक्ति के प्रारंभ में २८५ के बादि जो वशिष्ठ का वचन लिखा गयाथा तिसके अन्तमें वशिष्ठजीने (एतेनैवाभिशस्तोव्या ख्यातः) यह इतना पद और भी लिखिकर यह अर्थ प्रकट कियाहै कि एकमहीना जल पीकर जप करना जो झूंठे पाप लगानेवाले को कहा वही उसको भी चाहिये जिसपर झूंठा पाप लगाया जाय—सो यह एक महीनेका बड़ा प्रायश्चित्त अभिशस्त की अपेक्षा में उस दशापर आरूढ होसक्ता है कि जब उसने बहुत कालतक प्राय-श्चित्त न कियाहो तब यह बड़ा करना चाहिये क्योंकि दण्डके प्रकरणमें भी ऐसा नियम है कि (संवत्सराभिशस्तस्यदुष्टस्यद्विगुणोदमः) अर्थात् जब कोई दुर्जन एक साल भरसे कलंकित सझाव किया गयाहो और वह कोईसा अपराध करै तब उस अपराध का जो दंड होताहो सो उसको दूना किया जाय ॥ ० ॥

पैठीनसि ने यह कहा है=अनृतेनाभिशस्यमानः कृच्छ्रञ्चरेत्मासंपातकेषु महापातकेषुद्विमासम्=अर्थात्—असत्यपापसेशापित दूषित कियाहुआ पुरुषकृच्छ्रव्रत आचरै जो बारहदिनमें होताहै (परन्तु ये बारह दिन छोटे उपपापोंके अभिशाप में समझने क्योंकि)पूरेपातकोंके अभिशापमेंएक महीनाभर व्रतचाहिये औरमहापातकोंकेअभि शापमें दो महीने(इसमें भी ऊपरले वशिष्ठके वचन समान और कर्ताकी शक्ति आदि के अनुसार व्यवस्था कल्पित करनी चाहिये)=इसी प्रकार=और भी जे कोई वचन अभिशस्तकी अपेक्षा पर पायेजायँ तिनके बड़े छोटे प्रायश्चित्तों की व्यवस्था भी तात्कालिक देशकाल और शक्ति आदि के अनुसार शोचिके समुझि लेना=इसके सिवाय=मनुने एक सामान्य रीतिके प्रायश्चित्त भी दर्शाये हैं जो अभिशस्त आदि औरों पर भी आरूढ होसक्ते हैं=यथाह मनुः=षष्ठान्नकालतामासंसंहिताजपएववा होमाश्चशाकलानित्य मपंक्त्यानांविशोधनम्=अर्थात्—अपंक्त्य वे पुरुष जिनका किसी कलंकसे पाँतिमें बैठना भोजन करना आदि बंद होय ऐसे पुरुष अनेक तरह के कलंकी होते हैं उनमें एक अभिशस्त भी कुछ शोचि के गिनती किया गया है— तिन सबका विशोधन प्रायश्चित्त एक महीना भर (षष्ठान्नकालता) अर्थात् छटे

छठे दिन भोजन एक महीना भर करना अथवा यह न होसके तो संहिता का जप पादही एक महीना भर करै अथवा साकल्य सामग्रीके होमही रोज करता रहै तो शुद्धि उनकी होजाती है ॥ ० ॥ इन ऊपर की व्यवस्था में मृषा अभिशस्त के प्रायश्चित्त जो कुछ कहे गये तिनपर बहुत कुछ सन्देह कियागया है कि जब झूंठाही अपवाद लगाया गया तो फिर उसका क्या दोषहै कि जिसके लिये प्रायश्चित्त करना कहा--इसका यही उत्तर है कि यद्यपि उसका दोष कुछ इस देह से नहीं पाया गया तोभी पहिले जन्मका पाप उसके ऊपर आनिके आरूढ हुआ कि जिसने महापाप रूपी झूंठा कलंक उसपर आरोपित करवाया तिसकी शांतिके निमित्तमें प्रायश्चित्त उसपर ठहिरा० तिससे विरोध कोई सा नहीं है न शंका करने को अवकाश है-क्योंकि-जैसे घाव वा फोड़ा फुंसी आदिमें कोढ़ पर जानेका प्रायश्चित्त पूर्वजन्म कृत पापोंका उदय देखि उनकी शांतिके निमित्त कहागया था २७७की अविरोक्ति में देखो तैसा यह भी है ॥ २८७ ॥ दोसौ अस्सी मूलश्लोक से लेकर अपने नियम तोड़ि देनेका चर्चा चला आताहै तिससे निचले परिच्छेदमें भी नियम टूटिजाने के प्रायश्चित्त वर्णन होंगे कि जब किसी रजस्वला के नियम या पति का नियम या देवर जेठोंका उचित नियम टूटिजाय ॥ २८७ ॥

अथ रजस्वलाद्यगम्यागमनस्य रजस्वलायाश्च नियम भङ्गस्य प्रायश्चित्तप्रकाशकोऽयम्परिच्छेदः एकषष्ठिः(६१)

—— ❦ ——

इस परिच्छेदसे उन प्रायश्चित्तों का प्रकाश किया जावैगा जो पुरुष को रजस्वला गमन करने से या भाईकी भार्या गमन करनेमें आवश्यक है-और स्त्री जो रजस्वला होते परस्पर की शुद्धि के नियम खोवैं या कुत्ता वा चण्डाल आदि मलीन जीवों को छुइके नियम तोड़ैं तिनको आवश्यक है ॥

(अगम्यागमन प्रायश्चित्तं)

अनियुक्तो भ्रातृभार्यां गच्छंश्चान्द्रायणं चरेत्। त्रिरात्रान्ते घृतं प्राश्य गत्वोदक्यां विशुध्यति २८८॥

अर्थ--भ्राताकी भार्यामें नियुक्त किये बिना गमन करते हुये चान्द्रायण आचरने और नियोग करनेकी आज्ञा गुरु जनों से मिले बिनाही यदि कोई अपने छोटे या

बड़े किसी भाई की विधवा आदि भार्यामें गर्भदान के मनोरथ से संगम करै सो भी एक महीना भर चांद्रायण व्रत साधै तव शुद्ध होय ॥ † ॥ उदक्यामें जाइके तीनरात्रि के पीछे घृत चाटिके शुद्ध होता है=अर्थात्–उदक्या रजस्वला यद्यपि अपनी भार्या होय तिसमें संगम करिके तीनि दिन राति भर निराहार उपवास किये पीछे चौथे दिन घी खानेसे विशुद्ध होता है ॥ २८८ ॥

२८८ अधिकोक्तिः–भावजमें संगमका प्रायश्चित्त जो ऊपर लिखा सो केवल एकबारके संगम और इच्छाके विना संगम होनेपर समुझना=किन्तु=इच्छासे चाहिकर संगम या कईबार संगम कियाहो तिसके लिये शंखमुनिका कहा प्रायश्चित्त है=यदाह शंखः=परिवित्तिःपरिवेत्ताच संवत्सरंब्राह्मणगृहेषु भैक्ष्यंचरेयातांज्येष्ठभार्यांसनियुक्तोगच्छंस्तदेवकानिष्ठ भार्यांचेति=अर्थात्–परिवित्ति और परिवेत्ता भी एकवर्षभर ब्राह्मण के घरों में भिक्षामांगैं तथैव अपने जेठे वा छोटेभाईकी भार्या में नियुक्त नहीं किया हुआ संगम करै सोभी इसी प्रायश्चित्तको आचरै ॥ † ॥ रजस्वला के संगमका जो प्रायश्चित्त ऊपर कहागया सो भी एकबार और चाहे विना संगम होजाने में समझना=किन्तु=कईवारके अभ्यासमें शातातपका कहा प्रायश्चित्त है=यदाह शातातपः=रजस्वलागमने सप्तरात्रं=अर्थात्–रजस्वला का संगम करने में सात रात्रिका व्रतकरै•और इच्छासे चाहिकर एकवार भी संगम करने में यही प्रायश्चित्त है=परन्तु=जिसने कामनासे चाहिकर कईबारका अभ्यास किया हो तिसके लिये अग्रोक्त प्रायश्चित्त है=यथाह बृहत्संवर्तः=रजस्वलांतुयोगच्छेद्गर्भिणींपतितांतथा तस्यपापविशुद्ध्यर्थमतिकृच्छ्रं विशोधनम=अर्थात्–जो रजस्वलामें संगम करै या गर्भवतीमें करै या पतिता जो महापातकोंसे संयुक्त हुईहो तिसमें संगम करै तौ इसपापी के पाप शोधनेको अतिकृच्छ्र प्रायश्चित्त है=इनके सिवाय=जो शंख ने तीनि वर्ष का प्रायश्चित्त कहाहै कि=पादस्तुशूद्रहत्यायामुदक्यागमनेतथा=अर्थात्–बारहवर्ष वाले व्रतोंकी चौथाई तीनिवर्ष भर शूद्र की हत्या पर करना चाहिये तथा उदक्या रजस्वलाके संगम पर भी (सो यह तीनि वर्ष चंडाली आदि अधम जाती रजस्वला के संगमपर और चंडाली आदि से उपरान्त अन्य स्त्रियां जो रजस्वलाहों तिनमें अत्यन्त कामनासे अतिकाल तक अभ्यास राखने मध्ये भी समझि लेना ॥ ० ॥ भाई की भार्या का संगम यहांपर छोटे उपपातकों में आकर जुदा वर्णन किया गया किन्तु भ्रातृपत्नीसे ऊपर जो रिश्तेमें अधिक पूज्य होतीहै उन स्त्रियों के संगम का बहुत बड़ा प्रायश्चित्त है वह छत्तीसवें परिच्छेद में वर्णन होचुका तिससे यहां पर

भावज के सिवाय किसी और स्त्री का प्रसंग मत समझना केवल छोटी बड़ी दोनों भावजोंका प्रसंग है-तिसका यह कारण है कि आचारकांड में अरसठि उनहत्तरि के दो श्लोक मूलके देखो (अपुत्रांगुर्वनुज्ञातोदेवरःपुत्रकाम्यया सपिंडोवासगोत्रोवा घृताभ्यक्तऋतावियाव ६८ आगर्भसंभवाद्गच्छेत्पतितस्त्वन्यथाभवेत् अनेनविधिना ज्ञातःक्षेत्रजोऽस्यसुतोभवेत् ६९) अर्थ व्योरेवार इनके आचार मर्यादा में देखो कि क्षेत्रज पुत्रकी उत्पत्ति चाहिके गुरुजनोंकी आज्ञा से गर्भ रहिजाने की अवधि तक प्रत्येक ऋतुकाल में इसी विधिसे संगम करना कहा परन्तु गुरुजनोंकी आज्ञा विना यदि कोई देवर या जेठभाईकी भार्यामें चाहें सन्तानकी अपेक्षासेही संगम करैतौभी पतित होताहै यह इन्हीं श्लोकोंके अन्तमें कहिचुकेथे--तिसका प्रायश्चित्तइस कांड में आकर इसी दोसौ अट्ठासी मूलश्लोक से योगीश्वर ने प्रकट किया ॥ २८८॥ गुरुओंकी आज्ञा विना जैसी भाईकी भार्या अगम्या ठहिरी तैसी निज अपनी पत्नी भी रजस्वला होनेकी हालतमें अगम्या होतीहै तिससे इसी दोसौ अट्ठासीके उत्तरार्ध से उसकाभी प्रायश्चित्तकहा=रजस्वलाका छूना जैसा पतिको निषिद्धहै तैसाऔरभी सब लोगोंको निषिद्धहै तिन सबके प्रायश्चित्त पहिलेही तीसवें मूल श्लोकसे वर्णन होचुके तहां देखो=जैसा सब लोगोंको रजस्वला छूनेका निषेधहै तैसा रजस्वलाको भी और किसीका छूना प्रतिषिद्ध है तिससे यहांपर उसके भी प्रायश्चित्त अब व- र्णते हैं ॥ रजस्वलायांतुरजस्वलादिस्पर्शेप्रायश्चित्तं ॥ -तदाहवृद्धवशिष्ठः= स्पृष्टेरजस्वलेऽन्योऽन्यंसगोत्रेत्वेकभर्तृके ॥ कामादकामतोवापिसद्यःस्नानेनशुद्ध्यतः (असपत्न्योस्तुसवर्णयोरकामतःस्नानमात्रमितिमिताक्षरा) यतः-उदक्यातुसवर्णांया स्पृष्टाचेत्स्यादुदक्यया तस्मिन्नेवाहनिस्नात्वाशुद्धिमाप्नोत्यसंशयमिति मार्कण्डेयस्म- रणात्=अर्थात्-दोरजस्वला जो सगोत्राहों और एकही पतिकी भार्या होकरपरस्पर वह इसको यह उसको स्पर्श करैं चाहें इच्छासे चाहिकर या विना इच्छाके छुवा छाई करी होय तौ भी तत्काल स्नान करिके शुद्ध होजायँगी यह वशिष्ठजीने कहा (और जो आपसमें सौतिसौति न हों पर एकही वर्णकी दोनों स्त्रियां रजोवतीहोयं तिनके परस्पर विना चाहे यदि छुवाछाई होजाय तौ ये भी स्नानमात्र करिके शुद्ध होजायँगी यह मिताक्षराने कहा) क्योंकि=मार्कण्डेयका यह कथनहै कि जो उदक्या किसी सवर्णा उदक्याने छुगईहो तौ उसी दिन स्नानकरिके शुद्धको प्राप्तहोजायगी इसमें सन्देहनहीं=और=जो सवर्णा दोनों होतेहुये इच्छासहित छुवाछाई करैं तिनके लिये अग्रोक्त प्रायश्चित्त है=यदाह कश्यपः=रजस्वलातुसंस्पृष्टा ब्राह्मण्याब्राह्मणी

यदि एकरात्रंनिराहारा पंचगव्येनशुद्ध्यति=अर्थात्–यदि ब्राह्मणी रजस्वला होते किसी ब्राह्मणी रजस्वलासे इच्छा सहित भिड़जाय तौ एक दिन रातिका निराहार व्रत करिके पचगव्य पीनेसे शुद्ध होतीहै ॥ ०॥ जहां जुदे वर्णोंकी दो उदक्या इच्छा सहित भिड़जायं तिनके प्रायश्चित्तोंकी विशेषता वड वशिष्ठने कही है=यथाहवृहद्वशिष्ठः=स्पृष्ट्वारजस्वलाऽन्योऽन्यंब्राह्मणीशूद्रजाअपि कृच्छ्रेणशुद्ध्यतेपूर्वा शूद्री दानेनशुद्ध्यति–स्पृष्ट्वारजस्वलाऽन्योऽन्यंब्राह्मणीवैश्यजाअपि पादहीनंचरेत्पूर्वापाद कृच्छ्रन्तथोत्तरा–स्पृष्टारजस्वलाऽन्योऽन्यंब्राह्मणीक्षत्रियास्तथा कृच्छ्रार्द्धाच्छुध्यते पूर्वात्तूत्तरावतदर्द्धतः–स्पृष्टारजस्वलाऽन्योऽन्यंक्षत्रियाशूद्रजाअपिउपवासैस्त्रिभिःपूर्वा त्वहोरात्रेणचोत्तरा–स्पृष्टारजस्वलाऽन्योऽन्यंक्षत्रियावैश्यजापिच त्रिरात्राच्छुध्यतेपूर्वात्वहोरात्रेणचोत्तरा–स्पृष्टारजस्वलाऽन्योऽन्यंवैश्याशूद्रीतथैवच त्रिरात्राच्छुध्यते पूर्वातूत्तराचदिनद्वयात्•वर्णानांकामतःस्पर्शाच्छुद्धिरेषापुरातनी=अर्थात्– ब्राह्मणी और शूद्रा दोनों रजस्वला होते परस्पर भिड़ कर ब्राह्मणी कृच्छ्रव्रत करने से और शूद्री दान करनेसे शुद्ध होतीहै–यदि ब्राह्मणी और बनेनी दोनों रजस्वला होते परस्पर भिड़जायँ तौ ब्राह्मणी एक पाद हीन कृच्छ्र करै और बनेनी एक पाद कृच्छ्र करै– जहां ब्राह्मणी और क्षत्राणी दोनों रजस्वला होते परस्पर भिड़ि जायँ तहाँ आधा कृच्छ्र करिके ब्राह्मणी शुद्ध होती है क्षत्रिया उस आधे का आधा करिके– जहां क्षत्राणी और शूद्रा दोनों रजस्वला होते परस्पर भिड़ैं तहाँ तीनि उपवासों से क्षत्रिया और एक दिन रातिका उपवास करिके शूद्रा शुद्ध होती है–जहां क्षत्राणी और बनेनी दोनों रजस्वला होते परस्पर भिड़ैं तहां क्षत्राणी तीन दिन राति के उपवासों से और बनेनी एक दिन राति का उपवास करिके शुद्ध होती है–जहां बनेनी और शूद्रा दोनों रजस्वला होते परस्पर छुआछाई करैं तहां तीनि दिन रातिके व्रतोंसे बनेनी और दो दिनके व्रतों से शूद्रिनी शुद्ध होतीहै•यह पुरातन कालकी मर्यादा से वर्णों के परस्पर कामना सहित भिड़ जाने कीशुद्धि वड वशिष्ठ ने दर्शाई ॥ ० ॥ जहां कहीं कामना के विना दैव योग से ऊँचे नीचे वर्णोंकी रजस्वला परस्पर भिड़ जायँ तिनके प्रायश्चित्तों को विशेषता आगे अब कहिते हैं=यदाह वृहद्विष्णुः=रजस्वलातुहीनवर्णांरजस्वलांस्पृष्ट्वा नतावदश्नीयाद्यावन्नशुद्धास्यात् सवर्णां मधिकवर्णांवास्पृष्ट्वा सद्यःस्नात्वाशुद्ध्यतीति=अर्थात्–यदि कोई रजस्वला अपना से हीन वर्णा रजस्वला को दैव योग से भिड़ि जाय तौ भिड़ने के बादि तब तक न भोजनकरै कि जबतक रजोरक्त थँभिजाने कास्नान करके शुद्ध न होजायपही प्राय

श्चित्त है• परन्तु जो अपने वर्ण की या अपना से ऊँचे वर्ण की रजस्वला को दैव योग से भिड़ जाय सो तत्काल ही स्नान करि शुद्ध होजाय किन्तु उस को अन्तिम स्नान तक भोजन छोड़ने की जरूरत नहीं रही ॥ यहाँ तक रजस्वला ही रजस्वला से भिड़ें तिसका चर्चा था ॥ ० ॥ अब आगे चण्डाल आदि किसी अत्यन्त मलीन प्राणी से यदि कोई रजस्वला भिड़ जाय तिसके प्रायश्चित्त भी वड़े वशिष्ठ कहिते हैं=यथाह वृद्धवशिष्ठः=पतितांत्यश्वपाकेन संस्पृष्टाचेद्रजस्वला तान्यहानिव्यतिक्रम्यप्रायश्चित्तंसमाचरेत•प्रथमेऽह्नित्रिरात्रंस्यात् द्वितीयेद्व्यहमेवतु अहोरात्रंतृतीयेऽह्निपरतोनक्तमाचरेत् शूद्रयोच्छिष्टयास्पृष्टाशुनाचेत्त्र्यहमाचरेत्=अर्थात्–पतित जो महा पातकों से दूषित हो• अन्त्यज अनेक तरह के• श्वपाक चंडाल•इनसे यदि कोई रजस्वला छुइ जाय सो अपने रजोधर्म के बाकी दिवसों को भोजन बिनाबिताइके पीछे से प्रायश्चित्त करै• किन्तु रजोरक्त जारी होने के पहिले दिन छुइजाय सो तीन दिन का प्रायश्चित्त करै जो दूसरे दिन छुइजाय सो दो दिन प्रायश्चित्त करै तीसरे दिन छुइजाय सो एक दिन राति का व्रत करै इसके आगे जो चौथे दिन को आदि लेकर किसी दिन छुई होय सो एक राति ही भर का व्रत करै•और हाथ मुंह से जूठी शूद्रिणी ने यदि किसी रजस्वला को छुइलिया हो यद्वा कुत्ता ने छुइलिया हो तो यह रजस्वला दो दिन का प्रायश्चित्त करै•इन प्रायश्चित्त के दिवसों में पंचगव्य का आहार करना सुचित है कि जैसा ऊपरले किसी प्रायश्चित्त में कहि चुके हैं- परन्तु ये वशिष्ठ के कहे प्रायश्चित्त उस दशापर आरूढ हैं कि जब रजस्वला ने जानि बूझि कर स्पर्शकिया हो=अन्यथा=विना जाने दैव योग से छुइजाने में ये यथोक्त प्रायश्चित्त हैं=यथाह बौधायनः=रजस्वलातुसंस्पृष्टा चांडालांत्यश्ववायसैः तावत्तिष्ठेन्निराहारायावत्कालेनशुद्ध्यति=अर्थात्–जो कोई रजस्वला किसी प्रकार के चंडाल वा अन्त्यज वा कुत्ता वा कौआ इनसे छुइजाय सो तबतक आहार ग्रहण न करै कि जब तक रजोधर्म के बाकी दिन बिताइकर शुद्ध होजाय=परन्तु और कोई रजस्वला किसी रोग आदि के हेतु से असमर्थ होय जो कई दिन आहार के बिना न रहि सकती हो तिसके लिये इसी बौधायन ऋषि ने दूसरा कहा है=यथा=रजस्वलातुसंस्पृष्टाग्रामकुक्कुटसूकरैः श्वभिःस्नात्वाक्षिपेत्तावद्यावच्चंद्रस्यदर्शनम=अर्थात् ग्राम के निवासी मुर्गा सूअर कुत्ते आदि मलीन जीवों से छुई रजस्वला तत्काल स्नान करिके तब तक भोजन न करै कि जब तक चंद्रमा का उदय हुआ न देखै ॥ ० ॥ अब किसी रजस्वला को भोजन करते समय कुत्ता आदि कोई मलीन प्राणी

छुइ जाय तिसका प्रायश्चित्त विशेष और स्मृतियों में कहा है=यथा=रजस्वलातु भुंजानाश्वांत्यजादीन्स्पृशेद्यदि गोमूत्रयावकाहारायड्रात्रेणैवशुद्ध्यति अशक्तौकांचनं दद्याद्विप्रेभ्योवापिभोजनम्=अर्थात्–भोजन करतीहुई रजस्वला यदि कुत्ता आदिवा चण्डाल आदि किसीको छुइजाय सो गोमूत्र में पकाये जौ का दलिया खायकेछः दिन में शुद्ध होती है जो ऐसा न करसकै किसी रोग आदि के हेतु से सो कांचन का दानकरै या ब्राह्मणों को भोजन करावै (इसमें जो छःदिन दलिया खाना कहा सो भी उन दिनों से उपरान्त प्रायश्चित्त है कि जब तक रजोधर्म जारी बना रहै अर्थात् खातीहुई भिड जाने पर तत्काल स्नान करै और तब तक निराहार उपवास करै कि जबतक रजोधर्म का अन्तिम स्नान होय तिस पीछे यह छः दिन का प्राय श्चित्त है) क्योंकि ऊपर जो वृहत वशिष्ठ ने प्रायश्चित्त कहे तिनमें विना खातेही छुइ जाने पर उतने दिन भोजन का निषेध होचुका है उसकी अपेक्षा यह अग्रोक्त दोष कुछ बडा है कि इस में खाते हुये चण्डाल आदि से छुइ गई ॥ ० ॥ जहां कहीं दो रजस्वला हो भोजन करते परस्पर जूठी भिडजायँ तिनके मध्ये अग्रोक्त नियम है=यदाह अत्रिः=उच्छिष्टोच्छिष्टयास्पृष्टाकदाचित्स्त्रीरजस्वला कृच्छ्रेणशुद्ध्यते पूर्वाशूद्रादानैरुपोषिता=अर्थात्–इस वचन में पूर्वा शब्द से हर एक ऊँचे वर्णा को समझना और शूद्रा शब्द के उपलक्षण से हरएक नीचे वर्णा की समझना जो परस्पर दो भिडी हों उन्हीं में यह ऊँच नीच का विचार है कि–जब कोई रजस्वला स्त्री जूठीहोते किसी जूठी रजस्वलासे भिडि जाय तब ऊँचे वर्णा वाली उपवास करी हुई कृच्छ्र व्रत करिके शुद्ध होती है और नीचे वर्णा वाली उपवास करी हुई अन्न वस्त्रादि दानों के करने से (उपवास करीहुई का यह अर्थहै कि रजोधर्म के जोकुछ दिन वाकी रहि गयेहैं तिनमें कोरा उपवास करै फिर अन्तिम स्नान होजानेबादि प्रायश्चित्त करै ॥ ० ॥ जब कोई रजस्वला जूठे ब्राह्मणोंको स्पर्श करै तिसके लिये अग्रोक्त नियम है=यदाह मार्कंडेयः= द्विजान्कथंचिदुच्छिष्टानरजः स्त्रीयदिसंस्पृशेत अधोच्छिष्टेत्वहोरात्रमूर्ध्वोच्छिष्टेत्र्यहंक्षिपेत=अर्थात्–कथंचित किसीप्रकारसे हाथ मुह जूठे ब्राह्मणों को रजस्वला स्त्री छुइ लेवै तो यह रजस्वला यदि नीचे के अंगों में छुइ गईहो तो एक दिन राति निराहारी रहै और ऊपर के अंगों में स्पर्श हुई हो तो तीनि दिन उपवास करै ॥ ० ॥ इसके सिवाय यदि कदाचित किसी रजस्वला को कुत्ता गर्दभ आदि कोई अशुभ जीव काटि खाय या नाक से सूंघि जाय अथवा काक चिमगादर आदि कोई नीच पक्षी छुइजाय तिसका प्रायश्चित्त २७७ दोसौ

मतहत्तरि की अविक्तोक्ति में देखो तहां स्त्रियों का विशेष नामक पाद ढूंढि के उसके बीच पुलस्त्य मुनि का वचन (रजस्वलायदादष्टाशुनाजंबूकरासभैः) इत्यादि दो श्लोक हैं सो अर्थों सहित ढूंढिलेना ॥ २८८ ॥

(इति व्रतलोप प्रकरणं)

इस प्रकरण में समस्त पांच परिच्छेद माने गयेहैं अर्थात् सत्तावन ५७ परिच्छेद को आदि लेकर ६१ इकसठि परिच्छेद के अन्तपर्यंत यहाँतक सबका नाम व्रतलोप का प्रकरण कहा गया क्योंकि यद्यपि हरएक परिच्छेद में जुदेजुदे विषयों के भेद वर्णन हुये तथापि सबमें व्रत लोप होजाना ही तात्पर्य पाया गया ॥

अथसुतविक्रयाद्यनिष्टविक्रयोपजीवनाख्यस्य उपपातकस्य प्रायश्चित्तप्रकाशकोऽयं परिच्छेदः द्विषष्ठितमः (६२)

—✱—

इस विक्रय आदि खोटे विक्रयों से उपजीवन करने के पाप मिटाने योग्य प्रायश्चित्त कहे जायेंगे—आदि शब्दसे स्त्री और कन्या तथा गायपुरुष आदि का विक्रय तथा देवालय पुण्य बागीचा तीर्थ तालाब आदि का विक्रय भी समझि लेना कि जिनका बेचना प्रतिषिद्ध है ॥

(सुतविक्रयादि प्रायश्चित्तं)

२३६ दोसौ छत्तीसवें मूल श्लोकमें व्रत लोप कहा गया था तिसका प्रायश्चित्त अवकीर्णी के नाम से कहिचुके उसके प्रसंग से कुछ और भी अनुपातक रूपी पापों के प्रायश्चित्त यहां तक दर्शाये गये—अब उस बात पर ध्यान करो कि दोसौ छत्तीस के मूल श्लोक में (सुतानांचैव विक्रयः) यह संतान का बेचना एक उपपातक बताया था तिसके लिये योगीश्वर ने कोई प्रायश्चित्त नहीं दर्शाया तिसमें ४४ चवालीस के परिच्छेदमें २६५ दोसौपैंसठि मूल श्लोक और उसकी मिताक्षरोक्ति में सामान्य उपपातकों के प्रायश्चित्त जो वर्णन कियेगयेथे उनमें मनु और योगीश्वर के कहे प्रायश्चित्त तीन महीनेआदि की अवधिवाले कहेगयेहैं उन्हीं को

सुत विक्रय के पापमें यथायोग्य जोडिलेना अर्थात कर्ता की जातिशक्ति देशकाल आदि के विचारसे और इसकेभी विचारसे कि इच्छा सहित बेचा या बिना इच्छा ही बेचना परा इत्यादि भेदों की ऊँच नीच पर उनमें से बड़े छोटे प्रायश्चित्तों की व्यवस्था कल्पित करलेनी चाहिये ॥ ० ॥ परन्तु जहाँ कहीं अकाल की विपत्ति में या और किसी भारी विपत्ति में इच्छा के विनाही लाचारी से सन्तान का विक्रय किया गया हो तहां उनसे छोटा प्रायश्चित्त है=तदाह शंखः=देवग्रहप्रतिश्रयोद्याना रामसभाप्रपातडागपुण्यसेतुसुतविक्रयंकृत्वात्तप्तकृच्छ्रं चरेत=अर्थात–देवगृह यद्वा देव ग्रह• प्रतिश्रय• उद्यान• आराम• सभा•प्रपा• तडाग• पुण्य• सेतु•सुत• इनका विक्रय करिके तप्त कृच्छ्र व्रत आचरै= अर्थात–इस वचन में (देवगृह) ऐसा पाठ होने से देवता का मंदिर आदि अर्थ है और (देवग्रह) ऐसा पाठ होने से देवता के पात्र पार्षद आदि और यज्ञों के पात्र अर्थ होता है तिससे द्विपाठभी सार्थक है•प्रतिश्रय यज्ञस्थान का नाम है कि जिस जगह या जिस मकान में यज्ञ आदि किसी तरहका पूजा पाठ सत्कर्म सदा निरन्तर वा अन्तरसे होता रहिता हो किन्तु इन्हीं निमित्तों का स्थान जुदा होय सो प्रतिश्रय कहा जाता और पञ्चायती चौपार आदिभी प्रतिश्रय कहिलाता है• उद्यान बागीचा आदि• आराम किसी ऐसे उपवन का नाम है कि जिसमें राजाआदि बड़े मनुष्यों का मुसाफिरी पड़ाउ भी वृक्षादि की छाया से होता हो• सभा मर्दानी बैठक आदि कचहरी मकानों का नाम है• प्रपा पिआऊ जो निरन्तर मनुष्यों तथा पशुओं को पानी देती रहती हो• तड़ाग तालाव आदि • पुण्य कर्म जो अपना या अपनेबड़े पुरुषोंका पहिला किया प्रसिद्ध होय•सेतु जल के बंधान जो बड़े छोटे अनेक भाँतिके होतेहैं• सुत शब्दसे सन्तान मात्रका तात्पर्यहै कि चाहैं अपना बेटा होय वा पोता परपोता धेवता भतीजा आदि कोई हो इसी लिये योगीश्वरने दोसौ छत्तीस मूलश्लोक में (सुतानांचैवविक्रयः) सुतों का बहुत्व करिके कहा था कि सब तरहके सुत समझे जायँ=इसी प्रकार=गाय और कन्या बेचनेका छोटा प्रायश्चित्त है=यदाह पराशरः=विक्रीयकन्यकांगांच कृच्छ्रं सांतप नंचरेत=अर्थात–कन्या वा गाय को (उसी प्रकार की विपत्ति जैसी ऊपर लिखि चुके तिसमें) बेचिके कृच्छ्रसांतपन व्रत आचरै ॥ ० ॥ परन्तु जिसने इच्छासे चाहि कर सुतका वा कन्याका विक्रय कियाहो तिसके लिये चतुर्विंशतिमत ग्रंथ का अग्रोक्त प्रायश्चित्त है=यथा=नारीणांविक्रयंकृत्वाचरेच्चांद्रायणव्रतम द्विगुणंपुरुषस्यैवव्रतमाहुर्मनीषिणः=अर्थात–स्त्रियां चाहैं अपनी वा कहीं से हरिलाई हुई आदि

किसी प्रकारकी हों तिनको बेचनेवाला मासिक चांद्रायण व्रत करै तब शुद्ध होय और इसी प्रकार जिसने अपने वा पराये पुरुष का विक्रय किया हो तिस पर दूना प्रायश्चित्त चाहिये यह प्राचीन मनीषी लोगोंने कहा इस दशापर ४४ चवालिस परिच्छेद वाले प्रायश्चित्त भी यथायोग्य आरूढ होसक्ते हैं ॥ ० ॥ इन सब से उपरान्त जो पैठीनसिने सालभरका प्रायश्चित्त कहा तिसका आशय कुछ औरहै सोभी देखो=यदाह पैठीनसिः=आरामतडागोदपानपुष्करिणी सुकृतविक्रयेत्रिषवणस्नायी अधःशायी चतुर्थकालाहारःसंवत्सरेणपूतोभवति=अर्थात्—आराम • तड़ाग • उदपान• पुष्करिणी• सुकृत• इनमे से किसी को बेचने में विक्रेता पर यह प्रायश्चित्त है कि साल भर तक त्रिकाल स्नान करते हुये धरती पर शयन और दिनके चौथे कालमें एक वार भोजन किया करै तव शुद्धहोय—यह इतना बडा प्रायश्चित्त ऐसी दशाओं पर आरूढ है कि जिसपर कोई आपत्ति नहो किन्तु विपत्तिके न होतेहुये चाहना करिके पुत्र आदि कोई वस्तु इनमेसे बेचीहो यथा एकही पुत्र जिसके होय तिसने बेचि डाराहो या जेठा पुत्र बेचिदियाहो यद्वा कई पुत्र होनेपर भी उस पुत्र को बेचा हो जो अपने बेचिदेनेका इन्कार भी आपही करता रहा अर्थात् उसी पुत्रकी इच्छा विना उसका विक्रय करडाराहो• इसी प्रकार कन्या और स्त्री आदिकी अपेक्षा में भी समझिलेना और गायकी अपेक्षा में यह समझिलेना कि जिसने ऐसे किसी दुष्ट के हाथ गाय बेचीहो जहां जाकर खाने पीने आदिका दुख पावैगी ॥ २८८ ॥ यह भी इसी दोसौ अट्ठासी वाले मूलश्लोककी टीका वा अधिकोक्ति का शेष पाठहै तिससे इसपर भी वही अंक लगाया गया कोई मूलश्लोक इसमें नहीं है ॥ २८८ ॥

सुत विक्रयसे उपरांत योगीश्वरने दोसौ सैंतीस २३७ मूलश्लोक में (धान्यकुप्य पशुस्तेय) अन्न और सीसा रांगा आदि धातुओंकी चोरी रूपी उपपातक नामवरा था—तिसके प्रायश्चित्तभी ४६ छेयालिसवें परिच्छेद में वर्णन होचुके क्योंकि वह परिच्छेद सब छोटी मोटी चोरियों के नामसेही नियत हुआ था कि जिसमें अन्न और धातुओं तथा पशुओंकी चोरी किन्तु मनुष्योंका हरण पर्यन्त वर्णन होगया= उसी दोसौ सैंतिस में (अयाज्यानां याजनं) यह भी एक उपपातक बताया था तिस के प्रायश्चित्त यहां तिरसठि परिच्छेद से योगीश्वर आपही दर्शावैंगे बल्कि इसके साथ और भी दो तीन उपपातकों के प्रायश्चित्त ॥

अथयाज्ययाजनादिचतुर्विधोपपातकविशेषानां प्रायश्चित्तप्रदर्शकोऽयंपरिच्छेदः त्रिषष्टितमः (६३)



इस परिच्छेद में व्रात्य आदि अयाज्यों को यजन कराने वाले पण्डित कर्मकांडी का प्रायश्चित्त कहा जायगा और वेद का विप्लावन (वृथाबखेर) करने वाले वेद पाठी का प्रायश्चित्त कहाजायगा और अभिचार (मारण उचाटन आदि प्रयोग विधि) करनेवाले मंत्र शास्त्री का प्रायश्चित्त और शरणागत की रक्षा न करनेवाले धनवान् और जनवान् और शूरमा का प्रायश्चित्त कहा जायगा ॥

(व्रात्ययाजनादि प्रायश्चित्तं)

त्रीन्कृच्छ्रानाचरेद्व्रात्ययाजकोऽभिचरन्नपि। वेदप्लावीयवान्यब्दंत्यक्त्वाचशरणागतम् २८९

अर्थः—व्रात्ययाजक तीन कृच्छ्र आचरै॰ अभिचरण करतेहुये भी यही। वेदप्लावी अब्दभर जौ खाय॰ शरणागतको त्यागिके भी यही=अर्थात्—व्रात्य वेहैं कि जिन को गायत्री का उपदेश न होनेसे ४५ पैंतालिसके परिच्छेद में प्रायश्चित्त कहे गये थे उन प्रायश्चित्तों को न करनेवाले व्रात्यही रहे आते हैं तिनको यदि कोई पावा पण्डित आदि किसी तरह का यजन पूजन करावै सो इस कर्मसे उपपातकी होता है वह तीन कृच्छ्रोंको साधै तब शुद्ध हुआ ठहिरै॰ तथा अभिचार कर्म रूपी प्रयोग करने वाला पण्डित यही तीन कृच्छ्रोंका प्रायश्चित्त करै। जो कोई वेदपाठी आदि वेदका विप्लावन करै सो एक सालभर जौका भात खाकर तप करै तब शुद्ध होय॰ तथा जिस किसी समर्थ ने अपनी शरण में आये हुये की रक्षा न करिके निकासि दियाहो या उसके शत्रुओंको सौंपि दियाहो सोभी एक वर्षभर जौका भात खाकर तप करै ॥ २८९ ॥

२८९ अधिकोक्तिः=अत्रमिताक्षरायथा (यस्तुसावित्रीपतितानांयाजनंकरोति सप्राजापत्यप्रभृतीन्त्रीन्कृच्छ्रानाचरेत् तेयांचगुरुलघुभूतानांकृच्छ्रानाचरेत् तेयांच गुरुलघुभूतानांकृच्छ्राणां त्रित्वंनिमित्त गुरुलघुभावेनकल्पनीयं) अर्थात्—सावित्री से पतितोंको यजन यज्ञादि जो कोई पण्डित करावै सो प्राजापत्य आदि नामोंके तीन

कृच्छ्र आचरै तिनमें भी वड़े छोटे रूपवाले कृच्छ्रोंका तीया ३ पाप रूपी निमित्तों की वडाई छोटाई देखिके कल्पना किया जाय=और=मूल के पूर्वार्ध में अभिचार कर्म कहा तिसका अर्थ अथर्वणवेद या तंत्रके मार्ग से मारण उचाटन आदि प्रयोग समझिलेना कि जिनमें हिंसारूपी फल उत्पन्न होताहो (परन्तु हिंसाके प्रसंगसे उस भांतिकी हिंसा मत समझिलेना जो धर्मशास्त्र में छे भांति के आततायियों के कर्म विषदेना आग लगाना आदि प्रसिद्धहैं क्योंकि उस हिंसाके प्रायश्चित्त महापातकों में गिनती वहुत वड़े होतेहैं) इस बातका प्रमाण भी वशिष्ठका यह वचनहै कि(षट्स्वभिचरन्पततीति वशिष्ठः) आततायियों के छे कर्मोंमें से कोईसा अभिचार करै सो पतित होजाता है ॥ यहां केवल छोटे उपपातकों के प्रायश्चित्त हैं और मूल के पूर्वार्धमें अपि शब्दका योगहै तिसके ध्वन्यर्थसे अहीनको यजन करानेवाला पंडित और प्रेत कर्म करानेवाला पण्डित भी उसी तीन कृच्छ्र वाले प्रायश्चित्त के योग्य माने गयेहैं-तथाच मिताक्षराकाराः (अपिशब्दोऽहीनयाजकांत्येष्टियाजकयोःसंग्रहार्थः) और इसी लिये मनुका वचन भी प्रमाणमें दियाहै=यदाह मनुः=व्रात्यानांयाजनंकृत्वा परेषामंत्यकर्मच अभिचारमहीनंचत्रिभिःकृच्छ्रैर्व्यपोहति (परेषामंत्यमंत्यष्टयंताभ्यासविषयं शूद्रांत्यकर्मविषयंवाप्रायश्चित्तस्यगुरुत्वात्) अहीनोद्विरात्रादिर्द्वादशाहपर्यन्तोऽहर्गणायागः=अर्थात्—मनुने यह कहाहै कि व्रात्योंको यजन करावै या मृतकोंका प्रेतकर्म व्रात्योंके सिवाय अव्रात्योंको भी करावै या अभिचार प्रयोग करै करावै या अहीनको यजन करावै ये सब तीन तीन कृच्छ्रोंसे पाप धोय सक्ते हैं (औरोंका प्रेतकर्म जो इस वचन में कहा सो अत्यन्त और निरन्तर उसी में तत्पर होजाने पर यह तीनि कृच्छ्रका प्रायश्चित्त समझना किन्तु आपस की जरूरियात निर्वाह कराने मध्ये कभी कभी जो प्रेतकर्म कराना परै तिसपर इतना बड़ा प्रायश्चित्त सूचित नहीं अर्थात् उसमें यथा सम्भव शरीरकी शुद्धि और गायत्री का जप ही किया जाय॰ अथवा यह तीनि कृच्छ्रोंका बड़ा प्रायश्चित्त शूद्र आदि नीचजातों का प्रेतकर्म एकही दो वार करानेपर समझिलेना) और अहीनको यजन कराना जो एक उपपातक इसीमनुकेवचनमें दर्शाया गया सो दो रात्रको आदि लेकर द्वादशाह तक अहर्गण नामका एकयाग विशेष कहाताहै तिसकाकराने वाला पण्डित दोषी होसक्ताहै यहतात्पर्य समझना ॥७॥ उद्दालकनामका एकव्रतविशेष जो कठिनप्रायश्चित्तहै सोपहिले वर्णनहो चुकाहै उसीकोशातातपने इस विषय परभी दर्शायाहै=यदाहशातातपः= पतितसावित्रीकान्नोपनयेन्न नाध्यापयेत् यएतानुपनयेदध्यापयेद्वा

येहा सउद्दालकव्रतंचरेत=अर्थात–गायत्री से पतित जो व्रात्य होयँ तिनको प्रायश्चित्त करानेविनाकोई पंडितयज्ञोपवीतन करावै न पढ़ावै औरजोकई इनकोउपनय करावै या पढ़ावै या कोईसा यजन करावै सो उद्दालकनामी व्रत करै–यह कठिनव्रत उसके लिये समझना जो निषेध के प्रसिद्ध होने पर भी अपने हठ से ऐसा करै॥ ०॥ यह तीनि कृच्छ्रों का प्रायश्चित्त जो कहिचुके सो उन प्रायश्चित्तों का अपवाद निरादर छूट दर्शाता है जो ४४ चवालिस परिच्छेद में साधारण उपपातकों पर वर्णन किये गये थे तिनकी पहुँच यहां पर नहींरही परन्तु इन्हीं निमित्तों पर कि जोजो पाप यहां वर्णन होचुके=अर्थात वे चवालिस परिच्छेद वाले प्रायश्चित्त कुछकुछ बड़े हैं तिनकी पहुँच यहां उस दशापर आरूढ है कि जिस किसी पंडित ने शूद्र आदि निपट अयाज्यों को यजन वा अध्यापन कुछ कराया हो• इसमें भी जिसनेहठ से ऐसा किया हो तिसपर उस ४४ परिच्छेद वाले तीन महीना को प्रायश्चित्त चाहिये जिसने धोखा या लाचारी आदि किसी हेतुसे शूद्र आदिको यजन कराया हो तिसपर योगीश्वर के बताये २६५श्लोक वाले प्रायश्चित्त चाहिये जिन में एक महीना दूध पीना आदि कहाथा॥ ०॥ और जो प्रचेताने शूद्र याजकआदि दोषी के नाम धरने के साथ ऐसा कहा है कि=एते पंचतपोऽभ्राऽवकाश जलशयनान्यनुतिष्ठेयुः क्रमेणग्रीष्मवर्षाहिमंतेषुमासंगोमूत्रयावक मश्नीयुरितितत्कामतोऽभ्यासविषयं=अर्थात–ये शूद्रयाजक आदि सब दोषी• पञ्चाग्नि तापना१ विनाछये अवकाश में बैठना २ जल में लेटना ३ तीनों वातक्रम से ग्रीष्मऋतु में १ वर्षा ऋतुमें २ शीत ऋतु में ३ एक एक महीना भर आरोपित करैं तब उस महीना भर गोमूत्र से रँधेजौ का दलिया खाइके रहैं–सो यह प्रायश्चित्त उसके ऊपर आरूढ है जिसने हठ के साथ वार वार का अभ्यास किया होय॥ ०॥ और एक यम का वचन है कि=पुरोधाःशूद्रवर्णस्यब्राह्मणोयःप्रवर्तते स्नेहादर्थप्रसंगाद्वातस्यकृच्छ्रोविशोधनम्=अर्थात–यदि कोई ब्राह्मण किसी शूद्र वर्णका पुरोहित बने अथवा स्नेह प्रीति से या धन के लालच से ही पुरोहितों वाले कर्म का वर्ताव करै तिसको शुद्धि एकही कृच्छ्र करने से होगी–सो यह एकही कृच्छ्र अशक्त के लिये समझना जो जीविका से असमर्थ होके ऐसाकरै॥ ०॥ और एक पैठीनसिका वचनहै कि=शूद्रयाजकःसर्वद्रव्यपरित्यागात्पूतोभवति प्राणायामसहस्रेषुदशाष्टत्वोभ्यासेवेदितव्य (तदप्यकामतोऽभ्यासविषयमितिमिताक्षरा=अर्थात–शूद्रको एकहीवार यजनकरानेवाला उससे मिला हुआ सब द्रव्य परित्याग करनेसे पवित्र होताहै पर जिसने दशबार कर्मकराने

का अभ्यास किया हो सो तीनि सहस्र प्राणायामोंके भी करने में पवित्र होगा यह जानना चाहिये—यह प्रायश्चित्त उसके लिये समझना जिसने इच्छा के विनाही वारवार का अभ्यास किया हो ॥ ० ॥ और एक जो गौतमका वचन है कि=निषिद्ध मंत्रप्रयोगेसहस्रवाकश्चेदिति निषिद्धानांपतितादीनांयाजनाध्यापनात्मकेमंत्रप्रयोगे बहुशोऽभ्यस्तेप्राकृतंब्रह्मचर्यमुपदिष्टं (तत्कामतोऽभ्यासविषयमितिमिताक्षरा=अर्थात—निषिद्ध मनुष्य जो पतित आदि अनेक होते हैं तिनके लिये यजन अध्यापन रूपी मन्त्र का प्रयोग जो कोई सहस्रों वाणी से अर्थात बहुत वारका अभ्यास करै तिस को प्राकृत ब्रह्मचर्यका उपदेश गौतमने कियाहै (सो कामनारूपी हठसे अनेक वारके अभ्यास पर समझना यह मिताक्षराने कहा—यहाँतक पूर्वार्द्ध की अविकोक्ति पूरी हुई ॥ । ॥ अव उत्तरार्द्धका चर्चा है कि जो कोई वेदका विप्लावन करै या जोकोई रक्षा करने में समर्थ होते चोर आदि से उपराल किसी सज्जन को अपनी शरणामें आया देखि रक्षा न करै सोभी एक सालभर जौका दलिया खाइके तपकरै तव शुद्धहोय—यहां—वेदका विप्लावन यह कहाता है कि अनेक भांतिके खोटे अनध्याय जो होते हैं कि जिनमें वेद न पढना चाहिये दृष्टांत जैसे पर्वत या चंडाल के कान जहां पहुंचिसकैं इत्यादि स्थान भेदसे वेदका पाठ करना निषेध फिर और भी निमित्तों के उत्पन्न होने में काल भेद से भी पढनेका निषेध है फिर पर्यनुयोगरूपी मजूरीका दान देकर पढनेका निषेध है—किन्तु जहां जहां पढने का निषेध है तहां तहां पढने से वेदका विप्लावन कहाता है—पर्यनुयोगरूपी दानदेना मनुके इसवचन से भी निषिद्ध है कि (दत्तानुयोगानध्येतुःपतितान्मनुरब्रवीत) अनुयोगों को देकर पढनेवालोंको पतित मनुने कहाहै ॥ ० ॥ और एक वशिष्ठ का यह वचन है कि= पतितचांडालशावश्रवणेत्रिरात्रंवाग्यताअनश्नंतआसीरन्सहस्रपरमंवातदभ्यस्यतःपूतोभवतीतिविज्ञायते इतिएतेनैवगर्हिताध्यापकयाजकाःव्याख्याता दक्षिणात्यागाच्च पूतोभवतीतिविज्ञायते इति (तद्बुद्धिपूर्वविषयं=अर्थात—पतित•चंडाल•मुर्दाके साथी• इनके कानमें आवाजपहुंचै ऐसे स्वरसे वेद पढनेवाले तीनदिन रातिभर मौन साधेहुये अन्न कुछ न खाके रहैं और सहस्र (ओंकार) या (तत्सत) यह मंत्र अभ्यास करते हुये पवित्र होताहै यह जानागया सो इसी प्रायश्चित्त से निषिद्ध को पढाने वाले और निषिद्ध को यजन करानेवालेभी व्याख्या कियेगये कि इनको भी वहीप्रायश्चित्त करना चाहिये और इनके लिये यह विशेषता है कि मिलीहुईदक्षिणात्याग देनेसेभी शुद्ध होते हैं यह जानागया (सो यह प्रायश्चित्त जानिबूझि ऐसाकरने पर

आरूढ है ॥ ० ॥ एक यह षट्त्रिंशन्मतका वचनहै कि=चांडालश्रोत्रावकाशेश्रुतिस्मृतिपाठे एकरात्रमभोजनमिति (तद बुद्धिपूर्वविषयं=अर्थात्–चण्डालके कानोंमें शब्द पहुँचने की जगह पर श्रुति वा स्मृतिका पाठ करने वाला एक दिन रात्ति भर निराहार उपवासकरै–सो यह विनाजाने धोखासे ऐसीजगह पाठकरनेपर आरूढहै ॥०॥ जहां कहीं पढतेपढाते समय गुरु और शिष्य दोनों के बीचमें सांप मूसाआदि कोई जीव निकलाचलाजाय तहां उसी समय पढाना बन्द होकर अनध्याय होजाता है• तिसपरभीप्रायश्चित्त यमने कहाहै=यथाह यमः=सर्पस्यनकुलस्याथ अजमार्जारयोस्तथा मूषकस्यतथोष्ट्रस्यमंडूकस्यचयोषितः पुरुषस्यैवकस्यापिशुनोऽश्वस्यखरस्यच अन्तरागमनेसद्यःप्रायश्चित्तमिदंशृणु त्रिरात्रमुपवासश्चत्रिरह्नश्चाभिषेचनम ग्रामान्तरंवागंतव्यंजानुभ्यांनात्रसंशयः=अर्थात्–सांप• नेउरा•बकरा• बिलार•मूसा• ऊंट• मेंढुका• या किसी प्रकारकी स्त्री• वा पुरुष• या कुत्ता• या घोड़ा• या गदहा• ये गुरुशिष्यके बीचमें आजायँ तौ तत्कालही यह प्रायश्चित्त चाहिये सो सुनौ तीन रात्रि उपवास भी और तीन दिन अभिषेक स्नान भी करै अथवा यह न हो तौ घुटनोंसे चलते हुयेदूसरे ग्रामकी यात्रा करनी चाहिये एक योजन मात्र इसमें सन्देह न करना चाहिये ॥ २८९ ॥

इत्ययाज्ययाजनवेदप्लावनादिप्रायश्चित्तचतुष्कं ॥

अथपितृमातृसुतत्यागकन्यादूषणादिदशोपपातकप्रायश्चित्तप्रकाशकोऽयंपरिच्छेदः चतुःषष्ठितमः (६४)

——*——

इस परिच्छेद में दश ग्यारह उपपातकों के प्रायश्चित्त प्रकाश कियेजायँगे तिनमें प्रथम पिता माताका त्याग सुतका त्याग गुरुका त्याग• फिर कन्या सन्दूषणका प्रायश्चित्त• फिर• परिविन्दक याजन• उसको कन्यादान देना• कुटिलता करना• निज व्रतोंके नियम तोडिदेना• आत्मार्थ पाक बनाना• मद्यप स्त्री घरमें होना• ये भी छे प्रकार उपपातकों के प्रायश्चित्त कहे जायँगे ॥

यहांसे आगे जबतक२९० का मूल श्लोक न मिलै तबतक यह समुझिलेना कि

ये चारों परिच्छेदोंकी व्यवस्था २८९ दोसौनवासीकी अधिकोक्ति के शेष पाठमें से चली आती है क्योंकि दोसौनवासी मूल श्लोकवाली टीका बहुत लम्बी चौड़ीहै तिसमेंसे जितनापाठ मूल श्लोकहीसे सम्बन्ध रखताथा उतनेकी अधिकोक्ति उसके रही सो ऊपरके परिच्छेद में गई बाकी रहे पाठके चार परिच्छेद होंगे• तिस पीछे ६८ अरसठिके परिच्छेदमेंजाके २९०दोसौनव्वेका मूलश्लोक आवेगा यह व्यौरा केवल जिज्ञासु विवेकियों के समुझाने को लिखा गया ॥

(पितृमातृसुतगुरुत्यागप्रायश्चित्तं)

अयाज्य याजनके बादि योगीश्वरने(पितृमातृसुतत्यागःतडागारामविक्रयः२३७) ये दोसौसैंतीस मूल श्लोकमें दो उपपातकोंके नाम गिनती कियेथे पर इनके इन्हीं नामोंसे कोई प्रायश्चित्त जुदे नहीं दर्शाये–तिससे ४४चवालिस परिच्छेदवाले मनु और योगीश्वरके बताये साधारण प्रायश्चित्तोंको इनपर भी यथायोग्य जाति श- क्ति गुण निमित्तके स्वरूपों अनुसार कल्पित करलेना चाहिये=और=पिता माता सुतोंके निकासिदेने सदृश और भी अपांक्तेय पुरुषोंवाले प्रायश्चित्त जोडिलेने चा- हिये जैसा यह वचनहै कि=अकारणेपरित्यक्ता मातापित्रोर्गुरोस्तथा इत्यपांक्तेयम ध्यपाठात्तन्निमित्तमपिप्रायश्चित्तंभवति=तदाहमनुः=यद्यान्नकालतामास संहिताजप एववा होमाश्चनाकलानित्यमपांक्तानांविशोधनम=अर्थात–प्रबल कारणोंकेउत्पन्न होने विना माता पिताका त्यागनेवाला या गुरुकोत्यागि भागनेवाला भी अपांक्तेय पुरुषोंमें गिनती है तिससे जो अपांक्तेयों के प्रायश्चित्तहैं सो इस त्यागनेवाले पर भी आरूढ कियेजायँ=अपांक्तोंके प्रायश्चित्त मनु ने कहे हैं कि=यद्यान्न कालताके दो अर्थ होते हैं एक तो छठे दिन भोजनका नियम दूसर छठे समयका अर्थात एक दिन में दो समय भोजन करना प्रसिद्ध है तिस हिसाब से अढाई दिनके पांच काल भोजन तज भोजन का त्याग राखनेवादि उस तीसरे दिनकी रात्रि में भोजन करे सो छठा अन्नकाल होताहै बल्कि यही नियम सम्भव देखि परताहै क्योंकि पांच दिन कोरा व्रत करिके छठे दिन अन्नखाना बहुत दुर्घट देखिपरताहै• तथापि दोनों नियम ठीक समुझना चाहिये=मनु कहिते हैं कि एकमहीनाभर छठे दिनका या छठे समयका नियम साधैं अथवा वेद संहिताका जपहीकरैं परन्तु उस महीना भर नित्य प्रति साकल्यों से होम करते रहैं तब सब तरह के अपांक्तेयजन शुद्ध होते हैं (सब अपांक्तोंके नाम चिन्ह देखनेहों तो आचार मर्य्यादावाले कागडमें श्राद्ध प्रकरणके

बीच १२१ एकसौइक्कीस मूलश्लोकसे १२२–१२३ तक तीन श्लोकोंकी व्यवस्था देखो तहांसबकेलक्षणकथनहोचुकेहैं॥ इतिपितृमातृसुतगुरुत्यागप्रायश्चित्तं ॥ सुत त्याग का प्रायश्चित्त आगे पैंसठ६५ के परिच्छेद में दूसरी भांतिसेभी आवेगा क्योंकि योगीश्वरने २३९ मूल श्लोकमें (सुतत्यागोबान्धवत्यागएवच) इस वाक्यसे दुबारा उसका जुदा रूप कहाथा ॥

तड़ाग राम विक्रयके प्रायश्चित्त कुछ विशेषता सहित ऊपरले ६२ बासठिके परिच्छेद में सुत विक्रयके साथ वर्णन होचुके तहां देखो=इसके अनन्तर योगीश्वर ने (कन्या सन्दूषणं) इस नामका उपपातक २३८ दोसौ अड़तीस मूल श्लोक में दर्शाया था तिसका प्रायश्चित्त जुदा यद्यपि योगीश्वर ने आप नहीं कहा तथापि यहां देखो ॥

(अथकन्यादूषणप्रायश्चित्तं)

कन्या संदूषणके लक्षण २३८ की अधिकोक्तिमें ठीक ठीक लिखिचुके हैं–मिताक्षराकार कहिते हैं कि सर्व सामान्य उपपातकोंकी प्रायश्चित्त मर्यादा जो ४५ चवालिस परिच्छेद में प्रकाश होचुकी है उसीमें से त्रैमासिक द्वैमासिक चांद्रायण आदि प्रायश्चित्त यहां पर उसके लिये लगाना जो कन्या का सवर्णी पुरुष होते कन्या दूषण पापका भागी बनाहो–परन्तु–जहां अनुलोम मार्गसे कन्यादूषण पाप हुआहो कि नीचे वर्णकी कन्या और ऊंचे वर्णोंका दोषी पुरुष होय तहां भी उसी परिच्छेद वाले प्रायश्चित्तों में योगीश्वर का बताया एक महीना भर दूधपी के व्रत कराना यहा प्राजापत्य कराना चाहिये क्योंकि (सकामास्वनुलोमासुनदोषस्त्वन्यथादमः) व्यवहार मर्यादाके दंडवाले प्रकरणमें ऐसी दशा पर निर्दंड दंडका न होना या थोड़ा दंड होना कहा गयाथा कि जहां ऊंचे वर्णोंका पुरुष और नीचे वर्णकी सकाम कन्यासे साक्षात संगम हुआ होय–और यहांपर कुछ कन्यासे संगम करने का प्रसंग नहीं केवल अंगुरी आदिसे या हाथोंसे अंगही दूषित करने का यह प्रायश्चित्त है जिससे जैसा कुछ बहुत या थोड़ाही दोष पायाजाय वैसा प्रायश्चित्तभी महीना भर दूधपीके व्रत कराना या बारह दिन का प्राजापत्यही करवाना समझि लियाजाय ॥ ० ॥ इसके सिवाय शंख और हारीत के दो वचन हैं जिनके ऊपर हेतु गर्भित व्यवस्था मिताक्षराकारने दर्शाई है सोभी देखो=यत्तुशंखेनोक्तं=कन्यादोषीसोमविक्रयीच कृच्छ्रसंवत्सरंचरेयाताम=यच्चहारीत वचनं=कन्याविक्रयी सोमविक्रयी

वृषलीपतिः कौमारदारत्यागीसुरासवपः शूद्रयाजकोगुरोःप्रतिहन्ता नास्तिकवृत्तिः कृतघ्नःकूटव्यवहारीमित्रध्रुक् शरणागतघातीप्रतिरूपकवृत्तिरित्येते पंचतपोऽभावकाय ऋ नगायनान्यनुतिष्ठेयुर्ग्रीष्मवर्षाहेमन्तेषु मासंगोमूत्रयावक मश्नीयुरिति-तदुभयमपि क्षत्रियवैश्ययोःप्रातिलोम्येनदूषणायोज्यं—शूद्रस्यतुवधएव (दूषणेतुकरच्छेदउत्तमायां वधस्तथेति वधदर्शनादितिमिताक्षरा=अर्थात्—शंखने जो कहाहै कि कन्याका दोषी और सोम बेचनेवाला ये दोनों एक सालभर कृच्छ्र व्रत आचरैं=और हारीतका जो वचनहै कि=कन्याका बेचनेवाला तथा सोमका बेचनेवाला और वृषली जो पांच प्रकारकी कहिचुके तिनका पति और कुमार वा यौवन अवस्थामें पत्नीको त्याग देनेवाला और सुरासव का पीनेवाला और शूद्रकी पुरोहिताई करनेवाला और गुरु का आदेश टालनेवाला और नास्तिकवृत्ति राखनेवाला और कृतघ्न जो किसी गैर का किया उपकार मेटै वा अपना वा अपने बड़ोंका संचित पुण्य मेटिदेवै और छल का व्यवहार करनेवाला और मित्रसे दगा करनेवाला और अपनी शरण आयेहुये से विश्वास घात करनेवाला और प्रतिरूपकवृत्ति जो ब्राह्मण आदि किसी उत्तमका रूप धरिके उसकी वृत्ति जीविका आदि की नकल उतारै ये सभी इतने अन्यायी पुरुष एक महीनाभर ग्रीष्मऋतुमें पंचाग्नि तपैं और वर्षा ऋतु में बरसते समय सूने आकाशमें बैठाकरें औ शीतऋतु एक महीना भर जलमें लोटि रहाकरैं तब तक तीनों मासभर गोमूत्रमें रँधे जौका दलिया खायाकरैं तब शुद्ध होयँ (यहांपर दगा करना केवल उपरान्न बातों में समझना मारडारना नहीं किन्तु मित्रको मारडारना बहुत बड़ा पापहै २२८ मूलश्लोकमें देखो कि ब्रह्महत्याके समान महापातकोंवाले प्राय- श्चित्त उसपर लगते हैं) मिताक्षराकार कहिते हैं कि ये शंख और हारीतके दोनों वचन कन्यादूषणाके प्रयोजन से यहां पर लिखे गये इनमें कन्याके दूषण पर यह तीनि महीनेका कठिन प्रायश्चित्त क्षत्री और वैश्यके निमित्त में समझना कि जब इन्होंने अपनेसे ऊँचे वर्णकी कन्यासे दूषण कमाया हो—परन्तु जो शूद्रने ऊँचेवर्णों की कन्या दूषित करीहो तिसको शारीरिक दंडही देना उचित है क्योंकि व्यवहार मर्यादाने इसको स्पष्टपर कहिचुके हैं कि (उत्तम कन्याको दूषित करनेमात्रमें हाथ काटिडारै और इससे अधिक नाश आदिहोनेमें प्राणवध कियाजाय॰ तिससे उसका यही प्रायश्चित्तहै) पर हाथ काटना भी यह पूरे दूषणाकी दशापर आरूढहै अर्थात् थोड़े दोषकी दशामें शारीरिक दंड ताड़न पीटन आदि समझना ॥ इतिकन्यादूषणा प्रायश्चित्त ॥

(अथोपपातकषट्कस्यप्रायश्चित्तविचारः)

कन्यादूषणासे लगाना उसी २३८ मूलश्लोकमें योगीश्वरने (परिविंदकयाजनं) इस नामका उपपातक प्रकाश किया था अर्थ इसका उसी जघे देखो-बल्कि उसी २३८ मूलश्लोक से लेकर (परिविन्दक को कन्यादान करना) (कौटिल्य पाप) (व्रतोंके नियम तोड़ देना) (आत्मार्थ पाक बनाना) (मद्यप स्त्रीका सेवन) येसब लगना लगना इसी क्रमसे नाम कहेथे-इन सबके प्रायश्चित्त ४४ चवालिस परिच्छेद के द्वारा यथा योग्य दोषोंकी बडाई छोटाई आदि शोचिके उनमें से बड़ेया छोटेही प्रायश्चित्त सविचारके साथ वर्तावा करने चाहिये• क्योंकि योगीश्वर ने इनके जुदे जुदे नामों से प्रायश्चित्तों की विशेषता नहीं कही तिससे उसी सामान्य मर्यादा से व्यवस्था कल्पित होसक्ती है—और—इनमें से परिविन्दकयाजी के प्रायश्चित्त ४८ अडतालिसके परिच्छेदमें भी विशेष वर्णन होचुके हैं तिनको भी देखना और जरूरत पर लेना चाहिये और परिवित्तिके परिवेदन कर्मका प्रायश्चित्त उसी अडतालिस परिच्छेदमें फिर ५१ इक्कयावन परिच्छेदमें भी विशेषतासे वर्णन होचुके तहां दोनों जगह देखना—और—यहां के सात नामों में दूसरा उपपातक (परिविन्दक को कन्या व्याह देना) इसके प्रायश्चित्त यद्यपि चवालिस परिच्छेदमें से लेना कहा गया सो भी लिये जायँगे और ४८ अडतालिसके परिच्छेदमें विशेष प्रायश्चित्त हैं सोभी शोचिके लेने होंगे यही इन दोनोंकी व्यवस्थामें भेदहै• बाकी पांच नामों के पापोंपर केवल ४४ चवालिस परिच्छेदसे व्यवस्था लेनी होगी॥ इतिप्रायश्चित्तषट्कं॥

अथस्वाध्याय त्यागाग्नित्यागाद्युपपातकाष्टकस्य प्रायश्चित्त प्रकाशकोऽयंपरिच्छेदः पंचषष्ठिः (६५)

———※———

इस परिच्छेदमें आठ उपपातकों के प्रायश्चित्त कहे जायँगे—तिनमें पहिले अपने अभ्यस्त स्वाध्यायका परित्याग• फिर स्थापित अग्नियों से अग्निहोत्र का त्याग• सुतादि सन्तानके संस्कार उचित समय पर न कराना और बंधुओं का रक्षण आदि न करना• तिन पीछे चार और हैं कि• स्त्रीसे जीविका करनी या हिंसा कर्मसे जीविका करनी या औषधियोंसे वशीकरण आदि हिंसावाले कर्मकरने

वृषलीपतिः कौमारदारत्यागीसुरामद्यपः शूद्रयाजकोगुरोःप्रतिहन्ता नास्तिकवृत्तिः कृतघ्नःकूटव्यवहारीमित्रध्रुक् शरणागतघातीप्रतिरूपकवृत्तिरित्येते पंचतपोऽभ्रावकाश जलशयनान्यनुतिष्ठेयुर्ग्रीष्मवर्षाहेमन्तेषु मासंगोमूत्रयावक मश्नीयुरिति-तदुभयमपि क्षत्रियवैश्ययोःप्रातिलोम्येनदूषणोयोज्यं—शूद्रस्यतुवधएव (दूषणेतुकरच्छेदउत्तमायां वधस्तथैति वचदर्शनादितिमिताक्षरा=अर्थात्—शंखने जो कहाहै कि कन्याका दोषी और सोम बेचनेवाला ये दोनों एक सालभर कृच्छ्र व्रत आचरैं=और हारीतका जो वचनहै कि=कन्याका बेचनेवाला तथा सोमका बेचनेवाला और वृषली जो पाँच प्रकारकी कहिचुके तिनका पति और कुमार वा यौवन अवस्थामें पत्नीको त्यागि देनेवाला और सुरामद्य का पीनेवाला और शूद्रकी पुरोहिताई करनेवाला और गुरु का आदेश टालनेवाला और नास्तिकवृत्ति राखनेवाला और कृतघ्न जो किसी गैर का किया उपकार मेटै या अपना वा अपने बड़ोंका संचित पुण्य मेटिदेवै और छल का व्यवहार करनेवाला और मित्रसे दगा करनेवाला और अपनी शरणा आयेहुये से विश्वास घात करनेवाला और प्रतिरूपकवृत्ति जो ब्राह्मण आदि किसी उत्तमका रूप धरिके उसकी वृत्ति जीवि का आदि की नकल उतारै ये सभी इतने अन्यायी पुरुष एक महीनाभर ग्रीष्मऋतुमें पंचाग्नि तपैं और वर्षा ऋतु में बरसते समय शूने आकाशमें बैठाकरैं औ शीतऋतु एक महीना भर जलमें लेटि रहाकरैं तब तक तीनों मासभर गोमूत्रमें रँधे जौका दलिया खायाकरैं तब शुद्ध होयँ (यहांपर दगा करना केवल उपरोक्त बातों में समझना मारडारना नहीं किन्तु मित्रको मारडारना बहुत बड़ा पापहै २२८ मूलश्लोकमें देखो कि ब्रह्महत्याके समान महापातकोंवाले प्राय-श्चित्त उसपर लगते हैं) मिताक्षराकार कहिते हैं कि ये शंख और हारीतके दोनों वचन कन्यादूषणाके प्रयोजन से यहां पर लिखे गये इनमें कन्याके दूषण पर यह तीनि महीनेका कठिन प्रायश्चित्त क्षत्री और वैश्यके निमित्त में समझना कि जब इन्होंने अपनेसे ऊँचे वर्णोंकी कन्यामें दूषण कमाया हो—परन्तु जो शूद्रने ऊँचेवर्णों की कन्या दूषित करीहो तिसको शारीरिक दंडही देना उचित है क्योंकि व्यवहार मर्यादामें दंडके स्थलपर कहिचुके हैं कि (उत्तम कन्याको दूषित करनेमात्रमें हाथ काटेजायँ और इससे अधिक संगम आदिहोनेमें मारावध कियाजाय० तिससे उसका यही प्रायश्चित्तहै) पर हाथ काटना भी यह पूरे दूषणकी दशापर आरूढहै अर्थात् थोड़े दोषकी दशामें शारीरिक दंड ताड़न पीटन आदि समझना ॥ इतिकन्यादूषण प्रायश्चित्तं ॥

(अथोपपातकषट्कस्यप्रायश्चित्तविचारः)

कन्यादूषणसे लगाय उसी २३८ मूलश्लोकमें योगीश्वरने (परिविंदकयाजनं) इस नामका उपपातक प्रकाश किया था अर्थ इसका उसी जगे देखो-बल्कि उसी २३८ मूलश्लोक से लेकर (परिविन्दक को कन्यादान करना) (कौटिल्य पाप) (व्रतोंके नियम तोड़देना) (आत्मार्थ पाक बनाना) (मद्यप स्त्रीका सेवन) येसब लगाय लगाय इसी क्रमसे नाम कहेथे-इन सबके प्रायश्चित्त ४४ चवालिस परिच्छेद के द्वारा यथा योग्य दोषोंकी बड़ाई छोटाई आदि शोचिके उनमें से बड़े या छोटेही प्रायश्चित्त सद्विचारके साथ वर्ताव करने चाहिये • क्योंकि योगीश्वर ने इनके जुदे जुदे नामों से प्रायश्चित्तों की विशेषता नहीं कही तिससे उसी सामान्य मर्यादा से व्यवस्था कल्पित होसक्ती है—और—इनमें से परिविन्दकयाजी के प्रायश्चित्त ४८ अड़तालिसके परिच्छेदमें भी विशेष वर्णन होचुके हैं तिनको भी देखना और जरूरत पर लेना चाहिये और परिवित्तिके परिवेदन कर्मका प्रायश्चित्त उसी अड़तालिस परिच्छेदमें फिर ५१ इक्यावन परिच्छेदमें भी विशेषतासे वर्णन होचुके तहां दोनों जगह देखना—और—यहां के सात नामों में दूसरा उपपातक (परिविन्दक को कन्या ब्याहि देना) इसके प्रायश्चित्त यद्यपि चवालिस परिच्छेदमें से लेना कहा गया सो भी लिये जायँगे और ४८ अड़तालिसके परिच्छेदमें विशेष प्रायश्चित्त हैं सोभी शोचके लेने होंगे यही इन दोनोंकी व्यवस्थामें भेदहै• बाकी पांच नामों के पापोंपर केवल ४४ चवालिस परिच्छेदसे व्यवस्था लेनी होगी॥ इतिप्रायश्चित्तषट्कं॥

अथस्वाध्याय त्यागाग्नित्यागाद्युपपातकाष्टकस्य प्रायश्चित्त प्रकाशकोऽयंपरिच्छेदः पंचषष्ठः (६५)



इस परिच्छेदमें आठ उपपातकों के प्रायश्चित्त कहे जायँगे—तिनमें पहिले अपने वेदांतभूत स्वाध्यायका परित्याग• फिर स्थापित अग्नियों में अग्निहोत्र का त्याग• फिर सुतादि सन्तानके संस्कार उचित समय पर न कराना और बंधुओं का रक्षण पालन आदि न करना• तिन पीछे चार और हैं कि• स्त्रीसे जीविका करनी या हिंसा वाले कर्मसे जीविका करनी या औषधियोंसे वशीकरण आदि हिंसावाले कर्मकरने

और उनके द्वारा जीविका रखनी या हिंसकयंत्र कोल्हू आदि जारी कराना ये आठ उपपातक इस परिच्छेद में आवैंगे ॥

(स्वाध्यायत्याग प्रायश्चित्तं)

योगीश्वरने २३९ दोसौ उनतालिस मूलश्लोकमें (स्वाध्यायका त्याग) यह एक उपपातक बताया था कि जो कोई अपने पढ़े वेद शास्त्रको या रोजके नधे पूजापाठ को किसी दूसरे शास्त्रके सुनने आदि लालच में फँसिकर भुलाइ देवै या छोडि देवै सो उपपातकी होताहै—और उसीका दूसरा अर्थ यह भी लियागयाहै कि जो कोई दुर्व्यसनमें फँसिकर निपट भुलाइडारै या निरादर करिके निपट त्यागि देवै सो महापातकी होता है कि जैसा २२८ मूलश्लोक में देखो (अधीतस्यच नाशनं) यह लिखचुके तहां ब्रह्महत्याके समान प्रायश्चित्त उसी प्रकरणके अनुसार करनाहोगा परन्तु—जैसी सूरतिसे यहांपर उपपातकी ठहिराया गया तिसके लिये ४४ चवालिस परिच्छेदमें साधारण प्रायश्चित्तहैं तिनमें से तीन महीने या दोमहीने या एकमहीने आदि के प्रायश्चित्त कर्ताकी शक्ति आदि शोचिके यथायोग्य जोडि लेनाचाहिये क्योंकि इसके मध्ये योगीश्वर ने कोई जुदा प्रायश्चित्त नहीं कहा= और=वशिष्ठ ने यहकहाहै कि=ब्रह्मोज्झताक्षच्छ्रन्द्वादशरात्रंचरित्वा पुनरुपयुंजीतवेदमाचार्यात्(इत्ये तदत्यंतापद्विषयमितिमिताक्षरा=अर्थात्—जो वेदको भुलाके त्यागि देवै सो बारहदिन क्षच्छ्रव्रत करिके फिर आचार्यसे जाकर वेदपढ़ै(सोयह छोटा प्रायश्चित्त उसके लिये समझना जिसने अत्यन्त आपत्तिमें भुलायाहो ॥ इतिस्वाध्यायत्यागप्रायश्चित्तं॥

(अग्निहोत्रत्यागादिप्रायश्चित्तं)

ब्रह्मचारी या गृहस्थी जो कोई अग्निहोत्री होकर अग्निकर्मको त्यागिदेवै तिस का भी नाम उपपातकोंकी गिनती साथ योगीश्वर याज्ञवल्क्य ने स्वाध्याय त्याग से लगभग २३९ दोसौ उनतालिस मूलश्लोकमें दर्शायाथा परन्तु कहीं जुदा प्रायश्चित्त उसका नहीं कहा तिससे ४४ चवालिस परिच्छेदवाले प्रायश्चित्तोंका सहारालेना होगा=परन्तु वशिष्ठजीने विशेषता भी दर्शाई है=यथाह=योऽग्नीनपविध्येत्क्षच्छ्रं द्वादशरात्रंचरित्वापुनराधेयंकारयेत् (अपद्वादशरात्रग्रहणा मुक्तमकालापेक्ष या प्राजापत्यादि गुरु लघु क्षच्छ्राणां प्राप्त्यर्थमिति मिताक्षरा) तत्र—मासद्वयेप्राजापत्यं मासचतुष्टयेऽतिक्षच्छ्रः षड्मासेचक्षच्छ्रपराकः षड्मासादूर्ध्वंयोगीश्वरोक्तान्युपपातक

सामान्य प्रायश्चित्तानि कालाद्यपेक्षयायोज्यानि संवत्सरादूर्ध्वन्तु मानवंत्रैमासिक मिति व्यवस्था• इतिचमिताक्षरा=अर्थात्–वशिष्ठ ने यह कहाहै कि जो कोई स्थापित अग्नियों को निरादर करिके त्याग देवै किन्तु उठाइ डारै या पूजन करना छोडिदेवै सो वारहदिनका कृच्छ्र साधन करिके फिर स्थापन कर्म करावै (इसपर मिताक्षराकारकहते हैं कि इससें वारह दिनकी अवधिबांधना भी सिर्फ उत्तमकालों की अपेक्षा दर्शाने के हेतुपर आरूढ है कि प्राजापत्य आदि बड़े छोटे कृच्छ्रोंकी पहुंच पाईजाय अर्थात् केवल वारहदिनके नियमसे प्रयोजन यहां नहीं है) तिससे यहां यह युक्ति है कि–जिसने दो महीना अग्निका कर्म त्यागिदियाहो सो प्राजापत्यजावै जिसने चार महीने त्यागिदियाहो सो अति कृच्छ्र करै जिसने छे महीने त्याग कियाहो सो पराकनामका प्रायश्चित्त करै• फिर जिसने छमाही से भी अधिक त्याग कियाहो तिसके सातवां महीना आदि लेकर बारह महीना के भीतर जैसा बहुत या थोडा काल ठहिरै तिसके अनुसार बड़े छोटे प्रायश्चित्त भी ४४ चवालिस परिच्छेदसें २६५ मूलश्लोकसे योगीश्वरके बताये लेकर जोडिलेनेचाहिये फिर जिसने एकसालसे भी अधिक दिनोंतक अग्निका कर्म त्यागिदियाहो तिसके लिये उसी २६५ की अधिकोक्ति में मनुका कहा तीनि महीनावाला प्रायश्चित्त ढूंढना चाहिये• यह व्यवस्था भी मिताक्षराकार ही ने कही=फिर कहिते हैं कि यह व्यवस्था केवल उनकेलिये कहीगई कि जिन्होंने नास्तिकताका सहारालेकर अग्निको त्यागा होय कि इसके पूजने से क्या होताहै इत्यादि• इसका प्रमाण भी अग्रोक्त वचनहै=यथाहव्याघ्रः= योऽग्निन्त्यजतिनास्तिक्यात्प्राजापत्यंचरेद्द्विजः = अर्थात् जो कोई द्विज होकर नास्तिकपसे अग्निकोत्यागै सो प्राजापत्यकरै ॥ ० ॥ ऊपरके प्रमाणसे यह तात्पर्य ठहिरा कि जिसने नास्तिकताके विनाभूल गफलति प्रमादसे अग्नि त्यागीहो तिसके लिये भरद्वाज के गृह्यशास्त्र में विशेषता कहीगई है=यदाहभारद्वाजः=प्राणायामशतंकार्यंत्रिरात्राद्उपवास.स्याद्वाविंशतिरात्रात्‌ अत ऊर्ध्वं मासपर्यंतं नाग्निहोत्रंपरित्यजेत्त ऊर्ध्वंमासंवत्सरात्प्राजापत्यंचरेत् (अतऊर्ध्वंकाल बहुत्वेदोषगुरुत्वं (=अर्थात्–भारद्वाज ने कहा है कि तीनिही रात्रि के भीतर तक जिसने अग्निकर्म छोड़ा होय सो एक १०० सौ प्राणायाम करिके फिर अपना वही कर्म करै पर जिसने बीस दिनके भीतर तक त्यागाहो सो एकदिन उपवास करिके फिर कर्म करै इसके ऊपर साठि दिनके भीतर तक जिसने त्यागा हो सो तीन दिन रात का उपवास करै साठिके ऊपर जिसने साल भरके भीतर कि

सी अवधि तक त्यागाहो सो प्राजापत्यकरै (इसके ऊपर यह कालका बहुत्व केवल दोषका बड़ापन प्रकट करताहै ॥ ० ॥ जिसने आलस आदिके हेतुसे याद रहिते भी अग्निका कर्म त्याग किया हो तिसके लिये भी उन्हीं भारद्वाजने विशेषता जुदीकरीहै=यथा=द्वादशाहातिक्रमेत्र्यहमुपवासोमासातिक्रमेद्वादशाहमुपवासः संवत्सरातिक्रमेमासोपवासःपयोभक्षणंचेति=अर्थात्–बारहदिन कर्मकात्याग होनेमें तीनदिनका उपवास और महीनाभर अतिक्रम होजानेमें बारहदिनका उपवास और एकसालभर का अंतर होजाने में महीने भरका उपवास तथा दूधका आहार चाहिये ॥०॥ जिसने एकसाल से भी अधिक अवधितक कर्म छोड़ दियाहो तिसके लिये हारीतने विशेष नियम कहे=यथा हारीतः=संवत्सरोत्सन्नेऽग्निहोत्रेचांद्रायणंकृत्वापुनरादध्यात् द्विवर्षोत्सन्नेचांद्रायणंसोमायनंचकुर्यात् त्रिवर्षोत्सन्नेसंवत्सरंकृच्छ्रमभ्यस्यपुनरादध्यादिति (सोमायनंचकृच्छ्रकांडेवक्ष्यते)=अर्थात्–एक वर्षभर अग्निहोत्र छूटिजाने में चांद्रायण व्रतकरिके फिर दुबारा आधान उसकाकरै दोवर्षभर छूटिजानेमें चांद्रायण और सोमायन भी करै तिस पीछे स्थापन उसका करै तीनिवर्षभर छूटिजानेमें एकवर्ष भर कृच्छ्र की बारंबार आवृत्ति किये पीछे फिर अग्नि का स्थापन करै (सोमायन का लक्षण आगे सब कृच्छ्रों के प्रकरण में कहा जायगा तब समझि लेना)–इसी विषयपर शंखने भी विशेषता जाहर करी है=यथा=अग्न्युत्सादीसंवत्सरंप्राजापत्यं चरेद्गांचदद्यात्=अर्थात्–अग्निको उठाइ डारनेवाला उपपातकी एक सालभर प्राजापत्यों का आचरण करै और गोदान भी करै ॥

इत्यग्निहोत्रपरित्यागप्रायश्चित्तं

(सुतादिसंस्काराबंधुत्वगत्यागप्रायश्चित्तं)

अग्नित्याग नामके लगभग उसी २३९ मूलश्लोक में योगीश्वरने (सुतकात्याग) दुबारा कहिकर (बांधवोंकापरित्याग) भी दर्शाया था०इन दोनोंके पापों के प्रायश्चित कहीं जुदे स्वरूपसे नहीं कहे तिससे उसी४४चवालिस के साधारण परिच्छेद मे से प्रायश्चित्त लेने होंगे तहां इतना भेदहै कि जिसने कामनासे हठके साथ सुतका या बंधुजनोंका परित्याग किया हो तिसकेलिये उस परिच्छेद में २६५ दोसौपैंसठि की अधिकोक्ति से तीनमहीनेवाले गोहत्याके प्रायश्चित्त ढूंढने चाहिये=और जिसने हठके बिना दैवगति से सुत बंधूका त्याग कियाहो तिसके लिये उसी परिच्छेदमें

२६५के मूलश्लोक से योगीश्वरके बताये चार प्रायश्चित्तों में कोई एक शक्ति या दोषके अनुसार चुनि के लेलेना चाहिये इनकी यही व्यवस्था है कुछ और नहीं= सुतका त्याग दुबारा कहा जानेसे यह तात्पर्य है कि ६४ परिच्छेद में सुत पुत्र पोता पर पोता आदिको घरसे बाहर निकासि देनेका प्रसंगथा•और यहाँपर घरमें रहिते भी बालक पुत्रोंके उचित संस्कार आदि करने से उपेक्षा रखनी यही उनका परित्यागहै•तद्वत बंधूजन असमर्थ वृद्ध चचा मामा आदि जिनका पालनकर्ता कोई और नहो तिनके रक्षण पालन करनेकी सामर्थ्य होते हुये भी जो कोई उनको नहींराखै किन्तु ऐसे बंधूओंकी दुर्गति होते आँखोंसे देखै या कानोंसे सुनिकर भी रक्षा करने का उपाय नहीं सोचै तिसके पापका प्रायश्चित्त यहां पर कहा गया॥ इतिसुत संस्कारादित्यागेबंधुरक्षणादित्यागेचप्रायश्चित्तं॥

(स्त्रीहिंसादिभिर्जीवनप्रायश्चित्तं)

बंधु त्यागसे अनन्तर २४० दोसौचालीस मूलश्लोकमें योगीश्वर ने (इन्धनार्थंद्रुम च्छेदः (वृक्षका निरर्थ काटिडारना जो दर्शाया था तिसके प्रायश्चित्त ५५पचपन के परिच्छेद में वर्णन होचुके तहां२७६मूलश्लोकसे योगीश्वरने आपही प्रायश्चित्त भी दर्शाया॥ फिर द्रुमच्छेद से लगमा२४० दोसौचालिस मूल श्लोकमें योगीश्वरने (स्त्रीकेद्वाराजीविकाकरना) और (प्राणियोंके बधसे जीविका करना)और (वशी करणकी औषधियोंसे जीविका) और (कोल्हूआदि यंत्रका जारीकरना)ये चार उप पातक इसीक्रमसे प्रकट कियेथे–परन्तु इनके जुदे प्रायश्चित्त कहीं नहीं कहे तिससे इन सबकेलिये४४ चवालिसके परिच्छेदमें योगीश्वर औरमनुके कहेछोटेबड़े प्रायश्चित्त इनके कर्म दोषोंके अनुसारचुनिके समझिलेना॥ इतिप्रायश्चित्तचतुष्कं॥

॥ इत्यौचित्यानांपरित्यागप्रकरणं॥

इस प्रकरण में सब चारि परिच्छेद हैं अर्थात ६२ बासठि परिच्छेद के प्रारम्भ से लेकर यहां पैंसठि के अंत लग चारो परिच्छेद इसी एक प्रकरण में गिनती हैं कि जिनमें सब तेईस चौबीस उपपातकों के प्रायश्चित्त कहे गये सो केवल कन्या संदूषणसे उपरालू सभी ऐसेहैं कि जिनमें निज निज औचित्य छोड़ि देनेका निमित्त है तिससे सबका एकही प्रकरण है=कन्या संदूषण का निमित्त यद्यपि सबसे जुदे प्रकारका प्रत्यक्ष है तथापि बीचमें आजानेसे प्रकरण के बाहर नहीं जासक्ता॥

सी अवधि तक त्यागाहो सो प्राजापत्यकरै (इसके ऊपर यह कालका बहुत्व केवल दोषका बड़ापन प्रकट करताहै ॥ ० ॥ जिसने आलस आदिके हेतुसे याद रहिते भी अग्निका कर्म त्याग किया हो तिसके लिये भी उन्हीं भारद्वाजने विशेषता जुदीकरीहै=यथा=द्वादशाहातिक्रमेत्र्यहमुपवासोमासातिक्रमेद्वादशाहमुपवासः संवत्सरातिक्रमेमासोपवासःपयोभक्षणंचेति=अर्थात्–बारहदिन कर्मकात्याग होनेमें तीनदिनका उपवास और महीनाभर अतिक्रम होजानेमें बारहदिनका उपवास और एकसालभर का अंतर होजाने में महीने भरका उपवास तथा दूधका आहार चाहिये ॥०॥ जिसने एकसाल से भी अधिक अवधितक कर्म छोड़ दियाहो तिसके लिये हारीतने विशेष नियम कहे=यथा हारीतः=संवत्सरोत्सन्नेऽग्निहोत्रेचांद्रायणंकृत्वापुनरादध्यात् द्विवर्षोत्सन्नेचांद्रायणसोमायनंचकुर्यात् त्रिवर्षोत्सन्नेसंवत्सरंकृच्छ्रमभ्यस्यपुनरादध्यादिति (सोमायनंचकृच्छ्रकांडेवक्ष्यते)=अर्थात्–एक वर्षभर अग्निहोत्र छूटिजाने में चांद्रायण व्रतकरिके फिर दुबारा आधान उसकाकरै दोवर्षभर छूटिजानेमें चांद्रायण और सोमायन भी करै तिस पीछे स्थापन उसका करै तीनिवर्षभर छूटिजानेमें एकवर्षभर कृच्छ्र की बारंबार आवृत्ति किये पीछे फिर अग्नि का स्थापन करै (सोमायन का लक्षण आगे सब कृच्छ्रों के प्रकरण में कहा जायगा तब समझि लेना)–इसी विषयपर शंखने भी विशेषता जाहर करी है=यथा=अग्न्युत्सादीसंवत्सरंप्राजापत्यंचरेद्गांचदद्यात=अर्थात्–अग्निको उठाइ डारनेवाला उपपातकी एक सालभर प्राजापत्यों का आचरण करै और गोदान भी करै ॥

इत्यग्निहोत्रपरित्यागप्रायश्चित्तं

(सुतादिसंस्कारबंधुरक्षणात्यागप्रायश्चित्तं)

अग्नित्याग नामके लगभग उसी २३९ मूलश्लोक में योगीश्वरने (सुतकात्याग) दुबारा कहिकर (बांधवोंकापरित्याग) भी दर्शाया था–इन दोनोंके पापों के प्रायश्चित्त कहीं जुदे स्वरूपमें नहीं कहे तिससे उसी४४चवालिस के साधारण परिच्छेद में से प्रायश्चित्त लेने होंगे तहां इतना भेदहै कि जिसने कामनासेहठके साथ सुतका या बंधुजनोंका परित्याग किया हो तिसकेलिये उस परिच्छेद में २६५ दोसौपैंसठि की अधिकोक्ति से तीनमहीनेवाले गोहत्याके प्रायश्चित्त ढूंढने चाहिये=और जिनने हठके बिना देवगति से सुत बंधुका त्याग कियाहो तिसके लिये उसी परिच्छेदमें

२६५के मूलश्लोक से योगीश्वरके बताये चार प्रायश्चित्तों में कोई एक शक्ति या दोषके अनुसार चुनि के लेलेना चाहिये इनकी यही व्यवस्था है कुछ और नहीं= सुतका त्याग दुबारा कहा जानेसे यह तात्पर्य है कि ६४ परिच्छेद में सुत पुत्र पोता पर पोता आदिको घरसे बाहर निकासि देनेका प्रसंगथा•और यहांपर घरमें रहिते भी बालक पुत्रोंको उचित संस्कार आदि करने से उपेक्षा रखनी यही उनका परित्यागहै•तद्वत् बंधूजन असमर्थ वृद्ध चचा मामा आदि जिनका पालनकर्ता कोई और नहो तिनके रक्षण पालन करनेकी सामर्थ्य होते हुये भी जो कोई उनको नहींराखै किन्तु ऐसे बंधुओंकी दुर्गति होते आँखोंसे देखै या कानोंसे सुनिकर भी रक्षा करने का उपाय नहीं सोचै तिसके पापका प्रायश्चित्त यहां पर कहा गया॥ इतिसुत संस्कारादित्यागेबंधुरक्षणादित्यागेचप्रायश्चित्तं॥

(स्त्रीहिंसादिभिर्जीवनप्रायश्चित्तं)

बंधु त्यागसे अनन्तर २४० दोसौचालीस मूलश्लोकमें योगीश्वर ने (इन्धनार्थंद्रुम च्छेदः (वृक्षका निरर्थ काटिडारना जो दर्शाया था तिसके प्रायश्चित्त ५५ पचपन के परिच्छेद में वर्णन होचुके तहां२७६मूलश्लोकसे योगीश्वरने आपही प्रायश्चित्त भी दर्शाया॥ फिर द्रुमच्छेद से लगमा२४० दोसौचालिस मूल श्लोकमें योगीश्वरने (स्त्रीकेद्वाराजीविकाकरना) और (प्राणियोंके वधसे जीविका करना)और (वशी करणकी औषधियोंसे जीविका) और (कोल्हूआदि यंत्रका जारीकरना)ये चार उप पातक इसीक्रमसे प्रकट कियेथे—परन्तु इनके जुदे प्रायश्चित्त कहीं नहीं कहे तिससे इन सबकेलिये४४ चवालिसके परिच्छेदमें योगीश्वर औरमनुके कहेछोटेबड़े प्रायश्चित्त इनके कर्म दोषोंके अनुसारचुनिके समझिलेना॥ इतिप्रायश्चित्तचतुष्कं॥

॥ इत्यौचित्यानांपरित्यागप्रकरणं॥

इस प्रकरण में सब चारि परिच्छेद हैं अर्थात् ६२ बासठि परिच्छेद के प्रारम्भ से लेकर यहां पैंसठि के अंत लग चारों परिच्छेद इसी एक प्रकरण में गिनती हैं कि जिनमें सब तेईस चौबीस उपपातकों के प्रायश्चित्त कहे गये सो केवल कन्या संदूषणसे उपरालू सभी ऐसेहैं कि जिनमें निज निज औचित्य छोड़ि देनेका निमित्त है तिससे सबका एकही प्रकरण है=कन्या संदूषण का निमित्त यद्यपि सबसे जुदे प्रकारका प्रत्यक्ष है तथापि बीचमें आजानेसे प्रकरण के बाहर नहीं जासक्ता॥

अथव्यसनासक्तिनामोपपातकप्रायश्चित्तप्रकाश कोऽयंपरिच्छेदःषटषष्ठितमः (६६)॥

—*—

इस परिच्छेदमें दुर्व्यसनोंकी वत्त पैदा होजानेके उपपातकपर प्रायश्चित्त कहे जायँगे॥ और उसीके प्रसंगसे सद्व्यसनोंका भी निर्णय किया जायगा॥

(व्यसनासक्तौप्रायश्चित्तं)

दोसौचालीस २४० मूलश्लोक में (हिंस्रयंत्र के लगमा (व्यसनानि) व्यसनोंका उत्पन्न होना भी एक उपपातक वताया था उन व्यसनों के स्वरूप लक्षण आचार कांडके अंतमें राजधर्म्म के प्रकरण में वर्णन होचुके हैं नाम उनके द्यूत जुआरीपन की धत लगिजाना॰ मृगया शिकार आखेट की निरन्तर धत लगी रहिना इत्यादि अठारह तौ प्रधानता से प्रसिद्ध हैं फिर उनसे उपराल भी अनेक व्यसन होतेहैं—व्यसन भी अच्छे वुरे दोभेदसे होतेहैं—व्यसन चाहैं दुर्व्यसन होय या सद्व्यसनहोय दोनों खोटे ठहिरतेहैं क्योंकि यद्यपि सद्व्यसनमें कोई पाप नहीं होताहै तथापि उसके हेतु से अनेक पाप स्वतः भी उत्पन्न होसक्ते हैं इसका दृष्टान्त जैसा किसी को अतिदान करनेका व्यसन लगिजाय तिसके पास मांगनेवाले दानपात्र भी अत्यन्त आने लगते हैं यद्यपि पुण्य के लक्षण माथ यह व्यसन सबसे उत्तमसद्व्यसनहै कि जिसकेप्रभावसे स्वर्गफल प्राप्त होताहै तथापि व्यसन शब्द के अर्थसे ही व्यसन उसका नाम है कि जिस एकही कामकी वत्तमे सव उचित कामोंको भूलिजाय जैसा अतिदान करनेकी वत्तसे उचित कुटुम्बी जनोंका पालनपोषण भी छोडिदिया अथवा इतनादाम तक पास नहीं रक्खा कि जिससे पंचयज्ञ वा केवल पाकयज्ञ आदि नित्य कर्म्मों की साधना होसके तभी इनकामों की हानिसे भी अनेक पापस्वतः जन्मते जाते हैं—इसी लिये—यह स्वनर्थ भी समझना योग्यहै कि हर कोई काम ऐसे पुण्यका किया हुआ व्यसनकी गिनतीमें नहीं आसक्ताहै जो अपने उचित धर्मोंको न भूलैंकिन्तुजो आवश्यक धर्मोंको पालना करने से उपराल किसी सद्व्यसन को आवश्यकता के समान पालै सो व्यसनों की गिनती में नहींहै—इसका यह दृष्टांत है कि जैसे राजा अपने मुल्की माली नयकामोंकी अत्यन्त होशियारीमें तत्पर बनारहिते भी प्रजाका

प्राणहानि बचाने की आवश्यकता मात्रघातुक जीवोंको आखेट भी करता रहै तो यह मृगयाकर्म व्यसनासक्ति में गिनती नहीं केवल जीवहिंसा में गिनती है तिसके लिये वन्य पशुहिंसाके प्रायश्चित्त प्रतीत होतेहैं परन्तु राजाका अहकर्म राजकर्मों की जरूरत मे गिनती होजानेसे उसपर उसरीति के प्रायश्चित्त नहीं आरूढ होते हैं कि जैसे कृच्छ्र आदि व्रत लिखिचुके किन्तु राजापर दानरूपी प्रायश्चित्त आरूढ होतेहैं इसीलिये राजघरों में नित्यंप्रति निरन्तर अनेक महादान होतेरहितेहैं और भी पुरश्चरण होमयज्ञ आदि करनेवाले विद्वान् ब्राह्मण सत्कर्म करते रहिते हैं— परन्तु—यदि कोई राजा मृगया शिकार में आवश्यकसे उपरान्तु भी ऐसा तत्पर हो जाय जो केवल इसी व्यसन मे लयलीन रहिकर माली मुल्की आदि सब कामोंकी सुदिबुधि भुलाइडारै तौ यह मृगयाकर्म उसका दुर्व्यसनमें गिनतीहै तव इस दुर्व्यसन का उपपातक मेटिदेनेके निमित्त प्रायश्चित्त करना चाहिये ॥ अथदुर्व्यसनप्रायश्चित्तं—यद्यपि योगीश्वरने कोई जुदा प्रायश्चित्त इसका नहींकहा तिससे४४ चवालिसके परिच्छेद में छोटे वड़े प्रायश्चित्तोंको दोषकी छोटाई वडाई अनुसार चुनिके लेलेने होंगे (यहाँ सब तरह के व्यसनमात्र समझिलेने जो अपने ऊर्ध्वोक्त अर्थोंकी हद्दतक पहुँचेहों)परन्तु जो कोई अतिशय हठके साथ वारंवार दुर्व्यसनका अभ्यास करै तिसके लिये अग्रोक्त प्रायश्चित्त हैं=यदाहवौधायनः=अथाशुचिकारीणिद्यूतमभिचारोऽनाहिताग्नेरुञ्छवृत्तिः समावृत्तस्यभैक्ष्यचर्य्यातस्यच गुरुकुलेवासऊर्ध्वंच चतुर्भ्योमासेभ्योयश्चतमध्यापयतिनक्षत्रनिर्देशनंचेति द्वादशमासान्द्वादशार्धमासान्द्वादशद्वादशाहान्द्वादशषडहान्द्वादशत्र्यहांश्चत्र्यहमेकाहमित्यशुचिकरनिर्देशः(इतिसूतेवार्यिकव्रतमुक्तंतदभ्यासविषयमितिमिताक्षरा=अर्थात्—वौधायनके वचनसे ये सातकर्मअशुचिकर नामके उपपाप कहातेहैंकि—१द्यूत•२अभिचारप्रयोग•३अग्नि होत्री न होतेउञ्छवृत्ति फैलेहुये दानेराहघाटसेचुगना•४समावृत्त जोवेदपाठकेगुरुकुल से लौटिचुकातिसका भीखमांगना• ५समावृत्त नामका उत्सवकर्म लौटि आने मद्धये होचुकाजिसका ऐसेविद्यार्थीकाफिरगुरुकुलमें रहिना•६समावृत्तविद्यार्थी जोअधकचालौटिआवै जोचारमहीने वीतिजानेबादि फिरि गुरुकुलमें घुसै तिसका पढानेवाला गुरु भी इन पापोंमें गिनतीहै• ७ सातवां वहभी जो विना बुलाये बिनाबूझे घर घर नक्षत्र आदि पंचांग सुनाता फिरै—इन सातोंके यथाक्रमसे जुदे जुदेसात प्रायश्चित्तों की अवधी भी वौधायन अब कहिते हैं कि—वारह महीनेका ब्रह्मचर्य१—उससे आधा छमाही ब्रह्मचर्य२—एकसौ चवालिस दिनमें वारह प्राजापत्य३—बहत्तरि दिनमें

केके दिनके बारह कृच्छ्रार्ध४—छत्तीस दिनमें तीन तीन दिनके बारह प्रयोगयष्ठान्न कालतावाले५—केवल तीन दिनका उपवास६—केवल एकदिन रातिका उपवास७= विज्ञानेश्वर कहिते हैं कि इन सातोंका क्रम देखने से निश्चित होगया कि द्यूतकर्म जुआरोपनकी धत्त में एकवर्षका व्रत कहागया और द्यूतकर्म ऊर्ध्वोक्त दुर्व्यसनों में गिनती होचुका तिससे सभी दुर्व्यसनोंपर यह वर्षदिनका प्रायश्चित्त ठहिरा सो यह वारंवार हठकेसाथ अभ्यास करनेपर समझना (और यहभी समझे रहिना कि यद्यपि विद्यार्थी क्षत्री वैश्य भी होतेहैं तथापि अत्रोक्त सर्व कर्म विशेषकर ब्राह्मणसे अपेक्षा रखतेहैं तथैव जो आगे वचन कहेंगे तिसमें समझलेना ॥ ० ॥ इसीके समान एक दूसरी व्यवस्थाहै=यदाहप्रचेताः=अनृतवाक्तस्कररोराजभृत्योवृक्षारोपकवृत्तिगरदोऽग्निदोऽश्वरथगजारोहणावृत्तिः रंगोपजीवीश्वगणिकः शूद्रोपाध्यायोवृषलीपति र्भांडिकोनक्षत्रोपजीवोश्ववृत्तिर्ब्रह्मजीवी चिकित्सकोदेवलकःपुरोहितःकितवोमद्यपः कूटकारकोऽपत्यविक्रयीमनुष्यपशुविक्रेताचेति नानूढरेत्समेत्यन्यायतोब्राह्मणाव्यवस्ययासर्वद्रव्यत्यागेचतुर्थकालाहारःसंवत्सरंत्रिषवणमुपस्पृशेयुःतस्यांतेदेवपितृतर्पणांग वाह्निकंचेत्येवंव्यवहार्याइति (तदपिबौधायनेनसमानविषयमितिमिताक्षरा= अर्थात्—प्रचेताने विशेषकर ब्राह्मणोंमें छब्बीस उपपातकी गिनायेहैं कि•असत्यबोली का अभ्यास राखनेवाला• चोरी करनेवाला• राजकादासत्व करनेवाला• वृक्ष लगाना आदि मालीकी वृत्ति जीविकाकरै• किसीको विषदेवै•आग लगावै• कोचमानी या• रथमानी या• हाथीमानीसे जीविका•रँगरेजी वा छीपी आदि रँगसाजी से जीविका• कुत्ते बहुतपालें बेचें या उनकी गिनती रखवारी आदिपर नौकरहोय• शूद्रोंकी पावाई पुरोहिताई करै•वृषलीभार्या जिसके घरमें होय•भांडिक जो राजद्वारों मे तुरुही आदि शब्दोंसे कालसूचन करनेकी जीविकाराखै• नक्षत्रोपजीवी जो पंचांग नक्षत्र आदि सुनाते फिरते जीविका करै•श्ववृत्ति वह कि जो कुत्तोंकी तरह घर घर फिरते किसी तरहकी जीविकाराखै या ओछी सेवकाई नौकरी आदि करताहो• ब्राह्मजीवी जोब्राह्मणके कामोंमें मजूरीलेकर परिचारकबनै यद्वा ब्रह्म जो वेदहै तिसके विक्रय आदिसे जीविका करै• चिकित्सक जो फोड़ा फुंसी चीर फार आदि मैली चिकित्साकरै• देवल जो किसी देवालयका चढावा खानेकी जीविका राखै• पुरोहित चाहें किसी वर्णकाहो जो छठी दसूठन आदि सूतकों का प्रतिग्रह लेनेकी वृत्ति राखता हो तिसका चर्चाहै (अदालतोंमखा पुरोहितों का चर्चा इसमें नहीं कितव के दोअर्थ हैं एक छलिया जो छलसे ठगईवाले कामकरै दूसरा जुआरी

कितव कहाता है॰ समाप नगोवाज॰ कूट कारक जो अदालती आदि व्यवहारों में झूठी गवाही आदि जालसाजी करता कराता हो॰अपत्य विक्रयी जो अपनी संतान बेचताहो॰मनुष्यविक्रेता(बर्दफरोश)जो पराये स्त्री पुरुष कहींसे छलिकर वा खरीदि कर बेचताहो॰पशुविक्रेता जो पशुओंके क्रय विक्रयसे जीविका रखताहो॰ चकार के स्वच्छन्दसे पक्षी आदिका वेचना भी समझिलेना–येछव्वीसनाम गिनानेवादि प्रचेता कहितेहैं कि इतने उपपातकी ब्राह्मण इनकामों में अच्छीतरह लीन हुये पीछे प्रायश्चित्तसे भी उद्धार होने योग्य नहीं किन्तु मुक्तिरूपी फलके भागी नहीं होसक्ते हैं तथापि ब्राह्मणत्व की व्यवस्थावाले न्यायसे इतना होसक्ताहै कि–इन कामोंसे जो कुछ द्रव्यलेचुके हों सो सब त्यागिके दिनके चौथेकाल में भोजनका नियम लेकर एकसालभर त्रिकाल स्नान कियाकरैं और स्नानके अन्तमें देवतर्पण पितृतर्पण कियाकरैं फिर गोग्रासदेना आदि आन्हिक नित्यकर्म भी किया करैं तौ इस करने से संसारी लोगोंसाथ व्यवहार शादी गमीके हेतमेल योग्य होजाते हैं (मिताक्षरा कार कहितेहैं कि यह प्रचेताकी दर्शाई व्यवस्था भी बौधायनके समान विषयपर समझिलेनी=और=मनुके कहे अपांक्तेय पुरुषोंवाले प्रायश्चित्त (जो माता पिता पुत्रोंके त्यागपर लिखिचुके हैं सो) भी यहां व्यसनकी व्यवस्था में लेलने चाहिये= यदाह मनुः=षष्ठान्नकालतामाससंहिताजपसववा होमाश्चशाकलानित्यमपांक्तानां विशोधनम्=अर्थात्–षष्ठान्नकालतानाम छठेदिन अन्न भोजन या तीसरे दिन संध्याकालसे पीछे भोजनका नियम एक महीनाभर साधे अथवा वेद संहिताका पाठ या गायत्रीका जपही एक महीनाभर करै तहां नित्यंप्रति होम करतारहे यह अपांक्तों का विशोधन प्रायश्चित्त है–इसका विशेष ब्योरा (पितृ मातृ सुत गुरु त्याग) के स्थलपर देखौ=इनमें बड़े छोटे प्रायश्चित्तों के स्वरूप दोषी का दोष जैसा बड़ा या छोटा हो तिसके अनुरूप युक्ति से सोचिलेना ॥ इतिसर्वव्यसनानांप्रायश्चित्तं ॥



अथ आत्मविक्रयशूद्रसेवाद्युपपातकचतुष्टयस्य प्रायश्चित्तप्रकाशकोऽयं परिच्छेदः सप्तषष्टिः (६७)॥

—*—

इस परिच्छेद में चार उपपातकों के प्रायश्चित्त कहे जायँगे तिनमें प्रथम आत्मविक्रय और शूद्रकी सेवाका फिर हीन जातिकी मैत्री का फिर हीनयोनि सेवन करने का॥

(आत्मविक्रयशूद्रसेवनयोःप्रायश्चित्तं)

व्यसनों से लगमा दोसौ चालीस २४० सूत्र श्लोक के अंत में (आत्म विक्रय) भी उपपातक फिर २४१ में (शूद्रप्रेष्य) भी उपपातक बताया था—इन दोनों के प्रायश्चित्त योगीश्वर ने जुदे करिके नहीं कहे—तिनसे ४४ चवालिस परिच्छेदमें छोटे बड़े प्रायश्चित्त चुनिकर इनके दोषकी छोटाई बड़ाईपर जोड़िलेना=इसमें शूद्र सेवा के मध्ये एक बौधायनका वचन भी देखा गया है=यथा=समुद्र यानंब्राह्मणस्यन्यासा पहरणंसर्वापरादैर्व्यवहरणंभूम्यपनृत्तं शूद्रसेवायश्चशूद्रायामभिजायते तदपत्यंच भवतितेषांतुनिर्देशः चतुर्थकालंमितभोजनास्युरपोऽभ्युपेयुःसवनानुकल्पं स्थानासना भ्यांविहरन्तएतेस्त्रिभिर्वर्षैरस्तदपघ्नंतिपापम् (इतितद्दहुकालसेवाविषयमितिमिताक्षरा=अर्थात्–समुद्रकीयात्राजोजहाजपरहोतीहै•ब्राह्मणकीधरोहरिहर लेना•जोचीजें वेचनानिषिद्धहै तिनसे व्यवहारकरना•भूम्यनृतंकर्म अर्थात् धरतीकाखोदनाभीतर बुननाआदि अथवा(भूम्यपवृत्त पाठ होनेसे)परांमुखहोजाना धरतीत्यागि देनावेचि देना आदि अर्थजिनकेमते है जो कुछहो सोसही• शूद्र जातिकीनौकरी करना•औरजो कोई शूद्रामें बीजदान करिके जन्म धरै•औरउनकेजोशूद्राकीसन्ताननहोय•तिनसबके लिये यहआज्ञाहै कि इनकेचौथे कालमें एकही वार थोड़ासाभोजनकरनेकानियम साधेहुये नित्यप्रति सवनकेतुल्य स्नानक्रियाकरैं अर्थात्जैसे यज्ञोंकाअंगभूतस्नान वेद के मंत्रोंसे अभिषेचन हुआ करता है वही सवन कहाताहै तैसा रोजकरैं और स्थान तथा आसनको छूटनाम विचरते हुये इनसे कर्मोंसे तीनि वर्षमें उन पापोंको धोसके हैं विज्ञानेश्वर मिताक्षराकार कहिते हैं कि इनमें जो इस प्रकरणके प्रयोजन पर शूद्र की सेवा लेना आवश्यक है तिनके लिये यह तीनि वर्षोंका प्रायश्चित्त उस दशामें

मालूम होगा कि जिसने वहुत काल शूद्र की सेवा करीहो अन्यथा थोडे काल की सेवा सध्ये ४४ चवालिसपरिच्छेद वाले प्रायश्चित्त यथायोग्य चुनि कर लेने होंगे यह ऊपर भी लिखिचुके हैं—इसी प्रकार—आत्मविक्रय अपना देह किसी के हाथ वेचिकर दास होजाना आदि भी समझिलेना कि जिसने आप वेचने का वचन मात्र पक्का कियाहो तिसपर सबसे छोटा प्रायश्चित्त फिर जिसने अपना देह दूसरेके परिग्रहमें फँसाही दिया तिसके छूटिआने पर कुछ वडा प्रायश्चित्त फिर जो कोई कुछ अवधि तक दूसरेके कब्जामें रहिकर छूटा तिसपर कुछ और वडा या जो कोई अति काल रहिके छूटे तिनपर अग्रोक्त तीनि वर्षोंका प्रायश्चित्त भी आरूढ होसक्ता है इत्यात्मविक्रयशूद्रसेवनयोः प्रायश्चित्तं॥

(हीनमैत्री प्रायश्चित्तं)

शूद्रसेवाके लगभग २४१ दोसौ इकतालिस सूतश्लोकमें हीनजातिसे मित्रता करना (हीनसख्य) इस नामसे उपपातक दर्शाया था तिसका प्रायश्चित्त योगीश्वरने जुदा कुछ नहीं कहा तिससे ४४ चवालिस परिच्छेदमें से छोटे वडे प्रायश्चित्तोंको दोषके अनुसार चुनिके जोडिलेना=मिताक्षरा कार कहिते हैं कि प्रचेताने जो ऐसा कहाहै कि=मित्रभेदकरणादहोरात्रमनश्नन् हुत्वापयःपिवेदिति(तदहीनसख्यभेदविषयं=अर्थात्—मित्रोंमें भेद करानेके दोषसे एक दिन राति भर निराहार होकर अग्नि में होम करिके दूधपीवे (सो यह प्रायश्चित्त अहीन जाति के मित्रोंमें भेद कराने पर समझना (यद्यपि इस प्रकरणमें यह वचन लिखाजाने का प्रयोजन कुछ नहीं था तौभी जो महात्मा लोग लिखिचुके सो हमने भी लिखि दिया॥ इतिहीनजातिमित्रीकरण प्रायश्चित्तं॥

(हीनयोनिसेवन प्रायश्चित्तं)

हीनसख्यसे लगभग २४१ दोसौ इकतालिस सूतश्लोकमें (हीनयोनि सेवन) इस नामका उपपातक दर्शाया था परन्तु योगीश्वर ने उसका प्रायश्चित्त जुदा करिके नहीं कहा तिससे ४४ चवालिस परिच्छेदमें छोटे वडे प्रायश्चित्तोंको चुनिकर यहां दोषकी छोटाई वडाई सोचिके जोडिलेना—परन्तु—हीनयोनिका सेवन भी कईभांति का होताहै कि एक तौ वेश्या आदि साधारण स्त्रियोंका भोगभी हीनयोनिका सेवन है अथवा अपनेसे नीचे वर्णकी स्त्रियोंसे विवाह जिसने किया हो इत्यादि भेदों के

जुदे प्रायश्चित्त आगे दर्शाते हैं=यथाह शातातपः=ब्राह्मणोराजन्यापूर्वः कृच्छ्रन्द्वा दशरात्रंचरित्वा निविशेत्तांचोपयच्छेत वैश्यापूर्वीतप्तकृच्छ्रं शूद्रापूर्वीतुकृच्छ्रातिकृच्छ्रं राजन्यश्चेद्वैश्यापूर्वः कृच्छ्रं द्वादशरात्रंचरित्वा निविशेत्तांचोपयच्छेदिति शूद्रापूर्वीत्वतिकृच्छ्रं वैश्यश्चेच्छूद्रापूर्वः कृच्छ्रन्द्वादशरात्रंचरित्वातांचोपयच्छेदिति—तत्र (निविशेत्तांचोपयच्छेदिति कृच्छ्रानुष्ठानोत्तरकालं सवर्णापरिणयनादूर्ध्वं तांचराजन्यादिकामुपयच्छेदित्यर्थः) इदंचाज्ञानविषयं—ज्ञानतस्तूपपातकसामान्यप्रायश्चित्तं व्यवस्थितमेवद्रष्टव्यमितिमिताक्षरा=अर्थात्—शातातपने कहा है कि जिस ब्राह्मण के घरमें पहिले क्षत्राणी विवाहिता होचुकीहो वहीजब अपने वर्णमें विवाह करना चाहे तो यह उसके ऊपर दोषहै कि पहले नीचे वर्णमें विवाह किया इसी लिये सवर्णको विवाहनेसे पहिले बारह दिन कृच्छ्र व्रत करिके पीछे विवाह करै फिर उस क्षत्राणीको भी पासही रक्खै• इसीरीतिसे जो ब्राह्मण पहिले वैश्यासे विवाह करचुकाहो सो तप्तकृच्छ्र व्रत करिके सवर्णासे विवाह करै फिर उस पहिलीको भी पास रक्खे• इसी रीतिसे जो ब्राह्मण पहिले शूद्रासे विवाहकरचुकाहो सो कृच्छ्रातिकृच्छ्र व्रत करिके तब सवर्णासे विवाह करै फिर उस पहिलीको भी रक्खे—क्षत्री जो पहिले वैश्यासे विवाह करचुकाहो सो बारह दिन कृच्छ्रव्रत करिके अपनी सवर्णासे विवाह करै फिर उस पहिलीको भी पास रक्खै• जो क्षत्री पहिले शूद्रासाथ विवाह करचुकाहो सो अतिकृच्छ्र करिके पीछे सवर्णासे विवाह करै फिर उस पहिलीको भी पास रक्खे—वैश्य जो शूद्राके साथ विवाह करचुकाहो सो बारह दिन कृच्छ्रव्रत करिके तब सवर्णासे विवाह करै फिर उस पहिलीको भी पास रक्खे—परन्तु मिताक्षराकार कहितेहैं ये छोटे प्रायश्चित्त केवल उनके लिये समझना जिन्हों ने नीचे वर्णकी कन्या विनाजाने धोखा आदिसे विवाहि ली होय—किन्तु जानतेहुये इच्छा सहित जिसने नीचे वर्णकी कन्या ग्रहण करीहोय तिसके लिये जैसा ऊपर लिखचुके तेसा ४४ चवालिसके परिच्छेदसे सामान्य उपपातकों वाले प्रायश्चित्त चुनिकर लेने चाहिये॥ वेश्यादि भोगविषयेतु विशेषः—वेश्या आदि साधारण स्त्रियां जो सबजनोंके भोग निमित्तमें प्रसिद्ध होतीहैं तिनका भोग भी हीनयोनिका सेवन कहाता है—तिनका गमन यदि एकबार इच्छा विना किसी धोखा से होगया हो तहां करने योग्य को कहे प्रायश्चित्त जोडने=यथा=पशुवेश्याभिगमने प्राजापत्यं विधीयते तथा वेश्यागमनमुपपातकमपीहेतिद्विजातयः परिवासकृतमकृतस्त सप्तरात्रंकृ च्छ्रकं=अर्थात्—पशुकी योनि या वेश्याकी योनि में संगम करने पर प्राजापत्य

करना चाहिये—तथा—वेश्याके संगम से उत्पन्न पाप को द्विजाती लोग इस तरह से धोसक्ते हैं कि सात दिन तक एकही एकवार कुशाओंका औटाया पानी खूब गरम पीके रहैं॰ यह अज्ञानताका प्रायश्चित्त कहा=परन्तु जिसने जानि बूझि के वेश्या में संगम कियाहो तिसके लिये ४४ चवालिस परिच्छेद वाले छोटे बड़े प्रायश्चित्त थोड़े या बहुत दिनके अभ्यास रूपी छोटे बड़े पापके अनुसार चुनिके समझिलेने—परन्तु—इसमें कुछ भेद अभी और है कि जिसने इच्छा सहित वारम्वार वेश्यागमन का अभ्यास कियाहो तहां (प्रतिनिमित्तंनैमित्तिकमावर्तते इतिन्यायात्) हरएक पापके ऊपर प्रायश्चित्तकी आवृत्ति बढ़ती है इस न्यायसे) प्रत्येक पाप के ऊपर प्रायश्चित्तोंकी सख्या बहुत होती देखिके लोकाक्षि आचार्यने एक जुदाही नियम दर्शाया है=यथाह लौगाक्षिः=अभ्यासेहगुणावृद्धिर्मासादर्वाग्विधीयते ततोमासगुणावृद्धिर्यावत्संवत्सरंभवेत् ततःसंवत्सरगुणायावत्पापंसमाचरेदिति (इदंमतिपूर्वविषयं=अर्थात्—जो कुछ प्रायश्चित्त एकवार के पाप करने पर कहा गयाहो तिसकी वृद्धि महीनाके भीतर कई वार पाप करने में उन्हीं दिवसों को संख्या साथ करी जायगी कि जितने दिनों पाप कियाहो फिर महीनासे उपरान्त एकसाल के भीतर में जितने महीने पाप कियाहो उन्हींकी संख्यासे गुणाकर प्रायश्चित्तोंकी आवृत्ति बढ़ाई जायँगी अर्थात् जितने महीने ठहिरैं उतनेही प्रायश्चित्त करने परैं फिर एक वर्षसे उपरांतमें जितने वर्ष तक पाप करता रहा हो उतनेही प्रायश्चित्त करने परैं—सो यह नियम केवल उसके लिये समझना कि जिसने जानते हुये पाप किया हो=किन्तु=जिसने विना जाने वारम्वार पाप करनेका अभ्यास कियाहो तिसके लिये चतुर्विंशतिमत नामके ग्रन्थ में विशेषता कही गईहै=यथा=सकृत्कृतेतुयत्प्रोक्तं त्रिगुणंतत्त्रिभिर्दिनैः मासात्पंचगुणंप्रोक्तंषण्मासाद्दशधाभवेत् संवत्सरात्पचदशंत्र्यब्दाद्विंशगुणंभवेत्ततोप्येवंप्रकल्प्यंस्याच्छातातपवचोयथा=अर्थात्—एकवार पाप करने में जो कुछ प्रायश्चित्त कहा गयाहो सो तीन दिनके भीतरमें तद्रूप कियाजाय किंतु तीन दिनोंसे उपरान्त महीनाके भीतर चाहैं कितनेही दिवसों विनाजाने पाप किया हो तिसपर तिगुना प्रायश्चित्त चाहिये और महीनासे ऊपर छमाहीके भीतर विना जाने चाहैं कितनेही वार पाप कियाहो तिसपर पांचगुना प्रायश्चित्त चाहिये और छमाहीसे ऊपर पूरे सालके भीतर विना जाने चाहैं कितनेही वार पाप किया हो तिसपर दशगुणा प्रायश्चित्त चाहिये और एकवर्षसे ऊपर तीनिवर्षके भीतर विना जाने चाहैं कितनेही वार पाप किया हो तिस पर पन्द्रह गुणा प्रायश्चित्त चाहिये

और तीन वर्षसे उपरान्तमें बीसगुणा प्रायश्चित्त चाहिये—तिसपर भी ऐसी कल्पना करनी चाहिये कि जैसा शातातपके वचनमें इसी वार्ताका चर्चा कहीं आचुका हो विरोधशांति: व्यानकरो इस पिछले अङ्कमें कल्पना करनेकी आज्ञा कही तिसका यह तात्पर्य नहींहै कि इसी तरह बीसगुनेसे भी अधिक बढाते चले जायँ जैसी वर्ष अधिक देखें—क्योंकि ऐसा समझिलेनेसे बहुत बडा अन्याय खडा होता है—तिससे इसका यह तात्पर्य है कि यद्यपि इन वचनोंमें गुणा करनेके नियम निश्चित किये गये तथापि कहीं विरोधको देखिभाल इसमें भी न्यायात्मक कल्पना अपनीयुक्ति से करनी चाहिये जैसी शातातपके वचनसे कहींशिक्षा भी होचुकीहै—और सिद्धांत इसका यही है कि विरोध का दूर करना आवश्यक है—इसका दृष्टान्त जैसा इसी जघे पर विरोध मवजूदहै कि तीनवर्षसे ऊपर चौथेवर्षमें भी बीस गुणा प्रायश्चित्त अज्ञानतासे पाप करै यापर ठहिरा कि जिसपर कोमलताकी अपेक्षाथी और उन्हीं चार वर्षोंमें केवल चौगुना प्रायश्चित्त जानिबूझि पापकरै या पर साबितहुआ कि जिसपर कठोरताकी जरूरत पाई जातीथी यह बात ऊपर लौगाक्षिवाली व्यवस्था से देखो इन दोनों के बीच अभी और भी अनेकधा विरोध पायेजासक्ते हैं तिन विरोधोंका निवारण करनेकी आज्ञा पिछले अङ्कसे दरशाईगई कि जिससे अन्याय न होनेपावे—तिसके लिये—ऊपर ले अर्थों में यह युक्ति सोचनी चाहिये कि जहां तीन दिनसे ऊपर महीनाके भीतर तिगुना करना कहा तहां भी सिर्फ चौथे दिन में तिगुना न कर देना किन्तु जैसे दिन थोड़े वा अधिक पाये जायँ तैसे सवाया डेउढा दूना तथा पन्द्रह दिनके भीतर फिर इसीतरह थोडा थोड़ा बढाते जाकर पूरे महीना तक तिगुना प्रायश्चित्त जोडना फिर पूरे कई महीने होजाने पर उन्हींकी संख्यासे गुणा करना कहिचुके हें तहां भी यह सोचना कि दो महीने तकयही तिगुना राखनेसे न्याय ठीक होगा (अन्यथा दो महीनेमे दुगुना करानेसे दोही आवृत्ति रही जाती है) तिससे तीन महीने पूरे होजाने पर पांच गुणोका प्रारम्भ करना अर्थात तिगुनेसे अधिक चौगुना चौथे पांचवे महीनाके भीतर और छठे महीनाके पूरे होने तक पांचगुणेका वर्त्तावा करना—फिर सातवे मासकेपूरे न होनेतक यही पांचगुना राखना फिर पीछे एक एक महीनाकी अधिकता होताजानेसे एक एक गुणा बढाते जाना अर्थात आठवे मासमें छे गुना नववेमे सात गुना दशवेंमें आठ गुना ग्यारहवेंमें नौ गुना बारहवेंमें दश गुना—इसीतरह पूरे वर्ष से उपरान्त जहां पन्द्रह गुणा प्रायश्चित्त तीन वर्षके भीतरमें कहिचुके तहां भी दूसरी तीसरी दोवर्षोंके २४ महीनों

पर फैलावा अपनी बुद्धिसेकरना—फिर तीनवर्षसे उपरान्तमें जो बीसगुना कहिचुके सो भी केवल चौथी वर्षमें न समझि लेना किन्तु पांच वर्ष आदि लेकर बहुत वर्षों तकविपरने मे बीस गुनेका वर्त्तावा करना चाहिये इसके भीतर उसी पन्द्रह गुने का वर्त्तावा चलाआवेगा क्योंकि (ये चतुर्विंशति मत के श्लोकों वाली व्यवस्था कुछ वाचनिक प्रभावसे संयुक्त नहीं है कि जो कुछ वचनमें उच्चारण कियागया उसीपर आरूढ होना) इसीलिये इन श्लोकों ने आपही पिछले अङ्क से कहिदिया है कि इसमें न्यायकी दृष्टिसे कल्पना भी करनी चाहिये जिससे अन्याय न होसके—वरन इस अन्यायके बचानेके निमित्तमें दोषकी छोटाई बड़ाईपर भी ध्यान देकर यहकल्पना करनी चाहिये जो अभी लिखचुके (आधुनिक अनुवादक इसबात से लाचार है कि प्राचीन सग्रहकारने निजन्याय दृष्टिसे चतुर्विंशति मतकी व्यवस्था अज्ञानता के पापसम्बे स्थापन करी और लैगाक्षिवाली व्यवस्था को इच्छा सहितके पापोंपर स्थापन किया) इसके बादि मिताक्षरा कार फिर कहते हैं कि (यत्पुनःविषेःप्राय सिकादस्मात् द्वितीयेद्विगुणांचरेदिति प्रतिनिमित्तमावृत्तिविधायकं तन्महापातक विषयमित्युक्तंप्राक्) अर्थात्—यह वचन जो प्रसिद्धहै कि इस पहिलेकिये अपराध पर जो कुछ प्रायश्चित्त की विधि कही गई तिसके करचुकने के बादि जब उसी अपराध को फिर करै तब दूना प्रायश्चित्त कराया जाय इसी प्रकार तीसरी बार तिगुना करवायाजाय इत्यादि सो यह महा पातकोंपर आरूढहै इसका निर्णय पहिले ब्रह्महत्या आदि प्रकरणोंमें होचुका तिससे यहां इसका कुछ सम्बन्ध नहीं है ॥०॥ पुनराहविज्ञानेश्वरः—यत्तुयमेनसाधारणस्त्रीगमनमभिकृत्यगुरुतल्पव्रतमतिदिष्टं—गुरुतल्पव्रतकेचित्केचिच्चान्द्रायणव्रतम् गोघ्नस्येत्यन्तकेचिचकेचिदवकीर्णिनः (इत्येतज्जन्मप्रभृतिसानुबन्धानवच्छिन्नाभ्यासविषयमितिमिताक्षरा—अर्थात्—विज्ञानेश्वर आचार्य फिर कहते हैं कि यमने जो वेश्या आदि साधारण स्त्रियां गमन करनेके पाप पर गुरुतल्प महापापवाले प्रायश्चित्तका अति देश अगिले वचन से उताराहै कि—विरले आचार्य गुरुतल्पवाला व्रत बताते और विरले चान्द्रायण व्रत बताते और विरले गोहत्या वाले प्रायश्चित्त चाहना करते और विरले अवकीर्णी ब्रह्मचारी वाले प्रायश्चित्त ठहिराते हैं कि जैसा काने गदहा से नैऋत याग करना आदि कहागयाथा• इनमेंसे गुरुतल्पीवाला व्रत केवल उसकेलिये समझना कि जो मनुष्य अपने जन्मसे सुधि सम्हारनेके साथही खुलाखुली वेश्याबाजीमें तत्परहोके हठके साथ निरन्तर अभ्यास करता रहिकर अपनी बहुत अवस्थाको बिताइचुका

तिसको जब संसारी व्यवहारोंमें शामिल होनेकी जरूरत समझी जाय और वेश्या के साथ भोजन करलेने आदि प्रकारोंसे बचा भी रहिसकाहो=और जो गुरुतल्प से छोटे प्रायश्चित्त इसी यमके वचनमें दर्शायेगये सो सब यथायोग्य छोटे मोटे दोषों की दशाके अनुसार वेश्यागामीपर आरूढ किये जासक्ते हैं॥ इतिवेश्यादिहीनयोनिसेवनप्रायश्चित्तं॥

अथ अनाश्रमवासादि सदसत्प्रतिग्रहांतोपपातक षट्कस्यप्रायश्चित्तप्रकाशकोऽयंपरिच्छेदः अष्टषष्टितमः(६८)



इस परिच्छेद में छः प्रकारके उपपातकोंका प्रायश्चित्त दर्शाया जायगा-तिनमे प्रथम अनाश्रमीका प्रायश्चित्त फिर परान्नलोलुपका और असत्शास्त्रके अभ्यासीका और खानिके अधिकारीका और भार्या बेचनेवालेका फिर असत्प्रतिग्रह और सत्प्रतिग्रहलेनेका प्रायश्चित्त कहाजायगा॥

(अनाश्रमवासप्रायश्चित्तं)

दोसौ इकतालिस मूल श्लोकमें हीन योनि सेवनसे लगमा योगीश्वरने (तथैवानाश्रमेवासः) इस पदसे अनाश्रम वास रूपी उपपातक ठहिरायाथा विशेष ब्यौरा इसका उसी २४१ की अधिकोक्तिमें देखो परंच जुदा प्रायश्चित्त कहीं नहीं कहा तिससे ४४ चवालिस परिच्छेदका सहारालेनाहोगा-परन्तु-हारीतने जुदाप्रायश्चित्त भी कहा है=यथा=अनाश्रमी संवत्सरं प्राजापत्यकृच्छ्रं चरित्वाऽऽश्रममुपेयात द्वितीयेऽति कृच्छ्रं तृतीये कृच्छ्रातिकृच्छ्र मत ऊर्ध्वं चान्द्रायणमिति-एतदसम्भवविषय सम्भवेतु सामान्योपपातक प्रायश्चित्तानि कामाकामतोव्यवस्थापनीयानीति मिताक्षरा=अर्थात-अनाश्रमी उसका नामहै जो चार आश्रमों में किसी भी आश्रम का साथी न होय किन्तु भार्य्या मरजाने या प्रथमसेही विवाह न करनेसे निरंगरहिकर गृहस्थीके आश्रमको न थांभे न ब्रह्मचारी संन्यासी वानप्रस्थहोजाय ऐसा पुरुष ठिकाना ठांवबिना चाहै तहां बैठिके या चाहै तिसकेपास पेट भरिके दिन काटै सो अनाश्रमी ठीक ठीकहै तिसकेलिये हारीतमुनि कहतेहैं कि-एकसाल भर अनाश्रमी

होके जहां तहां दिन काटै सो इस दोष के ऊपर प्राजापत्य कृच्छ् व्रत आचरण करिके किसी आश्रममें दाखिल होजाय॰दूसरेसालतक अनाश्रमी होके रहा फिरा होय सो अति कृच्छ् करिके आश्रम का स्वीकार करै॰ तीसरे साल तक अनाश्रमी फिराहोय सो कृच्छ्रातिकृच्छ् करिके आश्रमथांभे॰तीनवर्षसे भी अधिक जो अनाश्रमी रहाहो सो महीना भर चान्द्रायण करिके आश्रमका सहारालेवे— मिताक्षराकार कहितेहैं कि यहनियम हारीतवाला उसकेलिये समझना जिसका विवाहादि न होसकनेसे गृहस्थ आदि आदिआश्रमका विक्षेप लाचारीसे रहा हो॰किन्तु जिसने विवाहआदि आश्रमों के डौल होसकतेहुये उपेक्षा करीहो तिसकेलिये४४चवालिस परिच्छेद में सामान्य उपपातकों वाले बड़े छोटे प्रायश्चित्त दोष दशा के अनुसार चुनिके जोड़ि लेने चाहिये=इस वार्त्ताका संक्षेप ब्योरा २४१ दोसौइकतालिस मूल श्लोकवाली अविकोक्तिमें लिखचुके तहांदेखो॥ इत्यनाश्रमवासप्रायश्चित्तं॥

(परपाकरुचित्वादीनांप्रायश्चित्तचतुष्टयं)

अनाश्रमवास के लगमा २४१में (परान्नपरिपुष्टता) इस पदसे परपाक रुचित्व कहिके २४२ दोसौबयालिस मूलश्लोकमें तीन उपपातकों के नाम और भी योगीश्वरने इसक्रमसे कहेये (असत शास्त्रों का अधिगमन) (आकरेषु अधिकारता) (भार्याविक्रय) अर्थ इनचारोंके उसी मूल श्लोकमें देखो—इन चारोंके प्रायश्चित्त कहीं जुदे करिके नहीं कहे गये हैं—तिससे ४४ चवालिस परिच्छेद में साधारण प्रायश्चित्त योगीश्वर तथा मनुके कहे छोटे बड़े चुनिकर इनके दोषोंकी छोटाईबड़ाई परजाति और शक्ति और गुणादिकों की अपेक्षासे व्यवस्थापन करलेने चाहिये॥ इतिपरपाकरुचित्वादिभार्याविक्रयांतानांप्रायश्चित्तं॥

यहांतक सर्वत्रदोसौनियाली मूलश्लोकवाली टीकाकाशेषपाठ चलाआता था कि जिसकाचर्चा ६४चौंसठि परिच्छेदके प्रारम्भसमय लिखागया सो अबनिपटिगया॥

(असत्प्रतिग्रहप्रायश्चित्तं)

दोसौबयालिस २४२ मूलश्लोक में (भार्यायाविक्रयश्च) इस चकारके व्यङ्ग्यार्थ से बिना कहे भी उपपातक मन्वादिस्मृतियों के लिखे समझने कहिचुके हैं उसीको अविकोक्तिमेंदेखो कि मन्वादिक ऋषीश्वरोंके दर्शायेनाम असत्प्रतिग्रहआदि अनेक जो वहांपर कहिचुकेथे उनके भी प्रायश्चित्त आगे यथा क्रमसे दर्शावेंगे तिनमें

से असत्प्रतिग्रह लेनेका प्रायश्चित्त यहां पर मूलश्लोक से योगीश्वर दर्शाते हैं॥

गोष्ठेवसन्ब्रह्मचारीमासमेकंपयोव्रतः। गायत्रीजाप्यनिरतःशुद्ध्यतेऽसत्प्रतिग्रहात् २९०

अर्थः-ब्रह्मचारी होके एक महीना गोष्ठमें बसते पयोव्रत करते गायत्री के जप में निरत होवै सो असत्प्रतिग्रह से शुद्ध होताहै=अर्थात्-जिस पंडित ने असत्प्रतिग्रह खोंटादान लेलिया होय सो इस पापसे इस तरह शुद्ध होताहै कि बहुतसी गौओं के समूहवाले गोंहरे में महीना भर ब्रह्मचर्य की भावना सहित बसिकर केवल एकबार थोड़ा दूधपीनेका व्रतलेकर नित्यंप्रति संतत गायत्रीके जपमें लगा रहाकरै॥२९०॥

२९०अधिकोक्तिः=खोंटादान उसको समझना जो दाताकी जाति नीच होने या जाति श्रेष्ठ होने पर कर्म नीच होनेसे भी दान असत कहाता है-दृष्टान्त जैसे चंडाल आदि महानीचसे प्रतिग्रह लेना या कर्मोंसे महापातकी आदि पतित होय तिसका दिया प्रतिग्रह लेना=तथैवदेश और कालके योगसे भी खोंटादान कहाताहै-दृष्टांत जैसे कुरुक्षेत्र के तीर्थमें यह देश ठहिरा और ग्रहण आदि पर्वोंमें प्रतिग्रह लेना यही अनिष्ट कालके योगसे खोंटापन ठहिरा=तथैव निंदित द्रव्योंके स्वरूपसे भी प्रतिग्रह का खोंटापन होताहै-दृष्टान्त जैसे मदिरा या भेड़ या मरे मनुष्यका शय्यादान या उभय तोमुखी गायकादान आदि अनेक दान अपनी वस्तु के स्वरूपही से असत कहाते हैं (उभयमुखी गाय वह कहातीहै जिसके दोनोंओर मुख होयँ अर्थात् बियाते समय निकसते हुये बच्चे का मुंह पीछे और आगे अपना मुंह तिसका उसी समय दानकरने से उभय तोमुखीका प्रतिग्रहलेना परताहै)॥ ०॥ मिताक्षराकार कहितेहैं कि जो प्रायश्चित्त मूल श्लोक में कहा गया सो कुछ बड़ा देखि परता है तिससे यह ऐसे पुरुष पर आरूढ करना चाहिये जिसमें खोंटे दान के दो दोष पायेजायँ (अर्थात खोंटे दान के चिह्न सब लिखिचुके तिनमें देखो) कि जिसने पतित या चण्डाल या रजस्वला आदि किसी खोंटेके हाथसे खोंटाही द्रव्य भेड़ बकरी आदि प्रतिग्रह लियाहो इसीदृष्टान्त से और भी दो दो बात मिलाकर समझिलेना कि दो बातोंके मिलापसे दोष बड़ापन आजाताहै जैसे एकड़ाके पास एकड़ा धरनेसे ग्यारह बनिजाते हैं तिससे ऐसीदशामें यह बड़ा प्रायश्चित चाहिये-तहां-यद्यपि गायत्री के जपकी तादाद योगीश्वर ने कुछ नहीं कही परन्तु मनुने उसकी संख्या भी कहि दई है-यथा=जपित्वात्रीणिसावित्र्याःसहस्राणिसमाहितः मासंगोष्ठेपयःपीत्वामुच्यते ऽसत्प्रतिग्रहात्=अर्थात्-एक महीना भर नित्यप्रति गायत्रीमंत्र के तीनि सहस्रजप कर गौओं के गोंहरे में ग्राम से बाहर निवास करते दूध पीकर व्रत करै सो इसअ-

सत्प्रतिग्रह के पाप से छुटि जाता है—अब दूसरी व्यवस्था देखो॥ ०॥ जिसने किसी न्यायवर्ती धर्मात्मा ब्राह्मण आदि श्रेष्ठ पुरुषसे खोटा प्रतिग्रह भेड़ा बकरा आदि कुछ लिया हो तिसपर एक वस्तु के खोटे स्वरूप ही का दोष पाया जाता है यद्वा वर्त्तो मकान आदि श्रेष्ठ चीजों का प्रतिग्रह पतित आदि महा पापी से या चण्डाल आदि अशुचि मनुष्यों से लिया हो तिस परभी एकही दोष पाया जाता है॰तिसके लिये षट्त्रिंशन्मत के कहे प्रायश्चित्त चाहिये=यथा=पवित्रेष्ट्या विशुद्ध्यंतिसर्वेघोराःप्रतिग्रहाः ऐन्दवेनमृगारेष्ट्याकदाचिन्मित्रविंदया देव्याःलक्षजपेनैवशुद्ध्यन्तेदुष्प्रतिग्रहात्=अर्थात्—सब तरह के खोटे प्रतिग्रह जिनके लेने से महा घोर पाप होते हैं तिनके भी लिवैया शुद्ध होते हैं पवित्रेष्टि के करनेसे अर्थात् पवित्र नाम यज्ञोपवीत है तिसकी इष्टि करना पुनर्यज्ञोपवीत का सर्वथा संस्कार कराना यह तात्पर्य है॰ परन्तु जो प्रतिग्रह अत्यंत घोर न समझा जाय तो फिर इसी पवित्रेष्टि का अर्थ पवित्रारोपण या पवित्रारोहण इस नाम का यज्ञ माना जाय जिसका यह लक्षण है कि श्रावण महीना की शुक्ला द्वादशी के दिवस विष्णु देव के नाम से यज्ञोपवीत कर्म किया जाता है—जहां इससे भी हलुका प्रतिग्रह समझा जाय जिसके मित्रही निन्दा करैं तौ इस दोष में ऐंदव चांद्रायण व्रत करना चाहिये यद्वा मृगारेष्टि कर्म अर्थात् याचना किये द्रव्यों से अमावस्या पूर्णमासी के वेदोक्त यजन कियाकरै तौ भी शुद्ध होता है॰ अथवा यह न होसकै तौ गायत्री देवी का एक लक्ष संख्या जप ही करिके शुद्ध होता है जिसने असत्प्रतिग्रह लेलिया हो॥ ०॥ जोकि वृद्धहारीत का यह वचन है=राज्ञःप्रतिग्रहंकृत्वामासमप्सुसदावसेत् षष्ठेकालेपयोभक्षःपूर्णमासेविशुद्ध्यति तर्पयित्वाद्विजान्कामैःसततंनियतव्रतः (एतच्चपूर्वोक्तविषयाभ्यासेद्रष्टव्यं अयनापतितादेःकुरुक्षेत्रोपरागादौ कृष्णाजिनादिप्रतिग्रह विषयमितिमिताक्षरा= अर्थात्— राजा से खोटा प्रतिग्रह लेकर ब्राह्मण को चाहिये कि एक महीना भर नित्यंप्रति जल में बैठा रहा करै और एक पहर भर राति बीति जाने बाद थोड़ादूध पिआ करै फिर महीना पूरा होजाने पर ब्राह्मणों को इच्छा भोजन से तृप्त करिके शुद्ध होता है (मिताक्षरा कार कहिते हैं कि हारीत का यह वचन उस प्रतिग्रह के विषय पर मानना कि जैसा पहिले अधिकोक्ति के प्रारम्भ में दो दोषों का इकट्ठा होना लिखि चुके अथवा इस रीति से कि जिसने कुरुक्षेत्र आदि तीर्थों पर ग्रहण आदि कठिन काल में महा पापी आदि पतितों से प्रतिग्रह लिया होय) इस व्यवस्था का यह तात्पर्य ठहिरा कि हारीत के वचन में जैसा कहा गया कि राजाका

प्रतिग्रह लेकर ऐसा प्रायश्चित्त करै सो यह कथन सब राजाओं के सब अच्छे भी प्रतिग्रहों पर न समझि लेना ॥ ० ॥ इसी प्रकार प्रतिग्रह का द्रव्य थोड़ा होने की दशा पर भी प्रायश्चित्त छोटा होना चाहिये सो भी हारीत की मध्यमस्मृति का वचन देखो=तथाच हारीतः=मणिवासोगवादीनांप्रतिग्रहणो सावित्र्यष्टसहस्रंजपेत्= मणियों वा वस्त्रों वा गाय आदि उत्तम चीजों के दान इन्हीं कीमतों के अनुमान प्रतिग्रह लेनेमें आठ सहस्र गायत्री जपि डारै इसीसे शुद्ध होजाता है ॥ ० ॥ सत्प्र तिग्रहेपियथोचित प्रायश्चित्तं–षट्त्रिंशन्मत के ग्रन्थ में यह भी नियम कियाहै कि जिसने श्रेष्ठ प्रतिग्रह लिया हो सो भी कुछ प्रायश्चित्त करै=यथा=भिक्षामात्रेगृ हीतेऽतिपुण्यमंत्रमुदीरयेत् प्रतिग्रहेषुसर्वेषु षष्ठमंशंप्रकल्पयेत्=अर्थात्–जिस ब्राह्मण ने याचना करने से भिक्षामात्र का दान ग्रहण किया होय सो अति पुण्य मंत्र का उचारण करै अर्थात् अपने इष्टदेव का जो मुख्य मन्त्र है सो अति पुण्यमंत्र समझना अथवा जिसके कोई इष्टदेव न होय सो गायत्री का उचारण करै उचारण करना भी जैसी थोड़ी या बहुत भिक्षा ग्रहण करी होय तैसीही थोडी या बहुत मन्त्रों की संख्या भी नियत करै• परन्तु जिसने दानही की रीतिसे कुछ श्रेष्ठ प्रतिग्रह लिया होय सो उस प्रतिग्रह के द्रव्य में से छठा भाग पुण्य करै ॥ ० ॥ जबकि श्रेष्ठ प्रति ग्रह में से भी छठा भाग देदेना ठहिरा तौफिर खोटे प्रतिग्रह का सर्व धन त्यागिदेना सिद्ध होगया और इसी का पक्काहठ अगिले वचनसे भी स्पष्ट है=यदाह मनुः=यद्गर्हितेनार्जयंति कर्मणाब्राह्मणाधनम् तस्योत्सर्गेणशुद्ध्यन्तिजपेनतपसैवचेति=अर्थात्– ब्राह्मण लोग जो निन्दित प्रतिग्रह आदि कर्म से धन संग्रह करते हैं तिसको पुण्य करदेने से ही शुद्ध होते हैं और इसके ऊपर जप तप करनेसेभी=इसीप्रकार= र- और भी स्मृतियों के वचन जो कुछ मिलें सो सब प्रतिग्रह रूपी द्रव्य का सार और लघुत्व महत्त्व से भी पूर्वोक्त सर्व विषयों पर युक्ति से व्यवस्थापन करलेने चाहिये इति सदसत्प्रतिगृह प्रायश्चित्तं ॥

इत्यनिष्ट संग सेवनादि प्रायश्चित्तप्रकरणं ॥

इस प्रकरण में खानादि गमनादि अङ्गनादि ये तीनि परिच्छेद हैं जिनमें सभीवार्ता ऐसी हैं जो थोरा मन से इनके आदि में संबन्ध रखती हैं ॥

अथ प्रासंगिकी वार्ता ॥

मिताक्षर का इतना एक श्लोक देखा कुछ और प्रायश्चित्तों का दर्शानाप्राग

करते हैं—यथा (जात्याश्रयादिदोषेण निंद्यानादेयशब्दतः योगीन्द्रोक्तव्रतव्रातंसांप्रतं तुप्रतन्यते) अर्थात् अब योगीश्वर के कहे उन पापों के व्रतों का समूह विस्तार करके दिखलावैंगे कि जिनको सुख से खुल्लम कहे बिना २४२ दो सौ बयालिस मूल श्लोक में चकार के अध्याहार्य से समस्या किये थे कि जो जो उनके हृदय के भीतर उद्गत (उपजे हुये) होरहे थे उनमें बहुधा पाप ऐसे हैं जो जाति वा आश्रय आदि दोषों से उत्पन्न होयँ अथवा नाम के शब्द ही से निंद्य और अनादेय अभक्ष्यपन समझा जाय० बल्कि बहुधा पाप और प्रायश्चित्तों की समस्या आचार मर्यादा परिपाटी में भी कई स्थलों पर योगीश्वर आपही प्रकाशकरचुके और मन्वादि मुनीश्वरों केभी अभिप्रायसे जो जो पापोंके लक्षण या प्रायश्चित्त खोलखोलि कहिने बाकी रहि गये हों तिन सबका व्रात समूह एकत्र संग्रह करिके आगे यथा क्रम से ब्योरे वार दर्शावैंगे तब इस वार्ता का प्रयोजन खूब समझि लेना ॥ यहां सर्व अभक्ष्यों का प्रकरण कहा जायगा ॥ और यह भी याद रक्खो कि यद्यपि इस भक्ष्याभक्ष्य के प्रकरण में जुदे जुदे कई परिच्छेद होंगे परन्तु योगीश्वर का मूल श्लोक बिल्कुल इसमें नहींहै क्योंकि यह व्यवस्था उपराल स्मृतियों के वचन लेकर संग्रह करी जायगी और यह भी ध्यान रहे कि इसमें की अनेक व्यवस्थायें जहां तहां पहिले भी वर्णन होचुकी हैं यह बात इस परिश्रम से जानी जासक्ती है कि ५९ उनसठि के परिच्छेद से लेकर यहांतक सभी परिच्छेदों को सोचि सोचि देखते चले आओ फिर इस भक्ष्याभक्ष्य प्रकरण वाले परिच्छेदों को सोचि के समझो कि योगीश्वर इन बातों को बहुधा उन्हीं परिच्छेदों में कहिचुके हैं० परंतु यहां केवल खाने पीने के दोष पर यह संग्रह एकत्र किया जायगा ॥ यह ब्योरा केवल पाठकों के भ्रम दूर करने के हेतु लिखा गया ॥

अथ जातिदुष्टान्नपानादीनां भक्षणदोषस्य प्रायश्चित्त प्रकाशकोऽयंपरिच्छेदः एकोनसप्ततितमः ६९



इस परिच्छेद में उन अभक्ष्यों के खाने पीने का प्रायश्चित्त कहा जायगा जो अपनी जाति ही से खोटे जैसे पिआज लहसुन आदि अनेक चीजें और सहिजनी गाऊ

आदिके अनेक द्रव्य जो अपनी जातिही से खोटे होतेहैंऔर स्वभाव दुष्ट मांस अनेक जोअपनी खासियत और जातिसे भी अनेक मांस दुष्ट होते हैं कि जिनका भक्षण मांसाहारियोंको भी निषिद्ध होता है• फिर इन सब के प्रसंग से औरभी बहुवा चीजों का चर्चा इसमें आवैगा ॥

(जातिदुष्टपलांडादिभक्षणप्रायश्चित्तं)

ऊपर चर्चा किये प्रसंग मेंसे यहां पहिले उन चीजों के खालेने का प्रायश्चित्त दर्शाते हैं जो पिआज आदि बहुवा चीजें अपनी जातिहीसे खोटी और म्लेच्छ जातियों से वास्ता रखतीहैं–तहां–जिसने इच्छासहित एकहीवार उनचीजोंका भक्षण किया होय तिसका प्रायश्चित्त चांद्रायणहै योगीश्वर आपही आचार मर्यादाकांड में कहिचुके तहां (१७५ एकसौपचहत्तरिमूलश्लोक) देखो=और=जिसने इच्छा सहित खानेका अभ्यास कईबार कियाहो तिसके लिये भी योगीश्वर आपही यहां प्रायश्चित्त मर्यादा से (२२९ दोसौ उनतीस मूलश्लोकसे) इन चीजों को सुरापीने के समान कहिचुके तिनका प्रायश्चित्त ३१ इकतीस परिच्छेदमें सुरापानवाले प्रायश्चित्तों के समान ढूंढिकर देखो=परन्तु=जिसने इन्हीं पिआज आदि चीजों को इच्छाके विना धोखा आदिसे एकहीवार खायाहो तिसको सांतपन प्रायश्चित्त है सो भी अगिले वचनोंमें आवैगा=और=जिसने इच्छा विना कईवार खाया हो तिसके लिये (यतिचांद्रायण) इसनामका प्रायश्चित्त चाहिये जैसा अगिले वचन में कहाहै देखो=यदाहमनुः (अमत्यैतानिषड्जग्ध्वाकृच्छ्रं सांतपनंचरेत् यतिचांद्रायणं वापिशेषेषूपवसेदहः) अर्थात्–ये पूर्वोक्त नामोंकी छेचीजें विना जाने खाइके कृच्छ्र सांतपन करै या यदि कईवार खाया हो तौ यति चांद्रायण करै बाकी जिन चीजों के नाम सहित कोई प्रायश्चित्त न कहा गया हो तिनको खाइलेने से एकही दिन उपवास करे ॥ ॥ इन चीजोंके सिवाय विगले फल शाक आदि भी निषिद्ध हैं तिन का प्रायश्चित्त बृहद्यमने और मध्यम यमनेभी कहाहै=यथाह बृहद्यमः=खट्वावार्ता कुम्भीकन्दं चनगृञ्जनवार्ताक भूस्तृणं शिग्रुकं चैव गुञ्जनं कवकानि च एतेषां भक्षणं कृत्वा प्राजापत्यं चरेद्द्विजः (इतितन्त्कानन्तःपूर्वान्यान्विषय - (मत्स्याश्चकामतो जग्ध्वा सोपवासस्त्र्यहं क्षिपेदितियोगीश्वरवाक्यानन मक्षणंमस्येत्यादि) मध्यमयमो प्याह–लशुनीयकगृञ्जनकदम्बनवकान्नथा नालिकानां नकेलिंचप्लेन्मानककानां मेदः भूस्तृणं शिग्रुकं चैव कवकान्यथा एतेषां भक्षणं कृत्वा प्राजापत्यं व्रतं चरेत्

(इति तदपिमतिपूर्वाभ्यासविषयं=अर्थात्–खड्वा नाम कोलशिंबी नामसे एक फली होतीहै जिसका आकार सुअरके पंजातुल्य होताहै•वार्ताक बैंगन•कुम्भी साग इसी नामसे विख्यात है जलके ऊपर पत्ते उनके फैलतेहैं इसीसे वारिपर्णी जलपाना भी कहातीहै•वृश्चन प्रभव फलादिक वे कहातेहैं जो पेंवदी पेवन्दी वृक्षोंसे उत्पन्नहोयँ जिनकी कलम तराशिके दूसरे वृक्षमें जमाई जातीहै•भूस्तृण नामसे वे शाक समझने जो प्रायःधरतीपर फैलेहुये लोनियां आदि होतेहों (किन्तु रोहिष तृणको यहाँ मत समझना जो सुगन्धवाली घास होतीहै) •शिग्रु लालसहिँजना•छत्रकंदनाम छिनाज• कवक नाम धरती के फूलछत्राक•इतनों में किसीको खाइके द्विजाती पुरुषप्राजापत्य करै–सो यह प्रायश्चित्त उसके लियेहै कि जिसने इन चीजों के निषेध जानते हुये इच्छा सहित बहुत काल पहिले खानेका अभ्यास रक्खाहो क्योंकि (योगीश्वर ने आचार कांड में १७० एकसौ सत्तर मूल श्लोकसे इच्छा सहित एकवार ऐसी चीजें खानेपर तीनदिनका उपवास कहाहै) तिससे यहाँ वृहत यमका कहा प्राजापत्य वारह दिनवाला बहुत कालसे खाते रहिनेके अभ्यासहीपर ठीकहै=इसीप्रकार मध्यम यमने जो यह कहाहै कि=चौराई और कुम्भीसाग और वृश्चन प्रभव पेंउदी बेर आदि अनेक और नारी तथा नालिकेरी दोनो साग और लहसोरे और भूस्तृण जैसा ऊपले वचन में कहिचुके और लालसहिँजना और खड्वाख्य नाम कोलशिंबी की फली और कवक छत्राक धरती के फूल इतनों में किसी एकहोका भक्षण करै सो प्राजापत्य व्रत आचरै–सो इस वचनकी व्यवस्था भी उसके लिये समझना जिसने जानि बूझिके इच्छा सहित बहुत कालसे खानेका अभ्यास किया हो=मिताक्षराकार कहिते हैं कि इन्हीं दोनों वचन में लिखी चीजों को इच्छा बिना एकही बार धोखासे जिसने खाया हो तिसके लिये एकदिन का व्रत करना प्रायश्चित्त है (शेषेषूपवसेदहः) यह मनुका वचन कई स्थलपर आचुकाहै तिसके अनुसार यही चाहिये अधिक नहीं परन्तु जो कोई बिना जाने धोखा से दोतीनवार खाचुका हो तिसको उसी संख्यासे व्रत करने चाहिये और जिसने बिना जानेही अत्यन्त अभ्यास इनके खानेका किया हो तिसके लिये अगिले प्रचेता के वचनसे तप्त कृच्छव्रत करवाना चाहिये क्योंकि उस वचन में स्वभावदुष्ट चीजों के खालेनेका चर्चा आवैगा वे स्वभावदुष्ट ऐसी चीज हैं जो ऊपर के दो वचनमें जुदे जुदे नामों से कहिचुके ॥०॥

अन्नादि भोजनकी वस्तु जो किसी अशुद्धकी छुआछाईआदि कारणोंसे बिगड़ जाय तिसके खाइ लेनेका प्रायश्चित्त=यथाह प्रचेताः=स्पर्शदुष्टंदुष्टंचान्नंक्रियादुष्टमका-

आदिके अनेक वृक्ष जो अपनी जातिही से खोंटे होतेहैंऔर स्वभाव दुष्ट मांस अनेक जोअपनी खासियत और जातिसे भी अनेक मांस दुष्ट होते हैं कि जिनका भक्षण मांसाहारियोंको भी निषिद्ध होता है• फिर इन सब के प्रसंग से औरभी बहुधा चीजों का चर्चा इसमें आवैगा ॥

(जातिदुष्टपलांडादिभक्षणप्रायश्चित्तं)

ऊपर चर्चा किये प्रसंग मेंसे यहां पहिले उन चीजों के खालेने का प्रायश्चित्त दर्शाते हैं जो पिआज आदि बहुधा चीजें अपनी जातिहोसे खोंटी और म्लेच्छ जातीयों से वास्ता रखतीहैं—तहां—जिसने इच्छासहित एकहीवार उनचीजोंका भक्षण किया होय तिसका प्रायश्चित्त चांद्रायणहै योगीश्वर आपही आचार मर्यादाकांड में कहिचुके तहां (१७५ एकसौपचहत्तरिमूलश्लोक) देखौ=और=जिसने इच्छा सहित खानेका अभ्यास कईवार कियाहो तिसके लिये भी योगीश्वर आपही यहां प्रायश्चित्त मर्यादा में (२२९ दोसौ उनतीस मूलश्लोकसे) इन चीजों को सुरापीने के समान कहिचुके तिनका प्रायश्चित्त ३१ इकतिस परिच्छेदमें सुरापानवाले प्रायश्चित्तों के समान ढूंढिकर देखौ=परन्तु=जिसने इन्हीं पिआज आदि चीजों को इच्छाके विना धोखा आदिसे एकहीबार खायाहो तिसको सांतपन प्रायश्चित्त है सो भी अगिले वचनोंमें आवैगा=और=जिसने इच्छा विना कईबार खाया हो तिसके लिये (यतिचांद्रायण) इसनामका प्रायश्चित्त चाहिये जैसा अगिले वचन में कहाहै देखौ=यदाहमनुः (अमत्यैतानियड्जग्ध्वाकृच्छ्रंसांतपनंचरेत् यतिचांद्रायणंवापिशेषेषूपवसेदहः) अर्थात—ये पूर्वोक्त नामोंकी छेचीजें विना जाने खाइके कृच्छ्र सांतपन करै या यदि कईवार खाया हो तौ यति चांद्रायण करै वाको जिन चीजों के नाम सहित कोई प्रायश्चित्त न कहा गया हो तिनको खाइलेने में एकही दिन उपवास करै ॥०॥ इन चीजोंके सिवाय विरले फल शाक आदि भी निषिद्ध हैं तिन का प्रायश्चित्त वृहद्यमने और मध्यम यमनेभी कहाहै=यथाह वृहद्यमः=खट्वावार्ताककुम्भीकत्रश्चनप्रभवाणिच भूस्तृणंशिग्रुकंचैवक्षुकंदंकवकानिच एतेषांभक्षणंकृत्वा प्राजापत्यंचरेद्द्विजः (इतितत्रकामतःपूर्वाभ्यासविषयं—(मत्स्यांश्चकामतोजग्ध्वा सोपवासस्त्र्यहंक्षिपेदितियोगीश्वरेणाकामतः सकृद्भक्षणेत्र्यहस्योक्तत्वात) एवंयमो यथाह=तंडुलीयककुम्भीकत्रश्चजप्रभवांस्तथा नालिकांनालिकेरींचश्लेष्मातकफलानिच भूस्तृणंशिग्रुकंचैवखट्वाख्यंकवचंतथा एतेषांभक्षणंकृत्वाप्राजापत्यंव्रतंचरेत्

(इति तदपिमतिपूर्वाभ्यासविषयं=अर्थात्–खट्वा नाम कोलशिंबी नामसे एक फली होतीहै जिसका आकार सुअरके पंजातुल्य होताहै•वार्ताक बैंगन•कुम्भी साग इसी नामसे विख्यात है जलके ऊपर पत्ते उनके फैलतेहैं इसीसे वारिदर्शी जलपाना भी कहातीहै•व्रश्चन प्रभव फलादिक वे कहातेहैं जो पेंवदी पेवन्दी वृक्षोंसे उत्पन्नहोयँ जिनकी कलम तरासिके दूसरे वृक्षमें जमाई जातीहै•भूतृण नामसे वे शाक समझने जो प्रायःधरतीपर फैलेहुये लोनियां आदि होतेहों (किन्तु रोहिष तृणको यहां मत समझना जो सुगन्धवाली घास होतीहै)•शिग्रु लालसहिँजना•शुकंदनाम पिआज• कवक नाम धरती के फूलछत्राक•इतनों में किसीको खाइके द्विजाती पुरुषप्राजापत्य करै–सो यह प्रायश्चित्त उसके लियेहै कि जिसने इन चीजों के निषेध जानते हुये इच्छा सहित बहुत काल पहिले खानेका अभ्यास रक्खाहो क्योंकि (योगीश्वर ने आचार कांड में १७० एकसौ सत्तरि मूल श्लोकसे इच्छा सहित एकबार ऐसी चीजैं खानेपर तीनदिनका उपवास कहाहै) तिससे यहां वृहत यमका कहा प्राजापत्य बारह दिनवाला बहुत कालसे खाते रहिनेके अभ्यासहीपर ठीकहै=इसीप्रकार मध्यम यमने जो यह कहाहै कि=चौराई और कुम्भीसाग और व्रश्चन प्रभव पेंउदी बेर आदि अनेक और नारी तथा नालिकेरी दोनो साग और लहसोरे और भूतृण जैसा ऊपले वचन मे कहिचुके और लालसहिँजना और खट्वाख्य नाम कोलशिंबी की फली और कवक छत्राक धरती के फूल इतनों मे किसी एकहीका भक्षण करै सो प्राजापत्य व्रत आचरै–सो इस वचनकी व्यवस्था भी उसके लिये समझना जिसने जानि बूझिके इच्छा सहित बहुत कालसे खानेका अभ्यास किया हो=मिताक्षराकार कहिते हैं कि इन्हीं दोनो वचन में लिखी चीजों को इच्छा बिना एकही बार धोखासे जिसने खाया हो तिसके लिये एकदिन का व्रत करना प्रायश्चित्त है (शेषेषूपवसेदहः) यह मनुका वचन कई स्थलपर आचुकाहै तिसके अनुसार यही चाहिये अधिक नहीं परन्तु जो कोई बिना जाने धोखा से दोतीनबार खाचुका हो तिसको उसी संख्यासे व्रत करने चाहिये और जिसने बिना जानेही अत्यन्त अभ्यास इनके खानेका किया हो तिसके लिये अगिले प्रचेता के वचनसे तप्त कृच्छ्रव्रत करवाना चाहिये क्योंकि उस वचन में स्वभावदुष्ट चीजों के खालेनेका चर्चा आवैगा वे स्वभावदुष्ट येही चीज हैं जो ऊपर के दो वचनमें जुदे जुदे नामों से कहिचुके॥०॥

अन्नादि भोजनकी वस्तु जो किसी अशुद्धकी छुआछाईआदि कारणोंसे बिगड जाय तिसके खाइ लेनेका प्रायश्चित्त=यथाह प्रचेताः–स्वभावदुष्टंयच्चान्नंक्रियादुष्टमका-

मतः भुक्त्वास्वभावदुष्टंचतप्तकृच्छ्रं समाचरेत=अर्थात-खाने पीनेका तैयार अन्न जो संसर्ग किसी ऊर्ध्वोक्त वस्तुसे छुइ जाकर दूषितहोजाय या बनाते समय क्रिया भ्रष्ट होकर दूषित हुआ होयतिसको इच्छाविना खाकर तप्तकृच्छ्र व्रत आचरै अथवा जो कोई अन्न आदि वस्तु अपने स्वभावही से दुष्ट कही जाती हो जैसी लहसुन पिआज आदि बहुतेरे नाम ऊपर लिखिचुकेहैं तिनकोही विना चाहे धोखा आदिसे अत्यन्त अभ्यास करिके खाया हो तौभी तप्त कृच्छ्र व्रत आचरै० अन्यथा छोटे छोटे प्राय-श्चित्त जो ऊपर लिखिचुके तिनको एकहीबार खाइलेने आदि पर विचार करना ॥ ० ॥ परन्तु नील एकहीबार विना जाने भी खालेने मे बडा प्रायश्चित्तहै=तदाहा-पस्तम्बः=भक्षयेद्यदिनीलींतुप्रमादाद्ब्राह्मणःक्वचित्चांद्रायणेनशुद्धिःस्यादापस्तम्बो-ब्रवीन्मुनिः=अर्थात-नीली नील के वृक्षका साग आदि किसी प्रकार से यदि कहीं कोई ब्राह्मण धोखा आदिसेभी खाजाय सो महीनाभरका चांद्रायणकरनेसे पवित्र होताहै यह आपस्तम्बने कहा-परन्तु जिसने दोबारखाया तिसको दोचांद्रायण और तीनिबार वालेको तीन इत्यादि कल्पना समझि लेनी और एकहीबार जिसने इच्छा से जानि बूझि खाया होय तिसको भी दूना प्रायश्चित्त समझना ॥०॥ चौका ली-पना इत्यादि शुद्धि किये विना जो पाक बनायाजाय तिसको खा लेने परभी प्राय-श्चित्तहै=तथाचषट्त्रिंशन्मतवचनम=शणपुष्पंशाल्मलंचकरनिर्मथितंदधि वहिर्वेदि पुरोडाशंजग्ध्वानाद्यादहर्निशम=अर्थात-सनके फल फूल या सेमर के फल फूल या मथनिया विना हाथही से मथाहुआ दही या वेदीसे वाहर का पुरोडाश खालेवै सो दूसरेदिन आठपहरका निराहार व्रतसाधै और उस दिन भी न खाय तब शुद्धहोय=वेदी से बाहर का पुरोडाश अर्थात यहां वेदी चौकेका नाम है तिसके बाहर विना चौके वैठिके खाने और बनाने का निषेध है०पुरोडाश यज्ञ सम्बन्धी अन्न आदिका नामहै कि जिस रसोईके अन्नसे परमेश्वरको भोगदेना अग्नि आदि देवता और अ-भ्यागतोंको जिमाना आदि रोजका कर्म जोहै सोई पाकयज्ञ कहाताहै(विज्ञानेश्वर कहिते हैं कि यह एक दिनराति के उपवास वाला छोटा प्रायश्चित्त भी ऐसे प्रसंग पर समझना जिसने इच्छाके विना ऐसे कामोंको किया होय किन्तु जानि बूझि ऐसा करनेवाले पर प्रायश्चित्त भी दूना आदि बढाया जाय ॥ ० ॥ जहां किसीको पकडि के जबर्दस्ती से ऐसी चीजे खवाई हों या वैद्यने रोगीसे कहिकर खवाई हो कि इसके खाने विना यहरोग नहीं मिटिसक्ताहै=तदाह सुमन्तुः=लशुनपलांडुगृंजन कवकभक्षणे साविन्यष्टसहस्रेण मूर्ध्निसंपाताम्नयेदिति (तद्बलात्कारेणानिच्छतो

भक्षणविषयं तदेकसाध्यव्याध्युपशमार्थेवाभक्षणेदृष्टव्य मितिमिताक्षरा)=अर्थात्— सुमन्तुने कहाहै कि लहसुन पिआज गाजर कवक इनको खाने वाला गायत्री के आठ हजार मंत्रोंसे एक एक मंत्र पढ़िके जल के बूंद अपने मुड पर टपकने देवै तव शुद्ध होय (सो यह प्रायश्चित्त जवर्दस्ती खवाइ देनेमध्ये या उसके मध्ये समझना कि जिसकी वीमारी केवल वही चीज खानेसे जासकै तिसने खाया हो यह मिता-क्षराकारों ने कहा) क्योंकि इसी हेतु से इस वचन के लगसा उन्हीं सुमन्तु ने यह कहाहै (एतान्येवव्याधितस्यभिषक्क्रियायामप्रतिषिद्धानिभवंति यानिचैवंप्रकारा णितेष्वपिनदोषः) अर्थात् ये लहसुन आदि सब चीजें वैद्य की चिकित्सा वाली क्रिया मे निषिद्ध नहींहैं और भी जे कोई इस प्रकार की चीजें या इस प्रकार की क्रिया विशेष होतीहो तिनमें भी दोष नहीं ॥ अब नीचे उन प्रायश्चित्तोंकी व्यवस्था कही जायगी जो संधिनी आदि गायोंके निषिद्ध दूध आदि जातिहीसे दूषित कहाते तिनके खाने पीनेमें करने होते हैं ॥ जातिहीसे दुष्ट वे कहाते हैं जो अपने जन्महो से खोटे ठहरें जैसे लहसुन प्याज या नीचे संधिनी आदिके दूधोंको समझिलेना ॥

(अथ जातिदुष्ट संधिन्यादि चीरपाने प्रायश्चित्तं)

इसके मध्ये मिताक्षराकारने यह व्यवस्था निर्मित करी है कि जिसने संधिनी आदि गायोंका दूध जानि बूझिके इच्छा सहित एक बार पिआ हो तिसके लिये वही तीन दिनका उपवास प्रायश्चित्तहै जो आचार मर्यादा वाले कांडमें योगीश्वर आपही १६९ एकसौ उनहत्तरि मूल श्लोक से संधिनीका दूध आदि निषिद्ध कहि कर १७४ एकसौ चौहत्तरि श्लोकमें कहिचुके और जिसने इच्छाके विना दैवयोग से एकही वार पिआ हो तिसके लिये एकहीदिन रातिका उपवास मनु की आज्ञा से विचारना अगिले वचनोंसे=यथा=अनिर्दशायागोःक्षीर मौष्ट्रमैकशफंतथा आवि कंसंधिनीक्षीरं विवत्सायाश्चगोःपयः आरण्यानांचसर्वेषां मृगाणांमहिषींविना स्त्री क्षीरंचैववर्ज्यानिसर्वशुक्तानिचैवहि दधिभक्ष्यंचशुक्तेषुसर्वंचदधिसंभव मित्युक्त्वाशेषे दूपवसेदहः इतिमनूक्तउपवासोद्रष्टव्य इतिमिताक्षरा=अर्थात्—विआनी गाय जिस का वचा दश दिनका न होजाय तिसका सूतकी दूध तथा ऊँटनीका दूध तथा एक ही खुर वाले पशु घोडी गदही आदिका दूध तथा भेडीका दूध तथा सन्धिनी अर्थात् हाल गाभिन हुई गाय भैंसका दूध तथा विना वचेवाली गाय का दूध तथा वन के सबही मृग जीवोंका दूध (केवल वन भैंसको छोडिके) और स्त्री नारीमात्र का दूध

ये सब दूध पीने वर्जित हैं और सब तरहके शुक्त कांजी सिरका आदि भी वर्जितहैं जो पानी सहित चीजें सूर्यके आतापमें धरने आदि प्रकारों से खट्टा जल होता है• परन्तु दही और दहीका तोड़ आदि भी शुक्तों में गिनती है सो वर्जित नहीं है इसी लिये कहितेहैं सर्व शुक्तोंमें केवल दही खानेके योग्यहै और दहीसे जो कुछ बनावा उत्पन्न हुआहो सोभी खानेके योग्य है यह सब कहिकर मनुने पीछे से यह कहा है कि ऐसी और भी चीजें जिनके नाम लिखने बाकी रहिगये तिनके और इनके भी खाइ लेने में एक दिन रातिका उपवास करै ॥ ० ॥ इनके सिवाय पैठीनसिका जो वचन है और शंखका जो वचनहै उनदोनोंकी व्यवस्था ऐसे पुरुषपर आरूढ करना कि जिसने जानि बूझि कर इच्छा सहित बहुत काल तक पीने का अभ्यास किया हो=यदाह पैठीनसिः=अविखरोष्ट्रमानुषीक्षीर प्राशनेतप्तकृच्छ्रः पुनरुपनयनंच अनि र्दशाहगोमहिषी क्षीरप्राशनेषड्रात्रमभोजनं सर्वासांद्विस्तनीनांक्षीरपानेप्यजावर्जमेत देव=शंखोपि=क्षीराणियान्यभक्ष्याणितद्विकाराशनेबुधः सप्तरात्रंव्रतंकुर्यात्प्रयत्नेन समाहितः (इतियावक व्रतमुक्तं तदुभयमपिकामतोऽभ्यासविषयमिति मिताक्षरा= अर्थात्–भेड़ गदही ऊँटिनी नारी इनके दूध पीलेनेमें तप्तकृच्छ्रव्रत करिके फिर यज्ञोपवीत कर्मसे उपनयन भी कराना चाहिये और दश दिन के भीतर की बिआनी गाय भैंसोंका दूध खाइलेनेमें छे दिन तक निराहार व्रत करै और बकरी को छोडि कर बाकी सब दो थन वालोंका दूध पीलेनेमें भी यही छे दिन का उपवास करै यह पैठीनसिने कहा=शंखने भी ऐसा कहाहै कि=जे कोई दूध अभक्ष्य कहाते हैं तिनके पीलेने या उनकी बनी कोई चीज खाइ लेनेमें सातदिन व्रतकरै (यह यावक भोजन करिके सात दिनका व्रत शंखने कहा• सो यह दोनों ऋषीश्वरों की व्यवस्था उनके लिये समझना जिन्होंने इच्छा सहित ऐसे दूधके पीनेका अभ्यास अनेकवार किया हो यह मिताक्षराकारने कहा ॥ ० ॥ विष्ठाखानी और दो बचा देनेवाली आदि कई प्रकारकी गायोंके और भी कुछ दूध पीने निषिद्ध हैं=तदप्याह शंखः=सन्धिन्यमेध्य भक्षायाःक्षीरंपाकाश्चव्रतचरेदिति तदभ्यासविषयं=सकृत्पानेतुविष्णुराह=गोअजमहिषी वर्जंसर्वाणिपयांसिप्राश्य उपवसेत अनिर्दशाहेतान्यपि संधिनीयमसूस्यन्दिनीविवत्सा क्षीरंचामेध्यभुजश्च=अर्थात्–संधिनी जो गाभिन होजाय•अमेध्यभक्षा जो विष्ठाआदि चाटतीहो इनके दूध खाइके पखवारेका व्रतकरै• यह पन्द्रह दिन का व्रत उसी को समझना जिसने वारम्वार ऐसा दूध पीनेका अभ्यास कियाहो=क्योंकि एकवार पी लेने मध्ये विष्णुने एकही दिन उपवास बतायाहै कि=गाय बकरी भैंस इनको छोड़ि

इनसे उपरान्त सब जीवोंके दूध खाय पीकर एक उपवास करे और गाय वकरी भैंस इनके भी दशदिनका बचा न होनेके भीतर दूध पीकर यही उपवास करे और गाभिन तथा दो बचा बिआने वाली तथा बिन बचेवाली तथा बचा होतेहुये भी जो गर्भ लेनेकी इच्छासे स्पन्द रूपी चिह्न प्रकट करती हो तथा जो विष्ठा आदि अपवित्र चीजें खातीहो इनके भी दूध पीकर यही उपवास करे॥ ०॥कपिला गाय जो सुवर्ण के समान वर्ण वाली खुर सींगों सहित कहातीहै उसका दूध ब्राह्मणके सिवाय अन्य वर्णोंको पीने से निषेध है जैसा यह अग्रोक्त वचन है कि (क्षत्रियश्चापिवृत्तस्थोवैश्यःशूद्रोऽथवापुनः यःपिबेत्कापिलाक्षीरं नततोऽन्योस्त्यपुण्यकृत) अर्थात्-सत्कर्म करने वाला क्षत्री और वैश्य अथवा शूद्रही जो कपिला गायका दूध पीवै तौ उससे अधिक अपुण्यकर्ता कोई नहींहै-यद्यपि इसमें प्रायश्चित्त कुछ नहीं दर्शाया गया तथापि अपुण्य कहिकर दोष दर्शाया गया तिससे प्रायश्चित्त भी सूचित हुआ कि ब्राह्मणके सिवाय जिसने एकवार कपिलाका दूध पिआहो सो मनुके वचनसे एक दिन का उपवास करे-इसी प्रकार-और भी जो जो बातें ऐसी देखि परें कि जिनके नामसे कुछ प्रायश्चित्त नहीं कहा परन्तु उनके खाने पीनेका दोष प्रकट कियाहो तिनके खाने पीनेपर यही एक दिन का उपवास प्रायश्चित्त समझना (शेषेषूपवसेदहः) यही मनुका वचन है॥ अब नीचे उन चीजों के खालेने का प्रायश्चित्त कहा जायगा जो अपने स्वभावसे दुष्ट कहाती हों॥ इतिजातिदुष्टभक्षणापानप्रायश्चित्तानि

(अथस्वभावदुष्टमांसादिप्रायश्चित्तं)

जो जो मांस आदि अपने स्वभावहीसे दुष्ट कहाते हों तिनको इच्छा विना धोखा आदिसे एकही वार जिसने खाइ लिया हो तिसको भी ऊपर चर्चा किया एकही दिनका उपवास रूपी साधारण प्रायश्चित्त मनुके वचन से कर्तव्य है=परन्तु=जिसने जानि बूझि इच्छा सहित एकवार भक्षण कियाहो तिसके लिये आचार मर्यादा कांड में १७१ एकसौ इकहत्तरि मूलश्लोक से लेकर १७४ एकसौ चौहत्तरि में योगीश्वर आपही जो लिखचुके हैं (सोपवासस्त्र्यहंक्षिपेत) कि तीन दिन निराहार उपवास करिके काटै॰ तहां देखो= और = जिसने इच्छा सहित अनेक वार खाया हो तिसके लिये (जग्ध्वामांसमभक्ष्यंतुसप्तरात्रंपयःपिबेदितिमनूक्तद्रष्टव्यं) यह मनुका कहा प्रायश्चित्त विचारना कि अभक्ष्यमांस को खाइके सातरात्रिभर दूध पीके व्रत करै-परन्तु यह प्रायश्चित्त उसके लिये नहीं है जिसने ग्राम शुअर

आदिका अतिमलीनमांस खायाहो किन्तु उसकेलिये मनुने दूसरे वचनसे तप्तकृच्छ्र करना कहाहै=यथा=क्र०व्यादित्सूकरोष्ट्राणांकुक्कुटानांचभक्षणे नरकाककखराद्यानां तप्तकृच्छ्रम्विशोधनं (इति मनुना जाति विशेषेण प्रायश्चित्त विशेषस्योक्तत्वात्= अर्थात्–मनुने अतिमलीन मांसों के नामसे यह जुदा प्रायश्चित्त कहा है कि–मांस भक्षी क्रव्याद प्रकृतिवाले अनेक पक्षी गिद्ध आदि होते हैं तिनका मांस यदि कोई मांसाहारी पुरुष भी खालेवै या विष्ठाखानेवाले वसती में रहिनेवाले सुअरकामांस या ऊँटका मांस या मुर्गा आदि मलीन पक्षियोंके मांस खालेवै या मनुष्यका मांस या कौआकी जातिवाले पक्षियोंकामांस खाइलेवै या गदहा आदि मलीन पशुओं का मांस खाइलेवै तिसके लिये तप्तकृच्छ्रव्रत कराना प्रायश्चित्त है=इन्हीं उक्तजी- वोंके गूह मूत भक्षण करजाने में भी यही प्रायश्चित्त चाहिये जो इनके मांस पर कहिचुके यहवात अगिले वचन में देखौ=यदाहयमः=वराहैकशफानांचकाककु- क्कुटयोस्तथा क्रव्यादानांचसर्वेषामभक्ष्यायेचकीर्त्तिताः मांसमूत्रपुरीषाणिप्राश्यगो मांसमेवच श्वगोमायुकपीनांचतप्तकृच्छ्रम्विधीयते उपोष्यवाद्वादशाहंकूष्मांडैर्जुहु यात्घृतम्=अर्थात्–सुअर और (एकशफ) एकही खुरवाले घोडा गर्दभ आदि और काक तथा मुरगा और क्रव्याद जो मांस के खवैया वहुधा पक्षी तथा चौपाये भी होतेहैं और भी जेकोई जीव अभक्ष्य लिखे गयेथे आचार मर्यादामें भी नाम उनके देखौ तिन सबके मांस या गूह मूत खाइके या गोमांस को खाइके या कुत्ता गीदड वन्दर इनके भी मांस या गूह मूत खाइके तप्तकृच्छ्र प्रायश्चित्त किया जाताहै अ- थवा वारहदिन उपवास करिके कूष्मांड मंत्रों से घीका होम करै (इसमें छोटे वड दो प्रायश्चित्त विकल्प से कहे गये तिनके परस्पर यह व्यवस्था समझि लेनी कि जिसने इच्छा सहित एकहीवार भक्षण किया तिसको तप्तकृच्छ्र कराना और जि- सने कईवारका अभ्यास किया तिसको वारह दिनका पराकव्रत कराइके कूष्मांड मंत्रोंसे घीका होम कराना चाहिये ॥ ० ॥ इसी व्यवस्था के समान प्रचेताने प्राय- श्चित्त कहाहै=यथा=श्वशृगालकाककुक्कुटपार्षतवानरचित्रकचाषक्रव्यादखरोष्ट्रगज वाजिविड्वराहगोमानुषमांसभक्षणेतप्तकृच्छ्रमादिशेत स्वयंमूत्रपुरीषभक्षणेस्वतिकृच्छ्र (इदंचकामकारविषयं=अर्थात्–कुत्ता• सियार• कौआ•मुर्गा•पार्षत वनकाएकपशु• वन्दर• चीता•चाष पक्षी जो नीलकंठ कहाता है•क्रव्याद जो मांसके खवैया पक्षी आदि होतेहैं•गदहा•ऊंट•हाथी•घोडा• ग्रामवासी सुअर• गाय•आदिमी•इनके मांस खाने मे तप्तकृच्छ्र करायाजाय• इनके मूत गूह खाइ लेनेमे अतिकृच्छ्र करायाजाय

स्यन्तरे=ज़रश्वासांसंनराणांचविड्वराहंखरन्तथा गवाश्वकुंजरोष्ट्राणां सर्वपांचनखं- तथा क्रव्यादकुक्कुटग्राम्यं कुर्य्यात्संवत्सरव्रत (मितितदत्यंतात्यर्थाच्छन्नाभ्यसनविषय मितिमिताक्षरा=अर्थात्—मनुष्योंका मांसखाय विष्ठा खानेवाले सुअरका या गर्दभ का या गायका या घोड़ का हाथीका ऊँटका या सभी उनजीवोंका जो पांच नख- वाले पंजेदार होतेहैं या क्रव्यादोंका मांस खाय जो आपही मांस भक्षी जीव होतेहैं या मुर्गे और बस्तीके रहैया भी अनेक भांति के होतेहैं तिनका मांस खाय सो एक पूरे वर्षभर व्रत साधै (यह सालभरेका प्रायश्चित्त उसके लिये बताना जिसने बहुत कालतक निरन्तर अत्यन्त अभ्यास करिके खाया हो) इस प्रकरण में जहां जहां मूत गूह कहा गया हो सो उन जीवोंकी वसा चरबी वीर्य रक्त मज्जा आदि सब चीजोंका निषेध प्रकट करनेवाला उपलक्षण है इनचीजोंको खाजाने पर भी यही प्रायश्चित्त चाहिये=परन्तु=कानका मैल आदि छे भांति के मल होतेहैं तिनको भक्षण करने में आधा प्रायश्चित्त कल्पित करिलेना चाहिये ॥० ॥ बाल आदि खाइलेने मध्ये षट् त्रिंशन्मत ग्रन्थमें जुदाप्रायश्चित्त कहागयाहै=यथा=अजाविमहिषमृगाणामामसां- सभक्षणेकेशनखरुधिरप्राशनेबुद्धिपूर्वेत्रिरात्रमज्ञानादुपवासः=अर्थात्—बकरी भेड भैंस और बनके मृगजीव इनका कच्चा मांस खाइलेने या बार नख रक्त खाइलेने में जा- नते हुये तीनदिनका प्रायश्चित्त है बिना जाने खाइजानेपर एकही दिनका उपवास करै=इसी बात में प्रचेता का यह वचन है कि=नखकेशमूलतोयभक्षणेऽहोरात्रम भोजनाच्छुद्धि (रितितदप्यकामतःसकृत्प्राशनविषयंमितिमिताक्षरा=अर्थात्—नख बार मट्टीका ढेल इनको भक्षण करिजाने में एक दिन रातिभर व्रत करने से शुद्धि मानी जातीहै (सो यह एकदिनका व्रत एकहीबार बिना जाने भक्षण करजाने मध्ये समझना=इनके सिवाय=जो स्मृत्यंतर यह वचन है कि=केशकीटनखप्राप्यमत्स्य कंटकमेवच हेमतप्तंघृतंपीत्वातत्क्षणादेवशुद्ध्यतीति (तन्मुखमात्रप्रवेशविषयमिति मिताक्षरा=अर्थात्—किसी के बाल या बारीक कीरे मक्खी आदि या नख आदि कोई मैल या मछरी का कांटाही भक्षण करिजाय सो तत्कालही सोने सहित घी को ऐसा गरमकरै जो सोनेके रंग सरीखा तपिजाय तिसको पीकर शुद्ध होजाता है व्रतकी जरूरत नहीं रही (यह प्रायश्चित्त उसकेलिये समझना जिसने मुखमें प्रवेश होतेसार बाल या मक्खी आदिको डाल दिया हो किन्तु भीतर नहीं जाने दिया= कदाचित्=भोजन करते समय परोसीहुई थालीपर मक्खी बैठिके जीवती उड़िजाय अथवा बाल या न फूस आदि ऐसाथोड़ासा गिरपरै जोदेखके निकासिडारा जासकैऐसे

अन्नके दूषित होजानेसंबंधे प्रचेताकावचन है=यथा=अन्नंभोजनकालेतुमक्षिकाकेश दूषितम् अनंतरस्पृशेदापस्तश्चान्नंभस्मनास्पृशो(दितिप्रासंगिकोऽयं श्लोकः=अर्थात्— भोजन के समयपर जो अन्न मक्खी या बाल आदिसे दूषित होजाय तिसकोअनंतर तत्कालही(अमृतंनव)इत्यादि रविवारसंत्रोंसे पढ़ेहुये जलसे छींटे देकर चूल्हेकोशुद्धराखले करउसके चारोतर्फ छिड़कावे तिससे शुद्धहोजाताहै, यह प्रसंग से श्लोक यहां लिखा गया किन्तु इनकी चर्चाका ठिकाना यहां नहींथा आगे कहीं आवैगा=कृमि कीट आदि जो अति सूक्ष्मतर कीरे भक्षणकरें तिसके संबंधे हारीतने जुदी व्यवस्था कही है=यथा=कृमिकीटपिपीलिकाजलौकःपतंगास्थत्रामाने गोमूत्रगोमयाहारस्त्रिरात्रेण विशुध्यतीति=अर्थात्—कृमि कीट या चेंटी या जलमें जो कीरे होयँ या किसी उड़ने पतंग टीड़ी चिड़िया आदिके पांख हाड़ खाइ लेवे सो तीनदिन राति में गोमूत्र और गोबर के आहार से व्रतकरिके शुद्ध होताहै॥ इस लिखे हुये कुल्लक डीलमें संक्षेपही से थोड़े पशुओंके नाम थोड़े उड़ने वालोंके नाम थोड़े जल जीवों के नाम लेकर बुरे मांस आदि पर प्रायश्चित्त कहे गये•संसारमें जीवोंके अनन्त भेदहैं उन सभीके जुदे स्वरूप कहिकर नहीं लिखेजाते ग्रन्थ बहुतबड़ाहोकर पढ़ना भी दुर्घट होजाय• तिससे इसथोड़ेही नमूनासे सबजीवोंकी व्यवस्था अपनी बुद्धियोंसे विचारतेरहिना॥

अथोच्छिष्टाशुचिप्राणिसंस्पृष्टाशुचिद्रव्यसंस्पृष्टस्यान्नपानादेर्भक्षणेच प्रायश्चित्तप्रकाशकोऽयं परिच्छेदःसप्ततितमः ७०

—*—

इस परिच्छेद में अशुद्ध प्राणी और अशुद्ध चीजों से छुये भिड़े बिगड़े अन्न पान खानेपीनेके प्रायश्चित्त कहे जायँगे—तहां प्रथम किसीका जूठाखाना या जूठा पानी पीना आदिके प्रायश्चित्त हैं-तिसके अनन्तर अशुचिद्रव्यों से छुये बिगड़े का चर्चा है तहां पहिले मक्खी बाल आदि अन्नमें गिर परने या विष्ठा मांस आदिसे छुइजाने वा चंडाल रजस्वला आदि कुत्ता काग आदिसे छुइजाने के प्रायश्चित्त या जुदी पंक्ति में खाने आदि के फिर मुर्दा गिरि के सड़े गले कूप तलैया आदि का पानी नहाने पीने के प्रायश्चित्त हैं॥

(परोच्छिष्टान्न भोजन प्रायश्चित्तं)

अथोच्छिष्टभक्षणे मनुराह=विडालकाकाखूच्छिष्टंजग्ध्वाश्वनकुलस्यच केशकीटावपन्नचपिवेद्ब्राह्मीसुवर्चलाम (अत्रकालविशेषानुपादानादेकरात्रं• इदमकामतोद्रष्टव्यमितिमिताक्षरा=अर्थात–बिल्ली• कौआ• मूसा• कुत्ता• नेउरा• इनकी जूठी कोई वस्तु और वह वस्तु कि जिसमें बार या कीरे आदि परेहों खाइ के ब्राह्मी सुवर्चला नाम औषधीका काढ़ा पीवै तब शुद्ध होय (इसमें यह नियम नहीं कहा कितने दिन पीवै तिससे एकही दिनका पीना समझा गया• यह प्रायश्चित्त उसीपर आरूढ़होगा जिसने विना जाने भक्षण कियाहो=और=जिसने जानि बूझिकामनासे भक्षण किया तिसके लिये अग्रोक्त प्रायश्चित्त है=यदाह विष्णुः=पक्षिश्वापदजग्धस्यर सस्यान्नस्य भूयसः संस्काररहितस्यापिभोजनेकृच्छ्पादकम (इतितत्कामकारविषयमिति मिताक्षरा=अर्थात–पक्षी वा कुत्ते आदिके बार बार जुठारे रस या अन्नको शुद्धि रूपी संस्कार करने विना खाइलेनेमें कृच्छ्का चौथाई प्रायश्चित्त करना चाहिये जो तीन दिनमें होगा (इसमें जो अन्नकी शुद्धिरूप संस्कार न होना दोष कहा गया तिसके होनेका प्रकार देखो आचार मर्य्यादा वाले काण्डमें १८८ एकसौ अट्ठासी मूल श्लोकसे)किन्तु(संस्कारश्चदेवद्रोणायामित्यादिनां द्रव्यशुद्धिप्रकरणोक्तोद्रष्टव्यइति मिताक्षरा)=जिसने विना इच्छाके धोखा आदिसे वारम्वार ऐसा दूषित अन्नखाने का अभ्यास किया हो तिसके लिये अग्रोक्त प्रायश्चित्त देखना=यदाह शातातपः= श्वकाकाद्यवलीढशूद्रोच्छिष्टभोजनेऽवतिकृच्छ (मितितदकामतोऽभ्यासविषयमिति मिताक्षरा=अर्थात–कुत्ता कौआ आदि जीवोंकी चाटी जुठारी वस्तु या शूद्रकी जूठी होय तिसको भोजन करनेवाला अतिकृच्छ्र करै=इच्छा सहित वारम्वारके अभ्यास पर इससे भी बड़ा प्रायश्चित्त आगे देखो=यदाह शंखः=शुनामुच्छिष्टंभुक्त्वामासमेकंव्रतीभवेत काकोच्छिष्टंगवाऽऽघ्रातंभुक्त्वापक्षव्रतीभवेत (इतियावकव्रतमुक्तंतत्कामतोऽभ्यासविषयमिति मिताक्षरा=अर्थात–कुत्तों का जूठा खाइ के एक महीना भर गोमूत्रका रँधा जौका भात खातेहुये व्रतकरै और कौवेका जूठा तथा गायका सूंघा चाटा अन्न खाइके एकपाख भर जौका यावक भोजन करते हुये व्रत करै तब शुद्ध होय॥ ०॥ ब्राह्मणका जूठा ब्राह्मण खाय तिसका भी प्रायश्चित्त वृहत विष्णु ने कहाहै=यथा=ब्राह्मणःशूद्रोच्छिष्टाशने सप्तरात्रंपचगव्यंपिवेत वैश्योच्छिष्टाशनेपंचरात्रं राजन्योच्छिष्टाशनेत्रिरात्रं ब्राह्मणोच्छिष्टाशनेत्वेकाह मिति (तत्कामकार

विषयमिति मिताक्षरा=अर्थात्—ब्राह्मण जो शूद्र का जूठा कुछ खाय तो वह सात दिन पंचगव्य पीकर व्रतकरै जो वैश्यका जूठा कुछ खाय सो पांचदिन पंचगव्य पी के रहै जो क्षत्रीका जूठा कुछ खाय सो तीनदिन पंचगव्य पीवै जो ब्राह्मण का जूठा कुछ खाय सो एकदिन पंचगव्य पीवै (ये प्रायश्चित्त उसके लिये विचारना जिसने इच्छा सहित इनका जूठा खायाहो=और=जिसने इच्छा सहित अनेकवार का अभ्यास कियाहो तिसके लिये अग्रोक्त प्रायश्चित्त विचारना=यदाह मनुः=भुक्त्वास हब्राह्मणेनप्राजापत्येनशुद्ध्यति भूभुजासहभुक्त्वान्नंतप्तकृच्छ्रेणशुद्ध्यति वैश्येनसहभुक्त्वान्नमतिकृच्छ्रेणशुद्ध्यति शूद्रेणसहभुक्त्वान्नं चान्द्रायणमथाचरेत्=अर्थात्—ब्राह्मण किसी ब्राह्मणकेसाथ एक थालीमें भोजन करिके प्राजापत्यसे विशुद्ध होताहै क्षत्री के साथमें कुछ खाइके तप्तकृच्छ्रसे पवित्र होताहै वैश्यके साथमें कुछ खाकर अति कृच्छ्रसे पवित्र होताहै शूद्रके साथमें कुछ खाइके चान्द्रायण एक मास भर आचरै तब शुद्धहोय (येसबइच्छासे,चाहिकर बारम्बार खाइलेनेसम्बंधे प्रायश्चित्तहैं=परंतु=जिसने इच्छा के विना एक बारही खायाहो तिसके लिये अग्रोक्त प्रायश्चित्त हैं=यदाहशंखः=ब्राह्मणोच्छिष्टाशनेमहाव्याहृतिभिरभिमंत्र्यापः पिबेत्क्षत्रियोच्छिष्टाशनेब्राह्मीरसविपक्वेनक्षीरेणत्र्यहंवर्त्तयेत् विप्रोच्छिष्टाशनेत्रिरात्रोपोषितोब्राह्मीसुवर्चलांपिबेत् शूद्रोच्छिष्टभोजनेषड्रात्रमभोजनं(इतितदकामविषयं=अर्थात्—ब्राह्मण ब्राह्मणका जूठा खाइकर महाव्याहृतियों से जलको पढ़कर पीलेनेसेही शुद्धहोजाता है क्षत्रीका जूठा खाइलेनेसें ब्राह्मी औषधीका रस मिलाइकर पकाये दूधको पीकर तीन दिन व्रत करै वैश्यका जूठा खाइलेने में तीन रात्रि व्रत करिके ब्राह्मी सुवर्चला औषधीका काढ़ा पीवै शूद्रका जूठा खाइलेनेमें छै दिनतक निराहार व्रतकरै=और जिसने इच्छाकेबिनाकईबारजूठाखायाहो तिसकेलियेइन्हींप्रायश्चित्तोंकोदूनातिगुना आदि बढ़ाकर करवाना॥०॥अपवादविशेषः—जूठाखाना जो निषेधकियागया सोभी पिता आदिसे उपरान्त में समझना क्योंकि (पितुर्ज्येष्ठस्यचभ्रातुरुच्छिष्टंभोज्यमित्यापस्तम्बः) आपस्तंबका वचन है कि पिता और जेठे भाईका जूठा खानेमें दोष नहीं=और जो=वृद्धव्यासका यह वचन है कि=मातावाभगिनीवापिभार्यावाऽन्याश्चयोषितः नताभिःसहभोक्तव्यंभुक्त्वाचांद्रायणंचरेत् (तत्सहभोजनविषयमिति मिताक्षरा=अर्थात्—माता बहिन भार्या या और कोई स्त्रियां जो रिश्तेमें होती हों तिन में किसीके भी साथ मिलिके न भोजन करै कदाचित करि बैठा हो तिसको चांद्रायण करना चाहिये (इसके ऊपर मिताक्षरा की यह पंक्ति जो धरी गई कि यह

निषेध एकसाथ किन्तु एक बासनमें मिलिके खानेका किया सो यह कथन यद्यपि ठीकहै) परन्तु इसका ध्वन्यर्थ ऐसा मत समझि लेना कि स्त्रियोंका जूठा लेकर जुदा बैठिके खानेसे कुछ दोष न होगा इसपर वहुत बडा शास्त्रार्थ खड़ा होता है जिसका लिखना यहां जरूरी और स्वीकार नहींहै॰ यद्यपि एक माता केवल स्वकीय जननी का जूठा खानेमें कुछ दोष नहीं प्रतीत होता है तथापि उसमें यह निबंध है कि जब तक यज्ञोपवीत रूपी संस्कार न हुआ हो तभी तक दोष नहीं तिससे आगे उसमें भी दोषहै=क्योंकि=सर्व सामान्य स्त्रीमात्रका जूठा या साथ मिलि खाने मध्ये आपस्तंब ने प्रायश्चित्त भी दर्शाया है=यथा=शूद्रोच्छिष्टभोजनेसप्तरात्रम भोजनंस्त्रीणांचेति= अर्थात्–शूद्र और स्त्रीमात्र का जूठा खाइ लेनेमें सातदिन का उपवास करै=इसके उ-परान्त=एक अंगिराका यह वचनहै कि=ब्राह्मण्यासहयोऽश्नीयादुच्छिष्टंवाकदाचन तत्रदोषंनमन्यन्ते सर्वएवमनीषिणः इति (तद्विवाहविषयमापद्विषयंवेतिमिताक्षरा= अर्थात्–जो कोई ब्राह्मण अपनी बिवाहिता ब्राह्मणीके साथ बैठि कभी कुछखाय तौ इसमें दोष नहींहै सबही मनीषी पुरुष ऐसा मानतेहैं (सो यह केवल बिवाहकाल का चर्चा है कि उसमें लहकौरि आदि खवाई जाती प्रसिद्ध है अथवा कभी आप-त्कालमें साथ खाना परै तिसका भी यह चर्चा जानो ऐसा मिताक्षराकार ने कहा) ब्राह्मणी कहिनेसे यह तात्पर्य ठहिरा कि जिसने अपनेसे नीचे वर्णकी कन्या साथ विवाह किया हो तिसको विवाहके समयभी भार्याके साथ न खाना चाहिये किंतु खाइ लेनेसे प्रायश्चित्त करना होगा॥ ० ॥ अन्त्यजात्युच्छिष्टभोजनेतु–अंत्य जाती लोगों का जूठा खाइ लेनेमध्ये वड़े प्रायश्चित्त हैं=यदाह आपस्तम्बः=अत्यानां भुक्तशेषन्तु भक्षयित्वाद्विजातयः चांद्रंकृच्छ्रन्तदर्धंचब्रह्मक्षत्रविशांविधिः (अत्रचान्द्रं चांद्रायणं=अर्थात्–अन्त्य जातें जो चण्डाल और शूद्रों के बीचवाले नीच होते हैं तिनका जूठा खाइ के द्विजाती लोग इस क्रम से प्रायश्चित्त करैं कि ब्राह्मण को चांद्रायण और क्षत्री को कृच्छ्र और वैश्य को आधा कृच्छ्र करना चाहिये॥ ० ॥ अन्त्यजातियों से भी अधिक मलीन जो साक्षात् चण्डाल होते और अन्त्यावसायी नाम से कहाते हैं तिनका जूठा खाइलेने में ऊपरलों से भी अधिक वड़े प्रायश्चित्त हैं=तदाहांगिराः=चाण्डालपतितादीनामुच्छिष्टान्नस्यभोजने चान्द्रायणंचरेद्विप्रःक्ष त्रःसांतपनंचरेत् षड्रात्रंचत्रिरात्रंचवर्णयोरनुपूर्वशः (सान्तपनमत्रमहासांतपनमिति मिताक्षरा=अर्थात्–चाण्डाल और पतित ब्रह्महत्यारे आदि का जूठा अन्न खाइ लेनेमें ब्राह्मणहो सो चान्द्रायण करै क्षत्री महासान्तपन करै वैश्य छौदिनका कृच्छ्र

करै शूद्र तीन दिन उपबास करै=आपदितुविशेषः=आपत्काल में केवल ब्राह्मणका जूठा खानेके निमित्त पर जुदा एक नियम है=तदाहपराशरः=आपत्कालेतुविप्रस्य भुक्त्वाशूद्रगृहेयदि मनस्तापेनशुध्येत् त्रिपदांचशतंजपेत्=अर्थात्—अन्नका अकाल आदि किसी कठिन कालमें निज प्राणोंकी रक्षा हेतुसे केवल ब्राह्मण का जूठा खाना परा हो या शूद्र के घरमें बैठिके अपने हाथका बनाया अन्न खाने का निषेध है सो खाना पराहो तिसका दोष केवल मनमें बहुत पछितावा करने से ही मिटिजाता है परन्तु जो साक्षरहोय सो गायत्रीका सैकरा जपिकर शुद्ध होताहै (यह एक सैकरा एक दिनकेही दोष पर समझना किन्तु अनेक दिनके मध्ये इसी हिसाब से=परन्तु आपत्कालके बिना इससे जुदे नियमहैं सो आगे देखो॥ ० ॥ पीतशेषजलपानेतु—वृहत शाता तपः=पीतशेषंचयत्किंचिद्वाजनेमुखनिःसृतम् अभोज्यंतद्विजानीयाद्भुक्त्वा चान्द्रायणाचरेतइति(तदभ्यासविषयंत्र्यंनिमित्तस्यलघुत्वादितिमिताक्षरा=अर्थात्—पीकर बचाहुआ जल पात्रमें जो कुछरहा या मुख से निकसाहुआ सो सब अभोज्य में गिनती है तिसको खाकर चान्द्रायणाकरै यह बड़ शातातपने कहा (इसपरमिताक्षराकार कहितेहैं कि यह दोष छोटाहै तिससे अनेक बार ऐसा जल पीनेसे दोष की बडाई समझीजातेमें यह बड़ा प्रायश्चित्त चाहिये नहीं तो एकहीबार पीने पर छोटा प्रायश्चित्त ढूंढना सो आगे देखौ=यथा=पीतोच्छिष्टन्तुपानीयं पीत्वातुब्राह्मणःक्वचित् त्रिरात्रंतुव्रतंकुर्याद्वामहस्तेनवापुनः (एतच्चबुद्धिपूर्वविषयंअकामतस्त्वर्द्धंकल्प्यमितिमिताक्षरा=अर्थात्—पीकर जूठे हुये पानीको कहीं कोई ब्राह्मण पीलेवै सो तीन दिन ब्रत करै और बायें हाथसे भी पीकर यही तीन दिनका ब्रत करै (इस पर भी मिताक्षराकार कहितेहैं कि यहतीनदिनका प्रायश्चित्त भी उसको चाहिये जिसने जानते हुये पियाहो किन्तु विना जाने पीलेने पर इससे भी आधा सिर्फ डेढ़ दिनका ब्रत चाहिये=ध्यान करो=यद्यपि मिताक्षराकार कहि चुके सो सब ठीकहै परन्तु न्यायका स्वरूप इसमें यहीहै कि पहिले वचन में शातातप ने महीने भरका चान्द्रायण कहा सो भी अनेक बार पीने पर नहीं किन्तु एकही बार पीलेने मध्ये कहा लेकिन अन्य वर्णोंका जूठा पीलेनेमध्ये कहा क्योंकि प्रायश्चित्त बड़ा होनेसे यही उसका तात्पर्य है और इस दूसरे वचन से तीन दिन का प्रायश्चित्त केवल अपना जूठा जो बचा पहिला धराहो तिसके पीलेने मध्ये कहाहै कि जैसा उनके साथही अपने बायें हाथसे पीलेने पर वही तीनि दिनका प्रायश्चित्त कहा— इसमें कोई तर्क उठावै कि अपना जूठा पीने में क्या दोष है जो तीन दिन प्रायश्चित्त

करै तिसका उत्तर भी यहीहै कि अपने बामे हाथमें क्या दोषहै जिसके द्वारा शुद्ध जल पीकर भी प्रायश्चित्त चाहिये॰ किन्तु धर्म्मशास्त्रका स्वरूप यहां यही है कि वचनसे प्रवृत्ति और वचनहीसे निवृत्ति मानीजाय॥ ०॥ दीपोच्छिष्टादितैलेतु–दीपेका जला जूठा तेलखाइलेने मध्ये अङ्गिराऋषिसम्मतग्रन्थमें जुदाप्रायश्चित्तहै=यथा=दीपोच्छिष्टन्तुयत्तैलंरात्रौरथ्याहृतंतु यत्अभ्यंगाच्चैवयच्छिष्टंभुक्त्वानक्तेनशुध्यतीति=अर्थात्–तेल जो दीपक जलाकर जूठा बचा या अँधेरी राति रास्ते गली आदि की धरती पर गिराहुआ सूतिके स्वालियाहो ऐसा विना जला भी या देहमें लगाते जो वचिगयाहो तिसको भी खालेनेमें रात्रि व्रत करनेसे विशुद्ध होताहै॥ यहाँ रात्रि व्रत (नक्तव्रत) नामसे समझना कि जिसकी जुदो एक विधि होतीहै॰ यथा (हविष्यभोजनंस्नानंसत्यमाहारलाघवम्अग्निकार्यमधःशय्यांनक्तभोजीषडाचरेत्)अर्थात्–दिनमें कुछ न खाइके चार घटी रातिगये पर थोडा भोजन करै सो नक्तव्रतकहाता है तिसके साथ छे वातों की साधना है कि दिनके सिवाय सायंकाल भी स्नान करै उस दिन असत्य कुछ न बोलै पेटभर न खाय अग्निमें खीरि पूरीका होमकरै वही आप खाय धरती पर सोवै तव यह नक्तव्रत कहाताहै (निशानक्तन्तुविज्ञेयंयामार्द्धं प्रथमेसदा) इस वचनसे चार घडी राति गये के भीतर अग्निका होम और भोजन करना संसिद्ध है॥ ०॥ यहां तक अशुचि प्राणी करके छुई विगाडी वस्तु खाने के प्रायश्चित्त कहे गये–अव नीचे अशुचि वस्तुसे भिडी छुई अन्नादिक वस्तु खाने के प्रायश्चित्त कहेजायँगे॥ इत्यशुचिप्राणिसंस्पृष्टभक्षणप्रायश्चित्तानि॥

(अथाशुचिद्रव्यसंस्पृष्टभोजनप्रायश्चित्तं)

अत्राहसंवर्त्तः=केशकीटोपपन्नन्तुनीलीलाक्षोपघातनस्नायवस्थिचर्म्मसंस्पृष्टंभुक्त्वातूपवसेदहः=तथाशातातपोपि=केशकीटावपन्न रुधिरमांसास्पृश्यस्पृष्टभ्रूणहावेक्षित पतत्रिअवलीढश्वसूकरगवाघ्रातशुष्कपर्युषितवृथापक्वेष्वान्नहविर्यांभोजनेतूपवासः पंचगव्याशनंचेति (एतच्चोभयमपिअकामविषयमितिमिताक्षरा=अर्थात्–वाल या कीड़े जिसमें परेहुये ऐसा अन्न या नील वा लाखसे दूषित अन्न या नस नाडी हाड चमडा इनसे भिड़ा विगडा हुआ अन्न खाइके एक दिन उपवास करै=तैसा शातातप ने भी कहाहै कि=वाल कीड़ों से मिला अन्न वा लोहू मांस आदि न छूने योग्य चीजों से छुआ विगडा अन्न वा गर्भको हत्या करनेवाला भ्रूणहा कहाता है तिसकी आंखों से देखाहुआ अन्न वा पतत्री पक्षीओंका जुठारा हुआ अन्न वा कुत्ता शुअर गायोंका

सूंघाहुआ अन्न वा अनेक दिनका बना धरा सूखा या कई दिनका बासी सडा वुसा अन्न या वृथापक्व जो देव पितर अभ्यागतको निवेदन किये विना बनाकर धराहो या देवताके निमित्त भेट देनेको संकल्प किया अन्न धराहो या देवताका चढ़ा या हविष्य किसी पूजाके निमित्तकी सामग्री धरीहो इनमें किसी एकही के खालेने में एक दिनका उपवास प्रायश्चित्तहै दूसरे दिन पंचगव्य का आहार करना चाहिये (ये दोनों संवर्त्त शातातपकी व्यवस्था केवल उसके ऊपर आरूढहैं कि जिसने इच्छाके विना ऐसा अन्न खाया हो=और=जिसने जानि बूझि इच्छा के साथ ऐसा खायाहो तिसकेलिये अग्रोक्त प्रायश्चित्तहै=यदाहविष्णुः=मृद्वारिकुसुमादींश्चफलकन्देषुमूलकान् विरामूत्रदूषितान्प्राश्यकृच्छ्रपादंसमाचरेत् सन्निकृष्टेऽर्धमेवस्यात्कृच्छ्रस्त्वशुचिभोजने (अल्पसंसर्गेपादोमहासंसर्गेऽर्धंसाक्षादशुचिलिप्तवस्तुभक्षणेपूर्णां कृच्छ्रंकुर्यादितिव्यवस्थायांत्रिधात्वंविज्ञेयं• धर्मशास्त्रोक्तव्रतेषुपुल्लिंगोपिकृच्छ्रशब्दः=अर्थात्–कोई श्रेष्ठ माटी या जल या खाने के फूल आदि या फल कन्द गांडा मूली आदि कोई चीज विष्ठा या मूत्रसे थोडी दूषितहुईहो तिसको खाइकर चौथाई कृच्छ्रसाधै तव शुद्धहोय एवं जो अति समीपसे दूषित हुईहो तिसको खाकर आधा कृच्छ्र साधै एवं जो चीज गूह मूतसे साक्षात्कार लिपिगईहो तिसको खाकर पूर्णपूर कृच्छ्र करै तव शुद्ध होय (इन तीनोंका दृष्टान्त ऐसे समझो कि वेरी के वृक्ष तले हगी मूती धरतीके पास गिरे वेर कोई ले आवै तौ यह थोड़ दूषित कहावेंगे परन्तु जो हगी मूती धरती पर गिरे वेरले आवै तौ यह अति समीप से दूषितहुये कहावेंगे इसके सिवाय यदि कोई ऐसे वेरों को चुनि कर खाइ जाय जो साक्षात् हगे हुये विष्ठामें झरिपरेहों तौ यह अशुचि भोजन कहा जाकर पूरा कृच्छ्र करनेसे विशुद्धहोगा इसीतरह सव चीजोंपर तीनि भेद समझि लेना ॥ ० ॥ अगिले व्यासजी के वचन में जो संसर्ग वर्णन करेंगे तिसमें केवल अशुचि प्राणीके छुइजाने मात्र का चर्चा या अशुचि द्रव्योंसे छुइजाने मात्रका चर्चाहै लिपिजानेका नहीं=यथाहव्यासः= संसर्गदुष्टंयच्चान्नंक्रियादुष्टंचकामतः भुक्त्वास्वभावदुष्टञ्चतप्तकृच्छ्रं समाचरेत्(एतचासंस्पृष्टामेध्यादि रसोपलब्धौवेदितव्यमिति मिताक्षरा=अर्थात्–जो अन्न संसर्ग (किसी मलीन सूखी वस्तुकी छुआछाई मात्र) से दूषित हुआ यद्वा खोटी क्रिया से अर्थात् बामे हाथसे परोसने आदि निषिद्ध प्रकारोंसे अथवा अपने स्वभावही से दूषित हुआ हो जैसे वासी होकर वुसिजाना आदि ऐसे अन्नोंको खानेवाला तप्तकृच्छ्र साधै (इस में संसर्गका चर्चा किया सो इस भांति का कोरा संसर्ग समझना कि जिसमें किसी

बीजका रस न लगने पावै उसीके भक्षण का यह प्रायश्चित्त है ॥ ० ॥ रजस्वला चांडालादिस्पर्शेतु—रजस्वला आदि का छुआ अन्न खाने का प्रायश्चित्त आगे देखो=तदाह शंखः=अमेध्य पतित चांडाल पुल्कस रजस्वलाऽवधूत कुणि कुष्ठि कुनखि संस्पृष्टानिभुक्त्वाकृच्छ्रं चरेत (एतत्कामकारविषयं• अकामतोऽर्धंकुर्यादितिमिताक्ष-रा=अर्थात—अमेध्य विष्टा रक्त मांस आदि• पतित• चांडाल • पुल्कस• रजस्वला• अवधूत संन्यासी आदि• कुणी जिसका हाथ विकल विगडा हो• कोढी• कुनखी जिसके नख विगडे हों• इनके छुये अन्न खाइके कृच्छ्रव्रत आचरै (यह भी इच्छाके साथ खाइजाने पर समझना किन्तु इच्छा विना खाने में आधा कृच्छ्र कराना यह मिताक्षराकारोंने कहा ॥ ० ॥ अयोक्त विष्णुके वचन वाला प्रायश्चित्त अशक्तके निमित्त पर मिताक्षराकार वताते हैं=यदाहविष्णुः=भुक्त्वाऽस्पृश्यैस्तथाऽशौचि के शकीटैश्चदूषितम् कुशोदुंवरविल्वाद्यैःपनसांबुजपत्रकैः शंखपुष्पीसुवर्चादिकाथंपीत्वा विशुद्ध्यतीति (तदशक्तविषयंरजकादि स्पर्शविषयंवा इति मिताक्षरा=अर्थात—नछूने योग्य जीवों या मनुष्योंका छुआ अन्न तथा सूतकी लोगोंका छुआ अन्न खालवै या वार कीड़ोंसे दूषित अन्न खाय या कुशा गूलर वेल आदिके पत्तोंपर धरा हुआ या कटहर कमल इनके पत्तोंपर धराहुआ खाय सो शंखपुष्पी सुवर्चा आदि औषधियों का काथ पीकर शुद्ध होजाता है (यह छोटा प्रायश्चित्त अशक्त पुरुषके निमित्तपर या रजक आदिका स्पर्श होजाने मध्ये समझना किन्तु अति मलीन के स्पर्श मध्ये नहीं यह मिताक्षराकारोंने कहा ॥०॥ शूद्रादिस्पर्शेतु—शूद्रआदिसे छुआ विगाड़ा अन्न खानेके प्रायश्चित्त जुदेहैं=तदाहहारीतः=शूद्रेणोपहतंभोज्यंकीटैर्वाऽमेध्यसेवि भिःभुंजानेषुतुवायत्रदद्याच्छूद्रउपस्पृशेत अनर्हत्वात्सपंक्तौतुभुंजानेषुवायत्रोत्थायोच्छि ष्टंप्रयच्छेदाचामेद्वाकुत्सित्वावायत्रान्नंदद्युस्तत्र प्रायश्चित्तमहोरात्रम्=अर्थात—भोजन करते हुये खाने योग्य अन्न जो शूद्रके छूनेसे यद्वा विष्टा आदि मलीन स्थानमें रहिने वाले कीडोंसे अशुद्ध होजाय अथवा भोजन करते पुरुष को शूद्र अपने हाथ से जल अन्न आदि कुछ ददेवै किन्तु परोसिदेवै या भोजन करनेवाले कोही छुइ लेवै यद्वा उजडपनकी अयोग्यतासे चौकेकी पंक्तिहीमें घुसिजाय अथवा एकपांतिमें वैठ भोजन करते अनेक ब्राह्मणोंमें कोई एक उठिकर अपनी पत्तल आदि जूठनि पांतिके वाहर लेजाय या उसी जगे वैठा रहिकर पांतिसे वाहर वाले किसी जूठनि के खवैया को समर्पण करदेवै अथवा ऐसा न करनेपरभी केवल आचमन करनेलगै तौ इस पुरुष को पांतिजूठी करदेनेके दोषमें एकदिन रातिभर उपवास प्रायश्चित्त करनाचाहियै

और उस जूठी पंक्तिके मनुष्य जो ऐसा होजाने बादि खातेरहैं तिनको भी व्रतकरना चाहिये और उसकोभी कि जिसको शूद्रने छुइलिया या कुछ परोसि दियाथा इनके सिवाय जहां जिस पांति में परोसने वाले किसी की निन्दा करते हुये परोसैं तो उस पांतिका अन्नखानेवाले और परोसनेवाले सभीको एक उपवास प्रायश्चित्त करना चाहिये=उच्छिष्टायांपङ्क्तौतु—जूठी पंक्तिमें भोजन करने मध्ये क्रतुस्मृति में विशेषता कहीगई है=यथा=यस्तुभुंक्ते द्विजःपंक्त्यामुच्छिष्टायांकदाचन अहोरात्रोषितोभूत्वापंचगव्येनशुद्ध्यतीतिक्रतुस्मरणम्=अर्थात—जो कोई द्विज होकर कदाचित जूठी पंक्तिमें (कि जिसके लक्षण सब तरह ऊपर कहिचुके) भोजन करै सो एकदिनराति भर उपवास करिके दूसरे दिन पंचगव्य पीकर शुद्धहोताहै=जूठीपंक्तिमें भोजनकरने पर पराशर ने भी विशेषता कही है=यथा=एकपत्त्युपविष्टानां विप्राणांसहभोजने यद्येकोपित्यजेत्पात्रमेवमन्नंनभोजयेत मोहाद्भुंजीतयस्तत्रपंक्त्यामुच्छिष्टभोजनः प्रायश्चित्तंचरेद्विप्रःकृच्छ्रं सांतपनंतदा=अर्थात—एक पांतिमें अनेकब्राह्मणोंके सहभोजन में बैठे हुयोंमें से यदि कोई एक भी अपने आगेका पात्र त्यागि देवै किन्तु बचे अन्न को न भोजे तिससे पांति जूठी होजातीहै तहाँ यदि कोई अपनी मूर्खतासे जूठाभोजन करै सो ब्राह्मण कृच्छ्रसान्तपनका प्रायश्चित्त आचरै तब शुद्धहोय=और=मंत्रविधिरहिताद्यन्नभोजनेतु—परोसी हुई थाली पर जलके साथ मन्त्र विधि किये विना अन्न खालेने या बामे हाथसे परोसे अन्नखाइलेने आदि कुछ बातों का प्रायश्चित्त यद्विशन्मतके ग्रन्थकर्ताने कहाहै=यथा=समुत्थितस्तु योभुंक्ते भुक्तभाजने वामनिर्मुक्तकभुक्तं योभुंक्ते ऽमंत्रभोजनम् एववैवस्वतःप्राहभुक्त्वासांतपनंचरेत=अर्थात—खडा होके यदि भोजन करै या जो कोई भोजन किये जूठे पात्रमें भोजनकरै या बामेहाथसे दिये हुये अन्नको भोजन करै या मंत्रविधि किये विना भोजन करै तिनके लिये वैवस्वत मनु ऐसा कहिते हैं कि सांतपन व्रत आचरैं ॥ ० ॥ मुर्दा आदि बूडे कूप आदि का जल पीने मध्ये जुदे प्रायश्चित्त हैं=तदाह विष्णुः=मृतपंचनखात्कूपादत्यंतोपहताद्वोदकंपीत्वाब्राह्मणस्त्र्यहमुपवसेत द्व्यहंराजन्यः एकाहंवैश्यःशूद्रोनक्तं सर्वेचांतेपञ्चगव्यंपिबेयुरिति (अत्यंतोपहताद्वेतिमूत्रपुरीषादिभिर्वेत्यभिप्रेतं=अर्थात—पांच नखवाले प्राणियोंमें कोई मरा जीव जिस कुआमें गिरपराहो या जिस कुआमें गूह मूत आदि अति मलीन कोई चीज गिरीहो तिसका जलपीकर ब्राह्मण तीनदिन क्षत्री दो दिन वैश्य एक दिन उपवास करै और शूद्रको नक्तव्रत चाहिये जिसमें दिनभर उपासकरिके रातिमें आधा पेट भोजन किया जाताहै• सभी लोग अपना अपना व्रत करने के

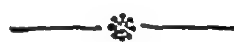
वादि पंचगव्य पीवैं तब शुद्धहोयँ=जहां=किसी कूपमें गिराहुआ मुर्दा मुख पसारने आदि हेतुसे पानीपीकर गलिघुलिजाय तिसका जलपीने मध्ये अग्रोक्त प्रायश्चित्तहै=यथा हारीतः=क्लिन्नंभिन्नंशवन्तोयेतत्रस्थंयदितत्पिवेत शुद्ध्यैचान्द्रायणंकुर्यात्तप्तकृच्छ्रमथापिवार्यदकृश्चित्ततःस्नायात्प्रमादेनद्विजोत्तमः जपंस्त्रिषवणस्नायीअहोरात्रेणशुद्ध्यतीति (इदंचान्द्रायणंकामतोमानुषशवोपहतकूपजलपानविषयमितिमिताक्षरा=अर्थात्-जिस जलमें मुर्दा परा रहिनेसे फूलिकर गलै या फूटिजाय तिस जल को यदि पीवै तो इस दोषकी शुद्धिकेलिये चान्द्रायण करै अथवा तप्त कृच्छ्र करै और जो कोई ब्राह्मण जलको पिये विना केवल स्नान मात्र अपनी मूर्खता से करै सो अच्छे जलमें जाकर त्रिकाल स्नान करिके गायत्री जप करतेहुये एक दिनरात्रि भर व्रत करके शुद्ध होताहै (मिताक्षराकार कहितेहैं कि यह महीनेभरका चांद्रायण उस जलके पीने पर समझना जिसमें मनुष्यका मुर्दा गिरके सड़ाहो और पीने वाले ने जानि बूझि इच्छा सहित पिआ हो• तिससे तप्त कृच्छ्र वाला प्रायश्चित्त मनुष्यसे उपरान्त किसी अन्य जीवके मुर्देवाला जल पीने पर आरूढ़ हुआ=मिताक्षराकार फिर कहितेहैं कि यह प्रायश्चित्त इच्छासहित जल पीनेपर ठहिरचुका• तिससे इच्छा विना पीने वाले पर छे दिनका प्रायश्चित्त चाहिये क्योंकि अगिले वचन के अनुसार व्यवस्था मानीजासक्ती है=यदाह देवलः=क्लिन्नंभिन्नंशवंचैवकूपस्थंयदिजायते पयःपिवेत्त्रिरात्रेणमानुषेद्विगुणंस्मृतम्=अर्थात्-कुआंमें परा हुआ मरा जीव यदि भीगि फूलिके फूटि जाय तो उस जलको विना जाने पी लेनेवाला तीन दिन दूध पीकर व्रत करै परन्तु जो मनुष्य का मुर्दा गिराहो तो इससे दूना छे दिनका व्रत चाहिये ॥ ० ॥ चाण्डालादिहतकूपजलपानेतु-चंडाल आदि अति मलीनों के कूप या पात्रका जल पीने मध्ये आपस्तंबका कहा प्रायश्चित्तहै=यथा=चांडालकूपभांडस्थंनरःकामाज्जलंपिवेत प्रायश्चित्तंकथंतत्रवर्णेवर्णेविनिर्दिशेत् चरेत्सान्तपनंविप्रःप्राजापत्यंचभूमिपः तदर्द्धंचचरेद्वैश्यःशूद्रेपादंविनिर्दिशेत्=अर्थात्-चाण्डालके कुएका पानी या उसके वासनमे धरा पानी कोई मनुष्य इच्छा सहित पीलेवे तहां प्रत्येक वर्णोंके प्रायश्चित्त कैसे आज्ञा दिये जायँ सो कहितेहैं कि ब्राह्मण सान्तपन आचरै क्षत्री प्राजापत्य करै वैश्य आधा प्राजापत्य करै शूद्र चौथाई करै (ये प्रायश्चित्त सब कामनासे पिये जल पर आरूढहैं=किन्तु=इच्छा के विना पीलेने मध्ये अग्रोक्त प्रायश्चित्त है=तदाह देवलः=चाण्डालकूपभाण्डस्थमज्ञानादुदकंपिवेत् सतुःप्रहेणशुद्ध्येतशूद्रस्त्वेकेनशुद्ध्यति=अर्थात्-चण्डाल के कुएका या

बासन का धरा उदक जो कोई विना जाने पीलेवै सो द्विजाती मात्र तीन दिन व्रत करनेसे पवित्र होताहै शूद्र एकही व्रत करिके शुद्ध होता है (अन्त्यजों के कूप या बासन का पानी अनेक बार पीनेका अभ्यास करै तिसकोप्राजापत्य चाहिये नीचे दूर जाकर आपस्तम्बका वचन देखना)=और=चण्डाल आदि सभी नीचोंके बनाये बांधे छोटे छोटे जलाशयोंका पानी पीलेनेपरभी कूपहीके समान व्यवस्था होगी= यथाह विष्णुः=जलाशयेष्वथाल्पेषु स्थावरेषुमहीतले कूपवत्कथिता शुद्धिर्महत्सुतु नदूषणम=अर्थात्–कुओंसे उपरान्त छोटे जलाशय जो धरती पर स्थावर हों तिनके जल पीनेमें भी कुओंके समान प्रायश्चित्त आदि शुद्धि कहीहै पर बहुत बड़े तड़ाग झील आदि जलाशय जिनमें धारा प्रवाह जल होताहो चाहें किसी के बनवायेहों या चाहें कोई जीव उनमें मरा हो तौ भी जल पीने आदि का कुछ दोष नहीं है न प्रायश्चित्तकी जरूरत होगी ॥ ० ॥ पुष्करिणी तलैया वड़ गड़हिले आदिके पानी पर जुदी व्यवस्थाहै=तदाहापस्तंबः=म्लेच्छादीनांजलंपीत्वापुष्करिण्यांह्रदेपिवा जानुदघ्नशुचिज्ञे यमधस्तादशुचिस्मृतम तत्तोयंयःपिबेद्विप्रःकामतोऽकामतोऽपिवा अकामान्नक्तभुंजीस्यादहोरात्रंतुकामतः=अर्थात्–म्लेच्छ आदि मलीन मनुष्योंके कब्जामें रहती पुष्करिणी या ह्रद (गड़हिलेहौज) का जलपीकर यह व्यवस्थाहै कि गोडों के घूंटे जिसमें डूबि जायँ सो तौ जल पवित्रहै घूटोंसे नीचे होय सो अशुद्धहै ऐसे अशुद्ध जलको जो कोई ब्राह्मण पीवै सो इच्छा विना पीनेवाला दिन भर व्रत किये पीछे रात्रि में भोजन करै पर इच्छा सहित पीकर एक दिन रात का पूरा उपवास करै ॥ ० ॥ भाण्डस्थमन्त्याद्यादिभक्षणेतु–रजक छीपा रँगरेज धोबी आदि अन्त्यजों के पात्रका जल पीने मध्ये जुदा प्रायश्चित्त है=तदाहपराशरः= भाण्डस्थमन्त्यजानान्तुजलन्दधिपयःपिबेत् ब्राह्मणःक्षत्रियोवैश्यःशूद्रश्चैवप्रमादतः ब्रह्मकूर्चोपवासेन द्विजातीनान्तुनिष्कृतिः शूद्रस्यचोपवासेन तथादानेनशक्तितः=अर्थात्–अन्त्यजों के बासनमें धरा पानी या दही या दूध जो कोई अपनी भूलसे पीलेवै सो ब्राह्मण क्षत्री वैश्य इन तीनोंकी शुद्धि ब्रह्म कूर्च उपवास करनेसे होती है और शूद्र ने पीलियाहो तिसकी शुद्धि केवल उपास और यथाशक्ति दान करनेसे भी होती है–परन्तु इनमें से जिन किसी ने इच्छा सहित पिआहो तिसको यही प्रायश्चित्त दूना करना चाहिये=इसके सिवा=जिसने अनेक बार ऐसा पानी दही दूद पीनेका अभ्यास कियाहो तिसके लिये अगिले वचनसे प्राजापत्य विचारना होगा=यदाहआपस्तम्बः= अन्त्यजैःखानिताः कूपास्तडागावाप्यएवचा एषुस्नात्वाचपीत्वाचप्राजापत्येनशुद्ध

ति=अर्थात्—अन्त्यजों के खोदवाये कूप या तड़ाग या बावडी इनमें स्नान करिके या पानीपीके प्राजापत्य करै तब शुद्ध होय (यह बारम्बारके अभ्यासकी व्यवस्था सामान्य उनके बासन और कूप आदि सभी पर आरूढ़है क्योंकि प्रायश्चित्त बडा होनेसे इसीका चर्चा ऊपर लिख चुकेहैं कि आपस्तम्ब का वचन नीचे दूर जाकर देखना)=और=जो इन्हीं आपस्तम्बने दूसरे अगिले वचनमें केवल पञ्चगव्यहीपीना कहा सो वह रोगी आदि अशक्त पुरुष पर समुझना होगा=यदाहआपस्तम्बः=प्र पाखररायेघटकेचशैलेद्रोरायांजलंकोशविनिर्गतंच श्वपाकचाण्डालपरिग्रहेषुपीत्वाज लंपंचगव्येनशुद्ध्येत=अर्थात्—कुत्ते आदि जीवोंको खानेवाले श्वपाक कंजर आदि और असली चाण्डाल आदि अति मलीन मनुष्योंके कब्जामें रहितीहुई पिआउओं का पानी या उनके घड़ोंका भरा भरा पानी या पर्वतमें द्रोणी द्रोण जो प्रसिद्धहो-तीहैं कदाचित किसी द्रोणीमें चण्डालों का निवासहोय उसी द्रोणीके बीच कोई पानीका झरना ऐसा छोटासा झरता होय जिसपर इन्हीं चण्डालोंका दार मदार सदा रहिताहो तौ इस झरनारूपी कोशके निकसे हुये पानीकोभी न पीनाचाहिये यह तात्पर्यहै (शैलेपर्वतराध्यस्थलेद्रोणयाधारेकोशाद्विनिर्गतंजलंचेत्यन्वयः) इन जलों को यदि कोई द्विजाती पीलेवै सो पंचगव्य पीकर शुद्धहोसक्ताहै यदि रोगी आदि अशक्त होय जैसा ऊपर लिखि चुके अन्यथा पूर्व्वोक्त ही व्रत देखने होंगे ॥ ० ॥ एक यह भी वचनहै कि=प्रपांगतोविनातोयंशरीरंयोनिषिंचति एकाहक्षपणंकृत्वा सचैलंस्नानमाचरेत॰ सुराघटप्रपातोयंपीत्वानाव्यजलन्तथा अहोरात्रोषितोभूत्वापंच गव्यंजलंपिवेत=अर्थात्—जहां कहीं नदी कूप आदि जलकीप्राप्ति न होनेसे पिआ-ऊ पर जाकर कोई देह धोवे सो एक दिन सब धन्धे छोडके समय बितानेके बाद वस्त्रों सहित किसी नदी आदि तीर्थ पर स्नान जाकरकरै तब दोष दूर होताहै॰ एवं यह दूसरा नियमहै कि मदिरा के मटकों में भरा पानी या सर्व्व जातोंकी सामान्य पिआऊका पानी जिस ब्राह्मण विज्ञानीने पीलियाहो या नाव्यजल अर्थात् जहां नदी आदि के किनारे पर अतिशय थोड़े जलमें अनेक नाउ टिकी बँधी रहिती हों तिनके नीचेकापानी जो मलीन कीचड़केसमान होजाताहै वही नाव्यजल पीलिया हो अथवा नावके भीतर भरा वा मटके आदि में भरा हो सो भी नाव्य जल समु-झना इन जलोंको पीकर यह प्रायश्चित्त चाहिये कि एक दिन रातिका उपवास करिके दूसरे दिन पंचगव्य घोलि छानिके उसका पतला जल पीवै तब शुद्ध होय ॥ ० ॥ एक यादगारनके तौरसे यह बात यहां प्रसंगसे लिखे देतेहैं कि प्रायश्चित्तों

के वर्णनमें जहांजहां प्राजापत्य या सान्तपन आदि नामलिखेहों तहां तो उन्हींका विधान जो कुछ होता हो सोई कियाजायगा अन्यथा जहां साधारण ऐसा लिखा हो कि एक या सात दिन उपवास करै तहां एक दो तीन आदि व्रत निराहार भी होसक्ते हैं इससे अधिक संख्या सात वारह पन्द्रह आदि जहां लिखीहो तहां सर्व्वत्र यह समुझिलेना कि यावक पीकर व्रत करनेहोंगे अर्थात गो सूत्रमें जौका दलिया वा साबूत जौ रांधि के पतला दलिया वा गाढा माडसा वनाया जाय सो यावक होताहै यहां तक अशुचि प्राणीके छुई और अशुचि वस्तुओंसे छुई भिडी खानी पीनी चीजोंके प्रायश्चित्त कहे गये—अब नीचे भाव दुष्ट चीजें खालेनेके प्रायश्चित्त कहे जायँगे भाव दुष्ट भी अनेक तरहसे होती हैं॥

अथभावदूषितकालदूषिताद्यन्नभोजनप्रायश्चित्तानां प्रकाशकोऽयंपरिच्छेदःएकोनसप्ततितमः (७१)



इस परिच्छेदमें भावदुष्ट और काल दुष्ट आदि अनेक दूषित अन्न भोजन करने के प्रायश्चित्त कहेजायँगे—तिनमें प्रथम भाव दूषित के फिर उसीके अन्तरगत जिस अन्नपर झूंठी भ्रान्तिसे भी कुछ शंका खडी होजाय तिसकेखाइलेनेका प्रायश्चित्त• फिर काल दूषित भोजनका प्रायश्चित्त• फिर ग्रहण होते आदि समयों पर खाने के प्रायश्चित्त• फिर अनुक्त प्रायश्चित्तवाले दोषोंके प्रायश्चित्त• फिर गुणादूषित कांजी आदि चीजों के प्रायश्चित्त और उसीके भीतर पीना फोक आदि खाने के प्रायश्चित्त और विना होमे या दिये विना खाइलेने का प्रायश्चित्त फिर फूटे टूटे वासनमें या विरले साजे पत्तों पर खानेका• फिर हाथ घँघोलि दई हुई चीज खाने का• फिर शूद्रके हाथसे परोसा अन्न खाने वा जल पीनेका प्रायश्चित्त॥

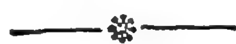
(भावदुष्टान्नादिभक्षणप्रायश्चित्तं)

भाव दुष्टका यह अर्थ है कि जिस वस्तुका आशय अभ्यन्तर किसी प्रकार से खोटा समुझाजाया हो चाहे उसवस्तुके वर्ण रंगतिसे या उसके आकार डौल वनावट से या उसमें कोई रस ऐसा अतिशय होता हो जिसके खानेसे शरीरमें तरह तरहके

त्ति=अर्थात्-अन्त्यजों के खोदवाये कूप या तड़ाग या बावडी इनमें स्नान करिके या पानीपीके प्राजापत्य करै तब शुद्ध होय (यह बारम्बारके अभ्यासकी व्यवस्था सामान्य उनके बासन और कूप आदि सभी पर आरूढ़है क्योंकि प्रायश्चित्त बडा होनेसे इसीका चर्चा ऊपर लिख चुकेहैं कि आपस्तम्ब का वचन नीचे दूर जाकर देखना)=और=जो इन्हीं आपस्तम्बने दूसरे अगिले वचनमें केवल पञ्चगव्यहीपीना कहा सो वह रोगी आदि अशक्त पुरुष पर समुझना होगा=यदाहआपस्तम्बः=प्रपास्वरण्येघटकेवशैलेद्रोण्यांजलकोशविनिर्गतंच श्वपाकचाण्डालपरिग्रहेषुपीत्वाजलंपंचगव्येनशुद्ध्येत=अर्थात्-कुत्ते आदि जीवोंको खानेवाले श्वपाक कंजर आदि और असली चाण्डाल आदि अति मलीन मनुष्योंके कब्जामें रहितीहुई पिआउओं का पानी या उनके घडोंका भरा धरा पानी या पर्वतमें द्रोणी द्रोणा जो प्रसिद्धहोतीहै कदाचित किसी द्रोणीमें चण्डालों का निवासहोय उसी द्रोणीके बीच कोई पानीका झरना ऐसा छोटासा झरता होय जिसपर उन्हीं चण्डालोंका दार मदार सदा रहिताहो तौ इस झरनारूपी कोशके निकसे हुये पानीकोभी न पीनाचाहिये यह तात्पर्यहै (शैलेपर्वतमध्यस्थलेद्रोण्याधारेकोशादिनिर्गतंजलंचेत्यन्वयः) इन जलों को यदि कोई द्विजाती पीलेवै सो पंचगव्य पीकर शुद्धहोसक्ताहै यदि रोगी आदि अशक्त होय जैसा ऊपर लिखि चुके अन्यथा पूर्वोक्त ही व्रत देखने होंगे ॥ ० ॥ एक यह भी वचनहै कि=प्रपांगतोविनातोयंशरीरंयोनिषिंचति एकाहक्षपणांकृत्वा सचैलंस्नानमाचरेत्० सुराघटप्रपातोयेपीत्वानाव्यजलन्तथा अहोरात्रोषितोभूत्वापंचगव्यंजलंपिवेत्=अर्थात्-जहां कहीं नदी कूप आदि जलकीप्राप्ति न होनेसे पिआऊ पर जाकर कोई देह धोवे सो एक दिन सब धन्धे छोडिके समय बितानेके बादि वस्त्रों सहित किसी नदी आदि तीर्थ पर स्नान जाकरकरै तब दोष दूर होताहै• एवं यह दूसरा नियमहै कि मदिरा के मटकों में धरा पानी या सर्व जातोंकी सामान्य पिआऊका पानी जिस ब्राह्मण विज्ञानीने पीलियाहो या नाव्यजल अर्थात् जहां नदी आदि के किनारे पर अतिशय थोड जलमें अनेक नाउ टिकी बँधी रहिती हों तिनके नीचेकापानी जो मलीन कीचडकेसमान होजाताहै वही नाव्यजल पीलिया हो अथवा नावके भीतर भरा वा मटके आदि में धरा हो सो भी नाव्य जल समुझना इन जलोंको पीकर यह प्रायश्चित्त चाहिये कि एक दिन रातिका उपवास करिके दूसरे दिन पंचगव्य घोलि छानिके उसका पतला जल पीवै तब शुद्ध होय ॥ ० ॥ एक यादगारतके तौरसे यह बात यहां प्रसंगसे लिखे देतेहैं कि प्रायश्चित्तों

के वर्णनमें जहांजहां प्राजापत्य या सान्तपन आदि नामलिखेहों तहां तो उन्हींका विधान जो कुछ होता हो सोई कियाजायगा अन्यथा जहां साधारण ऐसा लिखा हो कि एक या सात दिन उपवास करै तहां एक दो तीन आदि व्रत निराहार भी होसक्ते हैं इससे अधिक संख्या सात बारह पन्द्रह आदि जहां लिखीहो तहां सर्व्वत्र यह समुझिलेना कि यावक पीकर व्रत करनेहोंगे अर्थात् गो मूत्रमें जौका दलिया वा साबूत जौ रांधि के पतला दलिया वा गाढा माडसा बनाया जाय सो यावक होताहै यहां तक अशुचि प्राणीसे छुई और अशुचि वस्तुओंसे छुई भिड़ी खानी पीनी चीजोंके प्रायश्चित्त कहे गये—अब नीचे भाव दुष्ट चीजें खालेनेके प्रायश्चित्त कहे जायँगे भाव दुष्ट भी अनेक तरहसे होती हैं॥

अथभावदूषितकालदूषिताद्यन्नभोजनप्रायश्चित्तानां प्रकाशकोऽयंपरिच्छेदएकोसप्ततिमः (७१)



इस परिच्छेदमें भावदुष्ट और काल दुष्ट आदि अनेक दूषित अन्न भोजन करने के प्रायश्चित्त कहेजायँगे—तिनमें प्रथम भाव दूषित के फिर उसीके अन्तर्गत जिस अन्नपर झूठी भ्रान्तिसे भी कुछ शंका खड़ी होजाय तिसकेखाइलेनेका प्रायश्चित्त• फिर काल दूषित भोजनका प्रायश्चित्त• फिर ग्रहण होते आदि समयों पर खाने के प्रायश्चित्त• फिर अनुक्त प्रायश्चित्तवाले दोषोंके प्रायश्चित्त• फिर गुणादूषित कांजी आदि चीजों के प्रायश्चित्त और उसीके भीतर पीना फोक आदि खाने के प्रायश्चित्त और बिना होमे या दिये बिना खाइलेने का प्रायश्चित्त फिर फूटे टूटे बासनमें या बिरले सांजे पत्तों पर खानेका• फिर हाथ घँघोलि दई हुई चीज खाने का• फिर शूद्रके हाथके परोसा अन्न खाने वा जल पीनेका प्रायश्चित्त॥

(भावदुष्टान्नादिभक्षणप्रायश्चित्तं)

भाव दुष्टका यह अर्थ है कि जिस वस्तुका आशय अभ्यन्तर किसी प्रकार से खोटा समुझागया हो चाहें उसवस्तुके वर्ण रंगतिसे या उसके आकार डौल बनावट से या उसमें कोई रस ऐसा अतिशय होता हो जिसके खानेसे शरीरमें तरह तरहके

दुर्गन्ध आदि खाने से मल बहुत पैदा होयँ सो संसारमें जिन्हा योग्यहोते हैं जैसा बलन कफ थूक डकार नाक कीचड मल मूत्र अपानवायु या चित्तमें उद्वेग पैदाकरै या वीर्य को क्षीणताकरै या कामदेवकी आतुरता उत्पन्नकरै या कोढ़ आदि महारोगोंको उत्पन्न करसके इत्यादि नाना भांतिसे भाव दुष्ट चीजोंके लक्षण वैद्यक शास्त्र से भी जाने जाते हैं— इनसे उपरान्त भी अनेक लक्षण भाव दुष्ट के होते हैं दृष्टान्त जैसे यद्यपि अन्न सर्व्वथा उत्तम निर्विकार है परन्तु जो मन में भ्रांति खड़ी होजाय कि इसमें मेरे अमुक शत्रु ने विष मिलाकर भेजा या और किसी से मिलवाया होगा या अमुक पतितने छुइलियाहोगा इत्यादि०यद्यपि उसमेंविष न हो तौभी ऐसीशंका खड़ी होजानेसे वह अन्नभी भाव दुष्ट कहाताहै इत्यादि और भी समझने—इन चीज़ों का भक्षण करना प्रायः तपोमार्ग से निषिद्ध है जैसा साँचे तपस्वी लोग मगही की दाल खासक्ते हैं उरद की न खायँगे इत्यादि इसी दृष्टान्त से सब समझिलेना=भाव दुष्ट आदि भक्षण का प्रायश्चित्त पराशर ने कहा है=यथा=वाग्दुष्टभावदुष्टं चभाज ने भावदूषितम् भुक्त्वान्नंब्राह्मणः पश्चात् त्रिरात्रेण विशुद्ध्यति (एतत्कामकारवि-षयमितिमिताक्षरा=अर्थात्—जो कोई सा अन्न वाणी के नामही मात्रसे भाव दुष्ट होय या अपने आशय से भाव दुष्ट होय या वासन में धरने के दोषसे भाव दुष्ट हो जाय जैसा काँसे पात्रमें वकठी खट्टी चीज विगड जातीहै या तांबेमें दही दूध आदि या हाड के वासन में हरकोई चीज अशुद्ध कहाती है इत्यादि कोईसा भाव दूषित अन्न यदि कोई ब्राह्मण खाय सो उस दिनसे दूसरा दिन लेकर तीन दिन व्रतकरने पर शुद्ध होता है (इच्छा सहितखाने वाले को यह प्रायश्चित्त चाहिये यहमिता-क्षरा कार ने कहा ॥ ० ॥ भ्रांति जनक शंकायांतु—भ्रान्ति रूप शंका के उत्पन्न होने में वशिष्ठ के वचनानुसार प्रायश्चित्त है=यदाह वशिष्ठः=शंकास्थाने समुत्पन्ने अभोज्याभक्ष्यसंज्ञिते आहारशुद्धिंवक्ष्यामितन्मेनिगदतःशृणुअक्षारलवणांरूक्षांपिवे ब्राह्मींसुवर्चलाम् त्रिरात्रंशङ्खपुष्पींवाब्राह्मणःपयसासह पलाशबिल्वपत्राणिकुशान् पद्मसुदुम्बरम् अपःपिबेत्क्वाथयित्वात्रिरात्रेणविशुद्ध्यति=अर्थात्—वशिष्ठ जी कहतेहैं कि जहां भ्रांतिरूपी शंका खडी होजाय कि मैंने विना जाने अमुक तरहका दूषित अन्न खाया यहा नहीं खवाले और न खाने योग्य अन्नही साक्षात् होय जिससे शं-का खड़ी हुई ऐसे आहार की शुद्धि करना में कहिताहूँ सो मेरे कहिने को सुनो ब्राह्मी नाम की सुवर्चला औषधी जो जंगल से आती है तिसको तीन दिन ऐसे पीवे कि न इसमें कोई खारी नमकीन रस मिलावै न घी दूध आदि चिकनाई का रस

मिलावै किन्तु खखौ पीडारै तिससे शुद्धि होजायगी अथवा वही शंकामात्र ब्राह्मण तीन दिन शंखपुष्पी शंखाहूली को दूध के साथ औटिके पीवै अथवा ढाखाबेल कुशा पद्म गूलर इन पाँचों के पत्ते पानी में काढ़ा बनाकर पीवै तौभी तीन रात्रि से विशुद्ध होता है किन्तु जैसी शंका होय तैसाही प्रायश्चित्त इन में से चुनि लिया जाय=मनुने कुछ और विशेषता इसपर कही है=यथा=संवत्सरस्यैकमपिचरेत्कृच्छ्रं द्विजोत्तमः अज्ञातभुक्तशुद्ध्यर्थं ज्ञातस्यचविशेषतः=अर्थात—कोई द्विजोत्तम जिसने संवत्सर के भीतर बहुत कालतक भी विना जाने कुछ अशुद्ध भोजन किया हो तौ उस विना जाने खाते रहिने की दोष शुद्धि के लिये एक पूरा कृच्छ्र भी आचरै जो बारह दिन में होता है और जिसने जानि बूझि खाया हो तिसको इससे दूना आदिविशेषता से करना चाहिये=इस पाठ में ये प्रायश्चित्त द्विविधा रूपी भ्रांति की शंका पर सामान्य मर्यादा से दर्शाये गये तिससे इसमें किसी वस्तु का नाम विशेष नहीं कहा॥ इत्यभोज्यभोजनशंकायाःप्रायश्चित्तं॥

(अथ कालदूषितभोजन प्रायश्चित्तं)

काल दूषित उसको जानना जो वस्तु केवल कालही के प्रभाव से विगड़ी ठहिरै दृष्टांत जैसे बासी धरा अन्न यद्यपि श्रेष्ठ था परन्तु काल के विलम्ब से बुसिगया दूसरा दृष्टान्त जैसे गाय का दूध एक उत्तम चीज है तथापि विआनी गाय के दस दिन जबतक न बीतेहों तब तक उतने काल के प्रभाव से अशुद्ध है इत्यादि अनेकधाअन्य चीजें भी होती हैं=तिनको जिसने इच्छा विना धोखासे खाया हो तिसके लिये एक ही दिन का उपवास है (शेषेषूपवसेदहः) इसी मनु के वचन से पहिले भी प्रायः कहिचुके हैं=परन्तु=जिसने इच्छा सहित खायाहो तिसकोलिये अगिलाप्रायश्चित्त है=यदाह शंखः=केवलानिचशुक्तानि तथापर्युषितंचयत् रुचीशपक्वंभुक्त्वातुत्रिरात्रंव्रतीभवेत् (केवलानिअस्नेहाक्तानीतिमिताक्षरा=अर्थात—केवलअन्न जिनमेंघीका मेल न होय और शुक्त जो कांजी सिर्का आदि कालहीके विलम्ब से परिणामपाते हैं तथा पर्युषित बासी तिवासी आदि बुसे अन्न तथा हालही का पकाया अन्न जो अति सुधातुर ने क्रिया रहित पकाया हो तिसको खाइके तीन दिन व्रती होना चाहिये॥ ०॥ नवीन वर्षा का जल भी अति लघुकाल से दूषित होता है तिसको पीने का प्रायश्चित्त आगेदेखौ=तदाहवृद्धयाज्ञवल्क्यः=सृंगास्थिदंतजैःपात्रैःशंखशुक्तिकपर्दिकैः पीत्वानवोदकंचैव पंचगव्येनशुध्यति (कालतस्तूपवासः कर्त्तव्यइतिमिता-

क्षरा=अर्थात्—सींग हाड दांत इनकेबने पात्रोंसे जलपीवै या शंख सीप कौडा घोंघा से पीवै या नवोदक नवीन वर्षासे जो नदी आदि में भरि आया हो तिसको पीलेवै सो पंचगव्य पीकर शुद्ध होता है—परन्तु जिसने इच्छासहित पिआ हो तिसकोएक उपवास भी करना चाहिये—क्योंकि अगिले वचन से यह तात्पर्य मिलता है=यथा स्मृत्यंतरं=कालेनवोदकंशुद्धंनपिवेच्चत्र्यहंहितत् अकालेतुदशाहंस्यात्पीत्वानाद्यादहर्निशम=अर्थात्—वर्षा ऋतुके काल में जो वर्षा प्रथम हुईहो तिसका नया जल यद्यपि शुद्ध धरती पर संचय हुआहो तौभी तीन दिन तक वह न पीना चाहिये और जो वर्षात के विना किसी ऋतु में अकाल वर्षा हुईहो तौ दस दिन तक न पीना चाहिये कदाचित् कोई पीलेवै सो एक दिन रात्ति भर भोजन बिना उपवास करै ॥०॥ ग्रहणकालादि दूषितान्नं तु—ग्रहण परते काल में भी कान दूषित भोजन कहाता है तिसका प्रायश्चित्त आगे देखौ=तदाह शातातपः= नवश्राद्धं ग्रामयाजकान्नं ग्रहभोजनम् नारीणांप्रथमेगर्भेभुक्त्वा चांद्रायणंचरेत्=अर्थात्—प्रेतके नवश्राद्ध का अन्न खाय या ग्राम याजक का अन्न खाय या सूर्य चन्द्र का ग्रहण परते समय भोजनकरै या स्त्रियोंके पहिलौटी गर्भ रहिने के निमित्त पर भोजन करै अर्थात् उसी उत्सवके नामसे जो कुछ अन्न बांटा वर्तायागया तिसको खाय तौ यह खानेवाला पुरुषचांद्रायण करै तब शुद्ध होय—और ग्रहण के दिवसआदि उसके दबेहुये सूतकोसमयपरभी खाने का निषेधक प्रायश्चित्त आगे देखौ इसी के प्रसंग पर नीचेकीव्यवस्था है॥

(अनुक्तप्रायश्चित्तनिषेधेषुचभोजनशुद्धिः)

ऊपरली व्यवस्था के प्रसंग में एक निराली व्यवस्थाअब लिखतेहैं जिसमें फुटकर ग्रंथों के अनेक वचन एकत्र लिखे जायँगे और तात्पर्य उनका यही है कि जिन अवसरों पर भोजन करना निषेध है परन्तु प्रायश्चित्त नहीं कहा गया तिनका भी प्रायश्चित्तस्मरण में आवै=तत्राह मार्कंडेयः=चंद्रस्ययदिवाभानो र्यस्मिन्नहनिभार्गवग्रहणंतुभवेत्तस्मिन्नपूर्वंभोजनंक्रियाम नाचरेत्सग्रहेचैवतथैवास्तमुपागते यावत्स्याच्चोदस्तस्यनाश्नीयात्तावदेवतु=तथा अन्यांतरं=ग्रहणंतुभवेदिंदोःप्रथमादभियामतः भुंजीतावर्तनात्पूर्वंपश्चिमेप्रथमादधः=तथाऽन्यत्रापि=अपराह्णे नमध्याह्नेसायाह्ने नतुसंगवेभुंजीतसंगवेचेत्स्यान्नपूर्वंभोजनक्रिया=एवंमनुस्तु=नाश्नीयात्संधिवेलायां० नातिप्रगे० नातिसायं इत्येवमादि=वृद्ध शातातपस्तु=बालादर्शेचसंक्रुद्धश्चपौकामोवर्जयेन्निशिभोजनंतिलसंबद्धंस्नानंसर्वमिचलणः (इत्येवमादिष्वनादिष्टप्रायश्चित्तेषु प्राणायाम

मतंकार्यंसर्वपापापनुत्तये उपपातकजातानामनादिष्टस्यचैवहीति ३०६ योगीश्वरोक्तं द्रष्टव्यमितिमिताक्षरा=अकामतस्तु षोडेयुपवसेदहरितिमनूक्तोपवासो द्रष्टव्यइतिच मिताक्षरा=अर्थात्—मार्कंडेय ने यह कहा है कि चन्द्रमा या सूर्य्य का ग्रहण जिस दिन होनेकोहोय तिस दिन उसके होनेसे पहिले भोजन रसोई आदि क्रिया कुछ न करनी चाहिये • और ग्रहण दिनमें भी नहीं अर्थात् जिस दिन ग्रहण ग्रस्तायी बिम्ब उदय हुआहो तिसदिन ग्रहणहोजानेके बादभी रसोईआदि न करनी चाहिये•तथा अस्तं ज्यायतेपिकाले अर्थात् जब ग्रसा हुआ बिम्ब अस्त होगया हो तो जब तक फिर उदय न होय तब तक उतने काल में न भोजन करै=तैसा अन्य ग्रन्थ का यह वचनहै कि=चन्द्रमाका ग्रहण यदि रात्रिके प्रथम प्रहरसे उपरान्त होनेवाला ठहिरै तो उस दिनके ठीक दुपहरसे भीतरले कालमें भोजन करै किन्तु मध्याह्न के उपरांत न करै० परन्तु जो रात्रि के पहिले पहर के भीतर ग्रहण ठहिरै तो दिन के प्रथमही पहरके भीतर भोजन करै उपरान्तमें नहीं=तैसा और भी ग्रन्थान्तर वचन है जिसमें ग्रहणके बिना भी सब दिनोंका यह नियमहै कि=न तो अपराह्न कालमें भोजनकरै न मध्याह्नकालमें न सायाह्न काल में न संगव काल में भोजन करै० भला कदाचित् संगव काल में करना भी परै तो प्रातःकाली संगवसे पहिले सूर्योदय होने के बिना तो अवश्यही न करना चाहिये (इसमें अपराह्न शब्द से दिनमान का सबसे पिछला तिहाई भाग समझना • मध्याह्न शब्दसे ठीक दुपहर की बिचली छे घडी तीन पहली तीन पिछली समझनी अथवा केवल दो घटि का एक पहली एक पिछली तो अवश्यही माननी क्योंकि यही मध्याह्न संध्योपासना का समय होता है० सायाह्न का त भी सूर्यास्तके ठीक समयसे तीन घडी पहले तीन पीछे तक होताहै• ऐसेही प्रातःकाल सूर्योदयसे पहले पीछे तीन तीन घडी मिलिके छे घटिका तक होताहै उन्हीं घडियों के बीतने पर अनन्तरकी छे घडी संगव काल के नाम से होती हैं=ऐसाही मनुने भी कई वचनों में जुदा जुदा कहाहै कि=संधियोंकी बेलापर न भोजनकरै• अति प्रातः-कालमें भी न करै यहां अतिप्रातःकाल उसीको समझना जो संगव के नाम की छे घडी कहिचुके० अति सायंकाल में भी न खाय ०ऐसे और निषेध भी मनुस्मृति में हैं कि जिनके प्रायश्चित्त नहीं लिखे=वृद्धगार्ग्य ने भी कहा है कि=धाना दही तेलान्हुरी आदि चबेने और दही सत्तू इनको रात्रिमें अपना कल्याण चाहनेवाला वर्जित करै और तिल का बना भोजन तथा स्नान भी विवेकी पुरुष रात्रि में न करे (मिताक्षराकार कहिते हैं कि ऐसी ये बातें कहीं हैंसे और भी जे कोई वचन कहीं

देखि पड़ें कि जिनमें निषेधके द्वारा यद्यपि दोष दर्शाया गया परन्तु उस दोष का प्रायश्चित्त कुछ नहीं कहा तिन सभी में वह प्रायश्चित्त विचारना जो आगे ३०६ तीनसौ छठे मूलश्लोकसे योगीश्वर आप कहेंगे कि एकसौ १०० प्राणायाम करने चाहिये • इसका विशेष व्यौरा उसी स्थलपर समझि लेना=और=जिसने इन्हीं निषिद्ध कालोंमें इच्छा विना धोखा आदि लाचारी से खाया हो तिसके लिये एक दिनका उपवास है (शेषेषूपवसेदहः) इसी मनुके वचनसे विचारना चाहिये यह भी मिताक्षराकारने कहा ॥ इतिकालदूषितान्नभोजनप्रायश्चित्तं॥

(अथ गुणदुष्टशुक्तादि भक्षणप्रायश्चित्तं)

अत्रमनुः=शुक्तानिचकषायांश्च पीत्वाऽमेध्यान्यपिद्विजः तावद्भवत्यप्रयतो यावत्तन्नव्रजत्यधः=अर्थात्—कांजी सिर्के और अपवित्र काढे अरक भी ब्राह्मण पीकर तब तक अशुद्ध रहिता है जब तक वह पचिकर गुदा से न निकसि जाय (इसमें भी प्रायश्चित्त कुछ नहीं कहा पर मिताक्षरा कार कहिते हैं कि इच्छा के विना पीने वालेपर वही एक दिन का उपवास चाहिये जो मनुने (शेषेषूपवसेदहः) इस वचन से कहा था=और जिसने इच्छा सहित पिआ हो तिसको तीन का व्रत अगिले वचन के अनुसार चाहिये जैसा शंखने यह कहा है (केवलानिचशुक्तानि तथापर्युषितंचयत ऋचीषपक्वंभुक्त्वाचत्रिरात्रंतुव्रतीभवेत्) अर्थात् केवल औरशुक्त और वासी तिवासी और कराही का पकाया कढी आदि और भी खायके तीन दिन व्रत राखै—फिरभी—मिताक्षराकार इसका प्रतिप्रसव दर्शाते हैं कि यह कांजी आदि जो निषेध किये गये सो केवल जो गुण से दुष्ट होयँ तिनहीं का प्रायश्चित्त समझना किन्तु आमले आदि उत्तम गुण वाले फलों के अचार में जो कांजी सा पानी खट्टा होता है तिसका निषेध नहीं है—इस बात का प्रमाण भी अगिला वचनदेखौ (कांजिकाशुफलायेषुगृहेषुस्थापिताभवेत् तस्यास्तुकांजिकाग्राह्यानेतरस्याः कदाचनेतिस्मरणात्) अर्थात्—जिन घरोंमें श्रेष्ठ गुणके फलों सहित (अचार) कांजी धरी गईहो तिसको कांजी ग्रहण करने योग्यहै और किसी की नहीं ॥ पिण्याकादौतु—तिल आदिका पीना या औटे घीका मैल या बादाम आदि कोई मीगमयि दार चिकनाई निचोड़ने से बची हुई सीठी इत्यादि बहुधा अन्य चीजें भी होतीहैं तिनको खाइलेने पर गौतमने वमन कराइके घी चाटना प्रायश्चित्त कहा है॥०॥ अहुताद्दत्तान्नादिभक्षण प्रायश्चित्तं—कची पक्की आदि भोजन की वस्तु आहार

के निमित्तसे बनाई जाय या थालीमें परोसि आगे धरीजाय सो अग्नि को जिमाने आदि संस्कारोंके विना अभक्ष्य होताहै तिसका प्रायश्चित्त है=यथाह लिखितः=यस्यचाग्नौनक्षिपतेयस्यचान्नंनदीयते नतद्भोज्यंद्विजातीनांभुक्त्वाचोपवसेदहः वृथा कृसरसंयावपायसापूपशष्कुलीः आहिताग्निर्द्विजोभुक्त्वा प्राजापत्यंसमाचरेत्=अर्थात्-द्विजातियों में जिसके घर अग्नि में अन्न नहीं छोड़ा जाता और अभ्यागत गऊ आदि को नहीं दिया जाता हो तिसका ऐसा अन्न खानेके योग्य नहीं है कदाचित् कोई विप्र खालेवै सो एक दिन उपवास करै—एवं वृथाकृसर• वृथासंयाव• वृथा पायस• वृथा पूप• वृथाशष्कुली•इनको आहिताग्नि होकर जो द्विज खाइ सो प्राजापत्य आचरै तब शुद्ध होय=परन्तु जो अनाहिताग्नि ब्राह्मण इनको खाय तौ वह एकही दिनका उपवास (शेषेषूपवसेदहः) इसी वचनके अनुसार करै=कृसर उस भोजनका नामहै जो रसोईमें दो चीजें मिलाकर पकाई जायँ जिन दोनोंका रूप पकि जाने पर भी जुदा जुदा देखिपरै दृष्टान्त जैसे खिचरी आदि • संयाव का दृष्टान्त है गुझिया पिराँक आदि • पायस का दृष्टांत है खीरि आदि • पूप का दृष्टान्त पुआ गुना आदि अथवा अपूप शब्द लेनेका दृष्टान्त है कसार आदि• शष्कुलीका दृष्टांत है पूरी आदि • इतने नाम कहिनेसे सब तरहके भोजनका स्वरूप जाहर कियागया तिनके साथ वृथा शब्दकी योजनासे यह भाव दर्शाया है कि ठाकुर नारायण को भोग वा अग्नि जिमाउना आदि देवता का निमित्त (बहाना) धरे विना जो भोजन कीवस्तुबनाईगईसोवृथाकहाती हैतिसकोखाने केदोप्रायश्चित्तव्यवस्थितकियेगये ॥

(भिन्नभग्नपात्रादिषु भोजनेच प्रायश्चित्तं)

फूटे टूटे फटे आदि बहुतेरे साजे भी पात्रोंमें भोजन करनेका निषेध है कदाचित् कोई ब्राह्मण आदि विवेकी ऐसे खाय तिसके प्रायश्चित्त हैं=यथाह संवर्तः=शूद्राणांभाजनेभुक्त्वाभुक्त्वावाभिन्नभाजने अहोरात्रोषितोभूत्वापंचगव्येन शुद्ध्यति=तथा स्मृत्यंतरेपि=वटार्काश्वत्थपत्रेषु कुंभीतिन्दुकपत्रयोः कोविदारकदंबेषु भुक्त्वाचांद्रायणं चरेत्=तथान्यच्च=पलाशपद्मपत्रेषुगृहीभुक्त्वैन्दवंचरेत् वानप्रस्थोयतिश्चैव लभतेचांद्रिकंफलम्=अर्थात्—संवर्तने कहाहै कि शूद्रों के वासनमें भोजन करै या अपने भी फूटे वासनों में खाय सो एक दिनराति का उपवास करिके दूसरे दिन पंचगव्य पीकर शुद्ध होताहै=तैसा किसी और स्मृतिका यह वचन है कि=बरगद• अकौआ• पीपर• कुम्भी• तिन्दुक• कचनार• कदम• इनके पत्तोंपर धरिके भोजन करै तिसको चांद्रा-

यणा करना चाहिये=तैसा और भी यह वचन है कि=ढाखा बदल इनके पत्तों पर गृहस्थी पुरुष भोजन करै तिसको चांद्रायण करना चाहिये० परन्तु वानप्रस्थ और यती संन्यासी आदि जो इनपर भोजन करैं तिनको चांद्रायण करनेकी बराबर फल मिलता है अर्थात् उनको विशेषकर इन्हीं पत्तोंपर भोजन करना चाहिये॥ बिरली चीज हैं जो हैं जिनमें हाथ घँघोड़कर न देनी परोसनी चाहिये किन्तु चमचा आदि किसी पात्रसे उठाकर देनी चाहिये तिनके खाइ लेनेका प्रायश्चित्त नीचे देखो॥

(हस्तदानादिक्रियादुष्टभोजनप्रायश्चित्तं)

अथ पराशरः=माक्षिकंफाणितंशाकंगोरसंलवणंघृतम् हस्तदत्तानिभुक्त्वातुदिनमेकमभोजनम् (कामतस्तु हारीतोक्तंद्रष्टव्यं)=अर्थात्—सहत० राब० रँवसाग० दही० दूध० मठा० नमक० घी० ये चीजें हाथ डबोकर दीहुई खाइके एकदिन निराहार व्रत राखना (परन्तु जिसने जानि बूझि इच्छा सहित ऐसी चीज खाईहो तिसके लिये अग्रोक्त प्रायश्चित्त देखना=यदाह हारीतः=हस्तदत्तभोजने अब्राह्मणसमीपेभोजने दुष्टपंक्तिभोजने पङ्क्त्यग्रतोभोजने अभ्यक्तमूत्रपुरीषकरणे सूतसूतकशूद्रान्नभोजने शूद्रेःसहशयनेत्रिरात्रमभोजनम्=अर्थात्—हाथ घँघोलके दीहुई खानेमें० अब्राह्मण जिसमें ब्राह्मणके लक्षण नहीं तिसके पास बैठि खाने में० पाँतिसे पहिले खाइ लेने में (अर्थात् पाँति जब तक नहीं बैठी कोई एक पहिले भोजन करिलेवै या ज्योंनारकी पाँति बैठिजाने पर भी पारस होते समय भोजनकी आज्ञा प्रकट होनेसे पहिले कोई खाने लगै तिस दोष) में० और दूषित पाँति जो इसी उक्त प्रकारसे दूषित होचुकी या जिस पाँतिमें कोई अपांक्त पुरुष घुसि बैठा या किसीने पत्तल उठाइ डारी इत्यादि दोषवाली पंक्तिमें खाने पर० खाते समय हाथ पैर आदि सोने लगै या तेल मलिकर खाने बैठै या खाते समय मूत गूह टपकिपरै ऐसा भोजन करनेमें० मरेका सूतकी अन्न या शूद्रका अन्न खाइलेनेमें शूद्र के साथ सोने में० इन सब दोषों पर तीन तीन दिनका निराहार उपवास प्रायश्चित्त है॥ ०॥ अदल बदलके पर्याय लक्षणके साथ दिया अन्न भी दूषित कहाता है तिसका प्रायश्चित्त आगे देखो=तथाह षट्त्रिंशन्मते=ब्राह्मणान्नंददच्छूद्रः शूद्रान्नंब्राह्मणोददत् उभावेतावभोज्यान्नौ भुक्त्वातूपवसेद्दिनम्=अर्थात्—ब्राह्मणका अन्न यदि शूद्रके हाथ से दिया जाय या शूद्रका अन्न यदि ब्राह्मणके हाथ से दियाजाय तौयह दोनोंअन्न अभोज्यहोतेहैं तिनको यदि खाय तो एक दिन उपवास करै॥ ०॥ सजातीयान्नमपिशूद्रहस्तेनाग्राह्यं-

शूद्रके हाथसे अपना भी अन्न खाने पीने पर प्रायश्चित्त है=तदाह मनुः=शूद्रहस्ते नयोऽसुंक्तेपानीयंवापिवेत्क्वाचित् अहोरात्रोषितोभूत्वा पंचगव्येनशुद्ध्यति=अर्थात्-शूद्रके हाथसे जो कोई द्विजाती खाता है या कहीं कोईजलपीवै सो एकदिन राति का उपवास करिके दूसरे दिन पंचगव्य पीकर शुद्ध होता है=और भी=अन्नको मुह से फूंकना आदि कई बातोंका निषेध है=तदप्याह मनुः=आसनारूढपादोवाखार्वे प्रावृतोपिवा मुखेनधमितंभुक्त्वाकृच्छ्रं सांतपनंचरेत्=अर्थात्-ऊँचे आसन पर पैर धरे वा फर्श पर बैठाहुआ अथवा आधी धोती ओढे हुये खाय वहा गरम अन्न को मुह से फूंकि फूंकि भोजन करै तिसको कृच्छ्रसांतपन करना चाहिये ॥

अथाद्यनवपुराणादिश्राद्धान्नभुग्ब्राह्मणानांप्रायश्चित्त प्रकाशकोऽयंपरिच्छेदः द्विसप्ततितमः (७२)

—※—

इस परिच्छेदमें सब तरहके नवे पुराने बीचके श्राद्धोंका नौता आदि कुछ अन्न खानेवाले ब्राह्मणोंके प्रायश्चित्त भेद कहे जायँगे-तिनके प्रसंगसे वृद्धिश्राद्ध आदि उत्सवोंके श्राद्ध और कुमौत वालों के श्राद्ध और अपांक्तोंके श्राद्ध और संस्कारों के अंगभूत श्राद्ध और कचे अन्नके आम श्राद्ध खाने वालोंके जुदे जुदे प्रायश्चित्त कहे जायँगे-और जो ब्रह्मचारी होके श्राद्धखाय या परस्पर बदले के व्योहार में अनिष्ट भोजन कोई भी द्विजाती करै तिनके भी प्रायश्चित्त हैं॥

(त्रिरात्रादिश्राद्धान्नभोजनेप्रायश्चित्तं)

अत्राह भरद्वाजः=भुंक्ते चेत्पार्वणश्राद्धे प्राणायामानषडाचरेत् उपवासस्त्रिमासाब्दिवत्सरांतंप्रकीर्तितः प्राणायामत्रयंत्वाद्येहोरात्रस्तुपिंडने न्यलकृपेस्मृतंनक्तं व्रतपारणा सेतथा द्विगुणांक्षत्रियस्यैतत् त्रिगुणंवैश्यभोजने मासाच्चतुर्गुणंह्येतत्स्मृतंशूद्रस्यभोजने (भतिसौहारिलिदतिमिताक्षर्य) अतिर्यातिष्वेतिवारिग्रुणःमाप्नोतिये द्विजाः तश्चिरंतनैवारिभुक्त्वा चान्द्रायणंचरेत्=हारीतो प्याह=एकादशाहेतुभुक्त्वापंचगव्येनतथा उपोष्यविविद्वादशाहेकूष्माण्डैर्जुहुयाद्घृतम्=विष्णुरप्याह=प्रागासपिंडीकरणश्राद्धे पादोनंचान्द्रायणंसिद्धः वैपरिवर्तितवर्षस्तुपंचगव्यंद्विजाचरेत् (इतिचापीदृश्यतिति मिताक्षरा)=अपरंचहारीतप्याह=चान्द्रायणंनवश्राद्धे प्राजापत्यंतुमिश्रके एकाहस्तुपु

रात्रौषु प्राजापत्यं विधीयते (प्राजापत्यन्तु मिश्रके इत्येतदाद्यमासिकविषयं द्रष्टव्यं इ तितु मिताक्षरा=द्वितीयादिषु तु षट्त्रिंशन्मतोक्तं यथा=प्राजापत्यं नवश्राद्धे पादोनन्त्वा द्यमासिके त्रैपक्षिके तदर्धन्तु पादो द्वैमासिके तथा पादोनकृच्छ्रं निर्दिष्टं षड्मासे च तथा ब्दिके त्रिरात्रं चान्यमासेषु प्रत्यहं चेदहःस्मृतम=अर्थात्–यदि कोई ब्राह्मण किसी ब्राह्मणके पार्वणश्राद्धमें कि जो कनागत आदि पर्वोंमें होताहै भोजन करै सो छे वार प्राणायामही करिके शुद्ध होजाता क्योंकि पार्वणश्राद्ध बहुत अनिष्ट नहींहै• परन्तु जिस मौतको दो मास बीतिजाने बाद तीसरे महीनेका श्राद्ध आदि लेकर वर्षी पर्यन्त चाहें तिस महीनेका मासिक श्राद्ध होय तिसका अन्न खानेवाले को एक उपवास करना चाहिये• जिसने पुत्रका जन्म आदि किसी वृद्धिश्राद्धमें जो नान्दीमुख प्रसिद्ध है खायाहो तिसको तीनि प्राणायाम करने चाहिये क्योंकि यह पार्वणसे भी कुछ श्रेष्ठहै• जिसने सपिण्डीश्राद्धमें खायाहो तिसको एकदिन रातिभर उपवास करना चाहिये•जिसनेअसरूप श्राद्धमें खाया हो जिसका कोई प्रसिद्ध नामरूप न हो तिसको नक्त भोजन व्रत करनाचाहिये और जिसने महाव्रतोंकेपारण संबंधी श्राद्धमें खाया हो तिसकोभी यही नक्तव्रत अर्थात रात्रि में भोजन करना चाहिये (यह सब केवलब्राह्मण का अन्न खानेपर कहागया किन्तु क्षत्रीका श्राद्धान्न खाकर इनसे दूने प्रायश्चित्त और वैश्य का श्राद्धान्न खाने में तिगुना और साक्षात शूद्र का श्राद्धान्न खाने में चौगुना करवाया जाय (अतिथौतिष्ठतिनभोक्तव्यं) अतिथि अभ्यागत जिनके द्वार पर उपस्थित होय तिनको दिये विना पानी तक पीलेने वाले द्विजाती लोग जैसा रुधिर पीते हैं तैसा दोष लगताहै तिससे अतिथि को दिये विनाकुछ अन्न खाइ लेवै सो चांद्रायण व्रत करै यह भारद्वाज ने कहा= हारीत भी कहिते हैं कि=एकादशा का श्राद्धान्न खाइके तीन दिन उपवास करै तथा अस्थिसंचयन (मुर्दोके हाड़ चुगने) के दिनका श्राद्धान्न खाइ सोभी तीन दिन उपवास करनेके पीछे विधि से स्नान करिके कूष्मांड नाम जाति के वेदोक्त मंत्रों से घी का होम करै= विष्णु भी कहिते हैं कि= नवश्राद्ध नवीन जो एकादशा तक होते हैं तिनमें यदि कोई विप्र भोजन करै सो प्राजापत्य करै• परन्तु जो महीना पूरा होने पर पहिले महीने का श्राद्धान्न खाय सो चौथाई कम करिके तीनि पाद प्राजापत्य करै• जो तीनि पाख पूरे होने पर तिपखी श्राद्ध का अन्न खाय सो आधा प्राजापत्य करै• जो छिमाही श्राद्ध का अन्न खाय सो पंचगव्य ही पीकर एक दिन में शुद्ध होना है (मिताक्षराकार कहिते हैं कि यह सब छोटे प्रायश्चित्त इसके लिये समझना

जिसने आपत्काल के प्रभाव से ऐसे अन्नखाये हों=किन्तु अच्छे भले दिनोंमें जिसने खाया हो तिसके लिये हारीत ने जुदा प्रायश्चित्त कहा है कि=नव श्राद्धोंमें खाकर चान्द्रायण करै और मिश्रक श्राद्ध में खाकर बारह दिन का प्राजापत्य करै और पुराने श्राद्ध जिनको मरे बहुत वर्ष वीति गई तिनमें खाकरएकही दिन का प्राजापत्यहोता है (मिश्रक श्राद्ध उसको जानना जो पहिले मास का श्राद्ध किया जाय (क्योंकि अति नयाभी नहींरहा अतिपुराना भी नहीं ठहिरा इसीसे दोनों लक्षण इसी में समिले हुये ठहिरे) यह मिताक्षराकार ने कहा और यह भी कहा कि= दूसरे महीनाको आदि लेकर जो मासिक श्राद्ध किये जायँ तिनका अन्नखाने मध्ये षट्त्रिंशन्मत का कहा प्रायश्चित्त आगे देखो कि=नवीन श्राद्ध जो एकदशा तक होते हैं तिसका अन्न खाइ सो प्राजापत्य करै और पहिला महीना पूरा होनेका श्राद्धान्न खाय सो पौन प्राजापत्य करै और त्रिपक्षी श्राद्ध का अन्न खाय सो आधा प्राजापत्य करै और द्वैमासिक श्राद्ध का अन्न खाइ सो चौथाई प्राजापत्य करै और छमाही श्राद्ध या वर्षीश्राद्ध का अन्न खाइ लेने में चौथाई कम तीन पाद कृच्छ्र करना कहा है और इनसे उपरान्त जो महीने वर्षके भीतर बचे तिनका श्राद्ध किया जाय तिसका अन्न खाने वाले को सामान्य तीन दिनका प्रायश्चित्त चाहिये और जहां कहीं साल भरतक रोज रोज श्राद्ध किया जाय या नित्य श्राद्ध की विधि से रोज श्राद्ध किया जाय तिसका अन्न खाने वाला एक दिन उपवास करिके शुद्ध होता है (यह प्रायश्चित्त सब उसके लिये कहेगये जिसने ब्राह्मण का श्राद्धान्न खायाहो ॥०॥ क्षत्री आदि वर्णों का श्राद्धान्न खालेने मध्ये इसी षट्त्रिंशन्मत ग्रन्थ में जुदे प्रायश्चित्त हैं सोभी यहां देखो=यथाह=चान्द्रायणंनवश्राद्धे पराकोमासिके स्मृतः त्रैपक्षिकेसांतपनंकृच्छ्रोमासद्वयेस्मृतः क्षत्रियस्यनवश्राद्धे व्रतमेतदुदाहृतम् वैश्यस्यार्धाधिकंप्रोक्तंक्षत्रियात्तुमनीषिभिः शूद्रस्यतुनवश्राद्धे चरेचांद्रायणद्वयम् मासिचांद्रायणंमासेत्रिपक्षेत्वैंदवंव्रतम् मासद्वयेपराकःस्या दूर्ध्वंसांतपनंस्मृतम्=अर्थात्-नवे श्राद्धों का अन्नखाकर चांद्रायण करै•प्रथम मासका श्राद्धखाकर पराक व्रतकरै• त्रिपक्षी श्राद्ध खाकर सांतपन करै• दुमाही श्राद्ध खाकर कृच्छ्र करै• यह क्षत्री के नव श्राद्ध खानेमें व्रतका नियम कहा गया• जिसने वैश्य का नया श्राद्ध खाया हो तिसको क्षत्री से डोढा चाहिये यह मनीषी लोगों का कथन है• और शूद्र का नया श्राद्ध जिसने खाया हो सो पूरे दो चांद्रायण करै• जिसने वैश्य का मासिक श्राद्ध खाया हो सो डेढ़ चांद्रायण करै• जिसने वैश्य की तिपखी खाई हो सो एकचां-

प्रायश्चा करै• जिसने वैश्य का दुमाही श्राद्ध खाया हो सो पराक व्रत करै इसके उपरान्त के श्राद्धों में सांतपन करना कहा है ॥०॥ अपमृत्युवचःश्राद्धे तु—शंखक जी का वचन यद्यपि अविशिष्ट है कि=चांद्रायणंनवश्राद्धेपराकोमासिकेस्मृतः पक्षत्रयेऽतिकृच्छ्रःस्यात्षण्मासेकृच्छ्रएवतु । आब्दिकेपादकृच्छ्रं स्यादेकाहःपुनराब्दिके अतऊर्ध्वंनदोषःस्याच्छंखस्यवचनंयथेति (तदपिसर्पादिहतश्राद्धस्यविषयमितिमिताक्षरा•येस्तेनपतितक्लीबाइत्याद्यपांक्तेयविषयंवेतिचमिताक्षरा=अर्थात्— नव श्राद्ध का अन्न खाइलेने में चांद्रायण और मासिक श्राद्ध खाने में पराक और तिपखी श्राद्ध खाने में अतिकृच्छ्र और छमाही श्राद्ध खाने में कृच्छ्रही करना कहा है और वर्षी श्राद्ध का अन्न खाने में चौथाई कृच्छ्र किया जाय और पुनराब्दिक अर्थात् दूसरे वर्षके भीतर जो श्राद्ध होय तिसका अन्न खाने में एकही दिन उपवासकिया जाय इसके उपरांत तीसरी वर्ष आदिके श्राद्धों में कुछ दोष नहीं ऐसा शंखजी का यही वचन प्रकारके कहता है (मिताक्षराकार कहते हैं कि यह शंख जी का कहा प्रायश्चित्त उन श्राद्धों पर समझना जो सांप काटे आदि कुमौत मरेहुयों के श्राद्ध कियेजायँ अथवा चोर पतित नपुंसक आदि अपांक्तेयोंके श्राद्ध पर समझना• क्योंकि यह प्रायश्चित्त बड़ा है) औरभी अगिले वचनों में देखना इन्हीं अपांक्तेयों का श्राद्ध खाने सब्बे बड़े प्रायश्चित्त कहेगये हैं=यथा=चांडालादुदकात्सर्पाद्ब्राह्मणाद्वैद्युतादपि दंष्ट्रिभ्यश्चपशुभ्यश्चमरणंपापकर्मणाम् पतनानाशकेश्चैवविषोद्बंधनकैस्तथा भुक्त्वैषांषोडशश्राद्धे कुर्यादिन्दुव्रतंद्विजः॥ अपांक्तेयश्राद्धभोजने—भरद्वाजोप्याह=अपांक्तेयान्समुद्दिश्ययच्छ्राद्धमेकादशेऽहनि ब्राह्मणस्तत्रभुक्त्वाचशिशुचांद्रायणंचरेदिति आमश्राद्धेतथाभुक्त्वातप्तकृच्छ्रेणशुध्यति संकल्पितेतथाभुक्त्वात्रिरात्रंसपराकंवेदिति भरद्वाजेनगुरुप्रायश्चित्ताभिधानात्=अर्थात्—इतनी कुमौत कहाती हैं कि जो चांडाल के हाथ से मरै या जलमें डूबै या सांप काटामरै या ब्राह्मण के शाप से मरै या बिजली गिरिके मरै या दाढ़वालों से फाड़ा जाय या पशुओं से मरै या ऊँचे से गिरिके मरै या भूखे बना देकरमरै या जहर खाके मरै याफाँसी से मरै इतनी मौतें पापियों की अपने पाप कर्मों से होती हैं इनके षोडशी श्राद्ध में जो कोई ब्राह्मणभोजन करै तो चांद्रायण व्रतकरै तब शुद्ध होय= भरद्वाज मुनि भी कहते हैं कि=अपांक्तेय जो मराहो जिसके नाम का उद्देश करिके जो कुछ अन्न ग्यारहवें दिन दिया जाय वही उसका श्राद्ध कहा जाता है उस अन्न को यदि कोई ब्राह्मण खाय तिसको शिशु चांद्रायण करना चाहिये• इसकी विधि नीचे

लिखी देखो• तथा आमश्राद्ध जो कच्चा अन्न देकर निर्वाह किया जाता है तिसका अन्न खाइ सो तप्तकृच्छ्र करि शुद्ध होता है० तथा संकल्प किये अन्न में भोजन करै सो तीन दिन क्षपशाक व्रत करै जिसमें सब काम धन्ध छोडि के एकान्त में बैठिके उपवास करना होता है० इस तरह से भरद्वाज ने भी अपांक्तेयों का श्राद्धान्न खाने पर बड प्रायश्चित्त कहे= शिशु चांद्रायण का लक्षण (चतुरःप्रातरश्नीयात् पिण्डा न्विप्रसमाहितः चतुरोऽस्तमितेसूर्येशिशुचांद्रायणंस्मृतं) अर्थात् इस रीति से व्रत करै कि चारग्रास प्रातःकालसूर्योदय की वेरापर खाय और चार कौर अस्त होते समय खाके राति बितावे तो यही शिशु चांद्रायण कहाता है पर और बातों से सावधानरहै ॥ आमश्राद्धादेशस्तु ॥ आमश्राद्धके लक्षण (आपद्यनग्नौतीर्थेच चंद्र सूर्यग्रहेतथा आमश्राद्धं द्विजैःकार्यं शूद्रेणतुसदैवहि अपत्नीकःप्रवासीचभार्यायस्यरज स्वला आमश्राद्धं द्विजैःकार्यंशूद्रेणतुसदैवहि=अर्थात्—द्विजातिलोगोंको कच्चे अन्न का श्राद्ध यातो आपत्काल में करना चाहिये कि जब रसोई बनाना आदि अग्नि का प्रबंध न होसके यातीर्थपर या चंद्रसूर्यके ग्रहणमें या जिसकेपत्नीके न होनेसे प्रबन्ध न होसके या जो कोई विदेशमें ठौर ठिकाने बिनाबैठाहो या जिसकीभार्यारजस्वला होगई हो तौभी आमश्राद्ध करै परन्तु शूद्रको सदा सर्वदाकच्चे अन्नका श्राद्धदेने की आज्ञाहै वह पाक विधि न करै•येबातें यहांकेवल प्रसंगसे दर्शाई गईं= अब ऊपरकी प्रकृत व्यवस्थाका शेष फिर लिखते हैं कि ब्रह्मचारी होकर जो श्राद्धोंमें भोजन करै तिसके जुदे प्रायश्चित्त आगे देखो॥ श्राद्धभुग्ब्रह्मचारिप्रायश्चित्तं—वृद्धयम आह= मासिकादिषुयोऽश्नीयादासमावर्तनाद् व्रती द्विजः त्रिरात्रमुपवासोस्यप्रायश्चित्तंविधीयतेप्रा णायामत्रयंकृत्वाघृतं प्राश्यविशुद्ध्यति (इदमज्ञानविषय मितिमिताक्षरा•कामतस्तु स एवाहाग्रे=मधुमांसंचयोऽश्नीयात् श्राद्धं सूतकमेववा प्राजापत्यंचरेत्कृच्छ्रं व्रतशेषं स मापयेत्=अर्थात्—ब्रह्मचारियोंके लिये वड़ यमने कहाहै किजिस द्विजातीने अपना ब्रह्म चर्य आदि व्रत नहीं पूरा किया उसके भीतर यदि मासिक श्राद्ध आदि का भोजनखाय सो तीन दिन उपवास किये पीछे तीन प्राणायाम करिके घी चाटै तब शुद्ध होय (मिताक्षराकार कहिते हैं कि यह प्रायश्चित्त उसको चाहिये जिसने अज्ञानतासे खायाहो क्योंकि• इच्छा सहित खानेवाले का प्रायश्चित्त आगे वेही वृद्धयम कहितेहैं कि=जोकोईब्रह्मचारी मद्यमांसखाय या श्राद्धमेंखाय या सूतक में खाय सो प्राजापत्य रूपी कृच्छ्रव्रत करै तिस पीछे अपना व्रत पूरा करै॥ आम श्राद्धभोजनेतु सर्वज्ञार्दस—कच्चा सिधान्न देकेके श्राद्धवाला अन्न खाहं गृहस्थी ब्रा-

ह्मण या ब्रह्मचारी होके खाय तिन सबहीको अपने पूर्वोक्त प्रायश्चित्तोंका आधा प्रायश्चित्त करना चाहिये-इसका प्रमाण षट्त्रिंशन्मतका वचन आगे देखो (आम श्राद्धेतदर्धन्तु प्राजापत्यंचसर्वदा) कच्चे अन्नके श्राद्ध में पक्के अन्न वाले प्रायश्चित्त चाहें प्राजापत्य वा औरही जो कुछहों सो आधेआधे कर्तव्यहैं यहसर्वत्र सर्वदा नियम समझे रहिना ॥ ० ॥ इन सबसे उपरान्त जो उशना का वचन है कि=दशकृत्वःपिबे च्चापोगायत्र्याश्राद्धभुग्द्विजः ततःसन्ध्यामुपासीतशुध्येतुतदनन्तरम् (तदनुक्तप्रायश्चित्त विषयमिति मिताक्षरा=अर्थात्—श्राद्ध भोगने वाला ब्राह्मण दश बार गायत्री पढ़ि कर जल पीवे फिर उससे आगेको सन्ध्याकी उपासना नित्यविधिके अनुसार करे तिससे शुद्ध होजायगा (सो यह छोटा प्रायश्चित्त उसके लिये समझना जिसने उन श्राद्धोंका भोजन कियाहो जिनके नाम से कुछ प्रायश्चित्त कहीं नहीं लिखा यह मिताक्षराने कहा ॥०॥ संस्कारांगभूतश्राद्धान्नभोजनेतुव्यासः=अर्थात् संस्कारों के अंगभूत जो बहुधा जन्मसे लेकर जातकर्म आदि संस्कारोंके साथ भी श्राद्धकिये जाते हैं तिनका अन्न खाने मध्ये व्यासजीने प्रायश्चित्त जुदा कहा है=यथा=निवृत्ते चूडाहोमेतुप्राङ्नामकरणात्तथाचरेत्सांतपनंभुक्त्वाजातकर्मणिचैवहि अन्येष्वन्येषु तुभुक्त्वान्नंसंस्कारेषुद्विजोत्तमः नियोगादुपवासेनशुद्ध्यतेनिन्द्यभोजने=अर्थात्—चूडा कर्म(चोटीरखाना) होचुकनेके समयपर जो श्राद्ध पितरोंकी तृप्तिके अर्थ कियाजाय या कोई बड़ा होम पूरा होने के समय पर किया जाय या नामकरण (दसूठनि) से पहिले किया जाय या जातकर्म जन्म होनेके समयका जो कर्म होताहै तिसमें श्राद्ध कियाजाय इनमें जो कोई ब्राह्मण भोजनकरे वह सांतपन प्रायश्चित्त आचरे (परस्परभोजनव्यवहारस्थलेतु) दूसरी यह व्यवस्था है कि जिसने ऐसे किसी रिश्तेदार के घर निंद्य भोजन कहीं दसूठनि या मृतसूतक आदि में किया हो जहां बदले में खाने खवाने का व्यवहार होय तो यह ब्राह्मण किसी और को नियोगी (मुखतार) बनाकर उसके द्वारा एक व्रत कराने से भी शुद्धहोताहै चाहैं अपने आप करै तो भी कुछ निषेध नहींहै=मुखतार बनाने मध्ये—शास्त्रांतर में यह नियम है= भार्याभर्तुर्व्रतंकुर्याद्भार्यायाश्चपतिस्तथा असामर्थ्येद्वयोस्ताभ्यांव्रतभंगोनजायते— तया—पुत्रंवाविनयोपेतंभगिनीभ्रातरंतथा एषामभावएवान्यंब्राह्मणंविनियोजयेत= भर्ताके व्रतको उसकी भार्याकरै या भार्याके व्रतको उसका भर्ताकरै तो इस तरहसे दोनों को किसी समय सामर्थ्य न होनेमें व्रतका भंग नहीं होताहै—भार्या के न होने में—अच्छे चाल चलन संयुक्त किसी पुत्रको अपने व्रतपर मुख्तार करै या बहिनको

या भाई को इनके न होनेसे औरही किसी ब्राह्मण को नियुक्त करै॥ सीमंतकर्मादिसंस्कारेषुच ॥०॥ सीमंतोन्नयन कर्म जो गर्भाधानसे छठे आठवें महीना एक पूजा विधि प्रसिद्ध है तथा ऐसे और जो कुछ संस्कार होते हों तिनका अन्न खाने मध्ये जुदा प्रायश्चित्त है=तदाह सौम्य:=ब्रह्मौदनेचसोमेच सीमन्तोन्नयनेतथा जातश्राद्धेनवश्राद्धेद्विजश्चांद्रायणंचरेत् (अत्रब्रह्मौदनाख्यंकर्मयज्ञांगभूतंसोमसाहचर्यादितिमिताक्षरा=अर्थात्–ब्रह्मौदन इस नामका एक कर्म विशेष यज्ञोंका कोई एक अंग होताहै तिससें यदि कोई ब्राह्मण खाय तथा सोमनामसे भी यज्ञ विशेष कोई वेदोक्त कर्म होताहै तिसमें खाय या सीमन्तोन्नयन में खाय० जातश्राद्ध जो पुत्रजन्म होने बादि किये जायँ तिनमें खाय या नवश्राद्ध जो मरने पर एकादशातक किये जायँ तिनसें खाय तो यह ब्राह्मण चान्द्रायण करै तब शुद्ध होय॥ अब नीचे उन अभक्ष्योंका वर्णन होगा जो अन्न सर्वथा निर्विकार हैं कोई तरह दोष यद्यपि नहीं है परन्तु केवल परिग्रहका दोष मानाजाता है अर्थात् विरले मनुष्यों का स्वामित्व कब्जा उनपर होनेसेही दोष लगता है तिससे अभक्ष्य (न खानेयोग्य) कहेजातेहैं॥

अथपरिग्रहदोषमयान्नस्याभक्ष्यस्यभक्षणेप्रायश्चित्त प्रकाशकोऽयंपरिच्छेदःत्रिसप्ततितमः (७३)

—※—

इस परिच्छेद में केवल उन्हींके प्रायश्चित्त कहे जायँगे कि जिन मनुष्योंनेपरिग्रह दोषमय भोजन किया हो (इसका ब्योरा इसी चक्रके ऊपर लिख चुके तहां देखो) परन्तु उसके भेद अनेक हैं सो नीचे पाठ बांचने से प्रतीत होंगे कि इतने मनुष्योंका दिया किया अन्न अभोज्य होता है० तिसके अनन्तर जबर्दस्ती कोई म्लेच्छ आदि कुछ खवावै या हिंसाकर्म करावै तिसके भी प्रायश्चित्त (परिग्रह भोज्य में गिनती) है० फिर सूतकोंके परिग्रहका अन्न खानेवालोंके० फिर निपट निपूतेआदि का अन्नखानेवालोंके प्रायश्चित्तहैं०ये सबजुदेभेद भी उसीपरिग्रहमयदोषमेंगिनतीहैं॥

(परिगृहाभोज्यभोजनप्रायश्चित्तं)

अर्थात् जो भोजन अपने स्वरूपसे निषिद्ध नहींहै पर किसी विरले पुरुषका स्वा-

मित्व उमपर होनेसेही खानेका निषेध होय सो (परिग्रहा शुचि) कहाता है=जिन पुरुषोंके स्वामित्व वाला अन्न खानेका निषेध है तिनके नाम लक्षण योगीश्वर भी आचार मर्यादामें वर्णन करचुके हैं तहां १५९ एकसौ उनसठि मूलश्लोक उत्तरार्ध से लेकर १६४ एकसौ चौंसठिके अन्ततक साढे पांच श्लोकों की व्यवस्था देखो= और=मनुने उनसे कुछ अधिक नाम लक्षण दर्शायेहैं कि जिनका अन्नखाना मनेहै= यथाह मनुः=नाश्रोत्रियतततेयज्ञे ग्रामयाजिहुतेतथा स्त्रियाक्लीवेनचहुतेभुंजीतब्राह्मणः क्वचित मत्तक्रुद्धातुराणांतुनभुंजीतकदाचन गणान्नंगणिकान्नंच विदुषाचजुगुप्सितम स्तेनगायनयोश्चान्नंतक्ष्णोवार्धुषिकस्यच नादीक्षितकदर्यस्यबद्धस्यनिगडस्यच अ भिशस्तस्यषंढस्यपुंश्चल्यादांभिकस्यचचिकित्सकस्यमृगयोःक्रूरस्योच्छिष्टभोजिनः उग्रान्नंसूतिकान्नंच पर्यायान्नमनिर्दशम अनर्चितंवृथामांसमवीरायाश्चयोषितः द्विष दन्नंकदर्यान्नंपतितान्नमवक्षुतम पिशुनानृतिनोश्चैवक्रतुविक्रयकस्यच शैलूषतन्तुवा यान्नंकृतघ्नस्यान्नमेवच कर्मारस्यनिषादस्यरंगावतरणस्यच सुवर्णकर्तुर्वेनस्य शस्त्र विक्रयिणस्तथा श्ववतांशौंडिकानांचचैलनिर्णेजकस्यच रंजकस्यनृशंसस्ययस्यचो पपतिर्गृहे मृष्यन्तियेचोपपतिंस्त्रीजितानांचसर्वशः अनिर्दशंचप्रेतान्नमतुष्टिकरमेव चेति (अत्रचपदार्थाअभक्ष्यकांडे श्राद्धकांडेचव्याख्याता इतिमिताक्षरा=अर्थात्- यहां अश्रोत्रिय उसको समझना जो पुरुष विख्यात न होय तिसकी करी ज्यौनार आदि यज्ञका अन्न भोजन करना विवेकी ब्राह्मण को निषेध है• ग्राम के पुरोहित पाधाका किया होम यज्ञ तिसका अन्न खानेका निषेधहै• स्त्री ने या निपट नपुंसक ने होम यज्ञ किया हो तिसमें भी खानेका निषेध है• एवं मतवारे नशेबाज क्रोधी रोगी इनका भी कभी न खाय•गणान्न जो मठधारी आदि भण्डारा करतेहैं तिसका अन्न भी•गणिका वेश्या खानगी आदि स्त्रियों का अन्न • और भी जो कोई अन्न ज्ञानी पुरुषोंका निन्दा किया ठहिरे सोभी•चोर गायन की वृत्ति करने वालों का अन्न•लकडी काटने आदिकी जीविका करनेवाले बढैयों का अन्न• अनुचित रीति से विआज खाताहो तिसका अन्न • अदीक्षित जिसको यज्ञोपवीत आदि गुरु दीक्षा न मिलीहो तिसका अन्न•कदर्य जिसने खोटाधन संग्रह किया तिसका अन्न•कैदी और हवालातीका अन्न• अभिशस्त जिसको शाप या कोई पाप लगा हो तिसका अन्न• षंढ नपुंसक जो अतिकामी होकर नपुंसकहोगयाहो तिसका अन्न• पुंश्चली स्त्री और दम्भी पुरुषका अन्न• चिकित्सक जो चीरफारकी चिकित्सा और औष- धी बनानेमें जीवहिंसा करताहो तिसका अन्न• चिड़ीमार आदि शिकारी लोगोंका

अन्न• क्रूरप्रकृति वालेका अन्न• जूठ खानेवालों का अन्न• उग्र एक जाति होती है जो क्षत्रीके बीजसे शूद्रकी कन्यामें उत्पन्न हुई थी दोनोंके लक्षण मिलि के क्रूरही आचरण उसके होते हैं तिसका अन्न• सूतिका सौरिका अन्न जो दशदिन के भीतर हो• पर्याय अन्न वही जो शूद्रका अन्न ब्राह्मणके हाथसे या ब्राह्मणका अन्न शूद्र के हाथसे परोसा जाय सोभी•अनर्चित अन्न जो इन्द्रअग्नि आदि देवताओं के निमित्त नहीं अर्पण कियागया॰ वृथा मांस जो यज्ञविधिसे उपराह्न हुआहोय •अवीरा नारीका अन्न भी न खाना (अवीरा वही कहातीहै जिसके पुत्र पति इन दोमें कोई एक भी नहो•शत्रु का अन्न• कदर्य अतिकृपण जो धनके होते हुये भी कुटुम्ब को आराम न देताहो तिसका अन्न• पतित जो जातीधर्मसे गिराये गये तिनका अन्न • अवक्षुत जिस अन्नके ऊपर किसीने छींकमारीहो• पिशुन जो विराने अवगुण ढूंढि ढूंढि गैरों से कहिता फिरै तिसका अन्न॰ अनृती जो असत्यही अभ्यास रखता हो तिसका अन्न • क्रतुविक्रयक वह पुरुष जो यज्ञादि कामोंसे बची हुई खानी पीनी सामग्री की चीजें बेचै तिसका अन्न भी न खाना अथवा दूसरा अर्थ यह भी है कि क्रतु नामसे अपनी कोईसी प्रतिज्ञा रूपी संकल्पको बेंचडारै तिसका अन्नभी अभक्ष्य होताहै (इसका दृष्टान्त जैसे हम सत्यही बोलते हैं किसी मामिले पर असत्य नहीं कहिसक्ते हैं ऐसे संकल्पकी सची प्रतिज्ञा जिसने वहुत कालतक पालन करी हो और कदाचित किसी मुआमिलेपर कुछ लेनेके लोभमें आकर असत्य कहि आवै तो यह पुरुष क्रतुविक्रयकर्ता ठहिरै क्योंकि उसके पास सत्य की प्रतिज्ञा रूपी वड़ा उत्तम यज्ञफल मौजूद और सबको मालूमथा तिसको उसने दाम लेकर बेंच दिया इसी दृष्टांतसे और तरहकी भी अटल प्रतिज्ञा समझि लेना कि हम शरणागत की रक्षा अवश्य भावसे करते हैं और कभी लोभ में आकर ऐसा न करैं इत्यादि•शैलूष नट कहाते हैं तिनका पेशा जो कोई नैवर्णिक जाति करने लगै तिसका अन्न•इसी तरह तन्तुवाय कपडा बुननेका पेशा करनेवालोंका अन्न•कृतघ्न जो किसीका किया हुआ उपकार मेटिडारै तिसका अन्न॰कर्मार लुहारका पेशा करनेवालेका अन्न• निषाद मल्लाह आदिका पेशा करनेवालोंका अन्न ॰ रंगावतरण जो रँगसाजी या तसवीरोंका उतारना तथा स्वांगतमाशोंमें आपही वेश बदलिके तरह तरहके अवतार धरैं इत्यादि पेशा करने वालोंका अन्न• सुनार और बँसफोर और शस्त्र वेंचनेवालों का अन्न • कुत्ते पालनेवालोंका अन्न• कलालोंका अन्न• चैलनिर्णेजक धोवी आदि जो कपड़े धोनेका कामकरैं तिनका अन्न• रजक छीपा रँगरेज आदि जो रँगाई का

कामकरैं तिनका अन्न• नृशंस हिंसक जो जीवहिंसा वाला कामकरैं तिनका अन्न• जिसके घरमें उपपति लुगाईका जारयार भी रहिताहो तिसका अन्न• जे कोई पुरुष अपने घर जारको आतेजाते देखि सहिलेतेहों तिनका अन्न• जो स्त्रियोंके जीते हुये इन्होंके वशमें रहितेहों अर्थात् जिस घरमे पुरुषकी बात न चलतीहो तिसका अन्न• प्रेतका अन्न जो मौतसे दशदिन भीतर काहो• अतुष्टिकर अन्न जिसको देखने से मनमें ग्लानि खडी होती हो• ये सब अन्न खाकर प्रायश्चित्त करना चाहिये सो आगे दर्शावेंगे (मिताक्षराकार कहिते हैं कि इस व्यवस्था में जो कुछ पदार्थ कहे गये तिनकी व्याख्या पहिले भी जहां तहां अभक्ष्यकांडके पाठमें और श्राद्धकांडके पाठमें लिखि चुकेहैं=मनुने इन सबके नाम दर्शाने पीछे सबका एकही प्रायश्चित्त कहिदिया सो देखो=यथा=भुक्त्वाऽतोऽन्यतमस्यान्नममत्याक्षपणांत्र्यहम् मत्याभुक्त्वा चरेत्कृच्छ्रं रेतोविण्मूत्रमेवचेति=अर्थात्—इन सबमेंसे किसी एकही का अन्न बिना जाने खाकर तीन दिन क्षपणाक रूपी व्रतकरै जिसमें सबकाम धंधे छोडिके निराहार बैठना होताहै और जिसने जानिबूझि खायाहो सो पूरा कृच्छ्रव्रत आचरै या जिस ने गूह मूत वीर्य धोखासे खायाहो सो भी कृच्छ्र प्रायश्चित्त करै तब शुद्धहोय॥०॥ धोखासे उक्तान्न खाइ लेने पर पैठीनसिने भी तीनिही दिनका व्रतकहा और अन्न भी कुछ औरभांतिके निषेध कियेहैं=तथाह पैठीनसिः=कुनखीश्यावदन्तःश्वित्रीविवदमानः स्त्रीजितःकुष्ठीपिशुनः सोमविक्रयीवाणिजकोग्रामयाजकोऽभिशस्तोवृषल्याभिजातः परिवित्तिः परिविन्दानोदिधिषूपतिः पुनर्भूपुत्रश्चौरः कांडपृष्ठसेवकश्चेत्येतेऽपांक्तेया अश्राद्धार्हाःएषांभुक्त्वा त्र्यहमुपोष्यविज्ञानात्त्रिरात्रमिति=अर्थात्—इसमें जो नाम कहे तिनके भी अर्थ पहिले प्रकरणोंमें जहां तहां ब्योरेवार कहि चुके हैं तिससे यहां केवल इन्होंका अर्थ लिखे देतेहैं जो कोईका विशेष नामहोय• विगडे नखवाला• श्यामदांत वाला• पिताने विरोध राखने वाला• स्त्रियों से हारा हुआ• कोढी• पिशुन चुगुल खोर• सोमविक्रयी• वाणिजक ब्राह्मण• ग्रामयाजक ब्राह्मण• अभिशस्त जिसको शाप या पाप लगाहो• वृषली में सन्तान जिसने पैदा करी• परिवित्ति• परिविन्दान• दिधिषू का पति• पुनर्भूका पुत्र• चोर• जिनब्राह्मणों के घर कोरी उनकी भार्या बनिके बैठी हो वह कांड पृष्ठसेवी कहाता उस वचन के प्रमाण से कि (स्वकुलंपृष्ठतः कृत्वायोवैपरकुलंव्रजेत् तेनदुश्चरितेनासौकांडपृष्ठइतिस्मृतः) इतने सभी पुरुषोंका अन्न खाने योग्य नहीं और ये पांतिमें बैठारने योग्य नहीं और श्राद्ध के योग्य नहीं इनका अन्न बिना जाने धोखासे खाकर

तीन दिन उपवास करै तब शुद्ध होय॥ ० ॥ इन्हीं सबके नाम कुछ इनसे भी अधिक दर्शायके कर शंखजी ने इनका अन्न खाने वाले ब्राह्मण को चांद्रायण प्रायश्चित्त करना कहा है जो एक महीना भरमें होताहै सो अभ्यास पर समझना कि जिसने अनेकवार इनका अन्न खाया हो वह चांद्रायण सेही शुद्ध होगा=इसी प्रकार=गौतम ने जूठनि खवैया पुंश्चली अभिशस्त आदि अभोज्यान्नों के नाम सब गिनाइकर उनका अन्न खानेवाले को पहिले वमन करिके घी चाटना प्रायश्चित्त कहा है सो अति छोटा होने के हेतु से आपत्कालिक विषय समझना कि जिसने अन्नाकाल आदि आपत्तिमें उनका अन्न खायाहो सो इस छोटे प्रायश्चित्त से पवित्र हो सक्ता है॥ जिसको जबर्दस्ती से अभोज्य भक्षण करवायागया हो तिसका प्रायश्चित्त नीचे॥

(वलात्कारेणभोजितस्यप्रायश्चित्तं)

यस्तुवलात्कारेणभुज्यतेतस्यापस्तंबेनविशेषउक्तः=यथा=वलाद्दासीकृतायेतु म्लेच्छचांडालदस्युभिःअशुभंकारिताः कर्मगवादिप्राणिहिंसनम् उच्छिष्टमार्जनंचैवतथोच्छिष्टस्यभोजनम् खरोष्ट्रविडवराहाणा मामिषस्यचभक्षणम् तत्स्त्रीणांचतथासंगस्ताभिश्चसहभोजनम् मासोषितेद्विजातौतुप्राजापत्यंविशोधनम् चांद्रायणंत्वाहिताग्नेःपराकस्त्वथवाभवेत् चांद्रायणंपराकश्चचरेत्संवत्सरोषितः संवत्सरोषितःशूद्रो मासार्द्धंयावकंपिबेत् मासमात्रोषितःशूद्रःकृच्छ्रपादेनशुध्यति ऊर्ध्वंसंवत्सरात्कल्प्यंप्रायश्चित्तंद्विजोत्तमैः संवत्सरैस्त्रिभिश्चैवतद्भावंसनियच्छति—अर्थात=जिस किसी को जबर्दस्ती से न खाने की वस्तु कुछ खवाई जाय तिसके जुदे प्रायश्चित्त आपस्तंबने कहे हैं कि=जो कोई कहीं पकडि के जबर्दस्ती से म्लेच्छ चण्डाल आदि डाकुओं ने दास बनाये और मलीन वा अशुभ काम उनसे करवाये या गाय बैल आदि जीवों का वध उनके हाथ से कराया हो और गदहा ऊँट विष्टा खाने वाला सुअर इनके मांस खवाये हों और उन चण्डाल म्लेच्छों की स्त्रियों से मञ्जल इनका हुआहो या उनके साथ मिलिके भोजन करना पराहो—ऐसा द्विजाती तीनोंवर्णों में कोई हो जो एक महीना भर तक उनके साथ वसा फँसा रहाहो तिसकी शुद्धि बारह दिन प्राजापत्य की विधि करने से होजाती है॰ परन्तु वह पुरुष जो आहिताग्नि अग्नि की पूजा करने वालाहो तौ चांद्रायण करिके शुद्ध होगा अथवा महीना के भीतर कुछ थोडे दिन चण्डालोंके साथ रहिना पराहो तौ इस आहिताग्नि की शुद्धि बारह

दिन पराक व्रत की विधि करने से होजायगी• परन्तु जो महीनासे अधिक एकवर्ष तक चण्डालोंकेवशमें रहाहो चाहे अग्निसाद या अनग्निसाद्र कोईहो चांद्रायणऔर पराकभी दोनों प्रायश्चित्त करै तब शुद्धहोय यहसब द्विजातियोंकी व्यवस्था कही• कदाचित कोई शूद्रही एक वर्ष तक ऐसा फँसा रहा हो तिसको एक पखवाराभर यावक पीके व्रत करने चाहिये (गोमूत्र में रँधे जौ का दलिया यावक होता है• परन्तु जो शूद्र भी एकही महीना तक उनमें फँसा रहाहो सो कृच्छ्र व्रत की चौथाई केवल तीन दिन यावक पीकर या कृच्छ्र ही की रीति से व्रत करिके शुद्ध होजायगा• परन्तु जहां कोई द्विजाती या शूद्र एकवर्षसे जितना अधिक दिनोंतक चण्डालों में घिरा फँसा रहाहो उतनाही प्रायश्चित्त भी अधिक बढ़ाकर हिसाब से करवाना चाहिये सोभी यह कल्पना सिर्फ तीनि वर्ष के भीतर में प्रायश्चित्त बढ़ाने की होसक्ती है किन्तु पूरे तीनि वर्ष चण्डालों के साथ रहिते बीति जाने से यह पुरुषभी उन्हीं के समान होजाताहै फिर प्रायश्चित्त नहीं लगता॥ अब नीचे यह व्यवस्था लिखी जायगी कि जबकोई किसी मृतकमेंखाय तिसपर क्याप्रायश्चित्त चाहिये॥

(आशौचपरिग्रहान्नभोजनप्रायश्चित्तं)

अथच्छागल:= अज्ञानाद्भोजनेविप्राः सूतकेमृतकेपिवा प्राणायामशतंकृत्वाशुध्यंते शूद्रसूतके वैश्येयर्षष्टिर्भवेद्राज्ञिविंशतिर्ब्राह्मणेदश एकाहंचत्र्यहंपंचसप्तरात्रमभोजनम् तथाशुद्धिर्भवत्येषांपञ्चगव्यंपिवेत्ततः (इतिब्राह्मणादिक्रमेणैकाहत्र्यहादयोयोज्याः इदमकामविषयमिति मिताक्षरा=अर्थात्–मृतकों वाले काम के कब्जे में रहिता हुआ अन्नभी अभोज्य होता है तिसके खवैया पर जो प्रायश्चित्त चाहिये सो छागलमुनि कहिते हैं कि=जो ब्राह्मण किसी शूद्र के वृद्धिसूतक में या मौत सूतक में विनाजाने भोजन करै सो एक सौ १०० प्राणायाम करिके शुद्ध होते हैं और वैश्य के मृतकों में भोजन करै सो साठि ६० प्राणायाम करिके शुद्ध होते हैं और क्षत्री के मृतकों में खाकर २० प्राणायामों से और ब्राह्मण के मृतकों में खाकर दश १० प्राणायामों से पवित्र होते हैं• परन्तु केवल प्राणायामों से नहीं किन्तु ब्राह्मण के मृतक में एकदिन क्षत्री के मृतकमें तीनदिन वैश्य के मृतक में पांचदिन शूद्रके मृतकमें खाइकर सातदिन निराहार व्रतभीकरै फिर व्रतोंके समाप्त होने बादि एकदिन पञ्चगव्य पीवै तब शुद्ध होयँ (यहप्रायश्चित्त इच्छाके बिना मृतकभोजनमें खाने वाले का कहा=किन्तु=जानि बूझि इच्छा सहित खानेके विषय पर आगिला प्रायश्चित्त देखो=यथाह मार्कंडेय.=भुक्त्वान्नंब्राह्मणाशौचे चरेत्सांतपनंद्विजः भुक्त्वान्

क्षत्रियाशौचेतथाकृच्छ्रोविधीयते वैश्याशौचेतथाभुक्त्वा महासांतपनंचरेत् शूद्रस्यैव तथाभुक्त्वा द्विजश्चांद्रायणंचरेदिति=अर्थात्—ब्राह्मण किसी ब्राह्मण के सूतकों में भोजन करैतिसको सांतपन करना चाहिये॰क्षत्रीके सूतकोंमें भोजन करै सो कृच्छ्रव्रत आचरै॰वैश्य के सूतकों में भोजन करै सो महा सांतपन करै॰शूद्र के सूतकों में कोई द्विज भोजन करै सो चांद्रायण करै तब शुद्धहोय ॥०॥ इनके सिवाय जिसने इच्छा सहित बारम्बार सूतकोंमें खानेका अभ्यास किया हो तिसके लिये बड प्रायश्चित्त हैं सो आगे देखौ=तदाह शंखः=शूद्रस्यसूतकेभुक्त्वा षड्मासव्रतमाचरेत् वैश्यस्य तुतथाभुक्त्वात्रिमासान्व्रतमाचरेत् क्षत्रियस्यतथाभुक्त्वाद्वौमासौव्रतमाचरेत् ब्राह्मणस्यतथाऽऽशौचेभुक्त्वामासव्रतंचरेत् (इदमभ्यासविषयमितिमिताक्षरा=अर्थात्—शंख मुनि कहिते हैं कि शूद्र के सूतकों में खाइके छमाही भर व्रत आचरै॰ वैश्य के सूतकोंमें खाइके तीन महीने व्रतकरै॰क्षत्रीके सूतकोंमें खाइके दो मासभर व्रत करै॰ ब्राह्मण के सूतकोंमें खाइके एकमहीना भर व्रतकरै ॥ ० ॥ ऊपर छागल के वचन से आदि लेकर इसीपाठमें सूतकी अन्न खानेपर जोकुछ प्रायश्चित्त लिखेगये तिनका प्रारंभ सूतक बीतिजानेके दूसरेदिनसे करनाहोताहै क्योंकि जितनेसूतकी दिन बाकी हैं उतने दिन खानेवालाभी सूतकी रहिता है उसकोभीस्नानमात्रकी आशौच विधि करनी होती है॰यह नियम देखौ सब से पहिले परिच्छेदमें चौदहवीं अधिकोक्तिके अन्त में गौतम का वचन है॰ फिर सत्रहवें १७ मूल श्लोक वाली अधिकोक्ति के अन्त में देखौ जहां सूतकान्न भोजन के निषेध आदि नियम जो उसी अधिकोक्ति के पूरे होने तक व्यवस्थित होरहे हैं कि जिस वर्ण के सूतकमें शामिल होय यद्वा अन्न खाय उसी वर्ण के समान सूतक मानै—और यहांभी अग्रोक्त विष्णु का वाक्य देखौ कि (आशौच व्यपगमे प्रायश्चित्तंकुर्यात्) सूतकी दिन बीति जानेपर प्रायश्चित्तकरै ॥ अबनीचे निपट निपूते आदिका अन्न खानेपर प्रायश्चित्त कहेजायँगे॥

(अपुत्रादीनां भोजन प्रायश्चित्तं)

अत्राह लिखितः=भुक्त्वावार्द्धुषिकस्यान्नमव्रतस्यासुतस्यच शूद्रस्यचतथाभुक्त्वा त्रिरात्रंस्यादभोजनम्=तथा=परपाकनिवृत्तस्यपरपाकरतस्यच अपचस्यतुभुक्त्वान्नं द्विजश्चांद्रायणंचरेत् (एतच्चाभ्यासविषयमिति मिताक्षरा=परपाकनिवृत्तादिलक्षणंचतेनैवोक्तं=गृहीत्वाग्निंसमारोप्यपंचयज्ञान्ननिर्वपेत् परपाकनिवृत्तोऽसौमुनिभिः परिकीर्तितः पंचयज्ञांस्स्वयंकृत्वापरान्नादुपजीवति सततंप्रातरुत्थायपरपाकरतस्तुसः

ग्रन्मतेएवोक्तं=यथा=उपपातकयुक्तस्य अन्दमेकं निरंतरम अन्नंभुक्त्वाद्विजःकुर्यात्पराकंतुविशोधनमिति=अर्थात्–जिस ब्राह्मणमें ब्राह्मणत्वका आचार न होय तिसका अन्न और जो खोटे आचरणसे संयुक्तहोय तिसका अन्न जो कोई ब्राह्मणखाय सो एकदिन निराहार उपवास करे=इन्हींका अन्न जो एकसालभर निरन्तर खाताहै तिसका प्रायश्चित्तभीषट्त्रिंशन्मतहीमें कहाहै कि=उपपातकसे संयुक्तका अन्न जो कोई ब्राह्मण एक वर्षभर निरन्तरखाय तिसको पराक नामका प्रायश्चित्त करना चाहिये (उपपातक अनेकधा होतेहैं परन्तु यहाँपर निराचार और निषिद्धाचरण इन दोहीका चर्चाहै ॥ ० ॥ इदंतुभक्ष्याभक्ष्यप्रायश्चित्तकांडगत विशेषोदितव्रतकदंबकं द्विजाग्रयस्यैव क्षत्रियादीनांतुपादपादहान्याभवतीतिमिताक्षरा=विप्रेतुसकलंदेयंपादोनंक्षत्रियेस्मृतम वैश्येऽर्द्धंपादएकस्तुशूद्रजातिषुशस्यते इतिविष्णुस्मरणात्=अर्थात्–मिताक्षराकार कहिते हैं कि यह भक्ष्याभक्ष वाले प्रायश्चित्तों के कांड में आकर जुदा एक व्रतोंका समूह दर्शाया गया सो ब्राह्मणकेही प्रयोजनपर आरूढ है तथापि जो कदाचित् इन्हीं बातोंसे क्षत्रीका प्रयोजन आनिपरै तौ उसको चौथाई कमकरिके यही प्रायश्चित्त पौने पौने बतायेजायँ एवं वैश्यको आधे आधे शूद्रको एक एक पाद बतायेजायँ इसका प्रमाण अग्रोक्त विष्णुका वचन है कि=ब्राह्मण में पूरा प्रायश्चित्त लगावै और क्षत्रीमें पौन और वैश्यमें आधा और शूद्रजातियोंमें एक पाद ठीक है• परन्तु प्रकरण के बीचमें जहां कहीं विरली व्यवस्था तीनो वा चारोंवर्णोंको भिन्न भिन्न कहिचुकेहों तिसमें यहक्रम करनेका नियम नहीं लगाया जासक्ता है यह याद राखना॥

(इत्यभक्ष्यभक्षणप्रायश्चित्तप्रकरणं)

इस प्रकरणमें ६९ उनहत्तरि परिच्छेदके प्रारम्भ से लेकर ७३ तिहत्तरि के अंत तक पांच परिच्छेद हैं पांचों में सब तरहके अभक्ष्योंकी व्यवस्था कहीगईहै तिससे अभक्ष्योंका प्रकरण इसका नाम ठहरा॥

अब नीचे ७४के परिच्छेदमें दो किस्मके पापोंका जुदा जुदा प्रायश्चित्त लिखा जायगा• तहां यद्यपि जातिभ्रंशकर आदि नामोंकी किस्म एक जुदीहै उसका परिच्छेद भी जुदा होना चाहिये था परंच उसका पाद अतिशय थोड़ा है उनके लिये जुदा घर नहीं बनाया जासक्ता•तिससे प्रकीर्ण किस्मके परिच्छेद में उनको भी विराने घरमें जगह देनी परैगी ॥

अथजातिभ्रंशकरसंज्ञकाद्युपपापानां प्रकीर्णसंज्ञकपापानां चबहुविधानांप्रायश्चित्तप्रकाशकोऽयंपरिच्छेदः चतुःसप्ततितमः (७४)॥

—*—

यह परिच्छेद अपनी प्रधानता से प्रकीर्ण पापों के प्रायश्चित्त पर आरूढ है तथापि इसके प्रारम्भ में पहिले जातिभ्रंशकर १ सकरीकरण २ अपात्रीकरण ३ मलिनी करण ४ इस नामसे चारप्रकार के उपपातकों के प्रायश्चित्त संक्षेप रीति से कहिदिये जायेंगे—तिस पीछे प्रकीर्णक पापोंको विस्तार दियाजायगा (क्योंकि प्रकीर्ण यह नाम यद्यपि एक है पर भेद इसके अनेक हैं) किन्तु (यदनुक्तं तत्प्रकीर्णकं)जोजो उपपातक किसीप्रकरण या परिच्छेदमें गिनती न कियेगयेहों सो सब यहां ढूंढने से मिलेंगे क्योंकि प्रकीर्णक उन्हींका नामहै जोपहिले कहींनहींकहे॥

(अथ जातिभ्रंशकरादिपातक प्रायश्चित्तं)

यद्यपि सभी पातक उपपातकों के प्रायश्चित्त यथा क्रम से वर्णन होचुके हैं तथापि एक यह भेद समझना चाहिये कि जितने उपपातक दर्शाये गये उन्हीं में से बिरलों वा अनेकों के जुदे नाम जातिभ्रंशकर पाप संकरी करण पाप अपात्री करण पाप मलिनी करण पाप इत्यादि मनु आदि मुनीश्वरों ने जुदे नाम भेद किये हैं यह वृत्तांत २९२ दोसौ बयालिस की अविकोक्ति में देखो—जिन मुनीश्वरों ने ऐसे जुदे नाम धरे तिनको जुदे नामों के प्रायश्चित्त भी उसी तरह कहिने परे—तिनको भी इस स्थल पर लिखते हैं कि पढने वालों को सन्देह न रहै तिनमें प्रथम मनु का वचन देखो= यथाह मनुः= जातिभ्रंशकरंकर्मकृत्वाऽन्यतमंमिच्छया चरेत्सांतपनकृच्छ्रं प्राजापत्यमनिच्छया संकरापात्रकृत्येषुमासःशोधनमैंदवः मलिनीकरणीयेषुतप्तःस्याद्यावकंत्र्यहमिति (अन्यतममितिसर्वत्रसंबध्यते= अर्थात—मनु कहिते हैं कि जिन अनेक पापों का नाम जाति भ्रंशकर मैंने धरा तिनमें से कोई एक कर्म इच्छा सहित जो कोई करै तिसको सांतपन कृच्छ्र करना चाहिये जिसने इच्छा के बिना कर्म्म किया हो तिसको प्राजापत्य चाहिये इसी तरह संकरी

करण में से या अपात्रीकरण में से कोई एक पाप कर्म करै तिसको एक महीना चांद्रायण करनाचाहिये इसी तरह मलिनी करणीय नामके कर्मों में से कोई एक पाप करै तिसको तीन दिन गरम यावक पीकर व्रत करनाचाहिये ॥०॥ इन्हीं पापों पर यमने भी जुदे प्रायश्चित्त कहे हैं=यथाह यमः=संकरीकरणंकृत्वामासमश्नीतयावकम् कृच्छ्रातिकृच्छ्रमथवा प्रायश्चित्तंसमाचरेत् अपात्रीकरणंकृत्वातप्तकृच्छ्रेणशुद्ध्यति सांतकृच्छ्रेणवाशुद्धिर्महासांतपनेनवा मलिनीकरणीयेषुतप्तकृच्छ्रं विशोधनम्=बृहस्पतिनापि जातिभ्रंशकरेविशेष उक्तः=ब्राह्मणस्यरुजःकृत्वा रासभादिप्रमापणम् निन्दितेभ्योधनादानंकृच्छ्रार्धंव्रतमाचरेदिति (एषांजातिभ्रंशकरादिप्रायश्चित्तानां मन्वाद्युक्तानांजातिशक्त्याद्यपेक्षया विषयोविभजनीयःइतिमिताक्षरा= अर्थात्—यम ने ऐसे कहा है कि संकरीकरण पाप करिके एक महीना भर यावक भोजन करै अथवा कृच्छ्रातिकृच्छ्र प्रायश्चित्त आचरै तथा अपात्रीकरण पाप करिके तप्तकृच्छ्र प्रायश्चित्त से पवित्र होताहै या सांतकृच्छ्र से या महा सांतपन से शुद्धि उसकी होती है तथा मलिनी करणीय पापों में कोई कर्म जिसने किया हो तिसके लिये तप्तकृच्छ्र नामक प्रायश्चित्त है=बृहस्पति ने भी जातिभ्रंशकर पापों के समूह पर जुदा प्रायश्चित्त कहा है कि= ब्राह्मण के शरीरमें चोट लगाइके या गदहा आदि पशुओं का प्राण वध करिके या निन्दित कर्म करने वालों से धन का लेन करिके आधा कृच्छ्र व्रत साधै (मिताक्षराकार कहितेहैं कि ये मनु आदिऋषियों के कहे जाति भ्रंशकर आदि पापों के प्रायश्चित्त दोषी लोगों की जातिशक्ति आदि की अपेक्षा पर यथायोग्य बांटि देने चाहिये= फिर कहिते हैं कि=इस प्रकार से योगीन्द्र याज्ञवल्क्य जी के हृदय में उत्पन्नहुये अभक्ष्य आदिके प्रायश्चित्त संक्षेप से प्रदर्शित किये— किन्तु जो सर्वथा लिखते तो बहुत बड़ा विस्तार होता ॥०॥ इसबात पर ध्यान करो कि २९०दोसौनव्वे मूल श्लोक वाली अधिकोक्ति छूटे कितना अन्तर बीति गया तबसे कोई योगीश्वर का मूल श्लोक नहीं आया यद्यपि बीच के अनेक पाठ उसी अधिकोक्ति के शेष पाठ में से लिखे गये क्योंकि यहां तक सभी पाठ उसी मूल श्लोक की टीका में गिनती किये गये हैं तथापि उस मूल श्लोक से या उसकी अधिकोक्ति से कुछ भी संबन्ध इन पाठों का नहीं है जो भक्ष्याभक्ष्य के प्रकरण में अनेक भेदों से लिखे गये क्योंकि यह अनेक ग्रंथांतर की व्यवस्था संग्रहकरीगईहै ॥ अब आगे योगीश्वर आपही अपनी व्यवस्था २८१ दोसौ इक्यासी मूल श्लोक से छेड़ेंगे ॥ जातिभ्रंशकर आदि चारों नाम के विशेष

लक्षण भेद जो देखने हों तो २४२ दोसौ ब्यालिस की अविकोक्तिमें ढूंढना॥ इति जातिभ्रंशकराद्युपपापाद्यन्तंप्रायश्चित्तचतुष्ठयं॥

यहां तक सर्वथा• महापातक• पातक• अनुपातक• उपपातक• इनसबके प्रायश्चित्त भेद वर्णन होचुके— अब सबसे छोटे पाँचवीं छठी भाँति प्रकीर्णक नाम के पापों पर प्रायश्चित्त योगीश्वर आपही आगे कहेंगे तिसको ग्रन्थान्तर स्मृतियों की व्यवस्था से विस्तार देकर पूराकिया जायगा=प्रकीर्ण पापों का प्रकरण इन सबही पापों से निराला माना गया है कि जोकुछ यहां तक ऊपरवर्णन होचुका• निराला माना जाने का हेतु केवल यहीहै कि दिन रातिके आठों पहर में संसारी कामों के वर्तावसे छोटे छोटे पाप जो प्रत्येक समयपर अचानक उत्पन्न होजाते हैं तिनके छोटे छोटे प्रायश्चित्त भी सब इसी परिच्छेद में ढूंढे मिल सकेंगे॥

(अथप्रकीर्णक प्रायश्चित्तानि)

प्राणायामीजलेस्नात्वाखरयानोष्ट्रयानगः। नग्नःस्नात्वाचभुक्त्वाचगत्वाचैवदिवास्त्रियम् २९१
गुरुंहुंकृत्यत्वंकृत्यविप्रंनिर्जित्यवादतः। बध्वावावाससाक्षिप्रंप्रसाद्योपवसेद्दिनम् २९२
विप्रदण्डोद्यमेकृच्छ्रस्त्वतिकृच्छ्रोनिपातने। कृच्छ्रातिकृच्छ्रोसृक्पातेकृच्छ्रोभ्यंतरशोणिते २९३

अर्थः—गदहा या ऊँट के योगसे चलती गाडी आदि सवारी में जो बैठा हो या नंगा जल में नहाया हो या नंगा बैठि भोजन किया हो या अपनी ही भार्या साथ दिन में मैथुन किया हो सो नदी आदि में खूब स्नान और प्राणायाम करिके शुद्ध होता है ॥ २९१ ॥ गुरु को हूँ करिके तू करिके या किसी ब्राह्मण को वाद में जीति के या कपड़ा से बांधि के शीघ्रही प्रसन्न करिके दिन भर उपवास करे= अर्थात्—पिता माता जेठा भाई आदि किसी गुरुजन को कदाचित् इस तरह बोले कि हूं या तू ऐसा है इत्यादि किसी तरह बड़ा वचन के साथ घुड़के या कुछ बात कहे तो यह दोषी होता है एवं किसी अपने से बड़े या छोटे या बराबरके ब्राह्मण को क्रोध के साथ ऐसा कहे कि हूँ चुपहोजा इसी तरह ऐसे घुड़की के साथ वितंडा रूपी बातों से जीति सो दोषी कहाता है या उसको गले में हाथ ही कोमल रीति से लगाकर या रूमाल आदि कपड़ा से यथा दोनों रीति से ही बांधि कर भी दोषी होता है• इन सबका यही प्रायश्चित्त है कि जिनका अपमान किया तिनके पैरों पर गिर बरके आदि उपायों से उनको प्रसन्न करिके एक दिन भोजन न करे=गला दबोचने या कपड़े से बांधाही लटकें से उपरान्त अपराधों के बड़े प्रायश्चित्त हैं सो

अगिले श्लोक में देखो॥२९२॥ब्राह्मणको मारना सोचि डंडा लकड़ी उगानेमात्र पर कृच्छ्र प्रायश्चित्त है० डंडा उसकी देह पर लगाने मध्ये अतिकृच्छ्र है० लोहू चलि परने पर कृच्छ्रातिकृच्छ्र प्रायश्चित्त है० अभ्यंतर शोणित में कि जहां लोहू टपकने नहीं पाया किन्तु खाल के भीतर उभरि के रहिगया हो तिसमें भी केवल कृच्छ्र प्रायश्चित्त है॥ तीनों श्लोकों की अधिकोक्तिभी जुदी जुदी देखो॥ २९३॥
२९१ अधिकोक्तिः=दोसौ इक्क्यानवे के श्लोकमें जो प्राणायाम सहित स्नान कहा तिसको मिताक्षरा कार इच्छा से किये कर्मों पर ठहिराते हैं=क्योंकि मनु के अग्रोक्त वचन में खुलासा यही तात्पर्य है=यथा=उष्ट्रयानंसमारुह्यखरयानंतुकामतः सवासाजलमाप्लुत्य प्राणायामेनशुद्ध्यति=अर्थात्—ऊँट या गदहा की जुड़ी सवारी पर कामनासे बैठने वाला वस्त्रों सहित गोता लगाइके प्राणायाम करिके शुद्धहोता है=तिससे कामना बिना दैव योग से बैठना परै तिसको प्राणायाम छोड़ि केवल स्नान मात्र समझि लेना=और जो साक्षात गदहा ऊँटकी पीठिपर बैठा हो तिसके लिये पूर्वोक्त प्राणायाम सहित स्नान दो बार करना चाहिये क्योंकि यह दोष उससे बड़ा है इति मिताक्षराकाराः॥ २९१॥ दोसौ बानवे में जो ब्राह्मण को वितंडा वाद से जीतने पर प्रायश्चित्त कहा तिसके ऊपर यम का यह वचन है कि= वादेनब्राह्मणंजित्वाप्रायश्चित्त विधित्सया त्रिरात्रोपोषितःस्नात्वाप्रणिपत्यप्रसादयेत् (इत्यभ्यासविषयमिति मिताक्षरा=अर्थात्—वितंडावादसे ब्राह्मण को जीति के प्रायश्चित्त की इच्छा करै तिसको यह चाहिये कि पहले तीन दिन उपवास करै तिस पीछे स्नान करिके उस ब्राह्मण के सन्मुख साष्टांग प्रणिपात से गिरिके उसे प्रसन्न करै (मिताक्षराकार कहितेहैं कि यहबड़ा प्रायश्चित्त कई बारके अभ्यास पर समझना या कई बार की बराबर एकही बार जिसने अपमान कियाहो तिसके लिये॥ २९२॥ तिरानबे श्लोक में डंडे आदि से मारने पर बृहस्पति ने जुदे प्रायश्चित्त कहे हैं=यथा=काष्ठादिनाताडयित्वात्वग्भेदेकृच्छ्रमाचरेत्अस्थिभेदेऽतिकृच्छ्रःस्यात्पराकस्त्वंगकर्तने=पादप्रहारे यमः=पादेनब्राह्मणंस्पृष्ट्वाप्रायश्चित्तविधित्सया दिवसोपोषितःस्नात्वाप्रणिपत्यप्रसादयेत्=अर्थात्—लकड़ी आदि से मारिके यदि खाल तोड़िदी हो तौ कृच्छ्र व्रत आचरै जो हाड तोड़ि दिया हो तौ अति कृच्छ्र करै यदि कोई अंग भी काटि गया हो तौ पराक व्रत करना चाहिये=लात मारने मध्ये यमने कहाहै कि=पैर से ब्राह्मण को छुइकर प्रायश्चित्तकी अपेक्षामें एक दिन उपवास किया हुआ स्नान करि उस ब्राह्मण के संमुख साष्टांग प्रणाम

लक्षण भेद जो देखने हों तो २४२ दोसौ ब्यालिस की अधिकोक्तिमें ढूंढना॥ इति जातिभ्रंशकराद्युपपापाद्यनांप्रायश्चित्तचतुष्ठयं॥

यहां तक सर्वथा॰ महापातक॰ पातक॰ अनुपातक॰ उपपातक॰ इनसबके प्रायश्चित्त भेद वर्णन होचुके– अब सबसे छोटे पाँचवीं छठी भाँति प्रकीर्णक नाम के पापें पर प्रायश्चित्त योगीश्वर आपही आगे छेड़ेंगे तिसको ग्रन्थान्तर स्मृतियें की व्यवस्था से विस्तार देकर पूराकिया जायगा=प्रकीर्ण पापें का प्रकरण इन सबही पापें से निराला माना गया है कि जोकुछ यहां तक ऊपरवर्णन होचुका॰ निराला माना जाने का हेतु केवल यहीहै कि दिन रातिके आठों पहर में संसारी कामें के वर्तावासे छोटे छोटे पाप जो प्रत्येक समयपर अचानक उत्पन्न होजाते हैं तिनके छोटे छोटे प्रायश्चित्त भी सब इसी परिच्छेद में ढूंढे मिल सकेंगे॥

(अथप्रकीर्णक प्रायश्चित्तानि)

प्राणायामिजलेस्नात्वाखरयानोष्ट्रयानयः। नग्नःस्नात्वाचभुक्त्वाचगत्वाचैवदिवास्त्रियम् २९१
गुरुंहुंकृत्यत्वंकृत्यविप्रंनिर्जित्यवादतः। वध्वावावाससाक्षिप्रंप्रसाद्योपवसेद्दिनम् २९२
विप्रदंडोद्यमेकृच्छ्रस्त्वतिकृच्छ्रोनिपातने। कृच्छ्रातिकृच्छ्रौसृक्पातेकृच्छ्रोभ्यंतरशोणिते २९३

अर्थः–गदहा वा ऊँट के योगसे चलती गाड़ी आदि सवारी में जो बैठा हो या नंगा जल में नहाया हो या नंगा बैठि भोजन किया हो या अपनी ही भार्या साथ दिन में मैथुन किया हो सो नदी आदि में खूब स्नान और प्राणायाम करिके शुद्ध होता है ॥ २९१ ॥ गुरु को हूँ करिके तू करिके या किसी ब्राह्मण को वाद से जीति के या कपड़ा से बांधि के शीघ्रही प्रसन्न करिके दिन भर उपवास करै= अर्थात्–पिता माता जेठा भाई आदि किसी गुरुजन को कदाचित् इस तरह बोलै कि हूं या तू ऐसा है इत्यादि किसी तरह एक वचन के साथ घुड़के या कुछ बात कहे तौ यह दोषी होता है एवं किसी अपने से बड़े या छोटे वा बराबरके ब्राह्मण को क्रोध के साथ ऐसा कहै कि हूँ चुपहोजा बको मत ऐसे घुड़की के साथ वितंडा रूपी बातों से जीते सो दोषी कहाता है या उसके गले में हाथ ही कोमल रीति से लगाकर वा रूमाल आदि कपड़ा से गला ढीली रीति से ही बांधि कर भी दोषी होता है॰ इन सबका यही प्रायश्चित्त है कि जिनका अपमान किया तिनके पैरों पर मूंड धरने आदि उपायों से उनको प्रसन्न करिके एक दिन भोजन न करै=गला थांभने या कपड़े से ढीलाही लपेटने से उपराल्तु अपराधों के बड़े प्रायश्चित्त हैं सो

अगिले श्लोक में देखो॥२९२॥ ब्राह्मणको मारना सोचि डंडा लकडी उगानेमात्र पर कृच्छ्र प्रायश्चित्त है० डंडा उसकी देह पर लगाने मध्ये अतिकृच्छ्र है० लोहू चलि परने पर कृच्छ्रातिकृच्छ्र प्रायश्चित्त है० अभ्यंतर शोणित में कि जहां लोहू टपकने नहीं पाया किन्तु खाल के भीतर उभरि के रहिगया हो तिसमें भी केवल कृच्छ्र प्रायश्चित्त है॥ तीनों श्लोकों की अधिकोक्तिभी जुदी जुदी देखो॥२९३॥

२९१ अधिकोक्तिः=दोसौ इक्क्यानवे के श्लोकमें जो प्राणायाम सहित स्नान कहा तिसको मिताक्षरा कार इच्छा से किये कर्मों पर ठहिराते हैं=क्योंकि मनु के अग्रोक्त वचन से खुलासा यही तात्पर्य है=यथा=उष्ट्रयानंसमारुह्यखरयानंतुकामतः सवासाजलमाप्लुत्य प्राणायामेनशुद्ध्यति=अर्थात्–ऊँट या गदहा की जुडी सवारी पर कामनासे बैठने वाला वस्त्रों सहित गोता लगाइके प्राणायाम करिके शुद्धहोता है=तिससे कामना बिना दैव योग से बैठना परै तिसको प्राणायाम छोड़ि केवल स्नान मात्र समझि लेना=और जो साक्षात गदहा ऊँटकी पीठिपर बैठा हो तिसके लिये पूर्वोक्त प्राणायाम सहित स्नान दो बार करना चाहिये क्योंकि यह दोष उससे बडा है इति मिताक्षराकाराः॥२९१॥ दोसौ बानवे में जो ब्राह्मण को वितंडा वाद से जीतने पर प्रायश्चित्त कहा तिसके ऊपर यम का यह वचन है कि= वादेनब्राह्मणंजित्वाप्रायश्चित्त विधित्सया त्रिरात्रोपोषितःस्नात्वाप्रणिपत्यप्रसादयेत् (इत्यस्यासविषयमिति मिताक्षरा=अर्थात्–वितंडावादसे ब्राह्मण को जीति के प्रायश्चित्त की इच्छा करै तिसको यह चाहिये कि पहले तीन दिन उपवास करै तिस पीछे स्नान करिके उस ब्राह्मण के सन्मुख साष्टांग प्रणिपात से गिरिके उसे प्रसन्न करै (मिताक्षराकार कहितेहैं कि यहबडा प्रायश्चित्त कई बारके अभ्यास पर समझना या कई बार की बराबर एकही बार जिसने अपमान कियाहो तिसके लिये॥२९२॥ तिरानबे श्लोक में डंडे आदि से मारने पर बृहस्पति ने जुदे प्रायश्चित्त कहे हैं=यथा=दाण्डादिनाताडयित्वात्वग्भेदेकृच्छ्रमाचरेत्अस्थिभंगेऽतिकृच्छ्रःस्यात्पराकस्त्वंगकर्तने=पादप्रहारे यमः=पादेनब्राह्मणस्पृष्ट्वाप्रायश्चित्तविधित्सया दिवसोपोषितःस्नात्वाप्रणिपत्यप्रसादयेत्=अर्थात्–लकडी आदि से मारिके यदि खाल तोडदी हो तौ कृच्छ्र व्रत आचरै जो हाड तोड़ि दिया हो तौ अतिकृच्छ्र करै यदि कोई अंग भी काटि गया हो तौ पराक व्रत करना चाहिये=लात मारने मध्ये यमने कहाहै कि=पैर से ब्राह्मण को छुइकर प्रायश्चित्तकी अपेक्षामें एक दिन उपवास किया हुआ स्नान करि उस ब्राह्मण के संमुख साष्टांग प्रणाम

से गिरिके उसे प्रसन्न करे॥ अविकीर्णि इतनी यही थी सो लिखि चुकी—परन्तु—इसी दोसौ तिरानवे की टीका में कुछ लम्बा पाठ है जिसका संबन्ध मूल श्लोकसे कुछ नहीं है॰ तिससे उसकी जुदीस्थापना करी जायगी उसमें औरभी प्रकीर्ण संज्ञा वाले दोषों के प्रायश्चित्त विशेष कहे जायँगे जिनको योगीश्वर ने इस हेतु से नहीं दर्शाया कि बहुधा अन्य स्मृतियों में उनके स्वरूप और प्रायश्चित्त भी वर्णन हुये हैं सो सब आगे देखना॥ २९३॥

(अन्यानिच प्रकीर्णक पापानां प्रायश्चित्तानि)

अत्रमनुः=विनाऽद्भिरप्सुवाऽप्यार्तःशारीरंसंनिषेव्यतु सचैलोबहिराप्लुत्यगामालभ्यविशुद्ध्यतीति (विनाऽद्भिरित्यसंनिहितास्वप्सुइत्यर्थः शारीरंमूत्रपुरीषादि॰इदम कामविषयमितिमिताक्षरा=अर्थात्—कहीं जलके मिलने विना या जलके होतेहुये भी कोई रोगी गुदा आदि अंग धोये विना शरीर में लगे मल मूत्र को किसी दिन सेवन करे सो तब शुद्ध होय जब सभी वस्त्रों सहित जलाशय के बाहर खूब स्नान करिके अपने शरीर को गाय के देह से कोली भरिके लगावे (मिताक्षराकार कहिते हैं कि यह प्रायश्चित्त उसके लिये समझना जिसने कामना के विना मल मूत्र भरी देह राखी हो॰ किन्तु जिसने इच्छा सहित ऐसी मलीनता लादी होय तिसके लिये अग्रोक्त प्रायश्चित्त है=यदाह यमः=आपद्गतोविनातोयं शारीरंयोनिषेवते एकाहंक्षपणंकृत्वा सचैलोजलमाविशेत्=अर्थात्—किसी आपत्ति में फँसाहुआ जलके विना शरीर के मल का सेवन जो कोई करे वह एक दिन निराहार रहिके सचैलस्नान करे॥

जोकि सुमंतु का यह वचनहै कि (अप्स्वग्नौवामेहतस्तप्तकृच्छ्रमिति (तदनार्तविषय मभ्यासविषयंवेति मिताक्षरा=अर्थात्—जलों में वा अग्नि में मूतने पर तप्तकृच्छ्र चाहिये (सो यह निरोगी का चर्चा या वारम्बार के अभ्यास का चर्चा है यह मिताक्षरा ने कहा॥

नित्यश्रौतादिकर्मलोपेतु मनुः=वेदोदितानांनित्यानां कर्मणांसमतिक्रमे स्नातकव्रतलोपेचप्रायश्चित्तमभोजनम्(श्रौतेषुदर्शपूर्णमासादिषु कर्मसु॰स्मार्तेषुनित्यहोमादिषु प्रतिपदोक्तप्रायश्चित्तैरुपवासस्यसमुच्चयः—स्नातकव्रतानिनजीर्णमलवद्वासाभवेद्यदिविभवेसतीत्येवमादीनिप्रागुक्तानि=अर्थात् — मनु ने कहा है कि वेदोक्त नित्य कर्मों का अतिक्रम होजाने में या स्नातक पुरुष के व्रत (नियम जो आचार

मर्यादा काण्ड में एक जुदे प्रकरणों के द्वारा वर्णन होचुके तिनमें किसी व्रत) का लोप होजाने पर भी एक दिन भोजन का न करना प्रायश्चित्त है (मिताक्षराकार कहिते हैं कि अमावस पूर्णमासी आदि में वेदोक्त जो कर्मकरने कहेहैं तिनको नित्य कर्म जानना और स्मार्त जो स्मृतियों के अनुसार नित्यहोम किये जातेहैं तिनका लोप होने में अप्रोक्त एक दिन का उपवास ऐसी युक्ति से समझना कि उनके मध्ये जहां कहीं पहिले प्रकरणों में उनके नाम से प्रायश्चित्त रूपी इष्टि आदि करना कहिचुके हों तिनके साथ यह एक उपवास भी जोड़ि लेना—और स्नातक व्रत वेहैं कि जैसा पहिले आचार में वर्णन होचुके हैं कि धन के होते हुये फटे मैले वस्त्रों को न पहिरै इत्यादि बहुत नियम हैं ॥ ० ॥ क्रतु नाम के ऋषीश्वर ने भी स्नातक व्रतों का स्वरूप दर्शाइ कर पीछे से यह कहा है= एतेषामाचाराणामेकैकस्यव्यति क्रमशो गायत्र्यष्टशतंजपंकृत्वापूतोभवतीति=अर्थात्—ये स्नातक पुरुष के आचार जो कुछ कहे तिनमें किसी एकही का व्यतिक्रम होजाने पर आठ सौ गायत्री मंत्र का जप करिके पवित्र होता है॥ ० ॥ नित्य कर्मों में पंच महा यज्ञभी गिनती और सबसे प्रधान हैं तिनका लोप होजाने मध्ये अप्रोक्त प्रायश्चित्तहै=यदाह वृहस्पतिः= अनिर्वर्त्यमहायज्ञान्योभुंक्तेप्रत्यहंगृही अनातुरःसतिधनेकृच्छ्रार्धेनसशुध्यति आहिता ग्निरुपस्थानंनकुर्याद्यस्तुपर्वणि ऋतौनगच्छेद्भार्यांवासोपिकृच्छ्रार्धमाचरेत्=जो कोई गृहस्थी रोगी न होते हुये या धनवान होके रोग होने पर भी नित्यंप्रति पाँच यज्ञों से निपटे बिना भोजन करै सोभी एक दिनकी बाबत आधा कृच्छ्र करै यद्वा पाँचमें किसी एकही दो यज्ञ को कई दिन तक न करै सो आधा कृच्छ्र करिके शुद्धहोता है•एवं आहिताग्नि होके जो पर्वों के रोज अपने उपस्थान कर्म को न करै या जो कोई द्विजाती ऋतु काल पर भार्या के साथ संगम न करै तिसको भी आधा कृच्छ्र करना चाहिये (आधा कृच्छ्र छः दिन में होता है ॥

जिसकी पहिली भार्याजीतीहुये दूसरी या तीसरीभार्या मरै और वह पुरुषअग्नि मान्होय तो उसअग्नि से छोटी स्त्रियोंको दाहदेनानिषिद्धहै तिसके प्रायश्चित्तआगे कहितेहैं=द्वितीयादिभार्यादाहेदेवलः=मृतांद्वितीयांयोभार्यांदहेद्वैतानिकाग्निभिः जी वंत्यांप्रथमायांतु सुरापानसमंहितत्=अर्थात्—पहिली जेठी भार्या जीवतेदूसरी लहुरी मरीको वैतानिक अग्नियोंसे जो कोई दाह कर्मकरै तो वह जेठीका मानो उसको दे दिया तिसके पाप में सुरापान के समान प्रायश्चित्त चाहिये यह देवलने कहा ॥

स्वभार्याऽभिमंत्रणेबृहस्पतिः=स्वभार्यांतुदत्वाग्नौवा दत्त्वैतानरोऽपदेत्तु प्राजापत्यंचरे

द्विप्रःक्षत्रियोदिवशान्नव षड्वैश्यतुचरेद्वैश्य त्रिरात्रंशूद्रआचरेत्=अर्थात्–कोई अपनी शुद्ध भार्याको क्रोधमें आकर ऐसा दोष लगावै कि यह अगम्याहै संगम के योग्य नहीं रही वह पुरुष जोब्राह्मणहो तो बारह दिन प्राजापत्यकरै क्षत्रीहो सो नौ दिन करै वैश्य हो सो छ दिन और शूद्रहो सो तीनदिन प्राजापत्य करै यह यमनेकहा ॥

अस्नानभोजनादौतुहारीतः=वहन्कमंडलुंरिक्तं सस्नातोऽश्ननंश्चभोजनम् अहोरात्रेणशुद्धिःस्याद्दिनजाप्येनचैवहि=अर्थात्–स्नातक होकर जल से खाली लोटा साथ राखै या कोई द्विजाती होकर स्नान किये विना भोजन करै तिसकी शुद्धि एकदिन रातिका निराहार उपवास और दिनभर जप करने से होतीहै यह हारीत ने कहा ॥

ज्योंनारकी एकही पाँतिमें अनेकोंके बैठहुये विषमरीतिसे परोसै कि एकोंको प्रीतिसे कुछ अधिक या अच्छी चीज औरोंको और तरह परोसै या कोई कहिकर ऐसा करावै या कोई खानेवाला इसी रीति मांगै तिनको भी यमका कहा प्रायश्चित्त है=यथाह यमः=नपंक्त्यांविषमंदद्यान्नयाचेतनदापयेत् प्राजापत्येनकृच्छ्रेण मुच्यन्तेकर्मणस्ततः=अर्थात्–पाँतिमें विषम किन्तु ऊँच नीच रीतिसे न देवै न मांगै न कहिकर दिलावै क्योंकि ऐसे कर्मके पापसे प्राजापत्य कृच्छ्रव्रत करिके शुद्धहोते हैं अन्यथा नहीं ॥

किसी जलका बांध या नदी नालेका पुल तोड़ै या कन्याके विवाहवाले कामों में भांजी मारै या समतामें विषमताकरै तिनके भी लाचारी प्रायश्चित्तहैं=तदप्याह यमः=नदीसंक्रमहंतुश्चकन्याविघ्नकरस्यच समेविषमकर्तुश्चनिष्कृतिर्नविधीयते अथाणामपिचैतेषांप्राजापत्यंतुमार्गणम् भैक्ष्यलब्धेनचान्नेनद्विजश्चांद्रायणंचरेत् (संक्रमउदकावतरणमार्गः समेविषमकर्तापूजादाविति मिताक्षरा=अर्थात्–यमराजका वचन है कि जो द्विजाती होकर नदीका बांध तोड़ै या कन्याके विवाह आदि कामों में विघ्न डारै या समतामें विषमताकरै तिसकी निष्कृति अर्थात् छुटकारा तो अगिले जन्मों तक भी नहीं है किन्तु पापका फल भोगना तो अवश्य होगा तथापि लोकाचार के वर्तावा हेतुसे इन तीनोंको भी प्राजापत्यही करवाया जाय परन्तु जो दोषी पुरुष ब्राह्मण होय तो उसके लिये विशेषताहै कि भिक्षासे मांगे मिले अन्नसे चान्द्रायण आचरै (समता में विषमता करना यह कि जहां बराबर को तिलक पूजा दक्षिणा आदिका प्रयोजनहो तहां न्यूनाधिक भेदकरै और इसीका दूसरा अर्थ यह भी है कि एकसार मार्ग आदि धरती पर गढ़हिलाकरै अर्थात् अपना मकान बनाने आदि कारणोंसे इतनी माटी खोदै जिससे सर्व साधारणों का रास्ता बिगड़जाय

जिसमें किसी गाडी बैल मनुष्य आदिकी टांग टूटना सम्भव हो या वर्षाती पानीभरि कर बालक बच्चे आदिका डूबना सम्भव होय तिसके पापका यह चर्चा है क्योंकि जैसा जलके उतारे आदिका संक्रम बांध काटनेका पापहै तैसाही यह पापहै जिसका ब्यौरा लिखा• तैसाही तीसरा कन्याके विवाह आदिमें विघ्न करवाना बडा पाप है इसीसे इन तीनोंको एक साथही दर्शाकर ऐसा कहाहै कि इनकी मुक्ति नहीं होती है नरकोंमें अवश्य जाना होताहै परन्तु लोक व्यवहारके निमित्त से प्रायश्चित्त करना चाहिये) इस व्यवस्थाके प्रयोजनसे २२६ दोसौछब्बीस मूलश्लोकभीदेखो॥

इन्द्रधनुर्दर्शनादौऋष्यशृंगः=इन्द्रचापपलालाग्निंयद्यन्यस्य प्रदर्शयेत प्रायश्चित्तमहोरात्रंधनुर्दण्डप्रचदक्षिणा=अर्थात्–इन्द्रधनुष जो सूर्य या चन्द्रमा के बिम्बको घेरा देकर कभी उदय हुआ देखि परताहै तिसको जो पुरुष देखिलेय तिसको यह चाहिये कि वह और किसीको न दिखलावै न चर्चाकरै• इसी प्रकार पलाल धान कोदो आदिका फूस पयार तिसकी अग्नि दूर जलती देखि दूसरेको नहीं दिखावै• कदाचित् आप देखि दूसरेको दिखावै तिसपर यह प्रायश्चित्त है कि एक दिनरात्ति उपवास करिके जो धनुष दिखायाहो तौ एक धनुषदान करै जो अग्नि दिखाई होतौ एक लाठी दानकरै यह शृंगीऋषिने कहा (इसका हेतु कुछ होने पर भी नहीं कहा जासक्ता है तिससे वाचनिक व्यवस्था जाननी कि जो वचन मुनीश्वरोंके मुखसे निकसा वही प्रमाण है क्योंकि तेजस्वी महात्माके मुखसे कोई वचन वृथा कभीनहीं निकसता है ॥

पतितादिभिःसंभाषणेतु गौतमः=नम्लेच्छाशुद्धैर्धार्मिकःसहसंभाषेत संभाष्यपुण्यकृतोमनसाध्यायेद् ब्राह्मणेनसहवासम्भाषेत• भार्यान्नधनलाभवधंपुष्पवर्याणीति=अर्थात् जो मनुष्य धार्म्मिक धर्म्मवान् कायदेदान है तिसको चाहिये कि वह म्लेच्छ मलीन अशुद्धोंके साथ प्रयोजनके विना और प्रयोजन से अधिक बात चीत न करै और प्रयोजनसे भी जितनी बात करनीपरै तिसको करनेके अनन्तर अच्छे पुण्यात्मा राजर्षी ब्रह्मर्षी आदि पुराने और नवीन वर्तमान तपस्वी लोगोंका ध्यान मनसें करै और मुखसे भी नाम उच्चारण करै अथवा गुण संयुक्त किसी ब्राह्मणसे बातचीत करै तब शुद्ध होय यह गौतम ने कहा ॥

स्वस्यैवधनलाभादेर्विघ्नकरणेपिगौतमः=भार्यान्नधनलाभवधंपुष्पवर्याणीति (भार्यान्नधनानांलाभस्यवधे विघ्नकरणेप्रत्येकंसंवत्सरंप्राकृतं ब्रह्मचर्यमिति मिताक्षरा= अर्थात्–अपने घर में निज भार्या के साथ कोईसा उपद्रव मार पीट आदि अनुचित

रीतिसे उत्पन्न करै या घरके धनकी हानि वृथा करै या होते हुये लाभ की हानि करडारै कि जिनसे वह लाभ मारा जाकर फिर न होसकै तौ इन तीनों पापके ऊपर भी जुदा जुदा एक एक वर्षका प्राकृत ब्रह्मचर्य करै तब शुद्धहोय यह गौतमनेकहा (यह तर्क न करना कि अपने लाभकी हानि कौन करताहै क्योंकि ऐसे बहुतहोते हैं जिनसे अपने लाभकी हानि मूर्खता से होजाती है और ऐसे भी होती है कि जहां भाई भतीजे बेटा बाप आदि में विरुद्ध होय तहां एक के द्वारा होते लाभ में दूसरा वैरभावसे जाकर उसमें विघ्नकरि आताहै इत्यादि और मूरतोंसे भी होताहै तिनके प्रायश्चित्त कहे ॥

ब्रह्मसूत्र यज्ञोपवीत कांधेपर होने बिना जो जल पान या भोजन या शंका लघु शंकाले मलमूत्र करै तिसके प्रायश्चित्त स्मृत्यन्तरमें कहेहैं=यथा=विनायज्ञोपवीतेन यद्युच्छिष्टोभवेद्द्विजः प्रायश्चित्तमहोरात्रं गायत्र्यष्टशतंतुवा (अत्रऊर्ध्वोच्छिष्टेउप वासः अधोच्छिष्टस्योदकपानादिषु गायत्रीजप इतिमिताक्षरा=अकामतस्तु=पिबतो मेहतश्चैवभुंजतोऽनुपवीतिनः प्राणायामत्रिकंषट्कंनक्तंचत्रितयंक्रमात् इतिस्मृत्यंतरो क्तंचद्रष्टव्य=अर्थात्–जनेऊ कन्धे पर होने बिना कोई द्विजाती पुरुष यदि किसी तरह जूठा होजाय तहां एक दिन राति का उपवास या आठ सौ गायत्री का जाप प्रायश्चित्त है (इसमें यह व्यवस्था है कि जो ऊपर के संगमें हाथ मुहसे जूठा हुआ सो उपवास करै जो नीचेके संगमें गुदा लिंगसे जूठा हुआहो सो गायत्री जपै–यह व्यवस्था भी उसके लिये समझना जो अपनी बेपरवाहीसे जानिबूझि ऐसा भ्रष्टहुआ हो किन्तु=होशियारी साथ रहिते भी दैवयोगसे ऐसा जिसपर होगया हो तिसको अन्य ग्रन्थका वचन आगे देखो कि=विना जनेऊ पानी पीना या मूतना या खाइ लेना जिसपर होजाय सो इन तीनों बात के यथा क्रम से तीन प्राणायाम और छै प्राणायाम और नक्तव्रत जुदे जुदे करै (नक्तव्रत उसका नामहै जो निर्जल व्रतकरिके चार घड़ी राति गयेके भीतर भोजन करै यह भी अभोजन को बराबर कहाता है ॥

भुंक्त्वाभोच्यावसन्नपदाहत्वोत्थायानेतु स्मृत्यन्तरे=यद्युत्तिष्ठत्यनाचांतोभुंक्तवाऽनाशना ततः सद्यःस्नानंप्रकुर्वीतसोऽन्यथापतितोभवेत्=अर्थात्–भोजन करनेमें यदि खाइ चुकने पर न खानेके बादि जल पीने बिना आचमन लिये बिना चौकेसे बाहर उठि जाय सो तत्कालही स्नानकरै अन्यथा जो न करै तो पतितहोहिवै अर्थात जातिपांति से बाहर करादिया जाय स्मृत्यन्तर की यह व्यवस्था है ॥

चौरागुप्तगर्दिषु वशिष्ठः=दंड्योत्सर्गेराजैकरात्रमुपवसेत् त्रिरात्रंपुरोहितःकृच्छ्र

मदंड्यदण्डनेपुरोहितस्त्रिरात्रं राजा=अर्थात्–दण्ड देने के योग्य चोर आदि अपराधी यदि छोड़ दिया जाय तौ राजा एक दिन उपवास करै पुरोहित तीन दिन करै और जो अदण्ड्य किसी पुरुष को दण्ड दिया गया हो कि जिसका कुछ अपराध यथार्थ में नहीं था या वह पुरुष अपराध की दशा में भी दण्ड पाने से मुआफ़ था तिसको दण्ड दिया गया तहाँ पुरोहित को पूरा बारह दिन कृच्छ्र करना चाहिये और तीन दिन राजा को (यहां पर अदालती पुरोहित का चर्चा है जो धर्म शास्त्र देखने का अधिकारी होय किन्तु कर्मकांडी पुरोहित का चर्चा यहां नहींहै० राजद्वारों में दोहरे पुरोहित होते हैं॥

जिस पाँति में कोई चोर या पतित आदि बैठा हो तिसमें भोजन करने मध्ये प्रायश्चित्तहै=तदाह मार्कंडेयः=अपांक्तेयस्य यः कश्चित्पंक्तौ भुंक्ते द्विजोत्तमः अहोरात्रोषितो भूत्वा पंचगव्येन शुद्ध्यति=अर्थात्–कोई द्विजोत्तम ब्राह्मण जो अपांक्तेय की पंक्ति में भोजन करै अथवा उस की करी ज्यौनार आदि पंक्ति में अर्थात् रसोई में भोजन करै सो एक दिन राति निराहार व्रत करिके दूसरे दिन पंचगव्य पीकर शुद्ध होता है यह मार्कंडेय जी ने कहा॥

नीली वस्त्रादि विषयेतु आपस्तंबः–नीलीरक्तं यदा वस्त्रं ब्राह्मणोंऽगेषु धारयेत् अहोरात्रोषितो भूत्वा पंचगव्येन शुद्ध्यति० रोमकूपैर्यदा गच्छेद्रसो नील्यास्तु कस्यचित् त्रिषु वर्णेषु सामान्यं तप्तकृच्छ्रं विशोधनम्० पालनं विक्रयश्चैव तद्वृत्त्या ह्युपजीवनम् पातनं तु भवेद्विप्रे त्रिभिः कृच्छ्रैर्व्यपोहति० नीलीदारु यदा भिंद्याद्ब्राह्मणस्य शरीरतः शोणितं दृश्यते यत्र द्विजश्चांद्रायणं चरेत्० स्त्रीणां क्रीडार्थसंभोगे शयनीये न दुष्यतीति=अर्थात्–आपस्तंबने कहा है कि ब्राह्मण जो अपने शरीर में नीला रँगा कपड़ा ओढै या पहिरै तौ एकही बार ऐसा करने पर एक दिन रातिभर निराहार व्रत करके पंचगव्य पीवै तब शुद्ध होय० परन्तु जिस द्विजाती ने इतनी देर तक नीला वस्त्र पहिरा हो कि उसके पसीना निकलने से रोम छिद्रों में कपड़े का परस जाकर लगै तौ फिर तीनों वर्णों के लोगों को एक ही यह सामान्य प्रायश्चित्त है कि तप्त कृच्छ्र करैं० और जो कोई द्विजाती नील का खेत बोवै या घर में धरै या बेचै या किसी तरह नील के काम से जीविका रक्खै तिसको जाती वर्ग कर्मों से (पालन) निराह देना यही दंड किया जाय परन्तु यह ऐसा पुरुष जो ब्राह्मण हो तौ तीनि कृच्छ्र व्रत कराइ के फिर जाति में मिलाया जाय एवं क्षत्री दो कृच्छ्र करिके और वैश्य एकही कृच्छ्र करिके जाति में मिलाया जा सक्ता है (परन्तु मुझको इस बात का निश्चय नहीं है०

और नील की लकड़ी यदि ब्राह्मण के शरीर में आपही किसी तरह से खुसिजाय या कोई अन्य पुरुष मार देवै कि जिससे कुछ लोहू का चिह्न उभरि आवै तौयह ब्राह्मण चान्द्रायण करे तब शुद्ध होय– परंतु स्त्रियों के लिये इतना प्रतिप्रसव है कि उनके क्रीडा संभोग वाले निमित्तों में शयन काल के वस्त्र नीले होयँ तिसमें दोष नहीं लगाया जासक्ता है कि स्त्री के प्रसंग समय उसके पतिको भी उनवस्त्रों से सम्बन्ध रहा तथापि जो विवेकी और क्रियावान पुरुष होते हैं वे अपनी स्त्रियोंसे भी नील बचाते हैं (और वचन में जो शयनीय भोग समय का विशेषण दियागया तिसकी खुसूसियत से यह तात्पर्यहै कि हर वक्त के ओढने पहिरनेवाले कपड़े स्त्रियोंके भी नीले न होने चाहिये कि जिससे रसोई आदि कामोंतक अशुद्धि पहुँचै इसीलिये वचनमें क्रीडार्थका निमित्त दियागया है किजिन स्त्रियोंको रसोई आदि से जिसवक्तपर संबंध कुछ न हो तिनको मंगल कार्यके उत्सवोंमें भी उतने समयतक क्रीडाके अर्थसे नीले वस्त्र धारण करना दोष नहींहै ॥ ० ॥ स्त्रियोंके सिवाय विरले पुरुष और विरले काम और विरले वस्त्रों के नाम से भी कुछ कुछ प्रतिप्रसव दिया गयाहै (प्रति प्रसव धर्मशास्त्रमें एक मर्यादाका नाम है कि जिस कामका निषेध किया गया हो उसी कामको थोडासा किसी जघेपर करनेकी फिर पीछेसे आज्ञा देदीजाय) तदाह भृगुः=स्त्रीधृताशयनेनीलीब्राह्मणस्यनदुष्यति नृपस्यवृद्धौवैश्यस्यप र्ववर्जंविधारणम=तथावस्त्रविशेषकृतप्रतिप्रसवः=कंबलेपट्टसूत्रेच नीलीरागोन दुष्यतीतिस्मरणात=अर्थात–भृगुजी का वचनहै कि स्त्रियोंके अंगमें धारणकिया नीला कपड़ा ब्राह्मण को सोते समय दूषित नहीं करता है और राजा क्षत्री को वृद्धि में अर्थात सेनाआदि समूह में रंग विरंगे वस्त्रोंके कार्य में कुछ दोष नहीं है और वैश्य को शीत काल में काले कंबल बनात आदि पर्वोंको छोडिकर ओढने में कुछ दोष नहीं है=इसीलिये विरले वस्त्र में नीला रंग होनेका यह प्रतिप्रसव दिया है कि= बानात आदि ऊनी कंबल में तथा रेशमी कपड़े में नील रँग दूषित नहीं है (परन्तु ब्राह्मण को इन वस्त्रों का भी निषेध है यहप्रति प्रसव केवल वैश्य को शीत काल में लाता गया है सोभी पर्वों को छोडिके और ब्राह्मण सदा आपही पर्वरूप और तीर्थरूप होता है उसके लिये शीतकाल में भी नहीं–और नीला कहिने से तद्रूप नीले वर्ण को समुझना किन्तु हरारंग जो नीलके संयोगसे बनता है ऐसे हरेरंग की बानात या रेशमी का निषेध ब्राह्मण के निमित्तमें भी नहीं है तथापि भोजन और भजन के समय हरे होने का निषेध तात्पर्यसे भी संसिद्ध है ॥

शंख ने विशेष कर ब्राह्मण के लिये ढाखे की खाट आदि पर बैठना या राजा के रण से भागना या पूजा आदि उत्तमकामों के बीच में निकसिजाना आदि और भी अनेक बातें एक साथ इकट्ठी मने करीं तिनके प्रायश्चित्त भी कहिदिये हैं=यथाह शंखः=अध्यस्यमायतंयानमासनंपादुकेतथा द्विजःपालाशवृक्षस्यत्रिरात्रंतुव्रती भवेत्॰ क्षत्रियस्यरणोपृष्ठंदत्त्वाप्राणपरायणः संवत्सरंव्रतंकुर्याच्छित्वावृक्षंफलप्रदम्॰ द्वौविप्रौब्राह्मणाग्नीवादंपतीगोद्विजोत्तमौ अन्तरेणयदागच्छेत्कृच्छ्रं सांतपनंचरेत्॰ होमकालेतथादोहेस्वाध्यायेदारसंग्रहे अन्तरेणयदागच्छेत् द्विजश्चांद्रायणंचरेदिति (दोहे सान्नाय्यांगभूते॰एतच्चाभ्यासविषय मितिमिताक्षरा=अर्थात्=शंखजी कहिते हैं कि यदि कोई ब्राह्मण ढाखे की लकडी से बनी खाट या सवारी का माचा या तखत पीडी आदि आसन या खड़ाऊँ पर चढ़िके बैठै खड़ा होय सो तीन दिन व्रत करै=और कोई ब्राह्मण जो शस्त्रबाँधि कर सवीपन की नौकरी किये हो सो उस राजा के रणमें अपने प्राणोंके भयसे पीठि दिखाकर उलटा भागै वह एक वर्ष भर ब्रह्मचर्य का व्रत करै और फलोंका देनेवाला कोई पेड़ जिसने काटाहो वहभी एक वर्ष भर व्रत करै=और दो ब्राह्मण कहीं बैठे हों या बात करते हुये मिले चले जाते हों या परस्पर पढ़ते और पढ़ाते हों तिनके बीच होकर जो कोई निकसिजाय सो बीच में विक्षेप करने के पाप में कृच्छ्र सांतपन प्रायश्चित्त करै॰ इसी प्रकार जो ब्राह्मण और अग्नि के बीच में जो चला जाय सोभी कृच्छ्र सांतपन करै (यहांपर वही अग्नि माननी जो उसी ब्राह्मण से किसी तरह का वास्ता रखती है अन्यथा जहां निरपेक्ष कोई अग्नि कहीं जलती या धरी हो तिसके निकट कोई निरपेक्ष ब्राह्मण चला जाता या बैठा हो तिनके बीच होकर निकसि जाने का यह दोष नहीं है) इसी प्रकार दंपती पति पत्नी कहीं बैठे या चले जाते हों तिनके बीच हो कर निकसि जाय सो भी कृच्छ्र सांतपन करै॰ इसी प्रकार गाय और ब्राह्मण इन दो के बीच निकसि जाने वाला कृच्छ्र सांतपन करै तब निर्दोषी होय=इसी प्रकार जहां कोई होम कर्म्म करता करवाता हो या गाय को दुहता दुहवाता हो और स्वाध्याय नामक वेद पाठ आदि कोई सा पाठ करता करवाता हो या दार संग्रह विवाहकर्म करता करवाता हो और इनके उपलक्षण से यज्ञोपवीत मंत्र दीक्षा श्राद्ध कर्मआदि भी समझि लेना इन कामों के बीचमें जो कोई निकसिजाय सो द्विजाती चांद्रायण व्रत आचरै तब निर्दोषी ठहरै॥

क्वचिद्देशविशेषगमनेपि देवलः=सिंधुसौवीरसौराष्ट्रांस्तथाप्रत्यंतवासिनः अंगवंग

कलिंगांश्चान्‍गत्वासंस्कारमर्हति(एतच्चतीर्थयात्राव्यतिरेकेणाद्रष्टव्यमितिमिताक्षरा=अर्थात्–देवल कहिते हैं कि सिन्धुदेश सौवीर देश सौराष्ट्रदेश तथा (प्रत्यन्त देशों अर्थात्) म्लेच्छ देशों को जाइके और अंगदेश वंगदेश कलिंग देश अन्ध्र देशों को जाइके दुबारा जनेऊ करवाने योग्य होता है (परन्तु यह तीर्थ यात्रासे उपरालूजाने का चर्चा है अर्थात् जगन्नाथ आदि बड़े तीर्थोंको जातेहुये जो निषिद्ध देश मझाने परैं तिनके लिये पुनः संस्कार की जरूरत नहीं है ॥

सूर्य में छिद्र देख परना आदि अरिष्ट किन्तु खोटे अपशकुन जो अनेक भांति होते हैं तिनके भी प्रायश्चित्त हैं=तदाह शंखः=दुःस्वप्नारिष्टदर्शनादौ घृतंसुवर्णंच दद्यादिति=यमोप्याह=प्रत्यादित्यंनमेहेत नपश्येदात्मनःशकृत् दृष्ट्वासूर्यंनिरीक्षेत ब्राह्मणांगामथापिवेति=शंखस्तु=पादप्रतापनंकृत्वाकृत्वावह्निमधस्तथा कुशैःप्रमृज्य पादौतुदिनमेकंव्रतीभवेदिति=अर्थात्–खोटास्वप्ना और खोटेअरिष्ट देखपरने आदि में घी और सुवर्ण का दान करै तिससे फिर कल्याणही होताहै यह शंखने कहा=यम ने भी यह कहा है कि=सूर्य के सन्मुख न मूतै और अपना विष्ठा न देखै कदाचित् विष्ठा देखि लिया हो तो सूर्य के दर्शन करै और सूर्य वादलमें छिपे हों तौ ब्राह्मण के दर्शन करै ब्राह्मणभी न मिलै तो गाय के दर्शन करै=शंख ने भी कहा है कि=अग्नि में पैर तपावै या खाट के नीचे आगि धरिके सोवै या कुशाओं से पैर माजै सो एक दिन व्रत करै तब निर्दोषी ठहरै ॥

अथाभिवादननियमातिक्रमः= तत्रक्षत्रियाद्युपसंग्रहणे हारीतः=क्षत्रियाभिवादने ऽहोरात्रमुपवसेत् वैश्याभिवादनेद्विरात्रम् शूद्रस्याभिवादने त्रिरात्रमुपवासः= तथाग-च्छारूढपादुकोपानहा रोपित पादोच्छिष्टांधकारस्थ श्राद्धकृज्जपदेवपूजानिरताभि वादने त्रिरात्रमुपवासःस्यात् अन्यत्रनिमंत्रितेनान्यत्रभोजनेऽपित्रिरात्रमित्यपिहारीतः (समित्पुष्पादिहस्तस्याभिवादने प्येतदेवेतिमिताक्षरायतः) (समित्पुष्पकुशाज्या म्बुमृद्न्नाक्षतपाणिकम् जपहोमंचकुर्वाणंनाभिवाद्येतवैद्विजम् इत्यापस्तंबीयेजपा दिभिः समभिव्याहारात्=अर्थात्–अभिवादनके नियम छोड़िकर जोकोई अतिक्रम से अभिवादन करै तिसके प्रायश्चित्त कहा चाहते हैं (अभिवादन काअर्थ है प्रणाम नमस्कार पैर छूना आदि प्रधान है और दूसरा अर्थ यहां पर यह भी है कि किसी को पहिले चिताइ के कुछ बात कहिना कि जिससे दूसरे को अवश्य ही बोलना परै• इस प्रकरण से दोनों तरह के अर्थों से प्रयोजन लिया जायगा• इस तरह से कि विरली बात में केवल प्रणामही का अर्थ और बहुधा बातोंमें दोनों

अर्थ माने जायँगे केवल अभिवादन के शब्द से) सो सब आगे अपनी बुद्धि से यथा योग्य समझि लेना किन्तु अनेक बातें कही जायँगी=तिनमें प्रथम क्षत्री आदि को ब्राह्मण होकर अभिवादन करै अर्थात भूल से नमस्कार आदि शब्द कहिउठै तिस के मध्ये हारीत जी कहिते हैं कि=क्षत्रीको अभिवादन करै तिसको एक दिनराति भर उपवास करनाचाहिये जो वैश्यको अभिवादन करै सो दो दिन उपवास करै जो शूद्रको अभिवादनकरिबैठे सो तीनदिन उपवासकरै=तथा हारीतही यह दूसरी व्यवस्था कहितेहैं कि जोकोई अपनी मूर्खतासे अग्रोक्त पुरुषों को प्रणामरूपी अभिवादन या किसी और तरहका संबोधनकरै कि एक जो खाटपर लेटा या चढताहो दूसरा जो खड़ाऊँ या जूताको पहिरनेलगा हो जबतक न पहिन पावै तबतक उससे न बोले•तीसरा जो जूठा होरहा हो•चौथा जो अँधेरेमें बैठा हो•जो श्राद्ध करताहो•जप करता हो• देवताकी पूजामें लगा हो•इनको भूल से अभिवादन करिउठै सो •तीनदिन उपवास करै•और का नौता स्वीकार करिके और का भोजन करि आवै सोभी तीन दिन प्रायश्चित्तकरै (यही तीनदिनका व्रत उसको भी चाहिये जो पत्र फूल आदिसे अटके हाथवालेको अभिवादनकरै इससे हाथकीचीज बिरली गिरिजानेका खटका होताहै बिरली देवताके निमित्तवाली जूठी होजातीहै क्योंकि अगिले आपस्तम्बके वचन में यही तात्पर्य है सो देखो कि) समिध या फूल या कुशा या घृत या जल याअक्षत जिसके हाथ में मृदुरीति से ढीले थँभे हों या जपमें लगाहो या होमआदि कर्म करता हो ऐसे ब्राह्मणों में किसी को भी प्रणाम संबोधन कुछ न करै ॥ ० ॥ इसी प्रकार यही तीन दिन का व्रत उसको भी चाहिये कि जो पुरुष उक्त चीजों को लिये हुये किसी दूसरे को नमस्कार करै या दूसरेका नमस्कार सुनिके प्रत्यभिवादन के द्वारा स्वीकार करै—यथाह शंखः=नोदकुंभहस्तोऽभिवादयेन्न नभैक्ष्यंचरन्न पुष्पाज्यादि हस्तेनाशुचिर्नजपन्न नदेवपितृकार्यंकुर्वन्नशयानः (इतिशंखेन तस्यापि प्रतिषेधादितिमिताक्षरा=अर्थात—पानी का घड़ा हाथ लियेहुये किसीको नमस्कार न करै न भिक्षा लेते हुये समय पर न अपने हाथ फूल घृत आदि कुछ थांभे हुये न अशुद्ध होते (अर्थात भोजन से उठके वा हजामत कराते वा शंका लघु शंका से उठि कर हाथ पैर मुह धोने बिना एवं प्रातःकाल के शौच से निपटे बिना) न जप करते हुये न देव पितरों का कुछ काम करते हुये न लेटे हुये अभिवादन करै यह शंख जी ने दूसरे को भी उन्हीं बातों का निषेध कियाहै तिससे इसको भी वही प्रायश्चित्त चाहिये—तात्पर्य सबका यही है जो जो बातें निषेध करी गईं सो

परस्पर सब दोनों को समझनी कि अभिवादन ऐसे समय पर करना चाहिये जब सर्वथा सावधान देखे जिससे दूसरे की कुछ हानि या उसके मन में कोईभी क्षोभ न उत्पन्न होने पावे क्योंकि संसार में अभिवादन केवल मुलाकाती प्रीति का हेतु क़ायम किया गया है तिसमें भी यदि रंज या हानि पैदा हुई तो फिर यही पाप का चिह्न है॥ • ॥ विज्ञानेश्वर मिताक्षरा कार कहते हैं कि इसी तरह और भी स्मृतियों के वचन जहां देखि परें तिनको भी स्वीकार करना क्योंकि ग्रन्थ बड़ा हो जाने के डर से यहां सब नहीं लिखे गये हैं॥ २९३ ॥ इसी दोसौ तिरानवे मूल श्लोक से लेकर यहां तक संबन्ध मात्र से प्रकीर्ण प्रायश्चित्तों के अनेक पाठ भेद लिखे गये बल्कि प्रकीर्ण प्रायश्चित्तों का प्रारम्भ २६१ दो सौ इक्यानवे मूल श्लोक से हो चुका था ॥

(इतिप्रकीर्णकप्रायश्चित्तप्रकरणंसमाप्तं)

इस प्रकरण में एकही ७४ चौहत्तरि का परिच्छेदहै जिसमें जाति भ्रंशकरादि पापों की व्यवस्था को छोडिके प्रकीर्णक पापों की २१ इक्कीस व्यवस्थाहैं जिनके सब जुदे जुदे पाठ यहां तक पूरेहुये॥ इस प्रकरण में और इससे पहिले बहुत बड़े भक्ष्या भक्ष्य के प्रकरण में भी वेही बातें रक्खीगई हैं जो रोज रोजके बर्ताव में हर वक्त काम आती हैं —इनहीं का तीसरा भेद और है कि वह भी रोज रोज के बर्ताव में आता है वह चौथे परिच्छेद में तीसवें ३• मूल श्लोक से वर्णन होचुका तहाँ उसीकी अवधि कौड़ी भर में देखो उसके प्रायश्चित्त इनसे भी अति छोटे हैं

यद्यपि इस ग्रंथ में प्रायश्चित्त कुछ और भी कहिने शेष रहे हैं परंतु यहां तक सभी पापों का निपटारा होचुका है प्रसिद्ध पातकों में कोई ऐसा नहीं रहा जिसका प्रायश्चित्त न कहिचुके हों•तथापि यहसंसार अनंतहै इसमें पापरूपी बिमिरों के स्वरूप भी अनन्तहैं जो सब एकसाथ गिने नहीं जासक्ते हैं कि जिनके प्रत्येक जुदे नामों से प्रायश्चित्त कहे जासकें •न जानिये किसकाल में किसी मनुष्य के द्वारा किसप्रकार का अपूर्व पाप उत्पन्न होय तिसका भी प्रायश्चित्त इन्हीं के अनुकूल सोचिकर देना होता है जो यहांतक वर्णन होचुके • परंतु उसमें सोच विचार से अन्याय होजाने की शंका भी सर्वत्र लगी रहिती है• और जो प्रत्येक जुदे नामों से प्रायश्चित्त वर्णन होचुके लिखेगयेहैं तिनमें भी विचार किये बिना आदेशकर देने से प्रायश्चित्ती पुरुष की वृथा प्राण हानि होजाना आदि अनेक शंका लगी

रहिती हैं• तिसके विचार की सुघड़ाई बनी रहिने के प्रयोजन से एक सामान्य मर्यादा आगे पचहत्तरि ७५ परिच्छेद में योगीश्वर आपही दर्शावेंगे कि जिसका सर्वत्र सहारा लिये रहिने से अन्याय न होनेपावै ॥

अथ अनुक्तप्रायश्चित्तपापेष्वपिनिष्कृतिकल्पनायुक्तिविचारोनामपरिच्छेदः पंचसप्ततिमः (७५)

—※—

इस परिच्छेद में विशेषकर ऐसे पापोंके प्रायश्चित्त विचारे जायँगे कि जिनके नामसे कोई प्रायश्चित्त• इसग्रन्थ भरमें कहीं भी न लिखा हो–इसके सिवाय जितने प्रायश्चित्त यहांसे आगे आगे लिखेजायँगे और जितने यहांतक पहिले से वर्णन होते रहे तिन सवहीका साधारण एक विचार है सोभी इसी परिच्छेदमें निर्णय किया जायगा ॥

(प्रायश्चित्तंच देशकालादिविचारेणैव)

देशंकालंवयःशक्तिंपापंचावेक्ष्ययत्नतः। प्रायश्चित्तंप्रकल्प्यंस्याद्यत्रचोक्तानिष्कृतिः २९४

अर्थः–देश काल वयस् शक्ति पापकोभी देखिके यत्न से प्रायश्चित्त कल्पना किया जाय जहां निष्कृति न कही गई तहां भी=अर्थात–जो कुछ प्रायश्चित्त यहां तक सब तरहसे वर्णन होचुके अथवा आगे जो कुछ कहेजायँ तिनका वर्ताव जहां करना परै अथवा किसी ऐसे पाप का प्रायश्चित्त देना परै जिसके नामसे शास्त्र में न लिखागया हो तहां तहां सर्वत्र इतनी बातों के विचारसे प्रायश्चित्त देनाचाहिये कि–प्रथम देशका विचार फिर काल का विचार फिर अवस्था का विचार फिर उस प्रायश्चित्ती की शक्ति सामर्थ्यका विचार और उस पाप के स्वरूप काविचार करै कि जिसके ऊपर प्रायश्चित्त देना चाहागया ऐसे पूरे यत्नों से प्रायश्चित्तकी कल्पना करनीयोग्य है कि जिससे कर्ता पुरुषके प्राणों की हानि वृथा न होजाय यही इसका तात्पर्य है और यहभी तात्पर्य है कि अतिशय छोटे पाप में बहुत बड़ा प्रायश्चित्त न होजाय ॥ २९४ ॥

२९४ अधिकोक्तिः– उक्त बातों का ब्योरा यहां समझाते हैं कि जहां कर्ता पुरुष को प्राणांतिक प्रायश्चित्त की आज्ञा न होने परभी केवल व्रतमात्र के आ-

चरणों में किसी कठिनाई से प्राण जातेरहैं तहां उसके प्राण वृथा जानेके सिवाय एक यह भी दोष खडा होता है कि प्रायश्चित्त ही पूरा न होसका क्योंकि बीचही में उसकी कठिनता से प्राण चले गये—तिससे इन दृष्टान्तों को समझना चाहिये कि जैसा आगे ३१२ तीन सौ बारहवें मूल श्लोक से योगीश्वर कहेंगे कि (दिन में वायु को पीता हुआ खडा रहि कर रात्रि को जल में बैठिके बितावै फिर दूसरेदिन सूर्य निकसि आने पर एक हजार गायत्री जपिकर शुद्ध हो जाता है परन्तु जिसने ब्रह्महत्या करीहो वह इस प्रायश्चित्तसे नहीं शुद्ध होगा किन्तु यह अन्य पापोंका चर्चा है) ध्यान करौ कि यही प्रायश्चित्त किसी से करवाया जाय तहां देश का विचार ऐसे होसक्ताहै कि हिमालयके निकट वर्ती देशों में जलका निवास न करवाना चाहिये ऐसे ही कालका विचार है कि अति शीत के ऋतु काल में जल का निवास वर्जित करै अर्थात हिम देश और हिम काल को बचाइ कर जल का निवास कल्पित करै इत्यादि और बातें भी देश काल की अपेक्षा में समझनी— एवं वयस् अवस्था का विचार है कि जहां नब्बे वर्ष का बूढा या बारह वर्ष के भीतर का बालक प्रायश्चित्ती ठहिरै तहां यदि बारह वर्ष वाले प्रायश्चित्त उन पर आदेश किये जायँ तौ प्राणों को विपत्ति आनि परैगी तिससे बीच की अवस्था वाले पर बारह वर्ष का व्रत आरूढ किया जासक्ता है कि जिसका देह सर्वथा बलवान होय• इसी लिये किसी स्मृति का यह वचन है (क्वचिदर्धंक्वचित्पादः) कहीं आधा कहीं चौथाई प्रायश्चित्त बतावै इस वचनसे बूढे बालक आदिका छा नरूपी निर्वाह दर्शाया है कि इनको पूरा व्रत न देना चाहिये सो यह न्याय पहिले भी जहां तहां बडे प्रकरणों में वर्णन होचुका—एवं शक्ति का यह विचार है कि जिस प्रायश्चित्त में धन का दान या तप का करना आदि कोई बात नियत होय सोभी उसकी शक्ति के अनुरूप कराना उचित है क्योंकि (पात्रेधनंवापर्याप्तं) यह वचन कहीं लिख चुका है कि अच्छे पात्रों को खूब धन समर्पण करै यह नियम निर्धन के साथ नहीं चल सक्ता है—तथा उद्दिष्ट अति श्रेष्ठ पात्र पुरुषोंके निमित्त में पराक आदि व्रतों का विचार है कि जैसे बारह दिन कोरा लंघन करना यह पराक होता है जो किसी निमित्त पर करना लिखाहो और वही निमित्त किसी ऐसे पात्रपुरुष पर आरूढ होय जो जप तप करने में समर्थ हो तौ फिर पराक आदि व्रत करवाना कुछ न्यायात्मक नहीं बल्कि वेद की संहिता आदि के पाठ या गायत्री आदि जप करवाने योग्य ठहिरैंगे• एवं राजा आदि कोई जो बहुत सा धन दान कर सकने में

समर्थ हो तिसपर भी पराक आदि व्रत का उपदेश देना अनुचित है•एवं जहां कोई स्त्री वा शूद्र जाती पुरुष प्रायश्चित्ती होय तहां उसके पाप का प्रायश्चित्त यद्यपि जप पाठ आदि शास्त्र में नियत होय जो विद्या से संबंधित हैं तथापि स्त्री औरशूद्र को इन कामों की आज्ञा देना न्याय नहींहै अर्थात उनसे व्रतही करवाने चाहिये• इन्हीं कारणों से ५४ चौवन परिच्छेद में सब जीवों की हिंसा पर जुदे जुदे दानोंके स्वरूप दर्शाने पीछे दोसौ चौहत्तर मूल श्लोक से योगीश्वर ने यह कहा था कि (हाथी आदि की हिंसा पर लिखे दान देने में असमर्थ होय सो प्रत्येक दान के पलटेमें कृच्छ्र व्रत साधे) इसी प्रकार किसी और स्मृतिमें निरोगिनि स्त्री तथा रोगी पुरुषको भी तप करने में असमर्थ जानिके प्रायश्चित्तमें कमी करने की यह आज्ञा है कि (स्त्रियां तथा रोगी पुरुष भी नियत प्रायश्चित्त का आधा करवाने के योग्य हैं) इसी २९४ मूल श्लोक में पाप को भी सोचिके प्रायश्चित्त विचारना कहा गया तिससे यह सोचना है कि प्रथम उस रीति से पापों के दर्जे कायम करै कि जैसा २४२ दोसौ बयालिस की अधिकोक्ति में डौल कहा गया था फिर उस प्राप्त किये दर्जा के भीतर यह सोचौ कि यह पाप प्रत्यय सहित या विना प्रत्यय के ठहिरा फिर यह सोचौ कि सबसे प्रथम एकही बार का यह पाप है या इसीको बारबार करते बहुत काल बीति चुका है तिस पीछे श्रेष्ठ यत्नों से धर्म शास्त्र को समस्त आद्योपान्त देखि भालि के प्रायश्चित्त निकासै कि जिससे कोईधा दूषण उसमें न रहिजाय— तिसमें एक यह भी डौल विचारना कि इच्छा विना धोखा से उत्पन्न हुये पापों पर जितना प्रायश्चित्त लिखा हो तिसको इच्छा से पाप करने वाले पर दूना ठहिराना चाहिये और उसी का चौगुना उसपर कि जिसने इच्छा सहित बार बार का अभ्यास किया हो यह अन्य स्मृतियों का सिद्धांत है ॥ ० ॥ तथैव ६० साठि परिच्छेद में २८६ दोसौ छियासी मूलश्लोक देखौ उसमें कहाथा कि (झूंठा कोई किसी को महा पापों से या गोहत्या आदि उपपापों से दोष लगावै सो एक महीना भर जलके आहार से रहिकर जप करै तब शुद्ध होय) यह प्रायश्चित्त उस स्थल पर यद्यपि सामान्य रूप से एकही कहा गया था तौभी उक्त मर्यादा के विचार से उसमें यह सोचना चाहिये कि महा पाप और उपपाप का एकही प्रायश्चित्त होना अयुक्तहै तिससे उसमेंभी हर एक दर्जेके पापोंपर व्यवस्था कल्पित करनी चाहिये अर्थात जिसने बड़े बड़े पापोंका झूंठा दोष लगाया हो तिसको वही एक महीनेका पूरा प्रायश्चित्त कराना किन्तु जिसने उपपापों का

भूंठा दोष लगायाहो तिसके लिये महीना में कुछ कमी अपने न्याय रूपी विचार से करदेनी चाहिये तो यह भी एक पापही का विचार है ॥ ० ॥ इसके उपरान्त विरले ऐसे भी वचन हैं कि (हसितजृंभितास्फोटनानिनाकस्मात्कुर्यात्–तथा–नोदन्वतोऽभसिस्नायान्नचश्मश्वादिकर्तयेत् अन्तर्वत्न्याःपतिःकुर्वन्नप्रजाभवतिध्रुवम्) इत्यादौ प्रायश्चित्तंनोपदिष्टं तत्रापिदेशाद्यपेक्षया प्रायश्चित्तंकल्प्यं=अर्थात्–अकस्मातही निरर्थक हसना या जंभाना ऐंडाना ताल ठोकना आदि आकारों को न करै यहनिषेध कियागया है–तथा–गर्भवती नारी का पति समुद्रके जलमें न स्नान करै न दाढ़ी मूंछ आदि कटावै क्योंकि ऐसा करने वाले के सन्तान पैदा नहीं होती है यह निश्चय जानों) इत्यादि और भी अनेक ऐसे वचन हैं कि जिनमें विरले आचरणों का निषेध या उनका दोष भी दर्शाया गया है परन्तु प्रायश्चित्त कुछभी नहींकहा है कदाचित् इन्हीं दोषों का प्रायश्चित्त कल्पित करना परै तहांभी देश काल आदि का विचार जैसा मूल श्लोक में कहिचुके सो सब करना चाहिये ॥ ० ॥ इस पर वादी पुरुष तर्कना खडी करता है कि पाप रूपी निमित्त मात्र कहीं भी कोई ऐसा नहीं दिखाई देता है जिसका प्रायश्चित्त न कहा गया हो क्योंकि यदि कदाचित् किसी पापका प्रायश्चित्त लिखने से रहिभी गयाहो तिसका भी प्रायश्चित्त आगे ३०६ तीन सौ छठे मूल श्लोक से योगीश्वर आपही कहा चाहते हैं और गौतम ने भी (एतान्येवानादेशेविकल्पेनक्रियेरन्नित्ये काहादयःप्रतिपादिताः) एक दिवस आदिके व्रतरूपी प्रायश्चित्त दर्शाय कर पीछेसे कहि दिया है कि इन्हीं प्रायश्चित्तों को विकल्प से उन पापों परभी करैं कि जिनपर कोई प्रायश्चित्त न कहागया हो –इसका समाधान कियाजाता है कि यह तर्कना तुम्हारी सची है और ३०६ मूल श्लोक आदि में उपदेशभी सामान्य भाव किया जावैगा सोभी होउ उससे कुछ विरोध यहां नहीं है क्योंकि यहां मूल श्लोक में सर्व देशकाल आदि की अपेक्षा पर इसबात की कल्पना का अवसर ठीक ठीक है •और तुम्हारी तर्कना पर तर्कना मेरी यह उत्तर है कि अभी ऊपर जो हमने जंभाने आदि बातोंपर कल्पना करना कहिचुके जो वह नहीं कही जाती तो क्या ३०६ मूलश्लोक वाली आज्ञा से काम यहां चल सक्ता क्योंकि वहांपर नौ१००प्राणायाम करने कहेंगे सो हसित आदि छोटे छोटे दोषों पर सर्वत्र इतना बड़ा प्रायश्चित्त अयुक्त है तिससे यहां की कल्पना से यह तात्पर्य है कि उन प्राणायामों को उपपाप आदि छोटे दर्जा के पापों से दोष लगाने वाले पर पूरा सैकरा न आरूढ करै अर्थात् जैसा पाप हो तैसीही

प्राणायामों की संख्या थोड़ी या बहुत सौके भीतरही कल्पित करै अथवा जिस दोषी को निर्गुणी होने आदि से प्राणायाम करने की योग्यता या सामर्थ्य न हो तिसके लिये अपने बुद्धिके विचार से कोई और प्रायश्चित्त सोचै कि जिसको वह करसके ॥ ० ॥ वादी पुरुष फिरभी एक प्रश्न खडी करताहै• क्योंजी पापका छोटा-पन कैसे जानाजाय जिसके द्वारा प्रायश्चित्तमें कमीकरैं या कुछ और कल्पनाकरैं• इसमें यह उत्तर न देना चाहिये कि प्रायश्चित्त के छोटापन से पाप का छोटापन जानाजाता है क्योंकि मेरा केवल उन्हीं पापों का यह प्रश्न है जिनके लिये कुछ प्रायश्चित्त न कहागया हो –उत्तर •यह प्रश्न तुम्हारा सत्य है परन्तु ऐसे तुच्छ पापों का छोटापन या बड़ापन जानना स्वतः सुगमहोता है क्योंकि कुछ तो उनकेअर्थवाद की चर्चा कहिने सुनने मात्र सेही बोध होजाता है फिर यह भेद देखाजाता है कि उसने जानि बूझि के यह दोष किया यद्वा•विनाजानेकिसी धोखा आदि से होगया–इसके सिवाय दंड के छोटापन वडापन सेभी दोष का छोटापन बडापन समुझा जासक्ता है,उसीके अनुसार प्रायश्चित्त का छोटापन वडापन कल्पित होसक्ताहै– इसका दृष्टांत देखो ७४चौहत्तर परिच्छेद में २९१।२९२।२९३।इन्हीं तीनश्लोकों को अंग्निकोक्तों सहित विचारो कि उनमें ब्राह्मण को ब्राह्मण मात्र कोई दराडा उगावै या लगावै या अधिकचोट लगावै इत्यादि भेदों के अनुसार प्राजापत्यआदि छोटे बड़े प्रायश्चित्त कायम किये गये केवल सजाती सवर्णों के दोषपर दर्शायेगये सो वह एक नमूना है • कदाचित वेही दोष ऐसे ढंगसे उत्पन्न होयँ कि ऊंचे वर्ण वाला नीचे वर्णको डराडाआदि उगावै तब उसके दराडकीन्यूनताके अनुसार उन्हीं प्रायश्चित्तों में न्यूनता कल्पित करनी होगी अथवा नीचे वर्ण वाला ऊंचे वर्ण को दंडाआदि उगावै तहाँ उसके दराडकी बढवारी अनुसार उन्ही प्रायश्चित्तों में वृद्धि कल्पित करनी होगी• दराडके अनुसार जो विचार करना कहा गया सो व्यवहार मर्यादा परिपाटी में दंडविधान के स्थल पर जहाँ (प्रतिलोम्यापवादेषु द्विगुणास्त्रिगुणोदमः) यही मूल श्लोक लिखे तहाँ इसकी अंग्निकोक्ति पर्यन्त व्याख्या देखो तब यह बात समझमें आवैगी क्योंकि आचार मर्यादा १ व्यवहार मर्यादा २ प्रायश्चित्त मर्यादा ३ ये तीनों कांड एकही धर्म शास्त्र के तीनि अंग हैं सो तीनों यद्यपि जुदे जुदे रक्खे गये हैं परन्तु तीनों का संबंध परस्पर सबका सब से मिला हुआ एकही तात्पर्य है ॥ २९४ ॥

यहां तक सर्वथा पापी पुरुषों के प्रायश्चित्त वर्णन किये गये परन्तु इसमें यह

शंकाहै कि जो पापी अपने उद्धतपनेसे नकरना चाहै तब क्या करनाचाहिये तिसका उपाय अगिलेपरिच्छेदमें दर्शावैंगेऔर उसकाभी कि जिसनेप्रायश्चित्त पूराकिया॥

अथास्वीकृतप्रायश्चित्तपतितस्यपरित्यागकरणोस्वीकृत प्रायश्चित्तस्यसत्कारकरणोचार्थंपरिच्छेदःषट् सप्ततितमः(७६)

इस परिच्छेद में दो विधी जानी जायँगी कि जे कोई पतित पापी लोग प्रायश्चित्त करना नहीं चाहैं तिनके भाई बन्धु इकट्ठे होकर इस रीतिसे जाति बाहर करैं—दूसरे जो प्रायश्चित्त को स्वीकार करिके पूरा करिआवैं तिनको इस रीतिसे फिर जाति में मिलावैं• तिसमेंभी स्त्रियोंके निमित्त कोई जुदा प्रकार कहाजायगा• और विरलों की छूटभी दर्शाई जायगी कि अमुकामुकों से प्रायश्चित्त करि आने पर भी मेल मिलाप सत्कार आदि व्यवहार न करना चाहिये॥

(दासीघटविधिः)

दासीकुंभंवहिर्ग्रामान्निनयेरन्स्ववांधवाः। पतितस्यवहिःकुर्युःसर्वकार्येषुचैवतम् २९५

अर्थः—दासी कुम्भको ग्राममे वाहर पतितके स्वकीय बांधव लेजावैं तहां उसको सर्वकामोंसे वाहिरा करैं=अर्थात—पतितके जे कोई भाई बंधुआदि जातिसंबंधी हों सो सब इकट्ठे होकरएक दासी को दूत बनाकर प्रथम उसीपतितकेपास खबर भेजैं कि प्रायश्चित्त न करनेके हेतुसे आज ऐसा प्रबन्ध होता है (यदि वह दासीसे इस बातके समाचार सुनिकरभी अधीनीसे प्रायश्चित्तका स्वीकार न करै तो (फिरउसी दासी के हाथ से भरवाये जलका भरा कुम्भ माटी का घडा उसी दासी के मूंडपर धराकर उसे आगे लेकर सर्व भाई बंधु उसके पीछे पीछे साथ जाकर बस्तीसे वाहर किसी विख्यात तीर्थ आदि के स्थलपर धरिके लुढकवावैं अर्थात त्यागरूपसेफेंकवावैं (यही दासी कुम्भ कहाता है॥ २९५॥

२९५अधिकोक्तिः=दासी घटको त्यागनेकेसमय उसी जीवतेहुये पतितके नामसे मरेहुये प्रेतोंकीतरह जलदान कियाजाताहै और चतुर्थी नवमीआदि रिक्ता तिथियों

में यह काम करना कहा है=तदाह मनुः=पतितस्योदकंकार्यंसपिंडैर्बांधवैःसह निन्दि तेऽहनिसायाह्नेज्ञात्यृत्विग्गुरुसन्निधौ=अर्थात्—निन्दित खोटेवार खोटीतिथिकेरोज संध्या के समीपी कालमें दिनका पाँचवां भाग वर्तमान होनेपर समस्त जाती लोग जिनसे भाजी बाइने का व्योहार हो तिनको इकट्ठे करिके उनके सन्मुख और गुरु पुरोहित ऋत्विजआदिके सन्मुख पतितके सपिंडलोग उसके बांधवोंको साथलेकर पतितके नामका जलदान करें यह मनुने कहा=और यहभी मनुने कहाहै कि=दासी घटमपांपूर्णंपर्यस्येत्प्रेतवत्पदा अहोरात्र मुपासीरन्नशौचंबांधवैःसह=अर्थात्—जल के भरे घट को दासीअपने पैर से उलटा करै जैसे मरेप्रेतकेलिये कियाजाताहै उसीतरह लुढकावैऔर सब संबंधीजन बांधवोंसहित एकदिन रातिभर इकट्ठेरहिकरव्रतराखैं और सूतक मानैं=मिताक्षराकार कहिते हैं कि घट का फेंकवाना जलदान पिंडदान आदि प्रेत कर्म कराने के बादि चाहिये क्योंकि आगे गौतम के कहे विधान में यही देखि परता है ॥ ० ॥ यथा गौतमः= तस्यविद्यायोनिगुरुसंबन्धाश्चसन्निपात्य सर्वा ण्युदकादीनि प्रेतकर्माणिकुर्युःपात्रंचास्यविपर्यस्येयुः दासःकर्मकरोवापात्रमानीय दासीघटात्पूरयित्वादक्षिणाभिमुखोयदाविपर्यस्येत् इदंअमुकमनुदकंकरोमीति नाम ग्रहांतंसर्वेन्वालभेरन्प्राचीनावीतिनोमुक्ताशिखाविद्यागुरवोयोनिसंबंधाश्चवीक्षेरन्न तोऽपःउपस्पृश्यग्रामंप्रविशेयुरितिगौतमः=अर्थात्—उस पतित के विद्या संबन्धी लोग सहपाठी या पढने पढानेवाले और योनिसंबन्धीलोग जिनकी लड़कियां व्याहिके उसकेघर आई हों और गुरु पुरोहित आदि जो उसके कहातेहों तिन्हें इकट्ठेकरिके उसके सपिंड लोग उदक दान आदि प्रेतकर्म जो कुछ दाह के दिन एकही रोजहोते हों सो सब करें और इसके नामका पात्र अर्थात् दासी घटभी उलटवावैं तिसकाजुदा यह विधान है कि उन्हीं सपिण्डों का दास टहलुआ या उसके न होने पर कोई और ही कर्म कर मजदूर मट्टी का घडा लाइकर उसमें दासी घट नामसे जल भरिके वही दास या दासी दक्षिण दिशा को मुह किये उसी दासी घट को जब उलटा करै तभी सपिंड और बांधव लोग पापी का नाम लेकर ऐसा मन्त्र बोलैं कि (अमुकम- नुदकं करोमि) फलाने को आज से अनुदक भागी मैं करता हूँ अर्थात् किसी से जल दान पाने का भागी वह नहीं रहा न किसी अपने कुटुम्बी को जल दान करनेमें शामिल होसकैगा• इस मन्त्र को बोलते समय ये सब लोग जनेऊ को दाहिने कांधे पर वदलि के और चोटी की शिखा को खोलि के अपसव्य होकर मंत्र बोलैं फिर पीछे से सब लोग आपस में परस्पर यथा क्रम से मिलैं भेटैं और इसी मंत्र का बोध

सबको कराते जावें यह सब काम होते हुये पापी के विद्या गुरु और योनि संबंधी आदि सब नाते दार लोग देखें तिसके बादि जलमें स्नान करिके अपने ग्राम बसती को चले जावें यह गौतम ने कहा ॥ ० ॥ परन्तु यह त्याग रूपी कर्म कराना उसी दशा में आवश्यक है कि जब बंधुओं से प्रेरणा किया हुआ भी प्रायश्चित्त न करै अर्थात् बन्धु जनों को यह उचित है कि पहिले वारम्बार प्रायश्चित्त कराने की प्रेरणा ताकीद उसपर करैं=यदाह शंखः=तस्यगुरुबांधवान्राजसमक्षंदोषानभिख्याप्यानुभाष्य पुनःपुनराचारंलभस्वेतिसयद्येवमप्यनवस्थितमतिःस्यात् ततोऽस्यपात्रंविपर्यस्येदिति=अर्थात्–उस पापी के गुरुजन और बन्धुओं को राज अदालत के सन्मुख पापीके दोषों को अच्छीतरह कहि समुझाइके कि अबहूं प्रायश्चित्त करिके फिर अच्छे आचार को पकड़ो– ऐसा कहिने पर भी यदि वह अपनी समुझ को ठिकाने पर न लावै तब जाकर उसके नाम का दासीघट उलटा करवावै (यह शंख जीने कहा=दासी घट उलटा होचुकने के बादि ये सभी बांधव आदि उक्त पापी को सब कामों में बोलना चालना पास बैठारना आदि सत्कारों से बाहर करैं=तदाह मनुः–निवर्तेरंस्ततस्तस्मात्संभाषणं सहासने दायाद्यस्यप्रदानंच यात्राचैवहिलौकिकी=अर्थात्– दासी घट की विधि पूरी होजाने से अनन्तर उस पापीमें बोल चाल और पास बैठारना और पैतृक धनका भागदेना या भाजी बाइने का व्यौहार देना आदि बातें निवर्तित होजावें और भी जो कुछ संसारी व्यवहार देन लेन आदिहोते हों सो भी बन्द किये जायँ= इसपर भी यदि कोई उसके साथ स्नेह आदि कारणों से बोलै तिसको प्रायश्चित्त कराया जाय–यथा (अत ऊर्ध्वं तेनसंभाष्य तिष्ठेदेकरात्रंजपन्सावित्रीमज्ञानपूर्वं ज्ञानपूर्वंचेत्त्रिरात्रमिति) अर्थात्–त्याग होजानेके उपरांत उसके साथ कोई बिना जाने बात करै सो एक दिन राति भर गायत्री जप करते हुये बितावै यह उसका प्रायश्चित्त है पर जिसने उसका त्याग होना जानते हुये बात चीत करी हो सो तीन दिन राति भर गायत्री जप करते हुये एक ठिकाने पर बैठा रहै ॥ २९५ ॥

(अथकृतप्रायश्चित्तस्यप्रत्यावर्तनविधिः)

यह बात कहा चाहते हैं कि बंधुओंके त्यागि देनेसे जिसको पछतावेसे वैराग्य आया तिससे त्याग होजानेके बादि जिनने प्रायश्चित्त किया अथवा दासीघट उलटा होनेके बिनाही बंधुओंके समझानेसे प्रायश्चित्त किया अथवा किसीकी प्रेरणा

विना आपही जिसने प्रायश्चित्त किया तिनकी साधना पूरीहोने बादि क्याकरना चाहिये तिसको आगे पांचश्लोकों में आपही योगीश्वर वर्णन करैंगे॥

(नूतनघटविधिःनिवर्तितप्रायश्चित्तस्यसत्कारः)

चरितव्रतआयातेनिनयेरन्नवंघटम्। जुगुप्सेरन्नवाऽप्येनंसंविशेयुश्चसर्वशः २९६

अर्थः—प्रायश्चित्त रूपी व्रतसाधन करिके लौटिआने पर सपिंड आदि बंधूलोग नवीन घटभरिके लेजावें और इसपुरुषकी किसीतरहसे कुछ निन्दा न करैं औरसव तरहसे उसमें अपनाहेलमेलभीकरैं॥ ध्यानकरो यहांपरनवीन घटवतानेसे यहतात्पर्य दर्शाया है कि पूर्वोक्त दासीघट के विधानमें नवीनकी ख्वसूसियत नढूंढनी॥२९६॥

२९६ अधिकोक्तिः=घटके साथ सत्कारसे घर ले आना कहा• इसमें दो भेद हैं कि आगे योगीश्वरके ३०० तीनसौ मूलश्लोकमें (घटेऽपवर्जिते) इसपदसे घटका त्यागना भी प्रतीत होताहै और मनुके ग्यारहवें अध्याय में १८६। १८७ इनदोनों श्लोकसे भी त्यागना प्रतीत होता है फिर इन्हीं में अस धातुके अर्थ भेद से घट का साथ लेआनाभी सिद्ध होताहै तथैव आगे गौतमके विधानमें भी साथ लेआना सिद्ध होताहै• इसी प्रकार कहीं लोकमें समक्ष भी यह देखा गया है कि बंधूलोग जलाशयसे घट भरिके उसके आगे आगे साथ लेकर घरको जातेहैं• तिससे निश्चितहुआ कि दोनों भेद ठीक ठीकहैं जहां जैसा सम्भव होय तहां तैसाही वर्ताव कियाजाय• और भी आचार मर्यादा परिपाटीसें सातवां मूलश्लोक तथा उसीका अभिप्रायार्थ देखो कि दो रीतों में विकल्प से कोई एक रीति अपनी इच्छा से अगीकार करैं ये सभी लक्षरा भेद आगे समझिलेना॥ ० ॥ पवित्र जलाशयमें स्नान कराइके घट के साथ घर को ले आना चाहिये=यथाह मनुः=प्रायश्चित्ततुचरितेपूर्णकुंभमपांनवम् तेनैवसार्द्धंप्रास्येयुःस्नात्वापुण्येजलाशये १८६॥ सत्वप्सुतंघटंप्रास्यप्रविश्यभवनंस्वकम् सर्वाणिज्ञातिकार्याणियथापूर्वंसमाचरेत् १८७=अर्थात्—प्रायश्चित्त करिके आने पर उसके सपिंड समानोदक आदि बंधूलोग उसी के साथ जाकर पुनीत जलाशय में सभी स्नान करिके जलके भरे नवीन घट को (प्रास्येयुः) जल में फेंकें या ग्रहरा करिके साथ लेजावैं ये दोनों अर्थ ठीकहैं १८६॥ वह प्रायश्चित्ती पुरुष उसी घट को जलाशयमें (प्रास्य) फेंकिके या जल ग्रहरा करिके अपने घर को जाइ प्रवेश करिके ज्ञातिसंबंधीसब कार्य करनेलगै जैसे पहिले किया करता हो १८७॥ यद्यपि अर्थ दोनों ठीकहैं तथापि जल भरिके साथ लेजाना अर्थ उत्तम है क्योंकि गौतम ने

सबको कराते जावैं यह सब काम होते हुये पापी के विद्या गुरु और योनि संबंधी आदि सब नाते दार लोग देखैं तिसके बादि जलमें स्नान करिके अपने ग्राम बसती को चले जावें यह गौतम ने कहा ॥ ० ॥ परन्तु यह त्याग रूपी कर्म कराना उसी दशा में आवश्यक है कि जब बंधुओं से प्रेरणा किया हुआ भी प्रायश्चित्त न करै अर्थात् बन्धु जनों को यह उचित है कि पहिले बारम्बार प्रायश्चित्त कराने की प्रेरणा ताकीद उसपर करैं=यदाह शंखः=तस्यगुरुबांधवान्राजसमक्षंदोषानभिख्याप्यानुभाष्य पुनःपुनराचारंलभस्वेतिसयद्येवमप्यनवस्थितमतिःस्यात् ततोऽस्यपात्रंविपर्यस्येदिति=अर्थात्—उस पापी के गुरुजन और बन्धुओं को राज अदालत के सन्मुख पापीके दोषों को अच्छीतरह कहि समुझाइके कि अबहूं प्रायश्चित्त करिके फिर अच्छे आचार को पकड़ौ— ऐसा कहिने पर भी यदि वह अपनी समुझ को ठिकाने पर न लावै तब जाकर उसके नाम का दासीघट उलटा करवावै (यह शंख जीने कहा=दासी घट उलटा होचुकने के बादि ये सभी बांधव आदि उक्त पापी को सब कामों में बोलना चालना पास बैठारना आदि सत्कारों से बाहर करैं=तदाह मनुः—निवर्तेरंस्ततस्तस्मात्संभाषणं सहासनं दायाद्यस्यप्रदानंच यात्राचैवहिलौकिकी=अर्थात्— दासी घट की विधि पूरी होजाने से अनन्तर उस पापीमें बोल चाल और पास बैठारना और पैतृक धनका भागदेना या भाजी बाइने का व्यौहार देना आदि बातें निवर्तित होजावैं और भी जो कुछ संसारी व्यवहार देन लेन आदिहोते हैं सो भी बन्द किये जायँ= इसपर भी यदि कोई उसके साथ स्नेह आदि कारणों से बोलै तिसको प्रायश्चित्त कराया जाय—यथा (अत ऊर्ध्वं तेनसंभाष्य तिष्ठेदेकरात्रंजपन्सावित्रीमज्ञानपूर्वं ज्ञानपूर्वंचेत्त्रिरात्रमिति) अर्थात्—त्याग होजानेके उपरांत उसके साथ कोई बिना जाने बात करै सो एक दिन राति भर गायत्री जप करते हुये बितावै यह उसका प्रायश्चित्त है पर जिसने उसका त्याग होना जानते हुये बात चीत करी हो सो तीन दिन राति भर गायत्री जप करते हुये एक ठिकाने पर बैठा रहै ॥ २९५ ॥

(अथकृतप्रायश्चित्तस्यप्रत्यावर्तनविधिः)

यह बात कहा चाहते हैं कि बंधुओंके त्यागि देनेसे जिसको पछतावेसे वैराग्य आया तिससे त्याग होजानेके बादि जिसने प्रायश्चित्त किया अथवा दासीघट उलटा होनेके बिनाही बंधुओंके समझानेसे प्रायश्चित्त किया अथवा किसीकी प्रेरणा

विना आपही जिसने प्रायश्चित्त किया तिनकी साधना पूरीहोने बादि क्याकरना चाहिये तिसको आगे पांचश्लोकों में आपही योगीश्वर वर्णन करेंगे॥

(नूतनघटविधिःनिवर्तितप्रायश्चित्तस्यसत्कारः)

चरितव्रतआयातेनिनयेरन्नवंघटम्। जुगुप्सेरन्नवाऽप्येनंसंविशेयुश्चसर्वशः २९६

अर्थः—प्रायश्चित्त रूपी व्रतसाधन करिके लौटिआने पर सपिंड आदि बंधूलोग नवीन घटभरिके लेजावें और इसपुरुषकी किसीतरहसे कुछ निन्दा न करें औरसब तरहसे उससें अपनाहेलमेलभीकरें॥ ध्यानकरो यहाँपरनवीन घटबतानेसे यहतात्पर्य दर्शाया है कि पूर्वोक्त दासीघट के विधानमें नवीनकी खसूसियत नढूंढनी॥२९६॥

२९६ अधिकोक्तिः=घटके साथ सत्कारसे घर ले आना कहा• इसमें दो भेद हैं कि आगे योगीश्वरके ३०० तीनसौ मूलश्लोकमें (घटेऽपवर्जिते) इसपदसे घटका त्यागना भी प्रतीत होताहै और मनुके ग्यारहवें अध्याय में १८६। १८७ इनदोनों श्लोकसे भी त्यागना प्रतीत होता है फिर इन्हीं में अस धातुके अर्थ भेद से घट का साथ लेआनाभी सिद्ध होताहै तथैव आगे गौतमके विधानमें भी साथ लेआना सिद्ध होताहै• इसी प्रकार कहीं लोकमें समक्ष भी यह देखा गया है कि बंधुलोग जलाशयसे घट भरिके उसके आगे आगे साथ लेकर घरको जातेहैं• तिससे निश्चितहुआ कि दोनों भेद ठीक ठीकहैं जहां जैसा सम्भव होय तहां तैसाही वर्ताव कियाजाय• और भी आचार मर्यादा परिपाटीमें सातवां मूलश्लोक तथा उसीका अभिप्रायार्थ देखो कि दो रीतों में विकल्प से कोई एक रीति अपनी इच्छा से अंगीकार करें ये सभी लक्षण भेद आगे समझिलेना॥ ०॥ पवित्र जलाशयमें स्नान कराइके घट के साथ घर को ले आना चाहिये=यथाह मनुः=प्रायश्चित्तेतुचरितेपूर्णांकुंभमपांनवम् तेनैवसार्द्धंप्रास्येयुःस्नात्वापुण्यजलाशये१८६॥ सतदप्सुतंघटंप्रास्यप्रविश्यभवनंस्वकम् सर्वाणिज्ञातिकार्याणियथापूर्वंसमाचरेत् १८७=अर्थात्—प्रायश्चित्त करिके आने पर उसके सपिंड समानोदक आदि बंधूलोग उसी के साथ जाकर पुनीत जलाशय में सभी स्नान करिके जलके भरे नवीन घट को (प्रास्येयुः) जल में फेंकें या ग्रहण करिके साथ लेजावें ये दोनों अर्थ ठीकहैं १८६॥ वह प्रायश्चित्ती पुरुष उसी घट को जलाशयमें (प्रास्य) फेंकिके या जल ग्रहण करिके अपने घर को जाइ प्रवेश करिके ज्ञातिहंबंधीसब कार्य करनेलगै जैसे पहिले किया करता हो १८७॥ यद्यपि अर्थ दोनों ठीकहैं तथापि जल भरिके साथ लेजाना अर्थ उत्तम है क्योंकि गौतम ने

इस वालपर एक जुदा विधान कल्पित कियाहै तिसमें भी यही अर्थ देखि परता है सो सब आगे देखो फिर इसकेमध्ये तीनसौ की अधिकोक्तिभी देखना॥ ० ॥ अत्राह गौतमः=यस्तुप्रायश्चित्तेनशुद्ध्येत तस्मिन्कुंभेशातकुंभ मयंपात्रंपुराय तमात्ह्रदात्पूर यित्वा स्रवन्तीभ्योवा ततएनमप उपस्पृशयेयुरथास्मैतत्पात्रंदद्युस्तत्संप्रतिगृह्यजपेत (शां ताद्यौःशान्तापृथिवीशान्तंशिवमन्तरिक्षंयोरोचनस्त मिह गृहणामीत्येतैर्यजुर्भिःपाव मानीभिस्तरत्समन्दीभिः कूष्मांडैश्चाज्यंजुहुयात हिरण्यदद्यात गांचाचार्याय) य स्यप्राणांतिकंप्रायश्चित्तं समृतःशुद्ध्येत॰ एतदेवशान्त्युदकसर्वेषूपपातकेष्वपि॰ तत एनंकृतप्रायश्चित्तं तेनैवकुल्सयेयुःसर्वकार्येषुक्रयविक्रयादिषु तेनसहसंव्यवहरेयुः=अ र्थात्–यह सब गौतमने आपही कहाहै कि–जो कोई प्रायश्चित्तसे शुद्धहोजाय तिस पर कुम्भविधि करनेमें सुवर्ण का बना घट होय अथवा चाँदी आदि माटी पर्यन्त किसी औरही धातुका पात्रहोय तौभी उसमें कुछ सोना डार देना चाहिये तिसको पवित्र तालाव कुराड या नदियों से भरिके उस प्रायश्चित्ती के आगे करिके साथ साथ लेजावें किसी जलाशय पर अर्थात अभी पहिले घरके भीतर वह न घुसै उसी जलाशयमें इसको स्नान करवावें इसके अनन्तर वही जलका भरापात्र उसके हाथों में समर्पण करें तिसको दोनों हाथसे अच्छे थाँभिकर जपकरै अर्थात यदि आपही वेदमन्त्रों के जपनेमें समर्थहो तो आपही जपै अन्यथा किसी वेदपाठीको अपनेसाथ प्रतिनिधि बनाकर उसके मुखसे जपकरावे और घीका होमकरै तिसके लिये (शा न्ताद्यौःशान्तापृथिवी आदि ऋचाओंके नाम चिह्न भी देदियेहैं कि इत्यादि यजुर्वेद की पावमानी और तरत्समन्दी ऋचाओंसे जपकरै तथा कूष्मांड नामके वेदमन्त्रोंसे घृतका होम करै और सोना चाँदी तथा गाय भी आचार्य को दान करै कि जिसने यही जप होम करवायाहो) किन्तु जिसका प्राणान्तिक प्रायश्चित्त ठहिराहो जैसा ब्रह्महत्या आदिके प्रकरणोंमें कहाथा कि अग्निमें जलिजाना आदि प्रायश्चित्तहो सो मरजानेसे ही शुद्धहोता यह घटकी विधि उसके लिये नहीं है॰ यही शान्ति का उदक रूपी घट विधान सब तरह के उपपातकों में भी जानना॰ तिसके अनन्तर इस प्रायश्चित्ती पुरुषको वे बन्धुजन किसी प्रकारसेभी न कोसैं अर्थात पहिलेदोष वावत कोईसी निन्दा उसकी नकरैं और सब कार्यों तथा क्रय विक्रय आदि सौदा- गरी के व्यवहारोंमें भी उसके साथ अच्छी रीतिसे वर्तावा करैं कि जो कुछ पहिले छूटिगयेथे यह गौतम ने कहा (इसका विधान थोडासा और बाक़ी रहा सो आगे ३०० के मूलश्लोकमें देखो॥ २९६॥

इस परिच्छेद में यहां तक २९५। २९६ दोसौ पंचानवे छानबे के दोनों मूल श्लोकसे जो कुछ व्यवस्था पतित पुरुषके निमित्तपर कहीगई सोसब नीचेके श्लोक से पतिता स्त्रियोंके निमित्त पर भी अतिदेश उतारा जायगा॥

(स्त्रीष्वप्यतिदेशः)

पतितानामेषएवविधिःस्त्रीणांप्रकीर्तितः। वासोगृहांतिकंदेयमन्नंवासःसरक्षणम् २९७

अर्थः—पतिता स्त्रियोंकी भी यही विधि कहीगई=अर्थात—जैसा दोसौ पंचानवे २९५श्लोकसे पतित पुरुषोंका दासीघट उलटा करना या जलदान पिण्डदान करना आदि कहा गया वही सब स्त्रियोंकाभी समझिलेना और जैसा दोसौछानवे २९६ श्लोकसे प्रायश्चित्तकिये पुरुषका सत्कार करना कहागया वही सब स्त्रियोंकाभी जानना (यह अतिदेश धर्मका स्वरूपहै) तथापि पुरुषोंकी अपेक्षा यहां स्त्रियोंकेनिमित्तपर थोड़ीसी विशेषमर्यादा एक जुदोहै सो उत्तरार्धमें देखो।घरकेसमीपवासदेना तथाअन्नवस्त्रभी रक्षासहित =अर्थात—यहीइतनानियम विशेषहै कि जो कोईस्त्रियां अत्यंत पतित ठहिरें और प्रायश्चित्त को न करैं तिनका दासीघट विधानआदि कर्म होजाने के वादभी कहीं वाहर न जाने देवै परन्तु घर में भी घुसना उनका निषिद्ध है तिससे घरके समीप ही किसी फूस पत्ते आदि की वनाई झोपडीमें निवास करावै और प्राणवचने रहिने योग्य मोटा अन्न और मैले पुराने वस्त्रदेते रहिकर ऐसी चौकसाई से राखै जो किसी पुरुषका समागम उसमें न होसके (इसग्रन्थोक्त नियम से यह वात भी आपही सिद्ध होती है कि जिन प्रायश्चित्तों की साधनापुरुषों को जंगल या वन विदेश में जाकर करनी कही थी • कदाचित वेही प्रायश्चित्त कहीं पर्देदार स्त्रियों पर आरूढ होयँ तौभी उनका वाहर जाना उचित न होगा किन्तु इसी रीति से घर के समीप जुदे स्थान में रहिकर व्रतादिक साधन करेंगी या घरू पुरुषों की रक्षा साथ तीर्थ आदि के स्थान पर कि जैसा कुछ विवेकी विद्वानों के विचार से ठहिरै• वल्कि ऐसे ही अटपटे विचारों के अर्थ में पचत्तरि ७५ का परिच्छेद सबसे जुदा रक्खा गया है कि सब तरह की टेढ टण्ड वाली वातोंकी गुंजायश उसमें सोची जासक्ती है॥ २९७॥

यहां यह सन्देह खडा होता है कि वे अत्यन्त पतिता स्त्रियां कौन हैं जिनके लिये यह जुदी विधि परित्याग मध्ये कही गई क्योंकि पतित अनेक भांति की होती हैं तिनमें इनकी क्या पहिचान होगी सो आगले मूल श्लोक से दर्शाते हैं॥

(स्त्रीणांअतिपातित्यचिह्नानि)

नीचाभिगमनंगर्भपातनंभर्तृहिंसनम्। विशेषपतनीयानिस्त्रीणामेतान्यपिध्रुवम् २९८

अर्थः—नीच से संगम• गर्भ का गिराना• भर्ता का वध करना• स्त्रियों को ये भी तीन कर्म निश्चय पूर्वक विशेष पातित्य का हेतु हैं=अर्थात्— जो जो महा पातक आदि पुरुषों के पातित्य का हेतु कहे गयेथे तिन कर्मों से स्त्रियां भी पतित होती हैं परन्तु स्त्रियों के अत्रोक्त तीनि कर्म अधिक हैं जिनसे अत्यन्त पतित होजातीहैं• तिनका यह ब्यौरा है कि एक जो हीन वर्ण आदि नीची जाति के पुरुष में गमन करै• दूसरा कर्म जो अपना या बिराना किसी स्त्रीका गर्भ उसके कहिने या न क• हिने आदि किसी तरह से गिराती फिरै और यह गर्भ चाहै ब्राह्मणी का यद्वा और ही किसी वर्ण की स्त्री का या अपनेही पेट का गिराया हो तो हर सूरत में पतित होगी•तीसरा कर्म भर्ता का वध करना चाहैं विष देकर या औरही किसी प्रकारसे मारना और यहां पर भर्ता शब्द से वह पुरुष जानना जो स्त्रीका भरण पालनकर्ता हो किन्तु चाहैं उसका सजाती विवाहित या विजाती विवाहित या धरूक आदि किसी प्रकार का पति हो तिसका प्राणघात करना या करवाना भी भर्तृहिंसन कर्म कहाता है तिस कर्म के करने वाली पतिघ्नी कहाती है॥ २९८॥

२९८ अधिकोक्तिः—पुरुषों के पतित हो जाने मध्ये इतने कारण प्रसिद्ध हैं १ महापातक २ अतिपातक ३ पातक ४ अनुपातक ये चार तो एक ही एक बार होने से पतित बनाइ देते हैं पाँचवें ५ उपपातक कई बार होजाने पर पतित बनातेहैं ऐसे ही इनसे छोटे छठे दर्जे वाले पाप इच्छा सहित अनेक बार होने से वेभी कर्ता पुरुष को पतित बनाते हैं येही सब स्त्रियों को भी पतित करते हैं (यह मूल श्लोक में अपि शब्द से ध्वन्यर्थ लिया गया) परन्तु स्त्रियोंको तीन पातक इन सबसे उपरालू भी होतेहैं=एवंशौनकोप्याह=पुरुषस्ययानिपतन निमित्तानिस्त्रीणामपितान्येव ब्राह्मणीहीनवर्णसेवायामधिकंपततीति=अर्थात्—ऊपर की वार्ताको शौनकने भी दृढ कियाहै कि पतित होजानेके जितने कारण पुरुषोंके लिये कहेगये वेही सबस्त्रियों को भी होतेहैं परंच ब्राह्मणी स्त्री यदि अपनेसे हीन वर्णोंकी सेवा सगति में पहुँचै सो अत्यन्तही पतित होतीहै=वशिष्ठस्तु=त्रीणिस्त्रियाःपातकानिलोकेधर्मविदोविदुः भर्तुर्वधोभ्रूणहत्यास्वस्यगर्भस्यपातनम्=अर्थात्—भर्ता का वध• भ्रूण हत्या जो गैर स्त्रियोंका गर्भ गिरावै या किसी का छोटा बचा मार डारै•अपना गर्भ गिराना• ये

तीनमहापातक धर्मज्ञलोग स्त्रियोंके बतातेहैं (इसवचनका यहतात्पर्यनहींहै किइन तीनोंसेउपरान्तपातकस्त्रियोंकेनहींहैंक्योंकिउन्होंवशिष्ठकाऔरभी वचनआगेदेखो) पुनर्वशिष्ठः=चतस्रस्तुपरित्याज्याःशिष्यगागुरुगाचया पतिघ्नीचविशेषेण जुंगितोपगताचया—इतिचतसृणामेवपरित्यागइत्युक्तंतत्रतासांप्रायश्चित्तमचिकीर्षंतीनांमध्ये चतसृणामेवशिष्यगादीनां चैलान्नगृहवासादिजीवनहेतुत्वाद्युच्छेदेनत्यागंकुर्यात्न ना-न्यासामित्यभिप्रायःअतश्चान्यासांपतितानांप्रायश्चित्तमकुर्वंतीनामपिवासोगृहान्तिकेदेयमित्यादिकंकर्तव्यमित्यवगम्यतेइतिमिताक्षरा=अर्थात—वशिष्ठने यह भी कहा है कि•ये चार स्त्रियां तो अवश्यही त्यागिदेने योग्य हैं—एक जो अपने भर्ताके शा-गिर्द विद्यार्थी सेवक नौकर आदिसे संगसकरै•दूसरी जो गुरुओंसे अर्थात अपने या पतिके बाप चचा मामा फूफा आदि रिश्ते से बड़े बूढे गिनेजाते हों तिनमें किसी गुरुजनके साथ संगसकरै•तीसरी पतिघ्नी जो भर्ताके प्राण विनाशै•चौथी जुंगितोप-गता जो अपनी जातिसे नीचीजातोंके पुरुषमें संगम करै•ये चार स्त्रियां विशेषकर जुदी कहीगईहैं कि इनका त्यागही उचित होताहै—इस पर मिताक्षराकार कहितेहैं कि इन चारिहीका त्यागना कहा तिसका यह तात्पर्य है कि जहांतक सबतरहकी महापतिता होती हैं तिनमें जो कोईसी स्त्रियाँ प्रायश्चित्त करने पर उतारू न होयँ तिनमेंसे केवल इन्ही चारोंका परित्याग इसप्रकारसे करना चाहिये कि रहिनेको जगहभी न देवै और अन्नवस्त्रभी न देवै किन्तु ग्रामसे बाहर छोडिआवै परन्तु इनसे उपरान्त जो और ऐसी बाकी रहीं जिन्होंने प्रायश्चित्त करना नहीं कबूल किया तिनको इसढंगसे न छोड़ना चाहिये अर्थात उनको उसरीतिसे रखना चाहिये जैसा ऊपर २९७ मूलश्लोक उत्तरार्ध के अर्थमें कहिचुके हैं कि दासीघट विधान किया जानेके अनंतर उनको घरहीके समीप जुदी झोपडी में बसावै और मोटा झोटा अन्न वस्त्र भी देतारहै इत्यादि•यहतात्पर्य समझागया मिताक्षराकारने यहकहा॥ २९८॥

अब अगिले मूलश्लोक में उसमर्यादाका कुछ अपवाद भी योगीश्वर दर्शावैंगे जो २९६ श्लोकसे वर्णन हुई थी अर्थात सत्कार की मर्यादा जो कुछ उसमें कही थी वह सभी प्रायश्चित्ती पुरुषोंपर नहीं समझनी किन्तु विरलोंको छोड़िकर समझनी होगी यही उसमें अपवाद (छूट) का स्वरूप जानना ॥

(संविशेयुरित्यस्यापवादश्च)

शरणागतबालस्त्रीहिंसकान्नंविशेन्नतु । चीर्णव्रतानपिसतःकृतघ्नसहितानिमान् २९९

अर्थः—शरणागत• बालक• स्त्री• के हिंसकों कृतघ्न सहितों के प्रति व्रताचरण कियेहुयेंकेभी इनकेप्रति न संवेशकरे=अर्थात्—शरण आयेको मारनेसरवानेवाले• बालक बच्चेका वध करनेवाले• स्त्री मात्रका वधकरनेवाले•और कृतघ्न परायाकिया उपकार मेटनेवाले सहित•ये सब पातकी यद्यपि प्रायश्चित्त भी करि आये जिससे निर्दोष ठहर सक्तेहैं तथापि इनकेसाथ पास न संवेश करै (अर्थात् इनकेपास जाना आना बैठना उठना आदि या कोईसा व्यवहार इनके साथ रोपना आदि न करना चाहिये और यथार्थ यह तात्पर्य है कि यद्यपि प्रायश्चित्त करिआनेसे शुद्धिमानी गई और इसी से खाने खवाने मिलने मिलाने आदि व्यवहार भी जरूरीमात्र करने परैंगे तथापि इनका पूराविश्वास न करना चाहिये ॥ इसीलिये मूलश्लोक में (नतु संविशेत) यह कहागया कि सम्यक अच्छेप्रकार से प्रवेश उनमें न करै ॥ २९९ ॥

२९९अधिकोक्तिः—मिताक्षराकार इसअपवादरूपीवार्ता कोवाचनिकप्रतिषेधभो नामधरते हैं=यथा=नसंव्यवहरेदितिवाचनिकोऽयंप्रतिषेधः किमिदंवचनंकुर्यान्नहिव चनस्यातिभारोस्ति अतश्चयद्यपिव्यभिचारिणीस्त्रीवधेऽपिइदमेवप्रायश्चित्तंतथापि वाचनिकोऽयंव्यवहारप्रतिषेधः=अर्थात—उनकेसाथअच्छेव्यवहार न करै यहकहिना एक(वाचनिकनिषेधहै) वाचनिकउसे कहितेहैं जो किसीमर्यादाके अनुसार तो नहीं सिद्धहोता हो केवल मुखहीके वचनसे निषेधकियाजाय जैसा दोसौछान्नबे२९६मूल श्लोकवाली मर्यादा से व्यवहार करना सिद्ध होही चुका तो भी यहाँ वचन मात्रसे प्रतिषेध कियागया तिससे (संव्यवहारकीमर्यादाहोते) वाचनिक प्रतिषेध इसका नाम ठहिरा • तिसपर यहतर्क खडी होतीहै कि यह वचन क्या चीज़ है जिसे कोई मानै कुछ इस वचनका बोझ किसीपर नहींहै जिससे मानाजाय•इसीलिये समझा कर समाधान देतेहैं कि ऐसे समझो एक दृष्टान्तहै कि जैसा इसी मूलश्लोक में स्त्री घाती पुरुषका विश्वास मने कियागया स्त्री वध भी दोभांतिकाहै कि एकने अपनी भार्या व्यभिचारिणी को लोकलज्जा से मारडारा और एक ने निरपराध स्त्री को मारडारा जो व्यभिचारिणी नहीं थी केवल उसका भूषण हरने आदि कारणों से घातकिया इस दशामें दोनों घाती पुरुष यदि प्रायश्चित्त करिके आवैं तब जिसने लोकलज्जासे वध कियाथा तिसके साथ संव्यवहार करना और उसको विश्वासपात्र जानना प्रत्यक्ष सूचित होताहै • दूसरेका विश्वास करना या उसके साथ संव्यवहार जोडना यह प्रत्यक्ष अनिष्ट है यथार्थ से ऐसेही अपघातियोंके साथ संव्यवहार बैठा उठी आदिका वाचनिक निषेध है कुछ उनके लिये नहींहै जिन्होंने लोकलज्जा से

लाचार होकर स्त्रीका वध किया यद्वा किसी धोखे आदि दैवयोगसे अपनी इच्छा विना वध होगया जैसे किसी वाहन सवारीको लेजातेहुये मार्गमें कोई स्त्री दबिकर मरगई और आपही पापके भयसे प्रायश्चित्त करनेपर उतारू शीघ्रहुआ हो तो यह उसके हृदयसे धर्मिष्ठलक्षण पाया गया तिससे इसी एक दृष्टान्त के अनुसार बहुधा और भी दशाओंपर ध्यान सर्वदा देदेकर वाचनिक निषेधका वर्ताव करना होगा॥ इसी दृष्टान्त से योगीश्वर के मूल श्लोकमें यह बातभी सिद्ध होतीहै कि दोप्रकार के स्त्री घातियों में जो कोई एक विश्वास के लायक समझा गया है तिसके लिये २९६ दोसौछानवे मूलश्लोक पूर्वार्ध की मर्यादा से शांतिघट का विधान करवाना आदि कुछ भी मने नहींहै करवाना चाहिये परन्तु दूसरी भाँति का स्त्री घाती बालघाती शरणागत घाती और कृतघ्न भी यदि प्रायश्चित्त करिआवें तब उनकेलिये शांति घटलेजाना आदि कुछ भी योग्य नहींहैं•तिससे यह २९९ श्लोकवाला अपवाद भी वाचनिक प्रतिषेध ठहरायागया॥ २९९॥

दोसौछानवे श्लोकवाले विधानका जो कर्म शेषरहा था सो नीचे अब लिखतेहैं॥

(पूर्वोक्तविधावपिविशेषः)

घटेऽपवर्जितेज्ञातिमध्यस्थोयवसंगवाम्। प्रदद्यात्प्रथमंगोभिःसत्कृतस्यहिसत्क्रिया ३००

अर्थः–घटके अपवर्जित होनेपर जातिके बीच बैठा हुआ प्रथम गौओंको यवस प्रकर्ष से देवे•गौओंसे सत्कार किये कीही सत्क्रिया होय=अर्थात्–जिसका शांति कुम्भरूपी कर्म समाप्त होगया किन्तु उसी कलश के साथ प्रायश्चित्ती पुरुष घरमें आगया वह अपने ज्ञाति बन्धुके समाज में बैठाहुआ सबसे पहिले यह कामकरे कि गौओंके लिये घास अपने हाथसे छोड़े क्योंकि प्रथम गौओंसे सत्कार पाचुकने परही जाति बंधु आदि करके सत्कार होना चाहिये॥ ३००॥

३००अधिकोक्तिः–यहां बन्धु बिरादरी से सत्कारहोना केवल यही अभिप्रेत है कि उसके साथ भोजन आदिका वर्ताव किन्तु उनकी दीहुई ज्योंनारको स्वीकार करै परन्तु पहिले जब गौयें उसकीदई घास आदिको स्वीकार करें अर्थात् देतेमात्र प्रीतिसे खानेलगें तभी उसका गौओंसे सत्कार होना सूचित कियाहै॥ तात्पर्य इसका यह कि यदि गौयें उसका दियाहुआ अन्न घास न भसणकरें तो फिर बिरादरी भी ज्योंनारका स्वीकार न करें और दुबारा प्रायश्चित्त करनेका आदेश करें=हारीतोप्याह=अर्थात्सायवसमादायगोभ्योदद्यात्यदिताः प्रतिगृह्णीयुरथैनंप्रवर्तयेयु

रिति॰इतरथानर्थाभिप्रेतस्स=अर्थात्–हारीतने भी यह कहा है कि अपने सुडपर ला-विकर घास गौओं के आगे छोडै जो गौयें खाने लगें तो इस प्रायश्चित्ती को खाने पीने आदि व्यवहारों में बन्धूजन प्रवर्त्त करें॰ अन्यथा नहीं यह अभिप्राय सूचित कियाहै॥ ०॥ दोसौ छान्नवे २९६ अधिकोक्ति के प्रारम्भ में जो बात लिखीगई थी उसपर भी ध्यान देना चाहिये कि यहां के मूलश्लोक में (घटेऽपवर्जिते) यह पाठ है तिसका अर्थ यद्यपि त्यागहीका प्रत्यक्ष है कि घटके त्याग होजाने में अगिला कर्म कियाजाय तथापि मिताक्षराकारने जलाशयमें छोडि आना फेंकिआना अर्थ नहीं स्वीकार किया बल्कि यह स्वीकार लिखा है कि (घटेऽपवर्जितेह्रदादुद्धृत्यपूर्णकुंभ निनीते– असौचरितव्रतःसपिंडादिमध्यस्थोगोभ्योयवसंदद्यादितिमिताक्षरा) अर्थात् घटका अपवर्जित होना यह कि तालाब कुण्ड आदिसे भरिके पूर्ण कुम्भ साथ ले-जाने बादि–यह प्रायश्चित्त किया हुआ पुरुष अपने सपिंड आदि बंधुओंके बीच में बैठिके प्रथम गौओं को घास छोड़े–सो यही अर्थ सुन्दर जानो क्योंकि मूलश्लोकमें भी घटका अपवर्जन कहिने से यह तात्पर्य नहींहै कि जलमें फेंका जावै बल्कि यह ध्वन्यर्थ है कि घटका समस्त पूजा कर्म आदि निपटि जानेपर घासदेना आदि कर्म करे=और मनु का यह वचन जो पहिले भी लिखि चुके हैं कि (सतु अप्युतंघटं प्रास्य प्रविश्य भवनं स्वकं) सो इसका भी अर्थ व्यत्यस्त योजना से ऐसा होता है कि वह प्रायश्चित्ती अपने घर मे प्रवेश करिके फिरि उस घटको जलमें छोडवाइ के अगिले कामों का प्रारम्भ करै अर्थात् वहां जलाशय से भरिके जो घट उसके साथ घरको आया हो तिसको उसी दिन या और किसीदिन उचितजानिके जला-शय पर सिराइ आवै फिर और कामों का प्रारम्भ करै तौ यह सिराइ आना सब तरह के यज्ञों मे प्रसिद्ध है कि जिस घट का पूजा कर्म्म आदि सर्वथा निपटि जाता है वह मन्त को जलही में सिरायाजाता है कुछ इनबातों में विरोध नहीं है इसी से मनु मुक्तावली टीकाकार कुल्लूक भट्टने जलमेंफेंकना अर्थलिखा सोभी कुछविरोधी नहींहै॥ ३००॥ अब अगिले परिच्छेदमें सभी प्रायश्चित्तोंकामिला भुला एकही मार्ग स्वीकार करना कहा जायगा॥ ३००॥

——✻——

अथसकालप्रकाशप्रायश्चित्तानांसाधारणधर्मविषये पर्षदाऽनुमतप्रायश्चित्त स्वीकरणविवेकोऽयं परिच्छेदः सप्त सप्ततितमः (७७)

—*—

इस परिच्छेद में पर्षत् सभा समाज के द्वारा ऐसे सभी पापों के प्रायश्चित्त विचार होने का प्रकार जाना जायगा कि जो जो पाप करने के समय पर ही या कुछ काल पीछे भी प्रकाश होजायँ—क्योंकि— उनमें यद्यपि कर्त्ता पुरुष आपही ज्ञानी ध्यानी धर्म्मशास्त्र का विवेक्ता होय तौभी वह अपने मध्ये निर्णय करने का अधिकारी नहींहै—इसी लिये तरह तरह की सभाओं के स्वरूप डौल आगे दर्शावेंगे और जिस रीति से सभा में जाना प्रश्न करना चाहिये सो भी॥

(विख्यातदोषस्यायं विधिः)

विख्यातदोषःकुर्वीतपर्षदोऽनुमतंव्रतम् ३०१ (पूर्वार्धएव)

अर्थः—विख्यात दोषी पुरुष पर्षत् का अनुमत व्रत करै=अर्थात्—जिस दोषीका पाप विख्यातहोगया हो उसको धर्मसभाके विचारसेही प्रायश्चित्त करनाचाहिये चाहें वह धर्मशास्त्र आदि सर्वशास्त्रों के विचार करने में आपही अति चतुर हो तौभी अपनेलिये आप न विचारै किन्तु सभाकेद्वारा बूझिके करै वरन जिसअवसरमें सभासदों की अपेक्षा इस दोषी मे शास्त्रज्ञता आदि कुछ विशेषता विद्यमान हो तहां उसी सभा के साथ मिलिकर विचार करनेका अधिकार इसको सूचितहै सोकरे॰ तथापि प्रायश्चित्त के नियम उसी पर्षत् सभा के अनुमत के द्वारा कल्पित होंगे—और— दोष का विख्यात हो जाना यह कहाता है कि जिस पापको उत्पन्न करनेवाला केवल वही पुरुष एकाकी हो तिसको अन्य पुरुषभी मालूम होजानेसे कहिने लगैं वा जिस पाप को उत्पन्न करानेवाले कोई और भी दो चार सहायक हों वे अवश्यही जाना करतेहैं परन्तु उनका जानना मुख्यकर्त्ता के निकट कुछविख्याति में गिनती नहीं है अर्थात् सहायकों से उपरान्त मनुष्य जानि कर चर्चा करनेलगें सो विख्यात दोष कहाता है॥ ३०१ ॥ यह पूर्वार्ध प्रणीत है॥

३०२ अधिकोक्तिः—धर्म सभा के पास जाने का जुदा प्रकार होता है=यथाहां

गिरा:—कृतेनिःसंशयंपापे नभुंजीतानुपस्थितः भुंजानोवर्द्धयेत्पापंयावन्नाख्यातिपर्षदि सचैलंवाग्यतःस्नात्वाक्लिन्नवासाःसमाहितः पर्षदानुमतस्तत्वंसर्वंविख्यापयेन्नरः व्रत मादायभूयोपितथास्नात्वाव्रतंचरेदिति=अर्थात—पाप करना निश्चय होजाने पर सभा में उपस्थित हुये विना न भोजन करै क्योंकि जब तक सभामें जाकर प्रायश्चित्त नहीं मांगता है तब तक बीच में भोजन करते हुये किया हुआ पाप वृद्धि को पहुँचता रहिता है तिससे शीघ्रही कपडे पहिने हुये सचैल स्नान करिके भीजे वस्त्र सहित अपने चित्त को ठिकाने रक्खे हुये जाकर सभा से अनुमत पाइकर दोषीमनुष्य अपना सब यथार्थ ब्यौरा सुनावै और व्रत का उपदेश वहां से लेकर फिर उसी तरह दुबारा गोता लगा कर चला जाय अपने प्रायश्चित्त का प्रारम्भ करै ॥ ० ॥ पराशर ने यह भी नियम दर्शाया है कि पहिले कुछ पुण्य दान करिके तब सभा में बूझने जाय=यथा=पापंविख्यापयेत्पापीदत्वाधेनुंतथावृषम (एतच्चोपपातकविषयं महापातकादिष्वधिकं कल्प्यमिति मिताक्षरा)=अर्थात— पराशर ने कहा है कि गाय और वृषभ दान करिके पापी अपने पाप को सभा में सुनावै (मिताक्षराकार कहिते हैं कि यह सिर्फ उपपातकोंपर समझना किन्तु महापातक आदि बडे पापों पर इससे अधिक दान पाप की बडाई के अनुसार सोचना चाहिये) और यह अगिला जो वचन है कि=तस्माद्द्विजःप्राप्त पापःसकृदाप्लुत्यवारिणि विख्याप्यपापं पर्षद्भ्यःकिंचिद्दत्वाव्रतंचरेदिति (तत्प्रकीर्णक विषयमितिमिताक्षरा) अर्थात—पूर्वोक्त कारण से द्विजाती जब किसी पाप से संयुक्त होय सो जलमें एक ही बार गोता लगाकर सभा के पण्डितों को कुछ देकर अपना पाप कहि सुनाय कर प्रायश्चित्त आचरै (इसपर मिताक्षराकार कहिते हैं कि यह कुछेक देना जो कहा सो सबसे छोटे पाप प्रकीर्णक नामसे ७४ के परिच्छेद में जो कहे गये तिनपर समझना) यहांपर सोचने का स्थल है कि पराशर के वचन को और इस वचन को मिलाकर एकही व्यवस्था मिताक्षरा ने कही तिसके उत्तम मध्यम आदि कई भेद किये सो यह कल्पना सुन्दर नहीं क्योंकि पतित के हाथ से पतित का दिया हुआ गाय वृषभ रूपी महा दान लेना धर्म शास्त्री पण्डितों का यह काम नहीं वे आपही प्रायश्चित्ती हो जायंगे अर्थात असत्प्रतिग्रह का प्रायश्चित्त देखो ६८ अरसठि परिच्छेद में २९० दोसौनब्बे मूल श्लोक से कहिचुके हैं— तिससे पराशर ने जो गाय वृषभ का दान किये पीछे धर्म्मसभा में जाना कहा सो औरही किसी दान पाय के निमित्त देना अर्थ ठीक है बल्कि पराशर के सोरह अक्षर वाले अर्थ

श्लोक में कोई प्रयोगही ऐसा नहीं है जिससे धर्म सभा के पण्डित भी दान के संप्रदान भूत समझे जायँ—और जो (तस्मात् द्विजः प्राप्तपाप इत्यादि) पिछले वचनमें साफ साफ कहा है कि (पर्षद्भ्यः किंचिद्दत्वा.) सभा के पण्डितों को कुछ देकर॰ सो यह मिहनताने की रीति से दक्षिणा देनी सूचित करी है क्योंकि परिश्रम का वेतन मिले विना किसी का तन मन किसी कार्य में अच्छे नहीं तत्पर होता और व्यवस्था का कोई सुगम काम ऐसा नहीं है जिसको हर कोई पण्डित सुघड़ भलाई में कहि सकेगा बड परिश्रम का काम है और परिश्रम का हक्क लेना किसी दान प्रतिग्रह में गिनती नहीं है न उसको लेकर कोई दोष लगिसक्ता है क्योंकि यहांपर देने लेने की वाचनिक आज्ञा पाई गई—और जो पापों की बडाई छोटाई के ऊपर बहुत या मध्यम या थोडा देना मिताक्षराने ठहिराया सो भी ठहिराना कुछ आवश्यक नहीं किन्तु दान वित्त समान यह नियम घराटाघोष है कि जैसा कोई अधिक धनी या दरिद्री होगा उसी के अनुरूप दान बताया जासक्ता है— और दूसरे वचन में जहां ठेठ पण्डितों का परिश्रम देना कहा गया तिसमें भी किंचित् शब्द का प्रयोग सिर्फ इसी आशय पर आरूढ है कि जैसा वडा छोटा परिश्रम उनकासमझि परै तैसाथोडा याबहुत कुछ देकर व्यवस्था बूझै॥ यहांतक तीनसौ एक मूलश्लोक पूर्वार्धकी अधिकोक्ति पूरीहुई इसी टीकाको शेषव्यवस्था नीचे लिखतेहैं॥३०१॥

(अथपर्षत्स्वरूपं)

पर्षत् सभा जिसमें प्रायश्चित्त बूझना कहा सो कैसी हो तिसके भी अनेक लक्षण हैं सो देखो उनमें प्रथम मनुका कहा स्वरूप दर्शाते हैं=यदाहमनुः=त्रैविद्योहेतुकस्तर्कीनैरुक्तोधर्मपाठकः त्रयश्चाश्रमिणःपूर्वेपर्षत्स्याद्दशावरा=अर्थात्—सभामें अच्छे पुरुष चाहैं तितने जुड़ैं परन्तु दश महात्मा इस प्रकारके होने चाहिये जिनमें कोई त्रैविद्य कोई हैतुक कोई तर्की कोई नैरुक्त कोई धर्म पाठक हों और॰ ब्रह्मचारी॰ गृहस्थ॰ वानप्रस्थ॰ इन तीनों आश्रम के सत्पुरुष होयँ संन्यासी नहीं। (त्रैविद्य वे कहाते हैं जो तीनों वेद की कुछ कुछ शाखायें अर्थों सहित पढ़िकर समझे हों केवल स्वर के साथ ऋचाओं का गाना मात्र नहीं) हैतुक वहजानना जो हेतुरूपी वाद में रत हो अर्थात् हेतु जो कारण होय तिसको पकड़ि के अतियुक्ति के साथ बात कहिने का अभ्यास रखता हो सोहैतुक पुरुष कहाताहै पर यह भी शास्त्रसंपन्न होकरऐसाहोय॰इसीलिये मिताक्षराकार ने दोनों मीमांसा का अर्थ तत्त्व जानने

वाला इसको कहा है क्योंकि विचार पूर्वक तत्व निर्णय करसकने का नाम है मीमांसा और इसीसे मीमांसा उस ग्रन्थ का भी नाम है जिसमें ऐसा तत्व निर्णय हो सक्ता हो• वह मीमांसा रूपी निर्णय भी दो भांति का होताहै इसीसे उसकेग्रंथ भी दो भांति के प्रसिद्ध हैं पूर्वमीमांसा और उत्तरमीमांसा अर्थात पहिली मीमांसा कर्म कांड है पिछली मीमांसा ब्रह्मज्ञान का विचार है• तहां जैमिनि के बनायेहुये ग्रन्थसेंकर्मकांडके संदेह निर्णयहोते हैं उसीका नाम पूर्वमीमांसा भी कहाताहै और ब्रह्म जो परमात्मा परमेश्वरहै तिसके जो सन्देह खड़ेहोयँ सो सब वेदान्त से निर्णय होसक्ते हैं जैसा इसी ग्रन्थ में संन्यास आश्रम के प्रसंग से अध्यात्म नामका प्रकरण बहुत बड़ा वर्णन होचुका है इसी तरह वेदान्त के और बहुत ग्रन्थ हैं सो सब उत्तर मीमांसा किन्तु पिछली मीमांसाके नामसे कहातेहैं•यह तात्पर्य ठहिरा हैतुक पुरुष का पर सामान्य अर्थ यही है कि जो वार्ताके तत्व को युक्तिसे निर्णय करसके सो हैतुक जानो (तर्की उसका नामहै जो तर्कशास्त्रमें कुशलहोय परन्तु न्यायशास्त्रपढ़ा होने परभी उसकी तर्क ऐसी न हो कि श्रुति वास्मृतियोंसे विरुद्धहोय अर्थात दोनो मीमांसा के अनुकूल उसका तर्क होनाचाहिये) नैरुक्त उसका नामहै जो व्याकरण विद्या से प्रयोजनवाले शब्दों की निरुक्ति दर्शावै और वह भी नैरुक्त पुरुष होताहै जो वेदका एक अङ्गही निरुक्त कहाताहै तिसको पढ़ाहो (धर्मपाठक जो धर्मशास्त्र की स्मृतियों आप ऐसी पढ़ा हो जिन्हें और को समुझाइकर पढ़ासके) ब्रह्मचर्य गार्हस्थ्य वानप्रस्थ इनतीन आश्रमों के सत्पुरुष उनको जानना जो अपने अपने आश्रम के नियम धर्मोंका वर्ताव ठीक ठीक आचरण करते हों ॥ ० ॥ ऐसी सभा न मिलनेपर मनुने पर्षतका दूसराडौल दर्शाया है=यथा=ऋग्वेदविद्यजुर्विच्चसामवेदविदेवच त्र्यवरापरिषज्ज्ञेयाधर्मसंशयनिर्णये=अर्थात–ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद इनकी शाखाओंके जुदे जुदे भी अर्थोंसहित जाननेवाले अर्थात एक एक पुरुष एकहीएक वेदकी कोई शाखा विधि पूर्वक पढ़ाहो ऐसे तीनिही पुरुष जिस परिषत्‌में शामिल होयँ सोभी धर्मका संदेह निर्णय करनेवाली सभा होतीहै ॥०॥ इसके भी न मिलने पर मनुने कार्यके निर्वाह का और डौल दर्शाया है=यथा=एकोपिधर्मविद्धर्मंयंव्यव स्येत्सहितःनज्ञेयःपरमोधर्मोनाज्ञानामुदितोऽयुतैः=अर्थात–धर्मशास्त्र का विज्ञाता यदिएकहीनिश्चितहोके जिस धर्मको एकही पुरुष विचार करै सोई परमधर्म जानो क्योंकि धर्मशास्त्र एकशास्त्रोंके ऊपर अधिष्ठाताहै धर्मकीमर्यादा इसीकेद्वारा जानी जातीहैपरञ्च धर्मके न जाननेवाले दशहजारमिलिकेभी कहैं सो धर्मकीगिनतीमेंनहींहै

(विज्ञानेश्वर कहिते हैं कि इन बडी छोटी सभाओंका वर्ताव जैसा जहां संभव हो तैसा तहां समझना अथवा महापातक आदि बड़े छोटे पापों के भेद से भी जानना अर्थात् बहुत बड़े पापका प्रायश्चित्त बूझने को वडो पर्षद् के नितते हुये छोटो में न जाना चाहिये ॥ ० ॥ एक यह स्मृत्यन्तर वचन है कि=पातकेषुशतंपर्षत्सहस्रमहदादिषु उपपातेषुपंचाशत्स्वल्पंस्वल्पेतथाभवेत् (तदपिमहापातकादिदोषानुसारेण पर्षदोगुरुलघुभावप्रतिपादनपरंनपुनः सङ्ख्यानियमार्थंमन्वादिमहास्मृतिविरोधप्रसंगादितिमिताक्षरा)=अर्थात्—पातक नामके बड़े पापोंके लिये एकसौ सभासद को पर्षत् में समझना चाहिये और उनसेबड़े महापातक आदि पापोंकेलिये सहस्र सभासदों को पर्षत् होय और छोटे दर्जेवाले उपपातक नामकेपापोंका प्रायश्चित्त बूझनेको ५० पचास मनुष्योंकी सभा चाहिये फिर इनसे भी छोटेपापोंके मध्ये इनसे भी थोड़े पचीस आदि सभासद होयँ यह समझना (विज्ञानेश्वर मिताक्षराकार कहिते हैं कि यह वचन केवल इसलिये है कि दोषकी बडाई छोटाई के अनुसार सभाका बड़ापन या छोटापन होना चाहिये पर यह तात्पर्य इसका नहींहै कि जिसमें एकसौ बताये या हज़ार बताये तिसमें उतनेही पूरम्पूर मनुष्यचाहिये क्योंकि जो ऐसातात्पर्यमाना जाय तो फिर मनुआदि बडीबडी स्मृतियोंके नियमसे विरोधखडा होनेलगै जैसाऊपर दश या तीन वा एकही विद्वानसभारूप कहागयाहै)इसपर मर्यादा परिपाटी संपादक व्याख्याकार का यह विचार है कि यह बहुत बडी संख्या के लगभग अधिकता जो ठहराईगई सोभी सर्वसाधारण मनुष्योंकी समझनी किन्तु इसकेसाथ उतने विद्वानों काहोना आवश्यक है कि जैसा पहिले दश वा तीन वा एकही विद्वान होनाकहाथा तो फिर कुछ भी विरोध इसमे नहीं है अन्यथा उतनी सख्याओं के लगभग केवल विद्वानोंका संग्रह करना वा होसकना न आवश्यकहै न संभवहै बल्कि उक्त संख्याओं के नियम छोडिकर लगभग वाला डौल सर्वसामान्य सभासदों का ठहराया गया तिसमे भी पूर्वोक्त यथा संभव की युक्ति लगानी होगी कि जहां दोषी पुरुष बड़ा आदिमी होय जिसके दबावसे इतने अधिक सभासद इकट्ठे होसकैं सिर्फ वहांकी यह व्यवस्था है सर्वत्र नहीं ॥ ० ॥ देवलने सभाके स्वरूप में एक जुदा डौल दर्शाया है= यथा=स्वयंतुब्राह्मणाब्रूयुःस्वल्पदोषेषुनिष्कृतिम् राजाचब्राह्मणाश्चैव महत्सुचपरीक्षितम्=अर्थात्—जो उपपातक आदि छोटे पापहैं तिनमें पण्डित ब्राह्मण आपही प्रायश्चित्त बतावैं परंच महापातक आदि बड़े पापोंमें राजा और ब्राह्मण भी मिलिकर सभा करैं तिसमे दोषकी परीक्षा से प्रायश्चित्त करावैं (इस वचन में यह तात्पर्य है

कि जिन अपराधों में राजवादी (राजमुद्दई) होसक्ता हो तिनको ब्राह्मण लोग केवल आपही प्रायश्चित्त कराइ के राजासे छिपावैं नहीं क्यों वैसे महादोषों में राजद्वार से डुर्माना आदि राजदंड होनेके अनन्तर प्रायश्चित्त कराना धर्म शास्त्र का सिद्धान्त है—तिससे यद्यपि किसी विरले महादोषीके ऊपर कोई वादी वनिके राज में निन्दाकरने को न गया हो तौभी प्रायश्चित्तका वोझ उसपर धरनेवालों को यह सूचित कियाहै कि प्रथम प्रायश्चित्तही के वहाने से राजद्वारमें उस दोषका प्रकाश करैं जिससे राजा उसी दोषका निर्णय ब्राह्मणोंकी पर्षत में शामिल होकर निर्णय किये पीछे यथायोग्य राजदंड लेकर प्रायश्चित्त विचारने की आज्ञा विद्वानों पर आरूढ करैगा यह तात्पर्य है ॥ ० ॥ परन्तु यह भी एक धर्महै कि यदि कोई दोषी मनुष्य अपने पापसे दुखमानि के आपही किसी पर्षत के पास जाकर प्रायश्चित्त वूझै तौ उस परिषतको अवश्यही विचार करना और वताना योग्यहोताहै क्योंकि ऐसा न करने से परिषतको भी दोष लगताहै=यदाहांगिराः=आर्तानांमार्गमाणानां प्रायश्चित्तानियेद्विजाः जानंतोनप्रयच्छंतितेयांतिसमतांतुतैः=अर्थात—पीडितहुये वूझने आये हुयोंको जे कोई विद्वान ब्राह्मण धर्मशास्त्र जानते हुये प्रायश्चित्त नहीं वतातेहैं वेभी उन्हीं पापियोंके समान ठहरतेहैं ॥ ० ॥ परन्तु किसीसभाका सभासद कोई धर्मके जानेविना यदि प्रायश्चित्त वतावै सो वतानेसे भी पापी और प्रायश्चित्ती भी होताहै=तदाहवशिष्ठः=अज्ञात्वाधर्मशास्त्राणिप्रायश्चित्तंददातियः प्रायश्चित्तीभवेत्पूतःकिल्विषंपर्षदंव्रजेत=अर्थात—धर्मशास्त्रों को आद्योपांत पढे समझे विना जो कोई पंडित प्रायश्चित्त वताताहै तिसके करनेसे प्रायश्चित्ती शुद्ध होजाताहै परंच उस प्रायश्चित्ती का पाप उसी सभासद पर आरूढ होताहै ॥ ० ॥ यहाँ तक प्रायश्चित्त वताने की रीति जो कहिचुके सो ब्राह्मण आदि सभी वर्णोंको वतानेपर कहीगई कुछ भेदभाव नहींहै तथापि क्षत्री आदिको वताने मध्ये अंगिराने एकजुदी रीति भी कही है=यथा=न्यायतोब्राह्मणःक्षिप्रंक्षत्रियादेःकृतैनसः अंतराब्राह्मणांकृत्वाव्रतंसर्वंसमादिशेत तथाशूद्रंसमासाद्यसदाधर्मपुरःसरम् प्रायश्चित्तंप्रदातव्यंजपहोमविवर्जितमिति (तस्याग्न्याद्यनुष्ठानशीलानांजपादिकंवाच्यं इतरेषांतुतपः) कर्मनिष्ठास्तपोनिष्ठाःकदाचित्पापमागताः जपहोमादिकंतेभ्योविशेषेणप्रदीयते ये नाम धारकाविप्रामूर्खाधनविवर्जिताः कृच्छ्चांद्रायणादीनितेभ्योदद्याद्विशेषत इति=अर्थात—क्षत्री और वैश्य जहाँ पाप किये ठहरैं तहाँ धर्मज्ञ ब्राह्मण उनको न्याय के अनुसार शीघ्रही सम्पूर्ण व्रत भले प्रकार से वतावैं परन्तु वीचमे उनके गुरु पुरोहित

आदि किसी प्रतिष्ठावान् ब्राह्मणको साक्षीभूत मध्यस्थ बनाकर व्रतका आदेश करै अर्थात् केवलएकपरएकबैठिके प्रायश्चित्त न बतावै कि जहां सिर्फदोषी पुरुष और धर्मशास्त्री इन दोकेसिवाय तीसरा न हो (सो यह नियम उस दशापर आवश्यकहै कि जहाँ अनेक विद्वानों की सभा इकट्ठी न होसके केवल एक धर्मशास्त्रीही प्रायश्चित्तका आदेश करनेवाला होय जैसा (एकोपिधर्मवित्धर्मंइत्यादि) मनुके वचन से ऊपर कहिचुके-तथैव किसी शूद्रको पापकिया पाइकर भी इसीरीतिसे पुरोहित आदि को बीच में मध्यस्थ बनाकर धर्म के अनुसार प्रायश्चित्त देना चाहिये परंच शूद्रके निमित्त में सदा यही धर्म है कि उसको जप होम से रहित प्रायश्चित्त बतावै अर्थात् जिन दोषों पर जप होम करना कहीं लिखा हो तिनमें भी शूद्रको जप होम करनेकी आज्ञा न देनी चाहिये—शूद्रके सिवाय अन्य वर्णोंके मनुष्य ब्राह्मण आदि भी जे कोई निपट निरक्षर होयँ तिनको भी जप होम आदि न बताना चाहिये तहां ऐसा करना चाहिये कि (जे कोई द्विजातीलोग यज्ञादि कर्मों के अनुष्ठान में सदा निरन्तर या जब तब लगे रहिते हों तिनको जप होम आदिवाले प्रायश्चित्त बतावैं औरोंको तप करना किन्तु व्रतादिक प्रायश्चित्तबतावैं) क्योंकि यही नियम अगिले वचन में साफ कहे देते हैं कि—जे कोई द्विजाती कर्म करने में अभ्यास रखते हों या तप करने में अभ्यास रखते हों वेही कभी पाप में फँसैं तब उनके लिये विशेष कर जप होमादिरूपी प्रायश्चित्त दिया जाता और जे नामहीं मात्र के ब्राह्मण निरक्षर मूर्ख धनसेहीन दरिद्री तिनको जुदे जुदे उनकी दशाकेअनुसार कृच्छ्र और चांद्रायण आदिबतावै॥ यहप्रायश्चित्त बतानेकाडौल केवल विख्यातपापोंकेऊपर कहागया किन्तु छिपेहुये पापोंके प्रायश्चित्त अगिले परिच्छेदमेंवर्णन होंगे॥इतिपरिच्छेदः॥

(इतिप्रकाशप्रायश्चित्तानांसर्वसामान्यविधिनिर्णयकप्रकरणं)

(त्रिपरिच्छेदत्रयं)

इस प्रकरण में ७५। ७६। ७७ पचहत्तरि परिच्छेद के प्रारम्भ से सतहत्तरिके अंततक तीनि परिच्छेद हैं तीनों में यद्यपि जुदे जुदे विषयों का वर्णन है परन्तु ये तीनों जुदे विषय सब तरह के पापों में आदि मध्य अंत के अवसर भेद से विचारने परतेहैं तिससे इन तीनों परिच्छेदका एकही प्रकरण मानागया कि जब कभी किसी पापको विख्याति होकर प्रायश्चित्त सोचना परै तब उस पापके विचारवाला जुदा प्रकरण या परिच्छेद पहिले ढूंढिकर उसके साथही इसप्रकरणको देखा चाहिये॥

परन्तु जिनसे कभी दैवयोग से कोई पाप होगया और गुप्त होनेके हेतुसे खुल्लम न होने पाया ऐसे पापी पुरुष जो अपने पापका छिपा हुआ प्रायश्चित्त करना चाहैं तिनकी व्यवस्था आगे ७८ अठहत्तर परिच्छेद से लेकर जानी जायगी॥

अथ रहस्यप्रायश्चित्तानां सर्वेषां साधारणधर्मविवेकसहितः–ब्रह्महत्यायाः प्रायश्चित्तप्रबोधकोऽथ परिच्छेदः अष्टसप्ततितमः (७८)

—※—

इसपरिच्छेदमें विशेषतासे दो बात जानीजायँगी कि प्रथम तो छिपेहुये पापोंकासाधारण एक धर्म जो सर्वत्र काम आवैगा–दूसरे महापातकोंमें से केवल एकब्रह्महत्या जो किसीने छिपीहुई करीहो जाहर न होनेपाई तिसकारहस्यप्रायश्चित्त कहाजायगा (रहसि) एकान्त मे छिपकर जो काम कियागया वही रहस्य कहिलाता है चाहैं पापहो या उस पाप का छिपा हुआ प्रायश्चित्तहो॥

योगीश्वर याज्ञवल्क्य मुनि यहां से आगे आगे छिपे पापों के प्रायश्चित्तों का विस्तार किया चाहते हैं कि जिससे शरीरमें घुसे हुये पापों को दुहिकर उस भांति से निकासि फेंकै जैसे थनोंमें छिपाहुआ दूध बछरा के योग से निकासा जाता है (यहां पर प्रायश्चित्तों को बछरा के दृष्टांत में समझना प्रायश्चित्ती पुरुष को दोहने वाला समझना) इसी लिये योगीश्वर पहिले उन सभी प्रायश्चित्तों का साधारण धर्म दर्शाते हैं जो आगेआगे सभी व्रतों की आदि में सोचना होगा सो देखो निचले तीन सौ एक वाले उत्तरार्ध से॥

(रहस्यप्रायश्चित्तविचारः)

अनभिख्यातदोषस्तुरहस्यंव्रतमाचरेत् ३०१

अर्थः–अनभिख्यातदोषी रहस्य व्रत को आचरै=अर्थात्–जिस दोषी का पाप उसके सहायकों से उपरान्त मनुष्यों की जोष तक न पहुंचै सो रहसि एकांत में गुप्त ही प्रायश्चित्त करै॥ ३०१॥ उत्तरार्धोऽयं॥

३०१ अधिकोक्तिः–यहां यह शंकाहै कि मनुष्यके सहायक मिलापी समीपी

आदि अनेक भांति के होते और वेही किसी पाप को करते जानि सक्ते हैं तिनका जानना छोड़िकर उपरान्तु मनुष्य कहे इसमें नाना प्रकार के विरोध खड़े होते हैं क्योंकि जिस पाप को सहायकों ने देखा जाना तिसको सभी मनुष्य जानि सक्तेहैं फिर क्योंकर कोई पाप अनभिख्यात कहावै इत्यादि—इसका यह समाधान है कि पापी के सहायक सिर्फ वेही अभिप्रेत हैं जो उसको पाप कर्म्म करवाने में साथी हुये हों जैसा किसी स्त्री से उसका सँदेशा कहि आना ले आना बुलाइ लाना आदि ऐसाही सर्वत्र सभी पापों में समझि लेना कि जितने पुरुष वा स्त्रियाँ पाप कार्यके सहायक वा साक्षी बने हों वे सब यद्यपि पापी के पाप को जानते और परस्पर चर्चा करते हैं तथापि उनका जानना विख्याति में गिनती नहीं माना गया है अर्थात उनसे उपरान्तु चाहैं पापी के सहायक हों वा असहायक हों तिनमें पाप की चर्चा नहीं फैली हो तो यह पाप अनभिख्यात कहाजाता है॰ ऐसे पाप को करने के बादि भी दोषी पुरुष पछिता कर अपनी शुद्धि के लिये यदि प्रायश्चित्त करना चाहै सो छिपौआ व्रत साधै—तहां—जो ऐसापुरुष आपही धर्मशास्त्रमेंप्रवीण होय सो औरसे न कहिकर आपही अपने निमित्त पर यथा योग्य प्रायश्चित्त विचारै॰ जो धर्मशास्त्र को न जानता हो सो अन्य धर्मज्ञों के पास जाकर अपना पाप सुनाये विना किसी और के बहाना से प्रसंग छेडिकर इस तरह बूझै कि जिसकिसी ने गुप्त पाप किया हो अर्थात॰ ब्रह्महत्या॰बाल हत्या॰ मातृ भगिनी गमन॰ परदार गमन॰ सुरापान आदि जो कुछ पाप किया हो तिसका नाम धरिके बूझै कि इसमें उसको रहस्य प्रायश्चित्त क्याकरना चाहिये॰ या जिज्ञासुता की रीति से ही बूझै कि अमुकामुक पाप छिपौआँ जिनपर होजायँ तिनका गुप्त भावही से क्या क्या प्रायश्चित्त होता है ॥ ० ॥ इसी प्रकार से स्त्री और शूद्र भी औरों से बूझिके रहस्य प्रायश्चित्त का स्वरूप ज्ञान कर सके हैं इसीसे उनको भी करने का अधिकार सिद्ध होगया॰ इसपर यह न कहिना चाहिये कि रहस्य प्रायश्चित्तों के स्वरूप प्रायस् जपादिकों की प्रधानता से निर्णीत हुये हैं तिससे स्त्री और शूद्रों को विद्या पढने का अधिकार न होने से इन प्रायश्चित्तों का अधिकारही नहीं॰ क्योंकि इन प्रायश्चित्तों में जपादिकों की निर्विकल्प ही कुछ प्रधानता नहीं बल्कि उनमें दान करना आदि भी उपदेश किया जायगा और गौतम के कहे प्राणायाम आदि का भी करना संभव है तिससे भी॰ बल्कि स्त्री शूद्रों से उपरान्तु औरों को भी जपादिक में पूरा अधिकार नहीं पाया जाताहै क्योंकि मन्त्र और मन्त्रका देवता उसकाऋषि

समझना यह मिताक्षराकारनेकहा॥ यत्तुवृद्धविष्णुनोक्तं=ब्रह्महत्यांकृत्वा ग्रामात्प्राचीमुदीचींवा दिशमुपनिष्क्रम्यप्रभूतेन्धनेनाग्निंप्रज्वाल्याघमर्षणेनाष्टसहस्रमाहुतीर्जुहुयात्ततएतस्मात्पूतोभवतीति–तन्निर्गुणवधविषयमनुग्राहक विषयंवेतिमिताक्षरा=अर्थात्– वड़े विष्णु का जो कथन है कि–छिपी ब्रह्महत्या करिके ग्राम से बाहर पूर्वदिशा या उत्तर दिशामें निकसिके वहुत ढेर ईंधनकी अग्नि जलायके अघमर्षण मन्त्र से आठ हजारआहुतें होमै तिससे इस पाप से छुटि जाता है– मिताक्षराकार कहिते हैं कि यह प्रायश्चित्त सुगम है तिससे उसके लिये समझना जिसने निर्गुण ब्राह्मण को मारा हो अथवा गुणवान् को मारने वाले का अनुग्राहक जो कोईबना हो तिसके लिये भी॥ यत्तुयमेनोक्तं=त्र्यहंतूपवसेद्युक्तस्त्रिरह्नोऽभ्युपयन्नपः मुच्यते पातकैः सर्वैस्त्रिर्जपित्वाऽघमर्षणम्–तद्गुणवतोहंतुर्निर्गुणवधविषयं प्रयोजकानुमंतृविषयंवेति मिताक्षरा=अर्थात्–यम ने जो कहा है कि–तीनि दिन उपवास करै त्रितेंद्री होके फिर तीन दिन जल के आहारसे रहै तहां तीन वार अघमर्षण को नित्य जपता रहै तो सभीपातकों से छुटि जाता है–मिताक्षरा कार कहिते हैं कि यह प्रायश्चित्त उससे भी सुगम है तिससे उसके लिये समझना जो मारने वाला गुणवान् होकर उसने निर्गुणी ब्राह्मण को मारा हो अथवा गुणवान् को मारने वाले के साथी सहायक प्रयोजक अनुमन्ता बने हों तिनके लिये भी॥ यत्तुहारीतेनोक्तं=महापातकातिपातकानुपपातकानामेकतः संपातेवाऽघमर्षणमेवत्रिर्जपेदिति–तन्निमित्त कर्तृविषयमिति मिताक्षरा=अर्थात्– हारीत ने जो कहा है कि जब किसी पर एक साथ ही सब तरह के पाप आपरैं किन्तु महापातक अतिपातक अनुपपातक आदि एक साथ ही बनि परैं या इन में से कोई एक तरह का पाप आपरै तब अघमर्षण को ही तीन तीन बार कुछ दिन जपै–मिताक्षरा कार कहिते हैं कि– यहप्रायश्चित्त केवल निमित्त कर्ता पर आरूढ होना चाहिये (निमित्तकर्ता वही कहाता है जिसने हाथ से नहीं मारा परन्तु किसी तरह से हृदय को दुखाया जिससे वह आप ही वूड़ि मरा या विष भक्षण किया इत्यादि अनेक भेदहैं॥ मिताक्षरा कार कहिते हैं कि जैसे दस पाँच मुनीश्वरों के वचन यहां पर मैंने लिखे और उनके न्यूनाधिक भाव से विषय भेदपर विभागकरि दिखलाया तैसे और भी स्मृतियों के वचन ढूँढि कर विभाग कर लेना चाहिये क्योंकि ग्रन्थ बढ़ि जानेके डरसे यहां सब नहींलिखे जाते हैं• फिर कहिते हैं–कि– यही प्रायश्चित्त रूपी व्रतों का समूह जिस जिस परिमान से लिखा गया तिसमें से एक चौथाई कम करिके तीन पाद उसके लिये

समझना कि जिसने यज्ञ कार्य में लगी हुई स्त्री का वध कियाहो या यागस्थक्षत्री पुरुष का या यागस्थ वैश्य पुरुष का या आत्रेयी का वध किया हो (आत्रेयी के लक्षण तीसवें परिच्छेद में देखो ॥ ३०२ ॥

योगीश्वर ने इसी ३०२ मूल श्लोक में ब्रह्महत्या पर तीन दिन का व्रत कहाथा अगिले मूल श्लोक में विकल्प के लिये उसी ब्रह्महत्या पर एक ही दिन का व्रत कहैंगे परन्तु इन दोनों विधान को छोटा मत समझना क्योंकि दोनों में जल का निवास भी दर्शाया है जो सबसे बड़ा तप होता है ॥

(प्रायश्चित्तान्तरंब्रह्मघ्नस्यैव)

लोमभ्यःस्वाहेत्यथवादिवसंमारुताशनः। जलेस्थित्वाऽग्निंजुहुयाच्चत्वारिंशत्घृताहुती ३०३ ॥

अर्थः—अथवा दिन भर वायु भक्षण किये जलमें स्थित करिके लोमभ्यः स्वाहा इत्यादि मंत्रोंसे घृतकी चालीस आहुतें अग्निमें होमै=अर्थात्—अथवा जो पहिले कहे प्रायश्चित्तको न करना चाहै तौ यह करै कि एक दिन रात भर उपवासरूपी व्रत किये हुये दिवस बीतिजाने पर संध्या समयसे लेकर तमाम रात्रिभर जलमें बैठै फिर प्रातःकाल जलमेंसे निकसिके अग्निको वेदीपर प्रज्वलित करै तिसमें चालीस आहुतियां घीसे होमै उन्हीं मंत्रोंसे कि जो पहिले (ब्रह्महत्यावाले प्रकरणके बीच उनतीसवें २९ परिच्छेदके प्रारम्भसे २४७ दोसौसैंतालिस के मूलश्लोक और उसी की अधिकोक्ति में) लोमभ्यः स्वाहा इत्यादि आठ मंत्र लिखे गयेथे उन प्रत्येक से पांच२ आहुतें छोड़ै सो आठ पंजे चालीस होतीहैं—यद्यपि एकही दिन कहा तथापि इसको पूर्वोक्तके बराबर समुझना जलमें निवास एक राति भर करने के बड़प्पन से यह प्रायश्चित्त छोटा नहीं ॥ ३०३ ॥ इतिब्रह्मवधमहापातकस्यप्रायश्चित्तं ॥

अथब्रह्महत्याव्यतिरिक्तमहापातकत्रयरहस्यानां तत्संसर्गिणोपिरहस्यप्रायश्चित्तविवेकोऽयंपरिच्छेदः ऊनाशीतितमः (७९)

—※—

इस परिच्छेद में ब्रह्महत्या से उपरान्त महापातक तीनों भांति के जो छिपिकर हुयेहों तिनके जुदेजुदे प्रायश्चित्त रहस्य और संसर्गी के प्रायश्चित्त भी सब जाने जायँगे॥

(सुरापानप्रायश्चित्तं)

त्रिरात्रोपोषितोहुत्वाकूष्माण्डीभिर्घृतंशुचिः। ३०४ (पूर्व्वार्धोऽयं)॥

अर्थः-तीन रात्रि उपवासकिये कूष्माण्डी ऋचाओंसे घृत होमिके शुचिहोय= अर्थात्-सुरा पीकर जो अशुचि हुआहो वह भी चालीस आहुतें ऊपर के श्लोक में दर्शाई हुई होमिके पवित्र होताहै परन्तु इसके मंत्र जुदेहैं कि जैसा अधिकोक्ति में देखो॥ ३०४॥

३०४ अधिकोक्तिः-(कूष्माण्डीभिःयद्देवादेवहेडनमित्याद्याभिः कूष्माण्डदृष्टाभिरनुष्टुभमंत्रलिंगदेवताभिऋग्भिश्चत्वारिंशतघृताहुतीर्हुत्वाशुचिर्भवेदितिमिताक्षरा) अर्थात्-मूल श्लोकमें यद्यपि आहुतियोंकी संख्या कुछ नहीं कही परंच कूष्मांडी ऋचाओं से घृत होमना कहा तिसका निर्णय मिताक्षराकार ने यह लिखा है कि (यद्देवादेवहेडनं) इत्यादि ऋग्वेद की ऋचायें जो कूष्माण्डनाम ऋषिकी कही कूष्मांडी कहाती हैं जिनका अनुष्टुभ मन्त्ररूप देवताकहाताहै तिनसे चालीस आहुतें घीकी होमिके वह पुरुष शुद्ध होजावै जिसने छिपमा सुरापान किया हो॥ बौधायनेनाप्युक्तं=अथकूष्मांडदृष्टाभिरनुष्टुब्भिर्जुहुयात् योऽपूतइवात्मानंमन्येत यदर्वाचीनमेनोभ्रूणहत्यायास्तस्मान्मुच्यते अयोनौवारेतःसिक्त्वाऽन्यत्रस्वप्नात्=अर्थात्-बौधायनजी प्रथम अथशब्दसे अन्वादेश प्रकट करतेहैं कि यह प्रायश्चित्त चाहिये किन्तु कूष्मांड को देखी विचारी अनुष्टुभ मंत्ररूपो ऋचाओंसे वह पुरुष होम करै जो अपने शरीर को अपवित्र मानता हो अर्थात् जिसने सुरा आदि कोई अशुद्ध वस्तु

खाई पीहो और जो इसी जन्मका किया पाप कोई गर्भ हत्या बालहत्या सम्बन्धी होय तिससे छूटिजाताहै अथवा स्वप्नमें वीर्यपात होनेसे उपरान्त जो बढ़िया पापहै कि जिसने अयोनिमें वीर्यपात कियाहो तिस पापसे भी छुटिजाताहै (यहांपर अयोनि कहिनेसे यह तात्पर्यहै कि योनिके विनाही धरती आदि पर वीर्यपातकिया हो यद्वा पुरुषके साथ मैथुन करिके वीर्य गुदामें सींचाहो सो भी अयोनिमें सींचना कहाजासक्ताहै यद्वा चाण्डाली वा गुरानी आदि अगम्या स्त्रियोंकी योनिहीमें सींचाहो सो भी अयोनिमें सींचना तात्पर्यहै क्योंकि वहयोनि उसकेवीर्य सींचनेयोग्य नहींहै तिससे अयोनि इसी शब्दसे उपलक्षित करी (परन्तु सोतेसमय स्वप्नमें किसी स्त्री के ध्यानसे अथवा विना ध्यानके आपही वीर्य गिरजाय तिसकेलिये यहप्रायश्चित्त नहींहै—अन्यत्र स्वप्नात्—इसअपवाद रूपी छूटका यही तात्पर्यहै) और यह भी तात्पर्यहै कि जिसने सोते समय अपनी कामनासे किसी स्त्री का स्वरूप ध्यान करिके उसकी योनि में वीर्य सींचा होय तो यह अयोनि ही में सींचना कहावेगा क्योंकि यथार्थसे कोई योनि वहांपर साक्षात्कार नहींमौजूदहै तिससे अयोनिकही गई अर्थात् उसके सध्ये यही प्रायश्चित्त करना चाहिये जो बौधायन मुनिनेकहा—बौधायनके इस वचनमें (अयोनौवारेतःसिक्त्वा) इसी पदसे अनेक अर्थ जो उत्पन्न हुये तिसका यहीकारणहै कि उन्होंने वा शब्द इसी निमित्तपर दर्शायाहै कि सब तरहके अर्थ भेद समुझेजायँ ॥ ० ॥ यत्तुमनुना=कौत्संजप्त्वाऽपइत्येतद्वासिष्ठंच प्रतीत्यृचम् माहेन्द्रंशुद्धवत्यश्चजपुरापोऽपिविशुद्ध्यति—इतिमासंप्रत्यहंयोडशकृत्वोऽपनःशोशुचदघमित्यादीनामन्यतमस्यजपउक्तः तत्त्रिरात्रोपवासकूष्माण्डहोमाशक्तस्यवेदितव्य इतिमिताक्षरा=अर्थात्—मिताक्षराकार ऊपरकी व्यवस्था कहिकर फिर कहिनेहैं कि—मनुने जो कौत्स आदि श्लोकमें (अपनःशोशुचदघं) इत्यादि अनेक ऋचायें दर्शाइकार उनमेंसे किसी एककी ऋचाका जप एक महीनाभर प्रत्येक दिनमें सोरह सोरह वार जपना कहा सो उसके लिये समुझना कि जिसपर योगीश्वर का बताया तीन दिन उपवास और एक दिन कूष्मांडी मंत्रों से चालीस आहुतें घी की न होसकैं (यहां पर सोचना चाहिये कि तीन चार दिनकी अवधि के अनुसार प्रायश्चित्त एक महीना की यद्यपि बहुत बड़ी होती है तथापि आचार्यने उसको इसलिये से छोटी ठहिराया है कि इसमें केवल सोरहमन्त्रों का जपही करना होगा किन्तु उसमें अनुसार तीन दिनका उपवास और चौथे दिन चालीस आहुतें देना बहुत कठिन प्रतीत होता है) इसीलिये जो कोई इस कठिनाई को न साधि सकै सो

उसको करै यह कहा—परन्तु मनुके उस वचन का यह तात्पर्य नहीं है कि सोरह मन्त्रोंसे अधिक न जपै वल्कि यहतात्पर्य है कि जितना अधिक जप होसके उतना करै पर कम से कम सोरह बार अवश्यही किसी एक मन्त्र का उचारण कियाकरै कि जिस मन्त्र का नियम प्रथम दिन से स्वीकार किया गया हो=अब=उस कौत्स आदि श्लोक वाली टीका यहां लिखकर भाषा अर्थ भी दर्शाते हैं=यथा= कौत्स मिति॰कौत्सेन ऋषिणा दृष्टं अपनःशोशुचदघं इत्येतत्सूक्तं—वशिष्ठेन ऋषिणादृष्टंच प्रतिस्तोमेभिरुषसंवशिष्ठा इत्येवं ऋचं—माहित्रं॰ महित्रीणा मवोस्त्वित्येतत्सूक्तं—शुद्धवत्य एतानिंद्रंस्तवाम इत्येतास्तिस्रऋचः। प्रक्रांतमासमहरहः षोडशकृत्वोऽपिजपित्वासुरापोऽपिविशुद्ध्यति। अपिशब्दात् आतिदेशिक सुरापान प्रायश्चित्ताधिकृतोऽपि २४६ श्लोक अध्यायः ११ मनुमुक्तावल्या मितिपाठः=अर्थात्—(अपनः शोशुच दघं) यही सूक्त जो कौत्स ऋषि ने वेद में निश्चय किया था तिसको जपै—या—(प्रतिस्तोमेभिरुष संवशिष्ठा) यह ऋक् मन्त्र जो वेद में वशिष्ठ ऋषि ने प्रकाश किया था तिससे यह वाशिष्ठ नाम कहाता है तिसको जपै—या—(महित्रीणामवो स्तु) यह इतना सूक्त जो महित्र ने प्रकाश किया था तिसको जपै—या—(शुद्धवत्य एता निन्द्रं स्तवाम) ये इतनी तीन ऋचायें जो शुद्धवती नाम से कहाती हैं तिनको जपै=कितना जपै या कवतक जपै यह सन्देह खड़ा रहा— तिसके लिये जैसा इससे पहिले श्लोक में मनु कहि चुके हैं वही एक महीना की अवधि तक सोरह सोरह मन्त्रों का जप रोज करना सूचित हुआ क्योंकि उसमें सोरह प्राणायाम करने कहे थे उतना जप करने से भी सुरा पान का पातक मिटि जाता है॥ अब मिताक्षरा-एतच्च कामतः पैष्ट्याःसकृत्पाने॰ गौडीमाध्व्योस्तु पानावृत्तौ वेदितव्यं=अर्थात्=इस पर मिताक्षरा कार कहिते हैं कि यह प्रायश्चित्त उसकेलिये समझना जिसने पैष्टी सुरा जो अन्नके संयोगसे वनतीहै विना इच्छाके एकहीवार पीलईहो और गौड़ी जो गुड़सेवनतीहै माध्वी जो महुआसेवनतीहै इनको इच्छासहित अनेकवार पीलियाहो तिसकेलियेभी॥०॥ फिरकहिते हैं कि जिसनेकामनाकेसाथ सुरापानकिया तिसको अग्रोक्त मनुका कहा प्रायश्चित्त है=यथा=मंत्रैःशाकलहोमीयैरब्दंहुत्वाघृतंद्विजः सुगुर्वप्यपहंत्येनोजप्त्वावानमइत्यृचम=अर्थात्—द्विजाती पुरुष शाकलहोमी नामके वेद मंत्रों से एक साल भर घी का होम करिके वड़े से वड़े भी पाप को विनाश करता है अथवा (नम इन्द्रश्च) इस ऋचा को एक साल भर जपि के पाप को धो देता है= अर्थात् (देव कृतस्यैनस) इत्यादि आठ मन्त्र वेद में शाकल होमी कहाते हैं तिनसे

रोज रोज घी होमि के एक वर्ष पूरा करै अथवा (नम इदुग्रं नम आवि वास) इस ऋचा से जप करते हुये एक साल पूरा करै दोनों तरह से महापातक नाश होजाते हैं (यहां पर नम इत्यादि ऋचाका दो जगह दोहरा रूप मनु मुक्तावली और मिताक्षरा के पाठ भेदसे होगया है तिसका ठीक शोधन वेदहीसे होसक्ता है ॥ ० ॥ मिताक्षरा-कार फिर कहिते हैं कि मनु का अग्रोक्त एक दूसरा जो वचन है कि (महापातक संयुक्तोऽनुगच्छेद्गाःसमाहितः अभ्यस्याब्दंपावमानीर्भैक्ष्याहारोविशुद्ध्यति) सो इस वचन का प्रायश्चित्त उसके लिये समझना कि जिसने बारम्बार उसी महापापका अभ्यास किया हो यद्वा अनेक महापापों का समुच्चय एक साथ किया होय=और अर्थ इसका यही है कि यदि कोई द्विजाती महापातकों से संयुक्त होजाय सो एक साल भर अपने चित्त को लगाकर गौओं के पीछे पीछे फिरै और (पावमानीः) इस ऋचाका जप बारम्बार अभ्यास करतार है और भिक्षा मांगि भोजन किया करै तौ यह शुद्ध होजाताहै (सुरापानका प्रायश्चित्तकिये पीछे एकदुधारगाय देनीचाहिये सो३०५मूलश्लोक में देखना॥ यहपूर्वार्ध मूलश्लोककी अधिकोक्ति पूरीहुई ३०४॥ उत्तरार्ध से सुवर्ण हरने का प्रायश्चित्त नीचे कहेंगे ॥

इतिसुरापान महापातकस्य प्रायश्चित्तं ॥

(अथसुवर्णस्तेय प्रायश्चित्तं)

ब्राह्मणस्वर्णहारीतुरुद्रजापीजलेस्थितः३०४

अर्थः—तु—अव्यय के योग से तीन रात्रि का उपवास जो पहले कहिचुके वह इसमें भी लगता है तिससे—ब्राह्मण का सुवर्ण हरने वाला महापातकी पूर्वोक्त तीन दिन का उपवास किये जल में बैठा हुआ रुद्र जप करने से विशुद्ध होता है अर्थात (नमस्तेरुद्रमन्यव) इत्यादि शत रुद्रीका जप तीनदिन जलमें बैठके करै ॥ ३०४ ॥

३०४अधिकोक्तिः=शातातपने एक जुदी विशेषताके साथ यहीकहा है=यथा =मद्यम्पीत्वागुरुदारांश्चगत्वास्तेयं कृत्वाब्रह्महत्यांचकृत्वा भस्माच्छन्नोभस्मशय्यां शयानोरुद्राध्यायीमुच्यतेसर्वपापैः=इत्यादि—मद्य पीके या गुरुदारा संगम करिके या चोरी करिके या ब्रह्महत्या करिके रुद्री पाठ करतेहुये सभी पापोंसे छुटिजाता है जो देहमें भस्म रमाये और भस्महीं पर लोटिपोटि रहिकर पाठकिया करै=यहां भी तीनिही दिन समुझने जो ऊपर कहिचुके और कितना जाप करै इस अपेक्षा

में ग्यारह आवृत्ति करनी चाहिये क्योंकि (एकादश गुणान्वापिरुद्रानावर्त्य धर्म्मवित महापापैरपिस्पृष्टो मुच्यतेनात्रसंशयः) यह अत्रि मुनि का वचन प्रमाण है कि धर्म्म का जाननेवाला यदि महापापों से भी संयुक्त होजाय और उस से कोई और प्रकारका प्रायश्चित्त न होसके तो वह ग्यारहगुणारुद्रोंका पाठकरिके भी छुटि जाताहै इसमें संशय नहीं ॥ ० ॥ यत्तुमनुना=सकृज्जप्त्वाऽस्यवामीयं शिव संकल्पमेवच सुवर्णमपहृत्यापिक्षणाद्भवतिनिर्म्मलः (इतिद्विपंचाशदृक्संख्याकस्य-अस्यवामस्यपलितस्यहोतुरिति सूक्तस्य-तथा-यज्जाग्रतोदूरमुदैतुदैवमिति शिवसंकल्पस्यवा-सकृज्जपउक्तः सोऽत्यन्त निर्गुण स्वामिक स्वर्ण हरणे गुणवतोऽपहर्तुर्द्रष्टव्यःसुवर्णान्न्यून परिमाण विषयोऽनुग्राहक प्रयोजक विषयोवा-आवृत्तौतु महा पातक संयुक्तोऽनुगच्छेदित्यादिनोक्तन्द्रष्टव्यमिति मिताक्षरा= अर्थात-मिताक्षराकार ऊपरकी व्यवस्थासे निपटिके फिर कहितेहैं कि०जो मनुने सकृज्जप्त्वा आदि वचनमें दर्शाये मंत्रके एकही बार जप करनेसे क्षणमात्रमें शुद्धहोजाना कहा सो उसके लिये समझना जो अत्यन्त निर्गुण अर्थात नित्य नैमित्तिक यज्ञों को निपटही न करने वाले ब्राह्मण का सुवर्ण जिस किसी गुणवान अर्थात यज्ञादि कर्म करने वाले ने गुप्तीअर हरणहो अथवा इन लक्षणों के विना भी सुवर्णके मुख्य परिमान से न्यून सोना हर लिया हो अथवा मुख्य चोर से उपरान्त जो कोई उस चोर का अनुग्राहक प्रयोजक आदि कोई सहायक हो तिसकेलिये भी समझना क्योंकि प्रायश्चित्त अति छोटा है-और जितने कई बार सोना हरा हो तिसके लिये ऊपरली अधिकोक्ति के अन्त में महापातक संयुक्तो आदि मनु के वचन वाली व्यवस्था देखना- मिताक्षराकार ने प्रायश्चित्त को इस हेतु से अति छोटा कहा कि मनुने एकही वार मन्त्र का जपना और क्षणमात्र में पापीका निर्मल होजाना दर्शाया है-परन्तु-मनु मुक्तावली टीका में एक महीना भर हररोज एकबार मंत्र जपना कुल्लूक भट्टने दर्शायाहै-तिससे अब दोनों टीकाके भाषा अर्थलिखने आवश्यक होहरे-तहां पहिले मिताक्षरा की पंक्ती जो ऊपर लिखि चुके तिनका यह अर्थ है कि मनु ने-सकृज्जप्त्वा आदि इस वचन में ५२ बावन ऋचा की संख्या वाले-अस्यवामस्य पलितस्य इत्यादि सूक्त का जप एकाही बार सकृत शब्द से दर्शाया-तथा-यज्जाग्रतोदूरमुदैति इत्यादि शिवसंकल्प नामक मन्त्रका जप एकही बार सकृतशब्द से दर्शाया और एक ही वार एक मंत्र जपने से उसी क्षण मात्र में पापी का निर्मल होजाना कहा=तथापि=इस व्याख्या को हरतरह अनुचित जानि के कुल्लूक भट्ट

ने यह व्याख्या लिखी है कि (प्रकृतत्वात् मासमेकं प्रत्यहमेकवारं (अस्यवामस्येत्यादिक मस्यवासीयंसूक्तं जपित्वा) शिव संकल्पंच (यज्जाग्रतोदूर मित्येतत्) वाजसनेय के यत्पठितं तज्जपित्वा सुवर्णं सपहृत्य क्षिप्रमेव निष्पापोभवति २५०) अर्थात्– कुल्लूक भट्ट कहिते हैं कि मनुके ग्यारहवें अध्याय का दो सौ पचासवां यह श्लोकहै और २४८ दोसौ अरतालिसके श्लोकमें एक महीना भर प्रायश्चित्त करनेका प्रसंग आचुकाहै उसी प्रकृत प्रसंगसे यहां भी एक महीनाभर हररोज एक वार अस्यवासीय नामक सूक्त जपना और शिव संकल्प नामक मंत्र भी जपना जो यजुर्वेदकी शाखा वाजसनेयनामके बीच कहीं आयाहै। तौ इसप्रायश्चित्तसे सुवर्ण का अपहर्ता भी क्षणात् निर्मल होताहै अर्थात् पूरे महीनाभर प्रायश्चित्त पूरा कर चुकनेके समयसे लेकर शुद्ध होजाताहै यह तात्पर्य क्षण शब्दका ठीकहै–वह नहीं कि एक मायतभर में शुद्ध होजाय जिससे प्रायश्चित्त अति छोटा समुझा गयाथा (सुवर्णास्तेय का प्रायश्चित्त किये पीछे एक दुधार गाय देनी चाहिये सो ३०५ मूल श्लोकमें देखना ॥ ३०४ ॥

इतिसुवर्णस्तेयमहापातकस्यप्रायश्चित्तं ॥

(अथगुरुतल्पप्रायश्चित्तं)

सहस्रशीर्षाजापीतुमुच्यतेगुरुतल्पगः गौर्देयाकर्म्मणोऽस्यान्तेपृथगेभिःपयस्विनी ३०५ ॥

अर्थः–सहस्रशीर्षा जपनेवाला गुरुतल्पगामी भी मुक्त होताहै इन सबको इस कर्मके अन्तमें पयस्विनी गाय भी जुदी देनी चाहिये=अर्थात्–जिसने छिपसा गुरु दारा गमनकियाहो जिसका भेद नहीं खुलनेपाया तौ यह पापी सहस्रशीर्षा आदि सोरह ऋचाओंवाला सूक्त जो नारायणका प्रकाश किया कहाताहै जिसका पुरुष देवता है अनुष्टुप् छन्दहै त्रिष्टुप्छन्द जिसका अन्तहै तिसको जपतेहुये उस गुरु पाप से छूटिजाताहै–और (पृथगेभिः) गुरुतल्पगामी तथा पूर्वोक्त सुरापानकारी और सुवर्णस्तेयी इन तीनोंको पृथक् जुदे अपने प्रायश्चित्त रूपी कर्मके समापन होनेपर बहुत दुधार गाय दूध देती हुई बछड़ा सहित दान करनी चाहिये ॥ ३०५ ॥

३०५अधिकोक्तिः=सहस्रशीर्षाजापी इसपदमें ताच्छील्य प्रत्ययहोनेसे आवृत्ति पाठ समुझागया है कि बारम्बार जपता रहै किन्तु एकही बार जपिके न चुपका होजाय–इसीका प्रमाण भी यमका यह वचनहै कि (पौरुषंसूक्तमावर्त्यंमुच्यतेसर्व्व

किल्विषात्) अर्थात्–पुरुष देवतावाला सूक्त जो सहस्रशीर्षा के नामसे कहिचुके तिसको वारम्बार जपिके सबतरह के पापोंसे मुचिजाता है॥ आवृत्तौचसंख्याऽपेक्षायामधस्तनश्लोकगताचत्वारिंशत्संख्याऽनुमीयते–अत्रापिप्राक्तनश्लोकगतं त्रिरात्रोपोषितइतिसम्बध्यते इतिचमिताक्षरा=अर्थात्–मिताक्षराकार यह भी कहितेहैं कि वारवार जपने मध्ये जो यह कहाजावै कि कितनी संख्यातक वारवार पाठ किया जाय और कितने दिन कियाजाय तौ फिर ३०३ तीनसौतीन के श्लोकमें ४० चालीसकी संख्या जो आहुतोंपर कही गई और ३०४ के श्लोकमें भी स्वीकार करी गई वही यहां भी पाठों पर अनुमान होतीहै और उसी ३०४ के श्लोकमें तीन रात्र उपवास करना कहाथा सो भी यहां समुझिलेना कि तीन दिन तक उपवास किये हुये सहस्रशीर्षा आदि सूक्तके पाठकी आवृत्ती करता रहै–इसवात का प्रमाण भी वृहत् विष्णुका यह वचनहै कि (त्रिरात्रोपोषितःपुरुषसूक्तजपहोमाभ्यां गुरुतल्पगः शुध्येत्) अर्थात्–तीन दिन व्रत कियेहुये पुरुष सूक्तका जप और होम इन दोकामों के करनेसे गुरु भार्या गामी शुद्ध होवे (तीनों पापियोंको गोदान करना ऊपर कहि चुकेहैं) मिताक्षराकार कहितेहैं कि यह प्रायश्चित्त जो कहागया सो इच्छाविना स्वतः वनिपरे पातक पर समुझना और आगिले वचनसे मनुका कहा प्रायश्चित्त भी इच्छाविनाके वनिपरे पातकपर समुझना=यथाहमनुः=हविष्यन्तीयमभ्यस्यनतमंह इतीतिच जपित्वापौरुषंसूक्तम्मुच्यतेगुरुतल्पगः (इत्येकादशाध्याये २५१ श्लोकः= अर्थात्–हविष्यन्तीयनाम के वेदोक्त मंत्रको वारम्वार अभ्यास करिके या नतमंह इत्यादि नामके मंत्रको या इतिमेमनः इसमंत्रको या पौरुषसूक्तको जपिके गुरुभार्यागामी शुद्ध होताहै (अक्षरार्थ केवल यहीहै सो लिखागया) परन्तु मनुमुक्तावली टीका और मिताक्षरामें इस वचनकी संस्कृतव्याख्या जैसी लिखीहैं और उनमें कुछ थोड़ासा अन्तर भी प्रतीत होताहै तिससे उन दोनोंको तद्रूप यहां दर्शातेहैं=तत्राहकुल्लूकभट्टः–हवीति–हविष्यन्तमजरंस्वर्विदामेकोनविंशतिंऋचः नतमंहोदुरितमित्यष्टौ हविष्यन्त इतिवा इतिमेमनः शिवसंकल्प इतिचसूक्तं सहस्रशीर्षा पुरुषइत्येतच्च योडशसूक्तंमासमेकंप्रत्यहमभ्यस्येतिप्रवणात्प्रकृतत्वात्षोडशाभ्यासेनजपित्वा गुरुदारगःतस्मात्पापान्मुच्यते–इत्येकादशाध्याये२५१श्लोकटीका=अथाचमिताक्षरायथा–हविष्यन्तीयमजरंस्वर्विदिति• नतमंहोनदुरितं इतिवा• इतिमेमनः– सहस्रशीर्षेत्येषामन्यतमस्य मासं प्रत्यहं षोडश षोडशऋचां चत्वारिंशत्संख्याकजपउक्तो मनुनासोयकामविषयएव=कामतस्तु=मंत्रैःशाकलहोमीयैरितिमनूक्तन्द्रष्टव्यं=अर्थात्–प्रथम

कुल्लूकभट्टकृत व्याख्यामें यह तात्पर्यहै कि–जिन जिन ऋचाओं वा सूक्तोंकी समस्या मनुके वचनमें उपस्थितहैं तिनकेसाथ अभ्यासकी आज्ञा लगीहोनेसे अनेकवार जप करना समुझागया और (कबतक या कितने वार इस प्रश्नकी अपेक्षामें) पहिले २४८ के श्लोकमें रोज रोज सोरहवारका नियम और एक महीनें तक प्रायश्चित्त करनेका नियम जो मनुजी कहिचुकेहैं उसी प्रकृतआज्ञासे यहां भी एक महीनाभर हररोज सोरहवार कोई सा एक मंत्र निरन्तर जपिलिया करै तौ गुरुदारगामी शुद्ध होजाताहै=इसी वचनकी व्याख्यामें मिताक्षराकारने इतना भेद अधिक याज्ञवल्क्य जीके वचनके अनुसार और भी दर्शायाहै कि=उक्त मंत्रोंमें कोईसा एक मंत्र महीना भर तक सोरह सोरह चालीसकी संख्यासे गुणाकर जप किया करै क्योंकि योगीश्वरके ३०३ तीनसौतीनवाले मूलश्लोकमें चालीसका नियम आचुकाहै तिससे सोरहको चालीसगुणा करनेसे ६४० छःसौ चालीस मंत्र नित्यम्प्रति जपने ठहराकर पीछेसे कहाहै कि यह प्रायश्चित्त भी उसीपर आरूढ होगा जिसपर विना इच्छा के पाप होगयाहो=किन्तु कामना से किये हुये पाप मध्ये=मनुका दूसरा वचन जो पहले भी लिख चुके हैं सो देखौ=यथा=मंत्रैःशाकलहोमीयै रब्दंहुत्वाघृतंद्विजः सुगुर्वप्यपहंत्येनोजप्त्वावानमइत्यृचम (इत्येकादशाध्याये २५६ मनुः=अर्थात–देवकृतस्य–इत्यादि वेदके मंत्र जो शाकल होमीय इस नामसे कहातेहैं तिनसे एक सालभर निरन्तर हररोज घी का होम करिके वह द्विजाती शुद्ध होजाताहै जिसने गुपतोअर बड़ेसे बड़ा भी पाप इच्छा सहित कियाहो• अथवा इस होमको न करसके सो (नम इन्द्रश्च इत्यादि) इस ऋचाको एक सालभर जपिके बड़ेपापको धो देवै ॥ ० ॥ मिताक्षराकार फिर कहितेहैं कि जिसने उक्त पापको इच्छा सहित कईवार कियाहो तिसकेलिये अग्रोक्त प्रायश्चित्त देखना कि जैसा षट्त्रिंशन्मतनाम के ग्रन्थका यह कथनहै=यथा=महाव्याहृतिभिर्होमस्तिलैःकार्योद्विजन्मना उपपातकशुद्ध्यर्थंसहस्र परिसंख्यया । महापातकसंयुक्तोलक्षहोमेनशुद्ध्यतीति (तदावृत्तिविषयमितिमिताक्षरा=अर्थात–जिसने सिर्फ उपपातक मात्र कियाहो ऐसे द्विजाती को उस पापकी शुद्धिकेलिये तिलोंसे एकसहस्र आहुतियोंकाहोम महाव्याहृतियोंमें करना चाहिये जो गायत्रीके साथ होतीहैं । परन्तु जिसने महापातक रूपी पाप कियाहो वह एक लक्ष आहुतियोंसे शुद्ध होताहै (सो यह एक लाख आहुतोंका होम उसीपर समुझना जिसने उसीपापको कईवारकियाहो यह मिताक्षराने निर्णयके निपटारा किया ॥ ० ॥ फिर कहितेहैं=यत्तुयमेनोक्तं=जपेद्वाप्यस्यवामीयंपावमानीरथापिवा कुन्ताप

स्वालखिल्यांश्चनिवित्सैयान्वृषाकपिम होत्रिंरुद्रान्सकृज्जप्त्वा मुच्यतेसर्वपातकैः (इतितद्व्यभिचारिणीविषयमितिमिताक्षरा=अर्थात–यमने जो कहाहै कि (अस्य वामस्यइत्यादिवेदमंत्रको) या (पावमानीनामकी ऋचाओंको) या (कुन्तापइत्यादिको) या (वालखिल्यनामकवेदके मंत्रोंको) या (निविश्वैयान्मंत्रोंको या वृषाकपिइत्यादि ऋचाको या होत्री आदि ऋचाको या रुद्रोंकेमंत्रोंको–इनमें किसीमंत्र को सकृत एकहीवार जपिके सर्व पापोंसे मुचिजाताहै (मिताक्षराकार कहितेहैं कि यद्यपि यमने गुरुदार गमन सम्बन्धी सभी पातकोंसे छुटि जाना कहा तथापि केवल उसकेलिये यह प्रायश्चित्त समुझना कि जिसने गुरु पिता आदिकी व्यभिचारिणी भार्यासे अज्ञानतामें संगम कियाहो क्योंकि एकहीवार जपना कहा तिससे यह प्रायश्चित्त अति छोटा प्रतीत हुआ=अत्रमर्यादाप्रियस्तु (विज्ञाता पुरुषोंको इसबात पर दृष्टि देनी चाहिये कि यहां पर यम का यह एकही वचन लिखा गया तिससे केवल सकृतशब्द देखनेसे एकहीवारकाजपना समुझागया परंच ऐसा नहीं समुझना किन्तु यमकी स्मृतिमें इससे पहिले वचनोंको देखना चाहिये जो कुछ संख्या और अवधि उनमें नियत होचुकीहोगी वही प्रकृत नियम इस अत्रोक्त वचनमें भी लिया जाता होगा जैसा पेंच अभी ३०४ तीनसौ चारकी अधिकोक्तिमें आचुकाहै कि मनु के ग्यारहवें अध्यायवाले २५७ श्लोकमें २५८ श्लोकसे सम्बन्ध चलाआताथा कुल्लूकभट्टी टीका से दर्शाया गया• अन्यथा एकही वार किसी एक मंत्रके उच्चारण करनेमात्रसे महापातक नहींधोयेजासक्ते हैं ॥ ० ॥ ऊपरकी व्यवस्था देकर मिताक्षराकार फिर कहितेहैं कि–मुख्य महापातक (गुरुदार गमन) से उपरान्त जो गुरुतल्प के अति देश मानेगयेहैं जिनका लक्षण २३२।२३३ दोसौबत्तीस तेंतीस की अधिकोक्तों सहित उन्हीं मूलश्लोकोंमें कहागयाथा• उन्हीं पातकोंको गुप्तीअर जिसने किया हो अथवा मुख्य गुरुतल्प के समान महापातक जो २३१ दो सौ इकतीस मूल श्लोक और उसी की अधिकोक्ति में दर्शाये गये थे तिनको जिसने गुप्तीअर किया हो जिन पातकों को ग्रन्थान्तर की व्यवस्था से पातक या अतिपातकनाम धरा गया हो तिन सबमें से किसी एक पापका करने वाला पौना प्रायश्चित्त सावे अर्थात जो कुछ इसी ३०५ तीन सौ पांच की अधिकोक्ति में प्रायश्चित्त कहागया हो तिसमें चौथाई कम करे=और=इन से भी हलके पातक जो ग्रन्थान्तर की व्यवस्था से उपपातकों में गिनती हों तिनको जिसने गुप्तीअर किया हो सो आधाही प्रायश्चित्त करे ॥ फिर कहिते हैं कि जो ऐसा विचार उस वर्तमान समय पर न

कर सके तौ विकल्प से अग्रोक्त हारीतका कहा प्रायश्चित्तभी कियाजासक्ता है= तथाच हारीतः=पातकातिपातकोपपातक महापातकानामेकतमे सन्निपातेवा अघमर्षणमेवत्रिर्जपेदिति=अर्थात्–पातक १ अतिपातक २ उपपातक ३ महापातक ४ इन चार प्रकारों में किसी एक प्रकार का पातक जिसने गुप्तचौर किया हो अथवा इन में से मिले झुले कई प्रकार के पातक इकट्ठे एकही पुरुष पर होगये हों तौभी जहां और कुछ प्रायश्चित्त न होसकाहो तहां अघमर्षण सूक्त मन्त्रही को तीनवार जपै (इसमें भी तीन वार का जपना एकही दिवस न समझि लेना अर्थात् इच्छा विना होगये पातक पर तीन दिवस या पाप के वड़ापन में एक महीना भर और इच्छा सहित किये पातक पर एक सालभर निरन्तर तीनवार जपना चाहिये कि जैसा निर्णय ऊपर होचुका है सो सव यहां भी हारीत के वचनपर समझना ॥०॥ सैंतीसवें ३७ परिच्छेद वाली २६१ दोसौ इकसठि की अविकोक्ति में (खुल्लम पातकों के प्रसंग से) मनुका यह वचन लिखा गया था कि (योयेनपतितेनैषां संसर्गंयातिमानवः सतस्यैवव्रतंकुर्यात्तत्संसर्गविशुद्धये) इन सव तरह के पातकियों में जिस किसी का संसर्ग हेलमेल जो कोई शुद्ध पुरुषसजै सोभी उसी पातकीके करने योग्य प्रायश्चित्त का व्रत साधै–विज्ञानेश्वर कहते हैं कि उसी पूर्वोक्त नियम से यहां भी रहस्य पापों के प्रायश्चित्तों पर समझ लेना कि जिस प्रकार के महापातकी का संग जिसने किया हो उसीका प्रायश्चित्त उसको भी गुप्तचौर कर्तव्य है और(यह न कहिना चाहिये कि पढाने आदि कामों का संसर्ग जो अनेक कर्ताओं से उत्पन्न होता है तिससे उसमें (रहस्यता) छिपौअर बना रहिना यह नहीं सिद्ध होता है) क्योंकि अनेक कर्ताओंका संबंध होने पर भी पर स्त्री गमन के समान छिपौअर होना सिद्ध होता है कि जैसे पर स्त्री संगम के समय भी वह पुरुष और स्त्री दो कर्ता तौ अवश्य ही उसमें रहाहुआ करते हैं तौभी जवतक उन दो से उपरान्त तीसरा या चौथा आदि कोई उस काम को नजानै तव तक (रहस्यता) एकांतता कही जाती है तिससे अवश्यही रहस्य प्रायश्चित्त भी लगाना है॥ जैसा उन महापातकिओं के संसर्ग निमित्तपर कहा गया तैसा अतिपातकी आदि औरों के संसर्ग में भी उन्हीं का प्रायश्चित्त उनके संसर्गी को करना चाहिये॥ ३०५ ॥

(इतिगुरुतल्पमहापातकप्रायश्चित्तं)

(इतिसर्वमहापातकरहस्यप्रायश्चित्तानांसमाप्तिः)

७८ अठत्तर के परिच्छेद में रहस्यों की साधारण मिली भुली मर्यादा कहिकर केवल ब्रह्महत्या के प्रायश्चित्त कहे गये फिर उनासी ७९ के परिच्छेद में सर्व महापातकों के प्रायश्चित्त कहे तिससे महापातकों का निपटारा यद्यपि होचुका परन्तु रहस्यों का प्रकरण अबतक नहीं पूरा हुआ किन्तु उपपातक आदि पापों को अगिले परिच्छेदों में देखना तब इक्यासी परिच्छेद के अन्त में जाकर इसप्रकरण की समाप्ति होगी॥

अथउपपातकादीनांप्रकीर्णकपर्यंतानांभेदाविशेषानांचसर्वेषांरहस्य प्रायश्चित्तप्रबोधकोऽयं परिच्छेदः अशीतितमः (८०)



इस परिच्छेद में सब तरह के उपपातक जो गोवध से आदि लेकर छप्पन प्रकार के प्रकाश प्रायश्चित्तों के स्थल में दर्शाये गये तिनके रहस्य प्रायश्चित्त यहां जाने जायँगे और भी प्रकीर्ण पापों पर्यंत अति छोटे पापों के प्रायश्चित्त इसी में मिल सकेंगे॥

(सर्वोपपातकादीनांप्रायश्चित्तं)

प्राणायामशतंकार्यंसर्वपापापनुत्तये उपपातकजातानामनादिष्टस्यचैवहि ३०६॥

अर्थः—सब पापोंकी अपनुत्तिकेलिये उपपातकोंसे उपजेहुयों के और अनादिष्टकेलिये भी प्राणायामोंका सैकरा करना चाहिये=अर्थात्—गोवध आदि ५६ छप्पनप्रकारके उपपातक जो २३४ दोसौ चौंतीस मूल श्लोक से लेकर २४२ दोसौ बयालिस तक दर्शायेगयेथे उनमेंसे जिस किसी कर्मको छिपीअर कोई करै तिनसे उपजे पापोंकी अपनुत्ति अर्थात् धोडारनेकेलिये एकसौ प्राणायाम करने चाहिये• तथा अनादिष्ट जिन पापोंके नामसे कोई रहस्य प्रायश्चित्त इसप्रकरण में न कहा गयाहो जैसे जातिभ्रंशकर संकरी करण मलिनी करण आदि नामोंके पाप जो मन्वादिस्मृतियों में विदितहैं तिनहीको छिपीआ कोई करिबैठे तिसके पाप धोनेके लिये भी प्राणायामोंका सैकरा करना चाहिये• तथैव सभी पापोंको धोडारने के

लिये भी प्राणायाम कियेजासक्ते हैं अर्थात् सर्व पाप कहिनेसे कोई पाप छूटा हुआ नहीं रहा किन्तु पूर्वोक्त महापातकों को आदि लेकर सबसे छोटे प्रकीर्णक पापों तक जितने पाप सृष्टिमेंहोतेहों तिनमेंसे चाहें कोईसाबडा या छोटापाप जिसकिसी ने छिपौआ कियाहो और प्राणायाम करनेका अभ्यास जिसको अच्छीतरहसे हो रहाहो तिसको अन्य प्रायश्चित्त करनेकी अपेक्षा अधिकनहींहै वहकेवल प्राणायाम साधनकरिके शुद्ध होसक्ताहै तहां इतनाभेदहै कि छोटेपापोंपर थोड़े और बड़े पापोंपर बहुत प्राणायामकरनेहोंगे तिसका ब्यौरा अधिकोक्ति में देखो ॥ ३०६ ॥

३०६ अधिकोक्तिः—महापातकोंमें कोईसा एक पातक छिपौआ जिसनेकिया हो तिसको चारसौ ४०० प्राणायाम करने चाहिये॰ जिसने अति पातकों में कोई पापकियाहो तिसको तीनसौ ३०० प्राणायाम करने चाहिये॰ जिसने अनुपातकों में कोई पाप छिपौआ कियाहो तिसको दोसौ२०० प्राणायाम करनेचाहिये उपपातकोंपर एकसौ १०० सलसें कहिचुके सोईकरे—इसरीतिसे प्राणायामकी संख्या में कल्पना करनी चाहिये—क्योंकि—प्रकाश प्रायश्चित्तों में यह एक नियम कहा गयाथा कि जिस महापातक पर जितना प्रायश्चित्त करना कहाहो उसी पापको यदि कोई ऐसे ढंगसे उत्पन्नकरें कि उपपातकोंकी गिनतीमें आजाय महापातकों की गिनतीमें न रहे तहां उस महापातकपर लिखा प्रायश्चित्त उसको सिर्फ चौथाई करनाचाहिये सब नहीं—उसी नियमके न्यायसे यहां भी यद्यपि उपपातकोंपर ठीक ठीक एकही सैकरा प्राणायामोंका लिखाहै तथापि पापोंके बड़ापनपर अधिकता होनी उचितहै=इसीप्रकार प्रकीर्णक नामकेपाप जो सबसेछोटे गिनेजातेहैं जिनका स्वरूप ७४ चौहत्तरिके परिच्छेद में वर्णन होचुकाहै कदाचित् उनमें से कोई पाप छिपौआ कियाहो तिसको सौ १०० प्राणायामसेभी कमतीकी कल्पनाकरनी चाहिये=इसीकल्पनाके अनुरूपआगे यमकीकही व्यवस्थादेखो=यथाहयमः=दशप्रणव संयुक्तैःप्राणायामैश्चतुःशतैः मुच्यतेब्रह्महत्यायाःकिंपुनःशेषपातकैः=अर्थात्—दश ओंकारोंसे संयुक्त प्राणायाम चारसौ ४०० संख्या तक (जितने दिनोंमें होसकें) साधन करनेसे ब्रह्महत्या से भी छूटिजाताहै फिर और पापोंसे छुटिजाना क्या बड़ी बातहै कुछ नहीं=इसी व्यवस्थापर बौधायनमुनिने कुछ विशेष एक जुदाप्रकार भी दर्शाया है=यथा=अपिवाद्वक्षुःश्रोत्रत्वग्घ्राणमनोव्यतिक्रमेषुत्रिभिःप्राणायामैःशुद्ध्यति १ शूद्रस्त्रीगमनान्नभोजनेषुपृथक्पृथक्सप्ताहंसप्तप्राणायामान्धारयेत् २ अभक्ष्याभोज्यामेध्यप्राशनेषुतथाऽपण्यविक्रयेषु मधुमांसघृततैल लाक्षालवणरसान्नवर्ज्येषु-

श्वाध्यन्यदेवंयुक्तंद्वादशाहंद्वादशद्वादशप्राणायामान्धारयेत् ३ अथपातकोपपातकव र्जंयच्चान्यदेवंयुक्तं अर्द्धमासं द्वादश२ प्राणायामान्धारयेत् ४ अथपातकपतनीयवर्ज्जं यच्चाप्यन्यदेवंयुक्तम्मासंद्वादश२प्राणायामान्धारयेत् ५ अथपातकवर्जंयच्चान्यदप्येव युक्तं द्वादशार्द्धमासान् द्वादश२प्राणायामान्धारयेत् ६ अथपातकेषुसंवत्सरं द्वादश २ प्राणायामान्धारयेत् ७ इति वौधायनः (अस्यचमिताक्षरायां व्यवस्था यथा) तत्र वाक्चक्षुरित्यादिनाप्राणायामत्रयंप्रकीर्णकाभिप्रायं १ शूद्रस्त्रीगमनान्नभोजनेत्यादि नोक्ताएकोनपंचाशत्प्राणायामाउपपातकाविशेषाभिप्रायाः २ तथाऽभक्ष्याभोज्ये- त्यादिनोक्ताश्चतुश्चत्वारिंशदधिकशतप्राणायामाअप्युपपातकविशेषाभिप्रायाएव ३ अथपातकोपपातकवर्जमित्यादिनोक्ताः साशीतिशत प्राणायामाजातिभ्रंशकराद्य भिप्रायाः४ अथपातकपतनीयवर्जमित्यादिनोक्ताःषष्ठ्यधिकशतत्रयप्राणायामाःशेष वाद्युपपातकाभिप्रायाः५ अथपातकवर्जमित्यादिनोक्ताःषष्ठ्यधिकशतसहितैकसहस्र संख्याकाःप्राणायामा अतिपातकानुपातकाभिप्रायाः ६ अथपातकेष्वित्यादिनोक्ता विंशत्यधिकशतत्रययुक्ताश्चतुःसहस्रप्राणायामामहापातकविषयाइतिमिताक्षराका राः ७ =अर्थात्—वौधायन का बहुत बडा वाक्य जिसके बीच बीच सात अंक देकर जुदे सात भेद मर्यादा प्रिय लेखकने अर्थों की सुगमता चाहिके करदिये हैं प्राचीन ऋषि वाणी और दूरदेशी देशान्तर बोलचाल की तरासपर संस्कार उसका होनेके हेतुसे आधुनिक वा अत्रत्य संस्कृत वाणीकी अन्वय परिपाटीसे अर्थलगाना उसका भ्रामकहै क्योंकि अर्थ लगानेसे मुख्य प्रयोजनमें व्यतिक्रम आजाताहै—इसीहेतु से मिताक्षराकारने एक निराली व्यवस्थाके साथ उसका गोल गोल फलादेश प्रकाश कियाहै उसीके भाषा अर्थ ब्योरेवार दर्शातेहैं समुझो कि—आप वाक् चक्षू आदि प्रथम भेदके लेखमें सिर्फ तीन प्राणायाम करने जो वौधायनजीने कहे तिनको प्र- कीर्णक नामके अति तुच्छ पापोंपर समुझना जिनका स्वरूप ७४वोंहत्तरिके परि- च्छेद मे दर्शाया गयाथा १ ॥ एवं शूद्रस्त्री गमनान्न भोजन आदि द्वितीय भेदमें सात दिन सात सात ४९उनचास प्राणायाम करने जो कहे तिनको सबसे छोटी किसमके उपपातकों पर समुझना क्योंकि (उपपातक मुख्य छप्पनभांतिके २३४ दोसौ चौं- तीसमूल श्लोक से लेकर कहे गये इन से उपरान्त भी छोटे मोटे अनेक होते हैं) उनमे जो सब से छोटी किस्म समुझी जाय तिसका यहां प्रयोजन देखि परता है २ ॥ एवं अभक्ष्या भोज्य आदि तृतीय भेद में बारह दिन बारह बारह १४४ एकसौ चवालिस प्राणायाम जो कहे तिनकोभी जुदे उपपातकोंपर समझना अर्थात

(छोटी किस्म को दूसरे भेदमें कहि चुके उनसे कुछ बड़े उपपातक यहांपर समझे जाते हैं) जो मध्यम किस्म के होते हैं ३ ॥ अथ पातकोपपातक आदि चतुर्थ भेद में पन्द्रह दिन बारह बारह १८० एक सौ अस्सी प्राणायाम जो करने कहे तिनको जाति भ्रंशकर संकरी करण मलिनी करण आदि नामोंके कुछ बड़े उपपातकोंपर समझना (क्योंकि जैसे क्रमसेप्राणायाम अधिकहोतेआतेहैं तैसेही पापोंमें बड़ापन पाया जाता है ४ ॥ अथ पातक पतनीय आदि पाँचवें भेद के पाठ में तीस दिन बारह बारह ३६० तीन सौ साठि प्राणायाम जो कहे तिनको गोवध आदि बहुत बड़े उपपातकों पर समझना (केवल उपपातकों की चार किस्में छोटी बड़ी इस प्रयोजन पर करी गई ५ ॥ अथ पातक वर्ज आदि छठे भेदके पाठ में छः महीने तक बारहबारह २१६० दो हजार एकसौ साठि प्राणायाम जो कहे तिनको अतिपातक और अनुपातक दोनों किस्म के पापोंपर समझना (ये दोनों किस्मैं यद्यपि सभी उपपातकों से बड़ी हैं तथापि महा पातकों से छोटी हैं) इन पातकों के सब जुदे दर्जो के नाम भेद समझने चाहिकर २४२ दोसौ बयालिस की अधिकोक्तिको देखो ६॥ अथ पातकेषुसंवत्सर आदिसातवें पाठ में सालभर पूरे तीन सौ साठि दिनतक बारह बारह प्राणायाम कुल्ल ४३२० चार हजार तीनसौबीसकरने जो कहे तिनको महापातकों पर समझना (क्योंकि यह सबसे बड़ पातक होते हैं इन्हीं पर इतनोबड़ी संख्या सूचित हुई• यह व्यवस्था मिताक्षराकार ने उसी बौधायन के वाक्यपर स्थापन करी ७ ॥ इसमें प्राणायामों की तादाद जो कुछ लिखी गई सो सब बौधायन की कही ठीक ठीक है और पातकों की छोटाई बड़ाई का जैसाअनुक्रम यहां मिताक्षराकार ने व्यवस्थापित किया सो भी इसी प्रकार से न्यायात्मक देखि परता है क्योंकि इस क्रमके न होने से बौधायन के वचनों की मौजा नहीं मिल सक्ती थी—परन्तु—पाठक जनों को इतना संदेह शेषरहा कि यह गोलमगोल व्यवस्था जो कही गई तिसको बौधायन के मूल वचनों पर किस रीति से घटावें क्योंकि उनके अक्षरों पर इस गोल व्यवस्था की शृंखला नहीं मिलती है जिसके मिलजाने विना विश्वास नहीं आताहै—तिसके—मर्यादा परिपाटी संपादक उन दोनोंकी शृंखला मिला कर आगे जुदी व्याख्या दर्शाते हैं जिससे जिज्ञासुओं का मनोरंजन होसके ॥ अथ द्वयोःशृंखलामेलनं= बौधायन कहिते हैं कि (अपिवाक् चक्षुः श्रोत्र त्वक् घ्राण मनो व्यतिक्रमेषु) अपि शब्द से यहां निन्दा की शंका रूपी संभावना अपने मनही में समुचित होने पर• उन कारणों से कि• वाक् वाणी का व्यतिक्रम रूपी पाप

जैसा किसी शिष्य को एकान्त में गाली देना या क्रूर वचन कहिदेना या गुरु को सन्मुख आते देखि प्रणाम शब्द कहिना योग्य था सो नहीं कहा गफलत से भूलि-गया तौ भी यह वाणी का व्यतिक्रम हुआ अथवा हांसी ठट्ठा आदि में निरर्थक असत्य बोला हो इत्यादि नाना भांतिसे समझना और वाणी की सहचरी रसना जिह्वा भी मुखही में होती है तिसमें कुरीति का भोजन करना आदिभी उसका व्य-तिक्रम कहा जाता है सोभी तुच्छ पाप में समझना जैसे जलके साथ बाल आदि मुह में चला गया या खुला धरा पानी पीलिया हो इत्यादि किन्तु जूठा भोजन कर लेनाआदि बड़े पापका चर्चा यहां नहीं है प्रायश्चित्त छोटाहोनेके हेतुसे• एवं चक्षुस् नेत्रों का व्यतिक्रम जैसा अमेध्य विष्ठा आदि पर दृष्टि परगई या पुत्र वधू आदि को कुदृष्टि से देखा अथवा कुदृष्टि किये विना भी उनके किसी लज्जा वाले अंग पर अपनी दृष्टि धोखे से पर गई हो तौभी यह नेत्रोंका व्यतिक्रम ठहिरा इत्यादिनाना-भाँति से• एवं श्रोत्र कानों का व्यतिक्रम जैसा महात्मा की निन्दा आदि सुनि परी या कोई अपशकुनरूपी शब्द किसीजीवका रोदन आदि सुनिपरा हो इत्यादि• एवं त्वचा खालरूपी इन्द्रीका व्यतिक्रम जैसा खाल सब देहभरमें होतीहै उसमें कहींपर किसी मलीन वस्तुका छुइजाना या पुत्र वधू आदिके हाथ पाओंसेंअपना हाथ पावँ आदि कोईअंग धोखासे भिड़जाना एकदोषहै सो यह त्वचाका व्यतिक्रम कहिलाता है इत्यादि• एवं घ्राण इन्द्री जो नाकहै तिसका व्यतिक्रम जैसे विष्ठा वा मद्य आदि की दुर्गंधि नासा के छिद्रों में घुसि गई हो इत्यादि• एवं मनोव्यतिक्रम जैसे मन सबही इन्द्रियों का अधिष्ठाता है उसके द्वारा ईश्वर का स्मरण और संसार की भलाईवाले विचार करने मनका मुख्य धर्म्म है तिसको छोड़ि के दूसरों की बुराईवाला विचार करनेलगाहो•इत्यादि नानाभांतिके छोटेपाप प्रकीर्णकहिलाते हैं•इन सातइन्द्रियों के व्यतिक्रम जो कहेगये तिनमें किसी एकही के होने पर तीन प्राणायाम करने कहे—इनसे उपरान्त मिताक्षराकार के व्यवस्थापित किये प्रकीर्णक नामके पापभी इन्हीं सात इन्द्रियोंसे उत्पन्न होतेहैं चौहत्तर७४परिच्छेद में २९१ दोसौइक्यानवे मूलश्लोकसे आदि लेकर खूब सोचिके समझो किन्तु उनपरभी तीनिही प्राणायाम सूचितहुये—तहां यह विचारभी करनाचाहिये कि उनमेंभीजोकुछ बड़े बड़े पाप देखि परें तिनको जुदे खींचिकेनिचले दूसरे भेदवाले पापोंके साथमेंजोड़ना अर्थात् उनके ऊपर सिर्फ तीनही प्राणायाम नहीं बल्कि निम्नोक्त उनचास करने चाहिये• यहां तक पहिले भेदका मीलान हुआ॥ १ ॥=बौधायन फिर कहितेहैं कि (शूद्रस्त्रीगमना

न्नभोजनेषुपृथक्पृथक्) शूद्र जातिका दिया हुआ अन्न या शूद्रका छुआ अन्न पानी या शूद्रका देखा हुआ तैयार अन्न ये सब दूषित और निषिद्ध होतेहैं तिसका भोजन करलेना• एवं स्त्रीके संगमसमय भोजन करना या स्त्री के साथ भोजन करना• एवं राह चला भोजन या राह चलते भोजन करना• इन तीनों तरहके भोजनरूपी दोषों में जुदा जुदा प्रत्येक निमित्तपर सात रोज तक सात सात प्राणायाम करै क्योंकि ये एकप्रकारके छोटे उपपातकहैं निदर्शनके निमित्तकहेगये किन्तु इन्हींके उपलक्षण से और भी छोटे उपपातक समुझेजातेहैं—इसीलिये विज्ञानेश्वरने इनतीनोंसे उपरान्त इनके समान छोटे उपपातकों पर उनचास ४९ प्राणायाम समुझाएथे उनका स्वरूप ढूंढे मिलसक्ताहै ७०। ७२। ७३ सत्तरि और बहत्तरि और तिहत्तरि परिच्छेदों में विस्तारसे वर्णन होचुका तहां देखो॥ २ ॥=बौधायन फिर कहते हैं कि (अभक्ष्या भोज्या मेध्य प्राशनेषु) तथावा (अपण्यविक्रयेषु) मधु मांस घृत तैल लाक्षा लवण रसान्न वर्जेषु (यच्चाप्यन्यदेवंयुक्तं) अर्थात (अभक्ष्य वह कि जो निपट खानेकेयोग्यही न हो जैसे पियाज आदि निषिद्ध चीजें• अभोज्य वह कि यद्यपि अन्न आदि पदार्थ खानेके योग्यहैं पर किसी अशुद्ध प्राणीके छुइजाने या मलीन वस्तु से भिड़ जाने आदि कारणोंसे भोजनकी योग्यता उसमें नहीं रही•अमेध्य वह कि ज़ो अपने आप स्वरूप से देखने में भी अत्यन्त मलीन और अपवित्र हो जैसे विष्टा राधि पीव खंखार आदि•प्रवोक्त तीनों प्रकारमें कोईएक भी वस्तु मुंहमेंधरै या हलकमेंउतारै तिन पापोंमें) तथा वा पक्षान्तरमें और भी जो जो पाप इन्हींके समान होतेहों तिन में भी (अपण्य विक्रयके पापोंमें भी कि जिन चीजोंका बेचना छत्तीसमे मूलश्लोक में अरतीसमेतक निषेध कियागयाथा उन्हींको यदि छिपकर बेचा हो तहां बारह दिनतक हररोज बारह बारह प्राणायाम करै) परन्तु मद्य मांस घी तेल लाख नमक रस गोरस अन्न इनका भी बेचना सबकेसाथमें निषेध किया गयाथा तिनको यहां छोड़िके अपण्य विक्रयका यहप्रायश्चित्त समुझना क्योंकि चालीसमे मूलश्लोक में ये जुदे इतने पतनीय कहे गयेथे तिससे इनके बेचनेवाले को यह छोटासा प्रायश्चित्त बड़े अनर्थमें गिनती यह तात्पर्य्यहै (यच्चअपिअन्यतएवंयुक्तं•) और भी जो कुछ पाप इसीप्रकार ठीकठीक संसार में होताहो जो इन्हीं पापोंके समान समुझा जाय जिसका नाम यहां नहीं लिखा तिसमें भी यही प्रायश्चित्त समुझना यह सब कथन बौधायनकाहै—इसीलिये विज्ञानेश्वरने प्रवोक्त १४४एकसौचवालिस प्राणायामोंको औरभी लघुतर किस्मके उपपातकोंपर व्यवस्थापितकियाहै(भलाकिनको

मध्यम किस्मके समुझना इसअपेक्षामें) ५३ त्रेपन परिच्छेदकी आदि से ६८अरसठि परिच्छेदके अन्त तक जितने उपपातकों के प्रकाश प्रायश्चित्त कहेगयेहैं तिनको मध्यमसमुझना परन्तु उनसबमेंसे जिनका स्वरूपजातिभ्रंशकरोंमें या संकरीकरणोंमें या अपात्रीकरणोंमें या मलिनीकरणोंमेंभी देखिपरै तिनकोछोड़िके यहनियमसमुझना क्योंकि दोजघे गिनतीहोनेसे दोतरहका प्रायश्चित्त नहींकियाजायगा औरदो में जहां छोटा प्रायश्चित्त होय सोभीनहीं किन्तु बड़ाकियाजायगा तिसकेलिये यह कूट लिखी गई है सो समुझि लेना ॥ ३ ॥=बौधायन फिर कहते हैं कि (अथपातकोपपातकवर्ज्जयचान्यदेवंयुक्तं) ऊपर कहे पापों से अनन्तर और जो कुछ बढ़िया पाप लगा हो तहाँ ऐसे उचित है कि पन्द्रह रोजतक बारह बारह प्राणायाम करै परन्तु पातक नामके पापों और बहुत बड़े उपपातक नामके पापोंको वर्जितकरके उनसे निचले बढ़िया पापका यह नियमजानो—अर्थात—बौधायन के इस कथन का यह तात्पर्य्य है कि मध्यम उपपातकों से कुछ बड़े हों पर उत्तमदर्जाके उपपातकों से कुछ मध्यम हों तिनके लिये यह पखवारे का प्रायश्चित्त जानो—इसीलिये विज्ञानेश्वर ने अत्रोक्त १८० एकसौअस्सी प्राणायामों को जातिभ्रंशकर आदि पापों पर समुझाया था जिनके चारोंनाम अभी तीसरे पाठके अन्तमें लिखेगये देखि लो॰ इनके प्रकाश प्रायश्चित्त ७४ चौहत्तरि के परिच्छेद में कहिचुके हैं॰ इन्ही के अत्यन्त स्वरूप लक्षण २४२ दोसौ बयालिस की अधिकोक्ति में जाकर समुझो ॥ ४ ॥=बौधायन फिर कहते हैं कि (अथ पातक पतनीय वर्ज्जयचाप्यन्यदेवंयुक्तं) अथनाम ऊपरले पापों से अनन्तर जो और बड़ा पाप है उसमें पातक और पतनीयोंको छोड़िदे ऐसा उचितहै—अर्थात—पूरे पातक और पतनीयजो पातकसे कुछ नीचे दर्जामें होतेहैं इन दोभाँतिसे उपरान्त जो इन दोनोंसे नीचे दर्जामें अन्यभाँतिके ऐसे पापहों जो ऊपरले चौथे पाठवालोंसे कुछ बड़े समुझेजायँ तिनहीमें ऐसाकरना उचितहै कि एक महीनाभर हररोज बारह प्राणायाम साधै यह बौधायनका कथन है—इसीलिये विज्ञानेश्वरने अत्रोक्त ३६० तीनसौसाठि प्राणायामोंको गोवध आदि बहुत बड़े उपपातकों के अभिप्राय पर समुझना कहा क्योंकि इस प्रकार के वेही प्रतीत होतेहैं उनके स्वरूपों को समुझना जिनको आवश्यक हो तो ४० चालीसवें परिच्छेद से लेकर ५२ बावन परिच्छेद की अंत्य सीमातक देखो कि उन्ही तेरह परिच्छेदों में गोवधको आदि लेकर जितने उपपातकोंके प्रकाश प्रायश्चित्त कहे गयेहैं उन्हींकेरहस्य प्रायश्चित्त यहां तीनसौ साठि प्राणायामसे दर्शायेगये॥५॥=

बौधायन फिर कहिते हैं कि (अथपातकवर्ज्यंचान्यदप्येवमुक्तं) अथानन्तरं यत्पापंअन्यदपिपातकवर्जंस्यात्तत्रएवंउक्तं इतियोजना) ऊर्ध्वोक्त पापों से ऊँचे चढ़िकर अनन्तर उनसे लगसार्थादि औरहो बढ़िया पापहोय जो पूरेपातकसे वर्जित होय तहाँ ऐसे कहाहै—अर्थात्—पाँचवें पाठवाले पापों से कुछ ऊँचाहोय परंच पूरे पातकोंसे कुछ नीचा होय तिनमें ऐसा कहा है कि एक छमाही भर हररोज बारह प्राणायाम साधै(यहांपर पातक या पूरे पातकसे महापातक समझा गयाहै क्योंकि पाठके क्रमसे अर्थहीका क्रम बलवान् होताहै (इसी न्याय से मिताक्षराकारने अ-थोक्त २१६० इक्कीससै साठि प्राणायामों को अतिपातक और अनुपातकों के अ-भिप्रायपर ठहिराया है कि जिससे आगे सातवें पाठसे विरोध न आनेपावै ॥ ६ ॥= बौधायन फिर कहिते हैं कि (अथपातकेषुसंवत्सरं)ऊर्ध्वोक्तोंसे ऊँचे चढ़िकर उनसे अनन्तर जो सबसे बढ़िया पातक अर्थात् जिससे ऊँचा कोई और पाप न होता हो तिनमें एक सालभर हररोज बारह प्राणायाम साधै—इसी लिये मिताक्षराकार ने अथोक्त ४३२० तेंतालिससैबीस प्राणायामोंको महापातकोंके विषयपर ठहिराया है क्योंकि उनसे बड़ा कोई और नहींहै ॥ ० ॥ महापातक॰ अतिपातक॰ पातक॰अ-नुपातक॰उपपातक॰इन सबके मुख्य स्वरूप २४२ दोसौ बयालिसकी अधिकोक्ति में देखो वहाँ इनके एक एकमें कईकईभेद हैं परंच महापातकोंसे बड़ा कोई नहीं है॰ उपपातकोंमें परस्पर छोटाई बड़ाईके हेतुसे चारपाँचक भेदहोतेहैं ॥ ० ॥ विज्ञानेश्वर अपना विचार कुछ और भी दर्शाते हैं कि(इदंचाभ्यासाभ्यासोऽप्येत्यादिनोक्तंप्रायश्चित्त पंचकंअत्यंताभ्यासविषयंसकृदुचितविषयंवा (अर्थात् बौधायन के पहिले दो पाठ भेद छोड़िके शेष पाँच भेदोंके पाठमें जो पाँचप्रकारके प्रायश्चित्त कहेगये तिनको अत्यन्त अभ्यासकिये पापोंपर समझना कि जिसने वारम्वार वही एकपाप किया हो अथवा एकहीवार मिलेजुले कईपाप एकसाथ होगयेहों तिनपर भी इन प्राय-श्चित्तों की योग्यता होगी ॥ फिर कहिते हैं कि मनुके यथोक्त वचनवाला प्राय-श्चित्त भी अभ्यासही के विषय पर समझना=यदाहमनुः=एनसांस्थूलसूक्ष्माणांचि कीर्षन्नपनोदनम् अवेत्यृचंजपेदब्दंयत्किंचेदमितीतिच=अर्थात्—महापातक आदि स्थूल पापोंका तथा उपपातक आदि सूक्ष्म पापोंका अपनोदन करना चाहते हुये यह प्रायश्चित्तकरै कि (अवइतिऋचं) अर्थात् अवतेहेलो वरुण इत्यादि ऋचाको एक सालभर या (यत्किंचिदं) अर्थात् यत्किंचेदं वरुण दैव्येजन इत्यादि ऋचाको एक सालभर और (इतिइतिचऋचं) अर्थात् इतिवेमनम इत्यादि ऋचावाले सूक्तको

एकवार नित्यंप्रतिजपाकरै=अत्र मिताक्षराकाराः (यत्तुमनुनाअब्दंयावत्प्रत्यहमर्थांतराविरुद्धेषुकालेषु अवतेहेलेत्यादीनांऋचांजपउक्तःसोप्यभ्यासविषयः) अर्थात् मनुने जो एक वर्षभर अवते आदि तीन ऋचाओंका जप इस ढंग से करना बताया है कि हररोज अपने अन्यजरूरी कामोंके हर्जवाले समयोंसे उपरान्त फुर्सतके समयपर एक वार जपाकरै• सोभी यह वारवार के अभ्यासवाले पापोंका प्रयोजन देखिपरता है क्योंकि सालभरका प्रायश्चित्त बहुत बडाहै॥ ० ॥ इन सब रहस्य प्रायश्चित्तों में यह एक शंका खडी रहीहै कि ऊपरकी व्यवस्था में सभीतरह के पाप दर्शायेगये जो जो प्रकाश प्रायश्चित्तों में आचुके थे उनमें बहुधा पाप ऐसे हैं जो हर्गिज गुप्तौअर नहींकिये जासक्ते हैं इसका दृष्टान्त जैसे ४८ अड़तालिस के परिच्छेदमें परिवेदनके नामसे एक विवाहरूपी पाप कहागया जिसमें विवाह ठहरानेवाला करानेवाला औरनाईपुरोहित आदि अनेक मनुष्योंकीसहायतासे कार्य सिद्धहोताहै वे सभी उसको जानते हैं तो फिर क्योंकर गुप्तौअर पाप ठहरै जिसका रहस्य प्रायश्चित्त कियाजाय जैसा यह एक दृष्टान्त कहा तैसे और भी अनेक पापहैं जो किसी तरहसे छिपनहीं सक्ते=इसके समाधान भी अनेक हैं=प्रथम तो यहीउत्तर देनाचाहिये कि जोवात नहींछिपसक्तीहै उसमेंरहस्य प्रायश्चित्तका संवंध क्यों जोडतेहौ उसमेंप्रकाश ही प्रायश्चित्त किया जायगा जो उसके लिये पहले से नियत होचुका• दूसरा यह उत्तर है कि विरले स्थलमें वहीकर्म छिपाहुआ भी होजाता है (तहाँ रहस्यही प्रायश्चित्त की जरूरत होगी (क्योंकि भाट पुरोहित आदिका जानना गिनती में इस लिये नहीं आताहै कि वे खुद भी कुछपाप भागी होते हैं अर्थात् सहायकों को भी प्रायश्चित्तकी योग्यता पहिले लिखचुके हैं इसीलिये यह नियम है कि जिस पाप के जितने सहायआदिकर्ताके साथीहों तिनसेउपरान्तलोगजा लिपावें औरनिन्दासहित चर्चाकरैं तभी प्रकाशकी पदवीतक पहुँचताहै अन्यथा सहायोंके जानने मात्रसेनहीं• कदाचित् यह कहिने में आवै कि भाट पुरोहित आदिसे उपरान्त कुछ वराती भी अवश्य होंगे तोभी यही उत्तर है कि वे वराती भी उसके सहायों में गिनती होसक्ते हैं तिनसे उनका भी जानना प्रकाशकी पदवी तक नहीं जासकाहै क्योंकि यदि उनको उनका अन्यायपाप स्वीकारठहिरा तभी उसकेसाथी या वराती वने अर्थात्प्रायश्चित्त भी तब होताहै कि यातौ पापी आपही धर्मके डरसे मन में ग्लानि पैदा करै या पंच विरादरी आदि कोई निन्दा करनेपर उतारू होयँ•तहाँ जो साथी वरातीवने वे आपही प्रायश्चित्त के संसर्ग भागी होनेके हेतुसे मुखिया की निन्दा नहीं करसक्ते हैं और

उनसे उपरान्त उसके बिरादर आदि यद्यपि इस कर्मका होना सुनिकर जानैंभी परन्तु धर्मके बोध बिना या और किसी हेतुसे निन्दा करने पर उतारू न होयँ तौ यह पाप उसका अनेकों के जानने पर भी प्रकाश होनेकी गिनती में नहीं आया गुप्तौअर में ठहरा तिससे ऐसी दशामें यदि मुख्य पापी आपही पापके भयसे मनमें ग्लानि को उत्पन्न करै तिसकी शुद्धि रहस्य प्रायश्चित्त से होसक्ती है इसीलिये प्रकाश और अप्रकाश दो भाँतिके प्रायश्चित्त निर्मित हुये हैं तिससे कोई भी स्थल शंका करने योग्य नहीं है॥ ३०६॥ यद्यपि योगीश्वर ने भी सबही उपपातकों पर एकसौ प्राणायामकरने कहे तथापि आपही उसका थोडासा अपवाद नीचे दर्शावैंगे• अर्थात् अगिले मूल श्लोक से उसी की अधिकोक्ति में भी जितने उपपातकों पर जुदा प्रायश्चित्त दर्शावैंगे तिनपर वही प्रायश्चित्त करना चाहिये किन्तु ऊर्ध्वोक्त प्रा• णायाम नहीं॥ ३०६॥

(क्वचित्प्राणायामशतस्यापवादः)

ओंकाराभिप्लुतःसोमसलिलंपावनंपिबेत्। कृत्वातुरेतोविरामूत्रप्राशनंतुद्विजोत्तमः ३०७

अर्थः—रेतस् वीर्यधातु विष्टा मूत्र• द्विजोत्तम द्विजाती इनको मुह में चीखके यह प्रायश्चित्त करै कि सोमालता (एक बेलि) का सलिल स्वरस निचोडि उसको ओं-कार से अभिमन्त्रित करै वही पावन है अर्थात् शरीर का पवित्र करने वाला रस होता है तिसको पीलेवै॥ ३०७॥

३०७ अधिकोक्तिः—विज्ञानेश्वर कहिते हैं कि यह प्रायश्चित्त केवल उसके लिये समझना जिसने वीर्य विष्टा आदि इच्छा बिना धोखा से चखिलया हो-किन्तु चाहिकर चखने वालेको सुमन्तु का बताया करना चाहिये=यदाह सुमंतुः= रेतोविण्मूत्रप्राशनंकृत्वा लशुनपलाण्डुगृञ्जन कुम्भकादीना मन्येषांचाभक्ष्यादीनां भक्षणेग्रामकुक्कुट हंसश्वसृगालादिमांसभक्षणाकृत्वा ततः कण्ठमात्रमुदकं मवतीर्य शुद्धवतीभिः प्राणायामंकृत्वा ब्रह्मव्याहृतिभि रुरोगतमुदकंपीत्वा तदेतस्मात्पूतोभव-ति=अर्थात्—वीर्य विष्टा मूत्र चाखि के या लहसुन प्याज गाजर कुम्भीशाक आदि अन्य अभक्ष्यों का भक्षण करिके या हंस घरेलू मुर्गा कुत्ता सिआर आदि के मांस खाइके तिस पाप के हेतु से यह प्रायश्चित्त है कि गले के समान गहिरे जलमें गोता लगाइ उसी जल में खड़े होकर शुद्धवती नाम की ऋचाओं से प्राणायाम क-रिके फिर ब्रह्मव्याहृतियों से पढि कर जल इतना पीवै जो हृदयतक पहुँचै अथ-

क नहीं तिस कर्म के करने से इस पाप से छुटि कर पवित्र हो जाता है॥ ० ॥ मनु ने भी अभक्ष्य भक्षण और असत्प्रतिग्रह के लिये एकजुदा प्रायश्चित्त देकर अर्थ्वोक्त प्राणायामोंका छुटकारा (अपवाद) दर्शाया है=यथा=प्रतिगृह्याप्रतिग्राह्यं भुक्त्वाचान्नंविगर्हितम् जपंस्तरत्समंदीयं पूयतेमानवस्त्र्यहात्=अर्थात्—जोकोई वस्तु धनादिक दान के द्वारा ग्रहण करने योग्य नहो सो अप्रतिग्राह्य कहाती है जैसेविष शस्त्र मदिरा हाड आदि या चण्डाल महापातकी आदि पतितों का कोईसा धनहो सोभी जिनका स्वरूप २९० दोसौ नब्बेकी अधिकोक्ति में कहिचुके उनमेंसे कोईवस्तु लेकर पाप भागी जो हुआ हो अथवा सात भाँति के अभक्ष्य जो ६९ उनहत्तरि से तिहत्तरितक पांच परिच्छेदोंमें वर्णनहुयेथे उनमेंसे कोई निन्दित अन्नआदि जिसने खाइ लिया हो वह दोषी पुरुष तीन दिन इन्हीं चार मन्त्रोंका जप करतेहुये शुद्ध होता है अर्थात् (तरत्समन्दी धावति) इत्यादि चिह्न वाली चारों ऋचाओं को यथाशक्ति के अनुसार या पाप की लघुता गुरुता के अनुसार थोडी या बहुत संख्या अपने तात्कालिक विचार से कल्पित करै कि इतना जप करना चाहिये=ध्यानकरी=अर्थोक्त पापों पर यह दूसरा प्रायश्चित्त आरूढ होजाने से पूर्वोक्तप्राणायामों का निरादर होगया इसी को धर्म्म शास्त्र में अपवाद नाम कहिते हैं इसी को भाषा में छूट या छुटकारा समझिलेना कि इतने पापों में प्राणायाम की जरूरत नहीं• परन्तु• यह विवेक इतना उपरान्तहै कि विवेकी पुरुष यदि अपने पाप दोषको कुछ गहिरा समझै कि सिर्फ सोमलताका रस पीने मात्रसे संतुष्टि मेरी न होगी तिसको दोनो विधि करनी चाहिये अर्थात् इससे पहिली अधिकोक्ति में लिखे बौधायनवाले ४९ उनचास प्राणायाम या १४४ एकसौ चवालिस प्राणायाम अथवा योगीश्वरके बताये सौ १०० प्राणायाम या इनमें से इच्छाके अनुरूप कमीदेकर साधना किये पीछे सोमालता का रस पीवै अथवा जहाँ सोमालता न मिलसकै तहां भी अवश्य प्राणायामही करनेहोंगे तिसमें यह तात्पर्य नहींहै कि नियत प्राणायामोंका करना किसी निषेध में गिनती हो बल्कि उनकी साधना में कठिनता जानिके दूसरी सुगम रीति यहां कहीगई॥ ० ॥ वीर्य विष्ठा मूत्र आदि गन्दिको मेरा जलमें छोडना एक पापहै यह औरोंके देखते कम होता बल्कि गुप्तोंमें अधिक होताहै तिससे इसके मध्ये एक जुदा प्रायश्चित्त मनुने कहाहै (अप्सुमूत्रं पुरीषं वा ष्ठीवनं वा समुत्सृजेत्) जलोंके भीतर विष्ठा वीर्य कफथूकादि गुप्तकर्म करिके एकमहीना भीखमांगि भोजन कियाकरै तब इन पूर्वोक्त प्राणायामोंको करिके शुद्धहोय अन्यथा प्रायश्चित्त

न करने से छिपे पाप की वृद्धि होती रहेगी कि जैसे ऋण के ऊपर व्याजकी वृद्धि होती रहती है॥ ३०७॥

(अतितुच्छपापस्यप्रायश्चित्तं)

निशायांवादिवावापियदज्ञानकृतंभवेत्। त्रैकाल्यसंध्याकरणात्तत्सर्वंविप्रणश्यति ३०८

अर्थः—रातिमें या दिनमें जो अज्ञानसे कियाहोय=अर्थात्—अति छोटी किस्मके प्रकीर्णक पाप जो किये गयेहों राति या दिनमें पुरुषकी भूलसे और छोटी या बड़ी किस्म के उपपातक जो केवल मनके विचारही में उत्पन्न हुये हों या केवल मुहसे कहिडारने मात्रसे उत्पन्न हुयेहों सो सब तीनोकाल की संध्या उपासन करने से विनाश होजातेहैं• पर इनसे बड़े पाप संध्यासे नहीं मिटते हैं॥ ३०८॥

३०८ अधिकोक्तिः=इस वार्तामें यमका वचन प्रमाण है=यथा=यदह्नाकुरुतेपापंकर्मणामनसागिरा आसीनःपश्चिमांसंध्यांप्राणायामैर्निहंतितत्=अर्थात्—कर्म या मनसे या वाणीसे जो कुछ पाप दिनमें पुरुष करता है सो सब साँझ की संध्यापर बैठि प्राणायामोंसे विनाश करदेता है=एवंप्रातातपस्तु=अनृतंमद्यगन्धंचदिवामैथुनमेवचपुनातिवृषलान्नंचसंध्यैर्वहिरुपासिता=अर्थात्—असत्य बोलना या मदिराआदि दुर्गंधें सूंघना या दिन में स्त्रीसे मैथुन करना आदि छोटे छोटे पाप यहांतक कि शूद्र का दियाहुआ अन्नभी खायाहो सबको सन्ध्या ही उपासन करीहुई पवित्र करदेती है पर बढ़िया पापों में नहीं (संध्या वहिरुपासिता)कहीं ऐसा भी पाठ देखागया है तिससे यह अर्थ सिद्धहोताहै कि वहिर्देश वस्तीसे बाहर किसी मैदानके पुण्यस्थान पर कूप तड़ागआदिका सहारालेकर संध्याकरीजाय जहाँ सूर्यका पूरा विम्ब आसन के सन्मुख और समस्त किरणों की प्रभारूपी सूर्य की वृत्तियां अपने सब अंग पर आसकें और मनुष्योंका संघात जहाँ न होय ऐसे निर्द्वंद्व ठिकानेपर चित्त लगाकर अच्छी आराधनासे करीहुई संध्या अपने पूरे फलको देसक्ती है॥३०८॥

अगिले परिच्छेद में वेदों की ऋचा आदि समस्त मन्त्रोंका संग्रहकरिके एकत्र दर्शावैंगे कि जिनमंत्रों काप्रयोजन सर्वत्र प्रायश्चित्तों में जहाँ तहाँ आनि परताहै॥ और विरले प्रायश्चित्तभी कहेंगे॥

अथसकलमहापातकादिपापहरसाधारणपवित्र मन्त्रजपहोमानांनामचिह्नस्वरूपप्रकाशकोऽयं परिच्छेदःएकाशीतितमः (८१)

—*—

इस परिच्छेद में उन सभी मन्त्रों के नाम चिह्न दर्शाये जायँगे कि जिनका जप करना प्रायश्चित्तों में कहिचुके • बल्कि बहुधा मंत्र ऐसे इसमें मिलेंगे जिनका चर्चा कहीं नहीं आया तौभी उनके जपने से सर्व पापों का नाश होसक्ता है• इसी में वेदाभ्यासी पुरुष का प्रायश्चित्त और पूरे ज्ञानी ध्यानी का प्रायश्चित्त साधारण सभी पापोंपर एकही रूप से दर्शावेंगे॥

(सर्वपापहरा मंत्राः)

शुक्रियारण्यकजपोगायत्र्याश्चविशेषतः। सर्वपापहराह्येतेरुद्रैकादशिनीतथा ३०९

अर्थः–शुक्रिय• आरण्यक• गायत्री• इनका जुदा जुदाही जप तथा• रुद्रैकादशिनी• ये सब जुदे जुदे सर्व पापों के हरने वाले होते हैं=अर्थात–शुक्रिय इस नाम से भी वेदहीका एक अंशहै जिसका पता मिताक्षराकारने यह दिया है(विश्वानिदेवसवितः–इत्यादि वाजसनेयकेपठ्यते) इस पदको आदि लेकर यजुर्वेद की वाजसनेयी शाखा मे जिसका पाठ है• तथा आरण्यक भी वेदही का अंश है जिसका पता यह दिया है (आरण्यकंच–ऋचंवाचं प्रपद्ये मनोयज्ञः प्रपद्ये इत्यादि तत्र च पठ्यते) कि आरण्यक भी ऋचं वाचं प्रपद्ये आदि कहताहै उसका भी पूरापाठ उसी वाजसनेयी शाखा में पढ़ा जाता है–इन दोनोंका जप ऐसा उग्र है कि महापातक आदि सकल पापों का विनाश होता है तथा इनसे जुदा गायत्री का जप अत्यंत उग्र है तथा रुद्रैकादशिनीका अर्थात ११एकादश रुद्रों के रुद्रानु वाकरूपी मन्त्र जो वेदही में प्रसिद्ध हैं उन सबका यही एक नाम है तिनका जप सबसे अधिक उग्र है कि जिससे महापातक आदि सभी पाप हरे जातेहैं और (मूल श्लोक में त्र्याश्च इस चकार के ध्वन्यर्थ से अघमर्षण आदि और भी अनेक मंत्र सर्व पापों के हरने वाले होते हैं तिनको भी समझि लेना उनके मध्ये वशिष्ट का वचन अविकोक्ति में देखना॥ ३०९॥

३०९अधिकोक्तिः—शुक्रिय आदि मन्त्रोंका जप कितनाकरै इस अपेक्षामें सर्वत्र यह समझिलेना कि जैसा बडा या छोटा पापहोय तैसा बहुत या थोडा जप अपनी बुद्ध से विचार किया जासक्ता है जैसा गायत्री के मध्ये मिताक्षराकार ने व्यवस्था नियत करी है कि=गायत्र्याश्च महापातकेषुलक्ष मितिपातकानुपातकयोर्दशसहस्रं उपपातकेषुसहस्रंप्रकीर्णकेषुशत मित्येवंविशेयतोजपःसर्वपापहरः=तथाच शंखेनो-क्तं=शतंजप्तातुसावित्री तुच्छपापविनाशिनी सहस्रजप्तातुतथापातकेभ्यःप्रमोचिनी दशसाहस्रजाप्येनसर्वकिल्विषनाशिनी लक्षंजप्तातुसादेवीमहापातकनाशिनी—सुवर्ण स्तेयकृद्विप्रोब्रह्महागुरुतल्पगः सुरापश्चविशुध्यन्ति लक्षंजप्त्वानसंशयः=अर्थात— मिताक्षराकार कहितेहैं कि गायत्री का जप महापातकों में एकलक्ष सख्याकरना कहा है इस हेतु से पातक तथा अनुपातकों पर दस हजार चाहिये और उपपातकों पर एक हजार और प्रकीर्णक पापों पर एकसौ संख्या रखनी चाहिये इस तरह जुदी जुदी विशेषता से सभी पाप हरेजाते हैं=यही क्रम शंखजी ने कहा है कि=सा-वित्री एक सौ संख्या मात्र जपी हुई तुच्छ पापों अर्थात प्रकीर्णकों का विनाश कर-तीहै तथा एक हजार जपीहुई पातकों अर्थात उपपातकों से छुटाइ देती है दश-हजार जाप करने से सर्व किल्विष अर्थात पूरे पातक और अनुपातक नाशकरनी है पुनि एक लक्ष जपी हुई वह गायत्री देवी महापातकोंका विनाश करतीहै—किन्तु— सुवर्ण का चुराने वाला ब्राह्मण और ब्रह्महत्या करने वाला और गुरु भार्या संगम करने वाला और सुरापान करनेवालाभीये चारों महापातकीहोते हैं ये सब एकएक लाख जप करिके शुद्धहोजाते हैं सन्देह न करना॥ ० ॥ यत्तुचतुर्विंशतिमतेनोक्तं= गायत्र्यास्तुजपेत्कोटिंब्रह्महत्यांव्यपोहति लक्षाशीतिंजपेद्यस्तुसुरापानाद्विमुच्यते पु-नातिहेमहर्तारंगायत्र्यालक्षसप्ततिः गायत्र्यालक्षषष्ट्यातु मुच्यतेगुरुतल्पगः इति (तद्गुरुत्वात्प्रकाशविषय मितिमिताक्षरा=अर्थात— चतुर्विंशति मत वालों ने जो कहा है कि—गायत्री का किरोड जप करै तिससे ब्रह्महत्या मिटि जाती है और जो अस्सी लाख मंत्र जपै वह सुरापान के पातक से छुटि जाय और गायत्री का सत्तरि लाख जप किया हुआ सुवर्ण चुराने वाले को पवित्र कर देता है और गायत्री के साठि लाख जप से गुरुतल्पगामी शुद्ध होता है॰ यह कहा (मिताक्षरा कार कहिते हैं कि यह प्रायश्चित्त अति बड़े होने के हेतु से प्रकाश पापों के विशेषत्व पर सम-झना किन्तु यहां रहस्य पापोंपर नहीं॥ ० ॥ रुद्रैकादशिनी के मध्ये यह वचनहै= एकादशगुणानवापि रुद्रानावर्त्यधर्मवित महद्भ्यःसनुपापेभ्यो मुच्यतेनात्रसंशयः=

अर्थात्—ग्यारह रुद्रमंत्रों को ग्यारह गुणा लौटि लौटि जपिके वह पुरुष महापापों मे भी छूटि जाता है इसमें सन्देह नहीं (जबकि इसमें महापातकों पर ग्यारह गुणी आवृत्ति कही गई तो फिर इनसे छोटे अति पातक आदि पर कम कल्पना करनी चाहिये अर्थात् चौथाई चौथाई यथा क्रमसे कमकरते चले आना यह तात्पर्य्य है ॥ ० ॥ च शब्द के ध्वन्यर्थ से अघमर्षण आदि अन्य मन्त्रोंका संग्रह समझिलेना जो कहिचुके तिनके मध्ये वशिष्टका अग्रोक्त वचन है=यथा— सर्ववेदपवित्राणिवक्ष्याम्य हमतःपरम् येषांजपैश्चहोमैश्चपूयंतेनात्रसंशयः अघमर्षणंदेवकृतंशुद्धवत्यस्तरत्समाः कूष्मांड्यःपावमान्यश्चदुर्गासावित्र्यथैवच। अभिषंगाःपदस्तोमाः सामानिव्याहृतीस्तथा भारुंडानिचसामानि गायत्रंरैवतंतथा पुरुषव्रतंचभासंच तथादेवव्रतानिच अब्लिंगाबार्हस्पत्यंचवाक्सूक्तंमधुमत्तथा शतरुद्र्याथर्वशिरस्त्रिसुपर्णंमहाव्रतम् गोसूक्तं चाश्वसूक्तंचइन्द्रशुद्धेचसामनी ॥ त्रीण्याज्यदोहानिरथंतरंचअग्नेर्व्रतंवामदेव्यंबृहच्चएतानिपूतानिपुनंतिजंतून् जातिस्मरत्वंलभतेयदिच्छेत्=अर्थात्—यहां से वशिष्ठजी उन मंत्रोंके नाममात्र दर्शाते हैं जो वेद में सर्वथा पवित्र गिनेजातेहैं जिनका जप करिके या होम करिके पापी लोग पवित्र होतेहैं तिनके नाम—अघमर्षण•देवकृत•शुद्धवन्ती•तरत्समादि•कूष्मांडियां• पावमानियां•दुर्गा•सावित्र्यः•अथ• अभिषंगाः• पदस्तोमाः• सामानि• व्याहृतियां• भारुंडानि• चसामानि•गायत्रं• रैवतं•पुरुषव्रत• भास• देवव्रतानिच•अब्लिंगाः•बार्हस्पत्य• अंबा•वाक्सूक्त•मधुमत्• शतरुद्री• आथर्वशिरस• त्रिसुपर्ण• महाव्रत• गोसूक्त•अश्वसूक्त• इन्द्रशुद्धि•सामनी ॥ त्रीण्याज्य दोहानि• रथन्तर• अग्नेर्व्रतं• वामदेव्य•बृहत—ये इतनी सबऋचायें ऐसीहैं कि जपने से जीवोंको पवित्र करती हैं और जो जातिस्मरत्वको इच्छा करिके निरन्तर सेवन करै तो वह भी पावै ॥ ३०९ ॥

(गायत्र्यातिलहोमः सर्वपापेष्वेव)

यत्रयत्रचसंकीर्णमात्मानंमन्यतेद्विजः। तत्रतत्रतिलैर्होमोगायत्र्यावाचनंद्विजैः ३१०

अर्थः—द्विजाती पुरुष अपनेको जहां जहां संकीर्ण मानै अर्थात् ब्रह्महत्याआदि कोई महा पाप लगिजाने में उसके दोष से अपने को जटित समझै तहां तहां सर्वत्र गायत्री से तिलों का होम करै और ब्राह्मणों से तिलों मे वाचन करावै ॥ ३१० ॥

३१० अधिकोक्ति=महापातकों पर गायत्री से पूरा एक लक्ष होम करना चाहियेकोकि (गायत्र्यालक्षहोमेन मुच्यतेसर्वपातकै रितियमस्मरणां) यमका यह

वचनहै कि गायत्री से एक लक्ष होम करने में सबतरह के पातकोंसे मुचि जाताहै- इससे नीचे अतिपातक आदिपर यथा क्रमसे एक एक चौथाई कमी देकर होमक-रना चाहिये=तथा तिलैर्वाचनं कार्यं=तदाह रहस्याधिकारेवशिष्ठः=वैशाख्यांपौर्ण मास्यांच ब्राह्मणान्पंचसप्त च क्षौद्रयुक्तैस्तिलैःकृष्णै र्वाचयेदथवेतरैः (इतरैःशुक्लै रित्यर्थः) प्रीयतान्धर्मराजेतियद्वामनसिवर्तते यावज्जीवकृतंपापंतत्क्षणादेवनश्यति= अर्थात्-योगीश्वर ने गायत्री से तिलों का होम या तिलोंसे वाचन कराना दो बात कहीं तिनसें वाचन का विधान वशिष्ठ ने रहस्य प्रायश्चित्तों के रहस्याधिकार में कहा है कि=वैशाखी पूर्णमासी के रोज पांच या सात ब्राह्मणों से सहत लगे काले तिलों से अथवा सुपेद ही तिलों से वाचन करावै किस मन्त्र से सो कहते हैं कि (प्रीयतां धर्मराज) इस मन्त्र से अथवा जो कुछ कामना मन में होय तिसकामन्त्र बनावै जैसा (अमुक पापं विनश्यतु) इत्यादि मन्त्रों से वाचन कराने में जहां तक जिन्दगी भरमें पाप किया हो सो सब उसी समय नाश हो जाता है (यद्यपि यो-गीश्वर की विवक्षा अनुसार सहत लगे तिलों से होम करावै यही अर्थ ठीक प्रतीत होता है) परन्तु विज्ञानेश्वर की अगिली विवक्षा से वशिष्ठके इसवचन मेंभी,वाचन शब्द का अर्थ तिलदान करना समझा गया है तथा (ब्राह्मणान् पञ्चसप्तच) इस द्वितीया विभक्ति से भी यह तात्पर्य प्रकटहोता है कि सहत लगे तिल पांच सात ब्रा-ह्मणों को दान देकर प्रीयतां धर्मराज यह वाचन करावै= इसीलिये विज्ञानेश्वर ने इसी वचन के अनन्तर ऐसा कहा है कि=अनियत कालं अपिदानंते नैवोक्तं =अर्था-त्-जिस वशिष्ठ ने पूर्णमासी के नियत काल पर यह दान बताया उसीने अनियत कालों में भी चाहें तब दान करना कहा है=यथा=कृष्णाजिनेतिलान्कृत्वा हिरण्यं मधुसर्पिषी । ददातियस्तुविप्राय सर्वंतरति दुष्कृतम्=अर्थात्-काले मृगछाला पर काले तिल धरिके और सोनाधरिके सहत घृतधरिके जो ब्राह्मणको देताहै वहयभी अपने हुए पापों को मेटता है (दोनों वचन पर दृष्टि देकर यह विचारना चाहिये कि पहिले वचन सें (क्षौद्रयुक्तैस्तिलैः) सहत लगे तिल कहिने से होम ही करना समझा जाताहै तथापि विज्ञानेश्वर की विवक्षा से यदि उसको दान करना समझि लियाजाय तौ फिर युक्त शब्दसे भी सहत का लगाना तिलमें नहीं किन्तु माथ होना धर देना माना जायगा कि जैसा इस दूसरे वचन में कृष्णाजिन के ऊपर तिल सहत आदि अनेक चीजें धरनी कही गईं- तिससे जहां जैसा सम्भव हो तहां उसी प्रयो-जन वाले किसी एक अर्थ का स्वीकार करना योग्य होगा ॥ ० ॥ व्यासेनाप्युक्तं=

तिलधेनुंचयोदद्यात्संयतात्माद्विजन्मने ब्रह्महत्यादिभिःपापैर्मुच्यते नात्रसंशयः=अर्थात–व्यासने भी कहा है कि जो कोई आप अपने इंद्रियादिक शरीर को तप के द्वारा शुद्ध करिके तिल धेनु रूपी दान ब्राह्मण को देता है सो ब्रह्महत्या आदि महापापों से छुटिजाता है (तिल धेनु वही कहाती है कि मृगछाला के ऊपर तिलधरिके सोना चांदी सहित या शक्ति के अनुरूप सोने चांदी के पात्र में या तांबे के पात्र में या ढाक आदि पवित्र पत्तों परही यथाशक्ति काले तिल सोने चांदी सहित धरिके उसी को धेनुरूप मानि के पाप मोचन के अर्थ से संकल्प करे) विज्ञानेश्वर कहिते हैं कि जैसे दोचार दान यहांपर दर्शाये तैसे इनको आदि लेकर और भी अनेक दान हैं जो रहस्य कांड में और जहां तहां ग्रंथों में जाने जाते हैं सो सब उन्हीं द्विजाती लोगों के लिये समझना जो पढ़े पण्डित न होने से जप होम करने में समर्थ न हों तथा स्त्री शूद्र और शुद्र जाती पुरुषोंके निमित्तमें समझना जो सदाही वेद मन्त्रोंके अधिकारी नहीं हैं=विज्ञानेश्वर फिर कहिते हैं कि=यत्तु यमेनोक्तं=तिलान्ददाति यःप्रातस्तिलान्स्पृशतिखादति तिलस्नायीतिलाञ्जुह्वन्सर्वंतरतिदुष्कृतम्–तथा–द्वे चाप्ययोतुमासस्यचतुर्दश्यांतथैवच अमावास्यापूर्णमासी सप्तमीद्वादशीद्वयम् संवत्सर समुंजानः सततंविजितेन्द्रियः मुच्यतेपातकैःसर्वैःस्वर्गलोकंचगच्छति=यच्चाङ्गिरसोक्तं=क्षीराब्धौशेषपर्यंके आषाढ्यांसंविशेद्धरिः निद्रांत्यजतिकार्तिक्यांतयोःसंपूजयेद्धरिम् ब्रह्महत्यादिकंपाप क्षिप्रमेवव्यपोहति–इत्यादि तत्सर्वं विद्या विरहिणांकामाकाम सकृदभ्यासविषयतयाव्यवस्थापनीयमितिमिताक्षरा=अर्थात=यमने जोकहाहै कि–जो कोई अपने पाप की बढ़ाई अनुसार किसी नियत करी अवधि तक रोज निरंतर प्रातःकाल तिलों का स्पर्श (हाथों से छुइलेना) किया करता और तिलों को पानी में पाचिके स्नान और तिलों का होम साधारण मात्र बिना मन्त्रके भी और तिलोंका दानकरिके तिलोंको खाइके व्रत करताहै और तबतक इन्द्रियोंको जीति अपने वश में राखताहै सो सब तरहके पातकों से छुटि जाता और स्वर्गलोकमेंभी जाताहै=और जो अङ्गिरने यहकहाहै कि=क्षीरसागर में शेषनागरूपी शय्यापर आषाढ़ी पूर्णमासी के रोज विष्णुभगवान् निद्रालेनेको प्रवेशकरते हैं फिर कार्तिकी पूर्णमासीमेंजाकर निद्रात्यागतेहैं इन दोनो पूर्णमासीके रोज हरिको यथा विधान से जो कोई अच्छी तरह पूजै सो ब्रह्महत्या आदि पाप को तत्काल विनाश करदेताहै•इत्यादि औरभी जो कुछ दान पूजन कहीं लिखा देखौ सो सब ऐसे लोगों के लिये जो विद्या से विहीन होयँ उनके पाप की गुरुता लघुता अनुसार एक बार या अनेक बार और कामना से चाहिकर पाप

करने या बिना इच्छा पाप होजाने के जुदे जुदे भेदों पर व्यवस्था कल्पितकरलेनी चाहिये अर्थात् जैसा छोटा बडा पाप देखौ तैसा छोटा बड़ा दान पूजन आदि प्रायश्चित्त सोचौ ॥ ३१० ॥ विद्यावान् पुरुष जोनित्य नैमित्तिक धर्म क्रियासे भी संपन्न होय उसपर यदि कोई पाप दशा धोखे से बनिजाय अर्थात् पाप से डरते बचते हुये भी दैवगतिसे होजाय तिससे उसके चित्त की छिपी हुई अतिशय ग्लानि खड़ी होय तिसका जुदा नियम आगे कहिते हैं॥ ३१० ॥

(सर्वधर्मनिष्ठस्याज्ञानकृत पापस्यविशेषः)

वेदाभ्यासरतंक्षांतंपंचयज्ञाक्रियापरम्। नस्पृशंतीहपापानिमहापातकजान्यपि ३११

अर्थः—वेद के अभ्यास में निरत क्षमायुक्त पंचयज्ञों की क्रिया में तत्पर को इहां कोई पाप नहीं स्पर्श करते हैं महापातक से उत्पन्न हुये भी=अर्थात्—इहां संसार में जो कोई पुरुष वेदाभ्यास को रखते हुये क्षमा से भी संयुक्त होय जो पीड़ा देनेवाले की पड़ा सहिकर प्रतिकार कुछ न करता होय और पंचयज्ञों की क्रिया में शास्त्रोक्त विधि से सदा लगा रहिता हो तिसपर यदि कोई पाप कभी दैवयोग से बनि जाय तौ वह उसको नहीं लगता है चाहें महापातक ही क्यों नहो॥ इसका विशेष तात्पर्य अगिले ३१२ के श्लोक में देखना॥ ३११ ॥

३११ अधिकोक्तिः= वेदाभ्यासस्यलक्षणं (वेदस्वीकरणंपूर्वं विचारोऽभ्यसनं तपः तद्दानंचैवशिष्येभ्योवेदाभ्यासोहिपंचधा) अर्थात्— वेदाभ्यासी उसका नाम है जिसने प्रथम वेद आदि शास्त्र को पढा फिर मनन के प्रकार से विचार किया फिर उसके पाठ आदिका अभ्यास कई बार किया फिर उसमें लिखे तपको किया फिर शिष्यों को उस वेद का पढ़ाने द्वारा दान किया हो तौ यह पांच भाँति का वेदाभ्यास कहा जाता है तिसके होने पर भी पुरुष में क्षमा होनी यह शर्त है०क्षमा का लक्षण एह यही है कि जिसमें दुखदाई को प्रतिकार करने की समर्थ विद्यमान हो तौ भी क्षमा करिके प्रतिकार कुछ न करने का स्वभाव जिसका होय० और पंचयज्ञ जो नित्य किये जाते हैं यह सबसे बडा धर्म्म गृहस्थी का प्रसिद्ध है तिससे पंचमहायज्ञ उनका नामहै पाँचोंके जुदे नाम एक ब्रह्मयज्ञ जो ध्यान पाठआदि रूपोंसे होता है १ देवाग्नि यज्ञ जो देवपूजन ऋषितर्पण अग्नि होत्र आदि रूपों से कहाता है २ पितृयज्ञ जो नित्य श्राद्ध पितृतर्पण आदिरूपों से विख्यातहै ३ नृयज्ञ जोअतिथि अभ्यागतके पूजन भोजनसे लेकर इत्यादि स्वाश्रित भृत्यवर्ग कुटुंबअनाथ

न दुःखी आदिको सदन्नसे संतुष्ट करने और स्वल्प भिक्षा देने पर्यंत अनेक रूपों से
ताहै ४ भूतयज्ञ जो बलिवैश्वदेव रूपीकर्म से लेकर पशु पक्षी कुत्ता कागआदि चींटी
र्यंत जीवोंकोभी यथाशक्ति चूरादेना आदि रूपों से होता है ५ ॥ ० ॥ मिताक्षरा-
ार कहते हैं कि यद्यपि ऐसे पुरुषको महापातक भी होजाने पर नहीं लगते कहे
न्तु केवल उसीपापका यह चर्चाहै जो दशा धोखेसे होगया हो इसीलिये अगिले
ैगयके वचनोंकोदेखो=यथा=वसिष्ठ ने=यदा८कार्यशतंसाग्रंकृतंवेदश्चधार्यते।सर्वं
तस्यवेदाग्निर्दहत्यग्निरिवेन्धनम् (इति प्रकीर्णकाद्यभिप्रायेणाभिधायाभिहितं)
ेदबलमाश्रित्यपापकर्मरतिर्भवेत् अज्ञानाच्चप्रमादाच्च दह्यतेकर्मनेतरत्=अर्थात्-
िशष्ठजी ने=जब किसीने सौ ऐसी अधिक न करने योग्य कामकियेहों पर वह वेद
ो धारणाभी रखताहो तो उनका वह पाप सर्वथा वेद रूपी अग्नि जैसे ईंधन को
लादेतीहै अर्थात् पाप उसे लगने नहींपाता (यह प्रकीर्णक आदि तुच्छ पापों के
भिप्राय से दर्शाइके फिर अगिले वचन में कहा है कि) वेद पढे होने के बल को
ाकार इस नियम के सहारे से जानि बूझि पाप कर्मों में रति न करनी चाहिये
योंकि वेद की अग्निसे केवल वही पाप जलि सक्ते हैं जो अज्ञानता से होजायँ या
ादमें होजायँ किन्तु इनसे इतर जानिबूझि किये पापोंको नहींजलाइसक्ताहै ॥ ० ॥
ोगीश्वर के मूल प्रतीक में यह तात्पर्य नहींहै कि उसको पाप नहींलगताहै तिससे
सके प्रायश्चित्त ही न करणा होगा किन्तु यह तात्पर्य है कि थोडा प्रायश्चित्त
ारिके शुद्धिहोसक्तेगी सो अगिले मूलश्लोक में देखो ॥ ३११ ॥

(ऊर्ध्वोक्तपुरुषस्य प्रायश्चित्तं)

वायुभक्षोदिवातिष्ठन्रात्रिंनीत्वाप्सुमूर्यदृक् । जप्त्वासहस्रंगायत्र्याःशुद्ध्येद्ब्रह्मवधादृते ३१२

अर्थः—दिनमें वायु भक्षी रहिके रात्रिको जलमें बिताकर सूर्य देखनेपर गायत्री
का सहस्र जपकारिके शुद्धहोय ब्रह्मवध से रहित=अर्थात्—वेदाभ्यासी पुरुष जिसका
चर्चा ऊपरले मूलश्लोक में आयाथा उसी का यह छोटा प्रायश्चित्त है कि यद्यपि
महापातक भी नहीं लगते कहेगये तो भी महापातकों में यह इतना अपवाद है कि
ब्रह्महत्या के बिना कोई और महापातक भी जिसपर दैवयोग से बनिगया हो
तिसको यह प्रायश्चित्त करना चाहिये कि—एक दिनभर वायुभक्षी अर्थात् कछु न
खाकर उपवासकिये बैठा रहिकर संध्यासमयमें जलमें जाबैठे वहां बैठेहुये रात्रिको
बिताकर सूर्यका उदय होजानेपर उनके दर्शन किये पीछे एकसहस्र गायत्रीका जप

करै उसी जल में बैठे रहिकर (या जिसको बैठे रहिने की शक्ति शेष न रही हो सो जलसे बाहर निकसि किनारे बैठि सूर्य के सन्मुख जपै) तौ यह सब तरहके महापातकसे भी छुटिजाता है पर एक ब्रह्महत्या से नहीं= जब कि इतना करने से महापातक एकबार का मिटिगया तौ फिर उपपातक आदि छोटा पाप अनेकबारकिया मिटिजायगा और छोटेछोटे अनेक पाप जो एकहीबार इकट्ठे एकसाथहुयेहैं वेभी इतना करने से मिटि जाइंगे यह समझि लेना ॥ ३१२ ॥

३१२ अधिकोक्तिः=मिताक्षराकारस्तु= सावित्र्याःसहस्रंजपित्वा ब्रह्मवधव्यतिरिक्त सकलमहापातकादिपापजातान्मुच्यते अतश्च उपपातकादिष्वभ्यासेऽनेक दोषसमुच्चये वा वेदितव्यंविषम विषयसमीकरणस्यान्याय्यत्वात्= अर्थइसकावही है जो अभी ऊपरलिखिचुके उसपर मिताक्षराकार कहितेहैं कि छोटे बड़े सभी पापों पर एक ही प्रायश्चित्त समझिलेने से सब छोटे बड़े बराबर ठहरजाते सो अन्याय ठहिरता तिससे वही व्यवस्था ठीक है जो लिखीगई=इस प्रायश्चित्त से ब्रह्महत्या नहीं छुटती है इसका यह तात्पर्य है कि ब्रह्महत्या अज्ञानता से होजाने पर भी ऐसे वेद के अभ्यासीकोभी वही प्रायश्चित्त करनाचाहिये जो ३०२ तीनसौ दो के मूल श्लोक से सबके लिये कहिचुके=और=रातिभर जलमें जो बैठना कहा या दूसरेदिन गायत्री का जाप जलमें बैठिके॰तिसके मध्ये शीत देश या शीतकाल आदिकी व्यवस्था एक जुदीहै सो सब ७५ पचहत्तरि के परिच्छेद में २९४ दो सौ चौरानवे मूल श्लोक से वर्णन होचुकी तहां देखो ॥

(अथवाशिष्ठंविशेषप्रायश्चित्तं)

मिताक्षराकार ने यहां पर वशिष्ठ जी का कहा एक जुदा व्रत और भी प्रकाश किया है=यथा=यवानां प्रसृतिंस्वंजलिं वायव्यमाणां घृतंचाभिसन्नयेत् (यवोऽसि धान्यराजस्त्वंवारुणोमधुसंयुतः निर्णोदःसर्वपापानां पवित्रमृषिभिःस्मृतः) इत्यनेन– घृतंयवामधुयवाःपवित्रममृतंयवाः सर्वंपुनंतु मेपापंवाङ्मनः कायसंभवं–इत्यनेनवा) अग्नि कार्यंनकुर्वीततेनमूतर्वालितया नाग्नंभिक्षांनातिथ्यंनचोच्छिष्टंपरित्यजेत् (येदेवामनोजाता मनोयज्ञसदक्षादक्षपितरः तेनःपांतुतेअवन्तुतेभ्योनमः तेभ्यः स्वाहा इत्यनेनाहवनिजुहुयात्) त्रिरात्रंमेवाभिद्रवयेपापक्षयायत्रिरात्रं सप्तरात्रंब्रह्महत्यादिषु द्वादशरात्रंकेतितोत्पन्नश्च ॥ इत्येतद्विशष्ठवचनेनान्यापिस्मृतिवचनानि विवेचनीयानाति मिताक्षरा= अर्थात्–एक पसर भर अथवा एक अँजुरी भर जौ लेकर तपते हुये

दीन दुखी आदिको सदन्नसे संतुष्ट करने और स्वल्प भिक्षा देने पर्यंत अनेक रूपों से होताहै ४ भूतयज्ञ जो बलिवैश्वदेव रूपीकर्म से लेकर पशु पक्षी कुत्ता कागआदि चींटी पर्यंत जीवोंकोभी यथाशक्ति चूर्णादेना आदि रूपों से होता है ५॥ ०॥ मिताक्षराकार कहिते हैं कि यद्यपि ऐसे पुरुषको महापातक भी होजाने पर नहीं लगते कहे परन्तु केवल उसीपापका यह चर्चाहै जो दगा धोखेसे होगया हो इसीलिये अगिले वशिष्ठके वचनोंकोदेखो=यथा=वशिष्ठ ने=यदा८कार्यंशतंसाग्रंकृतंवेदश्चधार्यते। सर्वं तत्तस्यवेदाग्निर्दहत्यग्निरिवेन्धनम् (इति प्रकीर्णकाद्यभिप्रायेणाभिधायाभिहितं) नवेदबलमाश्रित्यपापकर्मरतिर्भवेत् अज्ञानाच्चप्रमादाच्च दह्यतेकर्मनेतरत्=अर्थात्–वशिष्ठजी ने=जब किसीने सौसेभी अधिक न करने योग्य कामकियेहों पर वह वेद की धारणाभी रखताहो तो उसका वह पाप सर्वथा वेद रूपी अग्नि जैसे ईंधन को जलाइदेतीहै अर्थात् पाप उसे लगने नहींपाता (यह प्रकीर्णक आदि तुच्छ पापों के अभिप्राय से दर्शाइके फिर अगिले वचन में कहा है कि) वेद पढ़े होने के बल को पाइकर इस नियम के सहारे से जानि बूझि पाप कर्मों में रति न करनी चाहिये क्योंकि वेद की अग्निसे केवल वही पाप जलि सक्ते हैं जो अज्ञानता से होजायँ या भूलमें होजायँ किन्तु इनसे इतर जानिबूझि किये पापोंको नहींजलाइसक्ताहै॥ ०॥ योगीश्वर के मूल श्लोक में यह तात्पर्य नहींहै कि उसको पाप नहींलगताहै तिससे निपट प्रायश्चित्त ही न करना होगा किन्तु यह तात्पर्य है कि थोड़ा प्रायश्चित्त करिके शुद्धहोसकैगो सो अगिले मूलश्लोक में देखो॥ ३११॥

(ऊर्ध्वोक्तपुरुषस्य प्रायश्चित्तं)

वायुभक्षोदिवातिष्ठन्रात्रिंनीत्वाप्सुसूर्यदृक्। जप्त्वासहस्रंगायत्र्याःशुद्ध्येद्ब्रह्मवधादृते ३१२

अर्थः–दिनमें वायु भक्षी रहिके रात्रिको जलमें बिताकर सूर्य देखनेपर गायत्री का सहस्र जपकरिके शुद्धहोय ब्रह्मवध से रहित=अर्थात्–वेदाभ्यासी पुरुष जिसका चर्चा ऊपरले मूलश्लोक में आयाथा उसी का यह छोटा प्रायश्चित्त है कि यद्यपि महापातक भी नहीं लगते कहेगये तो भी महापातकों में यह इतना अपवाद है कि एक ब्रह्महत्या के बिना कोई और महापातक भी जिसपर दैवयोग से बनिगया हो तिसको यह प्रायश्चित्त करना चाहिये कि–एक दिनभर वायुभक्षी अर्थात् कुछ न खाकर उपवासकिये बैठा रहिकर संध्यासमयसे जलमें जाबैठे वहाँ बैठेहुये रात्रिको बिताकर सूर्यका उदय होआनेपर उनके दर्शन किये पीछे एकसहस्र गायत्रीका जप

करै उसी जल में बैठे रहिकर (या जिसको बैठे रहिने की शक्ति शेष न रही हो सो जलसे बाहर निकसि किनारे बैठि सूर्य के सन्मुख जपै) तौ यह सब तरहके महापातकसे भी छुटिजाता है पर एक ब्रह्महत्या से नहीं=जब कि इतना करने से महापातक एकबार का मिटिगया तौ फिर उपपातक आदि छोटा पाप अनेकबारकिया मिटिजायगा और छोटेछोटे अनेक पाप जो एकहीबार इकट्ठे एकसाथहुयेहों वेभी इतना करने से मिटि जाइँगे यह समझि लेना॥ ३१२॥

३१२ अधिकोक्तिः=मिताक्षराकारस्तु= सावित्र्याःसहस्रंजपित्वा ब्रह्मवधव्यतिरिक्त सकलमहापातकादिपापजातान्मुच्यते अतएव उपपातकादिष्वभ्यासेऽनेक दोषसमुच्चये वा वेदितव्यंविषम विषयसमीकरणस्यान्याय्यत्वात्= अर्थइसकावही है जो अभी ऊपरलिखिचुके उसपर मिताक्षराकार कहितेहैं कि छोटे वड़े सभी पापों पर एक ही प्रायश्चित्त समझिलेने से सब छोटे बड़े बराबर ठहरजाते सो अन्याय ठहिरता तिससे वही व्यवस्था ठीक है जो लिखीगई=इस प्रायश्चित्त से ब्रह्महत्या नहीं छुटती है इसका यह तात्पर्य है कि ब्रह्महत्या अज्ञानता से होजाने पर भी ऐसे वेद के अभ्यासीकोभी वही प्रायश्चित्त करनाचाहिये जो ३०२ तीनसौ दो के मूल श्लोक से सबके लिये कहिचुके=और=रातिभर जलमें जो बैठना कहा या दूसरेदिन गायत्री का जाप जलमें बैठिके•तिसके मध्ये शीत देश या शीतकाल आदिकी व्यवस्था एक जुदीहै सो सब ७५ पचहत्तरि के परिच्छेद में २९४ दो सौ चौरानबे मूल श्लोक से वर्णन होचुकी तहां देखौ॥

(अथवाशिष्ठंविशेषप्रायश्चित्तं)

मिताक्षराकार ने यहां पर वशिष्ठ जी का कहा एक जुदा व्रत और भी प्रकाश किया है=यथा=यवानां प्रसृतिमंजलिं वायथ्रमाणां घृतंचाभिसन्त्रयेत् (यवोऽसि धान्यराजस्त्वंवारुणोमधुसंयुतः निर्णोदिःसर्वपापानां पवित्रमृषिभिःस्मृतः) इत्यनेन– घृतंयवामधुयवाःपवित्रममृतयवाः सर्वंपुनंतु मेपापंवाङ्मनः कायसंभवं–इत्यनेनवा) अग्नि कार्यंनकुर्वीततेनभूतवलिंतथा नाग्नंनभिक्षांनातिथ्यंनचोच्छिष्टंपरित्यजेत् (येदेवामनोजाता मनोयज्ञसदक्षादक्षपितरः तेनःपांतुतेअवन्तुतेभ्योनमः तेभ्यः स्वाहा इत्यनेनाहुतिर्जुहुयात्) त्रिरात्रंमेवाभिहत्वयेपापक्षयायत्रिरात्रं सप्तरात्रंब्रह्महत्यादिषु द्वादशरात्रंकलिंनोत्पन्नश्च॥ इत्येतद्विशदलंवनेनान्यपिस्मृतिवचनानि विवेचनीयानीति मिताक्षरा= अर्थात्–एक पसर भर अथवा एक चँजुरी भर जौ लेकर तपते हुये

घृत में छोडिके (यवोसिधान्य आदि) अगिलेहोमन्त्रों से अभिमन्त्रित करै अर्थात् घी में जौ भुनते रहैं तब तक इन मन्त्रों को बारम्बार पढ़ता जाय पवित्र लकड़ी की समिध से चलाता जाय और घी के नीचे अग्नि भी हवनीय काष्ठको जलावै जैसा ढाख आदि हवनीय प्रसिद्ध है और गायका घृतभी केवल इतने अनुमान से चढ़ावै जो भुनते हुये जवों में खिपि जाय बचै नहीं) दैव योग से कुछ बचि भी जाय तौ भी उस घृत से या जवों से न होम आदि अग्नि का संबंधी कोई काम करै न भूतबलि कर्म करै न अग्र न भिक्षा न आतिथ्य करै न आप उसमें से जूठनि छोड़ै (अर्थात् भिक्षा देनी एक ग्रास मात्र कहाती है तथा चारि ग्रास भर देना अग्रदान कहाताहै सो कुछ न करै और आतिथ्य यह कहाताहै कि नवीन किसी अभ्यागतको आया देखि बैठारि के पेट भरि भोजन कराया जाता है सो भी उस घी जवों से न करै) तौ फिर क्याकरना चाहिये सो कहिते हैं कि (ये देवामनो जाता आदि स्वाहा पर्यंत मन्त्र पढ़ि पढ़ि के अपनेही आत्मा में होम करै) कबतक करै सो कहिते हैं कि बुद्धि बढ़ाने की कामना से पवित्र बुद्धि के लिये तीनि राति और प्रकीर्णक आदि छोटे उपपातकों का विनाश चाहि कर तीन रात्र और इनसे बड़े उपपातकों का क्षय करने के लिये सात रात्र पर्यन्त करै और ब्रह्महत्या आदि महा पातक याअति पातक या अनुपातक लगे हों तिनका क्षय करने के निमित्त पर बारह रात्र पर्यन्त करै और जो कोई पतित के वीर्यसे उत्पन्न दैवयोग से होगया कदाचित् वही वीर्य्य दोष को मिटा कर अपने शरीर का शुद्ध करना चाहे तौ बारह दिन वह भी करै= अपने ही आत्मा में होम करै परन्तु जूठनि भी न छोड़ै=यह तत्त्व पहले कहिचुके है तहां यद्यपि वशिष्ठजी ने कुछ विशेष ब्यौरा नहीं खोला तथापि होम करने का डौल केवल यही देखिपरताहै कि एकएक जौ एक एकमंत्रपढिकर हलकमें छोड़ै तहां जितने जौएकदिनकेलिये भूनेगये उनमेंसे एकभी जौ न छोड़ै जो जूठनिमें गिनती होसके—इसके सिवाय (घृतंयवा मधुयवा) इस मन्त्रके ध्वन्यर्थसे यहभीसिद्ध होता है कि जौको भूनने के बाद सहतमें लपेटै तभी दूसरे मन्त्रको पढ़ै तिसके बादि तीसरे मन्त्रको पढ़ि पढ़ि मुंहमें छोड़ै और एक पसर या अंजुरीभर जौका विकल्प केवल आदमी के डीलडौल या पेटके अनुरूप समुझना कुछ पापोंकी छोटाई बडाईपर नहीं क्योंकि जितने दिनों का प्रायश्चित्त होय उतने दिनों तक इसी आहार से रहिकर व्रत करनेहोंगे ॥०॥ विज्ञानेश्वर मिताक्षराकार ने ३१२ तीनसौबारह के मूलश्लोक वाली टीकामें इस प्रायश्चित्त की स्थापना करी तिससे यह भी प्रतीत होता है कि

मूल श्लोकवाले प्रायश्चित्तसे जिस पुरुषकी ब्रह्महत्या नहीं मिटती कहीगई तिसके लिये३०२ तीनसौ दो के मूलश्लोकवाला प्रायश्चित्त बताया गया उसी पुरुषकेनिमित्त में अग्रोक्त बारह दिन का प्रायश्चित्त भी सूचित हुआ कि दोनोंमें जिस किसी के द्वारा अपनी शुद्धि होसकती ठीकठीक समझै तिस एक ही को विकल्प से साधै किन्तु दोनों को नहीं ॥ ० ॥ विज्ञानेश्वर पीछे से कहिते हैं कि इसी मार्ग के अवलम्बसे और भी स्मृतियोंके वचन विवेचन करने चाहिये जो नवीन देखने में आवैं॥

इतिसकलरहस्यपापहरमंत्रहोमादीनांपरिच्छेदः ३१२

(इतिसर्वरहस्य प्रायश्चित्तानां प्रकरणं)

इस प्रकरण में समस्त ४ चारि परिच्छेद हैं अर्थात् ७८ अठत्तरि परिच्छेद के प्रारम्भ से लेकर यहां ८१ इक्यासी परिच्छेद के अन्त तक एकही प्रयोजनकेचार भेद जुदे किये गये हैं उन सब का प्रकरण एक है॥

विनियुक्तव्रतव्रातस्वरूपभेदबुभुत्सिते कीदृशमितिसंदेहेतल्लक्षणंवक्ष्यतेऽधुना (तत्र तावत्सकल प्रकाशरहस्यव्रतांगभूतधर्मानाह) अर्थात्—मिताक्षराकार कहिते हैं कि जिन व्रतोंका समूह जिन पापोंपर जुदा जुदा विनियुक्त किया गया तिनके स्वरूपभेदों की चाहना होनेके समय यदि ऐसा सन्देह खड़ा होय कि अमुक नाम का व्रत कैसे होता है इसी लिये उन व्रतों के संक्षेप लक्षण अब आगे कहे जाते हैं सो अगिले परिच्छेदों में यथा क्रमसे देखो (तहां पहिले रहस्य और प्रकाश दोनों तरहके प्रायश्चित्तों में सर्वत्र उन व्रतों के अंश भूत धर्मों का स्वरूप दर्शाइ कर सान्तपन आदि व्रतों के स्वरूप कहे जायँगे॥

——*——

अथकृच्छ्रादिव्रतानांमध्ये-सांतपनकृच्छ्रस्यानेकभेद विधायकोऽयं परिच्छेदः द्व्यशीतितमः (८२)

इस परिच्छेद में-कृच्छ्र आदि व्रतों का एक भेद जो -सांतपन या सान्तपन कृच्छ्र इस नामसे कहाताहै तिसके स्वरूप भेद जाने जायँगे कि ऐसे ऐसे विधानों से जुदे नाम भेद भी होजातेहैं -तहाँ पहिले (३१३-३१४) इन्हीं दो श्लोकोंसे समस्त आद्योपांत प्रायश्चित्तोंके साधारण धर्म्म दर्शावेंगे जो प्रकाश तथा अप्रकाश दोनों तरहके प्रायश्चित्तों में कामआवें॥

(सकलप्रायश्चित्तव्रतांगधर्माः)

ब्रह्मचर्यंदयाक्षांतिर्दानंसत्यमकल्पता। अहिंसाऽस्तेयमाधुर्य्येदमश्चेतियमाःस्मृताः ३१३
स्नानंमौनोपवासेज्यास्वाध्यायोपस्थनिग्रहाः। नियमागुरुशुश्रूषाशौचाक्रोधोऽप्रमादता ३१४

अर्थः-ब्रह्मचर्य॰ दया॰ क्षांति॰ दान॰ सत्य॰ अकल्पता॰ अहिंसा॰ अस्तेय॰ माधुर्य॰ दम॰ ये यम नामसे संयमरूपी धर्मकहे-और स्नान॰ मौन॰ उपवास॰ इज्या॰ स्वाध्याय॰ ॰ उपस्थनिग्रह॰ गुरुकीशुश्रूषा॰ शौच॰ अक्रोध॰ अप्रमाद॰ ये आवश्यक नियमरूपी धर्म्मकहे=अर्थात्-समस्त प्रायश्चित्त कांड में यहांतक जितने कुछ प्रायश्चित्तों के स्वरूप भेद चाहें प्रकाश पापों केहों या रहस्य पापोंके नियत कियेगये और विशेष लक्षण उनकेआगे कहेजायँगे तिन सबही व्रतोंके साथ इतने अत्रोक्त धर्म्मोंका होना परम आवश्यकहै क्योंकि इनके होने बिना किसी भी कियेहुये व्रतकी संसिद्धि नहीं होतीहै-इनके बहुधा अर्थ तो सूधे स्पष्ट हैं तथापि-ब्रह्मचर्य सेशरीरकी सब इंद्रियों का संयम समुझना और उपस्थ लिंगेन्द्री सबके साथ में आगई तौभी उसका निग्रह जीतनाजुदाकहागया सो यह गोबलीवर्द न्यायसे निर्देश कियाहै कि जैसे गोशब्दके उच्चारणमें गाय बैल सब समुझेगये तौभी बैलके निमित्त में विशेष नियम कहिने के अर्थसे उसका जुदा नाम बलीवर्दही लियाजाता है॰ अकल्पता कुटिलताका छोडिदेना कहाताहै ॰दम कहिनेसे हाथ पैरआदि बाहरली इन्द्रियोंकी चंचलता रोकना समुझा जाताहै॰माधुर्य कोमलवाणी बोलना॰अस्तेय चोरी न करना॰अप्रमाद उचित कर्मको उसके समय पर न भूलना॰बाकी सब सुगम हैं॥ ३१३॥३१४॥

३१३ अधिकोक्तिः=मिताक्षराकारः(यत्पुनर्मनुनोक्तं– अहिंसासत्यमक्रोधमार्जवं चसमाचरेतइति)तदप्येतेषामुपलक्षणंनपरिगणनाय (अत्रचदयाक्षांत्यादीनांपुरुषार्थत याप्राप्तानामपिपुनर्विधानंप्रायश्चित्तांगत्वार्थं) क्वचिद्विशेषोप्यस्तियथा विवाहादि ष्वभ्यनुज्ञातस्याप्यनृत वचनस्यनिवृत्त्यर्थंसत्यत्रविधानम् पुत्रशिष्यादिकर्मपिताडनी यमपिनताडनीयमित्येवमर्थंमहिंसाविधानमित्येवमादि=अर्थात्–मनुनेजोकहाहै कि– अहिंसा• सत्य• अक्रोध• आर्जव सरलता• आचरे) सो यह योगीश्वर केही गिनाये धर्मों का उपलक्षणहै कुछ इसलिये नहीं कि इनकी जुदी गणना करीजाय या ऊ- परलों के साथ मिला कर गिने जायँ (और योगीश्वर के दर्शाये गणमें दया क्षांति आदि कितनोंपर यह तर्कहै कि प्रायश्चित्ती पुरुष के पुरुषार्थत्व सेही समझे जाते थे कि ये लक्षण जो सभी सज्जनोंमें होतेहैं उसमें होनेचाहिये तथापि यहां जुदे ला- कर लिखनेसे यहतात्पर्यहै किअवश्यही प्रायश्चित्तोंका अंगभूतसमझेजायँ) और उन्हींमें विरलोंका जुदाभी कुछ तात्पर्यहै कि जैसे विवाह आदि विरले स्थलों पर असत्य बोलनेकी अनुज्ञा यद्यपि शास्त्रोक्तहै तहांभी प्रायश्चित्तीको असत्य नबोलना चाहिये इसलिये सत्य बोलने का नियम यहां दर्शाया गया तथा पुत्र शिष्य आदि को ताड़ना यद्यपि शास्त्रोक्त है तिनको भी प्रायश्चित्ती पुरुष न मारै इसीतात्पर्य्य के अर्थ से अहिंसा का नियम यहां जुदा भी दर्शाया गया• इत्यादि कुछ और भी विरलोंके जुदे तात्पर्य्य हैं तिससे इन दोनों श्लोकमें सब धर्म्मोंका इकट्ठा लिखना उचित ठहरा ॥ ३१३ ॥ ३१४ ॥

(सांतपनाख्यंव्रतं)

गोमूत्रंगोमयंक्षीरंदधिसर्पिःकुशोदकम्। जग्ध्वापरेद्युरुपवसेत्कृच्छ्रंसांतपनंपरम् ३१५ ॥

अर्थः–गोमूत्र•गोबर गायका•दूध•दही•घृत येभी गायके•कुश भिजोकर उनका जल लेलेना• ये सब मिलेहुये खाकर दूसरेदिन कोरा उपवासकरै तो यह दोदिनका व्रत सांतपन कृच्छ्र नाम से परमउग्र है (पहिले दिनभी कुछ न खाकर गोमूत्र आदि मिली चीजोंका आहार करनाकहा तिससे दोनोंदिन व्रतही में गिनती है ॥ ३१५ ॥

३१५ अधिकोक्तिः–कितना गोमूत्र आदि लिया जाय यह परिमाण आगे क- हेंगे=जबकि इन्हीं गोमूत्र आदि सब चीजों को इस रीतिमें कि पहिलेदिन कोरा उपवास करै दूसरे दिन मन्त्र पढ़कर इनको मिलावे और मन्त्रही पढ़कर पीवे तबही ब्रह्मकूर्च नामका व्रत होता है जैसा आगे पराशर का कथन देखो=यदाह

पराशरः=गोमूत्रंगोमयंक्षीर दधिसर्पिःकुशोदकम् निर्दिष्टंपंचगव्यंतु प्रत्येकंकायशोधनम् गोमूत्रंताम्रवर्णायाःश्वेतायाश्चापिगोमयम् पयःकांचनवर्णाया नीलायाश्च तथादधि घृतंचकृष्णवर्णायाःसर्वंकापिलमेवच अलाभेसर्ववर्णानांपंचगव्येष्वयंविधिः गोमूत्रेमाषकास्त्वष्टौ गोमयस्यतुषोडश क्षीरस्यद्वादशप्रोक्तादध्नस्तुदशकीर्तिताः गोमूत्रवत्घृतस्याष्टौतदर्धंतुकुशोदकम् पंचगव्यमृचापूतंहोमयेदग्निसंनिधौसप्तपत्राश्चये दर्भाअच्छिन्नाग्राःशुचित्विषः एतैरुद्धृत्यहोतव्यंपंचगव्यंयथाविधि इरावतीइदंविष्णुर्मानस्तोकेचशंवती एताभिश्चैवहोतव्यंहुतशेषंपिबेद्द्विजः प्रणवेनसमालोड्यप्रणवेनाभिमंत्र्यच प्रणवेनसमुद्धृत्यपिबेत्तत्प्रणवेनतु मध्यमेनपलाशस्यपद्मपत्रेणवा पिबेत् स्वर्णपात्रेणताम्रेणब्रह्मतीर्थेनवापुनः यत्त्वगस्थिगतंपापं देहेतिष्ठतिमानवे ब्रह्मकूर्चोपवासस्तुदहत्यग्निरिवेन्धनम्= अर्थात्– गाय का मूत्र गोबर दूध दही घृत कुशोदक मिलाकर पंचगव्य कहा गयाहै जिसकी प्रत्येक वस्तु जुदीजुदी कायाको शोधने वाली होती हैं॥ इन में गोमूत्र लाल गायका गोबर सुपेद का दूध सुनहरे वर्णवालीका दही नीली गायका घृत काली गाय का और सब चीजें कपिल वर्ण वाली कपिला कीभी होयँ जो ऐसी न मिल सकें तो सब रंगों वालीकी ये सब चीजें लेनी चाहिये यह तो पंचगव्यों की विधि संग्रह करने संबंधे कही॥ परिमान इस रीति से कि गोमूत्र आठ मासे भर गोबर सोरह मासे दूध बारह मासे दही दशमासे घृत भी गोमूत्र की बराबर आठ मासे कुशोदक सबकी तौलसे आधालेना यह ऐसा पंच गव्य बनाके ऋचा पढ़िके पवित्र किया हुआ अग्नि के समीप होमै(किन्तु अग्नि के बीचमें नहीं) किस प्रकार से कि सात पत्रोंवाले कुश लेकर जिनकीनोक टूटी न हो जड़का बकला छुड़ाकेशुद्ध कियेहोयँ तिनसे उठाकर पंचगव्य अग्रोक्तजैसी विधिहो तैसे अग्नि के समीप होमै किन्तु(इरावतीइदंविष्णुर्०मानस्तोके०शंवती) इतनी ऋचाओं के पूरे पूरे पाठ से एक एक बार होमना चाहिये इस होम से जो बचेसो द्विजाती प्रायश्चित्ती पुरुष पीवै॥ इस रीति से कि प्रणव ओंकारसे घोलि के ओंकार सेही अभिमंत्रित करिके ओंकार हीसे उठाकर ओंकारही पढ़िकर पीवै॥ काहे से उठाकर पीवै सो कहिते हैं कि ढाख के तीन पत्तों में बिचले पत्रसे उठाकर पीवै या पद्म के पत्तसे या सोनेके पत्रसे या ताम्रके पात्र आचमनी आदि से अथवा कुछ न हो तो हथेली पर ब्रह्मतीर्थ के द्वारा पीवै॥ तौ इस ब्रह्मकूर्च नामी उपवास के करने से वह सभी पाप जैसे अग्नि से ईंधन की तरह भस्म होजाता है जो कुछ मनुष्य के देह में खाल हाडों तक पहुँच गयाहो॥ ०॥ इसी पंचगव्य को अब तीन

दिन अभ्यास कियाजाय तिसकी यति सांतपन संज्ञा होतीहै=तदाह शंखः (एतदेव त्र्यहाभ्यस्तंयतिसांतपनंस्मृतम्) यहीसब चीजोंसे मिलाहुआ पंचगव्यतीनदिनपिया हुआ यतिसांतपन कहाताहै॥०॥जावाल मुनिने एकएक चीज रोज पीके सातवेंदिन कोराव्रतकरनेसेसप्ताहभरकासांतपनकहाहै=यथा=गोमूत्रंगोमयंक्षीरंदधिसर्पिःकुशोदकम्एकैकंप्रत्यहंपीत्वात्वहोरात्रमभोजनम्कृच्छ्रं सांतपनंनामसर्वपापप्रणाशनम्=अर्थात्–पंचगव्य और छठाकुशोदक यथाक्रमसे हररोज एकएकचीजपीकेसातवेंदिन आठोपहरकोरा उपवासकरेतोयहसातदिनकाकृच्छ्र सांतपनव्रतसभीपापोंकाविनाश करनेवालाहोताहै(प्रायः कृच्छ्र शब्दसेविशेषता बहुधा व्रतोंने इसलिये जोड़िदेतेहैंकि उसकी कठिनाई समझीजाय क्योंकि कृच्छ्रनामहै कष्टका॥ योगीश्वरने पहिलेदिन पंचगव्य दूसरेदिन कोराव्रत करनाकहिकर कृच्छ्रसांतपन उसकानामधरा १उसीको पराशर ने एकहीदिन विधिके साथ पंचगव्य पीना कहिकर ब्रह्मकूर्च उसका नाम धरा परंतु मिताक्षरा ने इसकेसाथ भी पहिलेदिन कोरा व्रत करना समुझाया तिससे इसमेंभी दोही दिन ठहिरे २उसी पंचगव्य कोतीन दिनतक पीनाकहिकर शंखने यतिसांतपन उसका नाम धरा ३जावालिने एकही एक चीज रोजपीना कहिकरसात दिनका कृच्छ्र सांतपन व्रतनाम धरा४इनचारों कृच्छ्रव्रतोंकाछोटापन बडापन प्रायश्चित्ती पुरुषकी शक्ति और पापका गहिरापनआदि सोचिके व्यवस्था नियतकरनी चाहिये जहाँपर कृच्छ्र व्रतकरना कहागया हो–इसीप्रकारआगेभी अधिकोक्तों में एकही व्रतके अनेक भेदहोनेके स्थलोंपर व्यवस्था नियत करनीचाहिये॥३१५॥

(महासांतपन व्रतलक्षणं)

पृथक्सांतपनंद्रव्यैःषडहःसोपवासकः। सप्ताहेनतुकृच्छ्रोयंमहासांतपनःस्मृतः ३१६

अर्थः–एक उपवास सहित छःदिन जुदे गोमूत्रआदि चीजोंसे सान्तपन जोकिया जाय (अर्थात् गोमूत्र आदि एकही एक द्रव द्रव्य पीकर सातवेंदिन कोराव्रतकरे) तौ यह सात दिनका कृच्छ्रव्रत महा सांतपन कहागयाहै (जैसा ऊपरकीअधिकोक्ति में जावाल ने कहा था॥ ३१६॥

३१६ अधिकोक्तिः=महासान्तपन कई भाँति के होतेहैं उनमेंएक पंद्रह दिनका= तदाहयमः= त्र्यहंपिबेत्तुगोमूत्रंत्र्यहंवैगोमयंपिबेत् त्र्यहंदधित्र्यहंक्षीरंत्र्यहंसर्पिस्ततःशुचिः महासांतपनंह्येतत्सर्वपापप्रणाशनम्=अर्थात्–तीनदिन गोमूत्र पीवे तीन दिन गोबर पीवे तीन दिन दही तीन दिन दूध तीन दिन घी पीवे फिरशुद्ध हो जायगा।

यह महा सान्तपन नाम का व्रत सर्व पापों का विनाश करने वाला है ॥ ० ॥ इक्कीस दिनका भी महासान्तपन होता है=तदाह जावाल:=षण्णामेकैकमेतेषांत्रिरात्रमुपयोजयेत त्र्यहंचोपवसेदंत्यंमहासान्तपनंविदु:=अर्थात्– इन गोमूत्र आदि छः चीजों में एकएक को तीन तीनदिन पीवै तिसके छोतिया अठारह और पीछेसे तीनदिन कोरा उपवास करे तो यह २१ दिन का महासान्तपन कहिते हैं ॥ ० ॥ गोमूत्र आदि सांतपन की सब चीजों में एक एकको दो दो दिन पीनेसे बारह दिनका भी सान्तपन होता सो अति सांतपन कहाता है=तदप्याहयम:=एतान्येवतथापेयाद्येकैकन्तुद्व्यहंद्व्यहम अतिसांतपनंनाम श्वपाकमपिशोधयेत (श्वपाकमपिशोधये दित्यर्थवाद: =अर्थात्– इन्हीं कुशोदक पर्यंत छः चीजों को एक एक जुदीजुदी दोदो दिन पीवै तोयह अतिसान्तपन नाम कहावै चाण्डाल को भी शुद्ध करै (सो यह अर्थवादरूपी एक प्रशंसा है कि चाण्डाल से संसर्ग जिसका होजाय ऐसे द्विजाती को शुद्ध कर सक्ता है ॥ ३१६ ॥ यहां भी महासान्तपन के छोटे बड़े जितने भेद हुयेहैंतिनको वही व्यवस्था है जो ऊपर की अधिकोक्ति में आचुकी ॥ ३१६ ॥

अथपर्णकृच्छ्र·पादकृच्छ्र·तप्त कृच्छ्राद्यानां कृच्छ्र व्रतभेदानां विशेषतःस्वरूप विधायकोऽयं परिच्छेदः त्र्यशीतितमः (८३)

—— ※ ——

इस परिच्छेदमें अनेक कृच्छ्रोंकेस्वरूप और नाम भेद जाने जायँगे• तिनमें प्रथम पर्ण कृच्छ्र आदि जो पत्ता या फलफूल आदि से होतेहैं• फिर पादकृच्छ्र आदि जो कईतरहके व्रत मिलिकर एकपाद माना जाताहै उसीके प्रसंगमें दिवाभोजीव्रत नक्तभोजी व्रत अयाचितभोजी व्रतभी कहे जायँगे• फिर कृच्छ्रार्ध आधाकृच्छ्रभी •फिर पादोनपौनकृच्छ्रभीदर्शावैंगे•फिरतप्तकृच्छ्र शीतकृच्छ्रआदिभीअनेकरूपसेदर्शावैंगे॥

(पर्णकृच्छ्रव्रतलक्षणं)

पर्णोदुंबरराजीवविल्वपत्रकुशोदकैः। प्रत्येकंप्रत्यहंपीतैःपर्णकृच्छ्रउदाहृतः ३१७

अर्थः– पर्ण (ढाक• गूलर• कमल• बेल• कुश• इन पांचों के पत्तों का जल निचोड़िके यथाक्रमसे एकएक दिन एकएक जलको हररोजपीवै तो यह पांच दिन का व्रत पर्णकृच्छ्र नाम कहाहै ॥ ३१७ ॥

३१७ अधिकोक्तिः=पर्णकृच्छ्रके अनेकभेदहैं जहाँ इनपत्तोंको मिलाकर क्वाथ बनाया हुआ तीनरात्रि कोराव्रत करने के बादि पिआजाय तहाँ पर्णकूर्च नामहोता है=तदप्याहयमः=एतान्येवसमस्तानित्रिरात्रोपोषितःशुचिः क्वाथयित्वापिवेदद्भिःपर्णकूर्चोऽभिधीयते=अर्थात्– येही सब चीजैं जलसे क्वाथ करिके तीनरात्रि व्रत किये पीछे शरीरसे शुद्धहोकर पीवै तौ यह चारिदिनका पर्णकूर्च कहाता है ॥०॥ जहाँ बेल आदिके फलों में प्रत्येक जुदे फलको या सबको मिलाकर क्वाथ बनाया हुआ पियाजाय तहाँ फल कृच्छ्र कहाता है इसी तरह फूल आदि पिये जायँ तहां उन्हीं केनामसे कृच्छ्र कहातेहैं यहसब आगे मार्कंडेय के वचनों में देखौ=यथाह मार्कण्डेयः=फलैर्मासेनक्वथितःफलकृच्छ्रोमनीषिभिः श्रीकृच्छ्रःश्रीफलैःप्रोक्तःपद्माक्षैरपरस्तथा मासेनामलकैरेवंश्रीकृच्छ्रमपरंस्मृतम पत्रैर्मतःपत्रकृच्छ्रःपुष्पैस्तत्कृच्छ्रउच्यतेमूलकृच्छ्रःस्मृतोमूलैस्तोयकृच्छ्रोजलेनतु=अर्थात्–उक्त वृक्षोंके फलोंसे क्वाथ किया एक मास पीना बुद्धिमानों ने फल कृच्छ्रनाम व्रत कहाहै तथा केवल बेलके फलोंसे श्रीकृच्छ्रनाम कहाहै तथा कमलगट्टाओंसे पद्मकृच्छ्र इत्यादि और इसी तरह एक मास आमलकों से भी दूसरा श्रीकृच्छ्र नाम होताहै जो पत्तों से कियाजाय सो पत्रकृच्छ्र नाम कहाता है पुष्पों से पुष्पकृच्छ्रनाम होता है मूलजड़ों से किया जाय सो मूल कृच्छ्र कहा जाता है जो केवल जल से किया जाय सो जलकृच्छ्र तोयकृच्छ्र कहा जाताहै ॥ ३१७ ॥

(तप्तकृच्छ्रव्रतलक्षणं)

तप्तक्षीरघृतांबूनामेकैकंप्रत्यहंपिबेत्॥एकरात्रोपवासश्चतप्तकृच्छ्रउदाहृत ३१८॥

अर्थः–गरमदूध घृत जल इनमें एक एकको एक एकदिन तपाइके पीवै तिसपीछे एकदिन रातिका उपवासभी कोरा करै तौ यह चारदिन में तप्तकृच्छ्रव्रत होता कहा (इसको महातप्त कृच्छ्र भी कहिते हैं ॥ ३१८ ॥

३१८ अधिकोक्तिः=तप्तकृच्छ्र भी अनेक भाँतिसे होताहै॰यथा (एभिरेवसमस्तैःतोपवासैर्द्विरात्रसंपाद्यःसांतपनवत तप्तकृच्छ्रःइतिमिताक्षरा) अर्थात्–इन्हीं गरम दूध आदि सब चीजोंको इकट्ठी एकदिन पीकर दूसरे दिन कोराव्रत करनेमे दोदिन में यह भी सांतपन की तरह तप्तकृच्छ्र कहलाता है यह मिताक्षराकारने कहा इसी लिये उन्होंने चारदिनके व्रतपर मूलके अर्थमें महातप्तकृच्छ्र नामकहा जो मूलश्लोक में नहीं है ॥ ० ॥ बारह दिन का भी तप्तकृच्छ्र होता है=तदाहमनुः=तप्तकृच्छ्रं चरन्विप्रोजलक्षीरघृतानिलान् प्रतित्र्यहंपिबेदुष्णान्सकृत्स्नायीसमाहितः=अर्थात्–तप्त

कृच्छ्रको आचरतेहुये ब्राह्मण जल दूध घृत पवन इनमें एकएकको तीनतीनदिनगरम गरम पीवै और चित्तको सावधान रखकर एकहीवार स्नान कियाकरै तो यह बारहदिनका तप्तकृच्छ्र होताहै ॥ ० ॥पंचगव्य की चीजें जहाँ जहाँ दूध आदि एकही दो पीवनी कही गई तहाँ सर्वत्रकितने परिमानतक पीवनीचाहिये सो सब अगिली व्यवस्था में देखो=यथाहपराशरः=अपांपिवेत्तुत्रिपलंद्विपलंतुपयःपिवेत्पलमेकंपिवेत्सर्पिस्त्रिरात्रंचोष्णमारुतम् (त्रिरात्रंचोष्णमारुतमिति त्रिरात्रस्यपूर्णा उष्णोदकंवाल्पं पिवेदित्यर्थ इतिमिताक्षरा=अर्थात्–जलपीकेव्रतकरना लिखाहो तहां तीनपलपीवै और दूध लिखाहोतहां दोपलपीवै जहां घृत लिखाहो तहां एकपल पीवै और गरम हवा तीनरात्रि (मिताक्षराकार कहिते हैं कि तीनरात्रि गरम हवा कहिने का यह तात्पर्य है कि त्रिरात्र व्रतके पूर्णहोने पर थोड़ा सा गरम जलही विकल्प से पीवै) सो यह ऐसे स्थल का चर्चा है जिस किसी व्रत में उष्णमारुत पीना कहा हो ॥० ॥ जहां ठंढादूध आदि पियाजाय तहां शीतकृच्छ्रनाम होताहै=यथा=त्र्यहंशीतंपिवेत्तोयंत्र्यहंशीतंपयःपिवेत् त्र्यहंशीतंघृतंपीत्वावायुभक्षःपरंत्र्यहम्=अर्थात्–ठंढा जल तीन दिनपीवै फिर तीनदिन ठंढा दूध पीवै फिर तीनदिन ठंढा घृत पीके पीछेसे तीन दिन केवलवायुभक्षणकरै औरकुछनहीं तोयह बारहदिनका शीतकृच्छ्रकहाताहै॥३१८॥

(पादकृच्छ्रलक्षण)

एकभक्तेननक्तेनतथैवायाचितेनच । उपवासेनचैवायंपादकृच्छ्रःप्रकीर्तितः ३१९

अर्थः–एकभक्तसे नक्तसे तथैव अयाचित से भी उपवासकरनेसेभी यह पादकृच्छ्र कहाहै=अर्थात्–ये चारों व्रत मिलिके चारदिनमें एक पाद कृच्छ्र व्रत कहाता है= और एक भक्तकेनामसे दिवसमें थोडासा रूखासूखा भोजन घी दूध आदिको छोढ़िके समझना और नक्त के नाम से नक्तंव्रत समझना जिसमें सिर्फ रातिही को स्वल्प भोजनकिया जाता है और अयाचित व्रत इस ढंगसे होताहै कि न किसी से मांगै न किसीको समस्या करै यदि स्वतः कोई चाहैं कईदिन बीतिजानेपर भोजनकी वस्तु आगे लाधरैं तभी थोड़ासा खाइके बचा हुआ किसी जीवको देदेवै पास न रक्खै फिर इसी प्रकार जिस दिन कोई विना मांगे लाकर आगे धरै उसी दिन थोडासा खाइ यदि कोई कुछ नलावै तो निपट कोरे व्रत करता रहै तिसका नाम अयाचित व्रत कहाताहै और चौथा रूप उपवास कहा सोभी कई प्रकारके उपवास होतेहैं इन सब चारों के विशेष ब्यौरे अविकोक्ति में देखो ॥ ३१९ ॥

३१९ अधिकोक्तिः—एकभक्तेन• यह मूल श्लोक में देखो तिसके लिये एकभक्त व्रत का लक्षण यहां देखो (दिनार्धसमयेऽतीते भुज्यतेनियमेनयत् एकभक्तमितिप्रोक्तंरात्रौतन्नकदाचन) अर्थात् दिन का आधा दोपहर बीत जाने पर जो नियम से थोड़ा भोजन किया जाय वही एक भक्त व्रत कहाता है परन्तु रात्रि में कदापि न करै न दूसरी बार दिनमें करै परन्तु नियत समयपर थोड़े से रूखे भोजनका निपट त्याग भी न करै इसका नियम यही है॥ (एतच्चकृच्छ्रादीनांव्रतरूपत्वात् पुरुषार्थं भोजनपर्युदासेन कृच्छ्रांगभूतं भोजनंविधीयते—तथा चापस्तंबः—त्र्यहमनक्ताश्यदिवाशीततस्त्र्यहमयाचितव्रतः इतिमिताक्षरा=अर्थात्—रूखा भोजन दर्शाने के निमित्त पर मिताक्षरा कार कहिते हैं कि यद्यपि भोजन करना एक बार कहा परन्तु घी दूध आदि पुष्टाईका भोजन करना यहां निषिद्धहै क्योंकि कृच्छ्र आदि व्रतोंकारूप एक यह भी पाद कृच्छ्र है तिससे वही भोजन सूचित किया है जिससे शरीर दुर्बल बना रहै—जैसा आपस्तम्ब के इस वचन से भी तात्पर्य मिलता है कि—तीनदिन अनक्ताशी जो रात्रि में न खाय फिर तीन दिन अदिवाशी जो दिनमें नखाय तिसपीछे तीन दिन अयाचित व्रत करै कि जो कुछ विना मांगे सन्मुख आजाय तौ थोडा सा खाय यदि नहीं आवै तौ नहीं) यह वचन आपस्तंब का यहांपर केवल दृष्टान्तके लिये प्रासंगिक रीति से मिताक्षरा कारने लिखाहै यह याद रखना• इसी प्रकार गौतम का वचन आगे प्रासंगिक दर्शाते हैं—यथा (गौतमेनापीदमेवरूपंदर्शितं—हविष्यंप्रातराशी भुक्त्वातिस्रोरात्रीर्नाश्नीयादिति• एवंनक्तभोजनविधावपि=अर्थात्—मिताक्षरा कार कहिते हैं कि गौतमने भी यही रूखा भोजन दर्शाया है यह कहिकर कि—प्रातराशी जो दिनमें भोजन करनेका व्रत रखता होय सो हविष्य नाम घी दूध आदि एकही बार दैवयोगसे यदि खाइ तिसको खाकर तीन रात्रि तक निपट कुछ न खाय यह इसका एक जुदा प्रायश्चित्त समझना• इसी प्रकार रात्रि की भोजन विधि में भी समझि लेना तिससे सिर्फ रूखे भोजन की आज्ञा है चिकनाई आदि नहीं यह सब (एकभक्तेन) इन्हीं पांच अक्षरोंकी व्यवस्था लिखुहुई॥ ०॥ नक्तेन• यह मूलश्लोक में देखो नक्त व्रतका जुदा विधान है सो यहां देखो=यथा=हविष्यभोजनंस्नानं सत्यमाहारलाघवम् अग्निकार्यमधःशय्यां नक्तभोजीषडाचरेत्॥ नक्तंनिशायांकुर्वीत गृहस्थोविधिसंयुतः यतिश्चविधवाचैव कुर्यात्तत्सदिवाकरम् सदिवाकरनाम्नादै दंतिजेघटिकाद्वये नियामकंतुविज्ञेयं चासार्धप्रथमेसदा—तथा—दिवसस्याष्टमेभागे मन्दीभूतेदिवाकरे नक्तंतद्विजानीयात् ननक्तन्निशिभोजनम्

नक्षत्रदर्शनान्नक्तं गृहस्थेतुविधीयते यतेर्दिनाष्टमेभागे रात्रौतस्यनिषेधनात्=अस्यच माहात्म्यकारणंयथा= देवैस्तुभुक्तंपूर्वाह्णे मध्याह्नेऋषिभिस्तथा पराह्णेपितृभिर्भुक्तंसंध्यायांगुह्यकादिभिः सर्ववेलामतिक्रम्य नक्तेभुक्तमभोजनम्=अर्थात्—नक्तभोजी जो केवल रातिमें भोजन का नियम राखै सो इन छः बातों का आचरण करै कि स्नान १ सत्यबोलना २ हविष्य भोजन अर्थात् पवित्र अन्न का भोजन जैसे जौ धान मूंग आदि देवान्न कहातेहैं किन्तु यहांपर हविष्य कहिनेसे घीदूध खीरि पूरी मेवा आदि सब समझि लेना जो हवन में काम आते हैं ३ आहारलाघव थोड़े भोजन का स्वभाव ४ अग्नि में भी उसी अन्न की आहुतैं देना भोजन के समय पर पहिले और इसी लिये इस भोजन को अलूनारखना चाहिये५धरतीपर शयनकरनाई६॥ गृहस्थी पुरुष इन्हीं छः नियमों के साथ-नक्त नाम के व्रत को रात्रि में साधै परन्तु यती संन्यासी और विधवा स्त्रियांभी उसी नक्तव्रतकोसदिवाकर लक्षणकेसाथसाधैं यदि किसीको सदिवाकर नामसे करना होय तौ वह दिनके अन्तमें दोघडी दिन शेषरहे परकरै और जिन गृहस्थी लोगोंको निशानक्त करना कहिचुके तिनको दिनमें नहीं किन्तु सदाही रात्रि में पहिले पहरके अर्ध भीतर चारघडी राति गये तक जानना— तैसाही दूसरा यह प्रमाण है कि—दिनके आठवें भागमें सूर्य मन्दहोनेपर जो भोजन कियाजाय उसको भी नक्तव्रत जानै किन्तु केवल उसीको न जानै जो रातिमें भोजन करना कहा क्योंकि गृहस्थ धर्मके नक्तव्रत मध्ये तौ नखत उगि आनेपर नक्षत्रोंका दर्शनकिये पीछे भोजन कहाहै और यतीके नक्तव्रतपर दिनके आठवें भागमें भोजन करना सिद्ध किया गया क्योंकि यतीको उसके संन्यासधर्म से राति में भोजन का पूरा पूरा निषेधहै तिससे वह सदिवाकर नक्तव्रत साधै और यतीके समान विधवाको भी समझना किन्तु उसको भी रातिमें भोजनका निषेधहै=इस नक्त भोजनका महात्म जिनकारणों से अधिकहै सोभी समझो=दिनमानकी तीनतिहाई संध्याकालको छोडिके समझनी•तहां पूर्वाह्णकी पहिलीतिहाई में देवता भोजन करते हैं उनके साथमें न खाना चाहिये• दूसरी तिहाई मध्याह्न में ऋषीभोजन करते हैं उनका भी अदब रखनाचाहिये•तीसरी पराह्णकीतिहाईमे पितर भोजन करते हैं उनकेसाथ न खाना• चौथे निपट संध्याकाल में गुह्यक आदि भोजन करते हैं उनके भी समयपर व्यतिक्रम न करना चाहिये तिससे सभी वेलाओंको उलांघिके रातिमें भोजन करना ठहराया॥ ०॥ अयाचितेन•यह मूलश्लोक मे देखौ विना मांगे भोजनसे व्रतकरना कहा तिसकी ब्योरेवार व्यवस्था यहां समझौ कोई साकाल उसके लिये नहीं

बताया कि अमुक समय भोजन करै तिससे दिनमें या रातिमें जिस किसी वेराविना मांगा भोजन आपही आजाय तभी केवल एकहीवार थोडासा प्राणाधारणमात्रभोगै किन्तु वारम्वार नहीं और पेट भरके भी न खाय क्योंकि सभी कृच्छ्व्रतों में तप करनेकी प्रधानता है तिससे दुबारा या पेटभर खाना सिद्ध नहीं होता—और—यह भी तात्पर्य नहींहै कि गैरही से न मांगै किन्तु अपने भी सेवक भार्या आदिसे मांगनेका निषेध है वल्कि इसीलिये अपने संबंधीसे इसकाभेद भी न कहिना चाहिये कि मैंने अयाचित व्रत धारण कियाहै क्योंकि ऐसा जानिके अपने संवंधी भार्या आदि शीघ्रतासे अवश्यही लेकर दौड़ैंगे और वहुतसी विनती भी करें तौ कुछ अचम्भा नहींहै तिससे उसव्रतका स्वरूप भंगहोजाना सम्भवहै और यहभी तात्पर्य नहींहै कि निपट अपनोंका दिया भोजन करनाही नहीं किन्तु यह तात्पर्य है कि दिनको वित्ताऊ समझि या व्रतका अभिप्राय स्वतः जानिपानेपर भार्या आदि आपही विनामांगे यदि भोजन पहुंचावैं तौ फिर थोड़ासा भोगना उचित है परन्तु यदि अपने या विराने भी नहीं कोईलावैं तहां एकदोदिनका कोराव्रत करने में धैर्यराखै फिर अवश्यही कोई लावैगा संदेह इसमें नहींहै—वल्कि इसी अभिप्राय से गौतम ने यह कहाहै कि (अथापरंत्र्यहंनकंचनयाचेत) इसके अनन्तर तीनदिन किसी पर याचना न करै॥०॥ ये सव तीनप्रकार के भोजन कोई दिनमें कोई रातिमें कोई विनामांगे चाहैं तव आने पर खाने कहे यद्यपि यह कहचुके हैं कि थोडा भोजनकरै तथापि थोड़ेका परिमान कुछ नहीं समुझायाया तिससे अगिली पराशरकी व्यवस्था देखौ=यथाह पराशरः= सायंतुद्वादशग्रासाःप्रातःपंचदशस्मृताः चतुर्विंशतिरायाच्याःपरंनिरशनंस्मृतम्=अर्थात्—जिसको संध्यासे रात्रितक भोजन करनाहरै सो वारहग्रास भोगै जिसको एकभक्तनामके व्रतमें प्रातःकाल से लेकर दिनमें किसी वेरा भोजनका नियम होय तिसको पन्द्रहग्रास भोगने चाहिये जिसको अयाचित भोजन चाहै किसीवेरा करनाहोय सो चौबीसकौर भोगै तौ यह तीनों विधिका भोजन भी परम निराहार व्रत कहाता है= आपस्तंबने=इन्हीं ग्रासोंका परिमान और तरहसे कहाहै॰ यथा=सायंद्वाविंशतिग्रासाःप्रातःषड्विंशतिस्मृताः चतुर्विंशतिरायाच्याः परंनिरशनास्त्रयःकुक्कुटाण्डप्रमाणास्तु यथावाऽऽस्यंविशेत्सुखम्=अर्थात्—सायंकाल के भोजन वाला वाईसग्रास भोगै प्रातःकालिक भोजनवाला छव्वीसकौर भोगै अयाचित भोजनवाला चौवीस कवल भोगै तौ ये तीनो व्रत परम निराहार में गिनती हैं और कवल या ग्रास उसका नाम है कि मुर्गीके अंडे बराबर अन्न अथवा जिस किसी के मुहमें जितना अन्न एकवार

सुखपूर्वकजासके (इनदोनो आपस्तंब तथा पराशरके कहे कल्पों में जो कुछ थोड़े बहुतका अन्तर है तिसको मनुष्य की देहशक्ति या पेटकी बड़ाई छोटाईपर भेद करिके जोड़िलेना तिससे विरोध बाकी न रहेगा ॥०॥ प्राजापत्य नामका व्रत भी कृच्छ् कहाताहै तिससे यहाँकृच्छ्पादके प्रसंगमें उसकाभी चर्चाकरना आवश्यक ठहिरा• किन्तु आपस्तंवहीने प्राजापत्य प्रायश्चित्तको चारतरहविभागकरिकेउन्हींकोचारि ४पाद कृच्छ् कहिकर चारोवर्णोंके अनुरूपव्यवस्था करी है=तथाचआपस्तंबः=त्र्यहं निरशनंपादःपादश्चायाचितस्त्र्यहम सायंत्र्यहंतथापादःपादःप्रातस्तथात्र्यहम॥ प्रातःपादंचरेच्छूद्रःसायंवैश्यस्यपादयेत अयाचितंतुराजन्येत्रिरात्रंब्राह्मणोस्मृतम=अर्थात–प्राजापत्यकृच्छ्का एकपाद वह समझना जो सिर्फ तीनदिन निराहार व्रत किया जाय•फिरएकपाद वह समझना जोतीनदिन अयाचित भोजनसे व्रत कियाजाय•फिर एकपादउसे समझना जोसायंकाल आदि नक्तभोजनतीनदिनकियाजाय फिरएकपाद वह समझना जो तीनदिन प्रातर्भोजन अर्थात जिसको एक भक्त के नामसे कहिचुके तैसा व्रत तीनदिन किया जाय• ये सभी बारह दिनके व्रत निरन्तर एकसाथ किये जायँ तहाँ पूरा प्राजापत्य या पूराकृच्छ् कहाताहै ॥ इन चारो जुदे पादोंको वर्णों पर इस तरह बाँटि दियाहै कि शूद्र प्रातःपाद व्रतको करै और सायंपाद व्रतको वैश्य करै और अयाचित पाद कृच्छ् को क्षत्री करै और कोरे निराहार वाले तीन व्रतका कृच्छ्पाद ब्राह्मण को करना चाहिये ॥ जब इनमेंसे कोरे निराहार और अयाचित वाले दोनों पाद मिलाकर छ दिनका व्रत एक साथ कि याजाय तब आधाकृच्छ् होताहै जब संध्याके भोजन वाला पाद छोड़ि शेष तीनो पाद एकसाथ नो दिनमें साधन किये जायँ तहाँ पौन कृच्छ् कहाता है क्योंकि (सायंप्रातर्विनार्धंस्यात्पादोनंनक्तवर्जितमितितेनैवोक्तं) उन्हीं आपस्तंबने पीछे से कहिदिया है कि साँझ और सकारे वाले भोजनके दोपादोंको छोड़िके शेष दो पादों का अनुष्ठान किया जाय तिस को आधा कृच्छ् जानना • जहाँ नक्त भोजनवाले पादके बिना तीनों कियेजायँ तहाँ पौन प्राजापत्य जानना=उन्हीं आपस्तम्बने=आधे कृच्छ्का दूसराभी प्रकार दर्शायाहै=यथा=सायंप्रातस्तथैकैकं दिनद्वयमयाचितम दिनद्वयंनचाश्नीयात कृच्छार्धः सोऽभिधीयते=अर्थात–एक दिन रात्रि भोजनका व्रत करै दूसरे रोज दिन के भोजन वाला व्रत करै तीसरे और चौथे रोज अयाचित व्रत करै फिर पांचवें छठे दो दिन कोरा व्रतकरै तो इसप्रकारसेभी आधा कृच्छ् होताहै ॥ ० ॥ यह शंका खड़ी होती है कि आपस्तम्ब के वचन में तीन तीन दिनों का एक एक पाद कहा सो तो ठीक

प्रतीत होताहै क्योंकि उसी हिसाबसे छै दिनका अर्द्ध कृच्छ्र कहा उसी लेखेसे नौ दिनका पौन कृच्छ्र कहा उसी लेखेसे बारह दिनका पूराभी होता है॰ परन्तु योगीश्वरने तीनसौ उन्नीस ३१९ के श्लोक मूलमें चार दिनका पादकृच्छ्र बताया उसकी विधि क्योंकर मिलाईजाय क्योंकि उसलेखेमें सोरह दिनका पूराकृच्छ्र होनाचाहिये अथवा उन्हीं चार दिनको पादकृच्छ्र नाम छोड़ि त्र्यंशकृच्छ्र कहिना चाहिये था— इसका—यही समाधानहै कि उसमें लेखाजोखा लगानेकी अपेक्षा कुछनहींहै क्योंकि उन चार दिवसोंका नामही पादकृच्छ्रव्रत जुदी विशेषतासे रक्खा गयाहै इसीलिये उसे तिगुना करिके बारह दिनका प्राजापत्य नामसे पूरा कृच्छ्रबतावेंगे (तीनसौबीस का मूल श्लोक देखो) इसके सिवाय कृच्छ्रों के अनेक रूप होतेहैं सबही में बारह दिनका नियमनहींहै सो सबआगे तीनसौबीसकी अधिकोक्तिमें विस्तारसेआवेंगे तब समुझिलेना ॥ ० ॥ उपवास भी चौथे व्रतका स्वरूप मूलश्लोकमें कहागया तिसके लक्षण भी अनेकहैं सो यहां देखो (उपावृत्तस्यपापेभ्योयस्तुवासोगुणैःसह उपवासः सविज्ञेयःसर्वभोगविवर्जितः)अर्थात उप—वास ये दो शब्द मिलाके नाम धराहै इस हेतुसे कि पाप कर्म्मोंसे मनको उपावृत्त करना हटाइ लेना उप शब्दसे दर्शाया फिर उस पुरुषका ठहिरना वास कहाताहै परन्तु गुणोंकेसाथ वासहोय तौ उपवास ठीक समुझाजाय यहां गुणभी वही समुझने जो ८२बयासीके परिच्छेदमें (३१३—३१४) इन्हीं श्लोकोंसे ब्रह्मचर्य आदि लिखिचुकेहैं उन्हीं सब गुणोंकासेवन और सब तरह के भोग रूपी आरामको छोड़िके एक ठिकानेपर बैठने का उपवास नाम जानो—सर्व भोगोंका छोड़ना यहांतक अभिप्रेतहै कि निपट कुछअन्नभी न खानापीना चाहिये (तपनोदयमारभ्य यामाष्टकमभोजनम् उपवासःसविज्ञेयः प्रायश्चित्ते विधीयते) अर्थात् सूर्यनारायण के उदयसे लेकर पूरे आठ प्रहरोंभर न खाना सो उपवास जानना जो प्रायश्चित्तों में कियाजाताहै परंच ऊर्द्धोक्तगुण भी सबहोनेचाहिये॰ तथा अग्रोक्त काम करनेका त्याग राखै (उपवासफलंनश्येद्दिवास्वप्नाच्चमैथुनात् स्त्रीणां संप्रेक्षणात्स्पर्शात्ताभिःसंकथनादपि) क्योंकि उपवास किये हुयेका भी फल नाश होजाता है दिनमें सोइ रहिने से या मैथुन करनेसे तथा स्त्रियोंको पूरी निगाह भर देखनेसे या उनको छुइलेनेसे या बिना छुये भी उनके निकट बैठि परस्पर बात चीत बहुत करनेसे भी उपवासोंका फल वृथा नाश होजाताहै ॥ ३१९ ॥

प्राजापत्य आदि कृच्छ्रोंके अनेक भेद अगिले परिच्छेद में देखना ॥

———※———

अथ प्राजापत्य कृच्छ्रादीनां बहुभेदानांस्वरूपनामलक्षण भेदविधायकोऽयं परिच्छेदःचतुरशीतितमः (८४)

—※—

इसपरिच्छेद में प्राजापत्य कृच्छ्र इस नाम को आदि लेकर अनेक भांतिके कृच्छ्रों का रूप नाम लक्षरा पहिँचानि जाने जायँगे— तिनमें सबसे प्रथम प्राजापत्यही के लक्षरा भेद (उनके बीच में शिशुकृच्छ्र भी) फिर अतिकृच्छ्रके लक्षरा भेद• फिर कृच्छ्रातिकृच्छ्र के लक्षरा भेद•फिर पराक नामकृच्छ्र• फिर सौम्यकृच्छ्र•फिर तुलापुरुषनाम कृच्छ्र•सबइसी क्रमसे कहेजायँगे ॥

(प्राजापत्य कृच्छ्रस्य लक्षणं)

यथाकथंचित्त्रिगुणःप्राजापत्योऽयमुच्यते ३२० (पूर्वार्धोयं)

अर्थः—जैसे हो किसी अति प्रयत्नसे तिगुना व्रत यही प्राजापत्य कहाजाता है= अर्थात—यहीव्रत पादकृच्छ्र वाला जोपहिले कहिचुके (३१९मूलश्लोकसे देखो) सो जैसेचाहो तैसे किसी प्रकारके प्रयत्नरूपी विधानसे तिगुनाकरो वही प्राजापत्य कहावै(जैसे चाहो तैसे किसी प्रकारसेकरो• इसकथनका यहतात्पर्य है कि तिगुना कई प्रकारों से होता है उनमें से कोईसा एक प्रकार जिसको तुम अपनी इच्छा से मनोज्ञ जानो उसीके योग्य जतन जैसा होता हो तिसके द्वारा तिगुना करो) सोइस गोल सोलबात का ब्यौरा बहुत लम्बा है अधिकोक्ति में॥ ३२० ॥

३२० अधिकोक्तिः= तीनसौ उन्नीस ३१९ मूल श्लोक में जिस रीति से चार दिन का पाद कृच्छ्र व्रत समझाइ चुके उसी को तिगुना करि बारह दिनका पूरा प्राजापत्य कहा तिगुना करने के भी कई ढंग हैं तिनका ब्यौरा मिताक्षराकार यहां समझाते हैं कि (अयमेवपादकृच्छ्रःयथाकथंचित्त दण्डकालितवदावृत्त्यास्वस्थानवि वृद्ध्यावा तत्राप्यानुलोम्येन प्रातिलोम्येनवा तथावक्ष्यमाणजपादियुक्तंतद्रहितंवा त्रि- रभ्यस्तः प्राजापत्यंविधीयते) अर्थात यही पूर्वोक्त पादकृच्छ्र दण्ड कालित न्याय की तरह आवृत्तियां बढाकर अथवा अपने अपने स्थान ही की वृद्धि से तिनमेंभी अनुलोम पूर्व क्रम से या प्रतिलोम उलटे क्रम से वृद्धिकरै ये दो भेद औरहैं तथैव जो आगे कहा चांहते हैं सो जपादिक भी सावहैं या उनके विनाभी तीनवार अभ्यास

कियाहुआ पूरा प्राजापत्य कहाता है) इतने भेदोंमें कोईसा एक भेद करनेवाले के विचार वाली इच्छा पर आरूढ़ है सो इन भेदों के ठीकठीक लक्षण भी यथा क्रम से आगे जुदे जुदे ग्रन्थों के प्रमाण से दर्शाते हैं=तिनमें एक दंड कालित की तरह वाले पक्ष को वशिष्ठ ने प्रकाश किया है=यथा=अहःप्रातरहर्नक्त महरेकमयाचित म् अहःपराकंतत्रैकमेवंचतुरहौपरौ अनुग्रहार्थंविप्राणांमनुर्धर्मभृतांवरः बालवृद्धातुरे ष्वेवंशिशुकृच्छ्रमुवाचह=अर्थात्—एक रोज दिन के भोजन वाला व्रत एक रोज राति में भोजन वाला एक रोज बिना मांगे भोजन का चौथे रोज निपट निराहार व्रत करिके फिर इसीप्रकार चार चार दिनों के दो फेर पिछले जानो अर्थात पांचवें दिन से वही एक एक रोज वाला क्रम साधै फिर नवमे रोज से उसी प्रकार साधै तौ यह बारह दिन में शिशु कृच्छ्र नाम का प्राजापत्य पूरा होता है जो धर्मज्ञ मनुने ब्राह्मणों पर अनुग्रह के लिये और बालक बूढ़े आतुरों के निमित्त पर कहा था (यहां इतना भेद जुदा समुझे रहिना कि बालक बूढ़े रोगियों के लिये शिशुकृच्छ्र कहा सो केवल चार दिन में होगा उसी को तिगुना करने से प्राजापत्य नाम सूधेक्रम से स्वस्थान की वृद्धिवाला पक्ष भी मनुने आपही प्रकाश किया है= यथा=त्र्यहंप्रातस्त्र्यहंसायं त्र्यहमद्यादयाचितम् परंत्र्यहंचनाश्नीयात्प्राजापत्यंचरेत् द्विजः=अर्थात्—निरन्तर तीन रोज तक दिन में भोजन फिर तीन दिन राति में भोजन वाला नक्त व्रत करिके तीन दिन अयाचित विना मांगे भोजन का व्रत करै फिर सब से पीछे तीन दिन कोरा निराहार करै तौ भी यह बारह दिन का प्राजापत्य होगा ॥ इसीको उलटे क्रमसे प्रातिलोम्यावृत्तिके नामसे वशिष्ठने प्रकाशकिया है=यथा=प्रातिलोम्यंचरेद्विप्रःकृच्छ्रं चान्द्रायणोत्तरम्=अर्थात्—ब्राह्मण इसीप्राजापत्यकृच्छ्रको उलटे क्रमसे आचरै चान्द्रायण करनेकेबाद अर्थात् पहिले चांद्रायण करै फिर इस प्राजापत्य को उलटे मार्गसे साधै किन्तु पिछले कोरे निराहार वाले तीनि व्रतोंको सबसे पहिले फिर अयाचित व्रतोंको फिर नक्तव्रतोंको फिर दिन के भोजनवालोंको यही उलटा क्रमठहिरा ॥ जपादिकोंकेविना केवल कृच्छ्रही करना जो ऊपर चर्चा करचुकेहैं तिसका पक्ष अंगिराने स्त्री और शूद्र आदि के निमित्त में प्रकाशकियाहै=यथा=तस्माच्छूद्रंसमासाद्यसदाधर्म्मपथेस्थितम् प्रायश्चित्तंप्रदातव्यं जपहोमादिवर्जितम्=अर्थात्—पूर्वोक्त कारणसे सदा निर्विकल्प यहीनियमहै कि प्रायश्चित्त करनेकी इच्छासे धर्मके पन्थ पर आरूढ़ हुये शूद्रको पाइकर जप होम आदिमंत्रवालेविधानोंकोछोड़िकेप्रायश्चित्तवतानाचाहिये—॥अत्रजपादिनियमाः—

जपादिक सहित कृच्छ्र करनेका पक्षकहिना शेष रहा तिसको तीनों वर्णोंके निमित्त में समुझिलेना जो कुछ पढ़े लिखे भी हों क्योंकि विद्याके सम्बन्धसे उन्हीं पर योग्यता इसकी शेष रही—सो भी गौतमऋषि ने उन्हीं तीनों वर्णोंके निमित्त में स्पष्ट प्रकाशकरीहै=यथा=अथातःकृच्छ्रान्व्याख्यास्यामः हविष्यान्प्रातराशान्भुक्त्वा तिस्रोरात्रीर्नाश्नीयात् अथापरं त्र्यहंनक्तंभुंजीतापरं त्र्यहंनकंचनयाचेतथापरं त्र्यहमुपवसेत् तिष्ठेदहनिरात्रावासीत क्षिप्रकामः सत्यंवदेदनार्यैःसहनभाषेतरौरवयोधाजपे नित्यंप्रयुंजीतानुसवन मुदकोपस्पर्शनमापोहिष्ठेतितिसृभिः पवित्रवतीभिर्म्मार्ज्जयीत—हिरण्यवर्णाःशुचयःपावकाइत्यष्टाभिरथोदकतर्पणंनमोहमायमोहमायमंहसायधन्वनेतापसायपुनर्वसेनमःमौञ्ज्याय ऊर्म्याय वसुविन्दाय सर्ववर्णविन्दायनमः पारायसुपाराय महापारायपारदाय पारयिष्णवेनमः रुद्रायपशुपतयेमहतेदेवायत्र्यम्बकायैकचरायाधिपतये हरायशर्वायेशानाय उग्रायवज्रिणे घृणिने कपर्दिनेनमः सूर्यायादित्यायनमः नीलग्रीवाय शितिकंठायनमः कृष्णायपिंगलायनमः ज्येष्ठायश्रेष्ठायवृद्धायेंद्रियाय हरिकेशाय ऊर्ध्वरेतसेनमः सत्यायपावकाय पावकवर्णायैकवर्णाय कामाय कामरूपिणेनमः दीप्तायदीप्तरूपिणेनमःतीक्ष्णायतीक्ष्णरूपिणेनमःसौम्यायपुरुषाय महापुरुषायमध्यमपुरुषायउत्तमपुरुषायब्रह्मचारिणेनमः चन्द्रललाटायकृत्तिवाससेनमः—इति—एतदेवादित्योपस्थानमेतास्वाऽऽज्याहुतयो। द्वादशरात्रस्यांतेचरुंश्रपयित्वाएताभ्योदेवताभ्योजुहुयात्—अग्नयेस्वाहा सोमायस्वाहाअग्नीषोमाभ्यामिंद्राग्निभ्या मिंद्रायविश्वेभ्यो देवेभ्योब्रह्मणेप्रजापतये अग्नयेस्विष्टकृते—इति—अंते ब्राह्मणभोजनम्—तत्र(तिष्ठेदहनिरात्रावासीतक्षिप्रकामः) इत्यस्यार्थः—यस्तुमनसोऽप्येनसःक्षिप्रमेवैनैवकृच्छ्रेणाक्षिप्रंमुच्येयं इत्येवंकामयतेअसावहनिकर्मविरुद्धेषुकालेषुतिष्ठेद् रात्रावासीत(एवंरौरवयोधाजपःनमोहायेत्यादिभिस्तर्पणमादित्योपस्थानादिकंचत्त्वपरणादिकंचयोगीश्वरायनुक्तंक्षिप्रकामःकुर्वीत— अतएवयोगीश्वराद्युक्तप्राजापत्यद्वयस्थानेगौतमोयमनेकोनिकर्त्तव्यतासहितंद्रष्टव्यं एवमन्यान्यपिस्मृत्यंतरोक्तानि विशेषणान्यस्मिन्द्रष्टव्यानीतिमिताक्षराकाराः=अर्थात्—गौतम आदिके नामसे मिताक्षराकार इस बहुतबड़े विधानको ग्रन्थान्तरसे खींचकेदर्शातेहैं सोयथाक्रमसेदेखो=अब यहांसे कृच्छ्रोंका व्याख्यान करेंगे जैसा तीनदिन हविष्य जो धान आदि प्रातःकालिक भोजन करिके उन्हीं रात्रों में कुछ न खाय अनन्तर इसके और भी तीनरोज नक्तभोजी होकेरहै अर्थात् दिनमें न खाय रातिही में खायाकरै फिर तीनदिन अयाची होके किसीपर न मांगै तथा और भी तीनदिन कोरा उपवास करते दिनमें

रहै तथा रात्रिमें भी जो शीघ्र अपने पाप मोचनकी कामना रखताहो तौ ये नियम साधै सत्यबोलै दुर्जनों से बातचीत न करै और सामवेदोक्त रौरवयोध नामका साम जप होताहै तिसको नित्य दिनमें उचित समय पर बैठिके जपै और सर्वदा नित्यही त्रिकालस्नानकरै और आपोहिष्ठा इत्यादि पवित्रवती तीनि ऋचाओंसे मार्जन करै फिर इसके अनन्तर (हिरण्यवर्णाःशुचयःपावकाः)इत्यादि आठ ऋचाओंसे जलका तर्पण करै इसके अनन्तरा ऐसे चिह्न से आगे नमोहमाय आदि लेकर कृत्तिवास से नमः पर्यन्त जितने मंत्र ऊपर लिखे मौजूद हैं उन सबको पढ़िकर आदित्यका उपस्थान करै अर्थात् सूर्यके सन्मुख खड़े होकर दृष्टिमिलाकर इतने मंत्रोंसे स्तुति करै और जलमें तर्पण इन मंत्रोंसे भी करै अर्थात् जैसा हिरण्यवर्णा आदि आठऋचाओं से करना कहिचुके तैसा उपस्थानके मंत्रोंसे जुदा तर्पणभी करनाचाहिये और इन्हीं उपस्थानवाले जुदे जुदे मंत्रोंसे घृतकी आहुति भी एकएक देनीचाहिये यह रोजरोज की साधना विधि कहीगई ऐसा बारहदिन किये पीछे होमकेलिये चरु पकाइके इतने देवताओं के अर्थहोम करै किन्तु जो (अग्नयेस्वाहा आदि मंत्रहैं तिनसे आहुतेंदेकर पूर्वोक्त उपस्थान और तर्पणके मंत्रोंसेभी होमकरना फिर पीछेसेब्रह्मभोजकराना ॥०॥ यद्यपि यथाक्रमसे समस्त विधानके अर्थलिखेगये परन्तु बीचमें(तिष्ठेदहनिरात्रावासी तक्षिप्रकामः)ये चौदह अक्षर जो प्रारंभके समीपही आचुकेहैं तिनका विशेष ब्यौरे वारअर्थ सबसे नीचे आकर मिताक्षराकार जुदाभी दर्शातेहैं कि-क्षिप्रकाम उसपुरुष का नामहै जो मनसे अपने हृदयसे कामना रखताहो कि मैं शीघ्र अपने पापसे छूटों अर्थात् एकही कृच्छ्र करिके शुद्ध होसकों इसको चाहिये कि दिनमें पूजा कर्म के अविरोधी उचित कालोंमें बैठे वा उपस्थान आदि मध्ये सूर्यके मध्य समयपर खड़ा होय एवं रात्रिमें जहां जैसा उचित हो उसीपर स्थितहोय (तिससे यह सिद्धांत ठहिरा कि रौरवयोध नामका जप और नमोहाय आदि मंत्रोंसे तर्पण तथा उन्हींसेसूर्यका उपस्थान आदि जो कुछ लिखिचुके या खीरि पकाना आदि और जोकुछ कहागया कि जिनबातोंको योगीश्वर आदिने प्राजापत्यके साथमें नहीं दर्शाया सो सब उसको करना चाहिये जो शीघ्र अपने काम की सिद्धि चाहै—इसी से यहभी तात्पर्य ठहरा कि योगीश्वर आदिकेबताये दोप्राजापत्योंके स्थानपर इसगौतमकीकर्तव्यता सहित विचारकरै क्योंकि गौतम औरभी अनेकोंने ऐसाही कहाहै॥ ३२०॥यह तीनसौबीस के पूर्वार्द्ध श्लोकवाली अविकोक्ति पूरी हुई इसमें केवल प्राजापत्यही के लक्षण भेद कहेगए ये सबकृच्छ्रही कहातेहैं इससे आगे अतिकृच्छ्र के लक्षण कहेजायँगे ॥

(अतिकृच्छ्रस्वरूपं)

अयमेवातिकृच्छ्रःस्यात्पाणिपूरान्नभोजनः ३२०

अर्थः-यही अति कृच्छ्र होय यदि पाणिपूर अन्न भोजन होय=अर्थात्- यही प्राजापत्य जो ऊपर कहिचुके सो अतिकृच्छ्रनाम कहानेलगै जो एक मुट्ठीभर अन्न खाकर कियाजाय-इसका भी यह तात्पर्य्यहै कि प्राजापत्य सर्व्वथा उसी रीति से कियाजाय जैसा लक्षण उसका कहिचुके हैं परन्तु इतनी विशेषता होनी चाहिये कि उसमें जहांजहां दिनके या रातिके भोजनोंमें बाईस या चौबीस या छब्बीसकौर भोजन करना लिखाहो तिसको छोड़ केवल एक मुट्ठीभर अन्न भोजन कियाजाय इतनी विधि बदलनेसे अतिकृच्छ्र कहाताहै और अन्तके दिवसोंमें जहां कोरा उपवास कहिचुके सो यहां भी उसीतरह कियाजायगा उसमें मुट्ठीभर अन्न की अपेक्षा नहींहै और वहांपर प्राजापत्यके चारज़ुदेपाद या तीनिही पाद जैसे कहिचुके तिनकी उलटा पलटी अर्थात् अनुलोम या प्रतिलोम क्रम जैसा कुछ कहा गयाथा सो सब यहां भी उसी प्रकार समुझे रहिना॥ ३२०॥

३२० अधिकोक्तिः=यत्तुमनुनोक्तं=एकैकंग्रासमश्नीयात्त्र्यहाणित्रीणिपूर्व्ववत्‌ ॥ त्र्यहंचोपवसेदन्त्यमतिकृच्छ्रं चरन्द्विजः=अर्थात्-मनुने यह कहाहै कि तीनि तीनि दिनोंके तीनि फेर कुल्ल नौ दिनतक एकही एक ग्रास भोजन करै सो उसी पहिली रीतिसे (कि जैसा कृच्छ्रव्रत में तीन दिन सवेरे तीन दिन सांझको तीन दिन विना मांगे जब कोई लेआवे तभी खाय यही प्राजापत्य में कहि चुके हैं उसीके अनुसार यहां नौ दिन भर एक एक ग्रास रोज खाकर) पीछेसे तीन दिन कोरे उपवास करै तौ यह द्विजातीका अतिकृच्छ्रव्रत कहावै-अर्थात्-पहिला प्राजापत्य जो कहिचुके सो कृच्छ्रहीकहाजाता यह अतिकृच्छ्रकहावै और कृच्छ्रातिकृच्छ्र इससे आगे कहा जायगा वह ३२१ तीनसौइक्कीस मूलश्लोकमें देखना इन तीनोंमें यह भेदहै कि पहिला छोटा दूसरा उससे बड़ा और तीसरा इनदोनोंसे बड़ा होगा (मिताक्षराकार कहितेहैं कि अति कृच्छ्र में योगीश्वरने मुट्ठी भर अन्नखाना कहा और मनुने एक ग्रासभर अन्न खाना कहा तिससे यह कठिन प्रतीत होता समर्थ पुरुष को बताना चाहिये) यथार्थ में ये दोनों बात बराबर हैं कुछ भेद नहीं क्योंकि एक ग्रास भी मोरके अंडे बराबर कहिचुके हैं वह अण्डा एक मुट्ठीभर होताहै• तिससे यह भी न कहिना चाहिये कि यह समर्थको बताना वह असमर्थ को॥ ३२०॥

(कृच्छ्रातिकृच्छ्रस्यपराकस्यचरूपं)

कृच्छ्रातिकृच्छ्रःपयसादिवसानेकविंशतिम् । द्वादशाहोपवासेनपराकःपरिकीर्तितः ३२१

अर्थः—एकविंश २१ दिनपर्यन्त दूधपीकर व्रतकियाजाय सो कृच्छ्रातिकृच्छ्रनाम कहाताहै—कितना दूधपीकर इसअपेक्षासे ३१८ तीनसौ अठारहकी अधिकोक्तिमेंपराशरका बचन देखो=गौतम ने केवल जल पीकर बारह दिनका कृच्छ्राति कृच्छ्र व्रत बताया है (अब्भक्षस्तृतीयःसकृच्छ्रातिकृच्छ्रः) अर्थात् पहिले दो भाँति के रूप कहिकर पीछेसे कहाहै कि तीसरा वह जो सिर्फ जलखाके होय सो कृच्छ्रातिकृच्छ्र नाम जानो ॥ । ॥ बारहदिनकोरा उपवास करनेसे पराक व्रत कहाता है ॥ ३२१ ॥

(सौम्यकृच्छ्रस्यरूपं)

पिण्याकाचामतक्राम्बुसक्तूनांप्रतिवासरम् । एकरात्रोपवासश्चकृच्छ्रःसौम्योऽयमुच्यते ३२२

अर्थः—पिण्याक• आचाम• तक्र• अंबु• सक्तू• इनका प्रतिवासर एक एकसावन करिके पीछे से एक दिन कोरा उपवास भी करै=अर्थात्—प्रथम दिन तिलोंका पीना खली • दूसरे दिन आचाम अर्थात् भात का माड •तीसरे दिन मट्ठा• चौथे दिनजल• पांचवें दिन सतुआ धानके बने अथवा जौ के बने• छठे दिन कोरा उपवास करिके छे दिनका यह सौम्यकृच्छ्रव्रत कहाताहै (कितनी कितनी ये चीजें खाय इस अपेक्षामें यह समझिलेना कि जितना थोड़ा खानेसे प्राणोंकी रक्षा बनी रहेगी उतना खाय बहुत नहीं ॥ ३२२ ॥

३२२अधिकोक्तिः=जावालमुनिने चारिही दिनका सौम्यकृच्छ्रकहाहै=यथा=पिण्याकंसक्तवस्तक्रंचतुर्थेहन्यभोजनम्दद्यात्सोवैर्दक्षिणांदद्यात्सौम्योऽयंकृच्छ्रउच्यते=अर्थात्—एक दिन पीना• दूसरे सत्तू• तीसरे मट्ठा• चौथे दिन कोरा उपवास और एक वस्त्रकी दक्षिणादान करै तो यह सौम्यकृच्छ्र कहाजाताहै ॥ ३२२ ॥

(तुलापुरुषकृच्छ्रस्यरूपं)

एषांत्रिरात्रमभ्यासादेकैकस्ययथाक्रमम् । तुलापुरुषइत्येषज्ञेयःपञ्चदशाहिकः ३२३

अर्थः—इन पांचोंका तीन रात्रि एक एकका अभ्यास यथा क्रम करने से यह पन्द्रह दिनका तुला पुरुषनाम कृच्छ्र व्रत कहाताहै=अर्थात्—यथा क्रमसे यह कि उन्हीं पूर्वोक्त तिलखली आदि पांचोंमें पहिली चीजको पहिलेतीनदिन फिर दूसरी

को तीन दिन फिर तीसरीको तीन दिन फिर चौथीको तीन दिन फिर पाँचवींको तीन दिन खाकर पन्द्रह दिन पूरे करै (इसमें पन्द्रह दिनका नियम कहिदेनेसे छठे दिन कोरे व्रतकी मनादी ठहरी ॥ ३२३ ॥

३२३ अधिकोक्तिः=यमने इक्कीस दिनका तुला पुरुष बताया है=यथा=आचाममर्थापिण्याकंतक्रंचोदकसक्तुकान् त्र्यहंत्र्यहप्रयुंजानोवायुभक्षस्त्र्यहंव्रयम एकविंशतिरात्रस्तुतुलापुरुषउच्यते (इतिहारीतोक्तेऽतिकर्त्तव्यताग्रन्थगौरवभयान्नलिख्यते इति मिताक्षरा=अर्थात्–माड़•पीना•मठा• जल•सत्तू• इनको तीन तीन दिन खाता हुआ वादि पन्द्रह दिनके छैदिन वायु भक्षीहोय अर्थात् कोराव्रतकरै तौ यह इक्कीस रात्रिका तुला पुरुषव्रत कहावै (मिताक्षराकार कहितेहैं कि हारीत के बनाए ग्रन्थ में यह बात बहुत बडी कर्त्तव्यतासे वर्त्तमानहै हम ग्रन्थ बढ़िजानेके भयसे उसे नहीं लिखतेहैं ॥ ३२३ ॥ अब अगले परिच्छेदमें चान्द्रायणव्रतोंके भेद और उनकेसाथ भी थोडासाकृच्छ्रों का वर्णन कियाजायगा ॥ ३२३ ॥

अथचान्द्रायण सोमायन मासिकव्रतभेदानां नामलक्षण विधिप्रकाशकोऽयंपरिच्छेदः पञ्चाशीतितम (८५)

—*—

इस परिच्छेदमें चान्द्रायण मासिक व्रतके अनेक लक्षण भेद उनकी विधि और नामों सहित प्रकाश कियेजायँगे तिनमें प्रथम• यवमध्यचान्द्रायण•पिपीलिकामध्यचान्द्रायण फिर सबका विधान•फिर साधारणचान्द्रायण• यतिचान्द्रायण• शिशुचान्द्रायण• ऋषिचान्द्रायण• सोमायन के विधान• ये सब इसी क्रमसे लिखेजायँगे ॥

(चान्द्रायण व्रत रूपं)

तिथिवृद्ध्याचरेत्पिण्डान्शुक्लेशिखण्डसम्मितान्। एकैकंह्रासयेत्कृष्णेपिंडंचांद्रायणंचरन् ३२४

अर्थः–चान्द्रायणको करतेहुये शुक्लपाखमें शिखीमोरके अण्डे समान पिण्डों का तिथिकी वृद्धिसे वढाते हुये चरै भक्षण करै फिर कृष्णपाख में एक एक पिण्ड घटाताजाय=अर्थात्–शुक्लपक्षकी प्रतिपदामें प्रारम्भकरै उस दिन छिपीहुई चन्द्रमा की एकही कलाहोतीहै तिसमें एक गोला दालि चावल आदि अन्नका मोरके अंडे

बराबर बनाके खाय फिर द्वितीयाको दो पिराड तृतीया को तीन इसी रीतिसेपूर्णा-मासीको पन्द्रह पिराड खाइके अँधेरी प्रतिपदा को १४ चौदह पिराड खाय दोयज को १३ तेरह पिराड तीजको १२ बारह पिंड इसीप्रकार कृष्णाचतुर्दशीको एकही ग्रास खाकर अमावास्यामें निपट कोई कला चन्द्रमाके नहींरहतीहै उसदिन कोरा उपवास करै तौ यह चान्द्रायण व्रत कहाता है ॥ ३२४ ॥

३२४ अधिकोक्तिः=वशिष्ठः=एकैकंवर्धयेत्पिडंशुक्लेकृष्णेचह्रासयेत् इन्दुक्षयेन भुंजीतएषचान्द्रायणोविधिः=अर्थात्—वशिष्ठने साफ यही कहाहै कि शुक्लपाख में एक एक पिंड रोज बढ़ावै और कृष्णापाखमें एक एक रोज घटावै परन्तु इन्दुक्षय नाम जो अमावास्याहै तिसकेरोज कुछ भी न खाय यह चान्द्रायणको विधि जानो (चन्द्रमाके अयनका बढ़ना घटना जैसा होताहै तैसाही आचरण इस व्रतके कर्म्म का होताहै तिससे चान्द्रायण इसका नाम ठहिरा) जैसा यह कहागया तिसका विशेषनाम यवमध्य चान्द्रायण भी कहाताहै क्योंकि जौ के दोनों छोर नोकैं और बीचमें मोटापन होताहै उसीप्रकार इसचान्द्रायणमें दोनोंछोर एकहीएक पिंडखाने से नोकैं पतरी और बीचमें पूर्णमासीके ठिकाने पन्द्रह पिराडोंको बहुत मुटाई फिर दोनों तरफ जौ के समान ढाल होताहै-इतियवमध्यंचान्द्रायणं ॥ अथपिपीलि-कामध्यचान्द्रायणविधिः—अर्थात्—यही चान्द्रायण जहां कृष्णपक्षकी प्रतिपदा से लेकर एक एक पिंड खाकर कियाजाय जिसमें लौटिकर पूर्णमासीका कोरा व्रत करनाहो जो कृष्णा प्रतिपदासे एक दिन पहिले आतीहै तौ फिर इसका विशेषनाम भी पिपीलिका मध्य कहाजाय कि जैसे चीटा चीटी बीचमेंखाली और दोनों छोर मोगरीसे मोटे हुआ करतेहैं तैसाही डौल इसचान्द्रायणका होजाताहै (प्रकार इस का यही है कि अँधियारी परिवा से एकएक ग्रास बढाते अमावसको पन्द्रह ग्रास खाकर उजियारी परिवा को चौदह फिर इसीतरह एक एक घटाते चौदसि में एकही खाकर पूर्णिमाको निपट एक भी नहीं तिससे चीटीके आकार बीचमें खालीठहिरा क्योंकि पूर्णमासी महीनाके बीच में होती है) तथापि आचार्योंने इसप्रकारका स्वीकार नहीं किया क्योंकि अमावास्यामें निपट विधुक्षय होनेमेंको-रा व्रत करना सिद्ध होचुकाहै तिसमें पन्द्रहग्रास खानेका व्योंत आकर परताहै यह विरोध अच्छानहीं—तिससे—इसी पिपीलिका मध्य चांद्रायणका दूसरा व्योंत क-रणापराभो दर्शाते हैं कि पूर्वोक्त यवमध्य चांद्रायण के ढंगसे केवल इतना भेद क-रना चाहिये कि अँधियारी परिवासे प्रारम्भकरै परन्तु प्रथम दिन चौदह ग्रास भोगे

जो उसी पूर्वोक्त मार्गसे सोरहवें दिवस खानेपरथे फिर दूसरेदिन द्वितीया को तेरह तृतीयाको बारह इसीप्रकार घटाते जाकर चौदसिको एकही ग्रास खाकर अमावस में कोरा व्रतकरै फिर दूसरेदिन उजियारी परिवाको एक दोयजको दो तीजको तीन ग्रास इसी प्रकार बढ़ाते जाकर पूर्णमासी को पन्द्रहग्रास खाकर उसीदिन व्रत को समाप्तकरै तो यह ठीक ठीक पिपीलिकामध्य कहाजायगा कि बीचों बीच अमावस में कोराव्रत किया गया और ग्रास भी दोनों ओर एक एक दो दो आदि बढ़ते जाकर दोनों कोर मोटे होगये—और इसी व्योंतका प्रमाण आगे वशिष्ठके वचनोंसे मिलता है=यथाहवशिष्ठः=मासस्यकृष्णपक्षादौ ग्रासानद्याच्चतुर्दश ग्रासापचयभोजीसन्पक्ष शेषंसमापयेत तथैवशुक्लपक्षादौग्रासंभुंजीतचापरम् ग्रासोपचयभोजीसन्पक्षशेषंसमापयेत्=अर्थात्—वशिष्ठजीने खुलासा कहिदिया है कि महीना के अँधेरे पाख की आदि में परिवा के रोज चौदह ग्रास भोगै फिर दूसरे दिन से एक एक घटाकर भोगते हुये पाख पूराकरै (इस व्योंतमें अमावस कोरी रहिजातीहै) तैसेही उजीते पाख को आदि में परिवा के रोज एक कौर ग्रास भोगै फिर दूसरे दिनसे एक एक रोज बढ़ाकर भोगतेहुये बाकी पक्षको पूराकरै यहाँ पूर्णमासी में पूरे पन्द्रहकौर होजाएँगे यह ठीक पिपीलिका मध्य चान्द्रायणका स्वरूपहै जिसकी अमावस में नहीं खाना परा॥ ०॥ यह शंका खड़ी रहिगईहै कि जब किसी पाखमें कोई तिथि घटिजाय या बढ़िजाय तब इनग्रासोंकी मीजान कैसे ठीक आवेगी• तिसके लिये इन्हीं वशिष्ठ के वचनोंपर ध्यान करना चाहिये कि अँधेरे उजेरे दोनों पाखवाले जुदे जुदे श्लोकों में (पक्षशेषंसमापयेत) यही एकपाद आरोपित किया इसका यही तात्पर्य है कि पाखमें जितने दिन बाकी हों उनमें चाहैं कोई तिथि घटी या बढ़ीहो तौ भी पक्ष का बाकी भाग समाप्त करै अर्थात अमावस और पूर्णमासी ये दोनों पक्ष की सीमारूपी हद्दें होतीहैं इन्हीं हद्दों तक ग्रासोंका घटाना या बढ़ाना समाप्त करदेना चाहिये किन्तु एकपाखवाले कवलोंका हिसाब दूसरे पाखतक न जाने देवै इसका इसीमें समाप्तकरै—इस व्याख्यासे भी यह ध्वन्यर्थ निकसा कि तिथिके बढ़िजानेसे कवल भी बढ़ाये जायँ घटिजानेसे कौर भी घटाये जायँ—इसका दृष्टान्त जैसे उजीते पाखवाली तीजको तीनग्रास खाने होतेहैं यदि उसी तृतीयाकी वृद्धिहोकर दोतीजैं होजायँ तहाँ दोनों तीजोंको तीन तीन ग्रास खानेचाहिये• इसीप्रकार जहाँ पंचमी की हानिहोय तहाँ उसके नामके पाँचकौर न खाने होंगे अर्थात चौथिमें चारग्रास खाकर दूसरे रोज यद्यी आपरने में छैग्रास होंगे इन्हीं दोनों दृष्टान्तसे सर्वत्र समझि

लेना—क्योंकि (तिथिवृद्ध्यापिंडान्चरेत) यह ३२४ मूलश्लोक में पहिला पादहै योगीश्वर का तिससे भी यही नियम सिद्धहोताहै कि तिथियोंके आधीन पिंड होते हैं ॥ ० ॥उपयोगिविधानं—चांद्रायणका उपयोगी विधान भी गौतमने पिपीलिका मध्यकी प्रधानता से कहिकर यवमध्यपर भी अतिदेश उसका किया है बल्कि वही विधान सबतरह के चांद्रायणोंपर समझना=तदाहगौतमः=अथातश्चांद्रायणंतस्योक्तोविधिः कृच्छ्रे वपनव्रतंचरेत् श्वोभूतांपौर्णमासीमुपवसेत आप्यायस्व संतेपयांसिनवोनव इतिचैताभिस्तर्पणं माज्यहोमोहविषश्चानुमंत्रणंउपस्थानंचचन्द्रमसः॥ यद्देवादेवहेडनमितिचतसृभि राज्यंजुहुयात् देवकृतस्येतिचांतेसमिद्भिः(ओंभूः ओं भुवः ओंस्वः ओंमहः ओंजनः ओंतपः ओंसत्यंयशः श्रीऊर्क्इट् ओंजः तेजःपुरुषःधर्मःशिवः) इत्येतैर्ग्रासानुमन्त्रणं—प्रतिमन्त्रंमनसानमःस्वाहा इतिवासर्वानेतैरेव ग्रासान्भुंजीत॥तद्ग्रासप्रमाणमास्याविकारेण चरु भैक्ष्य सक्तु कण यावक शाक पयो दधि घृतमूल फलोदकानि हवींषि उत्तरोत्तर प्रशस्तानि ॥ पौर्णमास्यांपंचदशग्रासान्भुक्त्वा एकैकापचयेनापरपक्षमश्नीयात्— अमावास्यायामुपोष्यै कैकोपचयेन• पूर्वपक्षंविपरीत मेकेषामेषचांद्रायणोमासः इति=अत्रचमिताक्षरा—अत्रग्रासप्रमाणमास्याविकारेणेति यदुक्तंतद्बालाभिप्रायं शिख्यंडपरिमितपंचग्रासभोजनाशक्तेः—क्षीरादिद्रवहविषां शिख्यंडपरिमितत्वंतु पर्णपुटकादिनासम्पादनीयं—तथाकुक्कुटांडादिमितकादीनितु ग्रासपरिमाणानि स्मृत्यंतरोक्तानिशक्तविषयाणि शिख्यंडपरिमाणाल्लघुत्वात्तेषां—यत्पुनरुक्तंश्वोभूतांपौर्णमासीमुपवसेदित्यत्र चतुर्दश्यामुपवासमभिधाय पौर्णमास्यांपंचदशग्रासान्भुक्त्वेत्यादिना द्वात्रिंशदहरात्मकत्वं चांद्रायणस्योक्तंतत्पक्षांतर प्रदर्शनार्थंनसार्वत्रिकं योगीश्वर वचनानुरोधेन त्रिंशदहरात्मकस्यदर्शितत्वात् यद्येतत्सार्वत्रिकं स्यात् तदानैरन्तर्येणसंवत्सरे चांद्रायणानुष्ठानानुपपत्तिःस्यात् चन्द्रगत्यनुवर्तनानुपपत्तिश्च=अर्थात्—गौतमका कथन है कि अब यहां से चान्द्रायण कहिना है तिसके विधानका यह अनुक्रम है कि एक चांद्रायण क्या बल्कि सभी कृच्छ्रमात्र में पहिले मुंडन कराइ के व्रतका आरम्भ करै तहाँ आरम्भसे एकदिन पहिले (वपनव्रतंचरेत) वपनके निमित्त व्रतआचरै अर्थात् जहां पूर्णमासीसे चान्द्रायण प्रारम्भकरना स्वीकार हो तहां दूसरेदिन सवेरे पूर्णमासी आने वाली देखि पहिले दिन मुण्डनकराइके उसी दिन मुंडनके निमित्त कोरा उपवासकरै(इसीप्रकार अन्यकृच्छ्रोंमें समझिलेना)पूर्णमासीसे रोजका यह कृत्यकार्य है कि (आप्यायस्वसन्ते पयांसि नवोनव) इत्यादि चिह्नवाली इतनी ऋचाओंसे तर्पण और घीका होम और जिस किसी अन्नके ग्रास

जलानेहों उसका नामहविष् होताहै उसीहविष् का अनुमन्त्रण अर्थात् मन्त्र पढ़िके पवित्रकरना और चन्द्रमाका उपस्थान उसकेसामने खड़े होकर मन्त्रोंसे स्तुतिकरना और ॥ यद्देवादेवहेडनं आदि चारऋचाओंसे घृत होमैं और हे।सके अन्तमें देवकृतस्य इत्यादि वेद मन्त्र से समिधों से घृत लेकर होमैं ॥ फिर (ओंभूः आदिसे शिवःपर्यंत) इतने मन्त्रों से पढ़िकर अपने रोजके मामली ग्रासोंको पवित्र करै—तिससे अनन्तर फिर एक एक ग्रास हाथ में लेकर उन्हीं ओंभूः आदि सर्व मन्त्रों को बोलिकर पीछे से नमःस्वाहा यह मनमें कहिकर ग्रास मुहमें धरै इसी विधिसे सब ग्रासों को भोगै॥ उन ग्रासों का यह प्रमाण है कि जितना सुख पूर्वक मुहमें चलाजाय किन्तु मुखपसारना आदि विकार न करने परैं (किन चीजों के ग्रास होयँ सो कहिते हैं) चरु अर्थात् पकाया भात वा खीरि॰भैक्ष्य अर्थात् भिक्षासे मांगिलाया मिलाभूलाअन्न॰ सतुआ॰कनकी तन्दुल की॰ यावक जौ का दलिया॰ शाक जो बथुआ सरसों आदि का इस काम के योग्य समझि परै॰ दूध॰ दही॰ घृत॰मूल अर्थात् आलू घुइयांसकरकन्द आदि जो निषिद्ध न हों॰फल जोजो इस काम योग्य समुझिपरैं जैसे बेल खरबूजा आदि॰ उदक गंगाजल आदि जो अतिशय पवित्र हों॰इस कामके निमित्तमें ये सभी हविष् कहाते हैं इनमें पहिलेकी अपेक्षा पिछले पिछले अधिक श्रेष्ठजानो यह रोज रोज का विधान कहिके गौतम जी ग्रासों को प्रारम्भ करने का प्रकार अब कहिते हैं कि॥ प्रथम पूर्णमासी के रोज पन्द्रह ग्रास खाइके अगिले दिन दूसरे पाख की परिवा से एक एक घटाते हुये रोज खाया करै=फिर अमावस में कोरा उपवास करिके परिवासे एकएक ग्रास रोज बढ़ावै तौ यह पूर्णमासी दूसरी पर्यंत फिर पन्द्रह ग्रास खाकर एक मास चान्द्रायण कहाता है (इसीका विशेष नाम पिपीलिका मध्य पहिले कहिचुके हैं) गौतम कहिते हैं कि किरले एक आचार्यों के मतसे यही चान्द्रायण पहिला पाख उलटा करदेने से भी होता है (जिसका नाम यवमध्य कहागया और विधान भी योगीश्वर आदिने कहा) यह सब गौतम का कथन पूरा होचुका=इसपर मिताक्षरा कार कहिते हैं कि—गौतम के विधानमें ग्रास का प्रमाण जो यह कहा गया कि जितना सुख से मुहमें जासकै सो बालक प्रायश्चित्तियों के अभिप्राय पर समझना क्योंकि मोर के अण्डे बराबर उन्हीं के मुह में नहीं जासक्ता है और बालक उनको समझना जो मोर के अंडे बराबर पांच ग्रास एक दिनमें न खाइसकैं— और दूध आदि पतरी ढरकनी चीजें जो हविष्में गिनतीकरीं तिनके ग्रास मोरके अण्डे समान क्योंकर होसकैं तहां उतने परिमानवाली

पत्ते की दोनी आदि से नाप तौल करनी चाहिये— और इन्हीं ग्रासें के परिमान किसी ग्रन्थ में मुर्गीके अराडे समान किसीमें बहुत बड़े हरे आँवरे के समान इत्यादि भेद जहां देखिपरैं तिनको भी मनुष्यों की शक्ति के भेद पर समझि लेना क्योंकि मोरके अराडा से ये सब छोटे हैं—और जो गौतम ने चौदसि का उपवास फिर पूर्णमासी से पन्द्रह ग्रास का प्रारम्भ लेकर महीनाकी दूसरी पूर्णमासी तक चान्द्रायण की समाप्ति कही तिसमें चौदसि पूनों के दो दिन बढ़ि जाने से बत्तीस दिन होगये सो यह एक दूसरा पक्षांतर समझि लेना कि जहां कोई बत्तीस दिनकी विशेषता से करनाचाहै सिर्फ तहांका यह नियमहै सर्वत्र नहीं क्योंकि सर्वत्रका सामान्यवही नियम है जोकि याज्ञवल्क्य आदि अनेकों ने तीस दिनका चांद्रायण ठहिराया॰ कदाचित् बत्तीस दिन वाला भी सर्वत्र के निमित्त माना जाय तौ यह विरोध खड़ा होता है कि जब कोई कहीं एक सम्वत्सर में निरन्तरबारह चांद्रायण की साधना कियाचाहै तहांपूरे बारह न होसकैं तथापि यदि ऐसा समाधान दियाजावै किबारह पूरे करने के लिये एक संवत्सर से उपरालू दिनबढ़ाये जासक्तेहैं जिससे बारहमहीने और चौबीस दिनमें प्रयोग पूरा होगा॰ तहां यह सबसे बड़ा व्यतिक्रम है कि चां॰ द्रायण चन्द्रमा की गतिके ऊपर होताहै वह गतिभी इतने दिन बढ़ानेसे सर्वत्र छूटि जायगी कि जिसके छूटिजानेसे मुख्य क्रमका व्यतिक्रम होजायगा इति मिताक्षराकाराः॥०॥एक यहवार्ता यादिरखनी चाहिये कि विधिमें चन्द्रमाका उपस्थानआदि कहिचुके हैं सो वह चन्द्रमा का उदयहुये बिना असंगत है तिससे रोज रोज चंद्रोदय के समय पर विधान और पीछेसे उक्त ग्रासें का भोजन किया जायगा चाहैं किसी देरा उदयहोय इसीकारण चांद्रायण व्रत सबसे कठिन कहाता और इसीसे अमावस को एकभीग्रास नहीं खायाजाता क्योंकि उस दिन बिलकुल उदय नहींहोताहै—परन्तु ऐसा नियमभी उन्हींको समझना जो साक्षर सज्ञान विद्वान् होते संपूर्ण विधिके साथ साधैं अन्यथा मूर्ख जन उदय होने बिनाभी रात्रिमें किसी एक नियत समयपरग्रास खाकर व्रत करते हैं क्योंकि जो चन्द्रोदयके आधीन करनाचाहैं तौफिर निपट व्रत का होनाभी उनसे रहिजाय तिससे उत्तम कल्पकी उपेक्षासे मन्द कल्पका स्वीकार कराया जाता है (गौतम की कही विधि के प्रारम्भ में पूर्णमासी पहिले जो मुंडन कराना कहा यद्यपि चतुर्दशी में क्षौर करनेका निषेध है तथापि वाचनिक विधि के विशेष वाक्यसे कुछ दोष नहींहै) सामान्य वाक्यसे विशेष वाक्य बलवान् होता है इसी लिये (तीर्थेक्षौरं चतुर्दश्यां) तीर्थमें चतुर्दशी को क्षौर कराना योग्यहै यह

विशेष वचन घंटाघोष है॰ और प्रायश्चित्त का स्थलभी एक प्रकारका तीर्थ गिना जाता क्योंकि तीर्थके लक्षण शास्त्रोक्त भी अनेक हैं तिससे प्रायश्चित्तके निमित्त से चतुर्दशी में भी वपनका कुछ दोष नहींहै यह समझिलेना ॥ ३२४ ॥

अगले मूलश्लोक से दूसरी भांति के चांद्रायण कहे जायँगे ॥

(साधारणचांद्रायणं)

यथाकथंचित्पिंडानांचत्वारिंशच्छतद्वयम्। मासेनैवोपभुंजीतचांद्रायणमथापरम् ३२५

अर्थः—यह और चांद्रायण है कि जैसे किसी प्रकार के प्रयत्नसे हो दोसौचालीस पिंडोंका व्योंत लगाकर एकहीमास भरमें भोगै=अर्थात्—ऊपर जो तीसदिन का चांद्रायण योगीश्वर ने कहा तिसमें समस्त२२५ दोसौ पचीसग्रास महीनाभरके होतेहैं उससे उपरांत् गौतम के कहे विधान में दूसरी पूर्णमासी के पन्द्रहग्रास बढ़िजानेसे २४० दोसौचालीसकौर होजातेहैं उन दोनों प्रकारसे जुदा यह प्रकार कहा चाहते हैं इसलिये२४० दोसौचालीसपिंड तीसही दिनमें भोगेजायँ तिनके व्योंतका कोईसा नियत लेखा एकहीसा नहींहै अर्थात् इसके लेखे में अपनी इच्छाके अनुसार युक्ति लगानी होतीहै इसीसे यह कहा गया कि जैसे किसी प्रकार से होसके तैसे बारहबीसी पिराडोंका व्योंत एक महीना के दिनों पर फैलावै—उस फैलावा के इतने डौल हैं कि रोज मध्याह्न के समय आठग्रास खानेका नियम राखै अथवां चारकौर दिनमें चार कवल रात्रिमें खानेका नियम साधै तौ भी तीसदिनमें दोसौचालीस होजायँगे अथवा एकदिन चारपिराड दूसरे दिन बारहपिराड इस डौलसे भी हिसाव ठीक आवैगा अथवा एकदिन कोरा उपवास फिर दूसरे दिन सोरह पिराड इकट्ठे या दिनरात्ति में दोवार भोगै तौभी वही लेखाहै॰ इसीतरह अन्यप्रकार भी कल्पना किये जासक्तेहैं तिनमें कोईसा एक प्रकार अपनी इच्छा और शक्ति संभव आदि के अनुकूल सोचिके जैसा कुछ पहिलेदिन मंजूरकरै वही डौल तीसदिनतक चलाजाय तौ यह पूर्वोक्त यवमध्य और पिपीलिकामध्य दोनोंसे जुदा प्रकार (साधारण) इस नामसे कहाता है (यतिचांद्रायण॰ शिशुचांद्रायण आदि इनके नाम भेद भी होतेहैं सो अधिकोक्ति में मनुके वचनों से देखना ॥ ३२५ ॥

३२५ अधिकोक्तिः—जितने डौल यहां दर्शाये सो नामसहित मनुने भी कहेहैं=यथा=अष्टावष्टौसमश्नीयात्पिंडान्मध्यंदिनेस्थितेनियतात्माहविष्याश्यतिचांद्रायणां चरेत् ॥ चतुरःप्रातरश्नीयात्पिंडान्विप्रःसमाहितः चतुरोऽस्तमितेसूर्येशिशुचांद्रायणं

चरन् ॥ यथा कथंचित्पिंडानांतिस्रोऽशीतीःसमाहितः मासेनाश्नन्हविष्यस्यचंद्रस्यैतिसलोकताम=अर्थात्—मनुने यह कहाहै कि जो कोई ब्राह्मण यतिचांद्रायण करनाचाहै सो ठीक दुपहरके समय अपने शरीरको वशमें राखे हुये आठपिंड हविष्य के अर्थात् पवित्र अन्नोंके रोज रोज एक महीना भर भोगै तो वही यति चांद्रायण कहाताहै ॥ फिर कहिते हैं कि यदि कोई विप्र शिशुचांद्रायण कियाचाहै सो अपने शरीर और चित्तको सावधान राखे हुये चारकौर प्रातःकाल और चारकवल सूर्य अस्तहोते समय भोगै तो यही शिशु चांद्रायण कहाजाता है ॥ फिर कहिते हैं कि हविष्य जो पवित्र अन्नहैं नीवार॰सामा आदि तिसके तीनअस्सी अर्थात् बारह बीसी पिंड जो २४० दोसौचालीस होतेहैं सो चाहैं किसी प्रकारसे जैसे होसके तैसे एकही मासमें भोगै (अर्थात् जैसे ऊपर योगीश्वर के श्लोक में कहिचुके तैसे यहाँ भी समझने) तो इसरीतिसे करनेवाला भी चन्द्रमा के लोकमें जाकर जन्म लेताहै अर्थात् जिस किसीने यद्यपि कोई पाप नहीं किया जिसके प्रायश्चित्त की जरूरत हो विना जरूरत के भी ऐसा व्रत करनेवाला ऐसाफल पावैगा यह तात्पर्यहै ॥ ० ॥ ऋषिचांद्रायणं—मूल श्लोकमें पीछेसे अपरं यहशब्द जो लगाया तिसका अर्थ जो कुछ उसीजघे लिखागया सो भी ठीक है पर उसी अपर शब्दका यह भी तात्पर्य है कि अपरंनाम और चांद्रायण जो नहीं कहे तिनको भी ग्रन्थान्तर में समझिलेना= यदाहयमः=त्रींस्त्रीन्पिंडान्समश्नीयान्नियतात्माद्दढव्रतःहविष्यान्नस्यवैमासमृषिचांद्रायणंस्मृतम=अर्थात्—जो कोई ऋषि चांद्रायण किया चाहै सो एक मास अपने शरीरको अच्छे नियम से शौचके सचाव्रत साधे हुये हविष्यान्न के तीन तीन पिंड रोजखाय (इसमें सिर्फ ९० नब्बे पिंडोंका हिसाब जुड़ता है ॥ ० ॥ मिताक्षराकार कहिते हैं कि—योगीश्वर तथा मनुके कहे॰ यतिचांद्रायण॰ शिशुचांद्रायण आदि अनेक और यमका कहा ऋषि चांद्रायण॰इन सबही में यह समझिलेना कि पड़िवाको आदि लेकर चन्द्रमाकी रीतिके अनुसार पालना करनेकी अपेक्षा इनमें नहीं है तिससे सिर्फ तीसदिनका महीना चाहैं तिस किसी तिथिसे मानिके प्रारंभ किया जासकता है अर्थात् तिथियोंकी घटी बढी आदि किसी कारणसेपूरे तीसदिन माननेकेलिये यदि चौथि पंचमीआदिकिसी औरही तिथिसे प्रारंभ करनापड़े तो भी कुछ दोषनहीं॰परंतुयदिइँवेरी वारऊँरी परिवासेप्रारंभहोसके तौदहम्यंकिक श्रेष्ठजानो॥०॥ अथ सोमायनं—सोमायन इसनामसेभी एक महीनेका व्रतहै प्रकारसेहोताहै= तदाहमार्कंडेयः=गोक्षीरंसप्तरात्रंतु पिबेत्स्तनचतुष्टयात् स्तनत्रयात्सप्तरात्रं सप्तरात्रंस्तन

विशेष वचन घंटाघोष है• और प्रायश्चित्त का स्थलभी एक प्रकारका तीर्थ गिना जाता क्योंकि तीर्थके लक्षण शास्त्रोक्त भी अनेक हैं तिससे प्रायश्चित्तके निमित्त से चतुर्दशी में भी वपनका कुछ दोष नहींहै यह समझिलेना ॥ ३२४ ॥

अगले मूलश्लोक से दूसरी भांति के चांद्रायण कहे जायँगे ॥

(साधारणचांद्रायणं)

यथाकथंचित्पिंडानांचत्वारिंशच्छतद्वयम् । मासेनैवोपभुंजीतचांद्रायणमथापरम् ३२५

अर्थः—यह और चांद्रायण है कि जैसे किसी प्रकार के प्रयत्नसे हो दोसौचालीस पिंडोंका व्योंत लगाकर एकहीमास भरमें भोगै=अर्थात्—ऊपर जो तीसदिन का चांद्रायण योगीश्वर ने कहा तिसमें समस्त२२५ दोसौ पचीसग्रास महीनाभरके होतेहैं उससे उपरालू गौतम के कहे विधान में दूसरी पूर्णमासी के पन्द्रहग्रास बढ़िजानेसे २४० दोसौचालीसकौर होजातेहैं उन दोनों प्रकारसे जुदा यह प्रकार कहा चाहते हैं इसलिये२४० दोसौचालीसपिंड तीसही दिनमें भोगेजायँ तिनके व्योंतका कोईसा नियत लेखा एकहीसा नहींहै अर्थात् इसके लेखे में अपनी इच्छाके अनुसार युक्ति लगानी होतीहै इसीसे यह कहा गया कि जैसे किसी प्रकार से होसके तैसे बारहबीसी पिंडोंका व्योंत एक महीना के दिनों पर फैलावै—उस फैलावा के इतने डौल हैं कि रोज मध्याह्न के समय आठग्रास खानेका नियम राखै अथवा चारकौर दिनमें चार कवल रातिमें खानेका नियम साधै तौ भी तीसदिनमें दोसौचालीस होजायँगे अथवा एकदिन चारपिंड दूसरे दिन बारहपिंड इस डौलसे भी हिसाव ठीक आवैगा अथवा एकदिन कोरा उपवास फिर दूसरे दिन सोरह पिंड इकट्ठे या दिनराति में दोवार भोगै तौभी वही लेखाहै• इसीतरह अन्यप्रकार भी कल्पना किये जासक्तेहैं तिनमें कोईसा एक प्रकार अपनी इच्छा और शक्ति संभव आदि के अनुकूल सोचिके जैसा कुछ पहिलेदिन मंजूरकरै वही डौल तीसदिनतक चलाजाय तौ यह पूर्वोक्त यवमध्य और पिपीलिकामध्य दोनोंसे जुदा प्रकार (साधारण) इस नामसे कहाता है (यतिचांद्रायण• शिशुचांद्रायण आदि इनके नामभेद भी होतेहैं सो अधिकोक्ति में मनुके वचनों से देखना ॥ ३२५ ॥

३२५ अधिकोक्तिः—जितने डौल यहां दर्शाये सो नामसहित मनुने भी कहेहैं= यथा=अष्टावष्टौसमश्नीयात्पिंडान्मध्यंदिनेस्थितेनियतात्माहविष्यस्ययतिचांद्रायणं चरेत् ॥ चतुर प्रातरश्नीयात्पिंडान्विप्रःसमाहितः चतुरोऽस्तमितेसूर्येशिशुचांद्रायण

चरन् ॥ यथा कथंचित्पिंडानांतिस्रोऽशीतीःसमाहितः मासेनाश्नन्हविष्यस्यचंद्रस्यै तिसलोकताम्=अर्थात्–मनुने यह कहाहै कि जो कोई ब्राह्मण यतिचांद्रायण करनाचाहै सो ठीक दुपहरके समय अपने शरीरको वशमें राखे हुये आठपिंड हविष्य के अर्थात् पवित्र अन्नोंके रोज रोज एक महीना भर भोगे तो वही यति चांद्रायण कहाताहै ॥ फिर कहिते हैं कि यदि कोई विप्र शिशुचांद्रायण कियाचाहै सो अपने शरीर और चित्तको सावधान राखे हुये चारकौर प्रातःकाल और चारकवल सूर्य अस्तहोते समय भोगे तो यही शिशु चांद्रायण कहाजाता है ॥ फिर कहिते हैं कि हविष्य जो पवित्र अन्नहैं नीवार॰सामा आदि तिसके तीनअस्सी अर्थात् बारह बीसी पिंड जो २४० दोसैचालीस होतेहैं सो चाहैं किसी प्रकारसे जैसे होसके तैसे एकही मासमें भोगे (अर्थात् जैसे ऊपर योगीश्वर के श्लोक में कहिचुके तैसे यहाँ भी समझने) तो इसरीतिसे करनेवाला भी चन्द्रमा के लोकमें जाकर जन्म लेताहै अर्थात् जिस किसीने यद्यपि कोई पाप नहीं किया जिसके प्रायश्चित्त की जरूरत हो विना जरूरत के भी ऐसा व्रत करनेवाला ऐसाफल पावैगा यह तात्पर्यहै ॥ ० ॥ ऋषिचांद्रायणं–मूल श्लोकमें पीछेसे अपरं यहशब्द जो लगाया तिसका अर्थ जो कुछ उसीजघे लिखागया सो भी ठीक है पर उसी अपर शब्दका यह भी तात्पर्य है कि अपरंनाम और चांद्रायण जो नहीं कहे तिनको भी ग्रन्थान्तर में समझिलेना= यदाहयमः–त्रींस्त्रीन्पिंडान्समश्नीयान्नियतात्माहृढव्रतःहविष्यान्नस्यवैमासमृषिचांद्रायणंस्मृतम्=अर्थात्–जो कोई ऋषि चांद्रायण किया चाहै सो एक मास अपने शरीरको अच्छे नियम से जीतिके सचाव्रत साधे हुये हविष्यान्न के तीन तीन पिंड रोजखाय (इसमें सिर्फ ९० नव्वे पिंडोंका हिसाब जुड़ता है ॥ ० ॥ मिताक्षराकार कहिते हैं कि–योगीश्वर तथा मनुके कहे॰ यतिचांद्रायण॰ शिशुचांद्रायण आदि अनेक और यमका कहा ऋषि चांद्रायण॰इन सबही में यह समझिलेना कि परिवाको आदि लेकर चन्द्रमाकी गतिके अनुसार पालना करनेकी अपेक्षा इनमें नहीं है तिससे सिर्फ तीसदिनका महीना चाहैं तिस किसी तिथिसे मानिके प्रारंभ किया जासकता है अर्थात् तिथियोंकी घटी बढ़ी आदि किसी कारणसेपूरे तीसदिन माननेकेलिये यदि चौथि पंचमीआदिकिसी भौरही तिथिसे प्रारंभ करनापरे तो भी कुछ दोषनहीं॰परंतुयदिइँवैरी वाटजेरी परिवासेप्रारंभहोसके तोवहश्रेष्ठ ऐसजानो॥ ० ॥ अथ सोमायनं–सोमायन इसनामसेभी एक महीनेका व्रतजुदे प्रकारसेहोताहै= तदाहमार्कंडेयः–गोक्षीरंसप्तरात्रंतु पिबेत्स्तनचतुष्टयात् स्तनत्रयात्सप्तरात्रं सप्तरात्रंस्तन

द्व्यादस्तनेनैकेनत्र्यहंत्रिरात्रंवायुभुग्भवेत् एतत्सोमायनंनाममहापातकनाशनम्=अ-
र्थात्–गायकादूधसातदिनपीवैचारथनोंसे फिर सातदिन तीनथनोंसे पीवै फिरसात
दिन दोथनोंसे पीवै फिरछै दिनतक एकथनसेपीवै फिर तीनदिनकेवल वायुपीकेरहै
तो यह तीसदिनका सोमायन व्रत महापातकोंका विनाशकरने वालाहोताहै (इसमें
चार वा तीन आदि थनोंसे दूधपीनाकहागया तिसका तात्पर्यकेवलयही संभवहै कि
थनको मुट्ठीमें दाबिके दूधकी धारें मुहमें लीजायँ अर्थात् बासन में दुहिकरन पीना
चाहिये ॥ इसीप्रकार ग्रन्थान्तर में चारों सप्ताह बराबर कहिकर इकतीस दिनका
सोमव्रत कहा सोभी कुछविरुद्धनहीं क्योंकि इकतीसदिनकाभी महीना बिरलाहोता
है–तथाचवचनं (सप्ताहंचेत्येतद्गोस्तनराखिलमथत्रीन्स्तनान्द्वौतथैकंकुर्यात्त्रीणिप्रो
पवासाद्यदिसर्वानेतदामासिसोमायनंतत्)अर्थात् सातसातदिन गायके स्तन इसक्रमसे
पीवै कि पहले सप्ताह भर अखिलसमस्त अर्थात् चारोंथन दूसरे सप्ताहमेंतीनथन
तीसरे सप्ताहमें दोहीथनचौथेसप्ताहमेंएकहीथन पीकर पीछेसे तीनदिन कोरे उपवास
भी कियेजायँ तो यह इकतीस दिनकेमहीनामेंसोमायन व्रतहोताहै–तदपिचांद्रायणा
वसेवालेवेतिमिताक्षरा) अर्थात् मिताक्षराकार कहितेहैं कि यह सोमायन इसनामसे
भीचांद्रायणकेकार्यकेतुल्यसमझना–क्योंकि–हारीतनेपहिलेयहकहिकर किअबहम
चांद्रायणका अनुक्रम कहेंगे और वह ऐसे होताहै तैसा चांद्रायणही समझाइके सो-
मायनका भी अतिदेश किया तिससे=यह कहिकर मिताक्षराकार फिर कहिते हैं
कि=उन्हीं हारीतने दूसरा एक सोमायन भी जुदा दर्शायाहै॰सो देखौ=यदाहमिता-
क्षराकारः–यत्पुनस्तेनकृष्णचतुर्थीमारभ्यशुक्लद्वादशीपर्यन्तंसोमायनमुक्तं–यथा–च-
तुर्थीप्रभृति चतुस्स्तनेनत्रिरात्रं त्रिस्तनेनत्रिरात्रं द्विस्तनेनत्रिरात्रं एकस्तनेनत्रिरात्रं॰एव
मेकस्तनप्रभृतिपुनश्चतुस्तनान्तं॰ यातेसोमचतुर्थीतनूस्तयानःपाहितस्यैनमःस्वाहा॰ या
तेसोमपंचमी षष्ठीत्येवं यथार्थामितिथिहोमा एकमासं एनोभ्यः पूतश्चंद्रमसः समान
तांसलोकतां सायुज्यंचगच्छति इतिचतुर्विंशतिदिनात्मकं सोमायनमुक्तं तदशक्
विषयमितिमिताक्षरा=अर्थात्–हारीत के कथन को मिताक्षराकार दर्शाते हैं कि
हारीतने अँधियारी चतुर्थीसे प्रारम्भ करिके उजियारी द्वादशीतक चौबीस दिनका
सोमायन कहाहै कि–चौथिसे लेकर तीन दिनतक चारोंथनों से दूधपीवै तीन दिन
तीनथनोंसे तीनदिन दोहीथनोंसे तीनदिन एकही थनसे॰ इसीप्रकार फिर एकथनसे
लेकर चारथन पर्यन्त करै अर्थात् पहिले तीनदिन एकथनसे फिर तीनदिन दोथनोंसे
फिर तीन दिन तीन थनोंसे फिर तीन दिन चारों थनों से (ये सब दोनों फेरे जोड़िके

चौबीसदिन होतेहैं इसमेंकुछ संदेहनहीं परन्तु इन्हीं सबदिनोंमें रोजरोज तिथियोंके नामसे तिथिहोम करना भी बताते हैं कि) पहिलेदिन चौथिसे चौथिके नामसे यह मंत्रबोले (यातेसोमचतुर्थीतनूःतयानःपाहि तस्यैनमःस्वाहा) दूसरेदिन पंचमी तिथि में उसीके नामसे यह मंत्र बोले(यातेसोमपंचमीतनूःतयानःपाहितस्यैनमःस्वाहा) इसी प्रकारषष्ठीआदिके नाम जोडि जोड़ि इसीमंत्रसे रोज होमकरै० येहीतिथि होमकहाते हैं एकमास करनेसे पापोंसे शुद्धहोकर मनुष्य चन्द्रमाके बराबरी दर्जेको पहुंचताहै उसके चन्द्रलोकमें रहिने पाताहै बल्कि चन्द्रमाके शरीरहीमें संयुक्तहोके रहिताहै— इतना सुनाइके मिताक्षराकारकहितेहैं कि हारीतनेयहचौबीसदिनका भी सोमायन बताया सो उनकेलिये समझना कि जिन लोगोंसेपूर्वोक्त इकतीस या तीसदिनकानहो सके (इसमें जोतिथियोंके होमकहे तिनमें केवल मन्त्रही कहिकर सामग्री कुछनहीं बताई न कोईसा विशेष लक्षणकहा तिससेभी प्रत्यक्ष प्रतीत होताहै कि दूधकीधारैं मुहमें लेते समय मुखसे और हृदय सेभी उन मन्त्रोंका उच्चारण करै यही स्वरूपहोम का बताया किन्तु अग्नि में नहीं) परंच (इसबातका समाधान कुछनहीं हाथआता और मिताक्षरा ने इसबातपर पकडभी न खडीकरी कि साफ चौबीसदिनका व्योंत बताकर हारीतने वाक्य पूरा करनेके अन्तमें एक महीना क्यों कहि दिया—तथापि मर्यादा प्रियके विचार से हारीतके वाक्य में हेतु गर्भित ध्वन्यर्थ देखि परताहै कि बारह दिन थनों का दूध पीनेके पहिले तीन दिन कोरा उपवास करै फिर दुबारा बारह दिन थनोंको पीकर अन्तमें तीनदिन कोरा उपवास करै (इसमें विशेष भेद इतना है किऊपर मार्कंडेय आदिकोंने महीना भरमें एकहीबार तीन दिन वायुभक्षी होना कहाया हारीतने उसके दो भाग बनाकर दोनों पखवारे के आदि अन्तमें तीन तीन दिवस वायु भक्षी होना दर्शाया) तिहसे छःदिन उन्हीं चौबीस दिनमें जुडिकर पूरा महीना ठहिरा कदाचित् यह ध्वन्यर्थ न होता तो हारीत के मुखसे एक महीने का शब्द भी नहीं निकसता और ऊपर जो चौबीस दिनका नाम आया सो वह व्याख्या मिताक्षरा की प्रत्यक्ष है कि उसने बारह बारह दिनों का जोड समझाया कुछ हारीत के मुहका शब्द नहींहै० बल्कि हारीतने इसीलिये कृष्ण पाख के तीन दिन छोड़िके चतुर्थीसे थनपीनेका आरम्भ करना बताया फिर इसीलिये शुक्लपाख की द्वादशीतक थनोंकोपीकर पीछेके तीनदिन उपवासोंके अर्थ बाकी रखवा दिये और छः उपवासोंका कराना यह महीना भरका नाम रखिदेनेमें आपही सिद्धहोता है कुछ खुलासा कहिने की जरूरत नहींरही ॥ ३२९ ॥

यहां तक चान्द्रायण और कृच्छ्र आदि सभी व्रत भेदोंके लक्षणमात्र कहेगये- अब योगीश्वर अगिले परिच्छेद में इन सबके साथ जो कुछ विधान करना शेषरहा सो दर्शावेंगे॥

अथसर्वेषांपूर्वोक्तव्रतादीनामनुष्ठानसमयोपयोगिक्रिया विधिप्रकाशकोऽयं परिच्छेदः षडशीतितमः (८६)

—※—

इस परिच्छेद में चान्द्रायण और कृच्छ्र आदि साधारण सभी व्रत भेदों की क्रिया विधि एकही कही जायगी कि जो सबके साथ काम आवे- अर्थात् जितने व्रतहोमआदि प्रायश्चित्तोंके स्वरूप पहिले कहिचुके उनमेंसे जिसकिसी का अनुष्ठान कोई करनाचाहै तिसकेसाथ रोजरोज क्याक्या क्रिया करनी चाहिये सो सब यहां एक साथ इकट्ठी कहेंगे॥

(साधारणी कर्तव्यता)

कुर्यात्त्रिषवणस्नायीकृच्छ्रंचांद्रायणंतथा। पवित्राणिजपेत्पिंडान्गायत्र्याचाभिमन्त्रयेत् ३२६

अर्थः - त्रिषवणस्नायी बनिकर कृच्छ्र करै तथा चांद्रायण भी और पवित्र मन्त्रोंकोजपै तथा गायत्रीसेभी पिंडोंको अभिमन्त्रितकरै=अर्थात्–कृच्छ्रया चान्द्रायण केदिनों में पवित्र मन्त्रों को जपै और (उसमें जो पिंड यानी गिनती ग्रास खाने कहे गये उन्हीं) पिंडों पर भी वेदके पवित्र मन्त्र पढ़ै तथा गायत्रीसेभी उन्हीं पिंडों को पवित्र करै–इन बातोंका ब्योरेवार निर्णय अधिकोक्ति में देखना॥ ३२६॥

३२६ अधिकोक्तिः–योगीश्वरने इसवचन में कृच्छ्रों और चांद्रायणोंका मिला हुआ साधारण एकही धर्म बताया है कि अधिक उत्तम फल चाहने वाला इस रीति से करै (किन्तु यह तात्पर्य नहीं है कि दोनों को मिलाकर एक साथ करै) यहां कृच्छ्र जो प्राजापत्य आदि वर्णन होचुके प्रसिद्धहैं उनमें से जो कुछ कोई किया चाहै तथा चान्द्रायण किया चाहै उसीका यह बाकी रहा विधान है जो सर्वत्र नहीं कहा जासका था अब कहते हैं कि–त्रिषवणस्नान का नियम लेकर इन व्रतों को करै–परन्तु मिताक्षराकार इस पर यह अनुमान खड़ा करते हैं कि ३१८ तीन सौ अठारह श्लोक में जो ततकृच्छ्र कहा गया था तिसको छोड़के यह नियम जानना

क्योंकि उसके मध्ये मनुने एकही बार स्नानका नियम साफ खोलिकर कहि दिया है (तप्तकृच्छ्रं चरन्विप्रो जलक्षीरघृतानिलान् प्रतित्र्यहं पिबेदुष्णान्सकृत्स्नायीसमाहितः) यह वचन उसी अतिकृच्छ्र में आचुका तहां देखो—तिससे त्रैकालिक स्नान तप्तकृच्छ्र में न करै बाकी और सब तरहके व्रत विधानोंमें करै—क्योंकि—मनुने इस का प्रकार भी इस तौरसे कहाहै (त्रिरह्नस्त्रिर्निशायांच सवासाजलमाविशेत् स्त्रीशूद्रपतितांश्चैवनाभिभाषेतकर्हिचित्) अर्थात्—कृच्छ्रादि व्रत करने वाला पुरुष तीन बार दिनके आदि अन्त मध्यमें और तीनिबार राति के आदि अन्त मध्य में स्नान के निमित्तसे वस्त्रों सहित जलाशयमें कूदि कर गोते लगावै (इस वचन का यह तात्पर्य है कि जिस किसी व्रतके विधान का प्रयोजन विशेषकर दिनमें होताहो तिस के मध्ये दिनही में त्रिकाल स्नान करै या जिस किसी व्रतका विधान प्रायः रात्रि में करना परै तहां रात्रिही में तीनिबार और दिनमें मामूली एकबार स्नानकरै अथवा किसी स्त्री शूद्र आदिसे स्पर्शही अनायास होजाय या उनसे बात चीत करनी परी हो तब उसके निमित्तसे चाहैं रात्रिहो या दिनहोय तत्काल स्नान करिके शुद्ध होजाय इसी लिये दूसरे अर्धश्लोकमें कहिदिया है कि स्त्री और शूद्र और पतितों से बातचीत न करै इसी इन्तयर्थके आशयसे छे बारका स्नान बताया कि एक दो बार से लेकर चाहैं छेबार तक नहाना परै पर अपने शरीर को प्रत्येक समय शुद्ध बना राखै और यही आशय अगिले अन्य वचनोंसे भी देखिलेना किन्तु आगे चलिकर कोई वचन दोही बारका स्नान बतावैंगे• तिससे छेबारका निर्विकल्प नियम नहींहै कदाचित् इसका निर्विकल्प मानाजाय तौ फिर जहां द्वादश हजार जपोंका आरंभ होय तिसमें पहर पहर प्रति स्नानके हेतुसे बड़ा भारी एक विघ्न खड़ा होजाय कि उस मामूली जप आदि कर्मको करने भी न देवे—हां—यह ठीकहै कि जो कोई अति मूर्ख होनेसे जप मंत्र आदि क्रियाओंको न करना जानै तिसको बारम्बार स्नानका अवकाश भी मिलसक्ताहै तथा अन्य कर्मोंके अभावमें छे बारके स्नानही का यदि नियमसाधै तौ यह उसकेलिये एक तपमें गिनती होसक्ताहै—इसीलिये—मिताक्षरा कारने अपना यह अनुमत खड़ाकियाहै कि यह राति और दिनमें भी तीनतीनबार का स्नान सिर्फ उसके लिये जानना जो अति समर्थ होके नियम साधिसके किन्तु सबके लिये नहीं—मिताक्षरा कार फिर कहितेहैं कि—वैशंपायन मुनिने दोबार भी स्नान बतायाहै सो उसकेलिये जानना जिसपर त्रैकालिक न होसके—तथाच वैशंपायनः—स्नानंत्रिकालमेवस्यात्द्विकालंवाद्विजन्मनः (इतितत्त्रियव्रतस्नानकस्यबोदित

व्यमितिमिताक्षरा=अर्थात्–कृच्छ्रोंमें द्विजाती को तीनों कालमें स्नान चाहियेअथ-वा दोही कालकरै=और जो=गार्ग्य मुनिने (एकवासाश्चरेद्भैक्ष्यंस्नात्वावासोनपीडयेत्•तदतिशक्तस्यैव• एकवासाआर्द्रवासा• लघ्वाशीस्थंडिलेशयइत्येकवस्त्रतायाअपि गर्गवचनपाक्षिकत्वाभिधानादितिमिताक्षरा) ऐसा नियम कहाहै कि एकही धोतीसे स्नानकरिके भिक्षामांगै किन्तु भीजी धारणा किये रहिके मांगै वस्त्र निचोड़ै नहीं• यहभी नियम शक्ति वालेका समुझना जिसकी देहमें बलहो•एकही वस्त्र राखने मध्ये गर्गवने भी यह कहिकर दर्शायाहैकि थोडासा हलुकाभोजन करिके स्थंडिल परसोवे अर्थात ऊंची माटी रेतआदिको चबूतरीबनाके उसपर लोटिरहै कपडानहींबिछावे॥०॥स्नानविधानं–स्नानकरनेका पूराविधान हारीतनेबतायाहैकिऐसेकरना= यथा=त्र्यवरंशुद्धवतीभिः स्नात्वाऽघमर्षणं तज्जले जपित्वाधौतमऽहतंवासः परिधाय साम्नासौम्येनादित्यमुपतिष्ठेत्=अर्थात्–तीनवार तीनों काल में स्नान करिके अथवा यथा संभवको दोही कालमें स्नान करिके जल के भीतर अघमर्षणसूक्त को जपिके पश्चात धुलाहुआ वस्त्र जो फटा पुराना न हो सो पहिन के (सदेवसौम्येदमग्रआसीत्) इत्यादि सामवेदोक्त सौम्य मंत्रों को पढते हुये सूर्यके सन्मुख खडे होकर उपस्थान कर्म करै (यह तौ केवल स्नान करने की विधि कही चाहै तीन या दो अथवा एक ही बार का स्नानहो स्नान के साथही इतना करै॥ अथ पवित्रमंत्रविधानं–फिर योगीश्वरने जैसा मूलश्लोकमें पवित्र मंत्र जपने कहे तिनको आसनपर बैठि के जपै• इसमें यह सन्देह रहा कि वे पवित्रमंत्र कौनहैं तिनको जपे सो सब आगे मिताक्षराकार समुझाते हैं देखो=पवित्राणिच=अघमर्षणादेवकृतः शुद्धवत्यस्तरत्समा इत्यादि वशिष्ठादि प्रतिपादितानामन्यतमान्यर्थाविरुद्धेयुकालेयुजपेत्•सावित्रींवा• सावित्रीं वाजपेन्नित्यं पवित्राणिचशक्तितः सर्वेष्वेवव्रतेष्वेवंप्रायश्चित्तार्थमादृतः इतिमनुस्मरणादितिमिताक्षरा=अर्थात्–पवित्र मंत्रोंके लक्षण ८१ इक्यासीके परिच्छेद में वर्णन हुयेहैं तहां ३०९ तीनसौ नौकी अधिकोक्तिमें वशिष्ठ के भी छ श्लोक देखो (सर्ववेदपवित्राणि) इनको आदि लेकर लिखे होंगे उनमें अघमर्षण देवकृत आदि अनेक मंत्रोंके नाम लक्षण जैसे वशिष्ठजीने कहे तैसे और भी ऋषियों ने जहां कहीं पवित्र मंत्र दर्शायेहैं तिन सबहीको पवित्र जानो उनमें से कोई मन्त्र जिसके प्रयोजन वाले समझिपरैं उनको उनहींका जप करना चाहिये एवंच ऐसे समयोंपर करना चाहिये कि जिस बेरा प्रायश्चित्त सबंधी किसी मुख्य कामका कोई सा नियत समय न हो अर्थात मुख्य कामोंसे उपरान्त जो फालतू समय बचते देखे तिनमें जप करना चा-

हिये जिससे पुरुषप्रकारोंका विरोध न होसके यह तात्पर्य है—अथवा—इन मंत्रों का बोध जिसको न होय वह सावित्री गायत्री को जपै क्योंकि मनुने भी यही नियम दर्शाया है कि चान्द्रायण और प्राजापत्य आदि कृच्छ्रोंमें भी सदा गायत्री जपै या अघमर्षण आदि पवित्र मंत्रोंको या गायत्री और पवित्रोंको भी अपनी शक्तिके अनुसार चाहें दोनों तरह के जप करै=और भी=चौरासी परिच्छेद में ३२० तीनसौ बीस वाली अधिकोक्तिमें (अवजपादिनियमाः) इसी नामका पाठ देखो उसमें गौतमने यह लिखाहै कि (रौरवयौधाजपेन्नित्यंप्रयुंजीत॰ इति तदपि पवित्रत्वादेवोक्तं नतुनर्नियमाय) प्राजापत्यादिमें रौरवयौध नाम का सामवेदोक्त जप रोज करै॰ सो यह गौतमका कथन भी उस जघे केवल इसी अभिप्राय से समझना कि वह रौरव यौध जप भी पवित्र मंत्रोंमें गिनतीहै जैसे यहां पर दर्शाए हुये अन्य मंत्रहैं तैसा वह भी एक पवित्र मंत्रहै अर्थात् उस आज्ञासे नियमात्मक यह तात्पर्य नहींहै कि उसी को जपना चाहिये और मंत्रोंको नहीं बल्कि उससे एक निदर्शन पाया जाताहै कि प्राजापत्योंके प्रयोगमें चाहें उसको जपै चाहें किसी औरही पवित्र मन्त्रको जपै अथवा गायत्री जपै॰ तिससे जो कोई सामवेदको न पढाहो तिसको रौरवयौधके वदले गायत्री आदिका जप करना निषेध नहीं है—और जो—उन्हीं गौतमने उसी विधिके प्रसंगमें (न मोहमाय मोहमाय) इत्यादि मन्त्रोंको दिखाइके यह कहाहै कि इतनी ही आहुतें घीकी चाहिये॰ सो इस बातको भी नियमात्मक न समझिलेना कि प्राजापत्योंमें सर्वत्र उन्हीं मन्त्रोंसे होम होता होगा सो कुछ नियम नहींहै—क्योंकि—मनुने महाव्याहृतियोंसे भी होम करना कहाहै=यथाहमनुः=महाव्याहृतिभिर्होमः कर्तव्यःस्वयमन्वहम् अहिंसासत्यमक्रोध मार्जवंचसमाचरेत्=अर्थात्—कृच्छ्र साधना के दिनों तक रोज रोज किसीकी सहायता विना अपने आपही (ओंभूः ओंभुवः ओंस्वः ओंमहः ओंजनः ओंतपः ओंसत्यं) इन महाव्याहृतियोंसे घृतका होम करै—घृतही से क्योंकि (आज्यंहविरनादेशेजुहोतिषुविधीयते॰ इति परिशिष्टवचनात्)परिशिष्टमें यह आज्ञा लिखी गईहै कि जहां कहीं होम करने कहेहों पर कोई हवि का नाम नहीं बताआहो तहां घृतहीसे होम किया जावे=यदि कहो कि यहांपर पवित्र मन्त्रों का वर्णन होरहाहै तिसमें महाव्याहृतियोंकी पवित्रता और उनका साधारण मंत्रत्व मनुकेवचनसे समझाया गया=उन्हीं व्याहृतियोंका साधारण मन्त्रत्व और पवित्रत्व भी षट्त्रिंशन्मतके ग्रन्थमें साफ साफ कहाहै=यथा=जपहोमादिशक्तिर्कोश्चित्कृच्छ्रोक्तंसम्भवेन्नचेत् सर्वव्याहृतिभिःकुर्याद्गायत्र्याप्रणवेनच (आदित्यहृदयादुदकतर्पणा

दित्योपस्थानादेर्व्रतां=अर्थात्—जप होम आदि और इसी आदि शब्दसे जलतर्पण सूर्यका उपस्थान आदि जो कुछ कृच्छोंमें कहा हो तिसका जानना या करना जहाँ सम्भव न देखिपड़े तहाँ उन मन्त्रोंके विना भी कही जप होम आदि सब काम व्याहृतियों के गायत्रीसे और प्रणव ॐकारसे भी करै अर्थात् पूर्वोक्त मन्त्रोंके न मिलने से कामको न रोके—इसीसे वैशम्पायनने ऐसा भी कहाहै कि (स्नात्वोपतिष्ठेदादित्यं सौरीभिस्तु कृतांजलिः) अर्थात् स्नान करिके सूर्यके सन्मुख सौरी नाम की ऋचाओंको पढ़ते अंजली बाँधि खड़ा होय (इसमें सूर्यकी ऋचाओंसे उपस्थान बताया और पहिले इसी अधिकारमें हारीतने सोमकीऋचाओंसे सूर्यका उपस्थान करना कहा था • तो इन दोनोंका विरोध छोड़ि विकल्प सिद्ध होताहै कि चाहैं इनसे करो या उनसे करो तुम्हारी इच्छा पर आरूढ है—इसी प्रकार और भी जो कोई पदार्थ इसमें कहीं पर विरोधी देखिपड़ें तिन सबही का विकल्प मानि लेना और जो अविरोधी देखिपड़ें तिनके समस्त भेदोंका समुच्चय मानिलेना कि यहभी और वहभी करना चाहिये=जैसे एक वृक्षकी अनेक शाखा उस वृक्षको एकही मूलपर आरूढ होनेसे परस्पर भेदवाली नहीं कहातीहैं—तैसे इसी शाखान्तराधिकरण न्यायसे सब स्मृतियोंका मूल एकही धर्मशास्त्र रूपी वृक्ष कहाता है तिसकी अनेक शाखारूपी स्मृतियां प्रसिद्ध हैं सबका एकही प्रत्यय होनेसे उन्हीं वैशम्पायन मुनिने कृच्छोंके कर्मकी और उनमें जपकी संख्या की विशेषता तथा जप करने का प्रकार भी जुदे प्रकारसे कहाहै कि=ऋषभंविरजंचैवतथाचैवाघमर्षणम् गायत्रींवाजपेद्देवींपवित्रां वेदमातरम् शतमष्टशतंवापिसहस्रमथवाऽपरम् उपांशुमनसावापितर्पयेत्पितृदेवताः सनुष्यांश्चैवभूतानिप्रवासाच्छिरसाततः=अर्थात्—ऋषभ नाम के मन्त्रको और विरज नामके मन्त्रको तथा अघमर्षण को या वेदोंकी माता अतिपवित्र गायत्रीदेवी को जपै • रोज रोज कितना जपै सो कहिते हैं कि एकसौ या आठसौ या एकसहस्र या इससे भी अधिक अपनी शक्तिके अनुसार • किस रीतिसे जपै सो कहिते हैं कि उपांशु रीतिसे जपै या मनके भीतर जपै • उपांशुजप उसका नाम है जो कुछेक जीभ और ओंठ हिलते मालूम होयँ पर शब्द उनका किसीको न सुनिपड़ै किन्तु अपना शब्द अपनेको समझि परताहो और मनकी वृत्ति देवता में लगी हो • इससे दूसरा जप मनके भीतर वह जानना जिसके ओंठ बन्द होयँ जिनके भीतर नीचे ऊपर के दांत परस्पर न मिले पावै और थोरीमें जीभकी चलन जप होतारहय मनकी वृत्ति देवताके रूपमें लगीरहै • जप करनेके बादि देवता और पितरोंका तर्पणकरै मनुष्यों

का भी तर्पण और भूतों का भी तर्पण करै सब के पीछे शिर झुकाइ के प्रणाम करै—योगीश्वर ने मूलश्लोकमें पवित्रमंत्र जपने कहेथे तिनका ब्योरा सब यहां तक निर्णय होचुका ॥ ० ॥ पिण्डाभिमंत्रणंच—गायत्री पढ़िकर पिंडोंको अभिमंत्रित करना भी कहाथा सो करना चाहिये=इसके मध्ये यमने एकजुदी विशेषता दर्शाई है कि=अंगुल्यग्रे स्थितंपिंडंगायत्र्याचाभिमंत्रितम् प्राश्याचम्यपुनःकुर्यादन्यस्याप्यभिमंत्रणम्=अर्थात्— पिंडोंको इसरीतिसे कि हाथकी अंगुरियों के अग्रभागमें एक पिंड थाँभिके एक मंत्र गायत्रीका पढ़े तिसको खाइके आचमन करिके दूसरापिंड उसीप्रकार थाँभिके अभिमंत्रित करै पुनि उसकोभी खाइके आचमन करै इसीक्रम से जितनेग्रास जिसदिन के मामूली बनेहों सबको भोगै=पूर्वोक्त निर्णयके अनुसार यहाँ भी यह बात ठहिरी कि पिंडोंके अभिमंत्रण के मन्त्र जो गौतमने (३२४ तीन सौ चौबीसकी अधिकोक्ति में चान्द्रायण के विधानपर) दर्शाये थे कि (ओंभूः ओं भुवः ओंस्वः ओं महः ओं जनः ओंतपः ओं सत्यंयशः श्रीऊर्कइट् ओंजः तेजः पुरुषः धर्म्मः शिवः—इत्येतैर्ग्रासानुमंत्रणंप्रतिमंत्रंमनसानमःस्वाहा इतिवासर्वानेतैरेवग्रासान्भुंजीत) सो इनसे गायत्रीका विकल्प ठहिरा कि चाहैं गायत्री से भोगै या इन मंत्रोंसे भोगै= और जो=इन मन्त्रोंसे पहिले गौतमने ग्रास बनानेसे प्रथम उस हविष्यहीका अभिमंत्रित करना इसमंत्रसे बताया था कि (आप्यायस्वसंतेपयांसिनवोनव— इतिचैताभिर्हविषश्चानुमंत्रणं) सो यह एक जुदाकार्य होनेसे समुच्चय नहीं कियाजाताहै करने वालेकी इच्छारही स्वीकार करौ या मत करौ ॥ ० ॥ मुण्डनविधिश्च—कृच्छ्र और चांद्रायण आदि व्रतोंको यदि कोई पाप कियेबिना केवल अपने अभ्युदयरूपी कल्याणकी अभिलाषा से प्रारम्भकरै तिसको मुंडन कराने की अपेक्षा नहींहै—परन्तु जब कोई पापों के प्रायश्चित्त मध्ये इन्हींका प्रारम्भ करै तब आरम्भ करते समय प्रथम मुंडन कराना चाहिये क्योंकि (वपनव्रतंचरेदितिगौतमः) गौतम के इसवचन से यह भी कर्मोंकी विधिका एक अंगहै=इनका ब्योरा वर्णयत्ने दर्शायाहै=यथा= कृच्छ्राणांव्रतरूपाणांश्मश्रुकेशादिवापयेत कक्षरोमशिखावर्ज•मितिकृच्छ्राणांव्रतरूपाणांव्रतरूपाणिवपनादीन्यंगानिवक्ष्यतइतिशेषः=अर्थात्— प्रायश्चित्तों में व्रतरूपी जो जो कृच्छ्र करनेहोयँ तिनके आरम्भ में दाढ़ी मूछ्वालों आदिका वपन करावै परन्तु कांख और देहके रोमा तथा शिखाके बालोंको छोड़िके मुड़ावै•किन्तु वपन कराना भी व्रतके अंगोंमें गिनती है कि इसके बिना व्रतके अंग नहीं पूरे होते हैं॥०॥ यह वर्णन पहिले७७सतहत्तर परिच्छेदमे आचुकाहै ३०१ तीनसौ एक मूल

श्लोक पूर्वार्द्धमें देखो• सभाके द्वारा प्रायश्चित्तका व्रतलेना कहा था तिसका लेना भी सिर्फ एकदिन पहिले सूचित हुआहै कि जिसदिन से प्रारम्भ करना चाहै तिसके पूर्वदिवस तीसरे पहर सभाके सन्मुख जाकर व्रतकी आज्ञा स्वीकारकरै=यदाहवशिष्ठ=सर्वपापेषुसर्वेषांव्रतानांविधिपूर्वकम ग्रहणंसंप्रवक्ष्यामिप्रायश्चित्तेचिकीर्षिते दिनांतेनखरोमादीन्प्रवाप्यस्नानमाचरेत् भस्मगोमयमृद्वारिपंचगव्यादिकल्पितैः मलापकर्षणंकार्यंवाह्यशौचोपसिद्धये दंतधावनपूर्वेणपंचगव्येनसंयुतम व्रतंनिशामुखे ग्राह्यं वहिस्तारकदर्शने आचम्यातःपरंमौनीध्यायन्दुष्कृतमात्मनः मनःसंतापनंतीव्रमुद्वहेच्छोकमंततः=अर्थात्–प्रायश्चित्त करनेका विचार उत्पन्न होतेसमय सर्वत्र सभी उपायोंमें सबही व्रतोंका ग्रहण करना विधिके सहित कहिके समुझाऊंगा–अर्थात् दिनके अन्तमें सांझी ओर प्रायश्चित्ती पुरुष अपने शरीरके बाहरले अंगोंका शौच सिद्ध होनेके लिये बालनख और देहके रोमा तथा दाढी मूछ आदि अच्छे मुडाइके स्नान करे• तहां राख गोबर मट्टी जल पंचगव्य आदि से बनाये हुये उवटनों करके मलाप कर्षण करना चाहिये किन्तु देहमें इसप्रकारकी चीजोंसे मालिश कराइके मैल छुटवाना चाहिये• तिनसे पहिले दांत भी धोकर पीछे शुद्ध स्नानकरै तिस पीछे पंचगव्य से आचमन लेकर निपट संध्यासमय तारे देखिपरने लगैं तभी व्रतका स्वीकार करै फिर ग्राम बस्ती से बाहर जाके शुद्ध जलका आचमन करिके इससे आगे मौन साधिकर अपने किये पापको याद करते हुये मनमें बारबार संताप और शोक भी लातेहुये उन्आचरणोंका निर्वाहकरै कि जो जो काम जिस व्रतमें जपतप आदि करने कहे हों–इसीप्रकार–स्त्रियों को भी व्रतोंका परिग्रह लेना चाहिये–परन्तु इतना भेदहै कि स्त्रियों के वाल मूछ रोमा नखोंका मुडाना करवाना नहीं चाहिये क्योंकि बौधायन की स्मृति में यह कहाहै कि चांद्रायण आदि कृच्छ् व्रतों में जो पुरुषको विधि कही गई वही स्त्रियों को भी होतीहै पर मूछ वाल आदिका वपन मुंडन कर्म छोडिके बाकी सब होताहै–यथा(चांद्रायणादिष्वेतदेवस्त्रियाः प्रमयुक्ते वपनवर्जमितिबौधायनस्मरणं–यहां–इस बातपर ध्यान देनाचाहिये कि जिनके मिताक्षरा रूपी दीपक के हम दीपक जोड़ते हैं उन्होंने वशिष्ठ और बौधायन के वचनोंमें व्यवस्था खड़ी करी है कि जैसा वशिष्ठ के वचन में नखरोमा आदि पुरुषों को मुड़ाने कहे ऐसा बौधायनके वचनने स्त्रियोंको निषेधजानो–परन्तु उन्होंने अपने लिखे वशिष्ठजीके इसके वचन में कुछ एकभी न कहीकरी कि (कृच्छ्राणांव्रतरूपाणांश्मश्रुकेशानिवापयेत् कक्षोपस्थशिखावर्जम्) यही वशिष्ठका पहिला वचनहै

इसमें पुरुषों को शिखा मुडाने का अपवाद किया सो भी सत्यप्रतीत होता है बल्कि काँछके बाल और खालमात्र के रोमोंका अपवाद किया सो भी सुष्ठु प्रतीत होताहै तथापि दूसरे वचन में उन्हीं वशिष्ठने पुरुषोंको इन्हीं कर्मोंकी विधि कही तो यह एकही कर्त्ताके पूर्वापर वाक्यसे विरोध पायागया इसका कुछ समाधानभी न किया गया न इसपर ऐसे विरोध की पकड खडी करी गई—तथापि—मर्य्यादा प्रियके विचारसे यह समाधान प्रतीत होता है कि जब एकही मुखसे विधि और अपवाद दोनों कहेगये तो फिर मुडानेकी विधि उनके लिये समझना जो अतिशय दुराचारी अति मूर्खहोके पापही में बुद्धि लगी राखते हों॰और रोमा आदि मुडाने का अपवाद उनके लिये समझना जिनसे दैवाधीन पाप होगया हो तो फिर कुछ भी विरोध नहीं है और यही ध्वन्यर्थ अगले वचनों से मिलरहा है देखो ॥ ० ॥ वपन कर्म्म के बाबत एक जुदाभी न्याय कहा गया है=यथाहारीतः = राजावाराजपुत्रोवाब्राह्मणोवाबहुश्रुतः केशानांवपनंकृत्वाप्रायश्चित्तंसमाचरेत्केशानांरक्षणार्थंतुद्विगुणंव्रतमाचरेत्द्विगुणेतुव्रतेचीर्णेदक्षिणाद्विगुणाभवेत(एतच्च॰महापातकादिदोषविशेषाभिप्रायेणादृष्टव्यं) विद्वद्विप्रनृपस्त्रीणांनेष्यतेकेशवापनम् ऋतेमहापातकिनोगोहन्तुश्चावकीर्णिनः—इतिमनुस्मरणात=अर्थात—हारीतने कहाहै कि जहां प्रायश्चित्ती पुरुष कोईराजाहोय अथवा राजाकापुत्रहोय (यहांपुत्रके उपलक्षणमें बढ़िया जागीरदार भी राजाके पुत्रही कहातेहैं सो समुझेजायँ) अथवा बहुश्रुत विद्वान ब्राह्मणहोय तो भी बालों का वपन मुण्डन कराइकेही प्रायश्चित्त का प्रारम्भ करै छुटकारा इससे किसी का भी नहींहै परंतु यदिइनमें कोई केशोंका बचाना चाहै सो केशों की रक्षा हेतुसे दूना व्रत आचरै जहां कहीं दुगुना व्रत किया जाय तहां व्रतके पूरे होने वाली दक्षिणा भी दूनी होय(परंतु यह नियम केवल महापातक आदि बड़े दोषपरसमुझना क्योंकि अगिले मनुवचनका साफ यही प्रयोजनहै कि) विद्वान ब्राह्मण तथा राजा तथा स्त्रियोंके बालमुडाने नहींचाहिये परंतु महापातकी और गोहंता औरअवकीर्णी ब्रह्मचारी को छोडि के यह नियम समुझना अर्थात वही तीनों विद्वान विप्र वा राजा वा स्त्री यदि महापातकी हुये हों या गोहत्या करी हो या ब्रह्मचर्य लेकर अवकीर्णी हुये हों तिनको प्रायश्चित्त के आरंभमें अवश्य मूडमुडाना होगा किंतु मुडाने का निषेध इन पापोंसे उपरान्त में समुझना ॥ ० ॥ जाबालमुनिने इस बातपर कुछ और भी जुदा प्रकार कहाहै =यथा=आरंभेसर्वकृच्छ्राणांसमाप्तौचविशेषतः आश्द्धेसर्वहि:मालान्नौजुहुयाद्माहुतीःपृथक् श्राद्धंकुर्याद्व्रतांतेतु गोहिरण्यादिदक्षिणा

=अर्थात्–सर्व कृच्छ्रों के आरम्भ समय और समाप्ति के समय भी जुदा करके उस अग्नि में घीसे व्याहृतियां जुदी जुदी होमैं जो घरकेबाहर की अग्नि घरसे बाहर होय किन्तु ऐसा होम घरमें नहींहोता और व्रतकी समाप्ति होजाने पीछे श्राद्धभीकरै और गाय सुवर्ण आदि उत्तम दक्षिणाभी देवै ॥ ० ॥ यमने इसपर और कुछ विशेषता दर्शाई है=यथा=पश्चात्तापोनिवृत्तिश्चस्नानंचांगतयोदितम् नैमित्तिकानांसर्वेषांतथाचैवानुकीर्तनम्= अर्थात्–सब तरह के प्रायश्चित्तों का अंग प्रत्यंग रूपी वे काम कहेगये हैं जिनके होनेसे व्रतोंकी सिद्धि हुआ करती है• तिनमेंएक पश्चात्ताप है कि मुझसे ऐसा कर्म होगया धिक्कार है इत्यादि• उन्हीं में दूसरा एक निवृत्ति है कि फिर ऐसा काम कभी न मुझसे होना चाहिये अमुक प्रकारोंसे निवृत्त रहिसक्ता हूं इत्यादि• तीसरा स्नानहै कि जहांतक होसके बार बार किया करै गहिरे जल में बहुत से गोता लियाकरै मन्त्रों के विधान से स्नान किया करै (इसीलिये त्रियवण का विधि पहिले कहचुकेहैं) इत्यादि• चौथा अनुकीर्तनहै कि अपने किये पापको बारम्बार सबको सुनाया करै तिससे भी पापकी हानि होतीरहती है अर्थात् सुनने वालोंको थोड़ा थोड़ा बँटि जाता है [इसमें सन्देह न करना जैसे कथा पाठ पूजा के मन्त्र आदि सुनिके कुछ अच्छा फल मिलता है उसी प्रकार पापकी बात सुनिकेभी अवश्य उसका फल भाग सुनने वालों को पहुँचताहै जैसे वायुके योगसे सुगन्धि और दुर्गन्धि दोनों का कुछ कुछ फलभाग सबकी नाकोंमें बिना चाहे पहुँचि जाताहै तैसे अच्छी बुरी दोनों भांति की वाणी के स्वरसे कानोंके द्वारा असर पहुँचता है–इसी लिये–मनुने इनबातोंके जुदे२ वचन कहिकर सबका ब्योरा समझाया है=यथा= ख्यापनेनानुतापेनतपसाऽध्ययनेनच पापकृन्मुच्यतेपापात्तथादानेनचापदि ॥ यथायथानरोऽधर्मंस्वयंकृत्वानुभाषते तथातथात्वचेवाहिस्तेनाधर्मेणमुच्यते ॥ यथायथामनस्तस्यदुष्कृतंकर्मगर्हति तथातथाशरीरंतत्तेनाधर्मेणमुच्यते॥ कृत्वापापंहिसंतप्यतस्मात्पापात्प्रमुच्यते नैवंकुर्यांपुनरितिनिवृत्त्यापूयतेतुसः॥=अर्थात्–मनुकहितेहैं कि पापी अपना पाप सुनाते रहिने सेभी शुद्ध होता तथा अपने मनमें धिक्कार आदि प्रकारों से पछतावा करते रहिकर भी शुद्ध होता है और कठिन तपकरने सेभी तथावेदपाठ सावित्री आदि मन्त्रोंका जप करनेसे भी शुद्ध होताहै तथैव दानकरनेसेभी शुद्धहोता है ॥ मनुष्य अपने अधर्मको जैसे जैसे आपही अधिक लोगोंको सुनाता है तैसे तैसे सर्पकी नाईं कुंचली त्यागकरी छोड़िके शुद्ध होजाता है ॥ जैसे जैसे पापीका अन्तःकरण उसके इसके खोटे कर्मकी निन्दा अपने मनके भीतर करताहै तैसे तैसे उसका

शरीर उसअधर्मसे बचताहै उसबचनेसेभी पहिला पाप क्षीणहोताहै(इसीलियेपूर्वोक्त यमके वचनसें ये बातैंभी प्रायश्चित्तका अंग ठहिराईगईं ॥ पाप होजाने पर सन्ताप करिके वह पापी शुद्धहोताहै जो सन्तापकेसाथ ऐसीप्रतिज्ञाकरै कि फिर आगे को नया पाप कभी न करूँ इस प्रकार अपने चित्तको हटाकर शुद्धहोताहै तिससे प्राय-श्चित्तोंका यहभी एकअंगहै ॥ यहां ये यमकेवचन इसप्रसंगसे स्थापनकियेगयेहैं कि प्रायश्चित्तोंकाअंग इनबातोंको समझिके रोजरोजको विधिकेसाथ साधना इनकी भी करै ॥ इनकेसिवाय बहुधा बातोंका त्यागभी ब्रह्मचर्यके हेतुसे कर्त्तव्य है=तदाह यमः=गात्राभ्यंगंशिरोभ्यंगंतांबूलमनुलेपनम्व्रतस्थोवर्जयेत्सर्वंयच्चान्यद्बलरागकृत=अ-र्थात्–देहकाउबटना तेलकालगाना शिरकेबालमलना चुपड़ना पानखाना सुगन्धोंका लगाना और कोईचीज ऐसी जो लगाने या खानेसेशरीरमें रागरंगबल या बलउत्पन्न करतीहो तिसकासेवन इनबातोंको वहपुरुष नकरै जो व्रतमें लगाहो (मिताक्षराकार कहिते हैं कि इत्यादि और भाँतिकी कर्त्तव्यता जो अन्य स्मृतियों में देखिपरैं सो भी माननी चाहिये)ऊपर कही विधियों के अनुसार व्रतको धारण करिके अवश्य पूरा करना चाहिये• अन्य था दोषभागी भी होताहै यदि नहीं पूराकरै=तदाह छागले-यः=पूर्वंव्रतंगृहीत्वातुनाचरेत्कामतोहियः जीवन्भवतिचांडालोमृतःश्वाचैवजायते= अर्थात्–पहिले व्रतको लेकर पीछे जो कोई अपनी इच्छा सें नहींकरै वह जीवता हुआ चांडाल कहाताहै और मरे पर कुत्ता होके जन्मता है•यह विस्तार केवल सं-चय के निमित्तसे दर्शाया गया (इस परिच्छेद के विचारों में सर्वत्र ७५ पचहत्तरि परिच्छेदका संबंध मिलारहेगा कि इसके साथ उसको भी विचारना ॥ ० ॥ इस प-रिच्छेदकी व्यवस्था में त्रिकाल और षट्काल स्नानोंकी विधि यद्यपि प्रधानता स-हित कही गई है तथापि इसके सायमें ७५ पचहत्तरि परिच्छेदवाली व्यवस्था का विचार करना आवश्यकहै कि उसके द्वारा देशकाल ऋतुओंके अनुकूल विधिकार-वाईजाय अर्थात् जहाँ गरमीका देश या गरमीकी ऋतुवर्त्तमान हो तहाँ अवश्यभाव से षट्काल या त्रिकालको वर्त्ताव किया जाय इससेविपरीत जहाँ शीतदेश याशीत ऋतु फैलीहो तहाँ अति बलवान् देहवालेके सिवाय साधारण प्रायश्चित्तीकोस्नान की आवश्यकता में अधिक समयों पर भी चाहिये अन्यथा एक दो कालका स्नान चाहिये कि जिससे प्रधान कर्मोंका अवरोध न होने पावै•इसीलिये इसअधिकोक्ति के प्रारम्भ में तत्तद्वचन के प्रसंगसे चर्चा इसका याचुकाहै वहभी देखो ॥ ३२६ ॥

इतिसर्वव्रतांगभूतविधिकथनपरिच्छेदः ॥

इतिसर्वकृच्छ्रादिव्रतभेदानांदानजपहोमादीनांच स्वरूपविधायकंप्रकरणम्

पंचपरिच्छेदमयं

इसप्रकरण में समस्त पांच परिच्छेदहैं अर्थात ८२बयासी परिच्छेदके प्रारम्भसे लेकर८६ छ्यासी परिच्छेदके अन्तसेंआकर यहांतक पांचपरिच्छेदोंसे प्रकरणपूरा भया॰ क्योंकि एकही प्रयोजन के पांच भेद जुदे किये गये इनमें भी सबसे पिछला८६ छ्यासीका परिच्छेद अपने संघाती चारो परिच्छेदों पर अधिदाता है तिससे सबही के साथ इनका विचार करना चाहिये ॥

आगले परिच्छेद में यह युक्ति निकाली जायगी कि सभी व्रतदान आदि सभी पापोंपर आरूढ होसक्ते हैं परन्तु आरूढ करसकना बहुत कठिन है तिसका विचार बहुधा प्रकारों से दर्सावेंगे ॥

अथ सर्वतापपादिरूपपापिष्वपिचांद्रायणादिकैः सर्वैरपिव्रतभेदैः समस्तैर्व्यस्तैर्वाऽभ्यस्तैरनाभ्यस्तैर्वाशुद्धिर्भवतीत्यादिव्रत होमजपदानादीनांसर्वसाधारणविचारप्रधानोऽयं परिच्छेदः सप्ताशीतितमः (८७)

अनुवादकारने यह कथा निरूपण करी अब इस कथाके अवलम्ब से उसको भी हर एक पाठक समझेंगे अन्यथा यदि यह फालतू कथा नहीं लिखी जाती तौ फिर उसमेंसे कोई बात समझिपाना भाया अनुवाद होते हुयेभी महासमुद्रकी गोतहखोरी से कम न होता • क्योंकि महाशय मिताक्षराकारने ऐसी अटपटी अ तवेटसे व्यवस्था धरीहै कि बुद्धिमान भी समझिपावे और नहीं समझिपावे पछिताताही रहिजाय• यह नहीं कि वे उसको सुगम रीतिसे नहीं समझाइ सक्तेथे या उसबातका कोई मार्गही और नहीं था क्योंकि ग्रन्थकार पुरुषोंको लिखने समझानेकी कल्पनामध्ये नाना प्रकारकी रीतें मालूम होतीहैं परन्तु (कर्तुरिच्छागरीयसी) अपनी इच्छाके आधीन जहांपर जैसा चाहैं तहाँ तैसाही लिखते हैं यहां पर उनको यही स्वीकार था• हमारा केवल यह तात्पर्यहै कि ऐसी कोई लपेट की आड बाकी न रहिजाय जिससे मुख्य प्रयोजनके समझनेमें भ्रांति खड़ीहोय अन्यथा यही बार्ता ऊपर चक्र में देखो कि चार पांच पंक्तियोंमें कहिचुके उसीका इतना बडा ब्योरा कहा•तथापि यह सन्देह अभी खड़ाहै कि जब सभी पापोंपर सभी प्रायश्चित्तों का अदल बदल होसक्ताहै तो फिर छोटे बडोंकी वियसता वाला विरोध क्योंकर शांत होगा कि जिन प्रायश्चित्तोंका स्वरूप छोटाहो वे क्योंकर बडे प्रायश्चित्तों के स्थान पर शोभित होंगे इत्यादि सन्देह सब अपने अपने ठिकाने पर निपटाये जायँगे ॥

(अनादिष्टानामपियोगः)

अनादिष्टेषुपापेषुशुद्धिश्चांद्रायणेनच । ३२७ (पूर्वार्धः)

अर्थः—अनादिष्ट पापोंमें चान्द्रायणसे शुद्धि चपुनः अन्य व्रतोंसेभी (तथाचकार स्योभयत्रयोगेऽर्थांतरसिद्धिस्तु) चकारको पापों के साथ भी संयुक्त करने से दूसरा भी अर्थ सिद्ध होता है कि अनादिष्ट पापों में भी चान्द्रायण से तथैव अन्य व्रतादि कोंसेभी शुद्धि होतीहै—अर्थात्—चान्द्रायणसेभी तथैव अन्य भांतिके सबप्रायश्चित्तों से भी अनादिष्ट और आदिष्ट सबतरह के पापोंकी शुद्धि होसक्ती है यदि येथ विचारसे कार्य कियाजाय (आदिष्ट उन पापोंको जानना जिनपर किसी प्रायश्चित्त का आदेश कियागयाहो • यहां यह तर्क है कि सभी पापोंपर किसी न किसी प्रायश्चित्तका आदेश लिखा होताहै•तिनसे ऐसा अर्थ लगाना कि उन्हीं प्रायश्चित्तों के मुकाबिल उनको आदिष्ट कहना चाहिये जिनका आदेश जिन पापों के ऊपर लिखाहो • इसी रीतिसे उन प्रायश्चित्तोंके मुकाबिल अनादिष्ट पाप समझने जिन

का आदेश जिनपर नहो • और उनको भी अनादिष्ट पाप जानना जिन पर निपट किसी भी प्रायश्चित्तका नाम न धरागयाहो ऐसे दैवयोगसे कदाचित् हाथ आसक्ते हैं इसी लिये इनका भी इशारा जाहर किया गया (इन बातों का बिस्तार ऊपर लिखिचुके तहाँ देखो (यदि श्रेष्ठ विचारसे कार्य कियाजाय यह कहा सो उस श्रेष्ठ विचारको अधिकोक्ति में सीखना † ॥ ३२७ ॥ (पूर्वार्धश्लोक) ॥

३२७ अधिकोक्तिः–योगीश्वर के मूलश्लोक पूर्वार्धके अन्तमें चकार है तिसके अर्थ जो कुछ ऊपर कहि चुके उनसे उपरान्त भी कुछ और तात्पर्य केवल उसी चकारसे समुच्चय मानागया है कि (च शब्दात् प्राजापत्यादिभिः कृच्छ्रैरैंदवसहितैस्तन्निरपेक्षैर्वाशुद्धिः) प्राजापत्य आदि कृच्छ्रोंसे एक एक जुदे जुदेसे भी शुद्धिहोती है या कईको मिलाकर एक साथ भी करनेसे होती है इसका दृष्टांत जैसे चान्द्रायण और प्राजापत्य और अतिकृच्छ्र तीनो आगे पीछे क्रमसे कियेजायँ या इनमेंसे एक ही कोई कियाजाय यथा सम्भव होय=इसका प्रमाण भी षट्त्रिंशन्मत का वचनहै कि=यानिकानिचपापानिगुरोर्गुरुतराणिच कृच्छ्रातिकृच्छ्रचान्द्रैस्तुशोध्यन्तेमनुरब्रवीत=अर्थात्–बड़ेसे बड़े भी जे कोई पापहों तिनको मनुने सुझायाहै कि • कृच्छ्र • अतिकृच्छ्र • चान्द्रायण • इन तीनोंका क्रमसे एक साथ साधन होय तो शुद्धिजाते हैं • (यहां इन तीनोका समुच्चय कहागया जैसा इन तीनोंका समुच्चय तैसा और जप दान होम आदि का भी समुच्चय होसक्ता समझलेना जहाँ जैसा उचित जानि परै) यही नियम नहीं कि पूरे तीनि का समुच्चय होताहो किन्तु उशना ने दोही का समुच्चय दर्शाया है कि=दुरितानांदुरिष्टानांपापानांमहतामपि कृच्छ्रंचान्द्रायणंचैव सर्वपापप्रणाशनम=अर्थात्–उपपातक रूपी दुरितोंका और पातकरूपी दुरिष्टों का और महापापोंका भी सबका नाश करनेवाला कृच्छ्र और चान्द्रायणको जानो जो आगे पीछे लगमा कियाजाय (जैसा इन दोनोका समुच्चय कहा तैसा औरों का भी परस्पर दो मिलिके समुच्चय होना समझि लेना जहाँ जैसा प्रयोजन होय=इतना कहिकर मिताक्षराकार लिखतेहैं कि (गौतमेनतु• कृच्छ्रातिकृच्छ्रौ चान्द्रायणमिति सर्वप्रायश्चित्त ममासकरणेनैन्दव निरपेक्षताकृच्छ्रातिकृच्छ्रयोःसूचिता चान्द्रायणस्यचतन्निरपेक्षता इतिशब्देन त्रयाणांसमुच्चयः) अर्थात्–गौतम ने सर्व प्रायश्चित्तों की समस्या करिके चांद्रायणको कृच्छ्र अतिकृच्छ्र इन दोनोसे बराबर (निरपेक्ष) देवास्ते ठहराया और इन दोनो को उसी चान्द्रायण का निरपेक्ष ठहराया और भी इति शब्दसे तीनोका समुच्चय=फिर कहिते हैं कि (लघुदोषेत्वनादिष्टेप्राजापत्यं

समाचरेत्) इस वचनमें चतुर्विंशति मतवालोंने केवल प्राजापत्यही का नैरपेक्ष्य (बेवास्तगी) सबसे जुदापन अनादिष्ट पापके मध्ये दर्शाया किन्तु • इस वचन का यह अर्थहै कि लघुदोष रूपी अनादिष्ट पापके मध्ये प्राजापत्य आचरै (यह वचन इस ध्वनिपर कहागया है कि अनादिष्ट प्रायश्चित्त वाला पाप जब कभी उत्पन्नहोगा तो प्रायः अतिछोटे पापोंमें गिनती होगा क्योंकि बडे पापोंसे लेकर छोटों तक सब हीके जुदे जुदे नाम कहिकर उनके साथ प्रायश्चित्त भी कहे गये तिससे बडे पापों में कोई भी अनादिष्ट कभी नहीं पैदा होसक्ता है=मिताक्षराकार फिर कहितेहैं कि-गौतमने भी प्राजापत्य आदिकोंका परस्पर सबका नैरपेक्ष्य अर्थात् जुदापन भी द-र्शाया है=यथा=प्रथमंचरित्वाऽशुचिपूतःकर्मण्योभवति द्वितीयंचरित्वायदन्यन्महापातकेभ्यः पापंकुरुतेतस्मान्मुच्यते तृतीयंचरित्वा सर्वस्मादेनसोमुच्यते • इतिमहापातकादपीत्यभिप्रेतं=अर्थात्-इसमें निरपेक्षता जुदाई का यही एक चिह्न है कि किसी व्रतका नाम नहीं धरा चाहैं कोईसा एकहो तिसको पहिलीवार उसको अ-वधि भर आचरित करिके अशुद्धतासे पवित्र होकर सुकर्म करने के योग्य होजाता है फिर शुद्ध होके दूसरी बार आचरित करने से जो महापातकों के उपरान्त उनसे नीचे दर्जेमें बड़ा पाप किया हो तिससे छूटि जाता है एवं तीसरी बार करने से सभी पाप मुचिजाता है अर्थात् बड़ेसे बड़ा महापातक भी मिटि जाता है=मनुने भी यह कहाहै (पराकोनामकृच्छ्रोऽयंसर्वपापापनोदनः) यह पराक नाम कृच्छ्रहै सोई सब पापोंका विनाश करनेवाला है (अर्थात् छोटे पापोंपर एक बार बड़े पापों पर दो तीन बार बहुत बड़े पापोंपर अनेक आवृत्ती साधन करनेसे अकेलाही सबतरह के पापोंपर काम देसक्ता है किसी दूसरे व्रत का शामिल करना कुछ आवश्यक नहीं यह तात्पर्य है कि पराक व्रत भी सब तरहके पापोंपर किया जासक्ता है कुछ यही नियम नहीं कि जिसपर उसका नाम धराहो=हारीतने भी सर्वपापों पर अनेक प्रा-यश्चित्तों का जुदा जुदा बर्ताव करना कहाहै=यथा=चान्द्रायणंयावकश्च तुलापुरुषएववा गवांचैवानुगमनं सर्वपापप्रणाशनम्-तथा-गोमूत्रंगोमयंक्षीरं दधिसर्पिःकुशोदकम् एकरात्रोपवासश्चश्वपाकमपिशोधयेत्=अर्थात्-चांद्रायण या यावकव्रत एक महीने गोमूत्रके रंधे जौ खाकर किया जाता है या तुला पुरुष नामकाव्रत व-र्णन होचुका है वही या गौओंके पीछे फिरते रहिने का व्रत वर्णन होचुकाहै वही अपने पापकी हैसियत के बराबर साधन करने से सर्व पापों के नाश करने हार ये सब एकही एक होतेहैं-तथा-गोमूत्र•गोबर•दूध•दही•घृत•कुशोदक पीना और एक

दिन कोरा उपवास करना यह चांडाल को भी शुद्ध करसक्ताहै फिर अन्य पापोंकी क्या गिनती रही (तात्पर्य इसका भी वही है कि पाप की बड़ाई अनुसार आवृत्तीं साधीजायँ कुछ एकहीबार करनेसे बडे पाप नहीं मिटतेहैं यह सर्वत्र समझे रहिना= जैसा उन्हीं हारीत ने तप्तकृच्छ्रका रूप समुझाकर उसका फल इसरीति से कहाहै कि=एषकृच्छ्रोद्विरभ्यस्तःपातकेभ्यःप्रमोचयेत त्रिरभ्यस्तोयथान्यायंशूद्रहत्यांव्यपोहति=अर्थात यह तप्त नामा कृच्छ्र दो वार साधन कियाहुआ उपपातकोंसे छुडाता है ऐसेही यथा न्याय तीनवार साधन कियाजाय तो यह शूद्र मारेकी हत्यासे छुडाताहै (ऐसेही बढ़िया पातकों पर तीनसे भी अधिक आवृत्ती कल्पित करीजायँ समुझिलेना क्योंकि यथा न्यायका ध्वन्यर्थ यहीहै=उशनाने भी यही तात्पर्य दर्शायाहै कि कहे विनकहे सर्व पापोंपर हरकोईसा प्रायश्चित्त लगाया जासक्ताहै =यथा=यत्रोक्तंयत्रवानोक्तं महापातकनाशनम प्राजापत्येनकृच्छ्रेणशोधयेन्नात्रसंशयः=अर्थात–जहां उसकानाम कहिके जतायाहो या जहां कहीं नहीं भी कहाहो तो भी महापातक पर्यन्त नाशकरताहै तिससे जहांचाहे तहां प्राजापत्यनामी कृच्छ्र से पापोंका विशोधन करै कुछ सन्देह नहीं (सर्वत्र कहिनेका वही तात्पर्य है कि जैसा पाप हो तैसी आवृत्ती बढ़ावै=मिताक्षरा कार कहिते हैं कि प्राजापत्य आदि जिन व्रतोंके नाम अच्छे प्रसिद्ध हैं तिनको अनादिष्ट उपपातक आदि सभी में एक वार पापहोनेकी अपेक्षा यद्वा वारम्बारकिये अभ्यासोंकी अपेक्षा यथा संभवचाहैं जुदे किसी एकही प्रायश्चित्तको लगावै अर्थात एकहीकी अनेक आवृत्तीं जितनी चाहै तितनी बढ़ावै अथवा प्रसिद्धमात्र सबही प्रायश्चित्त लगातारजोडै अर्थात एक पुरश्चरण इसका एक उसका एक तीसरेका इत्यादि सबका वर्त्तावा लगातारकरै तो भी कुछ दोष या विरोध कभी नहीं है–तथैव–जिन महापातक आदि में विरले व्रतोंका आदेश लिखा होय तिन आदिष्टों में भी यदि पाप का अभ्यास वारम्वार कियागयाहो तो फिर पापकी बढ़वारी अनुसार चाहैं उसी आदिष्ट प्रायश्चित्तकी आवृत्ति बढ़ावै चाहै जुदे नामवाले व्रतोंको लेकर उस आदिष्टकेसाथ जोड़ि लेवै= फिर कहितेहैं कि इसीलिये यमने भी (यत्रोक्तंयत्रवानोक्त) इत्यादि वचन जैसा उशनाका लिखागया तैसा कहाहै और=गौतमने भी उक्त निष्कृति पापोंके संग्रहार्थ ही सर्व प्रायश्चित्त ऐसा पद कहाया–तथा–जो कि उन्हीं गौतमने (प्रथमंचरित्वा द्वितीयंचरित्वा इत्यादि वचनमें यहकहाथा कि तीसरा पुरश्चरण करके सभी पाप शुचिजाताहै) सो यहसभी पापकहिना भी महापातकोंके अभिप्रायपरजानना किन्तु

सबकहिनेसे तुच्छपापोंकाप्रयोजनमतसमुझिलेगा औरयह भी सोचो कि महापातक ऐसा कोई नहीं जिसका प्रायश्चित्त न कहागयाहो तिससे उन्हींपापोंकायहप्रसंगहै कि जिनके ऊपर कोईसा प्रायश्चित्त भी यद्यपि लिखाहो तो भी प्राजापत्य आदि अन्य प्रायश्चित्तभी यथा सम्भवकिसी प्रयोजनकीजरूरतमें समस्त व्यस्त प्रकारों से जोड़े जासक्ते हैं ॥ ० ॥ संप्रयोजनप्रकाराः—अनन्तरोक्तव्रतादि प्रायश्चित्त किसी कार्यान्तरमेंजोड़ेजानेके प्रकारभी अनेक हैं सो यथा क्रमसे यहां दर्शाते हैं कि—जिन पापोंपर बारहवर्षका प्रायश्चित्त लिखाहो तिनमें प्राजापत्य इस प्रकार से जोड़ा जासक्ताहै कि उन्हीं बारह वर्षों की अवधिमें अनेक प्राजापत्य साधन किये जायँ तो यह परम उत्कृष्ट फल देने वाली एक विशेषता जानो सो पापके अतिशय गहिरापन में यह प्राजापत्य का आदेश करना सूचित होताहै•तिसका यहलेखाहै किप्राजापत्य नियमसे बारह दिनका प्रसिद्धहै तिससे एकमासमें अढाई होतेहैं सालभरके पूरे तीस हुयेबारहवर्षोंके ३६० तीनसौ साठि प्राजापत्य होतेहैं जहां पर इनका होना आवश्यकर्दाहरै तहां भी विकल्पसे कियेजासक्तेहैं अर्थात पूराशक्तिमान पुरुष करसकैगा अन्यथा जिसमें इतनी शक्ति न होय सो इतनी तीनशौसाठि धेनुका गोदानकरै अर्थात बारह बारह दिनपीछे एकगोदान दूधदेतीहुई सवत्साका बारहवर्ष पर्य्यन्त करतारहै तो भीउतने प्राजापत्य करनेका फल प्राप्त होताहै•यदि इसकाभीबानक असम्भवहो तो सोरह मासे सुवर्णकी अशर्फीही तीन सौ साठि देनी चाहिये=जैसा यहस्मृत्यन्तर वचनहै=प्राजापत्यक्रियाऽशक्तौधेनुंदद्याद्विचक्षणः धेनोरभावेदातव्यंमूल्यंतुल्यमसंशयम=अर्थात—जिसको प्राजापत्य करनेकीशक्ति न हो ऐसा विचक्षण पुरुष धेनुका दानकरै धेनुके अभावमें धेनुका मूल्यहीदेवै परन्तु निस्सन्देह धेनुके बराबर मूल्यहो जितनेमें आसक्तीहो—अथवा—जिसको बराबर भी देनेको समर्थनहीं सो आधामूल्य देवै यहा सामान्यरीति से एक निष्क अशर्फी धेनुका मूल्य समुझै जैसा यह वचन है कि(गवामभावेनिष्कंस्यात्तदर्द्धंपादमेववा) गौओंके अभावमें निष्कमूल्य कायम कियाजाय यहा उससे आधा वा चौथाई अपनी शक्तिकेसमान देवै=यदि कोई पुरुष मूल्य भी न देसके तिसको उतने दिन जलमें वासकरना चाहिये अर्थात जितने प्राजापत्यों की जरूरतहो गण एक प्राजापत्य के बदले अक एक दिन जलमें वास करै (जलमें वैठनेका प्रकार ३०४ तीनसौ चौथे मूलश्लोकमें कहाथा उसी जगे समुझि लेना परन्तु वहां पर गुप्त पापों के हेतु से थोड़े दिन कहे गए सो नियमात्मक नहीं किन्तु यहां प्रकाश पापोंके प्रसंगमें प्राजापत्यों की गिनतीसे कहागया) जल में भी

बैठना जिसपर न होसकै सो गायत्रीका जपकरै• कितना करै इसप्रश्नके उत्तरमें पराशरके अगिले वचनसे एक प्राजापत्यके बदले दशहजार गायत्री बारहदिनके कृच्छ्र की बराबर सिद्ध होतीहैं उस लेखेसे ३६० प्राजापत्योंके स्थानपर ३६०००००छत्तीसलाख जप करना चाहिये जहां इनसे थोड़े प्राजापत्योंका बदल करनाहो तहां भी इसी हिसाबसे एकही एक प्राजापत्य के बदले दशहजारका लेखा जोडिलेना• क्योंकि बदला उन्हीं चीजोंसे होताहै जो आपसमें बराबरहों• जिन बातोंका बदला करना कहिचुके तिनकी तुल्यताका प्रमाण अगिला वचनदेखो=यदाहपराशरः= कृच्छ्रोऽयुतन्तुगायत्र्याउदवासस्तथैवच धेनुप्रदानंविप्रायसममेतचतुष्टयम=अर्थात्—प्राजापत्य नामी कृच्छ्र१ अयुत जप गायत्रीका२ एक दिनरातिजलमेंबैठना३ दूधदेती हुई सवत्सागायब्राह्मणकोदेना४ ये चारौ परस्पर सब सबके बराबरकहातेहैं ॥ ०॥ जो कि चतुर्विंशति मत ग्रन्थमें गायत्रीका जप छत्तीसलाखसे बहुत बढ़कर बताया गयाहै सो कुछ अशक्त पुरुषके नामसे नहीं किन्तु उसका जुदा तात्पर्य है=यथा= गायत्र्यास्तुजपन्कोटिं ब्रह्महत्यांव्यपोहति लक्षाशीतिंजपेद्यस्तुसुरापानाद्विमुच्यतेपुनातिहेमहर्त्तारं गायत्र्यालक्षसप्ततिः गायत्र्याःषष्टिभिर्लक्षैर्मुच्यतेगुरुतल्पगः (इतिद्वादशवार्षिकतुल्यविधानतयोक्तं न पुनरशक्तविषयमिति न विरोध इति मिताक्षरा= अर्थात्—सौलाख गायत्री जप करनेसे ब्रह्महत्या मिटिजातीहै अस्सीलाख जपिकर सुरापानके दोषसे छुटिजाताहै सत्तरिलाख जपिकर सुवर्णका हरनेवाला शुद्धहोता है साठिलाख जपिके गुरुदार गामी शुद्ध होताहै—इसमें चारौ महापातकपर चतुर्विंशति मतवालोंने जुदी जुदी संख्याकहीं जो छत्तीसलाखसे सब चारौ संख्या बड़ी हैं कोई भी छत्तीसलाखके बराबर नहीं (इसकेमध्ये मिताक्षराकार कहतेहैं कि जैसा बारहवर्षका विधान कियाजाताहै तैसा एक यह भी जुदाविधानहै पर इसमें बारह वर्षोंका कुछ नियम नहीं केवल जपकी संख्याकाही नियमहै चाहैं कितनेहीवर्षों में होसकै और इसीसे यह बढ़िया संख्या किसी अशक्त पुरुष के विषय पर नहीं मानी जासक्ती किन्तु ऊर्ध्वोक्त छत्तीसलाखवाली थोडी संख्या सिर्फ अशक्त पुरुष की अपेक्षापर बारहवर्षवाले प्राजापत्योंके बदले कायमहुईहै तिससे इसमें बारहवर्ष की अवधिका भी नियम साथ लगाहै कि उन्हीं वर्षोंमें जाकर जपकी संख्या पूरी होय तिससे दोनोंकी ऊंचनीचसे कुछ विरोध नहींहै=इसीप्रकार औरभी प्रायश्चित्तों के बदलहैं=कृच्छ्रोदेव्ययुतंचैवप्राणायामशतद्वयम्तिलहोमसहस्रंतुवेदपारायणंतथा= अर्थात्—प्राजापत्य नाम कृच्छ्र जो बारहदिनका प्रसिद्धहै तिसकी एकही आवृत्ति१

देवी गायत्री दशहजारमंत्र २ प्राणायाम दोसौ ३ तिलकाहोम एकहजार आहुति ४ वेद संहिता जो मंत्र ब्राह्मणरूप होतीहै तिसकी एकहीपारायण५—ये पांचौ परस्पर सब एकनेएक बराबर मानेगयेहैं तिससे इनका भी बदल आपसमें होताहै कि एक के बदले दूसरा किया जाय (इत्यादि चतुर्व्विंशति और मनु आदि शास्त्रोंके कहे आदेशरूपी प्रत्याम्नाय अनेक हैं) इन सब प्रत्येक जुदे जुदेको महापातकोंपर• तीन सौसाठि ३६० से गुणाकर समझिलेना कि इतने चाहिये अर्थात् उक्त पांचौमें सब से प्रथम कृच्छ्र एकही कहा तिसको तीनसौ साठिसे गुणा करौगे तौ भी ३६० ही अंक रहेंगे सोई तीनसौ साठि प्राजापत्यकरने पहिले भी कहिचुके हैं १ एवंगायत्री केदशहजार कहे तिन्हें यदि तीनसौसाठिसे गुणाकरौगे तौ वेही३६००००० छत्तीस लाखहोंगे जो पहिले भी कहिचुके २एवं प्राणायाम दोसौको तीनसौ साठिसे यदि गुणा करौगे तौ ७२००० बहत्तरि हजार प्राणायाम करने ठहिरेंगे३ एवं तिलहोम एकहजारको तीनसौ साठिसे यदि गुणा करौगे तौ३६००००तीनलाख साठिहजार आहुतें करनी ठहिरेंगी४एवं वेदकी पारायण एकहीको यदि तीनसौ साठिसे गुणा करौगे तौ ३६० तीनसौसाठि पारायण करनी ठहिरेंगी ५—यह व्यवस्था यहांतक पूरे महापातकोंपर कहीगई ॥ ० ॥ कदाचित् अतिपातकोंके प्रायश्चित्त पर लेखा करना होय जिनमें बारह वर्षके जगह नौवर्षका प्रायश्चित्त कहा गया था तिनमें प्राजापत्य भी चौथाई घटाकर तीनसौसाठि के जगह २७० दोसौसत्तरि कियेजायँगे तिनके बदलेमें जो चीजें कायमहोंगी वेभी चौथाईघटाकर मानीजायँ अर्थात् जलमें बैठनाभी २७० दोसौसत्तरि दिनकारहिजायगा या इतनीधेनुदेनी ठहिरेंगी याइतनी अशर्फी देनी यागायत्रीके मंत्रछत्तीसलाखकेजगह २७००००० सत्ताइसलाख रहि जायँगे याप्राणायाम बहत्तरिहजारकेजगह ५४००० चौवनसहस्ररहिजायँगे यातिल कीआहुतें तीनलाखसाठि हजारकेस्थान २७००००दोलाख सत्तरिहजार बाकीरहि जायँगीया वेदकीपारायण तीनसौसाठिकेस्थान चौथाई कटिकर २७० दोसौसत्तरि बाकीरहिजायँगे ॥०॥ कदाचित्पातकनामके पापोंपरलेखा करनापरै जिनने बारह वर्षके जगहछः वर्षकीअवधि कहीगई थी तिनमें प्राजापत्य भी आधीसंख्या घटाकर निर्फ आधेके १८०एकसौ अस्सी रहिजायँगे उनके बदलकी चीजें भी धेनु याअशर्फी या वेदके पाठ या जल में बैठने के दिन उतनेही एकसौ अस्सी अस्सी माने जायँगे या गायत्री का जप अठारह लाख १८००००० या प्राणायाम बहत्तरि हजारके स्थान ३६००० छत्तीस हजार करने होंगे या तिलकी आहुतें तीन लाख साठिहजार

के स्थान १८०००० एकलाख अस्सीहजार करनी होंगी=इन बातोंका प्रमाण आगे चतुर्विंशति मत का वचन भी देखो=यथा= जन्मप्रभृतिपापानिबहूनिविविधानिच कृत्वावैगुब्रह्महत्यायाः षडब्दंब्रतमाचरेत् प्रत्याम्नायेगवांदेयं साशीतिर्धनिनाशतम् तथाष्टादशलक्षाणि गायत्र्यावाजपेद्बुधः= अर्थात्– जन्म से लेकर बहुत पाप अनेक भाँतिसेभी कियेहों परन्तु ब्रह्महत्यासे इतर समझनातो उनपापोंकी शुद्धि चाहिकर छः वर्षभर प्राजापत्य आदि व्रतका आचरण करै यदि व्रतोंकी प्रक्रिया जिसपर न होसके सो आदेश रूपी (प्रत्याम्नाय) बदल में १८० एकसौ अस्सी गौयें धनवान् होने से देवै यद्वा धनी नहो सो बदलेमें अठारह लाख गायत्री जपै जो पण्डित होय अन्यथा यहभी नहीं तो फिर जलमें वास करना आदि जो कुछ पहिले कहा वही बदला दियाजाय (ब्रह्महत्यासे इतर कहा उसका यही तात्पर्यहै कि ब्रह्महत्याआदि महापातक जिसने कियाहो वह छः वर्ष नहीं पूरे बारहवर्षका व्रतकरै और बदले की सब चीजें दूनी करै जिनसे उसे प्रयोजन परै ॥ ० ॥ कदाचित् उपपातक नामके ऐसे पापों पर लेखा करना परै कि जिनके लिये त्रैवार्षिक प्रायश्चित्त का नियम कहा गयाहो• तिनमें प्राजापत्य भी तीनसौ साठिकी चौथाई सिर्फ ९० नव्वे रहि जायँगे इसी प्रकार इनके बदल की सब चीजें चौथाई चौथाई रहि जायँगी जोसब से ऊपर जितनी तीनसौ साठि प्राजापत्यों के साथ कही गईथीं ॥ कदाचित् तीन महीना के प्रायश्चित्त वाले उपपातकों पर लेखा करना परै तहां एक महीनेमें अ-ढाई प्राजापत्य के हिसाब से साढ़ेसात प्राजापत्य ठहिरे उनके बदल में उतनेही धेनुदान या उतनी ही अशर्फी सोरह मासे वाली या उतनेही वेद पाठ करने होंगे या उतने साढ़े सात रोज जल में वास करने होंगे और ७५००० पचहत्तरि हजार गायत्री मन्त्र या १५०० पन्द्रह सौ प्राणायाम या तिल होम की आहुतें ७५०० साढ़े सात हजार करनी चाहिये ॥ ० ॥ कदाचित् ऐसे उपपातकोंपर लेखा करना होय जिन में एकही मासका व्रत करना कहागयाहो तहां यह स्पष्ट है कि बारह दिनके प्राजापत्य अढ़ाई करने होंगे अथवा उनके बदल में अढाई धेनु या अढ़ाई धेनुका मूल्य यद्वा अढ़ाई वेद पारायण या अढ़ाई दिन जल में वास करना अथवा २५००० पचीस हजार जप गायत्री का यद्वा ५०० पांच सौ प्राणायाम या तिल होमकी आहुति २५०० अढ़ाई हजार ॥ अथचांद्रायण स्थानेप्रत्याम्नायः–जहां प्रायश्चित्त इस ब्यौरा साथ लिखाहो कि एक महीना चान्द्रायण करै तहां उस चांद्रायण के बदले यदि प्राजापत्य किया चाहै तो फिर

(अट्ठाई नहीं) तीन प्राजापत्य करने चाहिये जो इसमें असमर्थ हो सो तीनिही तीन कोईभी प्रत्याम्नाय उसके बदले करै अर्थात् चाहें तीन धेनुदान या उनका मूल्य या तीन दिन जलमें वास यावेदकी संहिताके तीन पाठ या ६०० छःसौ प्राणायाम या तीसहजार ३०००० गायत्रीमन्त्र या तीन हजार ३००० तिलहोमकी आहुतें— इसव्यवस्थापर—मिताक्षराकारकहितेहैं कि (अष्टौचान्द्रायणोदेव्याःप्रत्याम्नायविधौ सदा) यह चतुर्विंशति मत ग्रंथमें जो कहाहै कि•चांद्रायणकेबदलारूपी प्रत्याम्नाय की विधिमें सदाही गायत्री देवीके आठहजार चाहिये—तदपि (धनिनःपिपीलिका मध्यादिचांद्रायणविषयमितिमिताक्षरा) अर्थात्—वह चतुर्विंशति मतका कहा भी धनीकेलिये पिपीलिकामध्य आदि नामोंकेचांद्रायणपर प्रत्याम्नाय बदलाकरनेका विषय जानना यह मिताक्षरा ने कहा॥ ० ॥ कृच्छ्रातिकृच्छ्रस्यप्रत्याम्नायः— किन्तु मिताक्षराकार कहितेहैं कि जब कभी ऐसे उपपातकों में प्राजापत्यका लेखा करनापरै जिनमें एकमहीनाभर अतिकृच्छ्र करनेकी आज्ञालिखीहोयतहां (तीनमहीना भरमें) साढेसात प्राजापत्यकरने चाहिये—परन्तु—मर्यादा प्रियके विचारसेजहां एक महीनाभर कृच्छ्राति कृच्छ्र करना लिखा हो तिसकेबदले जबकिसीको प्राजापत्य करने स्वीकार हों तहां साढे सात प्राजापत्य करने चाहिये जो तीन महीना में पूरे होंगे(बल्कि इसीका प्रमाण आगे चतुर्विंशतिके वचनमें भी देखिलेना) और जो अति कृच्छ्र एक महीनाभर करने की आज्ञा लिखी हो तहां दोमहीना भर पांचही प्राजापत्य करने चाहिये क्योंकि अति कृच्छ्र प्राजापत्य से दूने दर्जे में होताहै तिगुने मे नहीं और कृच्छ्राति कृच्छ्र प्राजापत्य से तिगुने दर्जेमें होताहै अर्थात् जितनी कठिनाई बारह दिनके प्राजापत्य में होती है तिससे द्विगुण कठिनता बारह दिनके अति कृच्छ्रमें होतीहै इसका निर्णय आगेफिर भी किया जायगा—जब कि प्राजापत्य से अति कृच्छ्र की प्रतिष्ठा दूनी ठहिरी तो फिर कृच्छ्राति कृच्छ्र की प्रतिष्ठा प्राजापत्य से आपही तिगुनी ठहिरी क्योंकि उसमें व्रतके दिवसोंकी संख्या अधिक होनेसे बड़ापनप्रत्यक्षहै—जिसको कृच्छ्रातिकृच्छ्रके स्थानीभूतसात साढे७॥प्राजापत्य की सामर्थ्य न हो सो बदले में साढेसात धेनु दान या उनके मूल्य की अशर्फी साढे सात या साढेसात रोजतक जलमें वास करै या साढे सात वेद की पारायण पाठ या पचहत्तर हजार ७५००० गायत्रीके मंत्रजपे या पन्द्रहसौ१५०० प्राणायाम करै या तिल होमकी आहुतें साढेसात हजार ७५०० होमै=इसीप्रकार=जिसको अतिकृच्छ्र के स्थानापन्न पांचप्राजापत्योंकी सामर्थ्य न हो वह बदले में पांचधेनु दान या मूल्य

की अशर्फी पाँच या पाँच रोजतक जलमें बासकरै या वेदकी पारायण पाँचपढ़ै या गायत्री का जपही ५०००० पंचास हजार या प्राणायाम १००० एक हजार करै या तिलहोमकी आहुतै ५०००पाँचहजार होमै॥ ०॥ प्राजापत्य आदि व्रतोंके परस्पर जो छोटाई या बड़ाई होतीहै तिसका कारण उनके दिवसोंकी संख्यासेभी होताहै परन्तु जहाँ परस्पर दोनोंके दिवस बराबरहों तहां जिसमें कठिनता अधिक होतीहै सो बड़ा ठहिरताहै• तहाँ कितनी बड़ाई या कितनी छोटाई किसकी मानी जाय इस भेदका समझानेवाला चतुर्विंशतिका अग्रोक्त वचन देखौ=यथा=प्राजापत्येतुगामेकांदद्यात्सांतपनेद्वयम पराकतप्तकृच्छ्रातिकृच्छ्रे तिस्रस्तुगास्तथा=अर्थात– प्राजापत्यके बदले एक गोदानकरै सांतपनके वदले दोगायदेवै• पराक व्रतके वदले और तप्तव्रतके वदले और कृच्छ्रातिकृच्छ्रके वदले तीनतीन गोदानकरै तव उनकी बराबर बदला ठहिरै और अति कृच्छ्रका नाम यद्यपि चतुर्विंशति के वचन में नहीं आया तौ भी उसके वदले में जरूरत जहाँ समझी जाय तहां दो गाय देनीचाहिये क्योंकि कृच्छ्रातिकृच्छ्र से वह छोटा और प्राजापत्य से बड़ा है मध्यम न्याय उसका यही सिद्ध होताहै–यहाँ–प्राजापत्य की अपेक्षा सांतपन में दूना बड़ापन पायागया क्योंकि दोगाय देनीकहीं (और सांतपन छोटे बडे कई दर्जाके होतेहैं) तिससे३१६ तीनसौसोरहकी अधिकोक्तिमें यमकेवचनसे १५पंद्रहदिनका और जाबालके वचन से २१ इक्कीस दिनका महासांतपन कहागया था उनके मध्ये यह दोगायवाला बदल समझना क्योंकि प्राजापत्य की अपेक्षा दूनापन उन्हीं में पायागया–और तीन सौ पन्द्रह३१५की अधिकोक्ति में जाबाल के वचनसे सातदिनका तथा३१६तीनसौ सोरह मूलश्लोक में योगीश्वर के वचन से भी सातदिन का सांतपन कहा गया था तिसके वदले में एकही गोदान समझिलेना क्योंकि वह अपने प्रभावसे एक प्राजापत्यकी बराबर मानाजाताहै–और तीनसौ पन्द्रह ३१५ मूल श्लोक में योगीश्वरके वचन से तथा उसकी अधिकोक्ति में शंखजीके वचन से तीन दिनका यति सांतपन भी कहाथा इनदोनोंमें आधागोदान समझिलेना क्योंकि ये अर्धप्राजापत्यकी बराबर मानेजाते हैं इस आदेका प्रमाण आगे षट्त्रिंशन्मत के वचन में देखना जहां (सांतपनस्यचाप्यर्धं) यही पाद आवैगा (ऊर्ध्वोक्त चतुर्विंशति के वचन में•दद्यात्सांतपनेद्वयं• यह पाद जो आया था तिसकी व्याख्या मिताक्षरा में कुछ नहीं यद्यपि लिखीथी तौभी इतना विस्तार उसका सिद्ध भया सो स्थापन कियागया और यही व्याख्या निर्विकार जानौ (अत्रनिष्प्रयोजनीयाचव्याख्या) इसकोछोड़िके सि-

ताक्षराकारने भी कुछ व्याख्या जो दर्शाई तिसमें एक धोखाहै कि उन्होंने (पराक तप्त कृच्छ्रातिकृच्छ्र) इसीचतुर्विंशति के वचन में ऐसा पदच्छेद (पराक•तप्तकृच्छ्र• अतिकृच्छ्र) माना तिससे कई विरोध खडेहुये वल्कि कृच्छ्रातिकृच्छ्र के न रहिनेसे अति कृच्छ्रही के दोभेद उनको माननेपरे जो यथार्थ में कुछ भेद नहींहै=यथाहुर्मि ताक्षराकाराः (एतच्चैकैकंग्रासमश्नीयादित्यैकैकग्रासपक्षेवेदितव्यं•पाणिपूरान्नपक्षे पुनर्धेनुद्वयमेव) अर्थात वे कहिते हैं कि अतिकृच्छ्रके नामसे यह तीनि गायवाला नियम उन अतिकृच्छ्र पर जानना जो नौदिन एक कौर खाने और तीनदिन कोरे उपवास करनेसे बारह दिनमें होताहै•दूसरा एक मुट्ठीभर नौरोज अन्न खाकर तीनि उपवासों सहित बारहदिनमें होताहै तिसके बदले दोहीगाय देनीचाहिये क्योंकि यह उससे कुछ सुगम देखि परताहै—यहां भी—मर्यादा प्रियके विचारसे इन दोनोंमें बड़ापन छोटापन का कुछभेद नहींहै न दिवसों की संख्यासे कुछ भेदहै दोनों प्रकार बारहदिनमें सिद्धहोतेहैं तहां योगीश्वरने मुट्ठी भर भात आदि कोई सा अन्न खाना कहा और मनुने एक ग्रासभर अन्नखाना कहा यह कुछभी भेद नहींहै क्योंकि एक ग्रास भी मयूर के अगडे बराबर पहिले सिद्ध हो चुकाहै वही मोरका अण्डा कुछ मुट्ठी भरसे कम नहीं होता अथवा जितना अन्न जिसके मुहमें एकबार में समावै सो भी ग्रास का परिमान कहा गया था इस प्रकार से भी कुछ भेद नहीं पाया जाता है क्योंकि जिसके मुहमें जितना अन्न आसकैगा उसके हाथकी मुट्ठीमें भी उतनाही आसकैगा कुछ अधिक नहीं कि जिसके हेतुसे तीन और दो गायका बदला दोतरह माना जासके (बल्कि इसी भेद की चाहना से मिताक्षराकार ने उस व्याख्या में एक ग्रास एक आंउरे भरका लिखि दियाहै कि जिससे मुट्ठी भरके सन्मुख उसमें छोटापन समझिपरै सो इसलिये नहीं माना जासक्ताहै कि मनुने जिस वचन में एक एक ग्रास खाना कहा तिसमें आमलक भरकी समस्या भी कुछ नहीं है) और जो मिताक्षरा कार ही के दर्शान का प्रमाण मानैं कि जो कुछ लिखा सोई सही तौभी यह प्रश्नखड़ा होता है कि जब ऐसे अतिकृच्छ्र में तीनि गोदान माने तौफिर कृच्छ्रातिकृच्छ्र जो सबसे बड़ा बाकी रहा तिसमें कितने गोदान किये जायँ इसका कुछभी उत्तर नहींहै—इतिप्रसंगादेवनिरर्थकव्याख्यानं=अप्रकृतंप्रयोजनं=इन्हीं बहुधा विरोधोंकोदेखिके ऊपरली व्याख्या जो मर्यादाप्रियनेसिद्धकरी सो निर्विघ्न जानो कि=एकग्रासवाले और मुट्ठीभर भोजनवाले दोनों अति कृच्छ्र को बराबर मानिके दोनोंमें दोहीदो गाय दानकरनेका ठीक बदलाहोगा और कृच्छ्राति

कृच्छ्र के बदले में तीनिगोदान करनेहोंगे जैसे चतुर्विंशति के वचन में स्पष्ट लिखे देखिलो• उसी वचनमें पराक परभी तीनिही ३ गोदान करने कहेगये यद्यपि पराक भी बारहदिनका होताहै दिवसोंकी बडाई उसमें नहींहै परन्तु कठिनताका बडापन उसमें अधिक है कि बारहदिन कोरे उपवास करनेसे होताहै• उसीवचनमें तप्तनाम के व्रतपर भी तीनिही ३ गाय देनी कही गई और तप्तकृच्छ्र का विधान भी ३१८ तीनसौ अठारह मूलश्लोक आदि में सिर्फ चारदिनका फिर मनुके वचन से बारह दिनका भी कहा था इससे अधिक नहीं परन्तु वह अपनी कठिनता से बडा माना गया है कि उसमें बहुत गरम तपाये हुये घी दूध जल पीने होते हैं तिससे उसके बदल में तीनगाय देनी कहीं कुछ विरोध इसमें नहींहै• उसी चतुर्विंशतिके वचन में कृच्छ्रातिकृच्छ्र के बदले जो तीनिगाय देनी कहीं तिसका बडापन दिवसों की अधिकतासे भी प्रत्यक्ष है कि तीनसौ इक्कीस ३२१ मूलश्लोक में योगीश्वरने २१ इक्कीस दिन थोडासा दूधपीकर साधन करना कहा और उसी जगे अधिकोक्ति में गौतमने बारहदिन जलपीके रहिना कहा तौ ये बारह भी इक्कीस के बराबर ठहिरे क्योंकि उसमें नौदिनकी संख्या अधिक है परन्तु थोडे दूधका सहारा देखि परताहै• गौतम के विधान में यद्यपि दिवसोंकी अवधि केवल बारह दिनकी है परन्तु केवल जल पीके बारहदिन काटने बडे कठिन हैं कि जैसे पराकमें बारहदिन कोरे उपवास किये जातेहैं इसी कठिनतासे पराकपर तीनिगायदेनी कहीथीं तैसे दोनोंतरहके कृच्छ्रातिकृच्छ्रों में तीनि गाय न्यायात्मक ठहिरीं— अतिकृच्छ्र बाकीरहा कि जिसका नाम चतुर्विंशतिके वचन में नहींहै तथापि उसके बदले में दोगाय देनी इस हेतुसे न्यायात्मक ठहिरीं कि प्राजापत्य और कृच्छ्रातिकृच्छ्र दोनोंके बीच वाला दर्जा उसका प्रसिद्धहै और इसीलिये प्राजापत्यसे द्विगुणा उसकोमानतेहैं क्योंकि यद्यपि दिवसों की तादाद प्राजापत्य और अति कृच्छ्र में भी बराबर बारह की होती है परन्तु सुगमता कठिनता के भेदसे आपस में छोटापन बडापन होताहै अर्थात अति कृच्छ्र में नौदिन तक एकही ग्रास वा एकही मुट्ठी खाकर पीछे से निरन्तर तीनदिन कोरा उपवास करना होताहै तिससे पूरे बारह दिन उपवासही ठहिरे और प्राजापत्य में तीनतीनदिन बाईस चौबीस आदि ग्रासोंको खाते हुये बीच बीच कोरा उपवास हर चौकडी में एकही करना होताहै अर्थात तीन उपवास तीनजगे बँटिजाने से कठिनता नहीं रहिती है तिससे येही तीन उपवास और नौदिन थोडा खाना परा तिसके भी तीनिही उपवास के बराबर मानेगये इसप्रकारसे बदिनके बराबरकठिनता सिद्धहुई

और ऊपर अतिकृच्छ्रमें बारहदिनकी कठिनता सिद्धहुई इसीसे दूने आधेकाभेद इनमें होताहै इसीसे यहबात सिद्धहोतीहै कि छदिनकी कठिनतावाले प्राजापत्य कृच्छ्रमें एकधेनुदेनीकही तो फिर बारहदिनकी कठिनतावाले अतिकृच्छ्रमें दोधेनुदेनीसिद्ध होगई कुछ सन्देह नहीं रहा ॥ ० ॥ एकादशगोदानस्यप्रत्याम्नायाः कदाचित् उस प्रायश्चित्त से प्राजापत्यका बदल करना परै जो चालीसवें परिच्छेद में दोसौ चौंसठि २६४ मूलश्लोक उत्तरार्ध से बताया था कि तीनदिन उपवास करिके दश गाय और एक आंडू वृषभ दान करै—तहां इतने सब कृत्यके बदले साढ़ेग्यारह प्राजापत्य करने चाहिये इस लेखेसे कि दशप्राजापत्य दशगायके और एक वृषभ तथा तीन उपवास दोनो मिलाकर इसके बदले डेढ़ प्राजापत्य चाहिये• जो इनको न करसकै तिसके लिये पूर्वोक्त रीति से अन्यप्रकारके बदल बताये जायँ कि इतनेही साढ़ेग्यारहदिन जलमें निवासकरै या वेदसंहिताकीपारायण साढ़ेग्यारह आवृत्ति करै अथवा एकलाख पन्द्रह सहस्र ११५००० गायत्री के मन्त्र जपै या ११५०० साढ़ेग्यारह सहस्र तिलकी आहुतें करै तोभी उसके बराबर प्रायश्चित्त मानाजाता है ॥ ० ॥ मासपयोव्रतस्यप्रत्याम्नायः कदाचित् उस प्रायश्चित्तसे प्राजापत्यों का लेखा करना होय जो दोसौपैंसठि २६५ मूलश्लोक में योगीश्वरने (पयसावापि मासेन) इसी तीसरे पादसे यह कहा था कि एक महीना दूधपीके व्रतकरै•तहां इस महीने भरमें दूध पीना छोड़ि के बदले में अढ़ाई प्राजापत्य किये जासक्ते हैं अथवा इन्हीं अढ़ाई के अनुसार अन्य बदल भी पूर्वोक्त रीतिके लेखे सहित कियेजासक्ते हैं ॥ ० ॥ पराकस्यप्रत्याम्नायः जिन उपपातकोंपर पराकव्रत करना लिखाहै जो बारहदिन कोरे उपवास करने से होताहै तिसको यदि कोई करना न चाहै तो बदलेमें तीन प्राजापत्य करने चाहिये जो बारह बारहदिनके हिसाब से छत्तीसदिन में पूरे होंगे परन्तु इनमें बाईस चौबीस आदि ग्रास खाकर करने की सुगमता कुछ होताहै इसीसे छत्तीसदिन बारहदिनके बराबर समझे जायँगे क्योंकि यही बराबरी पहिले चतुर्विंशति के इन वचनसे भी सिद्ध हुईथी कि जहांपराक व्रतकेस्थानपर तीनिगाय देनीकहीं तीनिगायके न होनेमें तीनि प्राजापत्य आदि अनेक बदल सिद्ध हुयेथे क्योंकि एक गायकादान एक प्राजापत्य की बराबर होताहै—यही पराक व्रत की बराबरी आगे चतुर्विंशतिमत के वचन से प्रत्यक्ष देखि परती है=यथा=पराकव्रत कृच्छ्राणि कृच्छ्रं कृच्छ्रत्रयंचरेत्तानिपनस्यचाप्यर्थवनगक्तोव्रतमाचरेत्=अर्थात्-पराक• व्रत•कृच्छ्राति कृच्छ्र• इनको न करसकनेमें एक एक के बदले में तीनतीन कृच्छ्रव्रत

अर्थात प्राजापत्य करै और सांतपनके न करसकनेमें अर्ध प्राजापत्यकरै (यहाँआधा प्राजापत्य बतानेसे गोदान भी आधाही बदले में करना सिद्ध होगा॰ तिससे सांतपन में छोटापन पाया गया॰ इसी लिये यहाँ पर उसी सांतपन को समझना जो सिर्फ दोही दिनमें या तीनदिनमें होना कहा था उसीकेबदले छोदिनमें आधाकृच्छ्र करना ठीक जानो (बल्कि इसी मूल कारण से पूर्वोक्त चतुर्विंशति के वचन में भी जहां सांतपनके बदले दोगाय देनीकहीं तहां प्राजापत्य भी दो ठहिरे तहां इस छोटे सांतपनपर न समुझना चाहिये किन्तु वहांपर बदलके बड़ापनसे ही सांतपन में बड़ापन पायागयाथा–इसीलिये पन्द्रह वा इक्कीस दिनके महासांतपनोंपर दोगायोंका दान या दो प्राजापत्य करने कहेथे॰फिर इन्हीं दोभेदोंके बीचमें जो सातदिनवाले सांतपन होतेहैं तिनपर एक पूरा गोदान या पूरा एक प्राजापत्य करना ठीक समुझना॰ किन्तु न्याय वही कहाताहै कि आवश्यक पदार्थोंका विभाग यथायोग्य होजाय जिनके परस्पर कुछविरोध बाकी न रहै॥ तप्तकृच्छ्रे तु सन्देहनिवारणं–तप्तनामी कृच्छ्रमें सन्देह बाकीरहा कि जिसकेबराबर बदलमें तीनि गोदान या तीनि प्राजापत्य रूपी कृच्छ्र करने कहेगये सो किस तप्तके बदले किये जायँ क्योंकि तप्तकृच्छ्र भी छोटे बड़े कई प्रकारके देखिपरते हैं जैसा ३१८ तीनसौ अठारह मूल श्लोक में योगीश्वरने चार दिनमें होनाकहा (उसीको दूना करिके आठदिनमें भी होता कहीं सुनाहै) उसीका आधा दो दिनमें भी मिताक्षराकारने उसी अधिकोक्तिमें दर्शायाहै कि गरम दूध घी जल तीनोंको एकही दिन इकठौरे पीकर दूसरेदिवस कोरा उपवास करनेसे दोदिनका भी तप्तकृच्छ्र होताहै–फिर उसी अधिकोक्तिमें मनुके वचन से बारह दिन का तप्त कहागया उसका भी स्वरूप केवल वही है कि योगीश्वर के बताये चारदिन वाले को लगातार तीनि बार करनेसे बारह दिन होतेहैं–इन्हीं बारह दिनका प्रमाण अधोक्त गौतमके वचनसे भी मिलता है कि (पयोघृतमुदकं वायुं तप्तं प्रतित्र्यहं पिबेत्सतप्तकृच्छ्र इति गौतमः) अर्थात–दूध घृत जल वायु इन चारोंको गरम गरम तीन तीनदिन पीवे सो बारह दिनका तप्तकृच्छ्र कहाताहै यह गौतम ने कहा॰ परन्तु इससे अधिक दिन किसी ने भी नहीं कहे तिससे सबसे बड़ा बारह दिनका ठहिरा उसीके बदल मध्ये तीनि गोदान या तीनि प्राजापत्य ठहिरे क्योंकि उसकी कठिनताके बड़ापनसे प्राजापत्योंकेद्वारा तिगुने छत्तीस दिन बदलमें देनेपरे अन्यथा आठ दिन वालेपर दोही प्राजापत्य समझने और चार दिनवाले पर एकही प्राजापत्य समुझना और दोदिनके तप्तकृच्छ्रपर अर्ध ही प्राजापत्य जानना॰

यह सन्देहका निपटारा भया अब इन सबही की तुल्यता समुझो चाहिये सो देखो ॥ ० ॥ तुल्यानांव्रतभेदानांतुल्यत्वनिरूपणं—ऊपरली व्यवस्थाओंपर सर्व्वत्र ध्यान करना चाहिये कि यद्यपि बारह दिनवाले प्राजापत्य एकही महीना मे अढाई सिद्धहोतेहैं और इसीलिये हरएक महीने भरके व्रतोंपर अढाई प्राजापत्योंका आदेश कियागया•परन्तु•चान्द्रायण एकमहीनामें कठिनाईसे होताहै तिसकेमध्ये उस कठिनाई के बड़ापन से तीनि प्राजापत्यों का आदेश कियागया—उसके बादि चतुर्विंशतिका वचन देखो जिसमें बारह दिनका पराक भी तीनि प्राजापत्यों की बराबर ठहिरा—और उसी जवे बारह दिनका तप्त कृच्छ्र भी तीनि प्राजापत्यों को बराबर ठहिरा—और उसी वचनमें इक्कीस दिनका कृच्छ्रातिकृच्छ्र भी तीनि प्राजापत्योंकी बराबर तथा जलपीकर बारह दिनवाला भी कृच्छ्रातिकृच्छ्र तीनिप्राजापत्यों के बराबर ठहिरा• बल्कि अभी थोडी दूर ऊपर षट्त्रिंशन्मत के वचन में भी उसीका प्रमाण समुझायागया कुछ सन्देह शेष नहीं रहा—तिससे—सर्वथा यह निर्णय सिद्ध होचुकाहै कि• चान्द्रायण• पराक• तप्तकृच्छ्र कृच्छ्रातिकृच्छ्र ये चारो व्रत परस्पर बराबर मानेगये और प्राजापत्यनामका कृच्छ्र इनकी बराबर तब होवै कि जब उसकी निरन्तर तीनि आवृत्तियां पूरे छत्तीस दिनमें साधी जायँ यह भी ऊपर सिद्ध होचुका ॥ ० ॥ अथप्राजापत्यानांचप्रत्याम्नायाः (प्राजापत्यानां स्थानेपिप्राजापत्यैस्तुलितानांनिवेशनमित्यर्थः) अनन्तर लेख में तुल्यत्व निरूपण होनेका फल यहीहै कि जहां कहीं जितने प्राजापत्योंकी जरूरत ठहिरै तहां उनके बहुत दिनोंवाली अवधिमे किफाइत शोचिके अर्थात थोडे दिनोंमें निपटारा करना चाहिके चान्द्रायण आदि चारोंव्रत भेदमेंसे किसी एकहीका आदेश होसक्ताहै कि जितने प्राजापत्योंकी संख्याहोय तिससे तिहाई संख्या इनकी रक्खीजाय•इसका दृष्टान्त जैसे बारह वर्षके व्रत पर ३६० तीनसौ साठि प्राजापत्य नियत होचुके हैं तिनकी तिहाई सख्या १२० एकसौबीस चाहै चान्द्रायण करो चाहै पराक चाहै तप्तकृच्छ्र चाहै कृच्छ्रातिकृच्छ्र करो सबहीका बराबर फल होताहै—तस्मादहुर्भिर्नानाकाराः (चान्द्रायणपराकतप्तकृच्छ्रातिकृच्छ्रास्तुप्राजापत्यत्रयात्मका द्वादशवार्षिकव्रतस्थाने विंशत्युत्तरशतसंख्यकाअनुष्ठेयाः तत्प्रत्याम्नायास्तु वेन्वादयोपिशाः पूर्वोक्तास्सन्तीति मिताक्षरा) अर्थात्—ये चारो जुदे २ ही तीन प्राजापत्यों की बराबर होते हैं तिन मे बारह वर्ष वाले प्रायश्चित्त के स्थान पर इनको एकसौबीस १२० ही संख्याका अनुष्ठान आदेश किया जावे परन्तु प्राजापत्य के बदन

वाली चीजैं धेनु दान आदि इतनी संख्या से तिगुने करने होंगे अर्थात् जितने प्राजापत्यों के साथ पहिले (प्रत्याम्नायरूपी) वदल कहेगये थे कि धेनु दान या वेद के पाठ आदि तिनकी तिहाई न होगी किन्तु वे उतनेही करने होंगे जिस पर चान्द्रायण आदि न होसकें यह आशय यहांसे आगे भी सर्वत्र समझे रहिना=इसी प्रकार=अति पातकों पर कि जहां २७० दोसौ सत्तरि प्राजापत्य बताये थे उनकी भी तिहाई संख्या नव्वे ९० होती है इतनेही चांद्रायण आदि चारों में कोई एक प्राजापत्योंके स्थानपर आदेश किये जासक्ते हैं=इसी प्रकार=पातक नाम के पाप जो अति पातकोंसे कुछ नीचे उनके समान कहे जातेहैं॰जिनपर १८० एकसौअस्सी प्राजापत्य बतायेथे उनकी भी तिहाई संख्या ६० तीनबीसी होतीहै इतनेही चांद्रायण आदि चारोमें कोई एक प्राजापत्यों के स्थान पर आदेश किये जासक्ते हैं=इसी प्रकार=तीनि वर्ष के प्रायश्चित्त वाले उपपातकों पर कि जहाँ नव्वे ९० प्राजापत्य ठहिराये थे उनकी भी तिहाई संख्या ३० डेढ़बीसी होतीहै इतनेही चांद्रायण आदि चारोमें कोई एक प्राजापत्योंके स्थान पर आदेश किये जासक्ते हैं=इसी प्रकार=गोवध प्रायश्चित्तके स्थलपर जहां तीनि महीनेका गोव्रत कहा गयाहो तहाँ (गोसंडल नरिहाईके पीछे फिरना गोचर्म ओढ़ना गोव्रजमें रातिको रहिकर गौओं की सेवा चौकसी आदि करना गोमूत्र आदि पंचगव्यों का संग्रह करना इत्यादि बहुत वड़े झगड़ोंके हेतुसे उस व्रतको नहीं करना चाहै या किसी कारणसे यानक उसका न वनता दीखै (और साढे सात प्राजापत्यों का आदेश न करना चाहै तिससे उन्हीं तीन महीनोंमें चान्द्रायण व्रतका आदेश करै जो पूरे तीनिही चांद्रायण किये जायँ अथवा यदि इसमें भी कुछ दिवसोंकी किफाइत चाहै तौ फिर पराक या बारहदिन वाला तप्तकृच्छ्र या कृच्छ्रातिकृच्छ्र इन्हींमें से किसी को तीनि आवृत्तीं आदेशकरै क्योंकि ये चारोंहो एकसे बराबर मानेगये हैं परस्पर इनके दिवनों की कमी वेशी पर कुछ तर्क नहींहै केवल क्रियाकी कठिनता या सुगमताले न्याय इनका होताहै= इसी प्रकार=बहुधा उपपातकों पर जहां एक महीने व्रत करना लिखा हो तहाँ भी एकही चांद्रायण योगीश्वरका कहा करना चाहिये कि जिसका द्वोत ३२४-३२५ तीनसौ चौबीस और पचीस मूल श्लोकोंमें दो भांति से योगीश्वरने कहा था=इसी प्रकार=सबसे छोटे प्रकीर्णक नामके पापों पर जहां जहां जिन पाप के नाम साथ जो कुछ प्रायश्चित्त लिखाहो सो अवश्य छोटा होगा तिनके अनुसार स्मृतिकृति के प्राजापत्यका एक पाद या दोपाद या पूराही प्राजापत्य आदेश कियाजासकाहै

इसीके अनुसार प्राजापत्यके बदल भी जो जो पहिले लिखे सो सब यथायोग्य लेखे सहित किये जासक्ते हैं--परन्तु जो उसी एक छोटेसे पापकी आवृत्ति अनेकबार करी गईहो तो वह भी बडेपापों की गणना में आजाताहै तिससे चान्द्रायण आदि चारो बड प्रायश्चित्तोंमें से भी कोई एक एकही बार या दो बार आदि लगातार कियाजासक्ताहै=मिताक्षराकार कहिते हैं कि=इसी न्याय मार्गके अवलम्बसे औरभी जहां कहीं संदेह खड़ा होय तहाँ ऐसीही कल्पना करनी चाहिये ॥ ० ॥ फिर कहिते हैं कि अग्रोक्त एक वृहस्पतिका वचन है तिसका भी वृत्तान्त समझना चाहिये=यथाह वृहस्पतिः=जन्मप्रभृतियत्किंचित्पातकंचोपपातकम् तावदावर्तयेत्कृच्छ्रं यावत्षष्टिगुणंभवेत्-इति(तदपि द्वैवार्षिकपरदारे इतिगौतमोक्त द्वैवार्षिक समानविषयं•तथात्रैमासिकादिविषय भूतोपपातकावृत्तिविषयंवा• पातकपदाभिधेयेचांडालादिस्त्रीगमेऽभ्यासविषयंच) तत्र(ज्ञानात्कृच्छ्रादिमुद्दिश्यसज्ञानादैन्दवद्वयमिति सकृद्बुद्धिपूर्वगमनेकृच्छ्रादिविधानात तदभ्यासेद्विवर्षतुल्यंषष्टिकृच्छ्रविधानंयुक्तमेवेति मिताक्षरा=अर्थात--जन्म से लेकर जो कुछ पातक और उपपातक हुआहो तहाँ प्राजापत्य नामी कृच्छ्र को बारम्बार आवृत्ती से घुमाकर लगातार तब तक साधे जब तक साठि कृच्छ्र पूरे होयँ--वृहस्पति ने यह कहा इस पर मिताक्षराकार कहिते हैं कि (यह साठि कृच्छ्रों का परिमान भी पातक मध्ये गौतम के कहे दो वर्ष वाले विषय के समान जानो जैसा गौतम ने कहा था कि माता भगिनी आदि अपने संबंधको छोड़के पराई दारा जो कहातीहों तिनमें सगम करनेवाला दोवर्ष भर व्रत करै तैसा साठि कृच्छ्र भी पराई दारा एकबार गमन करनेके पातकपरजानना क्योंकि दोही वर्ष मे साठि प्राजापत्य पूरे होते हैं • तथा उपपातक उस भांति के कि जिनके ऊपर तीन महीने या इससे भी थोड़ा दो महीने आदि का प्रायश्चित्त लिखा गयाहो उन्हीं पापों को अनेक बार जिसने अभ्यास किया हो तहां भी अभ्यास की थोड़ी बहुत सीमा के अनुरूप साठि कृच्छ्रों तक प्रायश्चित की अवधि कल्पित होजाय यह तात्पर्य वा शब्दके विकल्प से समझि लेना • और इससे बड़े पातक नामके पाप जो कहाते हैं तिनमें भी यह साठि कृच्छ्रोंकी पहुँच इस तौर से पड़ जाती है कि चांडाली आदि स्त्रियोंसे दोबार सगम कियाहो तो इस पातकपर साठिकृच्छ्र करने चाहिये क्योंकि) तहां चांडाली गमनका प्रायश्चित्त (ज्ञानात्कृच्छ्राब्द साथ बुद्धि इच्छा सहित सगम करनेसे एकवर्ष कृच्छ्र करना और बिना बुद्धि से सगम करनेसे दो महीनेके चान्द्रायण करना कहाहै • तो उस ज्ञान

बुझि एकवार के संगम पर एक वर्ष भर कृच्छ्र व्रत के विधानसेही यह बात सिद्ध होतीहै कि जब कोई पुरुष चांडालीमें दुबारा आदि संगम का अभ्यास करे तिस को दोवर्ष के बराबर कृच्छ्र करने चाहिये जो बारह दिन के हिसाब से दो वर्ष में साठ ६० कृच्छ्र होतेहैं • तिससे बृहस्पतिके वचनमें साठि कृच्छ्रोंका विधान कुछ अयोग्य नहीं ठहिरा ॥ ० ॥ और जो सुमन्तुका यह वचन है कि=यदप्यसकृदभ्य स्तंबुद्धिपूर्वसधम्महत्व तच्छुद्ध्यत्यब्दकृच्छ्रे णामहतःपातकाद्दते—इति (तदप्युपपातका द्यावृत्तिविषयं•तथाअज्ञानादैन्दवद्वयमिति यमोक्तैन्दवद्वयविषयभूतपातकावृत्तिवि- षयंवेतिमिताक्षरा=अर्थात्—जो पाप चाहैं बड़ा भी हो और जानिके भी किया हो यद्वा अनेक वार उसका अभ्यास किया हो तौ भी एक वर्ष भर निरन्तर लगातार कृच्छ्र करनेसे वह पाप सब शुधि जाताहै पर महापापके विना किन्तु एकसालभर के तीस प्राजापत्योंसे महापातक नहीं नष्ट होसक्ताहै उसके लिये बढ़िया प्रायश्चित्त चाहिये-यह सुमन्तुने कहा (मिताक्षराकार कहितेहैं कि यह अनेकवारका अभ्यास किया पाप जो तीसही प्राजापत्यसे मिटिजाना कहा सोभी उपपातक आदि छोटे पापोंका प्रयोजन समझिलेना • तथा विनाजाने किये पाप के ऊपर दो चांद्रायण यह यम के कहे दो चांद्रायणके योग्य जे कोई पातक ठहिरैं तिनकी कई आवृत्ति जिसपर विना जाने होगई हों तिसके लिये भी यह तीस कृच्छ्रों वाला प्रायश्चित्त विकल्पसे समझना अर्थात् जहां किसी दूसरे प्रायश्चित्तकी मर्यादासे विरोध खड़ा होता हो तहां तौ नहीं परन्तु जहां दूसरी मर्यादा से विरोध नहीं दीखै तहां येही तीस कृच्छ्र कराये जासक्ते हैं अन्यथा दूसरी मर्यादा जो प्रधानतासे उस पापके ऊ- पर आरूढ़ हुईहो उसीका वर्तावा करना होगा इसीलिये वा शब्दसे विकल्प रक्खा गयाहै ॥ ० ॥ असंभवे-ब्राह्मणभोजनं—एक यह विशेषता भी समझनी शेष रही कि जब कोई पुरुष या स्त्री रोगग्रस्त होने आदि कारणों से जप तप करनेमें असम- र्थहो परन्तु धन धान्यसे संपन्न होय तौ वह अपने करने योग्य कृच्छ्र आदि व्रतों के स्थानपर श्रेष्ठ विद्वान् ब्राह्मणोंको सद्भोजन देकर उक्त व्रतोंका फल पाता है सो करै • इसके मध्ये अग्रोक्त वचन देखो=यथा स्मृत्यंतरं=कृच्छ्रं पंचातिकृच्छ्रे त्रिगुणा महरहस्त्रिंशदेवंतृतीयेचत्वारिंशच्चतप्ते त्रिगुणातगणाता विंशति.स्यात्पराके कृच्छ्रे सांतपनाख्येभवतियडशीतिर्विंशति.वैवहीना द्वाभ्यांचांद्रायणेस्यात्तपसिकृशबलो भोजयेद्विप्रमुख्यान् (अहरहरितिवर्वचसंबंधनीयं • तृतीयःकृच्छ्रातिकृच्छ्रः अत्र प्राजापत्य दिवसकल्पनया विद्वद्विप्राणां षष्टिभोजनंभवतीति मिताक्षरा=अर्थात्—

प्राजापत्य नामी कृच्छ्र के न कर सकने में बारह दिनतक पाँच ब्राह्मणों को नित्य प्रति उत्तम भोजन देता रहै • इसी प्रकार अति कृच्छ्र के नकरने में तिगुने किंतु पंद्रह ब्राह्मणोंको नित्यजिमावै•इसीप्रकार तीसरे कृच्छ्रातिकृच्छ्रके न करनेमें तीस विद्वानों को जिमाता रहै•और तप्तकृच्छ्रमें चालीस विप्रों को नित्य जिमावै• और पराक नामी कृच्छ्रमें नित्यं प्रति एक बीसी तीनि गुनी गनिकर जो संख्या होतीहो अर्थात् तीनिबीसी ब्राह्मणोंको जिमायाकरै•और बारह दिनवाले सांतपन नाम के कृच्छ्र में छब्बीस विप्रोंको नित्य जिमाया करै• और चांद्रायण के न करसकने में चौबीस विप्रोंको नित्यजिमावै वह प्रायश्चित्ती जो तपकरनेमें दुर्बलहोय (यहां सब सेपहिलेप्राजापत्यमें जोपाँचकहे सो बारह पंजेसाठि सब होतेहैं ऐसेही औरों में स-मझलेना ॥०॥ एक चतुर्विंशति मतके वचनमें उक्त ब्राह्मणोंकी संख्या इससे थोडी देखि परतीहै कि=विप्राद्वादश वाभोज्याःपावकेष्टिस्तथैवच अन्यावापावनीकाचि त्समान्याहुर्मनीषिणः(इति प्राजापत्यस्थानेद्वादशविप्राणां भोजनमुक्तंतत्त्निर्धनविषय मितिमिताक्षरा=अर्थात्–प्राजापत्य या उसकेकोई बदल भी न कर सकै सो बारह विप्रोंको भोजनकरावै या पावकेष्टि जो पावक अग्निकेनामसे वेदोक्त कर्म होता है वहीकरै या औरही कोई पावनीक्रिया होय इनको मनीषी लोग बराबर बताते हैं (इसमें प्राजापत्य के स्थानपर एकही एक रोज अथवा एकही दिन इकट्ठे बारह जिमानेकहे सो यह अतिनिर्धन प्रायश्चित्तीके निमित्तपरजानना यह मिताक्षराकार ने समझाया॥ ० ॥ और उसी चतुर्विंशति मतमें एक दूसरे वचनसे चांद्रायण के स्थान भूत आदेश भी कहेहैं=यथाचांद्रायणेमृगारेष्टिःपावनेष्टिस्तथैवच मित्र विंदा पशुश्चैव कृच्छ्रं मासत्रयंतथा नित्यनैमित्तिकानांचकाम्यानांचैवकर्म्मणाम इष्टीनां पशुबन्धानामभावेचरवःस्मृता–इति (तदपिचांद्रायणाशक्तस्य•यत्तुकृच्छ्रं मास त्रयं तदपि कृच्छ्रा ष्टकंप्रत्याम्नातं तदपि वहरमूर्खविषयं चांद्रायणंत्रिभिः कृच्छ्रैरिति दर्शितत्वादलमतिप्रसंगेनेति मिताक्षरा=अर्थात्–चान्द्रायण के स्थानमें मृगारि इष्टि नामका वेदोक्त कर्म्म या पावन इष्टि कर्म्म जो अग्निके पावन इस नामसे कहाता है या मित्रविन्दा पशु नामका कर्म्म या तैसाही तीन महीने का कृच्छ्र व्रत जानो– इसकोसिवाय–नित्यकर्म्मोंके या नैमित्तिकोंके या काम्य कर्म्मों के भी या पशुबन्ध नाम की इष्टियों के अभाव में (अर्थात् इनमें से कोई कर्म्म जिसे करना चाहिये उससे वह न होसके तो यह न होनाही अभाव कहाता है तिस अभाव के स्थान में (चरवःस्मृताः) खीरि आदि साकल्य करने कहे इसका यही तात्पर्य्य है कि उन

कामोंके बदले होम करदियेजायँ–यह चतुर्व्विंशति मतका कथनहै। इसमें मिता-क्षराकार केवल एक चान्द्रायणके प्रयोजनपर कहिते हैं कि (यह नियम सिर्फ उसकेलिये जो चान्द्रायणको न करसके और जो चान्द्रायण के स्थानपर तीनिमहीना के आठ वा साढ़े सात कृच्छ्र करने कहे सो उसके लिये जो बिल्कुल मूर्ख और शरीरसे मजबूतहो क्योंकि पहिली मुख्य व्यवस्था में कहिचुके हैं कि चान्द्रायण के स्थानपर तीनकृच्छ्र कियेजायँ तो यहतीनि और आठके अन्तरसे बड़ा विरोधआवै सो भी उस विरोधके दर्शाने हेतु चर्चा मात्र कियागया कुछ आठसे प्रयोजन यहाँ नहींहै ॥ ० ॥ ध्यान करो कि यह परिच्छेद बहुत बड़ाहै और यह भी ठीकहै कि इतना विस्तार नहीं किया जाता तो इन बातोंका समुझिपाना दुर्घट होता–परन्तु इतने विस्तारका तात्पर्य केवल वहीहै जो परिच्छेद के प्रारम्भ और चक्रमें कहि चुके और इतने बड़े विस्तारका सारमात्र योगीश्वरने सिर्फ सोरह अक्षरोंसे जताया था देखो तीनसौ सत्ताइसका पूर्वार्ध मूलश्लोक ।॥ ३२७ ॥ इसीका उत्तरार्ध अगिले परिच्छेदमें जाकर काम आवैगा अर्थात् उसमें विषय दूसरा जानो ॥

इतिप्रत्याम्नायानांपरिच्छेदः समाप्तः ॥

(प्रकरणंचासौ)

इत्यनादिष्ट प्रायश्चित्तोपायभेदेषु आदेशि-
कप्रत्याम्नायानांयुक्तिप्रकरणं ॥

इस प्रकरण में केवल एकही ८७ सत्तासीका परिच्छेद है अर्थात् इतने लम्बे परिच्छेदमें एकही प्रयोजनकी वार्त्ता वर्णन करीगई तिससे यह आपही परिच्छेद और आपही प्रकरणका रूप मानागया है ॥

अथ धर्मार्थेऽपिचान्द्रायणकृच्छ्रादीनामनुष्ठानचफलसाध

नत्वम्भवतीतिगुणप्रकाशकोऽयंतथाऽस्यद्वयास्यचस्यफ

लप्रदर्शकोऽयंपरिच्छेदः अष्टाशीतितमोऽतिमश्च (८८)

सबसे पिछला यही परिच्छेदहै–इस परिच्छेद अठ्ठासीमें यह बात जानीजायगी कि चान्द्रायण कृच्छ्र आदि की भावना कुछ प्रायश्चित्तही के निमित्त नहीं होता

बल्कि जन्मान्तर के पापों का उदय रूप दुर्भाग्य आदि शोधन करना चाहिके भी होती और केवल पारलौकिक पुण्य रूपी धर्म चाहिके भी होती है या केवल इसी लोकमें प्रतिष्ठा आदि श्रेष्ठ फलको चाहिकर भी होतीहै या दोनों लोक में साधारण फलकीचाहसे भी होताहै या केवल अपने मोक्षफलकीचाहसे भी होती है इत्यादि—इनके सिवाय—सर्व धर्म शास्त्र के पढने और सुनने और घर में पुस्तक राखने आदि श्रद्धासे जो कुछ फल होतेहैं सो भी सब इसी परिच्छेदमें॥

(चान्द्रायणस्यधर्मार्थत्वंच)

धर्म्मार्थंयश्चरेदेतच्चंद्रस्यैतिसलोकताम् ३२७

अर्थः—यही चांद्रायण जो कोई अपने अभ्युदयकी कामनासे धर्महीके निमित्त साधनकरै सो चन्द्रलोक में पहुंचता है॥ ३२७॥

३२७अधिकोक्तिः—तात्पर्य इसका यहीहै कि प्रायश्चित्तको जरूरत होने विना भी यदि अपना पुण्यफल प्राप्त होना चाहिके साधै सो चन्द्रलोक में अर्थात् चन्द्रलोक भी एक प्रकारका स्वर्गही जुदा होताहै तहाँ पहुँचै—सो यह फलभी एक वर्ष भर साधना करनेमध्ये जानना क्योंकि अग्रोक्त गौतम के वचन में यही तात्पर्य है= यदाहगौतमः= एकमाप्त्वाविपापोविपाप्मासर्वमेनोहंति द्वितीयमाप्त्वादशपूर्वान्दशपरान्आत्मानंचैकविंशंपंक्तिंचपुनाति संवत्सरंचाप्त्वाचंद्रमसः सलोकतांव्रजति= अर्थात्—श्रेष्ठ विधिकेसाथ एकचांद्रायण पूराकरिपाइके उनपापोंसे रहितहोजाताहै जो उसके संचितहोयँ•पापरहित पुरुष आगामी सबतरह के पापोंको हटाताहै•फिर दूसरे चांद्रायणको ठीक ठीक साधिके अपने दश पहिले पुरुषा और दश अगिली संतानोंको और बीचमें इक्कीसवें निज आपेको भी पवित्र करताहै इसीप्रकार तीसरे आदि चांद्रायणों से फलकी वृद्धि होते होते वर्ष भर में बारह चांद्रायण अच्छे साधिके चन्द्रमाके लोकमें स्वर्ग सुख भोगता है॥ ३२७॥

(कृच्छ्राणामपिधर्मार्थत्वं)

कृच्छ्रकृद्धर्मकामस्तुमहतींश्रियमाप्नुयात्। यथागुरुक्रतुफलंप्राप्नोतिसुसमाहितः ३२८

अर्थः—धर्मकी कामनासे कृच्छ्र करनेवालाबडी श्री प्रतिष्ठा आदि लक्ष्मीको पावै जैसे गुरु यज्ञोंका कर्ता समाहित होके अपने फलको पाताहै=अर्थात्—जैसे राजसूय आदि बडे बडे यज्ञोंका करने वाला यज्ञोंका फल (अर्थात् अपने राज्य आदि रूपी

से वड़े फलको) पाताहै तैसे यह पुरुष भी प्राजापत्य आदि कई भांतिके कृच्छ्रोंको अथवा एकही किसी कृच्छ्रको समाहित होके संपूर्ण व्रतके अंग प्रत्यंगों सहित साधै जिसमें कोईसा किन्तु शेष न रहिजाय कि अमुक विधि की हीनता रही तौ उस किये हुये कृच्छ्रका फल यहीहै कि उसके कुलजातिके संबंध वाली लक्ष्मीकी वृद्धि वहुत होतीहै अर्थात जो कुछ व्यापार उसके कुल में या जातिमें होता हो या जिस वातकी कामना उसके हृदयमें मौजूदहो उसही की संपत्तों में अत्यंत समृद्धि होती रहती है और शोभा और सुकीर्ति और सुबुद्धि आदिकी प्रतिष्ठा वढ़ि जाती है= इसमें=सुसमाहित का अर्थ ऊपर लिखा गया तिससे यहभी तात्पर्यहै कि शास्त्रार्थ से व्रतोंके अंग जैसे सिद्ध होचुके हैं तैसे पूरे अंगों विना साधना करनेसे भी फल की सिद्धि नहीं मिलतीहै और यहभी तात्पर्यहै कि प्रायश्चित्तों के प्रयोजनमें जैसा इन्हीं व्रतोंके प्रत्याम्नाय रूपी आदेश और वदलभी दर्शाये गये तैसा यहां धर्मकी कामना मध्ये साधन करनेमें न होगा। किन्तु यहां जिस व्रतका संकल्प किया जाय वही पूरे अंगोंसे कर्तव्य होगा तैसेही वदल वाले कर्मभी निज अपनेही नामोंसे जुदे किये जायँगे—वल्कि यह भी तात्पर्य है कि जहां किसी व्रत की एक दो आवृत्ति करनेसे फलकी उत्पत्ति देखने में न आवै तहां उसी व्रतकी अनेक आवृत्तों लगातार करनी चाहिये अर्थात निराश होके मन को न हटावै किन्तु आशा लगी रखकर निरन्तर उसमें रगड़ किये जावै तिसको अवश्य फलकी प्राप्ति होतीहै (अतिसंघर्षणा करैजुकोई। अनलप्रकटचन्दनतेहोई॥ ३२८ ॥ इतिचांद्रायणादीनांप्रायश्चित्तंविनापिधर्मार्थत्वम॥

अथच

(अस्यैवधर्मशास्त्रस्य सेवनकर्तृणांफलम्)

(तत्रप्रार्थनाच ऋषिभिःकृतावरदानार्थरूपैव)

श्रुत्वैतानृषयोधर्मान्याज्ञवल्क्येनभाषितान् । इदमूचुर्महात्मानंयोगीन्द्रममितौजसम् ३२९ य इदंधारयिष्यंतिधर्मशास्त्रमतंद्रिताः । इहलोकेयशःप्राप्यतेयास्यंतित्रिविष्टपम् ३३० विद्यार्थी प्राप्नुयाद्विद्यांधनकामोधनंतथा । आयुःकामस्तथावाऽऽयुःश्रीकामोमहतींश्रियम् ३३१ श्लोक त्रयमपिह्यस्माद्यःश्राद्धेश्रावयिष्यति । पितृणांतस्यतृप्तिःस्यादक्षय्यानात्रसंशयः ३३२ ब्राह्मणः पात्रतांयातिक्षत्रियोविजयीभवेत् । वैश्यश्चधान्यधनवानस्यशास्त्रस्यधारणात् ३३३ यइदंश्रावयेद्विद्वान्द्विजान्पर्वसुपर्वसु । अश्वमेधफलंतस्यतद्भवाननुमन्यताम् ३३४ श्रुत्वैतद्याज्ञवल्क्योपिप्रीतात्मामुनिभाषितम् । एवमस्त्वितिहोवाचनमस्कृत्वास्वयंभुवे ३३५ ॥

=अर्थात्—ऋषिलोग याज्ञवल्क्य से कहे इतने सब धर्मोंको सुनिकर (जो आचार अध्याय से लेकर यहां तक तीनि कांडों मे योगीश्वर ने कहे तिनको अच्छे समुझि पाले पीछे) ऋषय यह कहने लगे उन अपार शक्तिमान् महात्मा योगीन्द्र को कि ॥ ३२९ ॥ जे कोई इस धर्मशास्त्र को निरालस होके धारण करैंगे वे पुरुष इस लोक में यशको पाइके स्वर्गमें जावैंगे ॥ ३३० ॥ विद्यार्थी बनिके यदि इसकी धारणा करै सो पूरी विद्या की शक्ति पावै तथा जो धनकी कामना से पढ़ै सो धनको पावै जो आयु की कामनासे इसका अभ्यास करै तिसकी आयु बढ़िजाय श्रीशोभा सपंत्ति प्रतिष्ठा आदिकी कामना राखै तिसको वही प्राप्तहोय ॥ ३३१ ॥ जो कोई श्राद्ध कर्मके बीच इसका पाठ करावै अथवा इसके तीनिही श्लोकमात्र पढ़िकर निमंत्रित विप्रों को सुनावै तिसके पितरों की अक्षय तृप्ति होय इसमें सन्देह नहीं ॥ ३३२ ॥ ब्राह्मण होके जो इसका अभ्यास करै सो ब्राह्मणों में सत्पात्र ठहिरै क्षत्री इसकी धारणासे विजयमान् होय वैश्य इसको पढ़ै सो धन धान्यवान् होय ॥ ३३३ ॥ इतनी प्रार्थना करिके ऋषिलोग एक और प्रार्थना करते हैं कि जो कोई विद्वान् होके प्रत्येक पर्वोंमे द्विजातियों को सुनावै तिसको अश्वमेध यज्ञ कियेका फल होय•यह सब जितनी प्रार्थना हम सामश्रवा आदि ऋषिओं ने पांच श्लोकों द्वारा आप से प्रकाशकरी सो सब तद्रूप आप स्वीकार करैं अर्थात् अपने कहे शास्त्ररूपी वचनोंमें ऐसाही प्रभाव अपनी अपार शक्तिसे आरूढ़ करैं (यह सुनिके आगे वरदान देतेहैं॥ ३३४ ॥ इतनी मुनि लोगों की प्रार्थना सुनि के याज्ञवल्क्य भी प्रसन्न हृदय होकर स्वयंभू नाम विधाताको ध्यानमात्रसे प्रणाम करिके प्रसन्न मुखसे उत्तर वरदान देकर बोले कि यह सब इसी प्रकार होउ जो कुछ तुमने चाहा ॥ ३३५ ॥

——✱——

(ग्रन्थ समाप्तिः)



समाप्तोऽयंमहाग्रंथोधर्मशास्त्रानुवादतः मर्यादापरिपाट्याख्योवेदवेदनवेन्दुके (१९४४) वि क्रमार्कस्यभूपस्यख्यातेसंवत्सरोत्तमे १ श्रीमर्यादाप्रियस्यैवस्वाऽऽयासेनादितःखलु आचारोव्यव हारश्चप्रायश्चित्तमितित्रयः कांडायत्रविशेषेणतृतीयस्तेष्वयंजनाः २ परिच्छेदमयाःसर्वेपृथक्कार्या नुरोधतः कांडाःसच्छीघ्रबोधायसंतिकर्तुःक्रियागुणैः ३ तत्रादिमौचद्वौकांडौपूर्वमेवहिमुद्रितौ कर्तुः स्वातंत्र्यभावेनसप्तवर्षपरिश्रमैः आर्गलाख्येपुरवरेस्थितिःकर्तुर्हियत्रवै ४ तृतीयोऽयंधनाभावकार णैःसुविलंबितः पंचवर्षैततःसोपिसिद्धिंप्राप्तोयथाधुना ५ सर्वेषामुपकारायविद्वतांसुलभायच मुं शीनवलकिशोरैर्धनंदत्वास्वकीयकम् कर्तुःसंतृप्तिपर्यन्तमौदार्य्येणवरीयसा६ नियोजितःपुनर्वारंम र्यादाप्रियपंडितः प्रायश्चित्ताभिधस्यास्यनिर्माणेक्षिप्रकर्मणि ७ स्थितोऽप्यार्गलसंज्ञेहिपत्तनप्र वरेह्यहम् शुक्लोदुर्गाप्रसादाख्योनियुक्तस्तेनमुंशिना वर्षद्वितयकालेनसिद्धतुकृतवानिमम् ८ पां डुलेखेऽथसंपूर्णेमयादत्तश्चशोधितः लक्ष्मणापुरिसंप्राप्तोलखनऊइतिशब्दिते ९ नगरेसर्वतः ख्यातेसाकेताधिपतिस्थितौ मुद्रांकलिपिगेहंतुयत्रख्यातंमहत्तमम् १० (गीतिः) मुंशीनवलकिशोरैः श्रीनवलकिशोरप्रेसइतिनाम्ना तस्मिन्नयंतृतीयः कांडोमुद्रितःकर्तुरसमक्षम् ११ यदानुमुद्रितः प्राप्तोमयाकर्त्रैवलोकितः आर्गलेहिपुरेतिष्ठन्ज्ञातःशोधनकर्मणा १२ कर्तुरेवासमक्षत्वात् यंत्र दोषादिकारणैः यंत्रवैतनिकानांचप्रमादात्तुविशेषतः १३ संक्षिप्तेष्वृषिवाक्येषुगलितानिपदानि च बहूनिदृष्टिमायांतितानिशोध्यानिपाठकैः १४ किंचतच्छोधनार्थंतुशुद्धाशुद्धविवेचनम् अ शुद्धशुद्धपत्राख्यंयंत्रमग्रेऽभिधीयते १५ पांडुलेखानुसारेणपुस्तकंकंचशोधितम् सस्यैववर्तनार्था यतन्ममोपस्थितंजनाः १६ एवंचतुर्दशेवर्षेत्रयःकांडाःसुसज्जिताः (१९४४) सव्वत्सरेविक्र मस्यवेदवेदनवेन्दुके १७ मुंशीनवलकिशोरस्त्वथतर्वान्पुनःस्वयम् मुद्रयिष्यतिभूयोपिस्वातंत्र्ये णैवचेच्छतः१८यतस्तेनास्यग्रंथस्यकर्तुःपूर्वकृतापिच प्रतिज्ञापूरिताह्यंतेनिजौदार्य्येणसज्जनाः१९ सी आई ई त्रिभिःशब्दैर्यस्यनामअलंकृतम् सार्वभौमप्रदत्तैश्चअर्थस्तेशमयंजनाः२० भारतस्याधि राष्ट्रस्यसुहृत्तमअसौमहान् मुंशीनवलकिशोरःसर्वतज्जनसम्मतः २१ येनार्गलपुरेरम्यंनार्गवा नाहितायतु विद्याश्रमइतिख्यातापाठशालानिरूपिता २२ प्रतिज्ञायाद्दशीपूर्वमयाकर्त्रानिरू पिता व्यवहारमर्य्यादायाःसमाप्तौचेहदृश्यताम् २३ (तायथा—प्रायश्चित्तानिधेकांडेनप्रति ज्ञामयाकृता द्रव्यादिप्रतिबंधानांकारणानिविलोक्यच गुरुकांडःसएवास्तिभूरिद्रव्यव्ययेननु सिद्धिस्तस्यचसंभावीनसहायःप्रदृश्यते प्रतिज्ञांयदिवाकश्चिद्धरिणीशःकरिष्यति तदाहमयनोभू त्वाकरिष्यामिनसंशयः—इतितस्याःस्वरूपं) एषाहिमुंशिनवलेननूनंकिशोरकान्यानमभूपिनेन दे शेविदेशेषुचपूजितेनप्रसाधिताऽहंचकृतःकृतार्थः २४ जन्मभूमिश्चमगंगापारदेशेविशेषतः हरदोई मंडलाधीनेप्रविभागेबृहत्तमे २५ साकेतविषयेशाहाबादख्यातपुरोत्तमे शनिबाजारकेस्थाननो रातीरेगृहंमम २६ मग्नमंदिरविख्यातशिवालयसमीपगम् वसतिःकान्यकुब्जानांयत्रख्याता

मही तले २७ अभून्द्ररद्वाजमहर्षिगोत्रेशुक्लेतिविख्यातकुलेविशुद्धे विद्यावरःश्रीहरिवंशशर्मायस्येष्टदेवःखलुसिंहयाना २८ वेणीरामइतिप्रोक्तःपुत्रस्तद्गुणसन्निभःतस्यपुत्रास्त्रयोजातास्तेचधर्मविशारदाः २९ ज्येष्ठःठाकुरनाथस्तुगंगारामश्चमध्यमः चोक्षेलालइतिप्रोक्तःकनिष्टोमत्पिताचसः ३० कूपारामादिपूर्तानांनिर्माताममध्यमोधनी प्रातिभाव्यकरश्चासीत्प्रत्यर्थीनांचराजानि ३१ दुर्गाप्रसादशर्माऽहंमर्यादाप्रियसत्तमः वाल्यादेवत्यजन्देशंविचरन्नर्गलेपुरे ३२ आगराइतिविख्यातेपट्टनप्रवरेस्थितः अत्रासीनोहृदिस्थांतुमर्यादापरिपाटिकाम् ३३ कृतवान्सुखवोधायसज्जनानांचप्रीतये धर्मार्थसुखमोक्षाणांमर्यादायाःप्रवृद्धये ३४ ॥

मुंशी नवलकिशोर के छापेखाने में छपी मार्च सन् १८८८ ई० ॥

इस पुस्तक को पण्डित रामविहारी व पण्डित वंदीदीन ने शुद्ध किया ॥

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	४	अष्टा	स्रष्टा	३७	३०	त्रिष्वेतेषु	त्रिष्वेतेषु
२	२०	अवरार्थं	अवरार्थः	३८	३	याग्य	योग्य
४	१८	जममतक	जन्मसूतक	३८	३५	शुद्धदोक्रिया	दोशुद्धक्रिया
७	२२	दक्षिणाग्निजन्म	दक्षिणाग्निकाजन्म	३८	२६	वड़ागहिरा)	वड़ाठहिरा)
८	२४	मुर्दालेजार्ये	मुर्दा न लेजार्ये	३६	१४	न्मृतत्वयसुत	न्मृतकेत्वयसूत
६	७	त्रिराचि	त्रिरात्र	३६	१०	नकरै—परतु =	नकरै=परतु —
६	१०	दिंमुखा	दिङ्मुखाः	४०	१२	यमिशेषे	यमिशेषे
१०	३	नोद्धपर्ययेषु	नोद्घपर्ययेषु	४०	१०	शेषादद्या	शेषान्दद्या
१०	१४	पर्णान्प्र	पूर्णान् प्र	४०	२०	शेषरहै	शेषरहै
११	३	पाँचमेअधिकोक्तिमें	पाचमेंकीअधिकोक्तिमे	४१	२१	मिताक्षराका	मिताक्षराकार
१३	२६	अगिरा	आंगिराः	४१	२३	गर्भस्तुत्या	गर्भस्र त्या
१३	२०	शौचं	शौच	४२	१८	गर्भकेगरनेमे	गर्भकेगिरनेमे
१६	७	मासं	मास	४२	२१	अचतुर्था	आचतुर्था
१६	२०	गर्हभिया	गर्हाभया	४३	२४	मूतकाह्योधि	मूतकाह्योभि
२०	२२	कास्थिरत्व	काअस्थिरत्व	४४	२	शौचकापेध	शौचकानिषेध
२१	२०	तिनका	तिनको	४५	२	अग्निहोत्रार्थे	अग्निहोत्रार्थ
२२	३	निर्वृत्यापि	निर्हृत्यापि	४५	६	नवताजो	नवताजो
२३	३	पित्रुपा	पित्रुपा	४५	७	तवताजो	नवताजो
२३	१२	मातापितोरिति	मातापित्रोरिति	४५	६	रात्रिभिनासितु	रात्रिभिर्मासमतुल्य
२४	२३	पिंडपानीय	पिंडपानीय	४५	२६	हन्य ततो	हत्याततो
२४	२४	सवकोअर्थात्देवै	अर्थात्सवकोईदेवै	४६	८	त्रिगत्रिमशु	त्रिगात्रमशु
२५	७	अविभक्तिधन	अविभक्तधन	६	१०	नकिंचि	नचकिंचि
२६	१	पछे	पीछे	४६	२५	ठटेनेकर	ठोटेलेकर
२८	१०	यावज्जीव	यावज्जीव	४६	१६	विपोट्टधन	विपोटकोट्टियधन
३१	६	सूतकरे	सूतकमे	५६	१३	भवेन्येव	भवन्येव
३१	६ १०	भोक्तृदोषि	भोक्तृदोष	५०	१३	धाग्ना	धराना
३१	१८	सिद्धिकिये	सिद्धकिये	५०	१६	द्रातजामि	द्रातजमि
३२	२६	बहुता।काल	बहुतकाल	५६	१०	विशोधनम्	विशोधनम्
३६	२८	।	।	६०	१०	यन्वै	यानैव
३०	१५	पुत्रवती	पुत्रवर्ती	६१	१०	पगानव	पगानव
३०	१८	सत्पर्शेन निपिध्यते	नस्पर्शेननि पिध्यते	६२	६	अविनीत	अविनीत
३०	१८	संस्पर्शसूतिस्नायान्तु	नस्पर्शेनूतिकायान्तु	६२	२१	नोनो	नेनव
३०	२१	द्विजास्चाद्रायण	द्विजश्चाद्रायण	६३	४	अग्यन्यन	आग्नत्यन

मिताक्षरा स० प्रायश्चित्तकांड का शुद्धाशुद्धपत्र।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९३	५	दानध्ययने	दानाध्ययने	९९	१४	तातवरक्ता	तातवरक्तं
९३	१०	निर्वाहिचने	निर्वाहचलै	९९	१४	तथौपधी	तथौपधोः
९३	१४	दानध्ययने	दानाध्ययने	९७	७	योग्यहै	योग्यहै
९३	१८	होतीवहा	होतीवहो	९७	८	पतनीया	पतनीय
९३	२०	चिराच्चिमाहु	चिराच्चमाहु	९८	४	प्रचविष्ठायां	प्रवविष्ठाया
९४	५	पत्तिणी	पत्तिणीं	१००	१४	विपणि दुकान	विपणिदुकान.
९६	२१	शुद्रास्यु	शुद्रा.स्यु	१००	१४ १५	दुकानखेती·	दुकान.खेती
९८	६	पिछल्न	पिछले	१००	२२	दुरेत	दुरेत्
९९	११	कृच्छ्र पादो	कृच्छ्रपादो	१००	२३	कुटुम्बच	कुटुम्बच
९९	१२ १३	कृच्छ्रचान्द्रायणव्रत	कृच्छ्रनामकव्रत	१०१	१३	यस्यगज्ञ	यन्यराज्ञ
८३	१०	पुरोन्ति	पुरोहित	१०१	१४	तद्राष्ट्रेन्दु	तद्राष्ट्रेन्दु
८५	१०	क्रतुम्मरण	क्रतुम्मरण	१०३	१५ १६	नग्नोप्रचैववि	नग्नोरचैवावि
८८	१३	गर्द्दकडपन्न	गर्द्दकेडपन्न	१०५	१२	होसके	होसकै
८१	५	स्नायात्मस्पृष्ट	स्नायात्सम्पृष्ट	१०५	१५	वानाप्रस्थ	वानप्रस्थ
८३	१५	श्वानस्वपाक	श्वानश्वपाक	१०५	१६	पितृ देवा	पितृन्देवा
८३	२६	स्पृद्वा	स्पृद्वा	१०५	२०	करताहै	करतारहै
८३	२६	छुईचढा	छुईचढी	१०५	२०	भीकरता	भीकरतारहै
८५	२२	भासवायसमार्जारि	भासवायसमार्जार	१०६	२०	बिल्कुल	बिल्कुल्ल
८६	७	करौमुत्का	करौमुत्वा	१०८	१३	यद्वाग्निसे	यद्वाअग्निने
८६	१२	करौमुत्क्का	करौमुत्वा	१०८	१८	फलौकोभोगसे	फलौकोभोगसे
८८	१६	पक्कोईट	पक्कोईट	१०८	२०	वाऽनिवागते	वाऽहनिवागते
८७	२८	प्रचालित	प्रचालितं	१०९	३	सप्रदौसे	सप्रपदौसे
८८	२६	तीसरावहभी	तीसरावहभी	१०९	१०	पुरपूर	पुरंपूर
८६	४	स्पृश्यमानत्व	स्पृश्यमानत्व	१०९	३०	हृत्यराक्तितः	हृत्यशक्तितः
८६	१०	कृच्छ्रचान्द्रायण	कृच्छ्रप्राजापत्यआदि	११०	२	विकल्प	विकल्प
९३	२१	निर्वाहकरै	निर्वाहकरै	११०	२९ ३०	भोजोवस्त्र	भोजावस्त्र
९३	२२	हीनवर्णका	हीनवर्णकी	१११	१५	उमे	उमै
९७	१६	नीचकेटोकर्म	नीचकेटोकर्म	१११	२०	प्राणायाचा	प्राणायात्रा
९७	१२	कर्मोको	उनकर्मोको	११२	१०	आोपित	आरोपित
९४	२३	जीवन	जीवन्	११२	२४	मौनिमाधै	मौनमाधे
९५	३०	मकर	मकर्	११२	२८	मूलदल्नोकोमे	मलदलोकोमे
९९	११	गौ[illegible]नि	गोर्यानि	११३	२८	हमाप्रस्थान	मैत्राप्रस्थान
९९	१४	नरेन्द्रे	नरेन्द्रे	११४	२१	(क्रो)	(क्रि)

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
११६	५	मोटेमुद्दे	मंटेमुद्दे
११६	१०	ग्रहस्थी	गृहस्थी
१२१	२	तर्कनाकरनो	तर्क न करनो
१२१	२५	भर अन्यथा	भारहैअन्यथा
१२१	२५	विरोधापाति	विरोधापत्ति
१२२	११	वनिपर	वनिपरैं
१२२	३०	मानपैरुक्त	मान्यैरुक्त
१२३	२२	ब्राह्मण.प्रव्रजति	ब्राह्मणा.प्रव्रजंति
१२४	२५	तं॰ड	तीनदंड
१२५	२७	प्रजापत्ये	प्राजापत्ये
१२८	२६	वैणवादं	वैणवानुदं
१२४	२६	प्रमाणद	प्रमाण नुद
१२५	२१	श्वच मुनिः	श्चरेन्मुनिः
१२५	२८	देवस्थन	देवस्थल
१२६	१०	वयामात्रः	कंथामात्रः
१२८	२१	नम्रागाराराय	सम्रागाराण्य
१३१	२	परन्च	परञ्च
१३१	७	गावर्वियोभि	गौर्वांवयोभि
१३१	७	रन्येरगार	रन्यैरगार
१३१	२४	घर्पणामृ६०	घर्षणाम्
१३३	५	नमहू	समूह
१३३	१६	राग	राग
१३४	४	चतुप्टय	चतुष्टय
१३४	११	धारणआदि	धारणाआदि
१३८	२१	यत्न	यतन
१३९	१७	मेंकुछमहीं	मेकुछभेदनहीं
१४१	१७	आकोशी	आकाशी
१४१	१६	दृष्टिजमाचाहौ	दृष्टिजमायाचाहौ
१४१	२५	वप्रपां	वपुषा
१४३	६	सकास	सकाश
१४३	२४	श्लोकदेखौ	परिछेदविचारौ
१४५	८	मूलश्लोकी	मूलश्लोक की
१४५	२१	प्रेरक को	प्रेरक की

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१४६	१४	सनारी	चराचरससारी
१४६	१७	गर्भमे	वृक्षादिकस्थावर या नरादिक जगम देहोंके गर्भमे
१४८	१७	कहांआते	कहाँमे आते
१४८	२१	याकुंसमर्थः	याक्तु समर्थ
१४९	२	महापच	पचमहा
१४९	७	ग्रन्थ	ग्रन्थि
१४९	१७	इन्द्रियादि	इन्द्रियादि
१५३	११	परिभाया	परिभापा
१५३	१२	विवक्तता	विविक्तता
१५३	१७	गणवेदिभिः	गुणवेदिभिः
१५३	२२	देसकै	देखिसकै
१५४	६	करपिन	करापन
१५४	४	उनेदेवै	उसैदेवै
१५५	१०	हड़फटन	हड़फूनि
१५७	५	योनिरूपो	योनिरूपो
१५७	७	उधर	उद्धृत
१५७	११	टोकर्योरा	टोकर्योरा
१५८	२	तातापुत्र	मातापुत्र
१६६	८	शृंगार	शृगाटक
१६८	७	नहीकहैं	नहीकहेंगे
१७५	२३ २४	दोपक	दीपक
१७७	१६	अनन्तहै	अनन्तहैं
१७७	२२	सयोनां	मयीना
१७८	८	चालीसऔर इक तालिस	चालीस और एक इकतालिस
१८८	१४	मूडन्मे	मूड
१८८	१७	पट	पाच
१८८	२६	कातर	कानांतर
१८९	२४	निन्दिकाने	निन्दनिन्दिकाने
१९०	३	स्वेदश्रवण	स्वेदस्रवण
१९१	१४	इनमन	इन नर

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१८१	२२	मैत्रादित्यसे	मैत्रादित्यसे	२२६	२२	है तिसे	हैतिसे
१८३	११	पहच	पहुच	२२८	२४	वाशब्दसेके	वाशब्दके
१८३	२१	अगभूति	अगभूत	२३०	१२	परमेश्वर	परमेश्वरने
१८३	२६	मजोरा	मजोरा	२३०	२१	नामहो कभी	नामहैजोकभी
१८७	३	मन्तर्प्ये	सन्तर्प्ये	२३१	४	इकार	इन्कार
१८६	३०	करना ऊर्ध्वोक्त	करना)ऊर्ध्वोक्त	२३१	१६	मेवतु	मेवतु
१९०	२१	ममवाय	समवाय)	२३१	२७	येकोई	जेकोई
१९१	५	स्वभावहोमे	स्वभावहोसे	२३२	८	ततस्मान्	ततस्तान्
१९१	१६	विगड़तेहुये	विगडतेहुये	२३२	२३	स्वर्गजितो	स्वर्गजिता
१९१	२४	परिच्छेद. ॥	परिच्छेदः ॥ १४ ॥	२३६	२७	किजिसे	किजिससे
१९२	४	(व' युष्मान्प्रति	(वः युष्मानुप्रति)	२३७	३०	यागसाधना	योगसाधना
१९४	२०	मोटे	सोटे	२४४	०	मनुष्योतर	मनुष्येतर
१९६	२०	ज्यातिष्टोम	ज्योतिष्टोम	२४६	१६	कुडासो	कुडाशो
१९८	२४	आतोहैं जय	आतोहै कि जय	२४८	२	वनर'	वानरः
२०१	०	ज्ञार्नी	ज्ञानी	२४८	२	स्माजारिः	स्मार्जारिः
२०१	१५	ज्ञानीं	ज्ञानी	२४८	२	खद्योतः	खद्योत.
२०५	३	उत्पन्नभुई	उत्पन्न भई	२४८	६	गवना.	गमना.
२०५	४	होय)	होर्य)	२४८	१८	कन्यादूप	कन्यादूपक
२०७	१८	वयसवाते	वयसवाले	२५०	४	निरार्य.	निर्णय.
२१०	२६	भवेत)	भवेत्)	२५०	२०	करनेवाल	करनेवाले
२१२	३१	योगनिलाप	योगमिलाप	२५१	१३	पपैा के	पापैाके
२१६	१४	रची तिनने	रची तिनमे	२५२	२३	नि दितस्य	नि दितस्यच
२१६	१४	वद्वान	विद्वान्	२५३	२६	कहतोहै	कहातोहै
२१६	२१	[illegible]र्थात्	हैं अर्थात्	२५४	१०	वाक्यात	वाक्यातर
२१८	२	येमुनीश्वरी	एमनीश्वरी	२५४	२१	ननार	नादर
२१८	१३	ज्ञानी	ज्ञानी	२५५	१३	अशुभनाति	अशुभजाति
२१८	१३	ममन्ने	मनुक्षे	२५५	२२	टेकाहुआ	काटाहुआ
२१८	१८	मन्यज्ञानी	मन्यज्ञानी	२५६	५	प्रायश्चितो	प्रायश्चितो
२१८	२२	ईप्तिपरी	ईप्सिपरते	२५६	०	नियेठचित	नियेउचित
२२२	[illegible]	[illegible]	अवतक्तनहो	२६०	५	त्वज्ञानात्	त्वज्ञानात्
२२२	[illegible]	[illegible]तस्मात	।यतस्मात	२६०	८	व्रतनाधे	व्रतमाधे
[illegible]	[illegible]	[illegible]	अदीगेना	२६०	२५	फलनो	फलमी
[illegible]	२	[illegible]	ज्ञानी	२६१	८	नेष्टवा	नेष्टवा

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२६१	२६	नहींदेखोगई	नहींदेखीगई	२७७	२७	पढ़वेदका	पढ़े वेदका
२६२	१०	सोपतितात्याग	सोपतितात्याग्य	२७९	२	शिष्यकोस्त्रीवहिन	शिष्यकोस्त्री० वहिन
२६२	२५ २६	ससार	समारो	२८०	११	मेपातकोंका	मेपातकौंका दोभा.ति
२६२	३०	जाराहो	जारीहो	२८०	२४	लेभागे	लेभागे
२६४	१५	उसेकहते	उसैकहते	२८१	११	क्यौंजो	क्यौंजो
२६४	१०	इतनं	इतने	२८२	१८	मल कमें	मूलश्लोकमें
२६५	७	काहताहै	कहाताहै	२८२	२६	योनिविगाना	योनिविगाड़ना
२६६	१०	वलसेउसे	वलसेउसै	२८५	१०	नहै	नहीं है
२६७	८	अराधी	अपराधी	२८५	१४	होतीहै)	होतीहै(औरवेभीअस
२६७	८	अर्यात्	अर्थात्				तृपास्त्र हैं किजिनमे
२६७	१५	पिप्रयोजित	विप्रयोजित:				भिचार व्याभिचारौं को
२६७	२९	न्याय.	न्याय· =				शिक्षाहो)
२६८	१४	अनुमन	अनुमनन	२८५	२०	जातिभ्रन्श	जातिभ्रंश
२६८	२४	ढँकहुवे	ढँकेहुये	२८६	१५	पाध्य	पाध्याय
२६८	२६	कारणकोठीक	कारणकोठीक	२८६	२१	पितृणा	पितृणा
२६८	२७	उसककार्य	उसकेकार्य	२८६	२३	भ्रन्शकरागा	भ्रंशकरागा
२६८	३०	ग्यभिचारसे	व्यभिचारसे	२८६	३०	मेकुछनोचे	नेकुछनोचे
२७०	५	किसीडूवना	किसीकाडूवना	२८७	१५	अपनेधरो	अपनेकोधरो
२७०	१३	औरधं	औपधं	२८९	२६	वचनप्रभाव	वचनके प्रभाव
२७०	१४	रूप	रूप	२९०	१०	वहूतसेनाभेद	वहुतने नामभेद
२७०	२७	तहाँभा	तहांभी	२९०	१४	आवैगी	आवैगी
२७०	२६	अकाररातु	अकारणातु	२९०	२२	भिचासी	भिचाणी
२७२	८	वेदों का	वेदों को	२९१	१५	गौतमनेउन्होंगौतमने	उन्होंगौतमने
२७२	१०	भिशनन	भिशंमन	२९१	२५	उनके वस्त्रौं	उनके वस्त्रों
२७३	४	पातका	पातको	२९२	८	निवाहिकरै	निर्वाहकरै
२७४	२६	सिद्दि	सिद्ध	२९२	८	प्रविनेन्न	प्रविशेन्न
२७४	२७	अग्निजोवुभे	अग्निजोवुके	२९२	२१	खड्गागपाणिर्द्वादन	खड्गागपाणिर्द्वादश
२७५	१३	तौदृैगुण	तोद्दैगुण	२९३	१४	नित्यप्रति	नित्यप्रति
२७५	६	मिलना	मिलाना	२९४	९	प्रकृतिवार्ता	प्रकृतवार्ता
२७५	२७	किसीयेहो	किसीकोयेहो	२९६	२ ३	भी न है	भीनहीहै
२७६	१२	कामाखनु	कामास्वनु	२९६	१०	आयागया	पायागया
२७७	२२	पायश्चित्त	प्रायश्चित	२९७	३	ढोगुना	ढेगुना
२७८	२३	ब्रह्मोझूता	ब्रह्मोज्झता	२९८	२३	कदाचित	कदाचित्

मिताक्षरा स० प्रायश्चित्तकांड का शुद्धाशुद्धपत्र।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२९९	१०	हुये को	हुयेको	३२१	१९	ब्राह्मात्मक	ब्राह्मणात्मक
२९९	१०	करता है	कराताहै	३२२	३	जहामात्रा	जहायात्रा
३००	८	बतावै	बतावै	३२२	१० १६	ताग्नेधर्मः	ताग्नेर्धर्मः
३०१	२५	नपुनःमर्व	नपुन सर्वा	३२३	२	द्योपन्नस्तु	द्योपपन्नस्तु
३०३	२९	योग्यपात्रोंका	योग्यपात्रोंको	३२३	१०	घातककरै	घातकहोय
३०४	११	माधना अ	माधनाको अ	३२३	१२	चत्रोजूता	छत्रोजूता
३०४	१०	क्रियाजा	क्रियाजाय	३२६	२२	य यती	या यती
३०५	२४	अब्राह्मणास्तु	अब्राह्मणास्तु	३३१	५	सवमस्था	सवनस्था
३०५	२४	अद्योराजभृत	आद्योराजभृत	३३२	५	घातर्थं	घातार्थं
३०६	८	श्रोत्रव वा	श्रोत्रिय वा	३३२	१९	ब्रह्मण	ब्राह्मण
३०६	३	दुच्छामा	दुच्छ्रामा	३३३	६	मुख्यनिय	मुख्यनियम
३०६	१३	करे	करै	३३४	८	मरणाच्छुद्धि	मरणाच्छुद्धि
३०६	२४	पावै०	कितपनेछुटकारापावै	३३५	२५	मद्योंको	मद्योंको
३०७	६	सममग्राह्य	सममग्राह्य	३३६	३०	ठहिा	ठहिरा
३०७	२३	नहीमके	नहीमकै	३३७	२०	मात्रवच्छेन	मात्रावच्छेदेन
३१०	२	अश्वमेधमेभोश्व	अश्वमेधमेश्व	३३८	८	हर्विनिंद्धम	हर्विनिंश्च
३११	१०	भृत	भृय	३३८	२९	दिवना	दिवाना
३१२	८	करनासरद्श्रामे	करनाकष्टाउनसवद्श्रा	३३९	५	हठै फिरै	हठैफिरै
			श्रोमे	३३९	१५	दातव्य	दातव्यः
३१२	९ १०	–योग्यहै कि	योग्यहै कि–	३३९	२१	कुयान्माता	कुर्यान्माता
३१४	४	चतशस्त्रै	चतःशस्त्रै	३४०	३	चैनो	चैनो
३१४	१२	प्रकार म	प्रकार से	३४०	२०	करणान्वापि	कणान्वापि
३१६	१२	स्नायूनि	स्नायूनि	३४०	२०	भत्तयेत्रि	भत्तयेत्त्रि
३१६	१२	स्नायुभि	स्नायुभि	३४२	१०	करै या	करैया
३१७	३	अदेश	आदेश	३४२	१०	पीवै या	पिवैया
३१८	२	कधिरा	कधिराः	३४२	१८	चौयेका	चौथेकाल
३१८	२९	वैठे	वैठै	३४२	२	थोडभोजन	थोड़ाभोजन
३१९	१४	वाचित्रूना	वाचित्रूना	३४३	२५	पिण्याकवा	पिण्याकवा
३१९	२१	इरकाई	हाकोई	३४३	१९	पचोहुई	पहुचोहुई
३१९	२८	भुट्टहोतिहैं	भुट्टहोते हैं	३४५	१३	मुराकेभाड	मुराकेभाड
३१९	३०	अश्वमेधक	अश्वमेधका	३४५	२६	भ्रग्गकर	भ्रगकर
३२०	११	तर्कनी	यज्ञतर्कनी	३५१	२४	मर्पयेत	मर्पयेत्
३२१	३	स्वनीम	स्वनीम्	३५२	१९	बाल्लाछिटकाए	बालछिटकाए

मिताक्षरा स॰ प्रायश्चित्तकांड का शुद्धाशुद्धपत्र ।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३५३	१२	मरणाज्जीव	मरणाज्जीव
३५३	१७	कोईजातिवर्णा	कोईहोजातिवर्णा
३५४	७	न मारे	नमारै
३५४	९	देखा	देखो
३५४	२२	होवेहा	हो वेहो
३५५	६	राजासकृद्धन्या	राजासकृद्धन्या
३५५	९	और कि	औरहै कि
३५५	२०	लिक्ष्या	लिखा
३५६	२	जहाकही	जहाकहीं
३५६	६	नहींहाती	नहींहोता
३५६	१६	दजुहा	दड जु
३५६	१७	सावधानङ	सावधान हो
३५६	२५	काभिधान	का विधान
३५६	२६	लिख्यामात्रे	लिखामात्रे
३५६	३०	सावित्रां	सावित्रीं
३५७	२	प्रायश्चित्त	प्रायश्चित्त
३५७	५	ब्रह्महाव्रतं	ब्रह्महव्रतम्
३५७	५	इदच	इदच
३५८	३	हर्त्रादेयं	हर्त्रा देयं
३५८	१३	औदुम्बरंताम्रमय शस्त्रमितिमिताक्षरा	तत्रगुलिकामयमाग्नेय शस्त्रमिति मर्यादाप्रिय विचार (तुपचाद्गतिभा पाया, उडुवरफलसदृश गुलिकाया. सयोगात्—
३५८	१८	गोदमाग्नि	गोमयाग्नि
३५९	२	सुवर्णापहा	सुवर्णापहा
३६०	५	नद्यीसभव	नद्यीसभव
३६०	२४	इदमनसापाप	मनसापाप
३६१	५	सुवण	सुवर्ण
३६१	६	पुरुषत्र	पुरुष
३६१	७	अथहा	अथवा
३६१	८	वार वर्ष	वारहवर्ष
३६०	१६	गुरुवे मातृ	गुरवे म तृ
३६७	१९	उदरपूर्णं	उदरपूर्णा
३६७	२०	इसीमान्यता	इसीसेमान्यता
३६८	२४	जातकर्ण	जातूकर्ण्य
३६८	३०	कारणोंसेसाफ	कारणोंसे संवर्तनेसाफ
३६९	१८	नहीं अत्रोक्त	नहीं ॥ ० ॥ अत्रोक्त
३६९	२०	वहीदोनो	वहीदोनो
३७०	२	जननी	जननीं
३७३	१०	सुनो	सुनी
३७३	१०	फौरजो	और जो
३७३	१८	करावस्मृति	कण्वस्मृति
३७५	१०	लिखिचुके	लिखिचुकेतहां३६९ पृष्ठकोपचीसवींपंक्तिसे देखो ॥ ० ॥
३७५	१७	ब्राह्मणोका	ब्राह्मणीका
३७५	२०	दिनहैरहै	दिनशेषरहै
३७५	२६	जातूकर्ण	जातूकर्ण्यः
३७६	५	कहिचुके	कहिचुकेहैंतोनसौतिहत्तरिपृष्ठमें दूसरीपंक्तिसे पचीसवींतकदेखो
३७६	२७	यहनहींतो	यहनहींतो
३७६	२०	वचनढूंढो	वचनढूंढोतोनसौचौहत्तरि३७४ पृष्ठमेंसातवीं पंक्तिसे चौदहवीं तक देखो
३७६	२६	त्रिपवर्णा	त्रिपवर्णो
३७८	९	मास चरेत्	मासचरेत्
३७९	१२	संसर्गा	संसर्गी
३७९	२०	ससृज्यते	समृज्येत
३८९	१५	प्रयतैर्योनस्त्री	प्रयतैर्योनजीव
३९०	९	भोज्नान्न	भोजनान्न
३९२	७	मद्वा	मद्वा
३९२	७	दृद्वें	दृढं
३९२	१३	कामाटवें	करेंआटवें

मिताक्षरा स० प्रायश्चित्तकांड का शुद्धाशुद्धपत्र ।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४०१	१८	कुन	कुन्तल	४३१	२६	अणोऽपिच	अणोऽपिच
४०८	११	लेकर २३३	लेकर २४२	४३१	३०	चाहियेर्याजिसको	चाहियेयाजिसको
४०५	२१	गौर्य	गौए	४३३	१४	ठचितहोगी	उचितहोगी
४१०	२२	कामारतुद्विगु	कामातुद्विगु	४३३	२५	अवकीर्णा	अवकीर्णि
४१०	३०	रचत मे	रिचत्तमे	४३५	१३	करना और	करना
४११	०	अविदज्ञानो	अविदद्धज्ञानो	४३६	१०	सशिकं	सशिख
४१५	३०	नातिव	मावित	४३८	१६	जानेहुयेये	जानेहुयेयें
४१६	५	भिदनना	भिद्दनना	४३८	२६	आकर्षणसे	आकर्षमे
४१६	११	अधि	अधिक	४३६	२	गुरुकाउ	गुरुकठो
४१६	२०	किन्तुदन्द्रौ	किनुदन्द्रौ	४३६	५	स्तेयोउपपा	स्तेयोपपा
४१६	२४	कृच्छ्रादो	कृच्छ्रपादो	४४०	५	अठगुण	अठगुणा
४१८	३	देवादुत्या	दैवात्या	४४१	८	विषसनुभन	विषयसमुभना
४१६	२४	तद्वयवहित	नदुव्यवहित	४४२	५	कृच्छ्रऔरअतिकृच्छ्र	कृच्छ्रातिकृच्छ्र
४२०	६	पैदाक्रिनैना	पैदाक्रियाक्रिनैना	४४२	१०	तापवाद	तापवाद.
४२०	१६	कहिचूके	कहिचुके	४४२	२०	होरेका	हीरेका
४२०	१०	कताके	कर्ताके	४४३	२६	तत्रिगुण	तन्त्रिगुण
४२०	२०	मोटनै	मोटनै	४४४	०	व्यपहारि	व्यपहारे
४२३	०	योलाच	योल	४४५	२	अनाहितग्निताग्निता	अनाहिताग्निता
४२५	२	वर्ताने	वर्ताविने	४४५	०	अधिकारसो	अधिकारहोसो
४२५	२१	कारण	कारण	४४६	१८	प्रवृत	प्रवृत्ति
४२६	१६	कुनै कारोः	कुनै कारो	४४०	४	वाममामान्य	वाससामन्य
४२६	१०	वनोरन्मने	वनोरन्मोने	४०	१२	एजीज	एकचीज
४२६	२०	जजैरेके	जजोरेके	४४०	१८	पुण्य०मुक्रम	पुण्यमुकर्म
४२८	६	दुहिते	दुहते	४४०	२०	हजार मत्र	हजार डोकारमत्र
४२८	१६	स्माच्छ्रवापदे	स्माच्छ्रापदे	४४०	२३	मोनवन्तु	मोलको वस्तु
४२८	२४	लनेमरो	लनेमरो	४४०	२४	इमप्रकार	इनोप्रकार
४२८	६	असात्स्वात	असात्स्वात्	४५०	३	अधिकारमे	अधिकार है
४२६	१	लवावे	लवचै	४५१	१०	तिमे	तिनै
४२६	८	चरिच्ट	चारिचट	४५१	१३	जेटोछोटो	जेटोको छोटो
४२८	११	गैर्ये	गौए	४५०	२०	ताद्रूयायेव	ताद्रूयायव
४२६	१४	नगाचैयद	नाचार्य यद्द	४५३	२४	का दागने	को दागमे
[illegible]	२	दावस्या	दावानामा	४५६	१०	कृच्छ्रांनिवृत्त धर्मकर्माणि कृच्छ्रइति	कृच्छ्रोऽनिवृत्त धर्मकर्माणीऽतिकृच्छ्र इति
[illegible]	[illegible]	वैरयेनिरद	वैरयेनिरद				

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४५६	२१	चाहिये	चाहिये या धर्मकर्मसे	८३	१०	हत्वाचरेवेवं	हत्वाचरेदेव
			रहितन होनेपाये ब्राह्म	४८६	१५	पडवार्पिक	पडवार्षिकं
			णकोविनेोडकदारायेसं	४८८	२३	प्रनगळोडिके	सगळेडिके
			गमनकरनेोअति कृच्छ्र	४९०	१६	कुवचनकहै	कुवचनकहैं
			मार्थे(अर्थात् नीचेवर्ण	४९०	२०	किजैमे	कियहजैसे
			कोकन्याविवाहिलेनेमें	४९०	२०	दनै तिनके	बनैयाबेहोमारे जाय
			अपनेज्ञातीधर्म जिसने				तिनके
			नछोडेहों तिसको उ	४९१	७	आदिखोटी	आदिखोटी
			न्हीदाराओका सगम	४९१	१०	ब्रह्माविट्	ब्रह्मविट्
			करनेवाले कोयहप्राय-	४९४	१३	ईप्सद्व्य भचरित	ईपद्व्याभिचरित
			श्चित्तदूसराकहा=(मो	४९८	६	जोस्त्रियो	जोस्त्रियोंको
४५७	६	तोनोकोवगवर	तीनोंकोवराबर	५०१	६	बाला०आदि	बालाआदि
४५८	८	होवर्णोतमा	होवर्णोतमा	५०२	२८	मारिक	मारिके
४५८	१०	किब्राह्मणी	कि---ब्राह्मणी	५०३	७	जिमका	जिमका
४६०	२२	विपये गर्भके	विषये—गर्भके	५०४	२६	कात्यायनो	कात्यायमी
४६१	२६	ब्राह्मणीमोहा	ब्राह्मणीमोहा	५०६	१५	त्र्यहोऽरात्र	त्र्यहोऽहोरात्र
४६३	२०	गमनेअन्यजा	गमने—अत्यजा	५०७	२१	भवेत	भवेत्
४६३	२२	वेणु०वनफोर	वेणुवसफोर	५०८	२	पगपक	परपगपक=
४६४	२	का इच्छाके	कावचनइच्छाके	५०९	२	गुजासी	गु जासी
४६५	२५	हाडाना	हंडाना	५०९	६	दस०वदक	दसवदक
४६६	१६	कामनाचाहिकार	कामनासिचाहिकर	५०९	७	नोकमे	नोकमे
४७०	२३ / २०	कृच्छ्र न्यादान	कृच्छ्रआदान	५०९	१८	(पराशर	॥पराशर
४७०	२२	कृच्छ्रात्मक	एककृच्छ्राधिक	५०९	२६	रहैद्दनको	रहैद्दनको
४७०	३०	कृच्छ्रात्मकदो चाद्रा-	कृच्छ्रऔरचांद्रायणदो	५०९	३०	अज्ञग०द्दडुम	अज्ञगर०डुम
		यण	नोएकएक	५१०	१८	और ज्ञत	औरजातोयों के साथ
४७१	३	दोकृच्छ्रात्मक	एककृच्छ्राधिकदो				ज्ञत
४८०	२	ईवेडे	चाहिये	५१०	२६	उद्दैन	उद्दैन
४८०	१३	उद्भूतपन	उद्धृतपन	५१३	२०	द्रष्ट	द्रष्ट
४८३	१९	पातकी	पातकीको	५१४	१०	[illegible]	[illegible]
४८८	६	चितहै	चितहैं	५१५	२०	नोस्त्रिन	[illegible]
४८८	२०	ननतोदरको	ननागौऔरदरको	५१४	२३	यऽनिद्दोव	यऽनिद्दोव
४९३	१९	ननालिनने	ददालिनको	५१५	२६	नानिर्देन्त	नानिर्देन्तु
४९०	[illegible]	तीडनदोनी	तैडनदोभी	५१५	२०	[illegible]	[illegible]

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५१०	७	तहो	तहा	५५०	१६	ध्यानकरो	ध्यानकरौ
५१०	१८	तभीकोड	तभीकोड़े	५५१	३०	कहीसे	कहीसे
५१८	१३	देवे	देवै	५५३	२	अयथाङ्य	अयथायाङ्य
५१८	१३	गिरावे	गिरावै	५५३	२३	माप्राजापत्य	सप्राजापत्य
५१८	२६	मान	माना	५५४	१५	मत्स्यर्मैत्य	मत्स्यकर्मैत्य
५२०	६	ब्रह्मचार्यादिनां	ब्रह्मचर्यादीना	५५७	८	सपत्यनकुल	सर्पस्यनकुल
५२०	१५	आश्रय	आश्रम	५५६	७	तडागाराम	तडागाऽऽराम
५२०	२१	धरागया	धरागया	५६२	१६	ब्रह्मोज्झता	ब्रह्मोज्झता
५२३	४	मोक्षवकीर्ण	मोक्षवकीर्णी	५६३	१२	तिसकेसातमा	तिसकोसातमा
५२३	२०	होमको	होमको	५६३	३०	करे	करै
५२३	३०	देवताभ्य	देवताभ्य	५६५	१२	स्त्रोहिंसादिभिर्जीवन	स्त्रीहिंसादिभिर्जीवा
५२४	३	नेत्रनेनलिखिदिये	नत्रनेनलिखिदिये	५६६	१३	च्छेद (वृच	च्छेद (वृच
५२४	३	[illegible]लिखितो	[illegible]लिखितो	५६६	३	पट	पट्
५२६	१०	चान्द्रायण	च द्रायण	५६७	१८	नचाचा	नचान
५३६	१८	यां च्छद्भोजनीय	यां च्छद्भोजनीय	५७०	१६	दशार्ध	दशार्थं
५३८	१०	[illegible]	आहृतोच्छिष्टो	५६८	२५	ब्राह्मजीवी	ब्रह्मजीवी
५३८	२१	[illegible]ना	[illegible]ना	५६८	३०	नहींकितव	नहींऽकितक
५३६	२	[illegible]ना	हिंना	५६८	१६	लेलने	लेलेने
५६०	११	र्त्तसमाभूतवादीको	कर्त्ताकोसमाभूनवादीमे	५७०	१३	मर्यपरायी	मर्यापराये
५६३	२०	नपतजाना	नप त्याना	५७०	१५	भ्याविद्दत	भ्याविरहत
५७३	२०	अनजवे	अनातवे	५७०	१८	परामुख	पराङ्मुख
[illegible]	७	उटेकेन	उटेकालकितु रात्रिम-मयनीनरोदिन	५७३	१२	ममाचरै	समाचरे
				५७४	४	विरोधशा	=विरोधशा
[illegible]	२५	[illegible]	नीनवर्षे	५७४	१५	येग्यो	ईर्ष्यो
[illegible]	२१	[illegible]	[illegible]	५७४	१०	अर्थ्यो	अर्थो
[illegible]	१३	[illegible]	[illegible]	५७४	२४	अन्यांत्	अर्थात्
[illegible]	२१	[illegible]	[illegible]	५७५	१०	लोगादि	लौगादि
[illegible]	२२	[illegible]	[illegible]	५७५	२३	नित्यपति	नित्यप्रति
[illegible]	८	[illegible]	[illegible]	५७६	८	रेथ्या	रेश्या
[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	५८०	२०	सेवने	सेवने
[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	५८०	२८	प्रामगिको	प्रामगिको
[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	५८१	२०	ममुको	ममुको
			[illegible]	५८०	६	यथाद्वादि	यथाद्वादि

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५८२	२५	घिगुकं	घिगुक	६०२	१२	एकोमप्रतिम ९१	एकमप्रतिम. ९१
५८३	१०	उपने	उपरले	६०४	५	शास्त्रमभी	शास्त्रसेनभी
५८३	२६	कृच्छ्रव्रन	कृच्छ्रव्रत	६०४	२०	नहींखवानेऔर नखाने	नहीखायापरनखाने
५८८	१३	क्तट्यो	क्तुट्यो	६०८	१५	तीनकाव्रन	तीनदिनकाव्रत
५८८	१४	रवमायुक	खगोमायु क	६०८	२३	स्तुकांजिका	स्तुकांजिका
५८८	२०	छोटेबड़	छोटेबड़े	६०६	२२	ऐसेखाय	ऐसेमेखाय
५८८	२८	नीलकठ	नीलकठ	६१०	२१	प०खाते	प०याखाते
५८८	२५	वारन	वानर	६१३	१०	पटत्रिंश	षट्त्रिंश
५८६	१	चारनवेनेवच	चारवनेवच	६१३	१०	एकदशा	एकादशा
५८६	१०	नापन्य	जापत्य	६१३	२२	मसद्रूये	मामद्रूये
५६१	३	पन्तरचान्नं	पन्तचान्नं	६१३	२६	वैश्यका	शूद्रका
५६१	६	पतगाल्य	पतगाम्यि	६१३	३०	वैश्यकी	शूद्रकी
५६१	१०	नन्पृस्याशुचि	संस्पृश्याशुचि	६१४	२	वैश्यका	शूद्रका
५६२	१४	अठठासेमल	अट्ठामीनुन	६१४	३	गंवन्द्र	गंवजी
५६२	१५	मित्यादिनां	मित्यादिना	६१५	२	नु विश्रमना	नुनिः:नमा
५६२	१६	ऐसादूखित	ऐसादूपित	६१८	६	तदयोवार्धु	तद्धयोवार्धु
५६२	१७	शातापत:	शातातप	६१८	१२	अनन्यहीसन्यास	अनन्यहोकाअन्यास
५६३	१५	ब्राह्मणोच्छिष्टा	ब्राह्मणोच्छिष्टा	६१८	२५	कमारि	कर्मार
५६३	१६ १७	ब्राह्मोनुवर्चना	ब्राह्मींनुवर्चनां	६२०	१७	पित्रा	पित्रा
५६४	३०	महाशान्तपन	महासांतपन	६२१	१०	पगकरच	पगकच्च
५६५	४	नेनमुद्ध्यते	येनशुध्येत	६२३	२	शूद्रस्येव	शूद्रस्येव
५६६	५	पटत्रिंश	षट्त्रिंश	६२३	२२	पवयज:	पवयजनु
५६६	६	वस्तुभुक्त	यस्तुभुंक्ते	६२८	३	धयसापाद्याना	शुवरपाना
५६६	१२	मोहाद्भुजीत	मोहद्भुजीत	६२८	११	कुन्द्रोन्द्रयाने	कुन्द्रोऽसृतयाने
५६६	१३	यभुक्तभुक्त	यभुक्तेयभुक्तेनु	६३०	२२	ब्रानिननीशे	ब्रानिनु—ननीशे
५६६	२०	कभुक्ते	कंनुक्ते	६३२	२२	वनसको	जनसको
५६६	२०	एववैवरव्रन	एवंवैवरव्रत	६३४	१०	नअनव	नअनुज
५६६	२५	च तेवरा	च.तेवरा	६३४	३०	डंडयोन्नर्गौ	दण्ड्नर्गौ
५६६	२८	चत्रातो	चत्रीतो	६३५	०	मटडा	मटंड्रा
६००	२३	सान्तरन	सांतपन	६३५	४	अटडा	अटड्रा
६०१	३०	शूद्रस्य	शूद्रस्य	६३६	३०	नवंषो	नंवंषो
६०२	६	शुद्रस्येन	शूद्रस्येन	६३८	१०	दृन्दुरा—	दृन्दुरा
६०२	१०	लिखितुके	लिखितुके	६३२	८	नियवर	नियनरे

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६४२	१८	ज्ञामलपो	ज्ञामलपो	६७२	२०	ऽन्यत्त्र	ऽन्यत्र
६४३	२४	प्रतिलोम्या	प्रातिलोम्या	६७३	२०	शोशुचदद्य	शोशुचदव
६४६	१६	अयोनी	अयोनी	६७४	४	एकमन्व	एकमत्र
६४८	२१	तेसामन्व	तेनामत्र	६७४	५	जिसमन्व	जिसमत्र
६४९	५	प्रतिगृह्यपेत्	प्रतिगृह्यजपेत्	६७४	७	दद्य	दधं
६५०	६	जुर्भ पाप	जुर्भःपाव	६७४	८	मधौ	मधो
६५१	१२	दखौ । वर	दखौ ॥ १ ॥वर	६७४	१०	आतिदैशिक	आतिदेशिक
६५२	५	तीनकर्म	तीनकर्म	६७४	१२	दद्य	दध
६५२	१०	चाहै	चाहै	६७४	१३	मन्व	मत्र
६५२	२०	मगति	नगति	६७४	२६	शाकल्न	स कल
६५४	१४	चारिणीस्त्री	चारिणीस्त्रो	६७६	२१	मनुमे	मनुने
६५४	२०	जिमैकोई	जिनैकोई	६७७	२३	(पृथक्कराभि.)	पृथक्क्राभि)
६५५	१६	माप	माय	६७८	३०	यकाम	प्यकाम
६५५	२६	गृहगाय्	गृह्णीय्	६७९	३०	जपेद्वाय्यस्य	जपेद्वाप्यस्य
६५६	६	पूर्ण कुंभ	पूर्णकुंभेच	६७९	३०	कुताप	कुंताप
६६०	१२	पर	पर	६८०	२	निविस्त्वैपान्	विक्षैपान्
६६१	५	[illegible]	नद्दैव	६८०	५	निविस्त्वैपान्	निविक्षैपान्
६६२	३	[illegible]वैने	न्योकिवैने	६८२	१५	सवोपपात	सर्वोपपात
६६५	२५	निर्मगि[illegible]ये	निर्मणहृये	६८३	४	सृन्टिमे	सृष्टिमे
६६८	१६	मुगोता	नुमवोता	६८३	३०	[illegible]यामेध्यप्राश	ज्यामेध्यप्राश
६७१	३	[illegible]याज्ञो	क्रियाहोयदिवा अग्नि	६८३	३०	ऽपरायविक्रये	ऽपण्यविक्रये
			होत्रोकोपत्नो वधकरी	६८४	३	द्वादश २	द्वादशद्वादश
			यागर्भिणीकि अविज्ञात	६८४	४	द्वादश २	द्वादशद्वादश
			गर्भकाविनाशकिया हो	६८४	५	द्वादश २	द्वादशद्वादश
			-अविज्ञातकायह्अर्थहै	६८४	५	द्वादश २	द्वादशद्वादश
			किइमगर्भने लडकाहो	६८५	२२	मोजा	मोजा
			गायालडकीया नपुंसक	६८६	२६	अन्यतमव	अन्यतमव
			वैदाहोतायहअभिजन	६८८	६	[illegible]	चोता
			नकानिनुकाजायतनी	६८९	२१	शुद्धवती	शुद्धवती
			नकविनाशकियाहो	६८९	२	वनादिक	वनादिक
			अ[illegible]	६९५	४	वृद्ध	[illegible]
			[illegible]	६९५	८	प्रमानिनी	प्रमोनिनी
			[illegible]	६९६	२	[illegible]	[illegible]

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६९६	१३	पूतानिपुनति	गीतानिपुनति	७१७	१५	नामसूधेक्रम	नाम॥सूधेक्रम
६९७	४	तिलैर्वाचिन	तिलैर्वाचन	७१८	२२	नमोह्यायेत्यादि	नमोह्मायेत्यादि
६९८	१४	य प्रात स्तिला	य प्रातस्तिला	७१८	२४	त्यंतरोक्तामि	त्यतरोक्तानि
६९८	१७	चोराव्धोशेष	चोराव्धौशेष	७१९	१३	को साघना	को साधना
६९९	६	तिससेउसकोचित्तको	जिससेउसकेचित्त को	७१९	२१	कालोंमेवेठे	कालोंमेवैठै
६९९	१३	पड़ासहि	पीड़ासहि	७२०	२६	प्रतीतहोता	प्रतीतहोताहै
७००	१२	पापउसे	पापउसै	७२१	२५	इनपाचो	इन पाँचो
७००	२२	रात्रको	रात्रिको	७२२	४	दिनकोरेव्रतको	तीन कोरेव्रतोंको
७०१	२८	विवेचनोयाना	विवेचनीयानो	७२२	११	उसनहो	उसैनहीं
७०३	७	आवै ॥	आवै॥ ३१२ ॥	७२२	२४	कार्तिथिको	कोतिथिको
७०३	८	परिच्छेद ३१२	परिच्छेदः ॥	७२४	१०	गासभुंजीत	ग्रासभुंजीत
७०४	१९	सूधेस्पस्ट	सूधेस्पष्ट	७२५	१५	विकारेरो	विकारेण
७०५	१६	कोताडना	कोताडना	७२५	१७	कुक्कुटांडाद्रामिल	कुक्कटाडाद्रामल
७०६	४	सर्वकापिल	सर्वकापिल	७२५	२६	कृत्यकार्य	कृत्यकार्य
७०६	२०	कुशलंकर	कुशलेकर	७२६	१६	श्रेष्टज्ञानो	श्रेष्ठज्ञानो
७०६	२२	शवतो)	शवतो)	७२७	२०	पूर्णमासीपहिले	पूर्णमासीसेपहिले
७०६	२४	वचे	वचै	७३०	२	भुग्भवेत	भुग्भवेत्
७०७	२	सद्गा	सद्गा	७३२	१९	गिननाग्रास	गिनमाग्रास
७०८	५	कोरा	कोरा	७३३	३०	स्नाशक्तस्य	स्नानाशक्तस्य
७०७	८	आठो	आठौ	७३४	४	आर्द्रवासा०लब्धांशी	आर्द्रवासालब्धांशी
७०७	२६	सान्सपन	सान्तपन	७३४	४	लब्धांशी +	लब्धांशी०लब्धांशी-
७०७	२७	च्यहवै	च्यहवै				इतिचवापाठःतत्रोभय
७०८	८	द्व्य हम्	द्व्यहं				सुदर (अर्थात्लब्धांशी
७०८	१३	तिनको	तिनको				पाठहोनेसेजोकुछ टि-
७०८	२१	कृच्छ्राधं	कृच्छ्राधं				कानेपरवैठेआपही आ-
७०९	१०	मासेनक्वथित	मासेनक्वथितः				करमिलेवही भोजनक-
७०९	२०	एकरात्रोप	एकरात्रोप				रै-लब्धांशीयाजोभोज-
७१४	२	इनदोनो	इनदोनों				नकरै-दोनोंअर्थठीक हैं
७१४	९	पादंचरेच्छूद्रः	पादंचरेच्छूद्र	७३४	८	काहिकरदर्शाया	काहिकरनियम दर्शाया
७१४	९	वैश्यरयपादयेत्	वैश्यस्यदापयेत	७३४	८	भोजनकरिके	भोजनकरिके-या-लब्धा-
७१४	१८	एकपाद्उसे	एकपादउसै				शी-ऐसापाठांतर होने
७१५	९	उसेतिगुना	उसैतिगुना				से-उसे.टिकाने पैठे जो
७१६	२७	प्रतिलोम्येनवा	प्रातिलोम्येनवा				कुछ अदफनमुतमादि

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
			स्वत प्राप्तहोमोखाइके				नेहोंदिनो तक उत्तस
			स्थंडिलपरसोवै				ख्यारोज रोज जिमावै
७३६	१६	चैवार्घमर्षणम्	चैवाघमर्षणम्				दृष्टांतजैसे चान्द्रायण में
७३६	१६	छुत्कारा	छुटकारा				तीसदिनतक चौवीस
७३६	३०	जुहुयाद्याहृती:	जुहुयात्व्याहृती:				ब्राह्मण॥०॥
७४४	२२	अनादिष्टपापौ	आदिष्टपापौ	७६२	१६	नेसमुझाया ॥	नेसमुझाया- परतुजैसा
७४७	६	त्यादिभि०	त्यादिभि:				अतिनिर्धन को प्राजाप
७४८	२३	एकनिटक	एकनिष्क				त्यके बदलेबारहब्राह्मण
७५२	२५	मातसाढे	साढ़ेसात				कहेहैंतैसाअन्यव्रतोंके उ-
७५२	२६	उनकमूल्य	उनकेमूल्य				परलेहिसावसे जित ने
७५५	२५	तीनदिनकारा	तीनदिनकोरा				होसकें उतनेउनमे भी
७५६	२	बारहदिनको	पूरेबारहदिनको				निजनिजलेखे से इन्हो
७५८	२८	जुदेरहो	जुदेजुदेहो				बारहकेअनुरूप समुझि
७५६	२३	कर्मोवेयो	कर्मोवेशो				लेना ॥०॥
७६०	२६	स्त्राब्द	च्छ्राब्द)	७६२	२०	स्थानभूत	स्थानीभूत
७६२	११	समुझनेना	समुझलेनाअर्थात्जिस	७६३	४	औरजो	और जो
			व्रतकोसाधना जितने	७६३	५	बिल्कुल	बिल्कुल्ल
			दिनहोतेहोंउसमेंउत	७६४	२५	प्राप्नोतु	प्राप्नोति

इति

——※——

नामकिताव

पद्यसग्रह

(ब)

बृहज्जातक
बृहत्संहिता
विनयपत्रिका मूल व टीका सहित
ब्रजविलास
ब्रजविलाससारावली
ब्रह्मोत्तरखण्ड
विष्णुपुराणभाषा
वाराहपुराण
बीजककबीरदास
बीजगणितदोभाग
बैतालपच्चीसी
वक्तावलीसुमन
वैद्यजीवन
वैद्यमनोत्सव
वैद्यप्रिया
बालशिक्षा दो भाग

(भ)

भक्तमाल
भविष्यपुराण
भोजप्रबन्धसार
भाषाव्याकरण
भाषातत्वदीपिकाव्या०
भूगोलतत्व
भाषाचन्द्रोदय
भूगोलवर्णन

(म)

मार्कण्डेयपुराणसटीक
माधवनिदान
मुहूर्त्तचन्द्रदीपिका

नामकिताव

मुहूर्तचिन्तामणिसटीक
मुहूर्तमार्तण्डसटीक
मुहूर्त्तगणपति
मुहूर्त्तदीपक
महाभारतदर्पण तथाअलगर उन्नीसोपर्व
महाभारत सवलसिंह
कीवनाई
मिश्रितमाहात्म्य
मनमोहनी
मनमोहन
महारामायण
मनुस्मृति
मंगलकोष

(य)

याज्ञवल्क्यस्मृति
योगवाशिष्ठ
युगलसंवादबोधप्रकाश
यमुनालहरी
युगलविलास

(र)

रेखागणितदोनोभाग
रघुवंशसंस्कृतवभाषादो जिल्दोंमे
रामायणमूलतुलसीकृत मोटेअक्षरोंकी
रामायणतुलसीकृतमूल छोटे अक्षरों की तथा मोटे औरचिकने कागजकी
रामायणतु०कृ०छोटाटैप
रामायणतुलसीकृत०

नामकिताव

रामायण शुकदेवजी की टीका सहित मै कांड
रामायणटीकारामचरण की मैकांड
रामायणकीमानसप्रचा०
रामायण तुलसीकृतका शब्दार्थकोष
रामा०तु०कृ०काइतिहास
रामायण तुलसीकृतकी मानसदीपिका
रामायणकवितावलीतुलसीकृतमूलवसटीक तथा श्रीवैद्यनाथजीकी टीकासहित
रामायणगीतावलीमूल तथा सटीक
श्रीमद्वाल्मीकीयरामायणभाषामैकांड
रामचन्द्रिका सटीक
रामायणरामविलास
अद्भुत रामायण
रामायणअध्यात्मविचार
राम विवाहोत्सव
रामलीला
रामगीता
रसचन्द्रोदय व रसवृष्टि
रागप्रकाश
रागसंग्रह
[illegible] काइतिहास
[illegible]
रसायनप्रकाश
राजनीति

नामकिताव

(ल)

लघुसिद्धान्त कौमुदी
लग्नचन्द्रिका
लिपिपुस्तकरसेदर्नं०तक
लिंगपुराण
लोधेश्वरमाहात्म्यउर्दू व नागरी
लक्ष्मी सरस्वती संवाद दोनोभाग

(श)

शार्ङ्गधरभाषाटी०सहित
शिवसहस्रनाम
शनिश्चरकी कथा
शिवविवाहववंशावली
शंकर दिग्विजय
शिवपुराण भाषा
शंकरचरित्रसुधा
शृङ्गारलतिका
शिवसिंहसरोज
शृङ्गारबत्तीसी
शुकबहत्तरी
शिक्षापत्र
शालागीतचन्द्रिका
शकुनौतभाषा
शिक्षाप्रबन्ध
शिक्षावली
शिशुबोध
सुधाकर
शीघ्रबोध
सतसईसटीकविहारीलालकृ०

इत्यादि

इश्तहार

माह मार्च सन् १८८८ ई० से मुमालिक मगरबी व शिमाली का बुकडिपो इलाहाबाद क्यूरेटर बुकडिपो मे मतबा मुंशीनवलकिशोर मुक़ाम लखनऊ में आगया है इस डिपो मे मग़रबी व शिमाली एजूकेशनलबुकडिपो के सिवाय और भी हर एक विद्या की किताबें मौजूद हैं इन हर एक किताबों की खरीदारी की कुलशर्तें क़ीमत के सहित इस छापेख़ाने की छपी हुई फेहरिस्त मे दर्ज हैं जो दरख्वास्त करने पर हर एक चाहने वालों को बिना क़ीमत मिलसक्ती है जिन साहबों को इन किताबों की ख़रीद करना हो वे इस छापेखाने से खरीद करें और फ़ेहरिस्त तलब करें ॥

द० मनेजर अवध अख़बार
लखनऊ मुहल्ला हज़रतगंज



छन्द इनका अच्छा बोध होना भी अधिकार का उपयोगी है इनके बिना औरों काभी निर्विकल्प विषय नहींहै और भी यह सतर्क उत्तर है कि तडागवनवानेआदि मे ज्योतिष्टोम आदि के विषय वाला विरोध नहीं जोड़ा जाता है तैसे यहांभी समझना कि स्त्री शूद्रों को पढने का अधिकार न होने से प्रायश्चित्त करने का अधिकार नहीं मेटा जासक्ता है ॥ ० ॥ परन्तु त्रैवर्णिक पुरुषों को देवता आदिका ज्ञान होना अवश्यही अपेक्षित है=यथाह व्यासः= अविदित्वाऋषिंछन्दोदैवतंयोग मेवच योऽध्यापयेज्जपेद्वापिपापीयाञ्जायतेतुसः=अर्थात्–ऋषि और छन्द और देवता और मन्त्र का विनियोग नहीं जानि के जो कोई पाठ या जप करै सो पापी होताहै ॥ ० ॥ व्रताहारादिनियमाः–रहस्य प्रायश्चित्त जो आगे सबदर्शाये जायँगे उन्हीं का यह धर्म सामान्य वर्णन होरहा है तिनमें इतना और भी यह जुदा नियम समुझे रहिना कि यद्यपि जिन व्रतों में कुछ आहार करना न लिखा जाय तथापि उन मे दूध पीना या पंचगव्य या यावक आदि जैसा प्रकाश प्रायश्चित्तों में कहिचुके तैसा यहां भी समझि लेना॰ जहां कोई काल विशेष न कहा जाय तहां संवत्सर आदि समझना॰ प्रायश्चित्त करने का ठिकाना जिनमें न कहा जाय तिन में पर्वत के निकट शिला आदि का स्थल समझना जैसे प्रकाश प्रायश्चित्तों में गौतम आदि के कहे नियम हों तिनमें ढूंढना चाहिये यह मिताक्षराकारों की दर्शाई हुई व्यवस्था है ॥ ३०२ ॥

यह सब इतना रहस्य प्रायश्चित्तों का साधारण धर्म दर्शाया जो सबही की आदि मे विचारना होगा अब अगिले मूल श्लोक से लेकर रहस्य प्रायश्चित्तों के स्वरूप सब जुदे जुदे ब्रह्महत्या आदि गुप्त पापों पर उसी क्रम से दर्शावैंगे कि जैसा पहिले खुल्लम पापों के प्रायश्चित्त ब्रह्महत्या आदि के क्रम से वर्णन हो चुके ॥

(ब्रह्मवध प्रायश्चित्तं)

त्रिरात्रोपोषितोजप्त्वाब्रह्महात्वघमर्षणम्। अन्तर्जलेविशुद्ध्येतदत्वागाञ्चपयस्विनीम् ॥ ३०२ ॥

अर्थ–ब्रह्महा तीनरात उपास किया जलके भीतर अघमर्षण को जपिके पयस्विनी गाय देकर विशुद्ध होय=अर्थात्–छिपी हुई ब्रह्महत्या जिसपर होगई सो ब्रह्महा पुरुष किसीसे जाहर किये बिनाही तीन दिन उपवास करै और उन्हीं तीनों दिवस तीर्थ के जलाशय पर जलकेभीतर निमग्न बैठाहुआ उस अघमर्षणमन्त्र को जपै जो इसी नामके महर्षि ने अघमर्षण सूक्त (ऋतंच सत्यंचेति) इत्यादि ऋचाओं

का अनुष्टुप् भाव और वृत्त और देवता के परिज्ञान सहित निश्चयकरिके प्रकाश किया है उसी सूक्तको जल में छिपिकर तीन बार जपै जितनी देरमें तीनि आवृत्ति पूरी होसक्तीहैं उतने काल तक तीनों दिन जप किये पीछे चौथेदिन दूध देती हुई बिआनी अधिक दुधार गाय दान करिके शुद्ध होजाताहै ॥ ३०२ ॥

३०२ अधिकोक्तिः=ऊपर लिखे नियमोंका प्रमाणभी अग्रोक्त वचनहै=यथाह सुमंतुः=देवद्विजगुरुहंतारप्सु निमज्जनोऽघमर्षणसूक्तंत्रिरावर्तयेत् मातरंभगिनींगत्वा मातृष्वसारंस्नुषां सखींचान्यद्वाऽगम्यागमनंकृत्वाऽघमर्षणमेवान्तर्जले त्रिरावर्त्यतदेतस्मात्पूतोभवतीति=अर्थात्–सुमन्तुने खुलासाही कहदियाहैकि–देव॰द्विज॰गुरु॰इनका हंता पुरुष जलमें निमग्नहोके अघमर्षणसूक्तको तीनवार जपै किन्तु॰माता॰भगिनी को गमनकरिके यामाताकी बहिन मावसीको या पिताकी बहिन फूआको या बेटा की वधूको या सखी कोभी गमनकरिके यद्वा और प्रकारका अगम्या गमनकरिके अघमर्षण सूक्तहीको जलके भीतर तीनिवार जपिके वह पापी इनपापोंसे छुटिकर शुद्ध होजाता है (अर्थात् अघमर्षणसूक्तही एक ऐसा परमतीव्र शस्त्रहै जिससे सब तरहके पाप कटिजातेहैं) सुमंतुके इसवचनमें देवहंता जो कहा सो दो तरहका समझना किन्तु जिसने गुप्तभावसे कोई देवमूर्त्ति तोडीहो या छिपकरकहीं किसीराजा का वध किया हो तहां राजा का वध भी दो तरह का समझना किन्तु जिसने किसी शस्त्र आदिसे वधकिया हो या तांत्रिक प्रयोगोंवाली कृत्यासे वध किया हो ये सभी देवहंता समझिलेने और द्विजहंता यद्यपि यहां पर ब्रह्महत्या की प्रधानता से ब्राह्मण को मारनेवाला अभिप्रेतहै तथापि शब्द अर्थसे द्विजाती मात्रका मारनेवाला समझना किसी दोष और विरोध में गिनती नहींहै क्योंकि अघमर्षणसूक्त जो ब्रह्महत्यापर्यन्त महापाप को मेटिसक्ता है उसको क्षत्री वैश्यके वधका पाप मेटने में न कुछ उजर है न कठिनाई है(इस व्याख्या में ऊपर जो खुलासा शब्द लिखागया तिसको यावनी भाषा के अनुसार सारार्थका बोधक न समझना किन्तु देशी भाषा में खुललमको खुलासा कहिते हैं दृष्टान्त जैसे ढकाला या खुलाशा-स्पष्टमित्यर्थः• स्पष्टमेवेत्यभिप्रायः ॥ एतच्चकामकारविषयमिति मिताक्षरा=यत्तु मनुनोक्तं=सव्याहृतिप्रणवकाःप्राणायामास्तुषोडश अपिभ्रूणहनंमासात्पुनंत्यहरहःकृताः–तदप्यग्निमेवविषयेगोदानाशक्तस्यवेदितव्यमितिमिताक्षरा=मत्यर्थ–मिताक्षराकार कहिते हैं कि यह प्रायश्चित्त जो लिखि चुके सो सब उनके लिये समझना जिसने इच्छा सहित अग्रोक्त पाप किये हों=बल्कि जो मनुने यह कहाहै कि=सोरह प्राणायाम

ओंकार प्रणव और व्याहृतियों सहित रोज रोज एक महीनातक साधै तौ ये इतने प्राणायामभ्रूणहत्यारे को भी पवित्र करतेहैं अर्थात् किसीका गर्भ या बालक बचा तक विनाश जिसने किया हो(इसके भीतर ऊपर कहे पापोंको भी समझना क्योंकि भ्रूणहत्या सबसे बडी होतीहै) सो भी इतने प्राणायामों से शुद्ध होजाताहै—मिताक्षराकार कहिते है कि यह मनुका कहा एक महीने का प्रायश्चित्त इसी पूर्वोक्त विषयपर समझना कि जिसने इच्छा सहित पाप किया हो और योगीश्वर वाला अघमर्षणसूक्त तीनदिन जपने के पीछे यदि गोदान करने में असमर्थहो तौ गोदानके पलटे यह एक महीनेका प्राणायाम अधिक साधै (ऐसेही महीने आदि के व्रतों में कि जहां जहां खाने पीनेका कुछ चर्चा नहीं किया जाय तहां तहां सर्वत्र वही नियम देखिलेना जो इससे पहिली अधिकोक्तिमें व्रताहार आदि नियम लिखचुकेहैं) इतिसकामकृतहत्यादिप्रायश्चित्तं॥ अथाकामकृत हत्यादि विषयेसकामाकामभेदाः=यत्तुगौतमेन—षट्त्रिंशदहोरात्रव्रतमुक्त्वोक्तं •तदव्रतेएव ब्रह्महत्यासुरापान सुवर्णस्तेय गुरुतल्पेषु प्राणायामैः स्नातोऽघमर्षणंजपेदिति— तदकामतोऽसकृद्विषयमिति मिताक्षरा=अर्थात्—गौतमने—छत्तीस दिनरातिका व्रत बयान करिके साथही उसके यह कहाहै कि• ब्रह्महत्या• सुरापान• सुवर्णस्तेय• गुरुतल्पगमन० इन चारों प्रकारके महापातकोंपर वही ३६ दिनका व्रत करनेमें यह चाहिये कि नित्यम्प्रति स्नान करिके अघमर्षण सूक्तको जपै (स्थलहीमें जपना कहा जलके भीतर बैठना यहां पहिले कहेकी तरह मत समुझिलेना) मिताक्षराकार कहितेहैं कि यह गौतम का कहा प्रायश्चित्त उसकेलिये समुझना जिसने इच्छासे चाहेबिना कई बार पाप कियाहो=और=जिसने निपट कामनासे चाहिकार पूर्वोक्त हत्या आदि पाप कई बार छिपना कियेहों अथवा इच्छाके बिनाही पहिलेसे बढिया पाप अर्थात् श्रोत्रियका वधकियाहो या आचार्यका वध कियाहो या यज्ञ करते ब्राह्मण आदिका वधकियाहो तिन सबकेलिये आगे बौधायन का वचन देखो=यदाहबौधायनः=ग्रामात्प्राचींवोदीचींदिशमुपनिष्क्रम्य स्नातःशुचिवासाः उदकांतेस्थण्डिलमुपलिप्यसकृत्क्लिन्नवासाः सकृत्पूतेनपाणिना आदित्याभिमुखोऽघमर्षणंस्वाध्यायमधीयीत प्रातःशतंमध्याह्नेशतमपराह्नेशतमपरिमितचोदितेषु नक्षत्रेषुप्रसृतियावकंप्राश्नीयात् ज्ञानतोऽज्ञानतःकृतेभ्यश्चोपपातकेभ्यः सप्तरात्रात्प्रमुच्यते द्वादशरात्रान्महापातकेभ्योब्रह्महत्यासुरापान सुवर्णस्तेयानिवर्जयित्वा एकविंशतिरात्रेण तान्यपितरतीति— तत्कामकारविषयं • अकामतःश्रोत्रियाचार्य सवनस्थवधविषयंचेति मिताक्षरा=

अर्थात्–बौधायन ने जो इस प्रकार से प्रायश्चित्त दर्शाया है कि–ग्राम से पूर्व और उत्तर की दिशा में घूसिके उसी जगह स्नान किया हुआ शुद्ध वस्त्र पहिने जलाशय के समीप ही (स्थण्डिल) चबूतरी तुल्य वेदी बना कर एकही वार गोता लगाइ भीगा वस्त्र एक ही पहिरे हुये एकही वार पवित्र हाथ से स्थण्डिल को लीपि के उस पर सूर्य के सन्मुख बैठा हुआ अपना पाठ अघमर्षण वेद मंत्र से पढ़ै (इसकी कितनी आवृत्ति करनी चाहिये सो कहिते हैं कि) प्रातः कालिक संध्या के साथ एक सौ अघमर्षण पढ़ै मध्याह्न की सन्ध्या साथ एक सौ अघमर्षण जपै सायंकाल की सन्ध्या से पहिले एक सौ अघमर्षण के मन्त्र जपि चुकै फिर सन्ध्या के साथ भी यथा शक्ति अघमर्षण मन्त्रों का पाठ करै जिनका परिमान कुछ नहींहै किन्तु जितने होसकैं वही अपरिमित परिमान है तिस पीछे राति में नक्षत्रों का उदयहोने पर एक पसर अर्थात् आधी अँजुरी जौ लेकर उन्हैं गोमूत्र में राँधि के यावक बनावै तिसका भोजन करै ऐसा नियम सात दिन करने से उन पापों से छुटि जाता है कि जो कुछ गुप्त भाव से उपपातक मात्र अपने ज्ञान सहित किया हो वा अज्ञानता से किया हो और बारह दिन ऐसा नियम साधने से महापातकों से भी छुटि जाता है पर (ब्रह्महत्या० सुरापान० सुवर्णस्तेय) इन तीनों को छोडिके शेष महापातकोंका यह नियम कहा गया और इक्कीस दिन उसी तरह अघमर्षण का जप करने से उन तीनों से भी छुटि जाता है–मिताक्षराकार कहिते हैं कि यह बौधायनका कहा प्रायश्चित्त कामना सहित किये पापों पर करना चाहिये अथवा विना कामना केभी जिस किसीने श्रोत्रिय विद्वान् का वध किया यद्वा आचार्य का वध किया हो या किसी को यज्ञ करते मारडारा हो तिसको भी यह २१ इक्कीस दिन का प्रायश्चित्त चाहिये॥ अथवा कामना सहित श्रोत्रिय आचार्य और यज्ञस्थ का वध किया हो तिसके लिये अग्रोक्त मनुका वचन देखौ=यथा= अरण्येवात्रिरभ्यस्य प्रयतोवेदसंहितां मुच्यतेपातकैःसर्वैःपराकैःशोधितस्त्रिभिरिति–तत्कामतःश्रोत्रियादिवधविषयं इतरत्त्वकामतोऽभ्यासविषयंवेति मिताक्षरा=अर्थात्– वन जंगल में तीन वार वेद की संहिता पाठ करिके जितेन्द्र होके रहिते हुये तीनि पराकों से शोधे हुये सभी पातकों से छुटि जाता है अर्थात् चाहैं कोईसा पाप गुप्त किया हो पहिले तीनि पराक व्रत करिके पीछे वेदकी संहिता तीनि वार पढ़ै–सोयह कहा प्रायश्चित्त उसके लिये समझना जिसने कामना सहित श्रोत्रिय आदि का वध किया हो अथवा श्रोत्रिय आदि से उपरान्तओं का वध इच्छा सहित अनेक वार किया हो तिनके लिये भी

समझना यह मिताक्षराकारनेकहा॥ यत्तुवृद्धविष्णुनोक्तं=ब्रह्महत्यांकृत्वा ग्रामात्प्राचीमुदीचींवा दिशमुपनिष्क्रम्यप्रभूतेन्धनेनाग्निंप्रज्वाल्याघमर्षणेनाष्टसहस्रमाहुतीर्जुहुयात्ततएतस्मात्पूतोभवतीति–तन्निर्गुणवधविषयमनुग्राहक विषयंवेतिमिताक्षरा= अर्थात्– बड़े विष्णु का जो कथन है कि–छिपी ब्रह्महत्या करिके ग्राम से बाहर पूर्वदिशा या उत्तर दिशामें निकसिके बहुत ढेर ईंधनकी अग्नि जलायके अघमर्षण मन्त्र से आठ हजारआहुतें होमै तिससे इस पाप से छुटि जाता है– मिताक्षराकार कहिते हैं कि यह प्रायश्चित्त सुगम है तिससे उसके लिये समझना जिसने निर्गुण ब्राह्मण को मारा हो अथवा गुणवान् को मारने वाले का अनुग्राहक जो कोईबना हो तिसके लिये भी॥ यत्तुयमेनोक्तं=त्र्यहंतूपवसेद्युक्तस्त्रिरह्नोऽभ्युपयन्नपः मुच्यते पातकैः सर्वैस्त्रिर्जपित्वाऽघमर्षणम–तद्गुणवतोहंतुर्निर्गुणवधविषयं प्रयोजकानुमंतृविषयंवेति मिताक्षरा=अर्थात्–यम ने जो कहा है कि–तीनि दिन उपवास करै जितेंद्री होके फिर तीन दिन जल के आहारसे रहै तहां तीन बार अघमर्षण को नित्य जपता रहै तौ सभीपातकों से छुटि जाता है–मिताक्षरा कार कहिते हैं कि यह प्रायश्चित्त उससे भी सुगम है तिससे उसके लिये समझना जो मारने वाला गुणवान् होकर उसने निर्गुणी ब्राह्मण को मारा हो अथवा गुणवान् को मारने वाले के साथी सहायक प्रयोजक अनुमन्ता बने हों तिनके लिये भी ॥ यत्तुहारीतेनोक्तं=महापातकातिपातकानुपपातकानामेकतः संपातेवाऽघमर्षणमेवत्रिर्जपेदिति–तन्निमित्त कर्तृविषयमिति मिताक्षरा=अर्थात्– हारीत ने जो कहा है कि जब किसी पर एक साथ ही सब तरह के पाप आपरैं किन्तु महापातक अतिपातक अनुपपातक आदि एक साथ ही बनि परैं या इन में से कोई एक तरह का पाप आपरै तब अघमर्षण को ही तीन तीन बार कुछ दिन जपै–मिताक्षरा कार कहिते हैं कि– यहप्रायश्चित्त केवल निमित्त कर्ता पर आरूढ होना चाहिये (निमित्तकर्ता वही कहाता है जिसने हाथ से नहीं मारा परन्तु किसी तरह से हृदय को दुखाया जिससे वह आप ही बूडि मरा या विष भक्षण किया इत्यादि अनेक भेदहैं ॥ मिताक्षरा कार कहिते हैं कि जैसे दस पांच मुनीश्वरों के वचन यहां पर मैंने लिखे और उनके न्यूनाधिक भाव से विषय भेदपर विभागकरि दिखलाया तैसे और भी स्मृतियों के वचन ढूंढि कर विभाग कर लेना चाहिये क्योंकि ग्रन्थ बढि जानेके डरसे यहां सब नहींलिखे जाते हैं• फिर कहिते हैं–कि– यही प्रायश्चित्त रूपी व्रतों का समूह जिस जिस परिमान से लिखा गया तिसमें से एक चौथाई कम करिके तीन पाद उसके लिये

समझना कि जिसने यज्ञ कार्य में लगी हुई स्त्री का वध कियाहो या यागस्थक्षत्री पुरुष का या यागस्थ वैश्य पुरुष का या आत्रेयी का वध किया हो (आत्रेयी के लक्षण तीसवें परिच्छेद में देखो ॥ ३०२ ॥

योगीश्वर ने इसी ३०२ मूल श्लोक में ब्रह्महत्या पर तीन दिन का व्रत कहाथा अगिले मूल श्लोक में विकल्प के लिये उसी ब्रह्महत्या पर एक ही दिन का व्रत कहेंगे परन्तु इन दोनों विधान को छोटा मत समझना क्योंकि दोनों में जल का निवास भी दर्शाया है जो सबसे बड़ा तप होता है ॥

(प्रायश्चित्तान्तरंब्रह्मघ्नस्यैव)

लोमभ्यःस्वाहेत्यथवादिवसंमारुताशनः। जलेस्थित्वाऽग्निंजुहुयाच्चत्वारिंशतघृताहुती ३०३ ॥

अर्थः—अथवा दिन भर वायु भक्षण किये जलमें स्थिति करिके लोमभ्यः स्वाहा इत्यादि मंत्रोंसे घृतकी चालीस आहुतें अग्निमें होमै=अर्थात्—अथवा जो पहिले कहे प्रायश्चित्तको न करना चाहै तौ यह करै कि एक दिन रात भर उपवासरूपी व्रत किये हुये दिवस बीतिजाने पर संध्या समयसे लेकर तमाम रात्रिभर जलमें बैठै फिर प्रातःकाल जलमेंसे निकसिके अग्निको वेदीपर प्रज्वलित करै तिसमें चालीस आहुतियां घीसे होमै उन्हीं मंत्रोंसे कि जो पहिले (ब्रह्महत्यावाले प्रकरणके बीच उनतीसवें २९ परिच्छेदके प्रारम्भसे २४७ दोसौसैंतालिस के मूलश्लोक और उसी की अविकोक्ति में) लोमभ्यः स्वाहा इत्यादि आठ मंत्र लिखे गयेथे उन प्रत्येक से पांच२ आहुतें छोड़ै सो आठ पंजे चालीस होतीहैं—यद्यपि एकही दिन कहा तथापि इसको पूर्वोक्तके बराबर समुझना जलमें निवास एक राति भर करने के बड़प्पन से यह प्रायश्चित्त छोटा नहीं ॥ ३०३ ॥ इतिब्रह्मवधमहापातकस्यप्रायश्चित्तं ॥
